मानव की कहानी

कार्लटन एस. कून

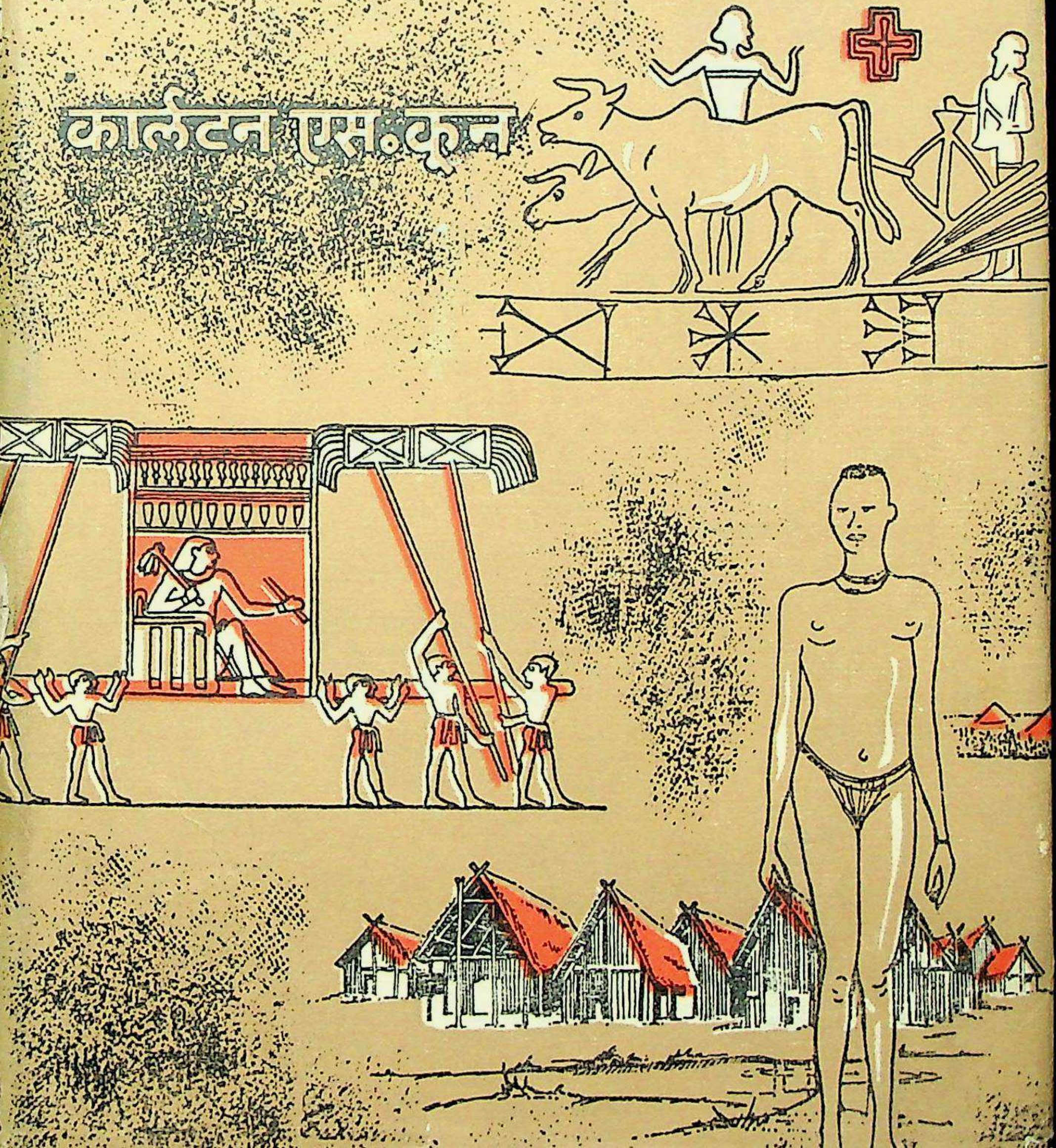

मानव की कहानी

कार्लटन एस० कून

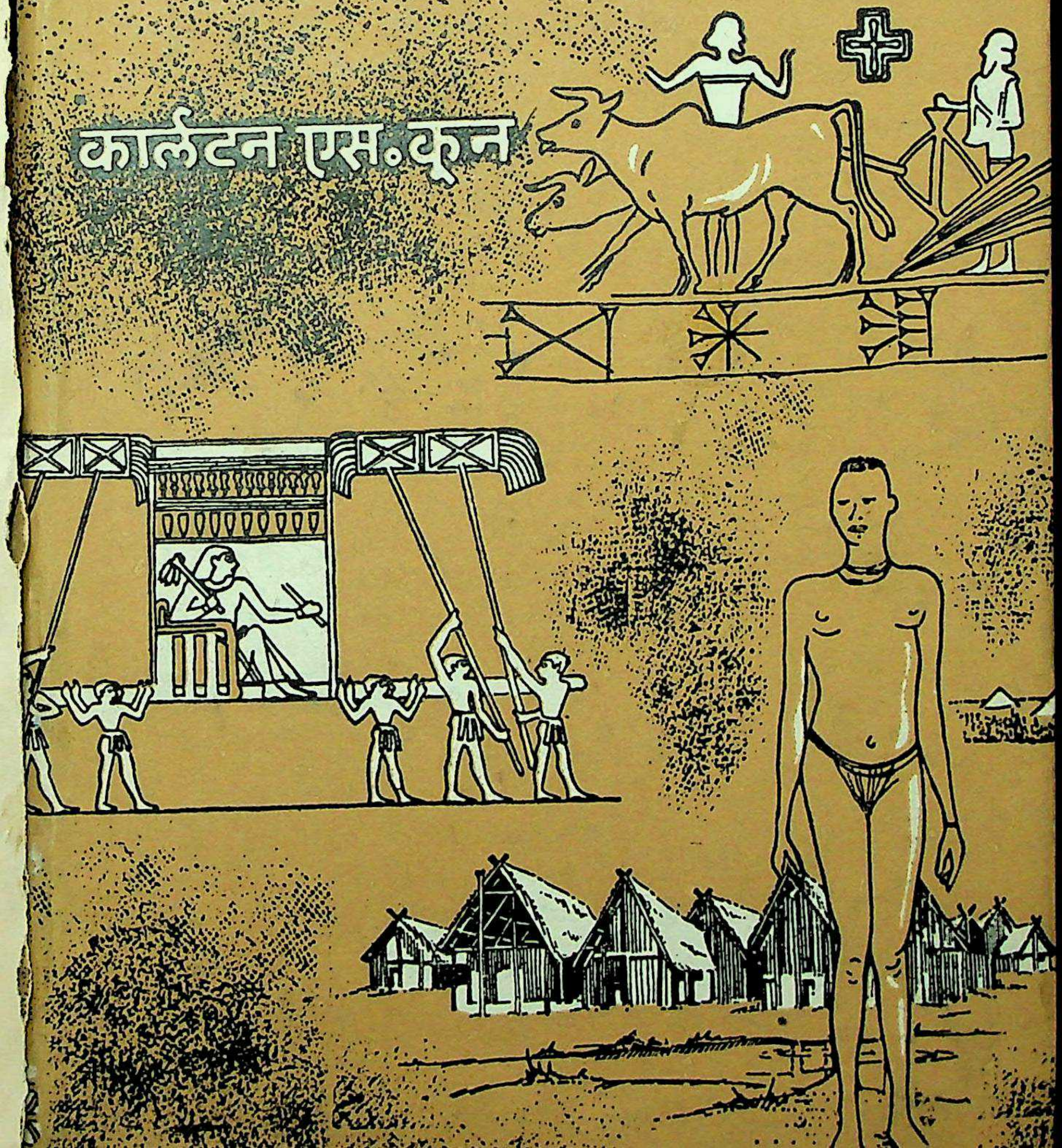

मानव की कहानी

विज्ञान की अन्य महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

चन्दामामा का देश (सचित्र)	संतोषनारायण नौटियाल		3.50
अंकुर का सपना (सचित्र)	धर्मपाल शास्त्री		1.00
विज्ञान और सभ्यता (सचित्र)	रामचन्द्र तिवारी		5.00
पानी बोला (सचित्र)	रामचन्द्र तिवारी : सिद्धि तिवारी		2.50
धरती माता (सचित्र)	रामचन्द्र तिवारी : सिद्धि तिवारी		3.00
भौतिकी का प्रामाणिक प्रथम-परिचय	एडवर्ड जी० ह्युई	(1964)	5.00
खोज की राहें (सचित्र)	राल्फ ई० लाप	(1964)	3.50
अन्तरिक्ष यात्रा की प्रथम पुस्तक (सचित्र)	जीन वैण्डिक	(1964)	4.00
जीवन की कुण्डली (सचित्र)	रथ एलन मूर	(1965)	7.50
आधुनिक विज्ञान और आधुनिक मानव	जेम्स बी० कॉनेण्ट		2.25
विज्ञान और व्यावहारिक ज्ञान (सचित्र)	जेम्स बी० कॉनेण्ट		7.50
क्यों और कैसे (सचित्र)	मनोहरलाल वर्मा		4.00
परमाणु ऊर्जा (सचित्र)	ईगॉन लारसेन		प्रेस में
चुम्बकत्व एवं विद्युत	खरे : श्रीवास्तव		16.00
पृथ्वी से अन्तरिक्ष तक (सचित्र)	डेविड ओ० बुडवरी	(1964)	4.00
परमाणुयुगीन भौतिकी (सचित्र)	हेनरी सेमट व ह्वाइट		5.00
आधुनिक परमाणु भौतिकी	ओटो आर फ्रिश		5.00
कृत्रिम उपग्रह और अन्तरिक्ष राकेट (सचित्र)	एरिक वर्गास्ट	(1964)	3.00
बाह्य अन्तरिक्ष में उपग्रह (सचित्र)	एसीमोव	(1964)	4.00
कीटों में सामाजिक जीवन (सचित्र)	डॉ० आर० रक्षपाल	(1964)	3.00

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-6

THE STORY OF MAN

Carleton s. Coon

मानव की कहानी

(प्रथम मानव से लेकर आदिम संस्कृति
और उसके बाद तक)

लेखक
कार्लटन एस० कुन

अनुवादक
विराज

1965

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-6

MANAV KI KAHANI.
(Hindi Version of '*The Story of Man*')
by
CARLETON S. COON

Translated
by
VIRAJ

Rs. 7.50

९००
क्र मि

COPYRIGHT © 1954, 1962 by Carleton S. Coon.

प्रकाशक
रामलाल पुरी, संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-6

शाखाएँ
हौज़ खास, नई दिल्ली
17, अशोक मार्ग, हज़रत गंज, लखनऊ
चौड़ा रास्ता, धामानी मार्केट, जयपुर
विश्वविद्यालय क्षेत्र, चण्डीगढ़

मूल्य : सात रुपए पचास पैसे
प्रथम संस्करण, 1965

मुद्रक
सत्यपाल धवन
दी सैण्ट्रल इलेक्ट्रिक प्रेस
दिल्ली-7

राज्य संग्रहालय लखनऊ
63561
प्रा: 2-7-68
State Museum, Library, Lko.

सैपियन्स मानुष

को

उसके अगले अभियान में
सफलता की शुभकामनाओं के साथ

यह मानव की कहानी है,
जो जंगली आग को वश में करने वाला एकमात्र पशु था,
जो कुशल शिकारी और चिकित्सक बना
जो किसान और पशुपालक बना;
जिसने शीत और समुद्र पर विजय प्राप्त की,
किन्तु सूर्य की शक्ति ने उसे बदला।
पहिये बनाकर, धातुएँ पिघालकर और लिखाई लिखकर
उसने लोहे से साम्राज्य खड़े किए,
तोपें लेकर अपने इस ग्रह की परिक्रमा की,
एक नई दुनिया को पाया और जीता—
वहाँ से वह अपने परमाणुओं से अन्तरिक्ष को चुनौती दे रहा है
किन्तु अन्तिम चुनौती स्वयं उसके भी सामने है।

—स्वयम्

प्राक्कथन

संसार का इतिहास, चाहे इतना छोटा और सीमित ही सही जितना कि यह ग्रन्थ है, लिखने के बाद और कुछ कहने को शायद ही कुछ बचता है। जो कुछ लिखना था, मैं लिख चुका हूँ और अपने दुःसाहस से विस्मित हूँ। इस ग्रन्थ को लिखने में मुझे इतने साल लगे हैं कि मुझे उन सब व्यक्तियों का स्मरण भी नहीं रहा है, जिन्होंने मुझे सहायता दी है। यदि मैं उनमें से किसी ऐसे महानुभाव का उल्लेख करना भूल जाऊँ, जो उसके पात्र हैं, तो उसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ। जिन लोगों ने मुझे शिक्षा देने का प्रयास किया था, उनमें से इस ग्रन्थ की आयोजना और उसके निष्पादन में चार व्यक्तियों का विशेष रूप से योग रहा है। स्वर्गीय चार्ल्स टी० कोपलैंड ने मुझे लिखना सिखाने का प्रयत्न किया था और स्वर्गीय अर्नेस्ट हूटन ने मुझे मानव-विज्ञान को अपना विषय बनाने की प्रेरणा दी थी, जो उन्होंने अन्य और भी दर्जनों व्यक्तियों को दी थी, इलियट चैपल ने मुझे सामाजिक मानव-विज्ञान की शिक्षा दी और विलियम क्रोजियर ने चैपल को और मुझे, दोनों को वैज्ञानिक पद्धति के विषय में शिक्षा दी।

और भी तात्कालिक रूप से मैं पैंसीलवेनिया विश्वविद्यालय के विश्वविद्यालय संग्रहालय के न्यासधारियों और इस संग्रहालय के निदेशक फ्रौलिक रेनी का अभारी हूँ, जिन्होंने पिछले छह वर्षों में मुझे अपने मनमाने ढंग से काम करने की अनुमति दी। यह रेनी की ही सूझ थी कि मैं एक मानव-प्रशाल (हाल-ऑफ़ मैन) स्थापित करूँ। उस प्रदर्शन के आयोजन का खाका ही इस पुस्तक की विषय-सूची है। मुझे आशा है कि जो योजना देखने में इतनी सफल रही है, वह पढ़ने में भी एक सुबोध संदेश की वाहक बन सकेगी। सन् 1952 और 1953 की गर्मियों में मैंने एक दूरदर्शन (टेलीविजन) के कार्यक्रम में भाग लिया था; इस कार्यक्रम का नाम 'समर स्कूल' था, जिसे रौबर्ट फौरैस्ट के निदेशन में कोलम्बिया ब्रॉडकास्टिंग सिस्टम ने सारे राष्ट्र में प्रसारित किया था। एक प्रतिभाशाली तरुण दूरदर्शन-लेखक आर्नल्ड रैबिन ने इस पाँडुलिपि के आरम्भिक प्रारूपों के

आधार पर दूरदर्शन के कार्यक्रम के लिए लेख तैयार किए थे। इस माध्यम द्वारा थोपी गई संक्षेपीकरण की आवश्यकता के कारण इस पुस्तक में प्रस्तुत विचारों की छानबीन करने और उन्हें सुस्पष्ट रूप में प्रस्तुत करने में मुझे और रैबिन, दोनों को सहायता मिली।

हैलम मोवियस और ब्रूस होव ने मुझे प्राचीन विश्व के प्रागितिहास विषयक अध्यायों को लिखने में विशेष रूप से सहायता दी और स्टैनले गार्न, रसैल न्यूमैन, जे० लारैन्स ऐंजल, विलियम ऐल० स्ट्रास और कैनैथ ओकले ने विकास और जाति के विषयों पर लिखने में। फ्रौलिक रैनी और जे० लुइस गिडिंग्स ने ऐक्सिमो वाले अनुभाग को, वार्ड गूडनौफ ने पोलीनेशियाई रूपरेखा को और अल्फ्रैड किडर द्वितीय ने अमेरिकी मूलवासियों विषयक अध्याय को लिखने में सहायता दी। किडर ने अपने साधु स्वभाव से उन दिनों इस पुस्तक के प्रूफ पढ़ने का बोझल काम अपने सिर ले लिया, जब मैं सहूलियत से अफगानिस्तान गया हुआ था। बोयस पैनरोज के प्रति बारूद युग के सम्बन्ध में जानकारी के लिए, विलयम क्रोज़ियर के प्रति वैज्ञानिक परिशुद्धता की दृष्टि से अन्तिम अध्याय की पड़ताल करने के लिए, और पैन्सीलवेनिया विश्वविद्यालय के प्रेसिडेंट गेलौर्ड पी० हार्नवेल के प्रति इस मित्रतापूर्ण चेतावनी के लिए, कि मेरे लिए अपने गणितीय विश्लेषण को बहुत दूर तक खींचना उचित न होगा, मैं अतिशय आभारी हूँ।

रोडेशियाई मानव के आदमकद नमूने की पुनः कल्पना के लिए हमने जिस निचले जबड़े का उपयोग किया था, उसका अभिकल्प अर्नैस्ट हूटन ने तैयार किया था, और लौरैन आइज़ले, विलियन ऐल० स्ट्रास, जे० लारैन्स ऐंजल, नील टैप्पन, शेरवुड वाशबर्न और लारैन्स ओस्चिन्स्की ने उन चार पुनः कल्पनाओं को बनाने में सलाह और सहायता दी, जिनके चित्र इस पुस्तक में दिये गए हैं। चिरकाल पहले मर चुके इन पुरुषों और स्त्रियों की ये आवक्ष प्रतिमाएँ हमारे संग्रहालय के पलस्तर कक्ष में ऐमिली पैट्रिनौस और मेरे निदेशन में और धुरन्धर रूपकार (कास्टर) डोमैनिको कौन्सानी के प्रखर तत्वावधान में आन्त्वानैत जाँतील ने बनाई हैं। रिचार्ड अल्बैनी के सुस्पष्ट तथा सरल रेखाचित्रों और रियूबन गोल्डबर्ग द्वारा निष्प्राण वस्तुओं के फोटो खींचते समय प्रकाश का बढ़िया उपयोग करने के कारण मेरे इस नीरस

साहित्यिक प्रयास को कुछ सरस बनाने में सहायता मिली है। नक्शे मेरी पत्नी ने बनाये हैं—उसने और मेरी सहायक जेन गूडेल ने आरम्भ से अन्त तक मेरी सहायता की है। मेरे अन्य उपयोगी सहायक मेरे छात्र डैक्सटर पर्किन्स जूनियर और थैरेसा हावर्ड कार्टर तथा यूनीवर्सिटी म्यूजियम के कर्मचारी वर्ग के चार्ल्स वाइले, सींथिया ग्रिफ़िन, गैरल्डाइन ब्रुकनर और कैरोलाइन डौस्कर रहे हैं, ऐलिजाबैथ स्टिफ्लर ने पाँडुलिपि को कई बार टाइप किया। इन सब लोगों का नामोल्लेख करते हुए मैंने 'डाक्टर' और 'प्रोफैसर' 'कुमारी' और 'श्रीमती' की उपाधियों का उल्लेख नहीं किया है, क्योंकि मैं उन्हें मानव प्राणियों के रूप में देखता हूँ, शैक्षणिक या वैवाहिक साँचे के रूप में नहीं। हम इस संसार में उपाधियों के बिना ही आते हैं और उसी रीति से हम इसे छोड़ भी जाएँगे। मेरे जो मित्र उपाधि प्राप्त कर चुके हैं, उन्हें अपनी उपाधियों का उल्लेख करवाने की आवश्यकता नहीं है और अन्य लोग, मुझे आशा है कि शीघ्र ही उपाधि प्राप्त कर लेंगे।

अब मैं मित्रों की एक अन्य श्रेणी की ओर आता हूँ, जो इस पुस्तक को, जैसी कुछ भी यह बनी है, तैयार करने में समान रूप से महत्त्वपूर्ण रही है। अल्फ़ैड ए० क्नौफ़ के प्रधान सम्पादक हैल्डर स्ट्रास ने पांडुलिपि पर लगभग उतना ही परिश्रम किया है, जितना कि मैंने; और उन्होंने मुझे साहित्यिक विनम्रता सिखाई है। निष्पादन (प्रोडक्शन) विभाग के सिडनी जैकब्स ने मेरे चित्रों की बहुत सूक्ष्म दृष्टि से छान-बीन की और उसी विभाग के हर्बर्ट वाइन्सटौक ने मेरी पाँडुलिपि का एक बार तूफानी पारायण किया है और उस के निर्जीव अंशों को कठोरतापूर्वक काट दिया है। खाका तैयार करने और छपाई करवाने का श्रेय हैरी फोर्ड को है। मैं इन चारों व्यक्तियों का अत्यन्त आभारी हूँ और मैं अपने अपेक्षाकृत वयोवृद्ध और कम कठोर मित्र जोनाथन कैप का भी अभारी हूँ, जो इस पुस्तक का इंग्लैंड-संस्करण निकालेंगे और जिन्होंने (मुझे आशा है) मेरी प्राध्यापकीय 'मजाकियेपन' की, जो 'शैक्षणिक परिहासशीलता' के लिए या सीधी सादी अमेरिकी भाषा के शब्द 'कौर्नी' (बुद्धूपन) के लिए अंग्रेज लोगों का विनम्र शब्द है, आदत को सुधार दिया है।

—कार्लटन एस० कून

12 जनवरी 1954
हैवन, पैन्सीलवेनिया

दूसरे अंग्रेज़ी संस्करण की भूमिका

1954 के बाद से मानवीय क्रम-विकास के विषय में और मनुष्य के विभिन्न जातियों में बंट जाने के विषय में हमारे ज्ञान में बहुत प्रगति हुई है और पुरातत्व में हुई नई खोजों के कारण हमारी प्रागितिहास की कुछ धारणाएँ बदल गई हैं। 'मानव की कहानी' को अद्यावधिक बनाने और इसे मेरी शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली पुस्तक 'ऑरिजिन ऑफ रेसिज' के साथ संगत बनाने के लिए मैंने इसके काफी अंश को दुबारा लिखा है और कुछ नक्शे और चित्र बदल दिए हैं। परन्तु मैंने किसी वस्तु को केवल नवीनता के लिए नहीं बदला है। यह एक परिपक्व रचना है, कोई अधकचरी कृति नहीं।

5 जनवरी, 1962 —कार्लटन एस० कून
वैस्ट ग्लौसैस्टर, मैसाचुसैट्स

विषय-सूची

प्रस्तावना : इतिहास के अवबोधन की ओर

1. आदिमतम मनुष्य 13-59

इतिहास की चार प्रावस्थाएँ; भूमि पर उतरने का साहसिक कार्य; उत्तान (सीधे) खड़े होना; मुक्त रूप से हिलाई जा सकने वाली भुजाएं और पकड़ने वाले हाथ; सुस्पष्ट फोकस करने वाली आँखें; तर्कशील मस्तिष्क; वाणी की शक्ति; चबाने और लड़ने के विषय में; फासिल कपि (एप); मानव युग या हिम युग; आस्ट्रैलोपिथैसाइन; दैत्य कपि और हिम मानव; फासिल मनुष्यों का वर्गीकरण; उत्तान मानुष का इतिहास; सैपियन्स मानुष का आविर्भाव और प्रसार; नियंडरथल लोग; आरम्भिक मानवीय इतिहास की रूपरेखा।

2. चकमक, आग और प्रारम्भिक समाज के बारे में 60-96

प्रारम्भिक कर्तन औज़ार एक तर्कसंगत प्रस्तावना; चकमक के गुण-धर्म; उत्तान मानुष के औज़ार; उपल औज़ारों से कुठार तक; शल्क औज़ार; औज़ार हमें क्या बताते हैं; प्रोमैथियस ने आग खोज निकाली; इडिपस का विद्यारम्भ; पंडोरा ने आत्माओं को मुक्त किया और स्वयं भी उनमें मिल गई।

3. कुशल शिकारी और चिकित्सक 97-157

इतिहास की दूसरी प्रावस्था; मनुष्य सारी पृथ्वी पर फैल गया और एक स्पीशिज़ बन गया; उसके विस्तार और समेकन में सहायक औज़ार; मनुष्य द्वारा धनुष का आविष्कार; मनुष्य का दूसरा ऊर्जा स्रोत—कुत्ता; शिकार करने और मछली मारने की प्राचीन पद्धतियाँ; आदिम कालीन कलाएँ और उद्योग; आरम्भिक परिवहन; हिमयुग के पिछले भाग के शिकारियों का सामाजिक और बौद्धिक जीवन;

हिमयुग की संस्थाएँ; प्राचीनतम व्यवसाय—चिकित्सा; शिकारी को किसी अभिरुचि (हौबी) की आवश्यकता नहीं।

4. कृषक और पशुपालक 158-210

इतिहास की तीसरी प्रावस्था; नव-पाषाण युग की प्रकृति; खेती का आरम्भ; पशुओं का बाड़ों (अस्तबलों) में प्रवेश; मनुष्य का प्रकृति की शक्तियों से खिलवाड़; आदितम कृषक—पुरातत्वीय प्रमाण; कार्वन-14 द्वारा काल निर्धारण; 'पुरानी दुनिया' में नव-पाषाणिक प्रव्रजन।

5. सर्दी और समुद्र 211-251

ऐस्किमों लोगों का तरु विहीन ध्रुव प्रदेश पर अधिकार; हवाई का नव-पाषाणिक द्वीप-स्वर्ग; पश्चिमी नव-पाषाणिक संस्कृति अतलाँतक में बची हुई है; नव-पाषाणिक युग में यौन भाव और जादू।

6. सूर्य की शक्ति 252-299

जाति की रोक; वैज्ञानिक क्रियाविधि और जातीय शाखाएँ; जाति के प्रति जनसाधारण की मनोवृत्तियाँ; मनुष्य की पाँच भौगोलिक अभिसीमाएँ; जातीय इतिहास की रूपरेखा; आकार, आकृति और रंग का नियंत्रण करने वाले पारिस्थितिक नियम; इन नियमों का मनुष्य पर लागू किया जाना; जाति का अर्थ।

7. पहिए, धातु और लेखन 300-361

काँस्य युग का महत्त्व; आरम्भिक काँस्य युग की मिश्री सभ्यता; सुमेरियाई लोगों का स्थल तथा समुद्र मार्गों द्वारा व्यापार; हिताइत लोगों का पर्वतों के ऊपर से रथ चालन; होमरकालीन यूनान के देवता और वीर योद्धा।

8. लोहा और साम्राज्य 362-425

लोह् युग का तकनीक विज्ञान; दास तथा विशिष्ट लोग; सबसे पहला साम्राज्य: ईरान; ऐथन्स का प्रजातन्त्र; रोमन साम्राज्य; बाइज़ैण्टाइन

दफ्तरशाही; गैर-ईसाई आयरलेंड का स्वर्ण युग; लौहयुग की धार्मिक संस्थाएँ; संघों (असोसियेशन) का उदय; शिक्षा संस्थाओं का आविर्भाव और उन्नति ।

9. बारूद 426-473

पवन, जल और इस्पात; तोप और बाइबिल के साथ सातों समुद्रों की यात्रा; सागरेस की अकादेमी; पुर्तगालियों की जहाज़ों द्वारा अफ्रीका और भारत की यात्रा; भारत का साँस्कृतिक इतिहास; चीनी सभ्यता; जापान ने अपने बन्दरगाह खोले और फिर बन्द कर दिए ।

10. नई दुनिया 474-518

अमेरिका की खोज; प्रशान्त पार की समस्या; नई दुनिया का पुरानी दुनिया पर प्रभाव; स्पेन का औपनिवेशिक साम्राज्य; अंग्रेजों और हालैंडवासियों द्वारा निगमित व्यापारिक कम्पनियों की स्थापना ।

11. कोक से परमाणुओं तक 519-565

विनाश की तलवार; कोक की कहानी; ऊर्जा के नए स्रोत; विजली और परमाणु ऊर्जा; परिवहन ध्वनिरोध को पार कर गया; प्रकाश के से वेग से संचार (संदेश वाहन); जलवायु पर दूसरी बार विजय; विज्ञान अन्तर्राष्ट्रीय है; संस्थाओं की संख्या में बेहिसाब वृद्धि और उनका चरमसीमा तक पहुँचना; अमेरिका का उत्थान; सोवियत रूस की सामाजिक संरचना; इतिहास की चौथी प्रावस्था का संकटमय प्रभात ।

12. स्वर्ग की कल्पना 566-586

इतिहास की मुख्य धारा; संचार, संस्थाएँ और विज्ञान; ब्रह्मांड के इतिहास में मनुष्य एक चरमसीमा पर पहुँच गया है; यौवन का देश ।

शब्दावली 587-612

हिन्दी शब्दों के अंग्रेजी रूपान्तर 613-639

चित्रों की सूची

(जिन चित्रों के साथ किसी अन्य व्यक्ति का नाम नहीं दिया गया है, उन सबके फोटो रियूबन गोल्ड वर्ग द्वारा खींचे गए हैं)

आदिम मानव और उसके औज़ार

(पृष्ठ 56 के पश्चात्)

चित्र

1. रोडेशियाई मानव ।
2. नर चीन मानव (सिनान्थ्रोपस); मादा नियंडरथल ।
3. फिलस्तीन मानव ।
4. लूर्दे का जादूगर ।
5. द्वितीय अन्तर हिमाच्छादन काल का एक कुठार ।
6. निम्न तथा मध्य पुरा पाषाणिक उद्योग ।
7. उपरि पुरा पाषाणिक उद्योग ।
8. नव पाषाणिक औज़ार ।

जाति

9. श्वेत जाति, भूमध्यसागरीय प्रभेद ।
10. श्वेत जाति, उपरि पुरा पाषाणिक प्रकार ।
11. मंगोल जाति, चीनी प्रकार ।
12. नीग्रो जाति, पश्चिमी अफ्रीका टाइप ।
13. आस्ट्रेलियाई जाति, मरुस्थलीय अनुकूलन ।
14. प्रशान्त महासागरीय नीग्रो जाति, न्यूगिनी वाला प्रभेद ।
15. पोलीनेशियाई जाति, माओरी प्रभेद ।
16. मंगोल जाति, अमेरिकी मूलवासी किस्म ।

पुरानी दुनिया

(पृष्ठ 368 के पश्चात्)

17. प्राचीन मिश्र की नदी में चलने वाली नाव ।
18. प्राचीन सुमेरियाई रथ ।
19. चाँदी का पान पात्र ।
20. स्वर्ग की ईरानी कल्पना (फोटो लेखक द्वारा) ।
21. साम्राज्य की बाहरी चौकी (फोटो लेखक द्वारा) ।
22. अरब लोगों का ऐस्ट्रोलेब (फ्रैंकलिन इंस्टीट्यूट ऑफ फिलाडल्फिया के सौजन्य से) ।
23. चीन के काँस्ययुगीन समारोह पात्र ।
24. चीनी रेशमी चौकोर वस्त्र ।

नई दुनिया

(पृष्ठ 496 के पश्चात्)

25. आज़तेक बलिदान का एक दृश्य ।
26. मय लोगों की एक पालकी ।
27. (क) साक्साहुआमाकान का दुर्ग (फोटो अल्फ्रैड किडर द्वितीय द्वारा) ।
27. (ख) श्रान्त यात्री ।
28. इन्का लोगों की निधियाँ ।
29. पेरू के चार वस्त्र ।
30. उत्तरी अमेरिका के मूलवासियों की कला ।
31. पश्चिमी अफ्रीकी लकड़ी की मूर्ति ।
32. महाबली मो ।

पाठ्य सामग्री के बीच में दिये गए

रेखा-चित्रों की सूची

नियंडरथल, क्रोमैंगनन और घृणित हिम मानव के पद चिह्न 38
जंगली वृषभ, फ्राँसीसी गुफ़ाचित्र 64
महाहस्ति (मैमथ), फ्राँसीसी गुफ़ाचित्र 65
गैंडा, फ्राँसीसी गुफ़ाचित्र 95
मगदेली: हार्पून शीर्ष 113
मध्य पाषाणिक शिकारी, स्पेनी गुफ़ा चित्र 117
रेनडियरों का रेवड़, हड्डी पर नक़्क़ाशी, फ्रांस 125
स्पेन में कैलापेटा गुफ़ा में बारहसिंगे, 141
उपरि पुरा पाषाणिक भित्ति नक्काशी, ला मगदेलीन, फ्रांस 142
एक शामन रोगी का इलाज कर रहा है, फ्राँसीसी गुफा चित्र 148
एक नव पाषाणिक ग्राम की पुनः कल्पना 164
एक जंगली सूअर और एक आधुनिक बर्कशायर सूअर 182
ऐस्किमो लोगों का ह्वेल की चर्बी का दीपक और केतली 214
ऐस्किमो लोगों की पोशाक 217
ऐस्किमो लोगों का हार्पून 219
ऐस्किमो और ईरानी गुम्बद 222
हवाई से प्राप्त एक पत्थर का बसूला 225
हवाईवासियों का दोहरा जहाज़ 226
मार्शल द्वीपों का मूलवासियों द्वारा निर्मित रेखा चित्र 227
ध्रुव प्रदेश का भालू और भूरा भालू 283
बौना (पिग्मी) और यूरोपीय मनुष्य 283
एक मध्य एशियाई और एक अरबी कुरंग 284
जिप्सलैंड का एक आस्ट्रेलियाई आदिवासी 284

नील नदी के निकट का एक नीग्रो 285

रेंस्ख का मरुस्थल वसा नियम 288

मिश्र का एक बरमा 308

मिश्रवासियों का पाल से चलने वाला जहाज 312

मिश्र की धातु की कारीगरी का एक दृश्य 318

मिश्र की पालकी 323

एक मिश्री लिपिक 328

उर से प्राप्त एक रथ 333

उर से प्राप्त लगाम के छल्ले का आभूषण 334

बैबीलोनिया का हल चलाने का एक दृश्य 336

एक हिताइती रथ 342

होमरकालीन रथ 348

होमर कालीन जहाज़ 351

यूनानी लुहार की दुकान 372

यूनानी घुड़सवार 376

रोमन सड़क 381

टर्बाइन पनचक्की 385

ऊर्ध्वाधर दंड वाली पवन चक्की 386

तारा के प्रशाल में लोगों के बैठने का नक्शा 412

आरम्भिक काल की तोप 429

भीतरी झुकाव का सिद्धान्त 437

आनयाँग में मिले कंकाल 460

वू लोगों का जहाज़ 463

सांटामारिया 475

पोडकोर्न 494

कोक बनाने की भट्ठी 519

कर्नल ड्रेक का मिट्टी के तेल का कुआँ 528

एक पनबिजली बाँध 544

परमाणु खुम्भ 565
मधु संचय करती हुई स्त्री, स्पेन का गुफ़ाचित्र 580
एक मध्य पाषाणिक स्पेनी गुफ़ाचित्र 582

टिप्पणी : फ्राँसीसी गुफ़ा वाली आकृति, नाल नदी के तट के निकट वाले नीग्रो, वू लोगों के जहाज़ और पौड कौर्न को छोड़कर अन्य सब रेखाचित्र रिचर्ड अल्बेनी ने या तो सीधे उन वस्तुओं को देखकर या अन्य लोगों द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर विशेष रूप से इस पुस्तक के लिए बनाए हैं। यदि अन्य किसी प्रकार का उल्लेख न किया गया हो, तो फ्राँसीसी गुफ़ा चित्रों के रेखाचित्र आबे आँरी ब्रुई के शानदार और अनथक परिश्रम द्वारा और स्पेनी गुफा चित्रों के रेखाचित्र फादर ह्यूगो ओवरसियर के परिश्रम के फलस्वरूप बनने सम्भव हुए हैं। मिश्र से सम्बन्धित रेखाचित्र डाक्टर रूडोल्फ ऐन्थीज़ और श्री हेनरी फिशर द्वारा दी गई सामग्री से तैयार किए गए हैं। तारा के प्रशाल का नक्शा मैक ऐलैस्टर के अनुकरण में बनाया गया है; आरम्भिक काल की तोप और कोक बनाने की भट्ठी फौर्बेस के अनुकरण में बनाई गई है : कुरंगों के छाया चित्र ऊगो मोची के अनुकरण में और होमरकालीन दृश्यों के चित्र नोटोर के अनुकरण में बनाये गए हैं। उपरि पुरा पाषाणिक भित्तिनक्काशी पाओलो ग्रेजियोसी की पुस्तक 'पैलियोलिथिक आर्ट' से ली गई है और नील नदी के निकट के नीग्रो का रेखाचित्र सिप्रियानी के एक फोटो के आधार पर बनाया गया है ।

नक्शों की सूची

(लायम ड्यून द्वारा)

उत्तरी गोलार्द्ध में अन्तिम (वूर्म) हिमाच्छादन का काल 33
35000 ईस्वी पूर्व से पहले के फासिल मानव के अवशेष 42
आरम्भिक कर्तन औज़ारों के प्रधान अवशेष 75
आधुनिक काल में पाए जाने वाले कुछ आदिम कालीन शिकारी 122
नव पाषाणिक उद्गम स्थान और प्रसार 175
पोलीनेशिया और माइक्रोनेशिया : प्रव्रजन के मार्ग 228
1492 से पहले की पाँच बड़ी-बड़ी जातीय अभिसीमाएँ 267
काँस्ययुगीन संसार 302
लौहयुग के साम्राज्य 395
साँस्कृतिक परिवर्तन की मुख्य धारा और उसमें योग देने वाले केन्द्र 423

मानव की कहानी

प्रस्तावना

इतिहास के अवबोधन की ओर

इस पुस्तक का उद्देश्य इतना सरल और आधारभूत (बुनियादी) है कि इसके पहले ही वाक्य में पाठक को यह चेतावनी मिल जानी चाहिए कि वह शब्दों के पीछे किसी गूढ़ अर्थ को या शास्त्रीय सूक्ष्मताओं को ढूंढने का यत्न न करे। इसका उद्देश्य उस समय से लेकर, जबकि मनुष्य पृथ्वीतल पर आविर्भूत हुआ था, वर्तमान समय तक, जबकि उसके पास इस पृथ्वी को नष्ट कर देने की शक्ति है, मानवीय इतिहास की मुख्य-मुख्य घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करना है। लगभग एक शताब्दी से इतिहासकार रूढ़ (परम्परागत) इतिहास की बेड़ियों को तोड़ने का प्रयत्न करते रहे हैं। कुछ ने विभिन्न कालों में रही अर्थशास्त्र की रूपरेखा का अनुसरण किया है, कुछ अन्य ने कला, सामाजिक संरचना, विज्ञान तथा अन्य शास्त्रों (विद्या की शाखा) और शास्त्रों के सम्मिश्रणों का अनुसरण किया है। मैं इतिहास का अनुशीलन मानव विज्ञान के उपकरणों, मानवीय जीव विज्ञान, पुरातत्व और जीवित संस्कृतियों, विशेष रूप से 'आदिम मनुष्यों की संस्कृतियों के अध्ययन द्वारा करूँगा। क्योंकि पुरातत्ववेत्ताओं को यह पता चला लेने में कुछ सफलता मिल गई है कि संस्कृतियाँ किस प्रकार काम करती हैं, इसलिए मुझे आशा है कि मैं इतिहास का कुछ अर्थ निकाल सकूँगा। इतिहास उस समय से लेकर, जब कि मनुष्य पहले-पहल तर्कशील प्राणी बना और जब उसने अपने बच्चों को चकमक को तोड़ना और छीलना सिखाया, अब तक संसार की संस्कृतियों के अभिलेख के सिवाय और कुछ नहीं है।

मानव विज्ञान की दृष्टि से अनुशीलन में कुछ अन्य दृष्टियों से अनुशीलन की अपेक्षा एक लाभ यह है कि इसमें बहुत थोड़े तकनीकी पारिभाषिक शब्दों की आवश्यकता पड़ती है। इस पुस्तक में केवल एक ही ऐसा शब्द प्रयुक्त हुआ है, जिसके विषय में सुशिक्षित सामान्य पाठक को भ्रम हो सकता है और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वह शब्द है—संस्था । मानव विज्ञान की भाषा में 'संस्था' का अर्थ है—मनुष्यों का एक समूह । यह समूह किसी प्रयोजन से संगठित किया जाता है, यह कुछ नियमों का पालन करता है और इसकी कोई संरचना (गठन) होती है—इसका सरलतम रूप तो यह है कि एक नेता हो और उसके कुछ अनुयायी हों, और इसका जटिलतम रूप है राष्ट्रों का विश्व-संघ । व्यक्ति कई संस्थाओं का अंग होता है, जैसे अपने परिवार का, किसी व्यावसायिक संगठन का, धार्मिक संगठन का, गोष्ठियों का, बिरादरी और राष्ट्र का अंग ।[1] यदि हम यह स्मरण रखें कि हमारे वर्तमान प्रयोजन के लिए 'संस्था' शब्द का अर्थ लोग (मनुष्य) हैं, और सामान्यतया इस शब्द का जो अर्थ, विचार, नियम, रीति-रिवाज या प्रथाएँ लिया जाता है, वह यहाँ नहीं है, तो जो कुछ आगे लिखा जाएगा, उसे समझने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए ।

अब हमारा अगला तर्कसंगत क़दम यह है कि इतिहास की इकाई की परिभाषा की जाय । यह कोई ऐतिहासिक घटना होती है । ब्रह्माण्डीय इतिहास में घटनाएँ होती हैं—किसी नक्षत्र का विस्फोट, किसी ग्रह की उत्पत्ति, उसके वायुमण्डल का निर्माण, उसके तल पर हिम की परत का आगे बढ़ना और पीछे हटना, प्राणियों की किसी नई स्पीशिज़ का जन्म । इसकी तुलना में मानवीय इतिहास की घटनाएँ निम्न श्रेणी के प्राइमेटों (वानरों) से मनुष्य के क्रम-विकास के, उसके द्वारा अन्य सब उत्तान (सीधे खड़े होने वाले) प्राइमेटों की की स्पीशिज़ के विनाश के, उसके द्वारा आग से लेकर परमाणु ऊर्जा तक प्रकृति की शक्तियों की विजय के, ज्यों-ज्यों वह सारी पृथ्वी के विभिन्न परिवेशों में फैलता गया त्यों-त्यों ऊष्मा और प्रकाश में घट-बढ़ के फलस्वरूप उसके अलग-अलग जातियों में बंट जाने के, उसकी संख्या में वृद्धि के, विभिन्न कला-कौशलों में उसके विशेषता प्राप्त करने के, लिंग, आयु और व्यवसाय के आधार पर उसके श्रम के विभाजन के, परिवहन और संचार में उसकी प्रगति के, उसके अधिकाधिक संस्थाओं में भाग लेने के, और उस विश्व की, जिसका

---

[1] और भी विस्तृत तथा परिशुद्ध परिभाषा के लिए देखिये सी० ऐस० कून द्वारा लिखित 'ए रीडर इन जनरल ऐंथ्रोपोलौजी', हेनरी होल्ट एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क, 1949, पृष्ठ 604-9 ।

कि वह एक भाग है, प्रकृति के सम्बन्ध में उसके बढ़ते हुए ज्ञान के क्रान्तिक सीमा चिह्न हैं। इन सीमा चिह्नों का अनुक्रम ब्रह्माण्डीय घटनाओं की भाँति अपुनरावर्ती, प्रगतिशील और संचयी होता है और ब्रह्माण्डीय घटनाओं की ही भाँति ये भी ब्रह्माण्डीय नियमों का अनुसरण करते हैं।

अन्य शास्त्रों में घटनाओं को काल और स्थान में ऊर्जा के व्यय की दृष्टि से नापा जाता है। मानव इतिहास की उन घटनाओं में भी, जिनका कि हम यहाँ पुनरावलोकन करेंगे, मानवीय अंगी (और्गनिज़म) द्वारा इन आयामों में ऊर्जा का व्यय अन्तर्निहित है।

यह मानवीय अंगी अपने आप में एक अद्वितीय द्विपाद स्तनपायी जन्तु है; उसके पकड़ने वाले हाथ हैं, जो बारीक काम करने में समर्थ हैं; उसके सुस्पष्ट फोक्स करने वाली त्रिविमितीय (पिंडदर्शकीय, स्टीरियोस्कोपिक) आँखें हैं; उसका मस्तिष्क बड़े आकार की दृष्टि से अद्वितीय है और उसके बोलने के अंग उन ध्वनियों को उत्पन्न करने में समर्थ हैं, जो भाषा के लिए आवश्यक हैं। यह अंगी अपने सारभूत रूप में अब से पाँच लाख वर्ष पहले विकसित हो चुका था और उसके बाद से ज्यों-ज्यों वह पृथ्वी तल के विभिन्न प्रकार के जलवायु में गया, त्यों-त्यों प्रकाश और ऊष्मा की चरम सीमाओं के प्रति अपने अनुकूलन के फलस्वरूप उसमें शरीर-रचना की कुछ दृष्टियों से आशोधन (सुधार) हुए हैं। अन्य आशोधन—विशेष रूप से मस्तिष्क की वृद्धि—उसकी काम करने, सोचने-विचारने, संदेश भेजने और अपने आपको सामाजिक रूप से संगठित करने की क्षमताओं के बढ़ने के साथ-साथ हुए।

वह परिवेश, जिसमें कि यह अंगी अब तक, जब तक कि इसने सारी पृथ्वी को जीत लिया, रहा और बढ़ा, स्थल, वायु और जल से मिलकर, और इन माध्यमों के द्वारा और इनमें जीने वाले सभी पेड़-पौधों तथा अन्य पशुओं से मिलकर बना है। क्रमशः मनुष्य यह बात अधिकाधिक सीखता गया कि नैसर्गिक सामग्रियों का आधारभूत कर्तन-औज़ार बनाने के लिए किस प्रकार उपयोग किया जाय और उनसे गौण औज़ार तथा अन्य वस्तुएँ किस प्रकार बनायी जाएँ, जिससे कि वह स्वयं अपना और अपनी जाति के अन्य लोगों का पेट भर सके, प्राकृतिक तत्वों (आँधी, पानी) से अपनी रक्षा कर सके और व्यक्तियों तथा समूहों के बीच सन्देशों का आदान-प्रदान कर सके। प्रकृति पर मनुष्य

की क्रमश: विजय के कारण मनुष्य ऐसे समूहों में रहने लगा, जिनका आकार और जटिलता निरन्तर बढ़ती गई है और अब स्थिति यह हो गई है कि सारा मनुष्य जगत् एक जटिल एकता के किनारे पहुँच रहा है।

इसके साथ ही मनुष्य ने पृथ्वी तल पर विद्यमान अनेक सामग्रियों का उपयोग करके उन्हें खत्म कर डाला है, यहाँ तक कि पृथ्वी तल के अनेक भाग बिलकुल नग्न और उजाड़ हो गए हैं। किसी ब्रह्माण्डीय भूगोलवेत्ता की दृष्टि में, जो मनुष्यों को केवल वस्तुनिष्ठ दृष्टि से देखता हो, हमारी स्पीशिज़ एक अत्यधिक संगठित त्वचा के कैन्सर सी ही होगी, जो पृथ्वी की सतह को अधिकाधिक तीव्रता के साथ नष्ट किये जा रही है, यहाँ तक कि बीसवीं शताब्दी की सातवीं दशाब्दी के आरम्भ में एक चरम सीमा का क्षण निकट आता जा रहा है। पृथ्वी के सारे तल और इसके वायुमण्डल तक को नष्ट हो जाने का संकट उपस्थित है। मनुष्य के हाथों इस क्रमश: अपक्षय की गति के सोपानों का उपयोग विलोमशः मानवीय इतिहास में सांस्कृतिक प्रगति के एक वस्तुनिष्ठ नाप के रूप में किया जा सकता है।

संस्कृति अपने आप में एक ऐसा पारिभाषिक शब्द है, जिसको अनेक मानव-विज्ञानवेत्ता या तो वाद-विवाद में फुटबाल की तरह ठोकरें मारते हैं या फिर एक पवित्र गाय की भाँति उसकी पूजा करते हैं। इसकी परिभाषाएँ लगभग उतनी ही हैं, जितने कि मानवविज्ञानवेत्ता। अपने वर्तमान प्रयोजन के लिए हम यह समझ सकते हैं कि सामान्यतः संस्कृति उन सब पद्धतियों का सर्वयोग है, जिनके द्वारा मानव प्राणी अपना जीवन-यापन करते हैं और जो शिक्षा द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचती जाती है। इस संस्कृति के अन्दर युगलों और समूहों में रहने वाले मनुष्यों के बीच सम्बन्ध, नैसर्गिक सामग्रियों से सम्बन्ध रखने वाली मनुष्य के कार्य की गतिविधियाँ, और प्रतीकों के क्षेत्र में, जिसमें वाणी, संगीत, दृश्य कलाएँ सम्मिलित हैं, उसका ऊर्जा का व्यय और स्वयं मानव शरीर भी समाविष्ट है। संस्कृति उन सब बातों का सर्वयोग है, जिन्हें लोग इसलिए करते हैं, क्योंकि उन्हें वैसा करना सिखाया गया है।

कोई एक विशिष्ट संस्कृति उन क्रियाविधियों का समूह होती है, जिनके द्वारा किसी एक स्थान में रहने वाले लोग किसी एक काल में अपना जीवन

बिताते हैं। इस प्रकार की संस्कृति में प्रत्येक तत्व अन्य प्रत्येक तत्व से इस प्रकार गुँथा होता है कि वह समूची वस्तु एक कोश (सैल) या एक सजीव अंगी के रूप में कार्य करने वाली इकाई बन जाती है। संस्कृतियाँ क्षेत्रीय सीमान्तों को पार करके परस्पर मिलती हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे कि अपने-अपने मतों के अनुसार जीवन बिताने वाले लोग परस्पर मिलते हैं। समय बीतने के साथ-साथ संस्कृतियाँ एक-दूसरे की बातों को अपना लेती हैं, परस्पर मिल जाती हैं और परिवर्तित हो जाती हैं। उन मानव प्राणियों की बीस हज़ार पीढ़ियों की अवधि में, जो मध्य तथा उपरि प्लीस्टोसीन कालों में रहते रहे थे, अब से दस हज़ार वर्ष पहले तक मानवीय संस्कृति का ऊपर की ओर मोड़ बहुत धीमी गति से और लगभग अलक्ष्य रूप से, किन्तु फिर भी संचयी ढंग से बढ़ रहा था और पिछली तीन सौ पीढ़ियों में, जो कि कृषि का आरम्भ होने के बाद से अब तक बीती हैं, इस मोड़ की गति अकल्पनीय रूप से तीव्र हो गई है। फिर भी इस अवधि में मनुष्य की शरीर-रचना वही की वही रही है।

संस्कृति में हुए प्रगतिशील परिवर्तनों ने उन मनुष्यों की संख्या में भी वृद्धि कर दी है, जो किसी एक भूखण्ड पर अपना जीवन बिता सकते हैं और उनके श्रम के विभाजन की जटिलता भी बढ़ा दी है। मनुष्य के प्राइमेट (वानर) सम्बन्धियों में सारे दिन नर और मादाएँ लगभग एक से ही काम करते हैं और पुराने बन्दर और कपि (एप) शायद ही कभी अपनी प्रौढ़ावस्था को पार कर पाते हैं; हमारे दूरस्थ सम्बन्धियों में लिंग या आयु के आधार पर श्रम का कोई विभाजन नहीं है। आदिम मनुष्य ने, जो औज़ारों और वाणी से सज्जित था, अपने जीवित बचे रहने के लिए आवश्यक कार्यों का विभाजन कर लिया, जिसके फलस्वरूप पुरुष तो शिकार करने लगे और स्त्रियाँ चीज़ें इकट्ठी करने और बच्चों की देखभाल करने लगीं। जहाँ और जब भोजन की प्रचुरता होती और लोग एक जगह स्थायी रूप से घर बनाकर रह पाते, तब बूढ़े लोग इतने काफी समय तक जीवित रहते थे कि वे बालकों को शिक्षा देने का और जिस-जिस को भी कोई कष्ट हो, उसकी चिकित्सा करने का कार्य कर सकें। इस प्रकार जब अभी मनुष्य शिकारी ही था, तभी आयु के आधार पर भी श्रम का विभाजन हो गया था।

मानवीय अस्तित्व की इस दीर्घकालीन आखेट की प्रावस्था (दौर) में एक

तीसरे प्रकार का श्रम-विभाजन भी शुरू होने लगा था, जो व्यवसायों (पेशों) में अन्तरों पर आधारित था। यह किसी सीमा तक औज़ार बनाने में, किन्तु उससे भी अधिक चिकित्सा करने और ऋतु परिवर्तनों के कारण मानवीय सम्बन्धों में उत्पन्न होने वाले विक्षोभों के बारे में व्यवहार करने की कलाओं में था। यह विभाजन इतना बड़ा नहीं था कि इससे मानवीय समूहों की आधारभूत रचना पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ता। शिकारी लोग दो से लेकर बीस या इससे भी अधिक कुटुम्बों के दलों में रहते थे। ये कुटुम्ब सामान्यता एक दूसरे के सम्बन्धी होते थे। प्रत्येक समूह में कुटुम्ब तो स्वतन्त्र होते थे, किन्तु उनका नेतृत्व किसी एक ऐसे प्रोढ़ व्यक्ति के हाथ में होता था, जो मांस अर्जन करने के अपने कौशल की दृष्टि से, झगड़ों को रोकने और उनका निपटारा करने की दृष्टि से और पड़ोस के आखेट क्षेत्रों में रहने वाले अन्य दलों के नेताओं के साथ विदेशी मामलों को ठीक ढंग से चलाने की दृष्टि से औरों की अपेक्षा अधिक निपुण समझा जाता था।

इस प्रकार के दल में प्रत्येक व्यक्ति अन्य प्रत्येक व्यक्ति को जानता था। और नयाचार बिलकुल सरल था। जिन लाखों वर्षों में मनुष्य शिकारी के रूप में जीवन यापन करता रहा, उसमें उसने अपने दल के सदस्यों के साथ घनिष्ठ (अन्तरंग) होने की और अन्य बाहरी व्यक्तियों के साथ औपचारिक व्यवहार करने की क्षमता पूरी तरह विकसित कर ली। युवक लोग स्त्रियों के साथ, बच्चों के साथ और बड़ी आयु के लोगों के साथ इस प्रकार का व्यवहार करने की रीतियाँ सीख लेते थे, जिससे की सब सम्बन्धित लोगों के लिए जीवन सरलतम रहे और इस प्रकार समष्टि रूप में गिरोह के जीवित बचे रहने की क्षमता बढ़ जाय।

ज्यों-ज्यों मनुष्य ने प्रकृति की शक्तियों पर अधिकाधिक विजय प्राप्त की और ज्यों-ज्यों कार्य की तकनीकों के आधार पर श्रम का विभाजन बढ़ा, त्यों-त्यों अधिक और लोग एक दूसरे के सम्पर्क में आने लगे। कुटुम्ब और गिरोह के अलावा भी जो-जो भी संगठन बने, उनमें से प्रत्येक प्रकार के संगठन की एक प्रकार के नेतृत्व और व्यवस्थित व्यवहार की एक प्रणाली भी बनती गई। धातु का काम करने वालों की दूकान, किसी नौका के नाविक, किसी व्यापारिक यात्री दल के सदस्य, युद्ध के लिए जाने वाला दल, इन सबकी एक संरचना (ढाँचा) रखनी ही पड़ती थी, जिसमें एक नेता होता था, उसके कुछ अनुयायी

होते थे और क्रियाविधि (काम-काज के ढंग) के कुछ नियम होते थे। ज्यों-ज्यों इन संस्थाओं का आकार और संख्या बढ़ने लगी, त्यों-त्यों वे अधिकाधिक औपचारिक होती गईं। एक छोटे से अन्तरंग दल के सदस्यों के लिए तो यह सरल है कि वे स्वाभाविक लेन-देन के व्यक्तिगत औपचारिक आधार पर आपस में काम चला सकें, किन्तु जब विभिन्न कुटुम्बों और विभिन्न आमने-सामने रहने वाले समूहों, जैसे किसी गाँव के अलग-अलग मुहल्लों, के लोगों का प्रश्न उठता है, तब यदि पारस्परिक व्यवहार के लिए नियम न बने हुए हों और उनका पालन न किया जाता हो, तो कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। यह बात अब भी सत्य है, क्योंकि मानव प्राणी अब भी जीव-विज्ञान की दृष्टि से शिकारी हैं। हम में से प्रत्येक का एक ऐसे अन्तरंग व्यक्तियों का समूह होता है, जिनके साथ वह आमोद-प्रमोद कर सकता है, और अन्य लोगों के साथ वह अपेक्षाकृत अधिक औपचारिक ढंग से व्यवहार करता है।

जब संस्कृति की जटिलता बढ़ी, तब जो संस्थाएँ उत्पन्न हुईं, वे गतिविधि की विशिष्ट प्रणालियों, जैसे अध्यापन, निर्माण, व्यापार और धार्मिक सभाओं में भाग लेना इत्यादि, का सहारा लेकर बढ़ीं। गिरोह बढ़कर कबीला बन गया कबीला और बड़ा होकर राष्ट्र बन गया। राष्ट्र का विस्तार साम्राज्य के रूप में, साम्राज्यों का विस्तार संघों के रूप में और संघों का विस्तार संयुक्त राष्ट्र के रूप में हो गया है और अब स्थिति यहाँ तक आ पहुँची है कि ठीक उसी समय, जब कि पृथ्वी के केन्सर का चरम संकट काल आ पहुँचा है, पृथ्वी के सब लोग एक राष्ट्र बन जाने के बिलकुल किनारे पर खड़े हुए हैं। इन दोनों में से, विनाश या एकता में से, कौन-सी चीज़ पहले आ जायगी, यह प्रश्न सन् 1960 में एक विवादास्पद प्रश्न था।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम तिहाई भाग में जब विज्ञान को, जो उससे पहले धर्मशास्त्रियों और विद्वानों का खिलौना बना रहा था, उद्योगों की, जो पहले कारीगरों के हाथ में थे, की सेवा में लगा दिया गया, तब संस्कृति की तीव्र गति और भी तीव्रतर हो गई। विज्ञान और उद्योग विद्या का विवाह तब निष्पन्न हुआ, जबकि विज्ञान को धर्म और विद्वत्तायुक्त नयाचार से पृथक् कर दिया गया और इसके फलस्वरूप विज्ञान की उन्नति हुई, और अब स्थिति यह हो गई है कि मनुष्य पृथ्वी और नक्षत्रों की भौतिक प्रकृति को समझने लगा है और

उन अपरिवर्तनशील नियमों को समझने की कोशिश कर रहा है, जिनसे यह सारा ब्रह्माण्ड शासित है। यह एक ऐसी वस्तु है, जिसकी ओर अन्तःस्फुरणा वाले व्यक्ति अनादि काल से पहुँचने का यत्न करते रहे थे और इसे उन प्रतीकों के द्वारा अभिव्यक्त करते रहे थे, जो उनके अपने कालों के लिए उपयुक्त थे। इस प्रकार विज्ञान में भी चरम उन्नति का शिखर ठीक उसी समय आ पहुँचा, जबकि पृथ्वी के विनाश और सामजिक संरचना के चरम शिखर आ उपस्थित हुए। ये तीनों शिखर एक ही चित्र के अंश थे।

इस सबसे पता चलता है कि मानवीय इतिहास कुछ नैसर्गिक नियमों का अनुसरण करता रहा है। इनमें से एक यह जैव नियम है कि जब एक बार एक स्पीशिज़ विकसित हो चुकती है, तब वह काफी लम्बे समय तक किसी दूसरी स्पीशिज़ में परिवर्तित नहीं होती। यही कारण है कि मनुष्य की जैव क्षमताएँ एक शिकारी का जीवन बिताने के लिए सन्नद्ध हैं और यही कारण है कि सबसे अधिक सन्तोषजनक सभ्यताएँ वे है, जिनमें इन क्षमताओं को पूरी तरह अभिव्यक्त होने की छूट मिल पाती है। एक और नियम न्यूनतम परिश्रम का हैं, जिसे हेनरी ऐडम्स ने अब से कोई आधा शताब्दी पहले स्पष्ट किया था। यही वह नियम है, जिससे सामाजिक व्यवस्थाओं की संसक्ति (एक-दूसरे से सटे रहने की प्रवृत्ति) और आन्तरिक संरचना और प्रतीकों की आपेक्षिक स्थिति जैसे, भाषा, की व्याख्या होती है। तीसरा नियम त्वरण (ऐक्सैलरेशन) की संचयी वृद्धि का नियम है। जिस प्रकार कोई पत्थर त्वरण के एक नियत वेग से नीचे गिरता है, उसी प्रकार संस्कृति भी उसी ढंग से संचित होती रहती है। जब वह पत्थर भूमि पर पहुँचता है, उसी समय एक भौतिक चरम सीमा का क्षण आ जाता है। जब मनुष्य की संस्कृति पृथ्वी के नियम आयामों से भी अधिक बढ़ जाती है, तब एक मानवीय और साथ ही भौतिक चरम सीमा का क्षण मनुष्य के सामने आ उपस्थित होता है। हमें अब इसके विषय में क्या करना है, यही वह प्रश्न है, जिसे कि सारा संसार पूछ रहा है।

इस प्रश्न का उत्तर दे पाने की हमारी आशा कुछ सीमा तक मनुष्य की प्रकृति को और उन सोपानों की, जिनसे होता हुआ वह इस चरम सीमा के बिन्दु तक आ पहुँचा है, प्रकृति को समझ पाने पर निर्भर है यदि यह पुस्तक उस अवबोधन(समझ पाने) का प्रारम्भ करने में कुछ योग दे सके, जो कि इस

अन्धकार के क्षण में बहुत आवश्यक है, तो मुझे अतिशय प्रसन्नता होगी, क्योंकि मैं भी चाहता हूँ कि हमारे आगे जो घटनाएँ आने वाली हैं, उनके बाद भी मैं बचा रहूँ और अपने सब रंगों, विश्वासों और संस्कृतियों वाले साथी मनुष्यों के साथ शान्ति और अपने अन्तर्विवेक को बनाये रखते हुए जीता रह सकूँ। परन्तु अब हमें अपनी कहानी शुरू करनी चाहिए। चाहे इसका परिणाम कुछ क्यों न निकले, किन्तु मनुष्य की कहानी बड़ी विलक्षण और नाटकीय है और इसलिए सुनाने योग्य तो है ही।

1

आदिमतम मनुष्य

इतिहास की चार प्रावस्थाएँ (दौर)

प्राकृतिक दृष्टि से मानवीय इतिहास की चार प्रावस्थाएँ हैं। पहली प्रावस्था में मनुष्य के विलुप्त हो चुके एक रूप, उतान मानुष (होमो इरैक्टस), की पाँच जातियाँ 'पुरानी दुनिया' (नई दुनिया अमेरिका को कहा जाता है) के स्थल भागों में शीत-कालीन हिम रेखा के दक्षिण में निवास करती थीं; एक चीन इसका अपवाद था, जहाँ एक जाति इस रेखा के उत्तर में रहती थी। जब यह पहली प्रावस्था शुरू हुई, तब तक उन मनुष्यों ने पहचाने जाने वाले औज़ार बनाना और सम्भाव्यतः बोलना भी सीख लिया था। इसके कुछ समय बाद उनमें से कुछ ने आग जलाकर हाथ-पाँव सेकना और खाना पाकना सीख लिया था। इस प्रावस्था के मध्य तक उत्तान मानुष की कम-से-कम एक जाति (रेस) हमारी वर्तमान स्पीशिज़ की एक जाति के रूप में विकसित हो चुकी थी और इस प्रावस्था के समाप्त होने से पहले ही उत्तान मानुष इस पृथ्वी से लुप्त हो चुका था। यह असल में इतिहास की एक जैव प्रावस्था थी, जिसमें संस्कृति की उत्कृष्टतर क्षमता के कारण सैपियन्स मानुष (मनुष्यों की आजकल पाई जाने वाली जाति) को निर्णायिक रूप से तात्कालिक लाभ रहा और भविष्य के लिए सुअवसर मिला।

दूसरी प्रावस्था में मनुष्य ने खाल के वस्त्र पहनना और गर्म कपड़े सीना सीख लिया था। अब वह उन पशु-बहुल शिकार-मैदानों में आ गया था, जो 'पुरानी दुनिया' के शीतल भागों में पहुँच गया था। अन्य पशुओं से उसमें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यह अन्तर था कि उसने प्राणिजगत् के सभी प्रदेशों पर कब्जा कर लिया था। इतिहास की इस प्रावस्था का अन्त होते-होते उसने धनुष-बाण का आविष्कार किया और अपने शिकार के एक साथी, कुत्ते, को पालतू बना लिया। अब क्योंकि शिकार करना पहले की अपेक्षा सरल हो गया था, इसलिए उसे कला-कौशल का अभ्यास करने के लिए समय मिलने लगा और उसकी निपुणता बढ़ने लगी। इस काल में भी मनुष्य की जैव बनावट को भोजन प्राप्त करने के लिए निर्दोष बनना अभी शेष था, किन्तु इस समय प्रकृति और संस्कृति दोनों में ठीक सन्तुलन था।

तीसरी प्रावस्था में उसने खेती के पशुओं को पाला, पेड़-पौधे लगाने शुरू किये, बर्तनों का आविष्कार किया, गाड़ियाँ बनाईं, ताँबे को गलाया, लेखन का आविष्कार किया और तेज़ी से एक के बाद एक साँस्कृतिक प्रगतियाँ कीं, जो द्रुत वेग से घोड़ों, लोहे, मुद्रा, तोपों, छपाई, गहरे समुद्रों में जाने वाले जहाज़ों, पत्थर के कोयले, भाप के इंजिन, बिजली और उन सब आधुनिक आविष्कारों तक जा पहुँची, जिनके द्वारा हम आजकल की भूमंडलीय यात्राओं, संचार, साधनों और व्यापार तक पहुँच गए हैं। इस प्रावस्था में उसने पृथ्वी की सामग्रियों का अपव्यय किया और उस पृथ्वी को और स्वयं अपने आपको भी नष्ट करने के साधन ढूँढ निकाले। संस्कृति प्रकृति को गँवा कर उन्नत हुई और उससे प्रकृति, संस्कृति और स्वयं मनुष्य को खतरा उत्पन्न हो गया। तीसरी प्रावस्था की समाप्ति कर मानवीय संस्कृति की उससे पहली लगभग सभी प्रावस्थाएँ साथ-साथ विद्यमान थीं।

अब हम इतिहास की चौथी प्रावस्था की देहली पर खड़े हैं और हमारे सामने तीन बातों में से किसी एक को चुनने का प्रश्न है : या तो संसार नष्ट हो जाएगा, या प्रकृति मनुष्य को गंवाकर अपना सन्तुलन फिर प्राप्त कर लेगी, या मनुष्य, जब वह संसार की संस्कृतियों को उसी प्रकार एक करना सीख लेगा, जैसे कि उसके पूर्वज ने मनुष्य मात्र को एक स्पीशिज़ बना लिया था, तब वह अपनी साँस्कृतिक सम्पत्ति को गँवाये बिना प्रकृति की ओर वापस लौट आयेगा। जैसे मनुष्य ने उस समय विद्यमान मानव स्पीशिज़ों को उच्चतम जैव स्तर पर एक कर लिया था, उसी प्रकार हमें मनुष्य को इस समय विद्यमान उच्चतम सांस्कृतिक स्तर पर एक करना होगा, अन्यथा क्रम-विकास

समाप्त हो जायेगा।

हमारी कहानी हिमयुग के आरम्भ से अर्थात् लगभग सात लाख वर्ष पहले से शुरू होती है। इसमें से पहली प्रावस्था में छह लाख पचास हज़ार वर्ष बीते, या यों कहें कि मानवीय इतिहास के ज्ञात काल का 90 प्रतिशत से अधिक अंश इस प्रावस्था में बीता। दूसरी प्रावस्था चतुर्थ हिमाच्छादन के बढ़ाव के काल में प्रारम्भ हुई और बीस हज़ार से भी अधिक वर्ष तक बनी रही। तीसरी प्रावस्था, जो अब समाप्ति पर है, ईसा से लगभग सात हज़ार वर्ष पहले से शुरू हुई थी और यह इस सारे काल का दो प्रतिशत से भी कम अंश है। यह कोई नहीं जानता कि चौथी प्रावस्था कितने समय तक रहेगी।

यह अध्याय और दूसरा अध्याय पहली प्रावस्था से सम्बन्धित हैं, जो इतिहास की तीन पूरी हो चुकी प्रावस्थाओं में सबसे लम्बी और सबसे कम ज्ञात है। इस प्रावस्था में मानव प्राणियों ने एक-दूसरे से व्यवहार करने की आधारभूत आदतें अर्जित कर ली थीं, जो अब भी व्यक्तियों, समुदायों और राष्ट्रों के व्यवहार की मार्ग-दर्शक हैं। ये आदतें ही मानव स्वभाव हैं, जिसे हृदयंगम करने का सर्वोत्तम उपाय यह अध्ययन करना है कि यह बना कैसे। परन्तु पहले हमें यह बताना होगा कि हमारे पूर्वज किस प्रकार कपियों (एपों) से आस्ट्रेलौपिथैसाइन, जो दो पैरोंवाले प्राइमेटों (वानरों) का एक प्राचीनतर रूप था, बनते हुए मनुष्य रूप में विकसित हुए।

भूमि पर उतरने का साहसिक कार्य

एक करोड़ तीस लाख से भी अधिक वर्ष हुए; उस समय तक पृथ्वी पर मनुष्य का प्रथम आविर्भाव भी नहीं हुआ था; तब उसके वृक्षों पर रहने वाले अति प्राचीन पूर्वजों ने मनुष्य बनने की दिशा में बढ़ने की ओर पहला क़दम उठाया। ये पृथ्वी पर उतर आए। यद्यपि उनके शरीर और हाथ-पैर बन्दर (मंकी) जैसे थे, फिर भी इन पूर्वजों की दाढ़ों की गढ़न कपियों (एप) की दाढ़ी जैसी थी, परन्तु उनके भेदक दाँत छोटे और कुंठित थे, जो लड़ने और काटने के लिए उपयुक्त थे। हमारे पूर्वजों के दाँत मुख्यतया चबाने के लिए उपयुक्त थे।

'पुरानी दुनिया' के उष्ण कटिबन्ध के प्रदेशों में किसी स्थान पर,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सम्भवत: अफ्रीका में, इन पशुओं का एक गिरोह जंगल में रहता था। हर रोज़ प्रात:काल दिन निकलने पर वे जागते थे और उनमें से नर अपने परिवारों को आहार प्राप्त करने के इलाकों में अपने साथ चलने के लिए पुकारते थे। वहाँ वे अपना अधिकाँश दिन फल तोड़ने, उन्हें छीलने में और खाने में और चिड़ियों के घोंसलों में से उनके अण्डे और बच्चे लूटने में बिताते थे। परन्तु ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों फल कम और कम होते गए; और अब इन पशुओं ने वन के किसी अन्य भाग में चले जाने का यत्न किया, तब उन्होंने देखा कि उनका मार्ग रूद्ध है। वे जिस ओर भी मुड़ते, उसी ओर वृक्षों का अन्त दिखाई पड़ता। उनके चारों ओर घास ही घास थी। वे फँस गए थे। जब फल और पक्षियों के बच्चे उन्हें मिलने बन्द हो गए, तब उनके सामने नीचे भूमि पर उतर आने के सिवाय और कोई उपाय नहीं रहा।

आहार की उन्मत खोज में उन्होंने कीड़े और उनके अण्डे-बच्चे इकट्ठा करने के लिए पत्थरों को उठाना और गिलहरियों और छछूँदरों को उनके बिलों में से पकड़ने के लिए भूमि को खोदना सीख लिया था। माँस का स्वाद चख लेने के बाद उन्हें हिरणों और अन्य खुरों वाले उन बड़े पशुओं के, जोकि मैदानों में चरा करते थे, माँस का चाव लग गया। परन्तु वे केवल उनके असहाय शावकों को ही अपने हाथों से पकड़ पाते थे। ये पशु शावक नवजात बच्चे होते थे, जिन्हें कि शेरों का आक्रमण होने पर उनकी माताएँ छोड़कर भाग जाती थीं। जब शिकारी पशु बड़े पशुओं के पीछे दौड़ लगाते थे, तब कपि (एप) झपट कर उनके असहाय बच्चों को पकड़ लेते थे। वे गिद्धों, लकड़बग्घों और अन्य मृत-माँस भोजियों से बचते थे और इस प्रकार सरलता से प्राप्त होने वाले माँस के लिए इन कपियों की उनसे प्रतियोगिता शुरू हो गई थी। पृथ्वी पर जीवन जितना रोमांचकारी था, उतना ही खतरनाक भी था। वृक्षों पर रहते हुए उन्हें केवल नीचे गिर जाने का और साँप का ही डर रहता था। भूमि पर उनके एकमात्र प्राइमेट (वानर) प्रतियोगी बन्दर (मंकी) थे, जो उन बैबूनों के पूर्वज थे, जो अब भी अपनी चारों टाँगों से दौड़ते हैं, पत्थर उठाते हैं, फल तोड़ते हैं, कलियों और नये अंकुरों को चबाते हैं और यदि कभी कोई हिरन का बच्चा मिल जाय, तो उसे चुरा लेते हैं।

इस बीच में वे अन्य वानर, जो हमारे पूर्वजों के साथ भूमि पर नीचे उतर

ग्राये थे, फिर वन की सिकुड़ती हुई सीमा की ग्रोर वापस लौट गए। वहाँ से फिर पेड़ों पर चढ़कर रहने लगे ग्रौर उनमें से कुछ विकसित होकर ग्राजकल पाये जाने वाले कपि (एप) बन गए। केवल वे कपि, जो मैदानों में बने रहे, विकसित होकर ग्रास्ट्रैलोपिथैसाइन बने ग्रौर उनमें से कुछ ग्रन्ततोगत्वा मनुष्य बन गए।

कुछ दृष्टियों से कपियों की ग्रपेक्षा बँबूनों का हमारे साथ ग्रधिक साम्य है। परन्तु इसका एकमात्र कारण यह है कि कपि ग्रपने संचलन की दृष्टि से बहुत ही विशेषित हैं। हमारी रसायन ग्रनेक सूक्ष्म बातों, जैसे ग्राधान रुधिर समूहों ग्रौर हमारे मूत्र में निकलने वाले एमीनों ग्रम्लों, की दृष्टि से बन्दरों की ग्रपेक्षा कपियों से ग्रधिक मिलती-जुलती है। एक ग्रवस्था में पहुँचकर चिम्पांजी के भ्रूण का पैर इस दृष्टि से मनुष्य के भ्रूण से मिलता-जुलता होता है कि उसके पाँव का ग्रँगूठा चलने की सुविधा के लिए सीधा ग्रागे की ग्रोर बढ़ा हुग्रा होता है ग्रौर पकड़ने के प्रयोजन के लिए पार्श्व की ग्रोर निकला हुग्रा नहीं होता। जब उसका जन्म काल निकट ग्राता है, तभी जाकर उसके पैर की ग्राकृति हाथ-जैसी हो जाती है। मानवीय पैर किसी भी ग्रवस्था में कपि के पैर से मिलता-जुलता नहीं होरा। चिम्पांजी के भ्रूण के सिर पर मनुष्य-जैसे बाल होते हैं, ग्रौर उनकी भौंहें भी मनुष्य-जैसी होती हैं।

इससे स्पष्ट है कि कुछ मामलों में कपि हमसे ग्रधिक बदले हैं। वे वन में रहने के लिए विशेषित हैं, जबकि हम ग्रनेक प्रकार के परिवेशों में रह सकते हैं। इस विकास की सारी परम्परा में हमारे पूर्वज, केवल उन विशेष बातों को छोड़कर, जिन्होंने उन्हें वनों में ग्रौर घास वाली जमीनों पर, मैदानों में ग्रौर पर्वतों पर मानवीय जीवन के लिए तैयार किया, ग्रन्य सब दृष्टियों से ग्रविशेषित ही रहे। जैसा कि विलुप्त सरीसृपों, पक्षियों, स्तनपायी प्राणियों के इतिहास से जानते हैं, विशेषित होने का ग्रभाव ही जीवित बचे रहने ग्रौर ग्रन्य प्रकार के प्राणियों के साथ प्रतियोगिता में सफलता प्राप्त करने की कुंजी है।

जब मनुष्य पहले-पहल संसार में प्रकट हुग्रा, तब उसमें पाँच ग्रसाधारण विशेष लक्षण थे; कुछ पुराने थे, कुछ नये थे ग्रौर कुछ इन दोनों के सम्मिश्रण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

थे; इन्हीं के कारण उसे पृथ्वी का स्वामी बनने का अवसर मिला। ये विशेष लक्षण थे : उसकी उत्तान (सीधी खड़ी) स्थिति, उसकी मुक्त रूप से गति कर सकने वाली भुजाएँ और हाथ, उसकी सुस्पष्ट फोकस कर लेने वाली आँखें, उसका मस्तिष्क, जो अन्ततोगत्वा सूक्ष्म निर्णय और निश्चय करने में तथा प्रखर प्रत्यक्ष ज्ञान में समर्थ था और उसकी बोलने की शक्ति। ये सब बातें मनुष्य के साथ-साथ किसी सीमा तक बन्दरों और कपियों में भी थीं, परन्तु उनका पूरा सम्मिलन केवल मनुष्य में था और इन विलक्षण क्षमताओं का यह सम्मिलन अपने आप में एक अपूर्व वस्तु बन गया।

उत्तान (सीधे) खड़े होना

पेड़ों पर रहने वाले बन्दर जब विश्राम कर रहे होते हैं या अपने शत्रुओं की ताक में होते हैं, तब वे शाखाओं पर सीधे बैठते हैं और चट्टानों पर बैठने वाले बैबून भी ऐसा ही करते हैं। कुछ ही समय पहले मैंने फिलाडल्फिया के चिड़ियाघर में एक मादा बैबून को देखा था। उसने हाल ही में एक पुत्र को जन्म दिया था। माँ तो कठघरे के फर्श पर लेटी आराम कर रही थी, और उसका बच्चा उसके शरीर के ऊपर से चलता हुआ गया और कूदकर एक ताक-पट्टी पर चढ़ गया। चलता-चलता वह उस ताक-पट्टी के अन्तिम छोर तक चला गया। इस बच्चे को अभी तक चारों टाँगों से दौड़ना नहीं सिखाया गया था। अपनी इस छोटी-सी अवस्था में वह मनुष्य के सीधे खड़े होने की स्थिति और चाल-ढाल का परीक्षण कर रहा था।

सीधा होकर बैठने और कभी-कभी केवल अपने पिछले पैरों पर कुछ क़दम चल लेने से मनुष्य के पूर्वज को सीधा खड़ा होने की स्थिति का कुछ स्वाद तो मिला, परन्तु चारों पैरों से दौड़ने का परित्याग उससे कहीं अधिक गम्भीर वस्तु थी। यह वैसा ही महान् साहस-कार्य था, जैसा कि चमगादड़ों का, जिनके पूर्वजों ने किसी प्राचीन गुफ़ा के अन्धकार में अपनी पहली उड़ान ली थी, या उन पहली सील मछलियों का, जो पानी में ही खाने और सोने के लिए गीली चट्टानों को छोड़कर तैर पड़ी थीं और केवल गर्भ धारण करने और बच्चों को जन्म देने के लिए ही किनारे पर आती थीं। कई दृष्टियों से मनुष्य का सीधे खड़ा होकर चलना पक्षियों के उड़ान के अंगों के विकास से मिलता-जुलता

है। पक्षियों और मनुष्यों, दोनों में अगले और पिछले अंग (हाथ और पाँव) एक-दूसरे से आकृति की और उपयोग की दृष्टि से पृथक् रूप में विकसित हुए हैं। यह बात कशेरूकी (मेरूदंड वाले) प्राणियों में बहुत कम देखी जाती है। पक्षियों और मनुष्यों, दोनों को ही अपने बच्चों को गति करना सिखाना पड़ता है—पक्षियों को उड़कर और मनुष्यों को चलकर।

जब वे प्राइमेट (वानर), जिन्होंने बहुत समय पहले वन को त्याग दिया था, अपने आपको भूमि पर के जीवन के अनुसार ढालने लगे, तो वे अनेक प्रकार के भू-प्रदेशों में जा पहुँचे। उनमें से कुछ चट्टानी प्रदेशों में जाकर रहने लगे, जैसे कि बर्बर कपि (बाबैरी एप) और बैबून अब भी रहते हैं। वे आरोहण करने वाले प्राणी हैं—अन्तर इतना ही है कि वृक्षों का स्थान चट्टानों ने ले लिया है। अपने पत्थर के ऊँचे आसनों पर बैठे हुए वे किसी भोज्य वस्तु की खोज में भू-भाग को दूर-दूर तक देख सकते हैं। परन्तु हमारे पूर्वजों के विष-दन्त नहीं थे। वे केवल शस्त्रों से वध कर सकते थे। शस्त्रों को औज़ारों से बनाना पड़ता है और औज़ार बनाने के लिए योजना बनाने और सीखने की आवश्यकता होती है। योजना बनाने और सीखने के लिए ऐसी मस्तिष्क शक्ति की आवश्यकता है, जो अधिकाँश प्राइमेटों (वानरों) की मस्तिष्क-शक्ति से उत्कृष्ट हो। औज़ार बनाने के लिए अच्छे मस्तिष्क का महत्त्व अधिक है। शस्त्र लेकर शिकार करने से अंगों की स्थिति पर भी प्रभाव पड़ा, क्योंकि जिस प्राणी ने शस्त्र पकड़ा हुआ हो, उसे उत्तान होकर दौड़ना होगा। यदि वह अपने औज़ारों को, शस्त्रों को और माँस को युद्धस्थल से दूर ले जाना चाहता है, तो उसे उत्तान रहकर चलना और खड़ा होना सीखना होगा। हो सकता है कि इस प्रकार औज़ारों के निर्माण से ही घटनाओं की वह शृंखला शुरू हुई हो, जिसके फलस्वरूप उसे उत्तान रहने की स्थिति अपनानी पड़ी हो।

अब क्योंकि उसने अपनी उठने-बैठने और चलने की आदतें बदल ली थीं, इसलिए उसे अपनी पुरानी विशेषताओं में कुछ देर हेर-फेर करके कई नई विशेषताएँ अपनानीं पड़ीं। उसका धनुषकार मेरुदण्ड अब S के आकार का बन गया और उसकी दुर्बल श्रोणी, इतनी मज़बूत बन गई कि वह उसके सारे धड़, सिर और ऊपर के अंगों के बोझ को संभाल सकती थी। उसकी टाँगें पहले की अपेक्षा लम्बी, सीधी और मज़बूत बन गईं और उसके पाँव इतने

कठोर और मज़बूत हो गए कि वे लम्बी-लम्बी यात्राओं में उसके समूचे शरीर के बोझ को संभाल सकते थे। जब वह एक बार शिकारी बन गया, जैसे कि कपियों के पूर्वज कभी नहीं बने थे, तब वापस लौटने का कोई प्रश्न नहीं रहा। उसके बाद, सर्वप्रथम पक्षियों के पंखों के विकास की भाँति, इन परिवर्तनों को भी द्रुत गति से होना था, अन्यथा हम आज इस संसार में होते ही नहीं।

मुक्त रूप से हिलाई जा सकने वाली भुजाएँ और पकड़ने वाले हाथ

उत्तान खड़ा होने और चलने के कारण मनुष्य के हाथों को चलने-फिरने के बोझल काम से मुक्ति मिल गई। इस दृष्टि से उसे पक्षियों, चमगादड़ों और समुद्र के स्तनपायी प्राणियों की अपेक्षा अधिक सुविधा रही, क्योंकि उनके अगले अंग, जो पंखों और तैरने की झिल्लियों के रूप में बदल गए थे, अब भी मुक्त नहीं हो पाये थे। उन्होंने चलने की जगह उड़ना या तैरना भर शुरू कर दिया था। सारे प्राणियों में केवल मनुष्य ही ऐसा है, जिसके हाथ पूरी तरह कार्य करने के लिए, संकेत करने के लिए या प्रार्थना के समय परस्पर जुड़ने के लिए और उन सैकड़ों बातों के लिए, जिन्हें वह उन हाथों से करता है, लगाये जा सकते हैं। सीधे खड़े होने या चलने की भाँति इस महान् क़दम का सूत्रपात भी प्राइमेटों (वानरों) से ही हुआ था। कपि और बन्दर जब चढ़ या चल नहीं रहे होते, तब वे अपने हाथों का उपयोग चीज़ों को उठाने, खाना खाने या एक दूसरे को खुजाने और सहलाने में करते हैं।

मानवीय बाहें और हाथ दो लगभग पूर्ण और एक-दूसरे के ऊपर आने वाले वृत्तों में घुमाये जा सकते हैं। मनुष्य अपनी बाँह को हिलाकर ऊपर, इधर-उधर, अपने पीछे या अपने सामने पड़ी किसी भी ऐसी वस्तु तक पहुँचा सकता है, जो बाँह की लम्बाई तक की दूरी पर पड़ी हो, और अपनी कलाई को मोड़कर वह अपनी हथेली को ऊपर या नीचे की ओर कर सकता है। उसके हाथ की स्थिति उसकी भुजा के साथ चाहे कोई भी कोण क्यों न बना रही हो, फिर भी वह अपनी अंगुलियों को खोल या बन्द कर सकता है। एक हाथ में किसी वस्तु को पकड़कर दूसरे हाथ से वह उस पर काम कर सकता है। अन्य किसी भी प्राइमेट (वानर) में ये योग्यताएँ पूरी तरह मनुष्य जैसी नहीं हैं। यदि आजकल के सर्वोत्तम इंजीनियर भी मिलकर सप्ताहों तक एक

ऐसे पूर्ण औज़ार का अभिकल्प (डिज़ाइन) बनाने बैठ जाएँ, जो चीज़ों को पकड़ सके और उन्हें सूक्ष्मता से हिला-डुला सके, तो वे मानवीय हाथ से बढ़कर और कुछ नहीं बना पाएँगे।

सुस्पष्ट फोकस करने वाली आँखें

परन्तु यदि मनुष्य अपने हाथ में पकड़ी हुई वस्तु को स्पष्ट रूप से और यथावत् परिदृश्य में देख न सके, तो वह उस वस्तु पर काम नहीं कर सकता। हम ऐसा कर पाने में समर्थ हैं, क्योंकि हमें प्राइमेटों (वानरों) की दृष्टि सीधे उत्तराधिकार में मिली है। वानरों को अच्छी आँखें चाहिएँ, जिससे वे यह जान सकें कि वे कहाँ हैं और वे कहाँ जा रहे हैं? उष्ण कटिबन्ध के वनों के वृक्ष बहुत ऊँचे होते हैं। यदि किसी बन्दर के हाथ की पकड़ चूक जाय और वह उन शाखाओं से, जो उसका राजमार्ग हैं, नीचे गिर पड़े, तो वह सौ फुट से भी अधिक नीचे गिर सकता है और मर सकता है। यह कठोरतम श्रेणी का नैसर्गिक वरण है। जो चीज़ वृक्षों पर रहने वाले बन्दरों के लिए भली है, वह भूमि पर रहने वाले मनुष्यों के लिए और भी भली है।[1]

पेड़ों में वानर-दृष्टि का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू उसकी स्टीरियोस्कोपी (समविन्यासी) विशेषता है: अर्थात् यह तथ्य, कि दो आँखें एक-दूसरे के पास-पास स्थित हैं और वे एक ही दिशा की ओर उन्मुख हैं। दोनों आँखों में बनने वाली प्रतिमाएँ एक-दूसरे के ऊपर आ जाती हैं और क्योंकि आँखें परस्पर एक-दूसरे से अलग हैं, इसलिए उनकी धुरियों के कोणों में हल्का-सा अन्तर इस संयुक्त प्रतिमा को बहुत स्पष्ट रूप से दिखाने में सहायक होता है। इस प्रकार बन्दर यह देख सकता है कि उसे अपने हाथों और पैरों से कहाँ पकड़ करनी है। यदि वह किसी फल को तोड़ ले और अपने दाँतों से छीलने

---

[1] द्विपार्श्वी दृष्टि मुख्यरूप से हाथ की पहुँच के अन्दर विद्यमान वस्तुओं को बारीकी से देखने के लिए उपयुक्त है, जबकि दूरी का अनुमान इस प्रकार की बारीकियों, जैसे बनावट के अन्तर इत्यादि, को देखने पर निर्भर है। देखिये गरहार्डट वॉन बोनिन, 'दी आइसोकोर्टैक्स ऑफ़ टार्सियस', जर्नल ऑफ़ कम्पैरेटिव न्यूरोलौजी, खंड 95, अंक 3 दिसम्बर 1951।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के लिए उसे अपने हाथों में उठा कर देखें, तो वह उसे अपनी नाक से एकाध फुट दूर रखकर अपनी दृष्टि को उस पर सुस्पष्ट रूप से फोक्स कर सकता है। वह प्रतिमा के केन्द्र को दो संवेदनशील बिन्दुओं पर, जिनमें से प्रत्येक उसकी आँख के निचले भाग में होता है, फोक्स करता है और वह सारे फल को भली भाँति देख सकता है कि उसमें कोई खराबी तो नहीं है। क्योंकि प्रत्येक आँख का मध्य भाग रंग का अभिलेख करता है, इसलिए वह जान सकता है कि वह फल पका है या नहीं। अपने हाथ में इतने निकट पकड़ी हुई वस्तु पर फोक्स करने के लिए उसकी आँखों को थोड़ा-सा एक-दूसरे की ओर झुक आना होता है, इसलिए क्षण भर के लिए वह भैंगा-सा लगता है। एक-दूसरे के ऊपर आने वाली प्रतिमाएँ, दो संवेदनशील बिन्दुओं पर फोक्स होना, रंग पहचानने की दृष्टि और आवश्यकतानुसार थोड़ा-सा भैंगा हो जाने की क्षमता मानवीय दृष्टि से महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं, जिनके कारण मनुष्य के लिए काम कर पाना और पढ़ पाना सम्भव है। इस एक विशेषता की दृष्टि से वह बन्दर की अपेक्षा कुछ अधिक सज्जित नहीं है। यदि बन्दर में मनुष्य की अन्य विशिष्ट शारीरिक सज्जाएँ भी होतीं, तो वह भी काम कर सकता और पढ़ सकता था।

तर्कशील मस्तिष्क

इसका सबसे महत्त्वपूर्ण भाग एक पीली-सी धूसर सामग्री का पुँज है, जो कपाल के अन्दर इस प्रकार भरा हुआ है, जैसे किसी फुटबाल के खोल में कोई छिद्रिल रबड़ का टुकड़ा भरा हो। शवच्छेदन की मेज़ पर रख देने पर मनुष्य का मस्तिष्क हृदय से, यहाँ तक कि वृक्क से भी कम प्रभावोत्पादक दीख पड़ता है। शायद यही कारण हो कि प्राचीन लोग बुद्धि और संवेगों का आधार-स्थान इस स्पष्ट दिखाई न पड़ने वाले अंग, मस्तिष्क, को न समझकर हृदय को ही समझते थे। मस्तिष्क किस प्रकार काम करता है, इसके बारे में यद्यपि हमें पहले की अपेक्षा अधिक पता चल चुका है, फिर भी अभी हमें इस सम्बन्ध में जानने को बहुत कुछ बाकी है।

जब हम किसी बन्दर के मस्तिष्क को किसी एक मेज पर मनुष्य के मस्तिष्क के पास रखकर देखते हैं, तो हमें उसकी बाहरी समूची आकृति में बहुत कम अन्तर दिखाई पड़ता है। इसका कारण यह है कि इन दोनों ही नमूनों

में मस्तिष्क वृन्त (ब्रेनस्टैम), जिससे स्वतः चालित क्रियाएँ नियन्त्रित होती हैं, वानरों की आँखों की विशेष गतियों का ध्यान रखने के लिए विकसित हो चुका है और वह वानरीय आँख बन्दरों और मनुष्य में एक-जैसी है और इसका कारण यह भी है कि अनुमस्तिष्क (सैरीबलम) वृक्षवासी जीवन के लिए और उत्तान होकर चलने के लिए आवश्यक बढ़िया सन्तुलन की व्यवस्था करने के लिए विशेषरूप से विकसित हुआ है।

परन्तु मनुष्य का मस्तिष्क आकृति की दृष्टि से उतना अद्भुत नहीं है, जितना कि आकार की दृष्टि से ; यह अपने आप में भी और मनुष्य के शरीर आयतन के साथ अनुपात की दृष्टि से भी विलक्षण है। कुछ हालैंडवासी चेता-वैज्ञानिक जिन्होंने इस तपस्या के सम्बन्ध में बहुत अनुसंधान किया है, इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि स्तनपायी प्राणियों के मस्तिष्क उनके धूसर कोशों की संख्या को दुगना करते जाने की पुनरावर्ती प्रक्रिया के द्वारा विकसित हुए हैं।[1] मस्तिष्क और शरीर के आकार के अनुपात के हिसाब से, जो उन्होंने इस आधार पर लगाया है और जिसे उन्होंने सब प्रकार के बाह्य तत्वों, जैसे सारे शरीर के आकार, के लिए बनाये गए विशेष गुरों द्वारा ठीक (संशोधित) कर लिया है, उन्होंने तब स्तनपायी प्राणियों को मस्तिष्क विकास की पाँच आनुक्रमिक श्रेणियों में बाँटा है इनमें सबसे ऊँची श्रेणी में केवल आधुनिक मनुष्य ही आता है। जब उसने मानव बनने की प्रक्रिया शुरू की थी तब उसने शुरूआत उसी स्तर से की थी, जिस पर कि अन्य प्राइमेट (वानर) हैं ; वह स्तर उसकी वर्तमान स्थिति से एक दाँता नीचे है।

इस सम्बन्ध में सन्देह की गुँजाइश बहुत कम है कि सांस्कृतिक जीवन का आरम्भ होने के साथ-साथ उसके हाथों और आँखों में जो कुशलताएँ आने लगीं उनके कारण बुद्धि की क्षमता और इस कारण अपेक्षाकृत बड़े मस्तिष्क का महत्त्व बढ़ गया। मस्तिष्क का आकार जितना ही अधिक बड़ा होगा, सांस्कृतिक प्राणी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए छोटे मस्तिष्क की अपेक्षा वह

---

[1] इस सम्बन्ध में देखिये : ऐस. टी. बौक, "सैफेलाइजेशन एण्ड बाउंड्री वैल्यूज़ ऑफ़ दि ब्रेन एण्ड साइज़ इन मैमल्स", Proc. Kon, Ned Akad. v. Wetenschap, Amsterdam, खंड 13, 1939, पृष्ठ 512-25।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उतना अधिक उपयुक्त होगा, क्योंकि उसमें साहचर्य, सन्देह या हिचक और रचनात्मक विचार के लिए अधिक खुला स्थान होगा। लेकिन साहचर्य क्षेत्र की वृद्धि ने, जो मस्तिष्क के कुल आकार में वृद्धि के साथ-साथ हुई थी, प्राइमेटों के बच्चों की सीखने की प्रक्रिया को मन्द कर लिया और उस समय की अवधि को लम्बा कर दिया, जिसमें कि शिशु को अपने माता-पिता पर निर्भर रहना पड़ता है। मनुष्यों में जन्म के समय मस्तिष्क का आकार युवावस्था के आकार का केवल 23 प्रतिशत होता है, जबकि कपियों (एपों) में ये संख्याएँ इस प्रकार होती हैं—औरंग में 40 प्रतिशत, चिम्पाँजी में 45 प्रतिशत और गुरिल्ला में 59 प्रतिशत। इन अनुपातों से यह समझने में सहायता मिलती है कि चिम्पाँजी का बच्चा मनुष्य के बच्चे की अपेक्षा तब तक क्यों अधिक जल्दी-जल्दी सीखता है, जब तक कि मनुष्य का बच्चा बोलना शुरू नहीं कर देता; और इस प्रकार मनुष्य का बच्चा मुख्य रूप से वाणी द्वारा बातचीत करके अधिक सीखना शुरू करता है और दृष्टि उद्दीपन द्वारा कम।

जो प्राणी जितना अधिक सरल जीवन बिताता है, उतना ही शीघ्र उसे अपने बच्चों की देख-भाल से मुक्त हो जाना आवश्यक होता है और उतना ही शीघ्र उसके बच्चों के लिए यह आवश्यक होता है कि वे अपने सहारे जीएँ। मनुष्य को तब तक पूरे आकार का मस्तिष्क स्थायी रूप से प्राप्त नहीं हुआ था, जब तक कि वह सांस्कृतिक मार्ग पर इतना काफ़ी दूर तक नहीं चल लिया कि वह अपने बड़े मस्तिष्क वाले बच्चों का पालन-पोषण करने में समर्थ हो सके। ये बच्चे उसे बहुत मन्द और मूढ़ लगे होंगे और इसके फलस्वरूप वे बड़े होने तक बच न पाते होंगे। यह बहुत सम्भव है कि इस प्रकार के बड़े मस्तिष्क वाली एक से अधिक नस्लें उत्पन्न हुई हों और जब तक यह परिवर्तन इतने बड़े जन-समुदाय में हुआ हो कि वह परिवर्तन को बचाये रखने और उसकी क्षमताओं का लाभ उठाने में समर्थ हो, तब तक नस्लें मरकर समाप्त हो गई हों।

वाणी की शक्ति

किसी प्राणी का मस्तिष्क कितना ही बड़ा क्यों न हो, किन्तु यदि उसने इस बीच में बोलना न सीख लिया होता, तो जिसे हम 'विचारना' कहते हैं,

उसे कर पाने में वह असमर्थ ही रहता है। यह दूसरी योग्यता बहुत देर तक पीछे नहीं रह सकती थी, क्योंकि-सीधा होकर बैठने की आदत, उँगलियों के सामने आ सकने वाले अँगूठे और सूक्ष्म दृष्टि और स्वयं मस्तिष्क की आकृति की तरह —वाणी का बीज भी वृक्षों पर जीवन-यापन करने के काल से ही उसमें आया था। यदि आप देहात में रहते हैं, तो जिन ध्वनियों को सुनकर आपकी नींद खुलती है, वे आमतौर से पक्षियों के गीत होते हैं। यदि आप वाशिंगटन के चिड़ियाघर से कुछ मकान छोड़कर ही कहीं सोते हों, तो जागने पर आपको नर गिबन की तरल-सी चिंघाड़ सुनाई पड़ेगी। इस ध्वनि को करते समय उसका गला बैग पाइप की थैली की तरह फूल जाता है। जो प्राणी वृक्षों पर रहते हैं, या आकाश में उड़ते है, वे कोलाहल करते रह सकते हैं, क्योंकि उन्हें साँप के सिवाय और किसी शत्रु का भय नहीं होता। साँप उनकी उपस्थिति का पता उनके शरीर की उष्णता से लगा लेता है, चाहे वे कोलाहल कर रहें हों और चाहे निःशब्द बैठे हों। भूमि पर रहने वाले प्राणी आवाज कम ही करते हैं। वे प्राणी तो जो बहुत समय तक मनुष्य के आश्रय में रहे हों, जैसे भेड़ें, या वे प्राणी, जिन्हें किसी प्रतिद्वन्द्वी से भय न हो, जैसे सिंह, आवाज़ कर लेते हैं, परन्तु भूमि पर रहने वाले बाकी प्राणी केवल विशेष अवसरों पर ही, जैसे मैथुन के दिनों में, जबकि यौन प्रेरणा आत्म रक्षा की मूल वृत्ति पर हावी हो जाती है, बोलते हैं।

अपने इस बोलने और दहाड़ने की आवाज़ों द्वारा वे पशु एक-दूसरे से वार्तालाप करते हैं। वे चेतावनी और आदेश दे सकते हैं, परन्तु वे अपना अतीत का अनुभव दूसरे को नहीं बता सकते। सबसे अधिक सक्षम बोलने वाले प्राणियों में गिबन भी हैं, जिनकी शब्दावली में कम से कम नौ प्रकार के ध्वनि समूह प्रमाणित किये जा चुके हैं, जिनके कि अपने विशिष्ट अर्थ हैं। ध्वनि नं० 1—"मेरी पत्नी से दूर रहो!" ध्वनि नं० 2—"चलो, फल लेने चलें।" ये कुछ सीधे-सादे आदेश वाक्य हैं। मानवीय मस्तिष्क की उत्कृष्टता[1] के कारण मनुष्य की भाषाओं में शब्दावली कहीं अधिक बड़ी है और उसमें कहीं अधिक जटिल विचार भी हैं, जिन्हें शब्द कही जाने वाली इकाइयों में

---

[1] मनुष्य के वाणी के अंग कुछ निम्नतर प्राइमेटों (वानरों) की अपेक्षा उत्कृष्ट हैं या नहीं, यह विवादग्रस्त विषय है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रकट किया जाता है। हम न केवल शब्दों को बोलते और सुनते हैं, अपितु जब हम सोच रहे होते हैं, तब भी हम उन्हें चुपचाप उत्पन्न कर रहे होते हैं। शब्दों का उपयोग ही विचार का वह प्रकार है, जिससे संस्कृति उत्पन्न होती है। शब्द न हों, तो मनुष्य के पास ऐसा कोई विचार भी न होगा, जिसे वह दूसरों तक पहुँचा सके। मनुष्य की वाणी का सबसे प्रारम्भिक रूप उस समय शुरू होगा, जबकि मनुष्य के मस्तिष्क की बौद्धिक क्षमता गिबन जितनी ही रही होगी; वह केवल कुछ आदेश और चेतावनियाँ दे पाने योग्य होगी और पूर्णतया तात्कालिक अन्तरव्यक्तीय (एक व्यक्ति के साथ दूसरे व्यक्ति के) सम्बन्धों तक ही सीमित होगी। विभिन्न श्रेणियों के पदार्थों की विशेषताएँ, जैसे निरापद और संकटास्पद, बड़ा और छोटा; अन्य व्यक्तियों या उनकी अनुपस्थिति में निर्देश करने के तरीके, जैसे पति और पत्नी, पिता और पुत्र; और किसी इस प्रकार के विचार को प्रकट करने की पद्धतियाँ कि अमुक कार्य समाप्त हो चुका है, अधूरा नहीं रहा, इस प्रकार की अभिव्यक्तियों की धारणा बाद में आई होगी और उसके साथ ही अव्यक्त धारणाओं में वृद्धि हुई होगी।

आदिमतम जीवित लोगों की संचार (सन्देश प्रेषण) की पद्धतियों के विषय में हमने जो कुछ जाना है, उससे हमें यह मालूम है कि प्रत्येक भाषा संचार की एक पूर्ण और सन्तोषजनक प्रणाली है, जो उन लोगों की सांस्कृतिक आवश्यकताओं को ईमानदारी से प्रतिबिम्बित करती है, जो उस भाषा को बोलते हैं। इन भाषाओं में केवल उन दशाओं (स्थितियों) को सरलता से व्यक्त किया जा सकता है, जो उन विशिष्ट लोगों के सामने आ सकती हैं। फिर भी सब भाषाएँ इस प्रकार की बनी हुई हैं कि उनमें वृद्धि हो सकती है। जब कोई संस्कृति बदलती है, तब भाषा में नये शब्द आ जुड़ते हैं और पुराने शब्द समाप्त हो जाते हैं या उनका नये अर्थों में प्रयोग होने लगता है। ज्यों-ज्यों कोई संस्कृति जटिल और जटिल होती जाती है, त्यों-त्यों भाषा का व्याकरण सरल होता जाता है, जिससे परिवर्तन और तेज़ी से हो सके।

हमारे वर्तमान प्रयोजन के लिए भाषा के सम्बन्ध में जानने की सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह मनुष्य को सांस्कृतिक अनुभवों का विनिमय करने में और इस प्रकार और अधिक संस्कृति का सृजन करने में समर्थ बनाती है।

संस्कृति इसीलिए संचित हो पाती है क्योंकि भाषा में परिवर्तन की क्षमता है। भाषा इसलिए बदल सकती है, क्योंकि उसका केन्द्र मस्तिष्क के साहचर्य-क्षेत्र में विद्यमान है, जहाँ मस्तिष्क के आकार से वृद्धि के फलस्वरूप, जो मानवीय क्रम-विकास में सबसे अन्तिम महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है, इसे फैलने के लिए स्थान मिल गया है।

मनुष्य को अपने आरम्भिक निर्माण काल में प्रकृति से जो पाँच महत्त्वपूर्ण उपहार मिले थे, उनके कारण उसमें निम्नलिखित उत्कृष्ट शक्तियाँ आ गईं—उसकी टाँगों में और पैरों में परिवहन की शक्ति; उसके मस्तिष्क और वाणी के अंगों में संचार (विचारों के विनिमय) की शक्ति; और उसके हाथों, आँखों और मस्तिष्क में काम करने की शक्ति। मनुष्य के सम्पूर्ण इतिहास में उसकी परिवहन, संचार और सामग्रियों के संभालने के सम्बन्ध में निरन्तर प्रगति ने ही उसे उन्नति करते-करते संसार का स्वामी बनने में समर्थ बनाया है।

चबाने और लड़ने के विषय में

मनुष्य और अन्य स्तनपायी प्राणियों के शरीरों के लगभग हर किसी अंग के विषय में कहा जा सकता है कि वह एक से अधिक प्रयोजनों को पूरा करता है। मनुष्य का पूर्वज बोलना आरम्भ करने से बहुत पहले से अपने मुख का उपयोग खाने के लिए और दाँतों का उपयोग लड़ने के लिए करता रहा था। पेड़ों पर रहने वाले बन्दरों के दाँत वनबिलाव (बीवर) या घोड़े के दाँतों की तुलना में साधारण और अविशेषित होते हैं। कारण यह है कि उनका प्रधान उपयोग न तो पेड़ों को काटना है और न घास को कतरना, अपितु उनका उपयोग उनके हाथों द्वारा उनके मुखों में रखे गए अपेक्षाकृत नरम भोजन को चबाना है। कपि (एप) और बन्दर, दोनों ही, जिन्होंने भूमि पर रहने के लिए जंगल को त्याग दिया था, शीघ्र ही कच्चे कन्द मूल और माँस जैसे अपेक्षाकृत कड़े भोजन को चबाने के लिए विवश हुए। क्योंकि वे अब भी भोजन अपने हाथों से ही करते थे, इसलिए उनके दाँतों की आकृति में किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं थी, केवल आकार में परिवर्तन की थी। इस प्रकार बैबूनों के दाँत उनके वृक्षों पर रहने वाले बन्धुओं के दाँतों की अपेक्षा अधिक बड़े होते हैं। असंदिग्ध रूप से मनुष्य के पूर्वजों के दाँत भी इसी कारण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बड़े हो गए थे।

प्रत्येक प्राइमेट (वानर), जिनमें मनुष्य भी सम्मिलित हैं, अपना भोजन चबाने के लिए चार जोड़ी मांसपेशियों का उपयोग करता है; इनमें वे माँस-पेशियाँ सम्मिलित नहीं हैं, जो जबड़े को खोलती हैं और जीभ को चलाती हैं। इनमें से सबसे लम्बी और सबसे मज़बूत माँसपेशी टैम्पोरल है, जो जबड़े को सीधा ऊपर की ओर खींचती है। मैसीटर माँस-पेशी, जो अपेक्षाकृत छोटी है, परन्तु बहुत मज़बूत है और जबड़े के बाहर की ओर लगी हुई है, न केवल ऊपर और नीचे की गति द्वारा टैम्पोरल माँस-पेशी की सहायता करती है, अपितु अपनी स्थिति के कारण कुछ दायें-बायें और कुछ आगे-पीछे की ओर गति भी उत्पन्न करने में समर्थ है। दायें-बायें की गति आभ्यन्तर टैरीगोइड माँसपेशी का प्रधान कार्य है। यह माँसपेशी ग्रीवा के अन्दर की ओर छिपी हुई है और यह जबड़े का सम्बन्ध तालु के पिछले भाग से जोड़ती है। बाह्य टैरीगोइड माँसपेशी, जो इन चारों में सबसे छोटी है, जबड़े को आगे की ओर धकेलती है।

इन चार माँसपेशियों के प्रयोग द्वारा वे प्राइमेट (वानर) जिनके दाँत अविशेषित हैं, अपने निचले दाँतों की कार्यकारी सतहों को ऊपर और नीचे, आगे और पीछे, और दायें बायें की गतियों के संयोग द्वारा ऊपर के दाँतों की कार्यकारी सतहों से रगड़ने में समर्थ होते हैं। ये गतियाँ उनके भोजन को पाचन के लिए उचित स्थिति में बदल देने के लिए बहुत उपयुक्त हैं। हममें से जिन लोगों में वह वस्तु विद्यमान है, जिसे दन्त वैद्य पूर्ण रोध (औक्लुज़न) कहते हैं, उनमें यह गति पेड़ों पर रहने वाले बन्दरों की भांति ही पाई जाती है और इस बात की गुँजाइश बहुत काफ़ी है कि हमारे अति प्राचीन पूर्वजों में भी, जो पहले पहल भूमि पर आये थे, यह विशेषता विद्यमान थी।

परन्तु भूमि पर रहने वाले बन्दर और कपि (एप) अपने जबड़ों को स्वच्छन्दतापूर्वक आगे की ओर और दायें-बायें नहीं चला सकते, क्योंकि उनमें एक रुकावट लगी होती है। उनका चबाना अधिकाँश में ऊपर और नीचे की ओर ही होता है, इसलिए एक निश्चित मात्रा के कार्य को करने के लिए उन्हें हम बाकी प्राइमेटों की अपेक्षा अधिक बड़े दाँतों की आवश्यकता होती

है। उनकी यह रुकावट एक विशेषित दाँत के रूप में होती है, जो उनके मुँह में दोनों ओर लगा होता है, जिसे ऊपरी भेदक दन्त या अक्षि-दन्त कहा जाता है। जहाँ उनके दोनों जबड़ों के बाकी दाँत एक-दूसरे से एक पंक्ति में मिलते हैं, वहाँ प्रत्येक ऊपरी भेदक दन्त नीचे के दो दाँतों के ऊपर इस प्रकार आकर टिकता है कि जब भी कभी मुँह बन्द होता है, तब वह विशेष दाँत अपने आपको अन्य दाँतों की रगड़ से पैना कर लेता है। इस क्रिया के कारण उस दाँत में स्थायी रूप से दो चाकू की धारें बनी रहती हैं। यद्यपि इन विषदन्तों का प्रयोग चिम्पाँज़ी उष्ण कटिबन्ध के बड़े फलों के कड़े छिलकों को छीलने के लिए भी करते हैं, फिर भी ये दाँत सब कपियों (एप) और बैबूनों के लड़ने में घातक शस्त्रों के रूप में भी काम आते हैं। और तो और, मकड़ी जैसा गिबन भी चिड़ियाघर के रक्षक के हाथ पर गहरा घाव कर सकता है और वह अपनी संगिनी का प्रेम प्राप्त करने के इच्छुक अपने प्रतिद्वन्द्वी का इन दन्त-छुरों के द्रुत प्रहारों से उसकी जुगुलर शिरा को काटकर वध कर सकता है। बैबूनों और अपेक्षाकृत बड़े कपियों (एपों) में ये भेदक दन्त और भी अधिक घातक होते हैं। वस्तुतः नर औरंग ने तो इन दाँतों से अपना बचाव करने के लिए अपने मुख और गर्दन के आस-पास एक मोटे चमड़े के कालर के रूप में एक प्रकार का कवच-सा विकसित कर लिया है।

यह सम्भव प्रतीत होता है कि कपियों (एपों) और बैबूनों के पूर्वजों को ये युद्धोपयोगी भेदक दन्त उसके बाद प्राप्त हुए, जबकि वे आकर भूमि पर रहने लगे थे, जहाँ कि उन्हें पहले-पहल अपने प्राकृतिक शत्रुओं से लड़ना पड़ा और जहाँ उन्होंने पेड़ों पर रहने वाले बन्दरों के सामाजिक संगठन से भिन्न एक अन्तःपुर (हरम) के ढंग का सामाजिक संगठन बनाया। जैसा कि वालरस, हरिण तथा अन्य प्रकार के स्तनपायी प्राणियों के साथ, जो मादाओं के लिए आपस में लड़ते हैं, हुआ है, नैसर्गिक शस्त्र सबलतर और उग्रतर नर प्राणियों में शीघ्र ही प्रकट होने लगते हैं, जिससे वे अपने प्रतिद्वन्द्वियों का सफाया कर सकें।

हमें इस बात का पक्का निश्चय नहीं है कि हमारे पूर्वजों के भी कभी इस प्रकार की ये अन्दर बनी छुरियाँ (लम्बे दाँत) थीं या नहीं, परन्तु यदि कभी ये उनके रही भी हों, तो भी जब एक बार उन्होंने लाठियों और पत्थरों द्वारा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अपनी रक्षा करना सीख लिया, तब ये जाती रहीं और उनके जबड़े कम प्रदर्शनात्मक, किन्तु अधिक सामान्य, चबाने के काम के लिए ही सुरक्षित रह गए। इसका यह अर्थ नहीं है कि हमारे वानरीय पूर्वज कपियों के पूर्वजों की अपेक्षा कम उग्र थे; अर्थ केवल इतना है कि वे अपेक्षाकृत कम विशेषित थे और अधिक मेधावी थे।

फासिल कपि (एप)

यह दाँतों का अध्ययन, जीवित बन्दरों, कपियों और मनुष्यों के दाँतों पर आधारित अवश्य है, किन्तु केवल वही हमारे प्राणियों की सीमा नहीं है। फासिल प्राइमेटों (वानरों) के जिनमें आस्ट्रैलोपिथैसाइन भी सम्मिलित हैं, अवशेष यूरोप, अफ्रीका, एशिया और इण्डोनेशिया में पाये गए हैं। इन अवशेषों में दाँत विशेष रूप से बहुत-से हैं, क्योंकि दाँतों का इनैमल मिट्टी में हड्डी की अपेक्षा कहीं अधिक देर तक बचा रहता है। अब तक जिन स्पीशिज़ों का वर्णन किया गया है, उनमें से कुछ का तो पता केवल दाँतों से ही चला है। उनमें से जिनका प्रभाव कपियों और मनुष्यों के तात्कालिक क्रम-विकास पर पड़ा, वे सीनोज़ोइक (जीवविकास) काल के मीओसीन (मध्यजीव) और प्लीओसीन (उत्तर जीव) प्रभागों तक पुरानी हैं; ये प्रभाग मोटे तौर पर ढाई करोड़ वर्ष और 1 करोड़ 30 लाख वर्ष पहले शुरू हुए थे।

इस प्रकार का एक विलुप्त प्राइमेट (वानर) प्रोकौन्सल था, जो पूर्वी अफ्रीका में रहता था। उसकी तीन स्पीशिज़ें थीं—गिबन के आकार की, चिम्पांज़ी के आकार की और गुरिल्ला के आकार की। उसके भेदक दन्त लम्बे थे और उसके हाथ-पैरों की हड्डियों की आकृति इस ढंग की थी कि ऐसा प्रतीत होता है कि उसने तभी वृक्षों की ओर लौटना शुरू किया था। वह हाथों के बल झूलता हुआ ही पेड़ों पर चलता था। एक और प्राइमेट शिवपिथैकस था, जो उत्तरी भारत में रहता था। उसका पता हमें केवल उसके दाँतों और जबड़ों से चला है। उसके भेदक दन्त लगभग उतने ही छोटे थे, जितने कि मनुष्य के हैं और उसकी ठोडी अविकसित आरम्भिक ढंग की थी। ये दो स्पीशिज़ें अब तक खोद कर निकाले गए किन्हीं भी प्राणियों की अपेक्षा कपियों और मनुष्यों के पूर्वजों की हमारी धारणा के अधिकतम निकट हैं, जबकि अन्य कई स्पीशिज़ें

भी उसी सामान्य श्रेणी में आती हैं। इनमें से एक था ओरियोपिथैकस; वह एक हृष्ट-पुष्ट नाटा कपि (एप) था, जो मध्य इटली की दलदलों में निवास करता था। उसका मस्तिष्क चिम्पांज़ी के मस्तिष्क जितने आकार का था और उसके भेदक दन्त साधारण लम्बाई के थे। परन्तु उसके अन्य दाँत कई बारीकियों की दृष्टि से मनुष्य के दाँतों से भिन्न थे। प्राइमेट (वानर) वंश-वृक्ष में उसकी स्थिति अभी तक ठीक निश्चित नहीं की जा सकी है। चाहे जो हो, मीओसीन (मध्य जीव युग) और प्लीओसीन (उत्तर जीव युग) में विकास प्राइमेटों में भरसक काम कर रहा था। इन कपियों में से कोई एक, या इनसे मिलता-जुलता कोई अन्य कपि आरम्भिक प्लीस्टोसीन (मानव युग) के दो पैरों वाले, बड़े दाँतों वाले मानव कपियों का जनक था। इसमें सन्देह नहीं है कि इन मानव कपियों में हमारे पूर्वज भी थे।

मानव-युग या हिम-युग

प्लीस्टोसीन (मानव) काल लगभग 10 लाख वर्ष पहले शुरू हुआ और ईस्वी सन् से लगभग 8 हज़ार वर्ष पूर्व तक बना रहा। पर्वत तेज़ी से ऊँचे उठे और पृथ्वी ठण्डी हुई। उष्ण कटिबन्धों और भूमध्य रेखा से दूर स्थित भागों के मध्य जलवायु के अन्तर और प्रचण्ड हो गए। पृथ्वी जलवायु के उतार-चढ़ावों के काल में प्रविष्ट हो रही थी, जो मध्य जीवयुग (मीओसीन) और उत्तर जीवयुग (प्लीओसीन) की शान्तिपूर्ण एकरूपता से स्पष्टतः उल्टा था। ध्रुवों और ऊँचे स्थानों से नीचे की ओर बहता आने वाला शीत परस्पराश्रित वनस्पति और प्राणि-जीवन की समूची मन्दाकिनियों को आगे और आगे खदेड़ता जाता था। यहाँ तक कि भूमध्य रेखा के पास आर्द्र जंगल भी सिमटते-सिमटते घास के मैदान रह गए और घास के मैदान सूखकर मरुस्थल बन गए। और जब अधिक वर्षा हुई, तब यह प्रगति ठीक उल्टी दिशा में होने लगी। इस काल के पूर्वार्द्ध में नई-नई उठी पर्वत श्रृंखलाओं, आल्प्स, हिमालय और रौकीज़ पर स्थानीय हिमनदियाँ (ग्लेशियर) बन गईं। मध्य प्लीस्टोसीन (मानव युग) के प्रारम्भ में अर्थात् 5 लाख वर्ष पहले, ग्रीनलैण्ड, स्कैण्डनेविया और दक्षिणी ध्रुव के विशाल भू-भागों पर बड़े-बड़े हिम-किरीट बन गए। ग्रीनलैण्ड से बर्फ की यह परत पश्चिम और दक्षिण की ओर बढ़ी और उसने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कनाडा के बहुत-से भाग और संयुक्त राज्य अमेरिका के उत्तर-पूर्वी भाग को ढक लिया। स्कैण्डिनेविया से आगे बढ़ते हुए उसने उत्तर-पश्चिमी यूरोप को ढक लिया; किन्तु दक्षिणी से उसे कहीं बढ़ने का स्थान न मिला, इसलिए वह समुद्र में गिर पड़ी।

तीन बार बर्फ़ की ये परतें आगे बढ़ीं और तीन बार वे पिघलीं। जब वे आगे की ओर आईं, तब प्रत्येक बार इनके मध्य भाग में बर्फ़ के ढेर की मोटाई कई मील तक की हो गई। पृथ्वी के जल का बहुत बड़ा भाग इस प्रकार बँध कर गतिहीन हो गया और सारे संसार के महासागर उनकी इस समय की गहराई की अपेक्षा लगभग 300 फीट कम गहरे रह गए। उनकी उस समय जो तट-रेखाएँ थीं, वे इस समय पानी के अन्दर हैं। प्रत्येक बार जब बर्फ़ पिघली, तब महासागर फिर पानी से भर गए और समुद्र का जल उन तट-रेखाओं को छूने लगा, जो आजकल सूखे स्थल भाग पर हैं। ऊँचे समुद्र तटों पर जमे हुए इस समुद्र जल का कुछ भाग अब भी ग्रीनलैंड और दक्षिणी ध्रुव के शिखरों पर घिरा पड़ा है। प्लीस्टोसीन (मानव युग) युग की समाप्ति के बाद से, जबकि हिम अन्तिम बार पिघला था, जलवायु में हुए थोड़े-बहुत अन्तर के कारण समुद्र की तट-रेखाएँ छः फीट तक ऊँची या नीची होती रही हैं।

हिमाच्छादन और अन्तर-हिम काल का यह बारी-बारी से आगमन हमें एक ऐसा समय विभाग दे देता है, जिसके द्वारा हम मनुष्य की उन विभिन्न जातियों के गमन और आगमन को माप सकते हैं, जो इतिहास के इन 10 लाख वर्षों के अधिकाँश भाग में रहती रही थीं। यह ठीक है कि समय की यह अवधि प्राणियों की अधिकाँश वंशावलियों के क्रम-विकास के लिए बहुत अल्प थी, फिर भी मानव युग (प्लीस्टोसोन) में हुए जलवायु-परिवर्तनों ने उन्हें एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप तक खदेड़ा, जिससे प्रत्येक स्थान में उनके आगमन और प्रस्थान के कालक्रम के कारण हमें मनुष्य के अस्थि-कंकालों और सांस्कृतिक अवशेषों के तिथि-निर्धारण के लिए एक स्थानीय अनुसूची मिल जाती है। एक ओर तो इन परिवर्तनों ने मानव प्राणियों को, जिन्हें विभिन्न प्रकार के जलवायु में रहना पड़ रहा था, नये औज़ारों और साधनों का आविष्कार करने की प्रेरणा दी, जिनके द्वारा वे जीते रह सकें, और दूसरी ओर उनके शरीर में उष्मा, प्रकाश और आर्द्रता की नई दशाओं के कारण

सब उष्ण रक्त वाले प्राणियों के समान ही प्रतिक्रिया हुई और इस प्रकार जातियाँ बनीं।

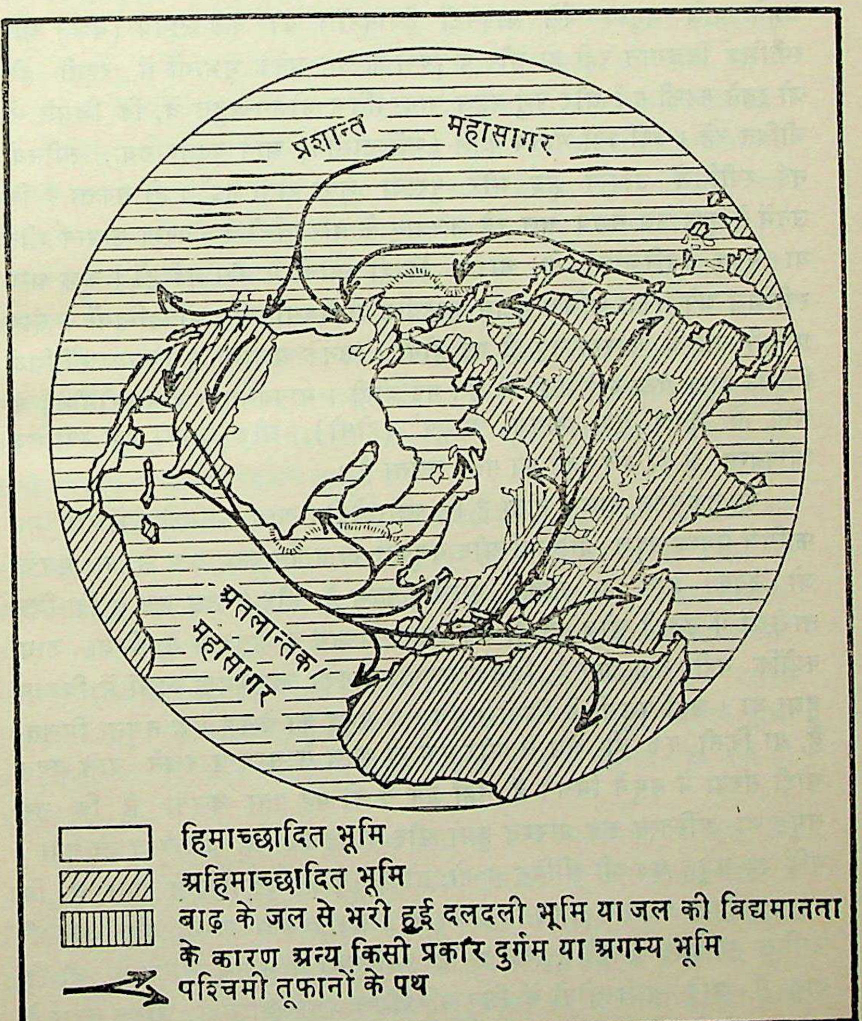
प्रशान्त महासागर
अतलान्तक महासागर
☐ हिमाच्छादित भूमि
▨ अहिमाच्छादित भूमि
▥ बाढ़ के जल से भरी हुई दलदली भूमि या जल की विद्यमानता के कारण अन्य किसी प्रकार दुर्गम या अगम्य भूमि
→ पश्चिमी तूफानों के पथ

उत्तरी गोलार्द्ध में अन्तिम (वूर्म) हिमाच्छादन का अनुमानित अधिकतम विस्तार (फ़्लिंट मोवियस तथा अन्य स्रोतों के आधार पर)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आस्ट्रेलोपिथैसाइन

यह सम्भाव्य है कि प्लीस्टोसीन काल के आरम्भ में उत्तान (खड़े होकर) चलने वाले मनुष्य जैसे प्राइमेटों (वानरों) की कई जीनसें (वंश) और स्पीशिज़ें विद्यमान रही हों और वे पृथ्वी के उन अनेक भूभागों में रहती हों, जो इतने काफी गर्म और पशु-बहुल वानस्पतिक भोजन-बहुल थे, कि जिससे वे जीवित रहें। ज्यों-ज्यों मानव काल (प्लीस्टोसीन) आगे बढ़ता गया, त्यों-त्यों नई स्पीशिज़ें उत्पन्न हुईं और पुरानी लुप्त होती गईं। हो सकता है कि उनमें से कुछ उस समय चल रहे जलवायु के परिवर्तनों के कारण उत्पन्न शीत या सूखा (परिशोष) के कारण किन्हीं स्थानों में फँस गई हों। कुछ अन्य स्पीशिज़ें अपेक्षाकृत अधिक सक्षम मानवीय या अवमानवीय प्रतिद्वन्द्वियों के साथ प्रतियोगिता के कारण नष्ट हो गई होंगी। उनके अलावा कुछ अन्य स्पीशिज़ें मिश्रण द्वारा अन्य स्पीशिज़ों में घुल गई होंगी। मानव काल (प्लीस्टोसीन) के अन्त में केवल एक जीनस 'मानुष' (होमो), और उसकी एक स्पीशिज़ 'सैपियन्स' के ही बचे रहने का पता चलता है।

यह तर्कसंगत मालूम होता है कि प्लीस्टोसीन काल के निक्षेपों में पाये गए फासिल-मनुष्य सदृश प्राणियों और मनुष्यों का वर्णन उस क्रम से न करके, जो उनका ज्ञात या संदिग्ध भूगर्भीय काल है, और न उस क्रम से कि जिन तारीखों में उनकी खोज हुई है, उनके क्रम-विकास के अनुक्रम से किया जाय, क्योंकि यही वह क्रम है, जिसके अनुसार उनका प्रारम्भिक कालों में विकास हुआ था। जहाँ पशुओं के किसी समूचे एक समूह का केवल एक नमूना मिलता है, या किसी एक ही क्षेत्र से और एक ही काल से सम्बन्ध रखने वाले बहुत थोड़ी संख्या में नमूने मिलते हैं, वहाँ हमें न तो यह पता चलता है कि उस समूह का अस्तित्व कब प्रारम्भ हुआ और न यह कि वह कब लुप्त हो गया। यदि वह समूह अब भी जीवित न हो, तो हमें केवल इतना पता होता है कि वह उस स्थान पर उस समय विद्यमान था। यह कल्पना करना कि जो भी फासिल स्पीशिज़ मिली है, वह करोड़ों व्यक्तियों में से उस व्यक्ति के, जो कि बाद में आने वाले लोगों के लिए परिरक्षित बचा रहा गया, जीवन काल के तुरन्त पहले विकसित हुई थी और उसके मरने के तुरन्त बाद विलुप्त हो गई थी, संयोग के नियम को इतनी दूर तक खींचना होगा कि वह टूट ही जाय।

प्रारम्भिक प्लीस्टोसीन का काल उसमें होने वाले जलवायु सम्बन्धी परिवर्तनों के कारण स्तनपायी प्राणियों, विशेष रूप से बड़े प्राणियों—हाथियों, घोड़ों, बैलों और ऊँटों में और कुछ मध्यम आकार के स्तनपायी प्राणियों, कपियों (एपों) और दो पैरों वाले प्राइमेटों में द्रुत विकास का काल था। उत्तर जीव काल (प्लीओसीन) के बड़े स्तनपायी प्राणियों की अब केवल एक ही स्पीशिज़ जीवित मिलती है और वह है हिप्पोपोटैमस (दरियाई घोड़ा)। प्रारम्भिक प्लीस्टोसीन की समाप्ति के बाद पहले केवल दो स्पीशिज़ों का आविर्भाव हुआ, चित्तीदार लकड़बग्घा और सैपियन्स मानुष (होमो सैपियन्स)। आधुनिक घोड़े, बारहसिंगा, रेनडियर और गैंडे अब से पाँच लाख साल पहले विद्यमान थे। पहला पहचाना जाने वाला मनुष्य उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस) मध्य प्लीस्टोसीन के आरम्भ काल में विद्यमान था। उससे पहले हमें अपनी वंशावली के सम्बन्ध में जो कुछ मालूम है, वह केवल कपि मानवों (मैन एप) का एक समूह, आस्ट्रैलोपिथैसाइन, था, जिसके कुछ सदस्य अन्य सदस्यों की अपेक्षा मनुष्य से अधिक मिलते-जुलते थे।

अब तक मिला सबसे पुराना कपि मानव वह है, जिसके मस्तिष्क का खोल और चेहरे का एक टुकड़ा एक फ्राँसवासी इवैस कौपन्स से सन् 1961 में मध्य सहारा में शाद झील के निकट खोज निकाला था। इसका मस्तिष्क छोटा, चेहरा बड़ा और इसकी शरीर रचना सम्बन्धी बारीकियाँ अन्य किसी भी ज्ञात आस्ट्रैलोपिथैसाइन की अपेक्षा मनुष्य से अधिक मिलती थीं। इसकी प्राचीनता इस बात से प्रमाणित है कि उसी निक्षेप में एक बहुत प्राचीन हाथी भी मिला है, जो प्लीस्टोसीन के आरम्भ काल के बाद जीवित रहा नहीं हो सकता।

संभाव्य प्राचीनता की दृष्टि से इसके बाद दो और नमूनों का नम्बर है। इनमें से एक खोपड़ी का एक टुकड़ा और एक दाँत है, जो जौर्डन घाटी में तिवेरियास झील के निकट इज़राइल में सन् 1959 में पाया गया था। इसका अभी तक वर्णन नहीं हुआ है। दूसरा नमूना एक चौदह वर्ष के बच्चे की टूटी हुई खोपड़ी, जबड़े की हड्डी, पैर और अँगुलियों की हड्डियाँ हैं, जो मध्य अफ्रीका में टाँगान्यिका में ओल्डुवाई कन्दरा की खुदाई में सन् 1960 में पाई गई थीं। इन दोनों नमूनों के साथ अपरिष्कृत पत्थर के औज़ार और छोटे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शिकार के पशुओं के अवशेष मिले थे, जो इस बात के द्योतक थे कि इन कपि-मानवों ने तब तक पूरे पैमाने पर शिकार करना शुरू नहीं किया था, ओल्डुवाई के बालक के पैर से ऐसा लगता है कि उसने सीधे खड़े होकर चलना शुरू कर दिया था, परन्तु उसकी अँगुलियों की हड्डियाँ पेड़ों पर रहने वाले कपियों की हड्डियों की तरह चपटी हैं। उसका मस्तिष्क बड़े से बड़े कपियों के मस्तिष्क जितना बड़ा था, हालाँकि उसका शरीर बौने क़द का था। उसके दाँत सारतः मानवीय हैं, परन्तु बड़े हैं। वह और उसका समकालीन फिलस्तीन में मिला नमूना अब से कोई सात लाख वर्ष पहले जीवित रहे होंगे।

कपि-मानवों का सबसे पहला अवशेष, जिसे कि कपि मानव के रूप में पहचाना गया था, सन् 1924 में दक्षिण अफ्रीका में पाया गया था। यह एक बच्चे की खोपड़ी थी। रेमाँ दार्त ने, जिसने कि उसका वर्णन किया था, उसे आस्ट्रैलोपिथैकस दक्षिणी कपि, बताया था और उसी के कारण इस समूचे उप-कुटुम्ब का नाम आस्ट्रैलोपिथैसाइन पड़ा। 1924 के बाद से अब तक दक्षिणी अफ्रीका में कार्यकर्त्ताओं ने ऐसे और भी दर्जनों अवशेष पा लिए हैं, जो ट्राँसवाल में गुफाओं के अन्तर्भाग में और दरारों में पानी क्रिया से मिट्टी में जमे हुए मिले हैं। ये दो आकारों के मिले हैं। जो पहले मिले थे, वे ओल्डुवाई बालक की भाँति छोटे हैं, और बाद वाले उतने बड़े हैं, जितना कि पूरा वयस्क मनुष्य होता है। हमें उनका ठीक-ठीक काल मालूम नहीं है, परन्तु उनमें से जो अपेक्षाकृत छोटे हैं, वे सम्भवतः उतने ही पुराने हैं, जितना कि ओल्डुवाई बालक। जो अपेक्षाकृत बड़े हैं, वे बाद में आये; वे आरम्भिक लीस्टोसीन के अन्त के आस-पास या मध्य प्लीस्टोसीन तक भी जीवित रहे होंगे, जब कि असली मनुष्य ने उनका नाश कर दिया होगा। औज़ार इनमें से केवल पिछले समूह के साथ पाये गए हैं।

टाँगान्यिका में ओल्डुवाई कन्दरा में लेविस लीकी ने, जो वहाँ तीस से भी अधिक वर्ष से खुदाई कर रहा था, सन् 1959 में एक बच्चे के कंकाल के ठीक ऊपर एक बड़े कपि-मानव की खोपड़ी प्राप्त की। उसने इस नमूने को ज़िजानथ्रोपस अर्थात् 'पूर्वी अफ्रीका का मनुष्य' नाम दिया। जावा में एक निक्षेप में, जिसमें मनुष्यों के अवशेष भी थे और जिसका काल आरम्भिक और मध्य प्लीस्टोसीन का सन्धि काल कहा जाता है, राल्फ वान कोनिग्सवाल्ड ने एक

असाधारण रूप से बड़े आकार की जबड़े की हड्डी के तीन ज्ञात टुकड़ों में से पहला टुकड़ा खोज निकाला। यह जबड़े की हड्डी सम्भवतः किसी कपि-मानव की थी, जो अफ्रीका में पाये गए कपि-मानवों से मिलता-जुलता था। यदि यह सच हो तो अन्ततोगत्वा फिलस्तीन और जावा के बीच में और भी आस्ट्रैलोपिथैसाइन अवश्य मिलने चाहिएँ।

शाद, ओल्डुवाई और दक्षिणी अफ्रीका के इन प्राणियों में से कम से-कम अफ्रीका में सबसे पुराने प्राणी नवीनतम प्राणियों की अपेक्षा देखने में अधिक मनुष्य सदृश हैं। उनके दाँत अपेक्षाकृत अधिक हमारे दाँतों जैसे हैं, जब कि उनके वंशजों के दाँत कड़े और गाँठदार भोजन, जैसे कँद-मूल, को चबाने के लिए विशेषित हैं। इनमें से बड़े पशुओं में भी उनके शरीर के अनुपात में छोटे पशुओं की अपेक्षा अधिक बड़े मस्तिष्क नहीं थे और दोनों ही समान रूप से अकुशल शिकारी थे। हमारे पास अब तक भी जो अधूरे प्रमाण उपलब्ध हैं, उनसे हम केवल यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि अधिक सम्भव यही है कि उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस) का, जो पहले पहल मध्य प्लीस्टोसीन काल में आविर्भूत हुआ था, जन्म परवर्ती आस्ट्रैलोपिथैसाइनों से न होकर आरम्भिक आस्ट्रेलोपिथैसाइनों से हुआ होगा। कब और कहाँ ? यह हमें पता नहीं। हमें केवल यह पता है कि पाँच लाख साल पहले उसने 'पुरानी दुनिया' के उष्ण कटिबन्धों में उनका स्थान ले लिया था और आस्ट्रैलोपिथैसाइन विलुप्त होने शुरू हो गए थे।[1]

दैत्य कपि और हिम मानव

सन् 1930 के बाद की दशाब्दी में राल्फ वान कोनिग्सवाल्ड ने जिसने

---

4. 22 जुलाई 1961 को नेशनल जियोग्रैफ़िक सोसाइटी राष्ट्रीय भौगोलिक संस्था ने आर्गन—पोटाशियम विश्लेषण पद्धति के आधार पर ज़िंजानथ्रोपस को 17,50,000 वर्ष पुराना बताया था। परन्तु उसके बाद जर्मनी में हाइडलबर्ग में की गई ओल्डुवाई निक्षेपों के नीचे के बैसाल्ट की परखों के द्वारा इस तिथि को ग़लत ठहरा दिया गया था। वे 13 लाख वर्ष पुराने हैं। वह पुरानी ज्वालामुखियों की मिट्टी, जिसमें ज़िंजानथ्रोपस पड़ा मिला है, बाद में दुबारा जमी हो सकती है। अब हम फिर वहीं पहुँच गए हैं, जहाँ से हमने आरम्भ किया था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जावा में सर्वप्रथम कपि-मानव का जबड़ा और कुछ अन्य मानवीय अवशेष—इनका वर्णन आगे किया जायेगा—खोज निकाले थे, कई पूर्वीय नगरों में चीनी औषध-विक्रेताओं की दूकानों को फासिल दाँतों की खोज में भली-भाँति छान डाला था। चीनी लोग अनेक शताब्दियों से पशुओं की फासिल हड्डियों का उपयोग रोगों के इलाज के लिए करते रहे हैं, क्योंकि उनका विश्वास था कि साहस, बल और पुरुषत्व बड़े, सशक्त और वीर्यवान प्राणियों के अवशेषों के चूर्णों से प्राप्त हो सकते हैं। दाँत के दर्द के लिए उनका इलाज दाँत का पिसा हुआ चूर्ण है। वान कोनिग्सवाल्ड ने हाँगकाँग में जो हजारों दाँत देखे, उनमें से छह उसे विशेष कुतूहलजनक लगें।

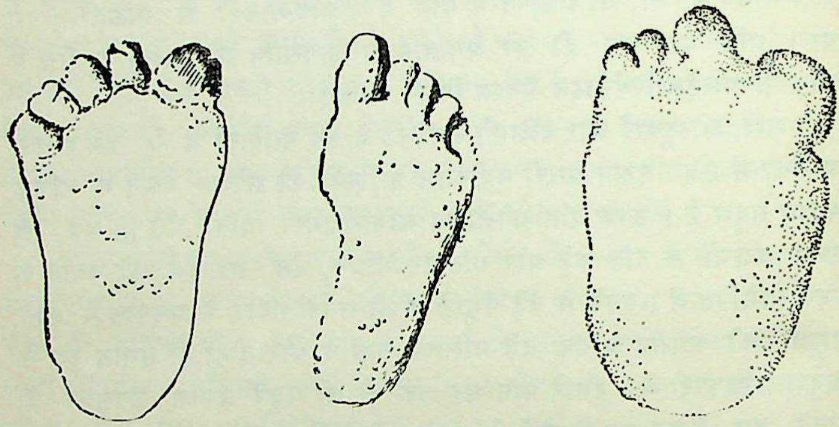

नियंडरथल, क्रोमैगनन तथा घृणित हिम मानव के पद चिह्न। हिम मानव का यह पद चिह्न बर्फ में ऐरिक शिप्टन को मिला था। अन्य दो चिह्न बैरन अल्बर्टो ब्लांक को गुफाओं की गीली मिट्टी में मिले थे।

वे आकार-प्रकार में मनुष्य के दाँतों जैसे हैं, किन्तु आयतन की दृष्टि से वे जीवित मनुष्यों के दाँतों की अपेक्षा छः गुने बड़े हैं। जड़ों के ठूठों के बीच में, जिन्हें गुफाओं में रहने वाली सेहों ने चबाया हुआ था, उसने पिसी हुई पीली मिट्टी लगी देखी, जिससे उसे पता चल गया कि ये दाँत याँग्त्सी की कन्दराओं के निकट की गुफाओं से प्राप्त हुए हैं। जिस पशु के ये दाँत थे, उसको उसने जाइगेंटोपिथैकस, 'दैत्य कपि' नाम दिया। अनेक वर्षों तक पुरा-जीव-विकास-

वैज्ञानिक (पैलियोण्टोलोजिस्ट) यह मानते रहे कि यह दैत्य कपि मनुष्य का पूर्वज था। परन्तु 1955 के बाद के वर्षों में चीनी वैज्ञानिकों ने इस प्राणी (दैत्य कपि) के तीन जबड़े और खोज निकाले, जो वस्तुतः एक अपोपलक्षक (उत्क्रामक) कपि था। वह प्लीस्टोसीन (मानव युग) में जीवित था और इसलिए इतना परवर्ती था कि वह हमारा पूर्वज नहीं हो सकता था।

एक इससे भी अधिक प्रसिद्ध और काल्पनिक पशु यति या घृणित हिम मानव है। उसके पद चिह्न हिमालय में बर्फ़ पर और गीली मिट्टी पर मिले हैं। उसके मंगोलिया तक उत्तर में प्राप्त होने की भी सूचनाएँ मिली हैं। प्रत्यक्षदर्शियों ने उसका वर्णन करते हुए उसे ऊँचा, दो पैरों वाला, पिंगलवर्णी (गेहुँए रंग का), केसर युक्त (गर्दन पर बालों वाला), लम्बी थूथनी वाला और बड़े-बड़े दाँतों वाला बताया है। नेपाल और सोवियत मध्य एशिया में कई यात्री दलों ने इसकी खोज की, किन्तु वे उसे पाने में असमर्थ रहे। इसके अनेक पद-चिह्न पाये गए हैं, जो अब तक बिलकुल विलक्षण ही हैं। यदि यह कोई प्राइमेट (वानर) ही निकला, तो अधिक सम्भव यही है कि यह आस्ट्रैलोपिथैसाइन की अपेक्षा दैत्य कपि का ही एक बचा हुआ रूप अधिक होगा।

फासिल मनुष्यों का वर्गीकरण

जब हम क्रम-विकास सम्बन्धी इन मिथ्या आशंकाओं से फासिल मनुष्यों के वास्तविक नमूनों पर लौट आते हैं, तो हम देखते हैं कि इस विषय में वैज्ञानिकों में कोई एक मत नहीं है कि फासिल मनुष्यों का वर्गीकरण किस प्रकार किया जाय; और यह समझने के लिए कि इनमें से किसी एक का सम्बन्ध अन्यों के साथ किस प्रकार का था, वर्गीकरण आवश्यक है। मोटे तौर पर दो विचारधाराएँ हैं। एक विचारधारा को वैज्ञानिक चाहते हैं कि सब ज्ञात नमूनों को चार या चार से अधिक एक-दूसरे से इस प्रकार भिन्न, जैसे कि बिल्ली और सिंह हैं, जीनसों में, और छः या इससे अधिक एक-दूसरे से इतनी भिन्न, जितने कि घोड़े, जेबरे और गधे परस्पर भिन्न हैं. स्पीशिज़ों में विभक्त कर लिया जाय। इस धारणा के अनुसार सैपियन्स मानुष अनेक स्पीशिज़ों में से एक स्पीशिज़ मात्र है। वह लगभग 35 हज़ार वर्ष पहले आविर्भूत हुआ था और वह तेज़ी से धरती के सब छोरों तक फैल गया, जबकि अन्य जीनसें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और स्पीशिज़ें धीरे-धीरे लुप्त हो गईं।

दूसरी विचारधारा के अनुसार सब फासिल मनुष्यों को मानुष (होमो) कहा जाता है और इस जीनस को एक के बाद एक हुई दो स्पीशिज़ों में, उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस), जो पहले हुई थी, और सैपियन्स मानुष, जो उत्तान मानुष के स्थानीय समूहों से, विभिन्न कालों में और विभिन्न स्थानों पर विकसित हुई, विभक्त किया जाता है। इस व्याख्या के अनुसार उत्तान मानुष विनष्ट होकर विलुप्त नहीं हुआ, अपितु अन्य किसी प्राणी के रूप में—इस मामले में आधुनिक मनुष्य के रूप में—विकसित होकर विलुप्त हुआ।[1]

उत्तान मानुष के कुछ खंड और अंग जावा, चीन, उत्तरी अफ्रीका और पूर्वी अफ्रीका में पाये गए हैं। सैपियन्स मानुष के आरम्भिक फासिल अवशेष इन स्थानों पर, और यूरोप, पश्चिमी एशिया और मध्य एशिया में पाये गए है। परवर्ती फासिल अवशेष आस्ट्रेलिया, न्यूगिनी और अमेरिका में निकले हैं। ये फासिल मनुष्य उन्हीं प्रदेशों में रहते थे, जिनमें मनुष्य की इस समय जीवित जातियाँ रहती हैं, जो सम्भवतः उन सबकी ही वंशज हैं। दूसरे शब्दों में प्रमुख जीवित जातियों--अफ्रीका के नीग्रो, बुशमैन, काकेशियाई, मंगोल और आस्ट्रेलियाई—में से प्रत्येक के क्रम-विकास का अपना अलग इतिहास रहा है। परन्तु उनमें से कोई भी एक पृथक् स्थानीय स्पीशिज़ नहीं बनीं, क्योंकि मनुष्यों की कोई भी जाति इतनी देर तक अपने पड़ौसियों से विच्छिन्न नहीं रही कि उसका पृथक् स्वतन्त्र रूप से विकासति हो सकता।

उत्तान मानुष हमारे एक अब तक भी अनभिज्ञात आस्ट्रेलोपिथेसाइन पूर्वज और सैपियन्स मानुष के बीच की शरीर-रचनात्मक कड़ी बना हुआ है। जैसा कि उसके नाम से ध्वनित है, वह सीधा खड़ा होता था और सीधा खड़ा होकर चलता था। परन्तु वह बुद्धिमान मनुष्य, सैपियन्स मानव, जितना चतुर नहीं था, अन्यथा वह अब भी यहाँ होता। उत्तान मनुष्य औज़ार बनाता था

---

[1] इस दृष्टिकोण के सम्बन्ध में पूरे प्रलेख और अगले कुछ अनुभागों में वर्णित मानवीय क्रम-विकास के सम्बन्ध में जानकारी मेरी पुस्तक 'दी ओरिजिन ओफ रेसिज़' में मिल सकती है, सन् 1962 में अल्फ्रेड ए. वनौफ़, न्यूयार्क द्वारा प्रकाशित की गई है।

ग्रौर उसका उपयोग करता था ग्रौर ग्रन्ततोगत्वा उसकी सब जातियाँ ग्राग का उपयोग करने लगी थीं। निवास स्थलों में—ग्रौर बहकर किसी कीचड़-युक्त तट पर पहुँचा हुग्रा नहीं—पाया गया। प्रत्येक नमूना उन वयस्क पशुग्रों की फाड़ी हुई हड्डियों के साथ प्राप्त हुग्रा है, जिन्हें कि उसने मारा था ग्रौर खाया था।

मेरे व्यवसाय में एक विवादास्पद प्रश्न यह है कि हम उत्तान मनुष्य ग्रौर सैपियन्स मानुष को ग्रलग-ग्रलग किस प्रकार पहचान सकते हैं? हम उनके शरीर की, गर्दन से नीचे की हड्डियों के द्वारा उसे ग्रलग नहीं पहचान सकते। हमारे पास उत्तान मानुष की ऐसी हड्डियाँ बहुत कम हैं ग्रौर उनकी ग्रधिकाँश विशिष्टताएँ जातिगत हैं, क्रम-विकासगत नहीं। हम उन्हें प्रत्यक्ष रूप से उनके व्यवहार (ग्राचरण) द्वारा भी नहीं जान सकते। प्राणि-वैज्ञानिकों की दृष्टि में ग्रन्य पशुग्रों की स्पीशिज़ों में परस्पर भेद करने के वास्ते इस व्यवहार का बहुत महत्त्व होता है। परन्तु उत्तान मानुष के सामाजिक जीवन का कोई ग्रभिलेख नहीं हुग्रा ग्रौर यहाँ तक कि उसके ग्रौज़ार भी सैपियन्स मानुष के ग्रौज़ारों में इस प्रकार मिल जाते हैं कि उनमें ग्रन्तर कर पाना कठिन है। किन्तु मानवीय विकास के क्रम में मानवीय व्यवहार भी ग्रवश्य बदला होगा, ग्रन्यथा उत्तान मानुष ग्रब भी हमारे बीच में होता। मानवीय व्यवहार का नियन्त्रण-केन्द्र मस्तिष्क में है, जो ग्रन्थियों द्वारा उत्तेजित ग्रौर प्रभावित होता है। उत्तान मानुष की ग्रन्थियों के सम्बन्ध में तो बहुत कम ज्ञान है, परन्तु हमें उसके मस्तिष्क का खोल ग्रर्थात् उसकी खोपड़ी मिली है। इन दोनों स्पीशिज़ों के मध्य ग्रन्तर इस खोपड़ी में ही पाये जाते हैं।

उत्तान मानुष की खोपड़ी एक उथली, संकरी ग्रौर उल्टी करके रखी हुई प्यालियाँ धोने की कूंडी जैसी दिखाई पड़ती है। इसके किनारे लगभग सारी गौलाई में बहिर्नत हैं ग्रौर ग्रगले ग्राधे हिस्से में दोनों ग्रोर फैले हुए हत्थे से हैं। सैपियन्स मानुष की खोपड़ी एक ग्रन्तर्नत, बिना किनारे वाले कटोरे जैसी दिखाई पड़ती है, जिसके हत्थे सपाट हैं। उत्तान मानुष की खोपड़ी के किनारों के तीन भाग हैं: सामने की ग्रोर भौंहों का उद्रेख, जो नेत्र गोलकों की ऊपर की ग्रोर से रक्षा करता है; पीछे की ग्रोर एक शिखर, जिसके साथ गर्दन की सशक्त माँस-पेशियाँ ग्राकर जुड़ती हैं; ग्रौर प्रत्येक कर्णछिद्र के ऊपर समीपस्थ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शिखर, जो पार्श्वों में और पीछे की ओर तक फैले हुए हैं। हत्थे अस्थिमय मेहराबें हैं, जिनके नीचे सशक्त टैम्पोरल माँस-पेशियाँ जबड़े को उठाते समय आकर आकुंचित हो जाती हैं।

सैपियन्स मानुष की खोपड़ी में स्वयं मस्तिष्क का खोल ही नेत्र गोलकों की रक्षा करता है, क्योंकि यह उनके ऊपर एकदम सीधा उठता चला जाता है। गर्दन की माँस-पेशियों के लिए किसी सशक्त बन्धनी की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि सिर और चेहरा अपेक्षाकृत अधिक अच्छी तरह सन्तुलित होते हैं और

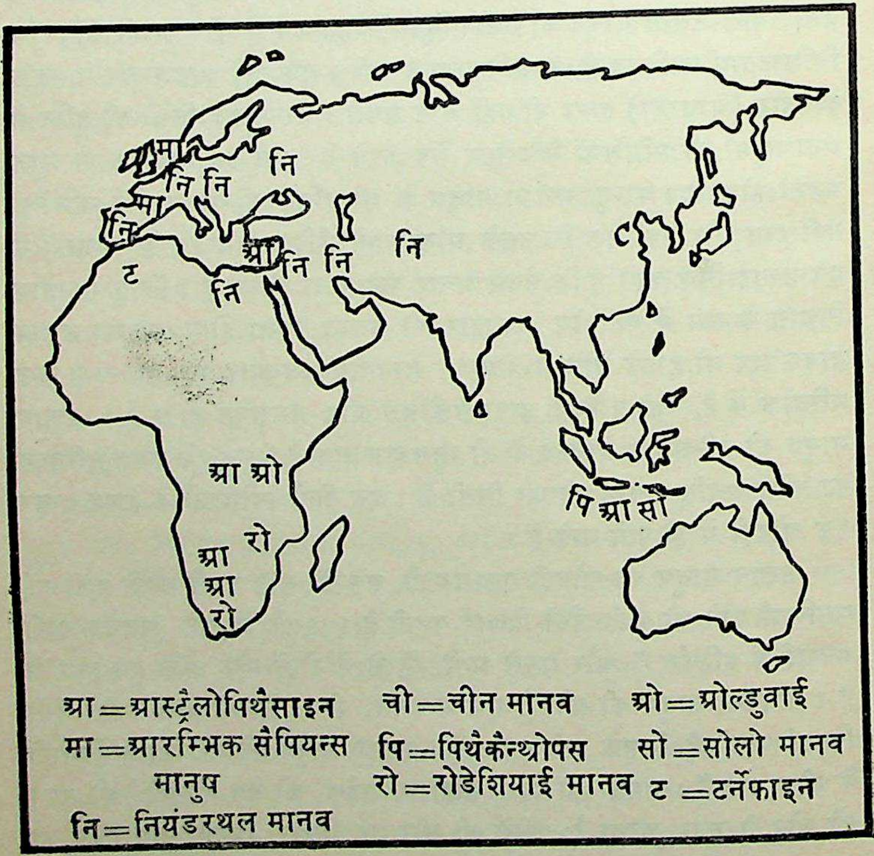
मा
नि नि
नि
मा
नि
ट
आ
नि नि
नि
नि
नि
आ ओ
रो
आ
आ
रो
पि आ सो
आ = आस्ट्रैलोपिथैसाइन
ची = चीन मानव
ओ = ओल्डुवाई
मा = आरम्भिक सैपियन्स मानुष
पि = पिथैकैन्थ्रोपस
सो = सोलो मानव
रो = रोडेशियाई मानव
ट = टर्नेफाइन
नि = नियंडरथल मानव

35000 ई० पू० से पहले के फासिल मानव के प्राप्त अवशेष

अपेक्षाकृत दुर्बल जबड़े की माँस-पेशियाँ अपेक्षाकृत अधिक चपटी मेहराबों से काम चला सकती हैं, क्योंकि उन्हें अपना काम करने के लिए अपेक्षाकृत थोड़े स्थान की आवश्यकता होती है।

उत्तान मानुष की खोपड़ी के अन्दर मस्तिष्क के लिए स्थान अपेक्षाकृत कम होता है, जो 775 घन सैण्टीमीटर से लेकर 1225 घन सैण्टीमीटर तक होता है। इस अभिसीमा (रेन्ज) का निचला अंश आस्ट्रैलोपिथैसाइन की मस्तिष्क सीमा से अधिक है और इसका ऊपरी वंश सैपियन्स मानुष के मस्तिष्क की सीमा के ऊपर तक आ जाता है, जो 1100 घन सैण्टीमीटर से कुछ कम से शुरू होकर 1800 घन सैण्टीमीटर से भी कुछ अधिक तक बहुत विभेदशील (घटती-बढ़ती) होती है।

जैसा कि खोपड़ी की अन्दरूनी सतह से प्रकट होता है, उत्तान मानुष का मस्तिष्क तली की ओर चपटा-सा था और ऊपर की ओर इसमें धीरे-धीरे ही मोड़ उठता था। सैपियन्स मानुषों का मस्तिष्क बीच में से अपेक्षाकृत अधिक कुब्ब की तरह उठा हुआ और दोनों सिरों पर नीचे की ओर झुका हुआ होता है परन्तु उत्तान मानुष के शिशु की खोपड़ी में मस्तिष्क की आकृति सैपियन्स मानुष के मस्तिष्क की आकृति से अधिक मिलती-जुलती है। इसका अर्थ यह है कि सैपियन्स मानुष का मस्तिष्क बढ़कर अपने पूर्वज के मस्तिष्क की अपेक्षा बड़ा तो हो जाता है, किन्तु वह अपने पूर्वज के शिशुकालीन मस्तिष्क की आकृति को वयस्क जीवन में भी बनाये रखता।

उत्तान मानुष की कुछ खोपड़ियों में हड्डी से बनी वह जगह भी है, जिसमें पिच्यूटरी ग्रन्थि या प्रधान ग्रन्थि स्थित होती थी। यह जगह आधुनिकतम मानुष में पाई जाने वाली इस ग्रन्थि की जगह से चौगनी बड़ी रही प्रतीत होती है।

सामान्यतया उत्तान मानुष के दाँत सैपियन्स मानुष के दाँतों से अधिक बड़े हैं, किन्तु सब मामलों में ऐसा नहीं है। दांत के आकार से भी अधिक निर्णायक (क्रान्तिक) वस्तु है मस्तिष्क के आकार और तालु के आकार के बीच का अनुपात। यह अनुपात आस्ट्रैलोपिथैसाइन से उत्तान मानुष और उससे सैपियन्स मनुष्य तक निरन्तर क्रमशः बढ़ता जाता है। इसका कुल मिलाकर यह अर्थ है कि हम जितने ही अधिक मेधावी होते हैं, हमें अपना भोजन उतना ही कम चबाना पड़ता है।

खोपड़ी की आकृति, मस्तिष्क के आकार, मस्तिष्क की आकृति और मस्तिष्क और तालु के बीच अनुपात, इन सबका सम्मिलित रूप से प्रयोग करके हम साधारणतया यह बता सकते हैं कि खोपड़ी उत्तान मानुष की है या सैपियन्स मानुष की। कुछ खोपड़ियाँ सीमान्त रेखा की भी हो सकती हैं जैसा कि ऐसा किसी भी शृंखला में, जिसमें कि एक स्पीशिज़ दूसरी में विकसित हो रही हो, होना ही चाहिए।

उत्तान मानुष का इतिहास

मेरे निदान के अनुसार, जिस समय मैं लिख रहा हूँ, उस समय संसार में मध्य प्लीस्टोसीन, अर्थात् अब से 5 लाख वर्ष से लेकर डेढ़ लाख वर्ष पहले तक, के उत्तान मानुष की एक दर्जन खोपड़ियाँ विद्यमान हैं। इनके अलावा उपरि-प्लीस्टोसीन, अर्थात् डेढ़ लाख से लेकर दस हज़ार वर्ष पहले तक, की आठ खोपड़ियाँ और हैं। इन आँकड़ों में उन नमूनों की संख्या सम्मिलित नहीं है, जो या तो अपूर्ण हैं, या केवल खण्ड मात्र हैं और इसलिए जिनका ठीक-ठीक निदान नहीं हो सकता।

उत्तान मानुष की सबसे पहले मिली खोपड़ी एक कपाल-शिखर थी, जो एक हालैंडवासी चिकित्सक यूजेन ड्यूबोइस को सन् 1891 में प्राप्त हुई थी। यह जावा में सोलो नदी के किनारों पर पानी की क्रिया से जम गई ज्वालामुखीय चट्टान (ट्यूफा) की एक तह में पड़ी हुई थी। इसके साथ एक रोग-ग्रस्त जाँघ की हड्डी भी थी और तीन दाँत थे, जिनमें से दो, बाद में पता चला कि, औरंग उत्तान के थे।

मध्य प्लीस्टोसीन काल में, अर्थात् मोटे तौर पर तीन लाख वर्ष पहले, एक ज्वालामुखी के फट जाने के कारण इस इलाके के सब पशु या तो विषैली गैस के कारण या अन्य किसी कारण मर गए थे। उसके बाद नदी उनकी हड्डियों को समुद्र की ओर बहा ले गई और वे उसके बाढ़कालीन किनारों पर पड़ी रहीं, जहाँ वे कालक्रम में राख में दब गईं। इन हड्डियों का काल उन पशुओं की हड्डियों को पहचानकर निर्धारित किया गया है, जो उन मनुष्यों की हड्डियों के साथ मिली हैं। पुराजीवविकास-वेत्ताओं (पेलियोण्टोलोजिस्ट) को मालूम है कि प्लीस्टोसीन काल के किस भाग में विभिन्न प्रदेशों में स्तनपायी

पशुओं की कौन-कौन-सी स्पीशिज़ें विलुप्त हो चुकी थीं और इस ज्ञान से फासिल मानव का अध्ययन करने वाले व्यक्ति को एक सुविधाजनक काल-सूची मिल जाती है।

डुबोइस ने इस नये प्राणी को पिथैकेन्थ्रोपस इरैक्टस अर्थात् खड़ा वानर मानव नाम दिया। सिवाय इसके कि उसकी वृद्धि रोग की दशा में हुई थी, उसकी जाँघ की हड्डी पूरी तरह आधुनिक थी। यह वानर मानव मनुष्य के आकार का था और सीधा खड़ा होकर भी चलता था, परन्तु उसका मस्तिष्क छोटा था और उसकी कपाल की क्षमता 900 घन सेण्टीमीटर से अधिक नहीं थी। उसकी भौंहों के उद्रेख वहुत बड़े-बड़े थे और उसका माथा ढलवाँ था।

इसके चालीस वर्ष बाद राल्फ वॉन कोनिग्सवाल्ड ने जावा के प्लीस्टोसीन-कालीन निवासियों के अवशेषों के लिए फिर खोज शुरू की। 1930 के बाद की दशाब्दी में उसने पिथैकैन्थ्रोपस (वानर मानव) के चार और नमूने प्राप्त किये। इनमें से दो कपाल-शिखर थे जो उसी काल के और उसी टाइप के थे, जैसा कि डुबोइस द्वारा पाया गया पहला नमूना था। चौथा नमूना एक एक-वर्षीय शिशु का था, जो अंडे के छिलके जितना पतला था और पाँचवीं एक भारी-भरकम पाशविक खोपड़ी थी, जिसे उसने पिथैकैन्थ्रोपस रोबस्टस (तगड़ा वानर मानव) नाम दिया। यह और शिशु, ये दोनों ही अन्य पिथैकैन्थ्रोपसों की अपेक्षा अधिक प्राचीन थे। वे मध्य प्लीस्टोसीन के बिलकुल शुरू-शुरू में जीवित रहे थे, लगभग उसी समय, जबकि मैगान्थ्रोपस नामक वह आस्ट्रैलोपिथैसाइन जीवित रहा होगा, जिसे वॉन कोनिग्सवाल्ड ने उसी निक्षेप में पाया था। यह द्वीप बीच-बीच में एशिया महाद्वीप की मुख्य भूमि से जुड़ता और कटता रहा था, इसलिए यह संभव है कि ये प्राणी स्वयं जावा की अपेक्षा और अधिक विस्तृत क्षेत्र में रहते रहे हों। यदि हम भाग्यशाली हों, तो हो सकता है कि दक्षिण पूर्वी एशिया में निम्न प्लीस्टोसीन के बाद के काल के निक्षेपों में किसी अन्वेषक को पिथैकैन्थ्रोपस रोबस्टस की कोई प्रतिकृति मिल जाय।

अर्ध मस्तिष्क वाले मनुष्यों के कंकाल अवशेषों की एक और बड़ी शृंखला सन् 1927 और द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ने के बीच के दिनों में पेकिंग से कोई 37 मील दूर चाउकाउतियेन की प्रसिद्ध गुफाओं में खुदाई करने वालों के एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दल ने, जिसका अध्यक्ष पहले डेविडसन ब्लैक और बाद में फ्राँज़ वाइडनराइख रहा था, प्राप्त की। इन अवशेषों में 15 खोपड़ियाँ थीं, 7 जाँघ की हड्डियाँ, 2 ऊपरी बाँह की हड्डियाँ, 1 कालर की हड्डी और 1 कलाई की छोटी हड्डी थी, इससे वाइडनराइख को विश्लेषण करने के लिए काफी सामग्री मिल गई। क्योंकि चीनी सरकार मूल अवशेषों को पेकिंग में ही रखना चाहती थी, इसलिए वाइडनराइख को जब चीन से लौटने के लिए विवश होना पड़ा, तब वह इन नमूनों की हूबहू प्रतिमाएँ बनाकर अपने साथ न्यूयार्क ले आया। इसके कुछ ही समय बाद एक जहाज़ 'प्रेज़ीडैण्ट हैरीसन' द्वारा उन मूल अवशेषों को सुरक्षित रखने के लिए अमेरिका भेजने का यत्न किया गया परन्तु तब तक बहुत देर हो चुकी थी। उन हड्डियों को लेकर जो रेलगाड़ी समुद्र तट की ओर जा रही थी, उस पर जापानियों ने कब्ज़ा कर लिया और किसी को नहीं मालूम कि उसके बाद उन हड्डियों का क्या हुआ।

वाइडनराइख द्वारा बनाई गई उन नमूनों की प्रतिमाएँ इतनी अच्छी थीं और उन पर उसने न्यूयार्क में अमेरिका के प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय में इतना घोर परिश्रम किया था कि सन् 1948 में अपनी मृत्यु होने से पहले वह उन नमूनों के सम्बन्ध में एक ऐसी विवरणात्मक लेखमाला लिखने में समर्थ हुआ था, जिसके फलस्वरूप सिनान्थ्रोपस (चीन मानव) हमारे लिए सबसे अधिक ज्ञात फासिल मानव बन गया है। सिनान्थ्रोपस का डीलडौल सम्भाःयतः पिथैकैन्थ्रोपस (वानर मानव) की अपेक्षा अधिक भारी भरकम था और उसकी जाँघों की हड्डियाँ अधिक धनुषाकार थीं। उसके हाथ-पैरों की हड्डियों के मध्य भाग में मज्जा की नालियाँ असाधारण रूप से पतली और हड्डियों की दीवारें (भित्तियाँ) सघन और मोटी थीं।

चीन मानव (सिनान्थ्रोपस) का मस्तिष्क, जैसा कि पाँच कुछ कम या अधिक सम्पूर्ण कपाल-शिखरों से पता चला है, वानर मानव (पिथैकैन्थ्रोपस) के मस्तिष्क की अपेक्षा बड़ा था, 1015 घन सेण्टीमीटर से लेकर 1255 घन सेण्टीमीटर तक था, जबकि वानर मानव (पिथैकैन्थ्रोपस) का मस्तिष्क 775 से लेकर 900 घन सेण्टीमीटर तक ही का था। उसकी खोपड़ी ऊबड़-खाबड़ और अस्थिमय थी और उसके दाँत पिथैकैन्थ्रोपस इरैक्टस (खड़े वानर मानव) के दाँतों जितने बड़े थे, परन्तु पशुता के इन चिह्नों में पिथैकैन्थ्रोपस रोबस्टस

उससे कहीं बढ़कर था।

यद्यपि सब खड़े वानर मानवों की खोपड़ियाँ कुछ कम या अधिक एक-सी दिखाई पड़ती हैं, परन्तु इसका कारण यह है कि वे सब उसी सामान्य क्रम-विकासीय स्तर के हैं। फिर भी कुछ जातीय विशेषताएँ उनमें सिनान्थ्रोपस (चीन मानव) के काल से, अर्थात् लगभग 3 लाख 60 हज़ार वर्ष पहले से, ही दिखाई पड़ने लगती हैं। पिथैकैन्थ्रोपस का माथा उसकी भौंहों के उद्रेख के मध्य से लेकर उसके सिर की चोटी तक एक ही समतल पर उठता चला जाता है। सिनान्थ्रोपस की भौंहों के उद्रेख एक ताक की तरह बाहर को निकले रहते हैं और माथा उनके पीछे की ओर कुछ दूर तक सीधा ऊपर की ओर उठता है। आधुनिक मंगोल लोगों की ऊँची गालों की हड्डियाँ भी सिनान्थ्रोपस में पहले से विद्यमान थीं। उनके चेहरों की भाँति उसका चेहरा चपटा-सा था।

अपने अगले मध्य-प्लीस्टोसीनकालीन नमूने के लिए अब हम चीन से अफ्रीका की ओर आते हैं। वहाँ एक उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस) का कपाल-शिखर लैंविस लीकी को सन् 1960 में ओल्डुवाई कन्दरा में मिला था। यह कपाल-शिखर ज़िंजानथ्रोपस और ओल्डुवाई बालक के ऊपर था और अन्तिम रूप से इसका काल अब से 4 लाख साल पहले का निर्धारित किया गया था। यह जावा और चीन में मिले उत्तान मानुष के नमूनों से एक प्रधान दृष्टि से भिन्न है। इसकी भौंहों के उद्रेख जहाँ उनके जितने ही बड़े हैं, वहाँ वे उसकी आँख के गड्ढों के ऊपर दो चापें-सी बनाते हैं और दोनों पार्श्वों में पीछे की ओर फैलते जाते हैं। जावावासी और चीनवासी नमूनों में भौंहों के उद्रेख हड्डी की लगभग सीधी छड़ें-सी हैं। भौंहों के उद्रेखों की आकृति की दृष्टि से ओल्डुवाई का उत्तान मानुष काकेशियाई और नीग्रो, दोनों से मिलता-जुलता है। उत्तरी अफ्रीका में उसी भूगर्भीय काल के तीन निचले जबड़े अल्जीरिया में तर्नेफाइन में मिले थे और उनके साथ खोपड़ी की हड्डी का एक छोटा-सा टुकड़ा मिला था, जो देखने में उत्तान मानुष का नमूना जान पड़ता है; परन्तु हम इसके विषय में पूरी तरह निश्चित नहीं हो सकते। यूरोप या पश्चिमी एशिया में उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस) की कोई खोपड़ी अभी तक नहीं मिली है।

उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस) उपरि प्लीस्टोसीन के पिछले भाग में पृथ्वी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से लुप्त हो गया। कुछ स्थानों पर वह सैपियन्स मानुष के रूप में विकसित हो गया। कुछ अन्य स्थानों पर हो सकता है कि उसको सैपियन्स शिकारियों के उन आगे बढ़ते हुए दलों ने मारकर समाप्त कर दिया हो, जो उसकी अपेक्षा अधिक कार्यक्षम थे और कुछ अन्य स्थानों पर वह मिश्रण द्वारा सैपियन्स मानुषों में ही घुल-मिल गया हो। संसार के कुछ भागों में वह अन्य भागों की अपेक्षा अधिक देर तक बचा रहा। जैसी कि आशा की जा सकती है, वह रास्ते से दूर पड़ने वाले शरणस्थलों में सबसे अधिक देर तक बचा रहा; और हमारे ग्रह (पृथ्वी) पर सबसे अधिक सुरक्षित शरणस्थल दक्षिणी गोलार्द्ध में है।

जावा में सोली नदी के किनारे नगनदोंग नामक स्थान पर सन् 1931 में हालैंडवासी भूगर्भवैज्ञानिक जी० टर हार को ग्यारह मस्तिष्क के खोल और दो पिंडली की हड्डियाँ मिलीं। इन सब खोपड़ियों के चेहरे कटे हुए थे और एक के सिवाय बाकी सब में से मस्तिष्क निकाल दिया गया था। इन खोपड़ियों का काल उपरि प्लीस्टोसीन, सम्भवत: उपरि प्लीस्टोसीन का पिछला भाग अर्थात् अब से 75 हज़ार और 35 हज़ार वर्ष के बीच पहले का आँका गया है।

इन खोपड़ियों को 'सोलो खोपड़ियाँ' कहा जाता है। ये आकृति में पिथैकैन्थ्रोपस (वानर मानव) की खोपड़ियों से मिलती हैं, किन्तु उनसे बड़ी हैं। उनके मस्तिष्क के खोल आकार में उन सिनान्थ्रोपसों (चीन मानवों) से दुगने हैं, जो उनसे तीन लाख वर्ष पहले जीवित थे। या तो सोलो लोग पिथैकैन्थ्रोपसों के वंशज थे, या पिथैकैन्थ्रोपस और सोलो, दोनों ही दक्षिण-पूर्वी एशिया की मुख्य भूमि से वहाँ आ बसे थे। दोनों ही दशाओं में सम्भाव्यत: वे एक-दूसरे के सम्बन्धी थे।

दूसरा बड़ा शरणस्थल भूमध्य रेखा के दक्षिण में स्थित अफ्रीका है। सन् 1921 में ब्रोकन हिल नामक स्थान में, जो उत्तरी रोडेशिया में स्थित है, उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस) का एक बहुत बाद का नमूना एक खुली हुई खदान में से निकाला गया। खदान मज़दूरों ने पहाड़ी में एक ऐसा खँड खोदा था, जिसमें एक गुफा थी। यह गुफ़ा पशुओं की हड्डियों से भरी हुई थी, जिनमें से कुछ वहाँ मनुष्यों द्वारा लाई गई थीं। इस गुफ़ा के गर्त की बिलकुल तली में उन्हें मनुष्यों की हड्डियाँ मिलीं। इन हड्डियों में निचले जबड़े को छोड़कर एक समूची खोपड़ी,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

एक दूसरे व्यक्ति का ऊपरला जबड़ा, एक त्रिकास्थि, पिंडली की हड्डी और जाँघ की हड्डी के दोनों सिरे थे।

होमो रोडेशियेंसिस अर्थात् रोडेशियाई मानव—इस नमूने को यही नाम दिया गया है—एक बड़ा, भारी हड्डियों वाला मनुष्य था, जिसका कद लगभग पाँच फुट दस इंच और भार 160 पौंड से अधिक था। उसकी टाँगों की हड्डियाँ और त्रिकास्थि बिलकुल आधुनिक थीं और वे आसानी से किसी स्थानीय नीग्रो की हो सकती थीं। खोपड़ी के अन्दर 1280 घन सेंटीमीटर का मस्तिष्क था, जो आधुनिक पुरुष के मस्तिष्क की अभिसीमा के निचले अर्ध भाग में आता है और होमो इरैक्टस (उत्तान मानव) की दृष्टि से कुछ बड़ा है। उसकी भौंहों के उद्रेख बहुत बड़े हैं और माथा लगभग क्षैतिज है। उसकी आँखों के गड्ढे कन्दरायुक्त और वर्गाकृति किनारे वाले हैं, चेहरा बहुत ही लम्बा है और नाक चपटी-सी है। परन्तु उसकी भौंहें के उद्रेखों की आकृति ओल्डुवाई कन्दरा में प्राप्त हुए उससे भी पहले के उत्तान मानव (होमो-इरैक्टस की जैसी है और उसके चेहरे का विन्यास जीवित नीग्रो लोगों के अंग प्रत्यंगों के काफ़ी बड़े आकार के उपहास-चित्र जैसा है। इस रोडेशियाई खोपड़ी का काल अभी अनिश्चित है, किन्तु खनिज विश्लेषण और उसके साथ मिले उपकरणों से ऐसा सूचित होता है कि वह सम्भाव्यत: तीस हज़ार वर्ष से अधिक पुराना नहीं है, या फिर इससे भी कुछ बाद का ही हो।

इससे मिलता-जुलता एक और नमूना सन् 1953 में दक्षिण अफ्रीका के अन्तरीप प्रान्त में सल्डान्हा खाड़ी के किनारे होपफील्ड गाँव के निकट हवा द्वारा कट गये एक स्थल की सतह पर मिला था। इसमें केवल मस्तिष्क का और जबड़े की हड्डी का एक कोना है। यद्यपि इससे रोडेशियाई मानव की शरीर-रचना के बारे में हमारे ज्ञान में कोई वृद्धि नहीं होती, परन्तु इससे इतना अवश्य सिद्ध होता है कि रोडेशियाई मानव अद्वितीय नहीं था; और इससे हमें उसका काल निर्धारण करने में सहायता मिलती है। सल्डान्हा खाड़ी के मनुष्य के साथ मिली पशुओं की हड्डियों और उपकरणों से उसका काल चालीस हज़ार वर्ष से अधिक पुराना नहीं आँका जा सकता।

ब्रोकन हिल के मानव और सल्डान्हा खाड़ी के मानव में मध्य प्लीस्टोसीन युग के आरम्भिक काल के ओल्डुवाई मानव की अपेक्षा कुछ सारवान प्रगति

हुई दिखाई नहीं पड़ती। जावा की भाँति मध्य तथा दक्षिणी अफ्रीका के प्रदेश भी प्लीस्टोसीन के उत्तरार्द्ध के अधिकाँश भाग में विकास की दृष्टि से पिछड़े हुए प्रदेश थे। अदन के सामने पड़ने वाले इन भागों में उत्तान मानुष का उत्तर जीवन अब से तीस हज़ार वर्ष पहले तक भी विक्षुब्ध नहीं हुआ था। क्रम-विकास की गतिविधि के केन्द्र के अपेक्षाकृत निकटस्थ प्रदेशों में सैपियन्स मानुष को प्रकट हुए उस समय तक लगभग ढाई लाख वर्ष बीत चुके थे।

सैपियन्स मानुष का आविर्भाव और प्रसार

सैपियन्स मानुष संसार में पहले पहल अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग समय आविर्भूत हुआ। यह बात प्रत्याशित ही थी, क्योंकि यह प्रकृति के उन नियमों के अनुकूल है, जो सामान्यतया पशु जीवन पर लागू होते हैं। प्लीस्टोसीन काल में क्रम-विकास यूरोप, पश्चिमी एशिया और चीन में जावा और दक्षिणी अफ्रीका की अपेक्षा अधिक तेज़ी से हुआ और मनुष्य भी इसका कोई अपवाद नहीं था।

यूरोप में प्राप्त हुआ सबसे पुराना मनुष्य का नमूना प्रसिद्ध हाइडलवर्ग जबड़ा है, जो सन् 1907 में पश्चिमी जर्मनी में एक रेत के गर्त में से खोद कर निकाला गया था। यह एक भारी और बिना ठोडी का जबड़ा है, जिसमें दाँत आधुनिक आकार के हैं। क्योंकि इसके साथ कपाल का कोई अंश नहीं मिला, इसलिए हमें यह पता नहीं कि इसे उत्तान मानुष का कहा जाय या सैपियन्स मानुष का। इसका काल अब से लगभग 3 लाख 60 हज़ार वर्ष पहले का माना जाता है, जो सिनान्थ्रोपस (चीन मानव) का भी काल है।

इसके बाद अब से 2 लाख 50 हज़ार वर्ष पहले के काल की दो खोपड़ियाँ मिलती हैं, जो इतनी काफी पूर्ण हैं कि वे किसी एक स्पीशिज़ की कही जा सकती हैं और वे दोनों सैपियन्स मानुष के आदिमकालीन उदाहरण हैं। इनमें से एक स्वैन्सकोम्बी खोपड़ी है, जो इंग्लैंड में मिली थी और दूसरी जर्मनी में पाई गई स्टीनहीम खोपड़ी है।

सन् 1933 में ए० टी० मार्स्टन नामक एक दन्त चिकित्सक ने, जो एक अव्यवसायी पुरातत्ववेत्ता था, लन्दन से कुछ मील नीचे की ओर स्वैन्सकोम्बी नामक स्थान पर टेम्स नदी के एक सौ फुट ऊँचे किनारे के द्वितीय अन्तर-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हिमानी काल की बजरी में एक मनुष्य की खोपड़ी का समूचा भाग खोज निकाला। श्री मार्स्टन ने बड़ी सूझ-बूझ दिखाई और उस खोपड़ी को उस बजरी में से, जिसमें कि वह ढाई लाख वर्ष तक पड़ी रही थी, निकालने से पहले उसने ब्रिटिश म्यूज़ियम के व्यवसायी पुरातत्ववेत्ताओं को बुला लिया, जिससे वे उस खोपड़ी के उस स्थिति में ही फोटो ले सकें, जिसमें कि वह पाई गई थी। सक्षम भूगर्भवेत्ताओं ने यह तय किया है कि इस खोपड़ी के ऊपर की बजरी कभी भी हिलाई-डुलाई नहीं गई। बाद में प्रयोगशाला में की गई परखों से यह पता चला कि उस खोपड़ी की हड्डी में फ्लोरीन की उतनी ही मात्रा विद्यमान थी, जितनी कि उस काल के विलुप्त हो चुके स्तनपायी प्राणियों की हड्डियों में मिली है। फ्लोरीन की इस परख का आविष्कार इंग्लैंड में कैनैथ ओकले ने सन् 1940 में किया था। इस परख द्वारा यह बताया जाता है कि किसी एक स्थान में मिली दो फासिल हड्डियाँ एक ही काल की हैं या नहीं। किन्तु इस परख का उपयोग निरपेक्ष काल-निर्धारण के लिए नहीं किया जा सकता, क्योंकि हालाँकि फ्लोरीन निरन्तर मिट्टी में जमा होती रहती है, परन्तु इसके जमा होने की दर अलग-अलग स्थानों में एक-दूसरे से बहुत भिन्न होती है।

स्वैन्सकोम्बी का नमूना एक स्त्री के कपाल-शिखर का पिछला और मध्य भाग है, जिसमें अधिक सुनिर्दिष्ट रूप से कहा जाय तो, तीन हड्डियाँ, औक्सीपिटल (पश्च कपाल) और दोनों पैराइटल (कपाल पार्श्विका) हड्डियाँ हैं। ये हड्डियाँ यह दिखाने के लिए पर्याप्त हैं कि उस स्त्री का मस्तिष्क और उसकी खोपड़ी आधुनिक आकार और आकृति की थीं। उसकी कपाल-क्षमता लगभग 1325 घन सैण्टीमीटर थी, जो आधुनिक यूरोपियन स्त्रियों के औसत के निकट है। हमें उसके चेहरे, माथे या जबड़े के विषय में कुछ भी मालूम नहीं है, परन्तु इनके विषय में जानकारी उस काल की दूसरी खोपड़ी से, जो स्टीनहीम की है, प्राप्त होती है।

स्टीनहीम खोपड़ी स्टटगार्ट के निकट एक बजरी की खदान में सन् 1933 में पाई गई थी। यह निचले जबड़े को छोड़कर बाकी बिलकुल पूरी है। परन्तु यह मिट्टी में पड़े-पड़े बुरी तरह झुक गई और टूट-फूट गई है और इसे कभी भी पूरी तरह सही दशा में नहीं लाया जा सका। मस्तिष्क का आकार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

1150 और 1175 घन सेंटीमीटर के बीच में है, जो सैपियन्स मानुष के लिए कम है; परन्तु यह बहुत कम नहीं है। बहुत-सी इस समय जीवित स्त्रियों का मस्तिष्क इससे भी छोटा होता है। खोपड़ी की आकृति, इसके सिवाय कि उसमें आँख के गड्ढों के ऊपर एक तीखा, पतला, आगे की ओर निकला हुआ अग्र भाग (वाइजर) है, पूर्णतया आधुनिक है। यह भौंहों का उद्रेख आज कल की यूरोपियन स्त्रियों में मिलना कठिन होगा। चेहरे और दाँतों के विषय में कोई उल्लेखनीय बात नहीं है, सिवाय इसके कि उसकी नाक चौड़ी थी।

इन दो खोपड़ियों से यूरोप में ढाई लाख वर्ष पहले सैपियन्स मानुष का अस्तित्व प्रमाणित होता है। अन्यत्र कहीं इतने पुराने सैपियन्स मानुष की खोपड़ियाँ नहीं पाई गईं।

इन खोपड़ियों के काल और अन्तिम, या वूर्म, हिमाच्छादन के आरम्भ होने के बीच में यूरोप निवासियों में स्टीनहीम-स्वैन्सकौम्बी नमूने से बहुत कम परिवर्तन हुआ। फ्राँस में स्थित फोन्तेश्वाद में मिले दो स्त्री कपाल-शिखर इस दृष्टि से ध्यान देने योग्य थे कि उनमें भौंहों के उद्रेखों का अभाव था। जर्मनी, यूगोस्लाविया तथा अन्य स्थानों में मिली खोपड़ियों में उद्रेख थे। सैपियन्स मानुष का एक आदिम रूप, जो जातितः यूरोपवासी था, यूरोप में अन्तिम हिमाच्छादन के पहले बढ़ाव के शुरू तक, अर्थात् लगभग 75 हज़ार वर्ष पहले तक, निरन्तर यूरोप में रहता रहा। उसके बाद रहस्यपूर्ण नियंडरथलों ने उनका स्थान ले लिया, परन्तु उनकी चर्चा करने से पहले हमारे लिए यह उचित होगा कि हम संसार के अन्य भागों में सैपियन्स मानुष के प्रथम आविर्भाव का नक्शा बना लें।

चीन में यह परिवर्तन का काल लगभग एक लाख पचास हज़ार वर्ष पहले उपस्थित हुआ था। दक्षिणी चीन में मापा नामक स्थान से प्राप्त हुई एक खोपड़ी, जो मध्य प्लीस्टोसीन के पिछले भाग की है, सारतः उत्तान मानुष की है, जबकि त्सेयाँग से प्राप्त हुई एक आरम्भिक मध्य प्लीस्टोसीन काल की खोपड़ी सारतः सैपियन्स मानुष की है। इन दोनों खोपड़ियों में सिनान्थ्रोपस (चीन मानव) और मंगोलों के जातीय प्रधान चिन्ह विद्यमान हैं। त्सेयाँग की खोपड़ी के बाद आधा दर्जन अन्य खोपड़ियों के क्रम पर होते हुए हम चाउकाउतियेन के उन ऊपरी गुफावासी लोगों तक आ पहुँचते हैं, जो

प्लीस्टोसीन के अन्त के आस-पास जीवित थे और आधुनिक मंगोल थे ।

जावा में वादजक नामक स्थान से प्राप्त हुई दो खोपड़ियाँ भी, जिनका काल प्लीस्टोसीन के अन्त के आस-पास समझा जाता है, आदिम-कालीन सैपियन्स मानुषों की हैं और आस्ट्रेलिया के आधुनिक आदिवासियों से मिलती-जुलती हैं । उत्तरी बोर्निया में नियाह् गुफ़ा में से खोदकर निकाली गई एक पूर्णतया सैपियन्स मानुष की आस्ट्रैलोइड (आस्ट्रेलियाई जातीय) खोपड़ी का काल रेडियो कार्बन द्वारा अब से लगभग 40 हज़ार वर्ष पूर्व का निश्चित किया गया है । उत्तर की ओर, दक्षिण-पूर्वी एशिया में, सैपियन्स का एक आस्ट्रैलोइड प्रकार सम्भाव्यतः कुछ और पहले आविर्भूत हो गया था ।

अफ्रीका में सैपियन्स मानुष की सबसे पुरानी खोपड़ियाँ सम्भाव्यतः वे चार खोपड़ियाँ हैं, जिन्हें लैविस लीकी ने केन्या में कांजेरा नामक स्थान पर सन् 1932 में खुदाई में प्राप्त किया था । ये बहुत ही लम्बी हैं और इनकी अन्दर की मेहराबें बहुत नीची हैं और इनमें भौंहों के उद्रेख फौंतेश्वाद की खोपड़ियों की अपेक्षा अधिक नहीं हैं । जातितः वे नीग्रो प्रतीत होती हैं । तीस वर्ष तक इन खोपड़ियों के काल के विषय में विवाद चलता रहा और फ्लोरीन की परख द्वारा, जीव-जन्तुओं के साथ तुलना द्वारा और पुरातत्व सम्बन्धी साहचर्यों के आधार पर उनका काल निर्धारण करने के अनेक प्रयत्न किये गए । ये सम्भाव्यतः उपरि प्लीस्टोसीन काल की हैं और हो सकता है कि सल्डान्हा खाड़ी मानव के समकालीन हों, हालांकि यह बात पूरी तरह निश्चित नहीं है ।

उत्तरी अफ्रीका में हमें 10 हज़ार ई० पू० से पहले की ऐसी कोई सामग्री प्राप्त नहीं होती, जिसके आधार पर कुछ काम किया जा सके । 10 हज़ार ई० पू० में काकेशियाई लोगों ने या तो फिलस्तीन से, सा स्पेन से बार्बारी प्रदेश पर आक्रमण किया था और आधुनिक बर्बरों का जन्म उनसे ही हुआ है । तब, या उसके कुछ काल बाद अन्य काकेशियाई लोग दक्षिण की ओर बढ़ते हुए केन्या और टांगान्यिका के श्वेत पहाड़ी प्रदेश में पहुँच गए, जहाँ सम्भवतः उनके वंशज भाला चलाने वाले मसाई, अभिमानी वात्सुई और अन्य पतले और पतली नाक वाले 'हैमाइट' अब भी बसते हैं । बुशमैनों और होटैण्टौटों के पूर्वजों के लिए प्लीस्टोसीन का कोई सुनिश्चित काल निर्धारित नहीं किया जा सकता । हम इस विषय में केवल अनुमान कर सकते हैं कि वे कौन थे और

उनका मूल स्थान कहाँ था। उनका वर्तमान निवासस्थान दक्षिणी अफ्रीका उनका मूल स्थान नहीं रहा होगा, क्योंकि वे रोडेशियाई मानव या सल्डान्हा खाड़ी मानव से मिलते-जुलते नहीं हैं। आजकल सबसे अधिक ठीक जंचने वाला सिद्धान्त वही पुराना सिद्धान्त है कि उनका विकास उतरी अफ्रीका में हुआ था और वहाँ से हैमाइट लोगों ने उन्हें दक्षिण की ओर खदेड़ दिया था; परन्तु जब तक बार्बरी में कुछ और अधिक खुदाई न हो, तब तक इस बात को न तो प्रमाणित किया जा सकता है और न खण्डित ही।

नियंडरथल लोग

इतना ही बड़ा रहस्य विख्यात नियंडरथल लोगों के जातीय इतिहास का है और इस तथ्य के कारण, कि हमें उनके बारे में बहुत कुछ पता है, यह रहस्य किसी प्रकार कम नहीं होता। प्रथम वूर्म हिमाच्छादन के आरम्भ में, अर्थात् लगभग 75 हज़ार वर्ष पहले, वे पश्चिमी यूरोप, इटली, क्रीमिया, फिलस्तीन, ईराक और मध्य एशिया में प्रकट हुए थे। क्योंकि बहुत खोज के बाद भी मध्य और पूर्वी यूरोप में उनके बहुत ही थोड़े नमूने पाये गए हैं, इसलिए हम उन्हें दो समूहों में बाँटे लेते हैं--पश्चिमी और पूर्वी। इन दोनों ही प्रदेशों में वे प्रथम वूर्म हिमाच्छादन के बढ़ाव के दिनों में रहते रहे थे और जब हिम अस्थायी रूप से 10 हाज़र वर्ष के लिए पीछे हटा, तब, अर्थात् अब से 40 हज़ार और 30 हज़ार वर्ष पहले के वीच में, नियंडरथल लोग लुप्त हो गये और उनका स्थान आजकल जीवित यूरोपवासियों और निकट पूर्व के निवासियों के पूर्वजों ने ले लिया।

नियंडरथल लोग कहाँ से आये थे और वे क्यों इस प्रकार समाप्त हो गए? इस समस्या का समाधान केवल तभी दृष्टिगोचर हो सकता है जबकि हम पहले नियंडरथल मनुष्य की इस आम धारणा को समाप्त कर दें कि वह एक नाटा, झुककर चलने वाला, नीची भौंहों वाला, मूढ़ और दुष्ट नृशंस पशु था, जो स्त्रियों को उनके सिर पर डण्डा मार कर उनसे प्रेम प्रदर्शित करता था और अपने मृत माता-पिता को खा जाता था।

नियंडरथल के विषय में यह ग़लत धारणा पश्चिमी जर्मनी में मूल नियंडरथल खोपड़ी के पाये जाने पर शुरू हुई। नियंडर, जिसके कारण नियंडरथल

नाम पड़ा, एक छोटी-सी जलधारा है, जो राइनलैण्ड के इलाके में डूसलडोर्फ के निकट एक छोटी-सी सुन्दर घाटी में बहती है। वहाँ एक बिना चेहरे का कपाल शिखर एक बजरी की खदान में से सन् 1856 में—जब डार्विन ने अपने विकासवाद की घोषणा की थी, उससे दो वर्ष पहले—खोदकर निकाला गया था।

एक इस प्रकार की खोपड़ी के, जिसकी कि भौंहें नीची थीं और जिसमें आँखों के गड्ढों का जो अंश बचा था, उसको ढंकते हुए बड़े-बड़े अस्थिमय उद्रेख थे, खोजे जाने के लिए इससे अधिक परिपक्व समय और कोई नहीं हो सकता था। इस खोपड़ी को कपि से लेकर नैपोलियन के युद्धों के पीछे रह गये एक रूसी सैनिक तक, सब किसी की बताया गया। इस प्रकार पहले पहल गुफावासी नृशंस पशु की कल्पना का जन्म हुआ।

इस वन्य मानव की कल्पना का समर्थन सन् 1911-13 में एक फ्रांसीसी, शरीर-रचना शास्त्री—पुराजीव विकास वैज्ञानिक—मार्सेलिन बूल ने किया, जिसने दोर्दोन के इलाके में ला शापैल औ साँ की गुफा में से खोद कर निकाले गए एक नियंडरथल मानव के लगभग समूचे काल का विवरण लिखा था। बूल के कथनानुसार नियंडरथल मानव बौना (रुद्ध-विकास), ढोल की सी छाती वाला पशु था, जिसके घुटने चलते समय स्थायी रूप से झुके रहते थे, उसकी बाँहें आगे की ओर बढ़ी रहती थीं और उसका सिर एक छोटी-सी झुकी हुई गर्दन पर आगे की ओर निकला रहता था। उसकी खोपड़ी लम्बी और नीची थी, उसका माथा-लगभग चपटा था और उसकी बड़ी-बड़ी आँखों के गड्डों के ऊपर नीचे की ओर को झुके हुए अविच्छिन्न भौंहों के उद्रेखों के अस्थिमय उभार थे।

उसकी नाक (जिसकी हड्डियाँ तोड़ दी गई थीं, अनुमानतः मस्तिष्क को बाहर निकालने के लिए) नीची और चपटी थी; उसके जबड़े एक थूथनी के रूप में आगे की ओर निकले हुए थे और उसके ठोडी थी ही नहीं। अपने चौड़े और ठूंठ जैसे पैरों से वह एक गुफा से दूसरी गुफा तक लड़खड़ाता हुआ दौड़ता था। इस प्रकार के हिंस्र पशु से गन्दे से गन्दे सामाजिक व्यवहार की ही आशा की जा सकती थी।

सन् 1955 में लन्दन में शरीर-रचना के दो प्राध्यापकों, जौन्स हौपकिन्स

के विलियम ऐल० स्ट्रास जूनियर और सेंट बार्थोलोम्यू कालेज के ए० जे० ई० केव, ने पेरिस के म्युसी द लोम (मानव संग्रहालय) में ला शापेल के अवशेषों की जाँच-पड़ताल करने की अनुमति ले ली। उन्होंने देखा कि वह कंकाल, जो चालीस से पचास वर्ष तक की आयु के एक पुरुष का था, सन्धि-शोथ (आर्थराइटिस) के कारण सड़ा हुआ था। इस रोग ने ला शापेल के निचले जबड़े के कब्जों पर, उसकी गर्दन पर और उसके शरीर के अधिकांश भाग पर बुरा प्रभाव डाला था। उसके सिर का आगे की ओर झुकाव, जिसकी ओर बूल का ध्यान गया था, कम से कम अंशतः इस विकृत गर्दन के फलस्वरूप था और उसका बौना कद और झुकी हुई स्थिति उसकी रीढ़ की हड्डी (मेरुदण्ड) में सन्धिशोधीय क्षतों के कारण थी। अपनी जवानी के दिनों में ला शापेल उतना ही ऊँचा रहा था, जितना कि आजकल दोर्दोन में रहने वाला औसत फ्रांसीसी होता है।

पश्चिमी नियंडरथल सीधे खड़े होते थे और अपने सिर को सामान्य स्थिति में रखते थे। परन्तु, जैसा कि बूल ने कहा था, वे हृष्ट-पुष्ट भारी लोग थे, जिनके धड़ लम्बे, छाती गहरी और बाहें तथा टाँगें छोटी थीं। उनकी बाँहों का अगला भाग और पिंडलियाँ विशेष रूप से छोटी थीं, जैसा कि आजकल लैपलैण्ड से ग्रीनलैण्ड तक के ध्रुवप्रदेश में रहने वाले कई जातियों के लोगों की और टियेरा डेल फुएगो के नौका (कैनो)-आदिवासियों की होती है। इनमें सभी लोग किसी न किसी प्रकार सर्दी में रहने के लिए अनुकूलित होते हैं और सम्भाव्यतः नियंडरथल लोग शरीर-क्रिया की दृष्टि से हिम के तट के निकट के इलाकों के कठिन जीवन के लिए अनुकूलित हो गए थे।

यूरोपीय नियंडरथल लोगों के सिर भी एक विशेष आकृति के थे, क्योंकि उनकी खोपड़ियाँ लम्बी, चौड़ी और नीची थीं, जो देखने में ढलवाँ या कानों के ऊपर-नीचे की ओर को पिघल-सी गई दीखती थीं। फिर भी खोपड़ी के अन्दर मस्तिष्क उतना ही बड़ा या उससे भी बड़ा था, जितना कि आजकल जीवित अधिकांश यूरोपवासियों का होता है। उनके चेहरे लम्बे थे और मध्य रेखा पर से आगे की ओर को निकले हुए थे। उनकी नाकें, जैसा कि अब हमें मालूम है, लम्बी और नुकीली थीं; उनके जबड़े गहरे और आगे की ओर को निकले हुए थे। उनमें से कुछ ला शापेल की भाँति बिना ठोडी के थे, किन्तु

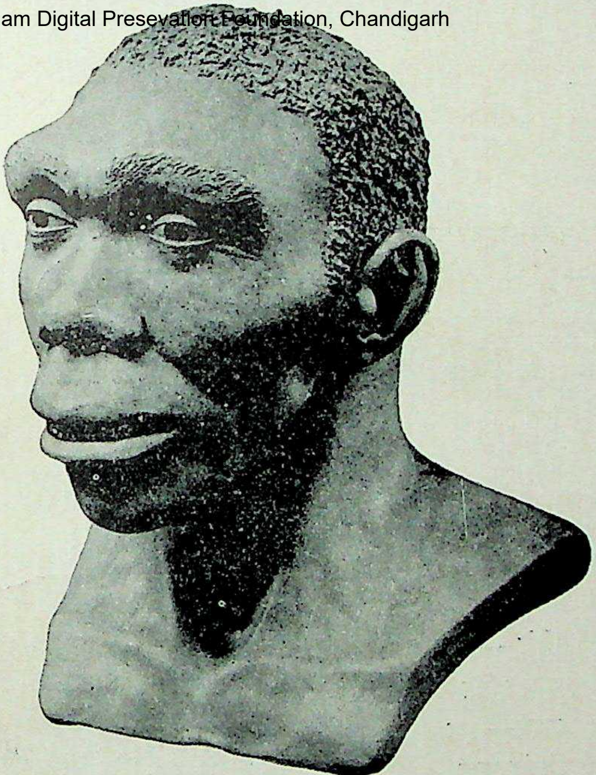

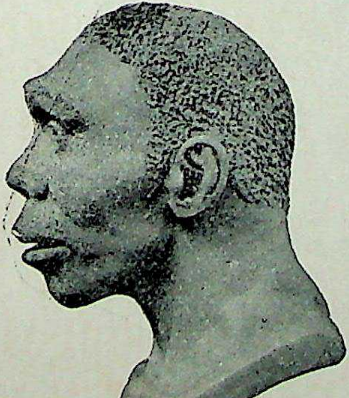

रोडेशियाई मानव
लेखक द्वारा किये गये एक नये पुनः
स्थापन के दो दृश्य

प्लेट 1

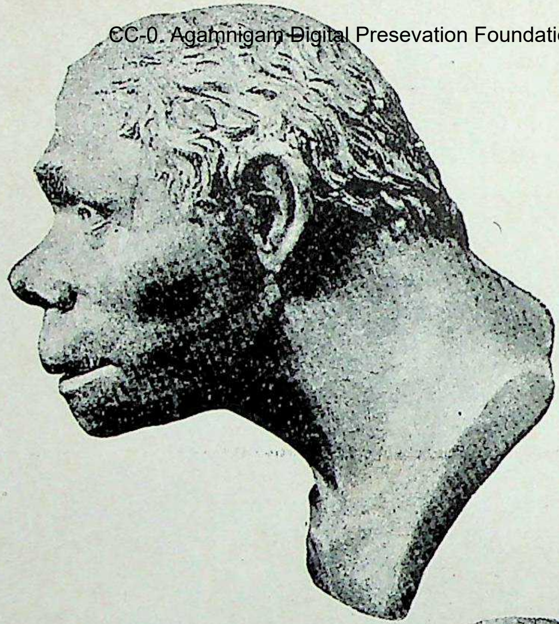

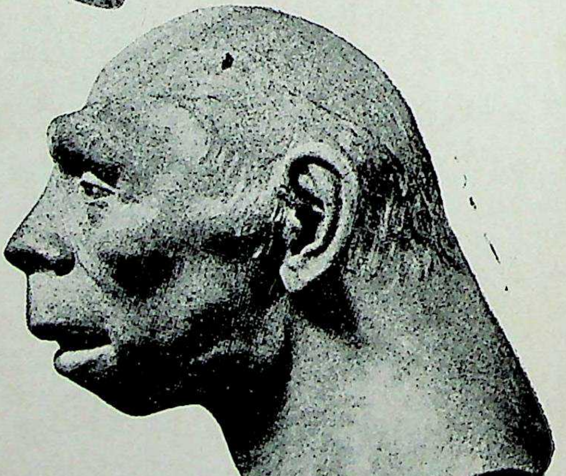

नीचे—एक नर चीन मानव (सिनान्थ्रोपस) ऊपर—एक मादा नियंडरथल, जो जिब्राल्टर 1 कपाल पर आधारित है। ये दोनों लेखक द्वारा तैयार किये गये नये पुनः स्थापन हैं।

प्लेट 2

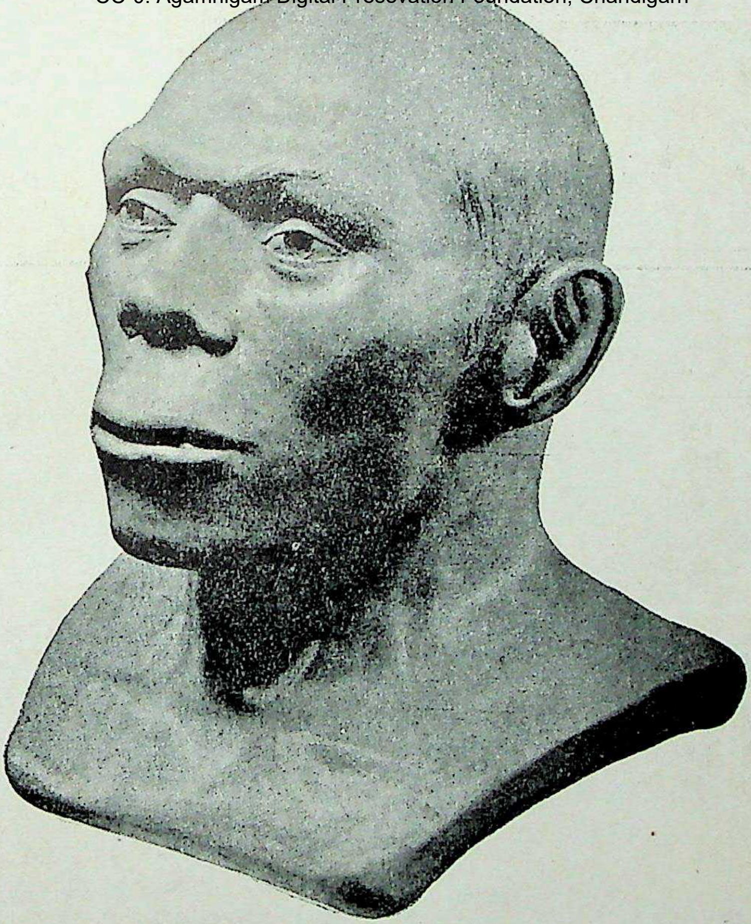

फिलस्तीन मानव। सखूल 5 का एक नया पुनः स्थापन; यह माउंट कार्मेल पर मेमनों की गुफा (केव ओफ दि किड्स) में पाये गये नियंडरथलजातीय कपालों में से एक है। यह या तो नियंडरथल मानव और आधुनिक मानव के बीच विकास की किसी अवस्था का प्रतिनिधि है, या इन दोनों का संकर है।

चित्र संख्या 1, 2 और 3 में दिखाई गई प्लास्टोलीन-निर्मित पुनः कल्पनाओं में पहले कपालों और जबड़ों को पुनः स्थापित किया गया और उसके बाद अप्राप्त अंशों को कल्पना से पूरा किया गया। उसके बाद उनपर मांसपेशियां चढ़ाई गईं और कल्पना से बाल लगा दिये गये। कोमल अंशों की, जिनमें ओठ, नाक की नोक, कान और बाल सम्मिलित हैं, बनावट पूर्णतया काल्पनिक है।

प्लेट 3

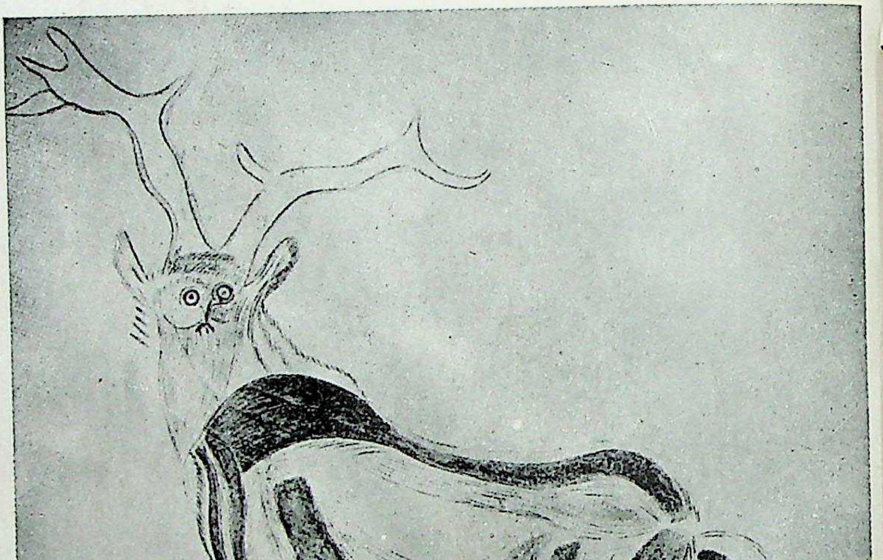

लूर्दे का जादूगर। एक उपरि पुरा पाषाणिक गुफा चित्र, जिसमें एक मनुष्य को हिरन के छद्मवेश में दिखाया गया है। बांदी ए मारिंजे के अनुसार; ल आर्त प्रिहिस्तोरीक अनुमति ले ली गई है।

प्लेट 4

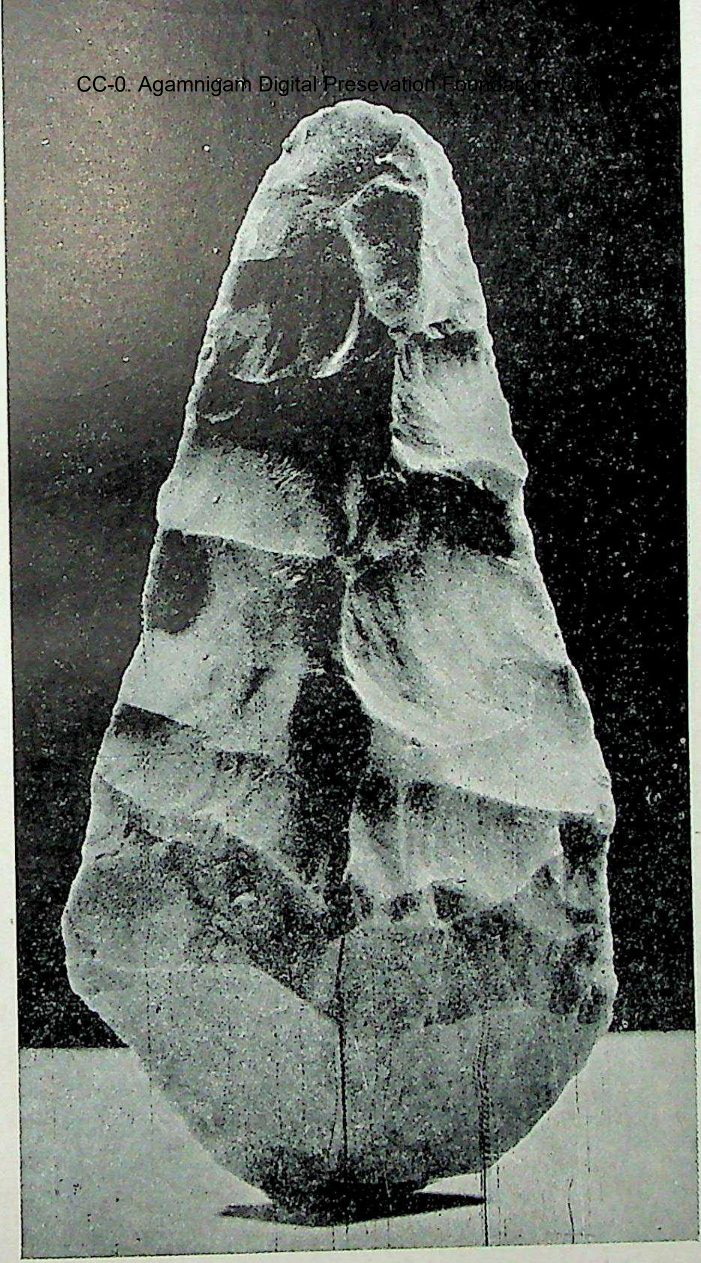

द्वितीय अन्तर हिमाच्छादन काल का एक कुठार। यह इंगलैंड में टेम्स नदी के किनारे मिला है। यह हमारे 5 लाख वर्ष पहले के पूर्वजों की कलात्मक तथा तकनीकी कुशलता का शानदार प्रमाण है। ऊंचाई 5½ इंच। प्लेट 5

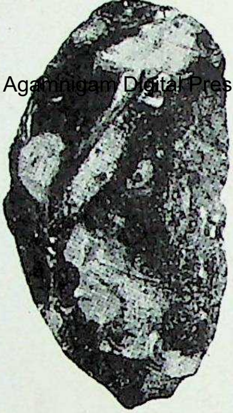

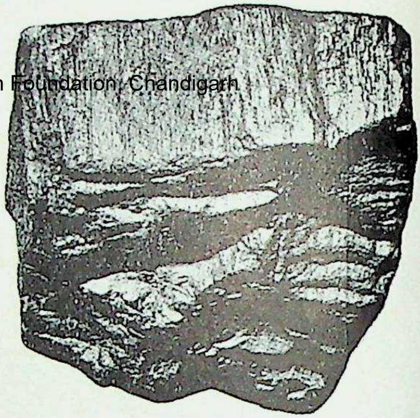

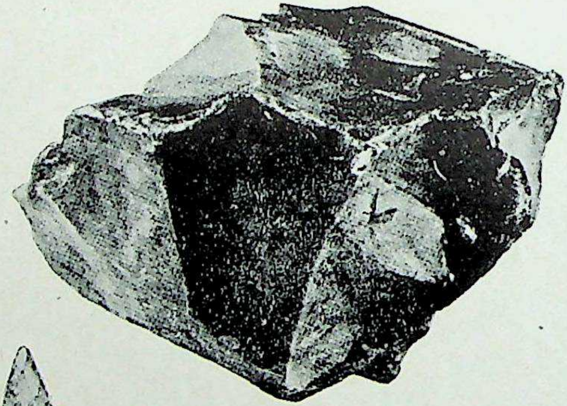

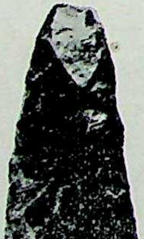

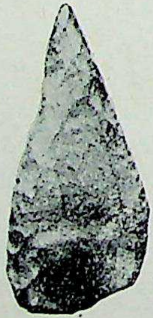

निम्न तथा मध्य पुरा पाषाणिक उद्योग। (1) स्वैन्सकौम्बी मानव के स्थान तथा काल से प्राप्त हुई एक शल्क खुरचनी ; ऊंचाई 3 इंच। (2) हैलम ऐल मौवियस, जूनियर द्वारा बर्मा में संगृहीत फासिल लकड़ी का बना कर्तन—औज़ार ; ऊंचाई 3 इंच। (3) एक मध्य पुरा पाषाणिक क्रोड, जिसमें चोट करने के लिए प्रखार-मुख और शल्क उतारने के चिह्न हैं ; चौड़ाई $5\frac{1}{2}$ इंच। (4) बिसीतून, ईरान से प्राप्त एक दो फलक वाला चाक़ू ; ऊंचाई $2\frac{1}{2}$ इंच। (5) उसी स्थान से प्राप्त एक नियंडरथल भाले की नोंक ; ऊंचाई $2\frac{1}{2}$ इंच।

प्लेट 6

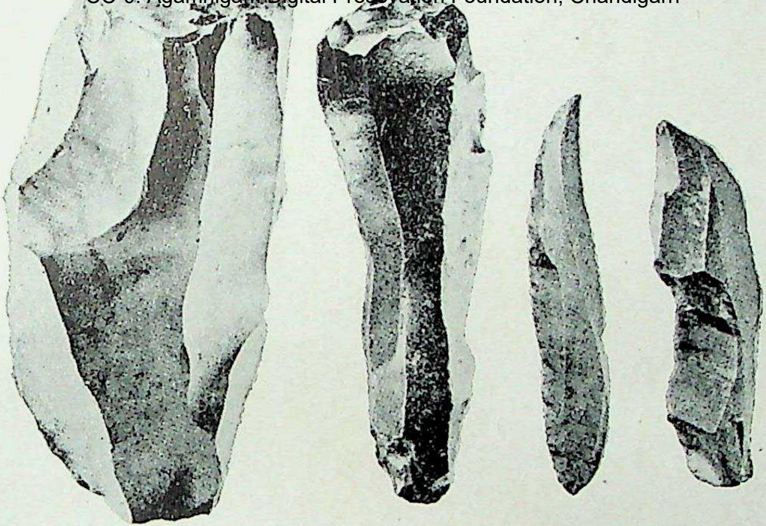

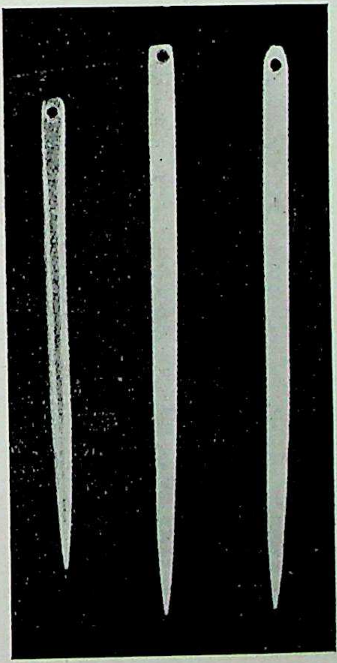

उपरि पुरा पाषाणिक उद्योग। (1) फ्रांस में औरिग्नेसी काल की एक फलक क्रोड; ऊंचाई 4½ इंच। (2) तुरैफ़, दक्षिणी अरब की एक फलक पर बनी किनारा खुरचनी; 3¼ इंच। (3) फ्रांस का एक पृष्ठदार फलक; ऊंचई 2¼ इंच। (4) तुरैफ़, दक्षिणी अरब की एक तक्षणी। इस की कार्यकारी धार ऊपर की ओर है; ऊंचाई 2 इंच। (5) फ्रांस में तक्षणियों द्वारा बनाई गई हड्डी की सुइयां; ऊंचाई 1½ इंच, 1⅞ इंच, 1¾ इंच।

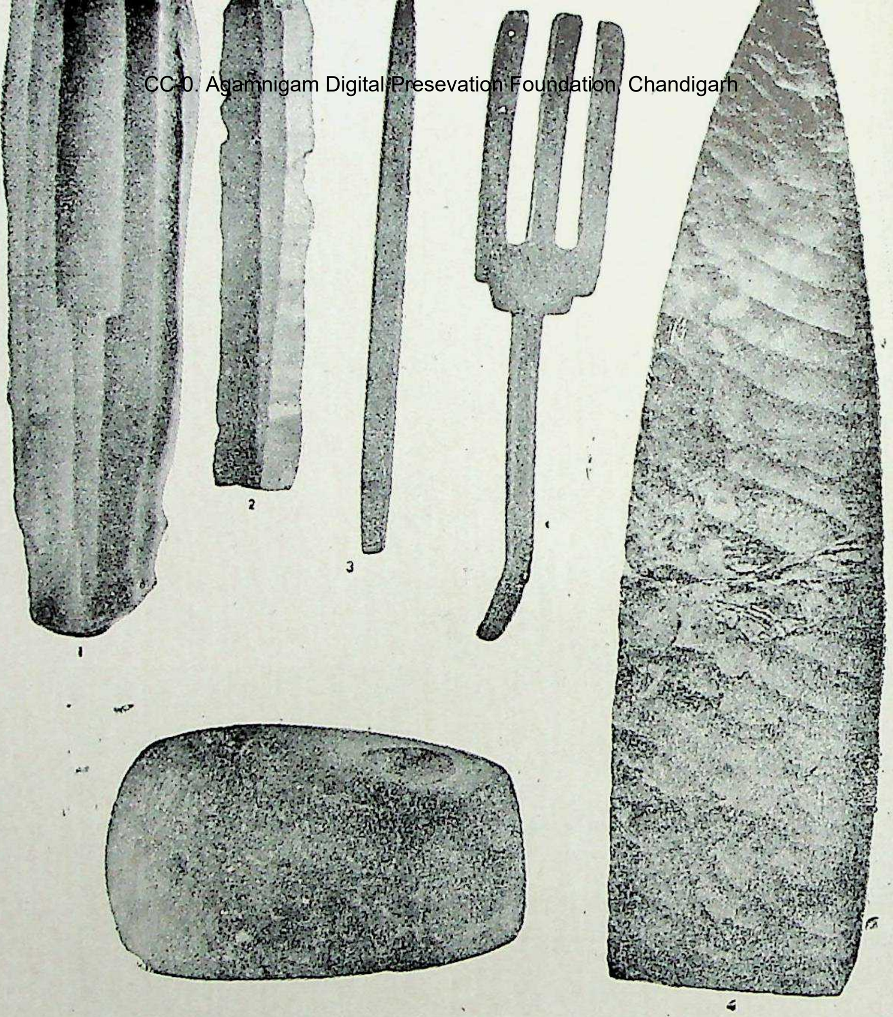

नव पाषाणिक औज़ार । (1) फलक क्रोड । देखिये, टूटा हुआ आधा फलक अभी तक अपनी जगह पर है । इस टूट जाने के कारण क्रोड खराब हो गई । बैल्ट गुफ़ा, ईरान । ऊंचाई $4\frac{1}{2}$ इंच । (2) दरांती का फलक, जो उसी स्थान से प्राप्त हुआ है । दाईं ओर चमकीली धारियां गेहूँ काटने से जमी सिलिका की हैं । ऊंचाई $2\frac{3}{4}$ इंच । (3) पत्थर की छेनी. पार्श्व का दृश्य । बैल्ट गुफ़ा । ऊंचाई 3 इंच । (4) चकमक का चाकू, जो स्कैंडिनेविया से प्राप्त हुआ है और जो सोल्यूत्री महाहस्ति-शिकारियों के फलकों से मिलता जुलता है । ऊंचाई $7\frac{3}{4}$ इंच । (5) बैल्ट गुफ़ा में सबसे निचले स्तर से प्राप्त हुआ लगभग 6000 ईस्वी पूर्व का हड्डी का बना हुआ एक कांटा । लम्बाई $4\frac{1}{2}$ इंच । (6) परिष्कृत पत्थर की कुल्हाड़ी का शिरोभाग । बैल्ट गुफा । ऊंचाई $2\frac{1}{2}$ इंच ।

प्लेट 8

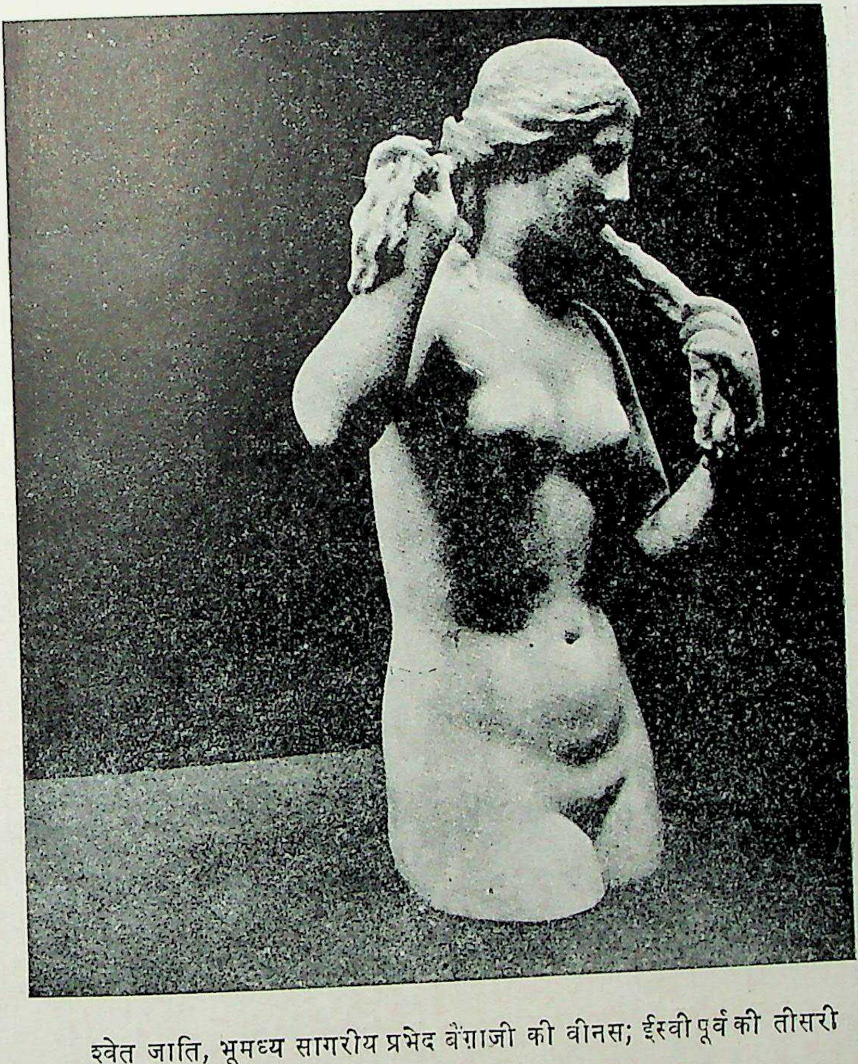

श्वेत जाति, भूमध्य सागरीय प्रभेद बेंगाज़ी की वीनस; ईस्वी पूर्व की तीसरी शताब्दी; यूनानी ।

प्लेट 9

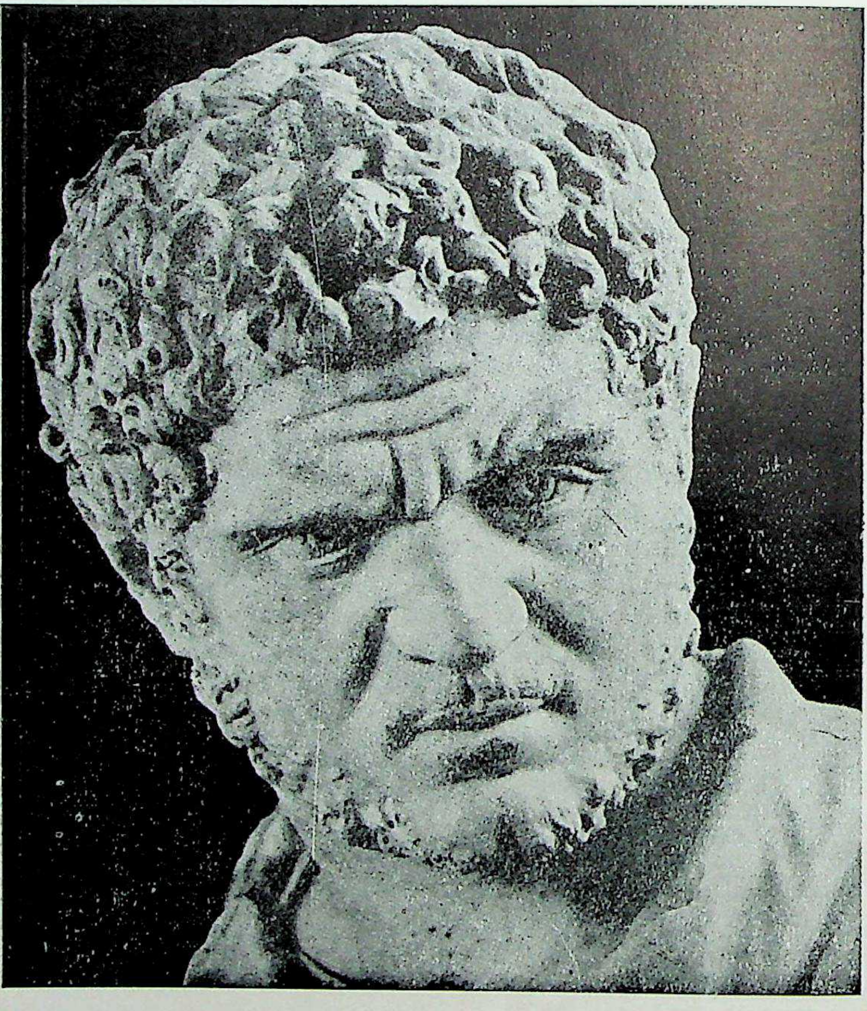

श्वेत जाति, उपरि पुरा पाषाणिक प्रकार। सम्राट् काराकल्ला, प्रिंसटन आर्ट म्यूज़ियम।

प्लेट 10

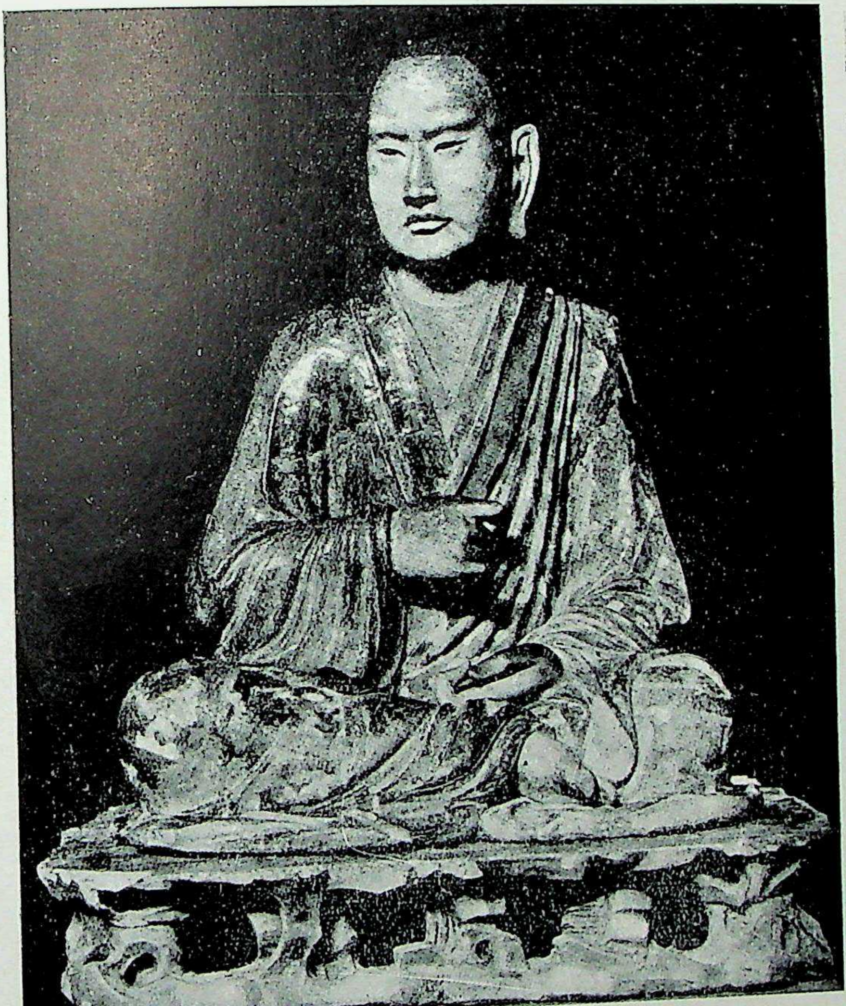

मंगोलोयड जाति, चीनी प्रकार। एक लोहन, या बुद्ध का मूल शिष्य, जो तांग राजवंश, ईस्वी सन् 618-906, काल की एक वीरोचित आकार की पोर्सिलेन प्रतिमा।

प्लेट 11

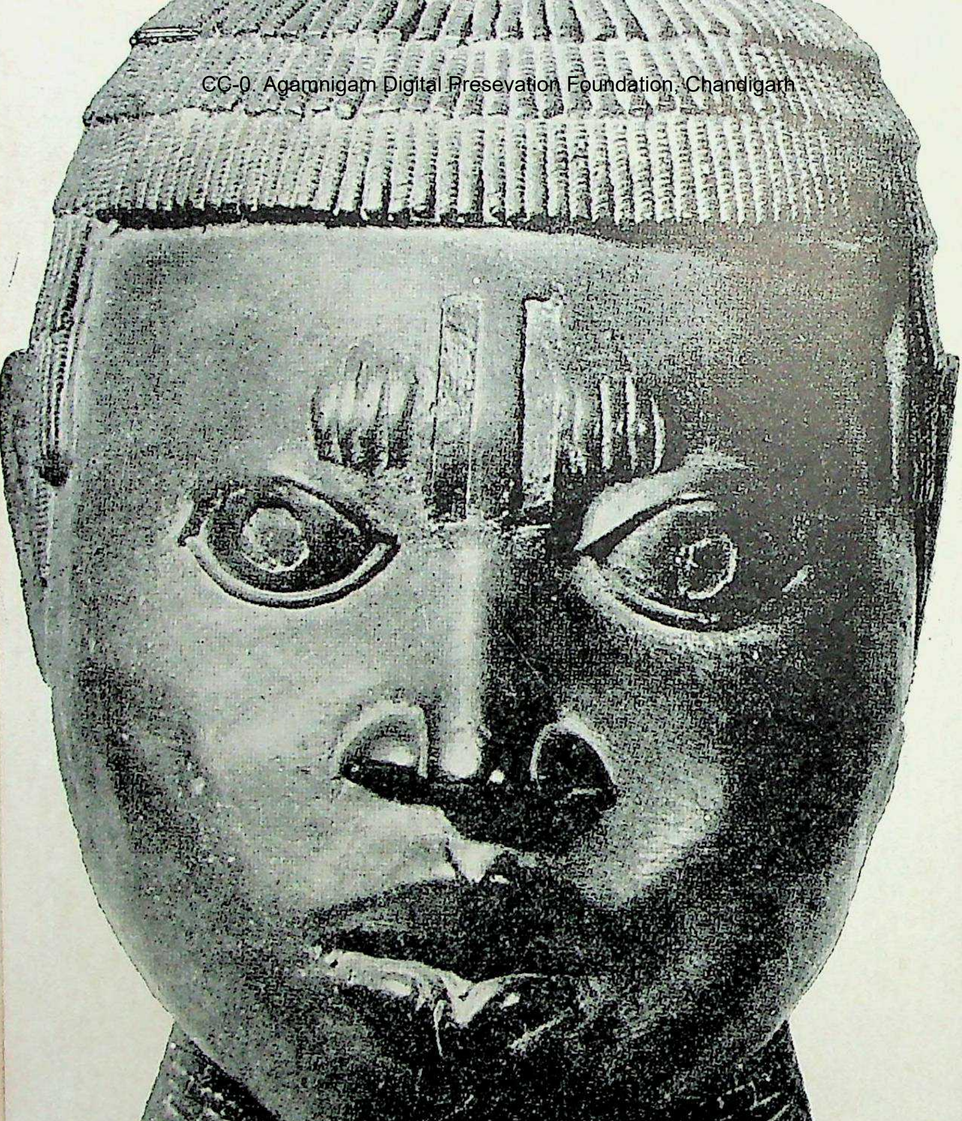

नीग्रो जाति। पश्चिमी अफ्रीका टाइप। ईसा की सोलहवीं या सत्रहवीं शताब्दी की, बेनिन में पाई गई कांस्य प्रतिमा।

प्लेट 12

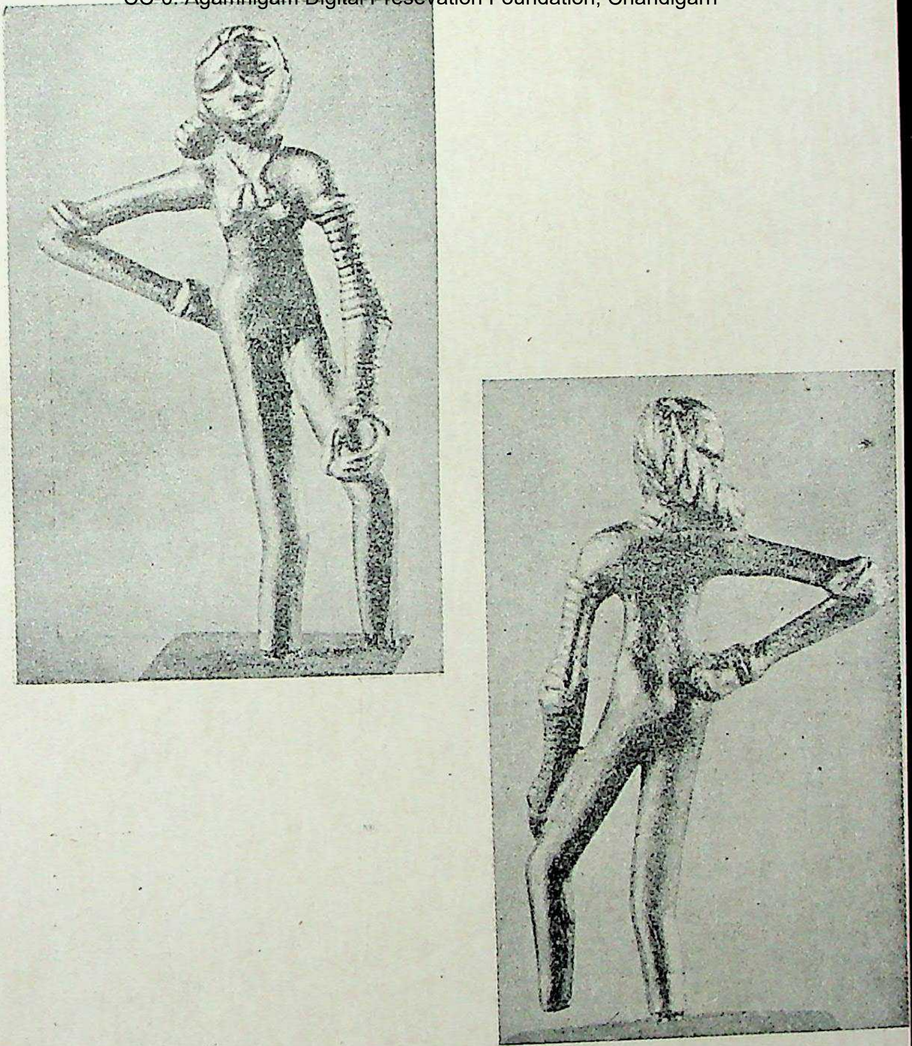

आस्ट्रेलियाई जाति, मरुस्थलीय अनुकूलन। एक नर्तकी की कांस्य प्रतिमा के दो दृश्य, जो सम्भाव्यतः सिन्धु की घाटी में स्थित हड़प्पा से प्राप्त हुई है और ईस्वी पूर्व की तीसरी सहस्राब्दी की है।

प्लेट 13

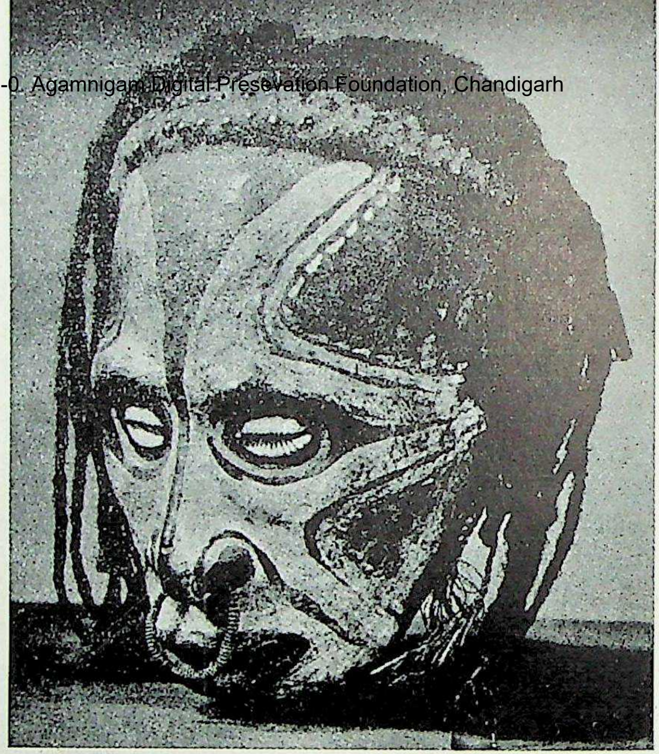

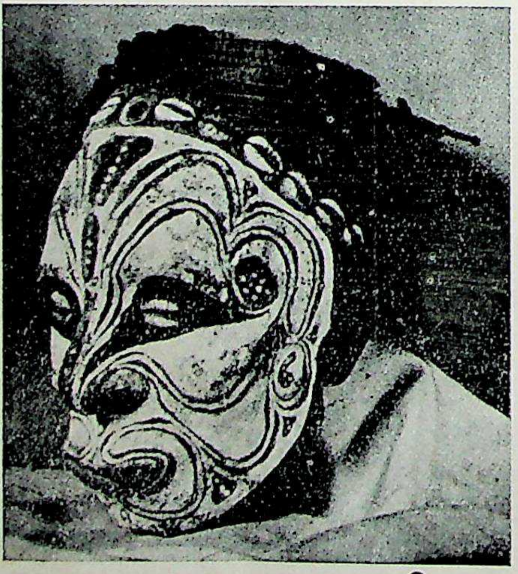

प्रशान्त महासागरीय नीग्रो जाति। न्यू गिनी वाला प्रभेद। दो मैलनेशियाई कपाल, जिन्हें पलस्तर और कौड़ियों से सजाया गया है।

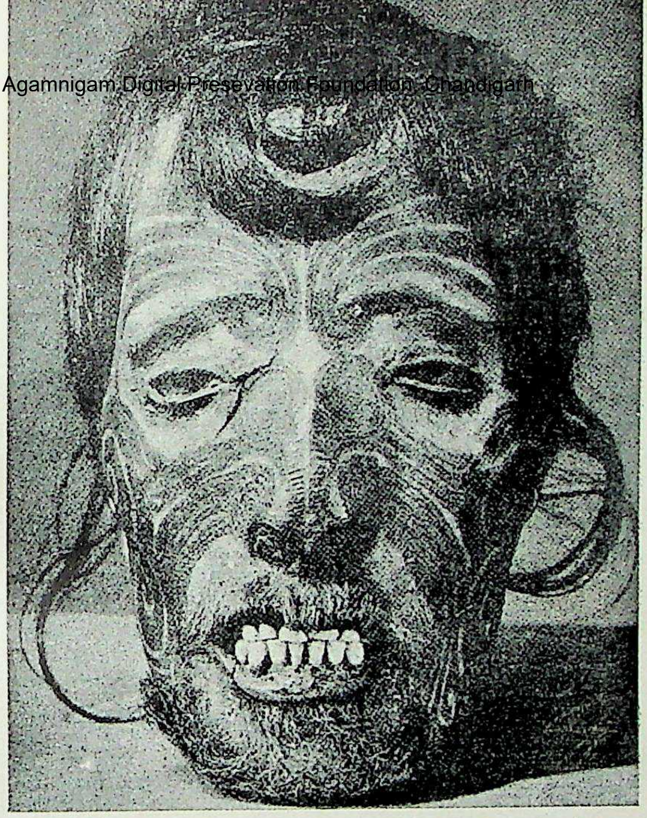

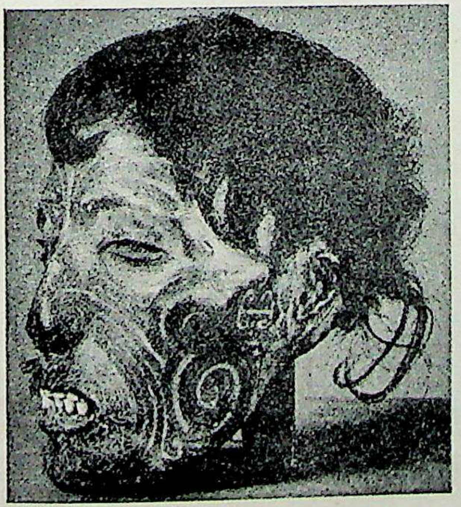

पोलिनेशियाई जाति। माओरी प्रभेद। एक माओरी चेहरे के दो दृश्य। इस पर इसके जीवन काल में इस प्रकार की खुदाई और गुदाई रही थी।

मंगोल जाति । अमेरिकी मूल वासी किस्म । नीचे : का एक मोचिका पात्र, जिसका काल ईसा के आस पास का है । दांई ओर : गच का बना हुआ एक मय जाति के व्यक्ति का सिर, जो पियेड्रास नेग्रास से प्राप्त हुआ है ।

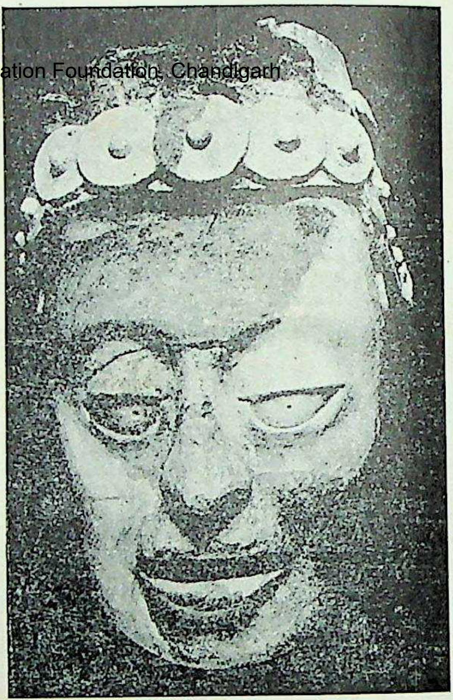

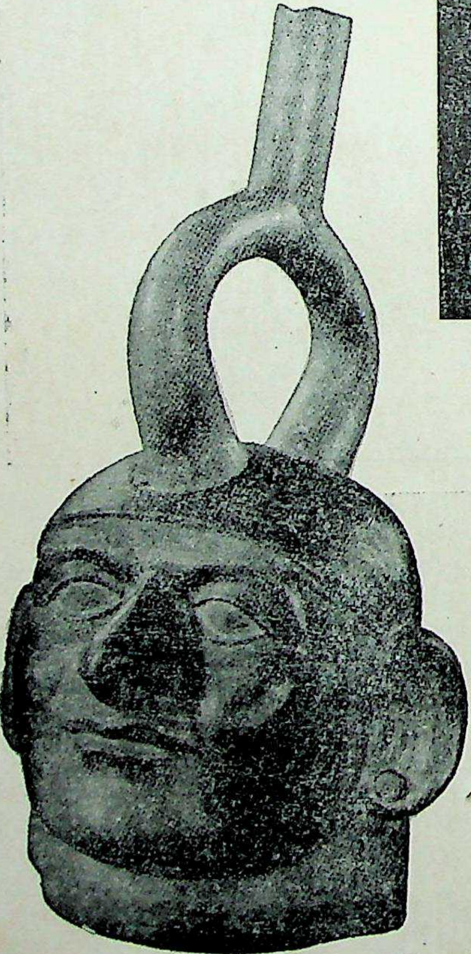

प्लेट 16

कुछ अन्य के, एक अन्य फ्रांसीसी नमूने ला फेरैसी की भाँति, उतनी ही बड़ी ठोडी थी, जितनी कि आजकल के अनेक जीवित लोगों की होती है।

उनकी खोपड़ियों के चपटेपन और उनके जबड़ों के आगे की ओर निकले होने के कारण कुछ मानव-वैज्ञानिक इन पश्चिमी नियंडरथलों को उत्तान मानुष की एक ऐसी जाति मानने लगे है, जिसने अपने किसी अज्ञात मूल प्रदेश से यूरोप पर आक्रमण किया और उन कम परिश्रमी सैपियन्स यूरोप-वासियों का स्थान ले लिया, जो वहाँ मध्य प्लीस्टोसीन के आरम्भिक काल से रहते आये थे। यह सिद्धान्त आजकल लोकप्रिय है, परन्तु तीन तथ्यों के कारण यह खंडित हो जाता है। हमें ऐसे किन्हीं उत्तान मानुषों का पता नहीं है, जो यूरोप की सीमाओं पर अब से 75 हज़ार वर्ष पहले के काल जितनी देर तक वहाँ रहे हों। नियंडरथल लोग पत्थर के जिन औज़ारों को बनाते थे, वे उन्हीं शैलियों में बनाये गए हैं, जिनमें कि उनके स्थानीय पूर्ववर्ती लोग बनाते थे, उनके कुछ पूर्ववर्ती लोगों में, जैसे कि इटली में मिली सैक्कोपैस्टोर खोपड़ियाँ और यूगोस्लाविया में क्रापीना अवशेष हैं, नियंडरथल लोगों की शरीर-रचना सम्बन्धी विशिष्टताओं का पूर्वाभास मिलता है। इसके साथ इतना और जोड़ा जा सकता है कि पश्चिमी नियंडरथल कुशल शिकारी थे; वे अपने कुछ मुर्दों को गाड़ते थे और उन्होंने एक अपंग, दन्तहीन वृद्ध पुरुष, ला शापेल औ साँ, को उसके बाद भी वर्षों तक भोजन दिया था, जबकि वह सारी बिरादरी के लिए माँस का अपना हिस्सा लाना बन्द कर चुका था। उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस) की कोई भी खोपड़ियाँ गाड़ी नहीं गई थीं और न उनमें वृद्ध और अपंग पुरुषों के प्रति सहृदयता का ही कोई प्रमाण मिलता है।

मेरी सम्मति में उपलब्ध प्रमाणों का बड़ा भाग इस बात की ओर संकेत करता है कि पश्चिमी नियंडरथल लोग अपने पूर्ववर्ती सैपियन्स मानुषों से विकसित हुए थे और इस बात की ओर कि उनकी शरीर-रचनात्मक विशेषताएँ अंशतः शीत के प्रति अनुकूलन के कारण और अंशतः इस तथ्य के कारण हैं कि वे हज़ारों वर्षों तक अन्य जातियों से पृथक् एक अलग समाज के रूप में रहते रहे थे।

पूर्वी नियंडरथल लोग इसी प्रकार के औज़ार बनाते थे और प्रतीत होता है कि इस जैसा ही जीवन बिताते थे। ईराक में शानिदार गुफाओं में से एक

कंकाल मिला है, जो एक ऐसे मनुष्य का है, जिसकी आयु 45 और 50 वर्ष के बीच रही होगी; और जब वह पैदा हुआ था, तभी उसकी दाईं बाँह सूखी हुई थी। किसी नियंडरथल शल्य चिकित्सक ने उस बाँह को कुहनी के ऊपर से काट दिया था। इस अपंग व्यक्ति को उसके साथियों ने तब तक भोजन दिया था, जब तक कि वह मर न गया। उसकी मृत्यु उसकी गुफा की छत पर से एक चट्टान गिरने के कारण हुई थी। व्यवहार मात्र के आधार पर शानदार लोग सैपियन्स मानुष कहलाने के पात्र हैं।

साँस्कृतिक समानता होने पर भी पूर्वी नियंडरथल पश्चिमी नियंडरथलों से इस दृष्टि से भिन्न थे कि वे अपेक्षाकृत अधिक ऊँचे और पतले थे। उनके मस्तिष्क के खोल ऊँचे और आकृति में अपेक्षाकृत अधिक आधुनिक थे। उनके चेहरों का माथा अपेक्षाकृत अधिक बड़ा था और उनकी ठोडी भी अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट थी। जिन भी किन्हीं प्रभावों के कारण पश्चिमी नियंडरथल में शरीर-रचना-सम्बन्धी वे विशेषताएँ आईं, जो कि उनमें थीं, उनका असर उनके पूर्वी बन्धुओं पर पड़ा प्रतीत नहीं होता।

पूर्वी नियंडरथलों में से कुछ लोग, विशेष रूप से वे, जो फिलस्तीन में रहते थे, अन्य लोगों की अपेक्षा कहीं अधिक आधुनिक दिखाई पड़ते थे और अब यह सम्भाव्य प्रतीत होता है कि आधुनिक मनुष्य, जैसा कि वह नियंडरथल युग के अन्त में यूरोप में आविर्भूत हुआ, उन्हीं निकट-पूर्वीय नियंडरथलों का, या उनसे मिलते-जुलते अन्य लोगों का वंशज था। अब हाल में हुई खोजों को देखते हुए यह भी प्रतीत होता है कि पश्चिमी नियंडरथल पूर्णतया विलुप्त नहीं हो गए, अपितु वे शिकारियों की नई आबादियों में, विशेष रूप से स्पेन और इटली में, घुल-मिल गए। यद्यपि नियंडरथलों का रहस्य अभी तक पूरी तरह उद्घाटित नहीं हुआ है, किन्तु इसके उद्घाटित होने की ओर प्रगति हो रही है।

आरम्भिक मानवीय इतिहास की रूपरेखा

प्लीओसीन के अन्त से लेकर वूर्म हिमाच्छादन की पहली किस्त के पिघलने तक की अवधि के, जो लगभग 10 लाख वर्ष की है, मनुष्य और उसके निकट सम्बन्धी उत्तान (सीधा खड़े होने वाले) प्राइमेटों के स्वल्प अवशेषों के अध्ययन

से हम जो चित्र बना पाते हैं, वह उन बहुत ही थोड़ी-सी प्राप्त वस्तुओं पर आधारित है, जिनके आधार पर की जाने वाली किसी सुनिश्चित व्याख्या पर पूरा भरोसा नहीं किया जा सकता। फिर भी जिस समय में यह लिख रहा हूँ, उस समय नई-नई गुफ़ाओं और नदी-तटों की खुदाई हो रही है, नई जानकारी प्राप्त हो रही है और मानवीय क्रम-विकास की सामान्य शृंखला (परम्परा) रूप धारण करती जा रही है। अब हम उसकी अपेक्षा कहीं अधिक विश्वास के साथ बात कह सकते हैं, जितना की अब से दस साल पहले कह सकते थे।

इस समय के जीवित कपि और मनुष्य दोनों ही मीओसीन (मध्य जीव) काल के एक प्रकार के कपि (एप) के वंशज हैं, जो सम्भवतः अफ्रीका में रहता था। कपियों के वे पूर्वज कुछ समय तक परीक्षण के तौर पर भूमि पर रहने के बाद फिर वापस पेड़ों पर लौट गये। हमारे पूर्वज नीचे भूमि पर ही रहे; वे अपने पिछले पैरों पर खड़े होने लगे, औज़ार बनाने लगे, चलने और बातें करने लगे और शिकारी बन गये।

हमारे पूर्वज सम्भाव्यतः सीधे खड़े होकर चलने वाली कई स्पीशिज़ों में से केवल एक, आस्ट्रैलोपिथैसाइन थे, जो लगभग 5 लाख वर्ष पहले या उससे थोड़ा बाद तब लुप्त हो गई, जबकि उनमें से एक स्पीशिज़ मानुष (होमो) अर्थात् मनुष्य के रूप में विकसित हो चुकी थी। वह सबसे पहला मनुष्य, जिसका हमें ज्ञान है, उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस) था, जो जावा, चीन, पूर्वी अफ्रीका, उत्तरी अफ्रीका और सम्भाव्यतः 'पुरानी दुनिया' के उष्णतर भागों में अन्य स्थानों पर भी रहता था। उत्तान मानुष अनेक भौगोलिक जातियों में विभक्त था, जिनमें से कम से कम पाँच मानक क्रम-विकास की प्रक्रियाओं द्वारा सैपियन्स मानुष में रूपान्तरित हो गईं। यह रूपान्तर कुछ जातियों में अन्य जातियों की अपेक्षा जल्दी हो गया।

इस अध्याय में हमने अपना ध्यान मानवीय क्रम-विकास के जैव पहलू पर केन्द्रित रखा है, परन्तु मनुष्य में जैव पक्ष संस्कृति से तब से ही अविभेद्य रहा है, जब से हमारे पूर्वजों ने औज़ार बनाना शुरू किया था। उसके बाद से नैसर्गिक वरण उन्हीं को सहारा देता रहा है, जो संस्कृति का उपयोग अपने अधिकतम लाभ के लिए कर सके हैं। अब हमें मानवीय विकास के साँस्कृतिक पहलू को देखना है।

2

चकमक, आग और प्रारम्भिक समाज के बारे में

हमने सौ से कुछ अधिक ऐसे व्यक्तियों की हड्डियों का अध्ययन किया है, जो मध्यम प्लीस्टोसीन तथा उपरि प्लीस्टोसीन कालों में जीवित थे और इनमें से आधी से अधिक एक ही उप-स्पीशिज़, नियंडरथल की हैं, और उससे हम उस तथा उससे पहले के समय में हुई मानवीय इतिहास की अत्यन्त मन्द प्रगति की कुछ तर्कसंगत रूप-रेखा तैयार कर पाये हैं। ये हड्डियाँ इतनी थोड़ी हैं और उनमें से अनेक की सही-सही तिथियाँ इतनी अनिश्चित हैं कि एक से अधिक व्याख्याएँ संभव हैं। यदि मेरे साथ या मुझे उनके साथ सहमत होने को विवश होना पड़े, तो वह भली बात न होगी। इस धरती पर अनेक चमत्कार भरे हैं और हो सकता है कि हम सबके सब ही ग़लती पर हों।

यदि मेरे पास काम करने के लिए इन हड्डियों की केवल ढली हुई प्रतिकृतियाँ, चित्र और विवरण ही होते, तो मुझे इतिहास के इस पुनःरचना को प्रस्तुत करते हुए उससे कहीं अधिक हिचक होती, जितनी कि अब हो रही है। यद्यपि आदिम मनुष्य की हड्डियाँ बहुत थोड़ी हैं, परन्तु उसके हस्तशिल्प की कृतियाँ प्रभूत हैं। उसके मूलभूत काटने के औज़ार, जो उपल (पत्थर), क्वार्ट्ज़ाइट, फासिल लकड़ी और चकमक के बने हुए हैं, लाखों की संख्या में हैं, क्योंकि वे ऐसी सामग्री से बने हैं जो उसकी हड्डियों की अपेक्षा कम नश्वर है और वे संख्या में उसके शरीरों की अपेक्षा कहीं अधिक हैं। उनमें से हर ऐसे व्यक्ति ने, जो उस प्राचीन काल में अपनी मध्य वयस तक जीवित रहा होगा, वैसे सैकड़ों या हज़ारों का प्रयोग किया होगा, क्योंकि वह सामग्री जिससे वे बने

थे, अनश्वर तो है; किन्तु वह भंगुर भी है। इन औज़ारों के कारण मुझे अपनी बात पर भरोसा होता है। वे वही कहानी कहते है, जो मैंने हड्डियों में से पढ़ी है। जैसे निपुणतापूर्वक गढ़ी गई कोई मूठ तलवार पर ठीक बैठ जाती है, वैसे ही यह कहानी मनुष्य की कहानी के अपेक्षाकृत कम विवादास्पद उस अवशिष्ट भाग के साथ ठीक मेल खा जाती है, जो पिछले प्लीस्टोसीन के काल से लेकर वर्तमान समय तक का है और जिसका वर्णन बाद के अध्यायों में किया जायेगा।

प्रारम्भिक कर्तन औज़ार एक तर्क संगत प्रस्तावना

तार्किक आधार पर हम यह मान सकते हैं कि हमारे पूर्वजों ने ज्योंही सीधे खड़े होने की स्थिति, पतली अंगुलियों, छोटे भेदक दाँतों और कम से कम अर्ध-आकार के मस्तिष्क का विशेष संयोग अर्जित कर लिया होगा, त्यों ही उन्होंने किसी न किसी प्रकार का कर्तन औज़ार बनाया होगा और इसका उपयोग किया होगा; इसका सीधा सादा कारण यह है कि प्रकृति ने मानव प्राणियों को औज़ारों के बिना जीवन-यापन के लिए सज्जित नहीं किया है। सिंह के विष दन्त (कीले) और पंजे होते हैं, हाथी के सूंड होती है और चलने वाले पशुओं के लम्बी थूथनी और विशेष प्रकार के दाँत होते हैं; औजार हमारे लिए इन चीज़ों के स्थानापन्न हैं।

बन्दर पेड़ों पर रहते हैं। उन्हें औज़ारों की कोई आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि वे फल तोड़ने और पक्षियों के घोंसले लूटने का काम अपने हाथों से कर सकते हैं। कपियों (एप) को भी औज़ारों की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वे पत्तियाँ, डंठल और फल खाते हैं और उन्हें अपने हाथों से तोड़ सकते हैं और अपने भेदक दांतों से छील सकते है। बैबूनों को भी औज़ारों की ज़रूरत नहीं हैं, क्योंकि उनके छोटे, टोटेदार हाथ होते हैं, जिनमें मज़बूत अंगुलियाँ और मोटे नाखून होते हैं; और उनकी थूथनियाँ लम्बी होती हैं, जिनमें पैने भेदक दाँत होते हैं। मरूस्थलों में, जहाँ वे रहते हैं, मिट्टी नरम होती है, जिसे खोदना आसान होता है। वे अपने प्रिय कन्द वैल्विचिया को कठिनाई के बिना खोद सकते हैं और गौफ़रों (भू-गिलहरियों) वोलों (शाद्धल-मूषकों) और साँपों के बिलों को उपाड़ सकते हैं। वे अपना अन्ध प्रानि-आहार पत्थरों को उलट कर पा सकते हैं, जिनके नीचे गिरगिट, सुंडियाँ, कृमि, कीट और बिच्छू धूप की

गर्मी से बचने के लिए छिपे रहते हैं।

मनुष्य ने सबसे पहले जिस औज़ार का उपयोग किया, वह सम्भाव्यत: एक नोकीली बनाई हुई छड़ी थी, जिसका उपयोग कन्द-मूलों तथा छोटे शिकारों को खोद निकालने के लिए किया जाता था। किसी पौधे को काट गिराने और उसे छील कर पैना करने के लिए ऐसे औज़ारों की आवश्यकता है, जिसमें किसी प्रकार की धार हो। यह औज़ार कोई टूटा हुआ उपल (पत्थर), फासिल लकड़ी का, जो स्वभावत: आयताकृति टुकड़ों में टूटती है, कोई टुकड़ा, या सबसे अच्छा टूटे हुए चकमक का कोई टुकड़ा हो सकता है। चकमक की कतरने भूमि पर पड़ी मिल सकती हैं, या फिर नदियों के किनारे मिट्टी में से खोद कर निकाली जा सकती हैं। आदिम मनुष्य नदियों के किनारे पानी पीने आने वाले पशुओं की घात में अवश्य ही जाते होंगे।

चकमक जब ज़ोर की चोट द्वारा टुकड़े-टुकड़े हो जाता है, तब उसमें बीयर की टूटी हुई बोतल की सी, जो बहुत ही बुरा अस्त्र है, धार होती है। चकमक इस्पात के आविष्कार से पहले प्रयुक्त होने वाली किसी भी धातु की अपेक्षा अधिक कठोर होता है। चकमक का बना हुआ तीर का फलक उसी जैसे धातु के बने फलक की अपेक्षा मांस में अधिक गहराई तक घुस जायेगा। यह बात लगभग पचास वर्ष पूर्व कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में किये गए परीक्षणों से सिद्ध हो गई थी। इन परीक्षणों में परख करने वाले लोगों ने बैल का माँस टाँग कर उस पर दोनों प्रकार के तीर एक ही धनुष से छोड़े थे।

चकमक सामान्यतया ग्रन्थियों (नौड्यूलों) के रूप में पाया जाता है। इन ग्रन्थियों में से कुछ तो स्वभावत: गर्मी के कारण फट जाती हैं और कुछ नदियों के कटे हुए कगारों पर से गिरने वाले पत्थरों की चोट से टूट जाती हैं। अधिकांश चकमक अवश्य ही चट्टानों को गिराकर तोड़े गये होंगे। परन्तु बिल्कुल शुरू-शुरू में हो सकता है कि कई स्थानों पर उपयोगी चकमक भूमि पर से उपयोग-योग्य दशा में ही उठा लिये गए हों। थोड़े-से ध्यान से देखने से यह पता चल गया होगा कि काटने वाली धार वाले टुकड़े किस प्रकार बने और उसके बाद अगला क़दम स्पष्ट ही था। एक चट्टान गिराओ, चकमक को तोड़ो, एक अच्छा धारदार टुकड़ा उठाओ, एक पौधे के पास जाओ, उसे काट कर गिरा लो, और उसके एक सिरे को पैना लो। इसके बाद चकमक को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

फेंक दो; या मन हो, तो अपने पास ही रखो। यह खुदाई करने की छड़ बन गई।

प्राचीनतम ज्ञात औज़ार अफ्रीका और एशिया के निवास स्थलों से प्राप्त हुए हैं। उनका समय निम्न प्लीस्टोसीन का पिछला भाग है। हमें यह पता है कि वे औज़ार हैं, क्योंकि वे तोड़ी हुई पशुओं की हड्डियों के साथ मिले हैं। बजरी की निमग्निकाओं (बेंक, खदान) में मिले तथाकथित औज़ारों को स्वाभाविक रूप से टूटे हुए पत्थरों से अलग पहचान पाना कठिन है। इसकी एकमात्र सम्भव परख यही है कि टूटने के निशानों का यह देखने के लिए सांख्यिकीय विश्लेषण किया जाय कि वे किसी एक नमूने पर हैं या यों ही पाये जाते हैं।

यह बात, कि मनुष्य अपने अत्यावश्यक और एकमात्र कर्तन औज़ारों के लिए बिना किसी विशेष आकृति में गढ़े गये चकमकों का प्रयोग करता रहा होगा, एक 'मत' (थ्यौरी) की अपेक्षा कुछ अधिक है। इस समय जीवित मनुष्य, पूर्वी-मध्य आस्ट्रेलिया की एक आदिम जाति के सदस्य, जिनका चार्ल्स ए० मौंटफोर्ड ने अध्ययन किया था और फोटो भी लिये थे, ठीक ऐसा ही आज भी करते है। मौंटफोर्ड के बढ़िया चलचित्र वाक ऐबाउट' और 'त्सुरूंगा' इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं। मानव जाति के ये जीते-जागते फासिल अनगढ़ चकमकों से खुदाई करने की कुदालें, भाले और छाल के ऐसे बर्तन बनाते हैं, जो पेड़ के तने में से केतली की आकृति के एक ही टुकड़े को काट कर और उसको खोद-खोद कर बनाये गए होते हैं। कोई तर्कसंगत कारण नहीं है कि इतनी सरल कोटि का लकड़ी की खुदाई का काम मनुष्य के भूमि पर रहना शुरू करने के लगभग बिलकुल प्रारम्भ के दिनों से ही क्यों न चला आ रहा हो।

नुकीली छड़ी से मनुष्य न केवल कन्द मूल तथा बिलों में रहने वाले पशुओं को खोद कर निकाल सकता है, अपितु वह कछुए का भेजा भी निकाल सकता है और उसके कवच (खोल) को खोलकर भी देख सकता है, और साँप, चूहे या अन्य छोटे और अपेक्षाकृत मन्द गति वाले पशुओं को मार सकता है। अधिकतम सरल बचे हुए समाजों में ठीक यही काम स्त्रियाँ छड़ियों से अब करती हैं। इसमें कोई उचित सन्देह नहीं है कि मन्दगामी शिकारों (इस प्रकार के प्राणियों को यही सामूहिक नाम दिया गया है) को बटोरना किसी समय मनुष्य की आहार-संचय की सामान्य दिनचर्या का अंग था, जिसमें कन्द

मूल खोदना और बेर-जातीय फल चुनना भी सम्मिलित था। मनुष्य के सांस्कृतिक जीवन के शुरू में सम्भाव्यतः इस प्रकार की दिनचर्या पुरुषों और स्त्रियों, दोनों के लिए एक-सी ही रही होगी। किन्तु सारे इतिहास में हम जिन भी व्यवसाय (धन्धे) परिवर्तनों को जानते हैं, उनमें से हर एक में स्त्रियों ने तब, जब कि पुरुषों ने किसी नये और विशेषित काम को शुरू किया, उन कामों को अपना लिया, जिन्हें कि पहले पुरुष किया करते थे। स्त्रियाँ उसके बहुत समय बाद तक मन्दगामी शिकारों को बटोरती रहीं, जबकि पुरुष शिकारी बन गए, और अपनी ऊर्जा और कौशल का प्रयोग उन बड़े और तीव्रगामी खुरों वाले पशुओं, भेड़ों, बकरियों, हिरनों, बैलों, घोड़ों और मृगों, उन रसीले घास चरने वाले पशुओं का पीछा करने लगे, जिनका माँस अब भी हमारे दैनिक भोजन का अंग है।

जब मनुष्य ने असली शिकार करना शुरू किया, तब तक वह शस्त्रों का उपयोग करना सीख चुका था। वही खुदाई करने की छड़ी यदि जरा और लम्बी हो और काफ़ी पैनी हो, तो भाले के तौर पर काम में आ सकती थी। जो व्यक्ति अपना सारा जीवन एक सीधा सादा, बिना जोड़ का भाला फेंकने में बिताता है, वह इतना प्रवीण हो जा सकता है कि सुनकर विश्वास ही न हो। तस्मानिया के आदिवासी इस प्रकार के अस्त्रों का प्रयोग करते थे और वे उन्हें चालीस गज़ दूर इस प्रकार फेंक सकते थे कि वे एक तख़्ते में बने ग्रन्थि-रन्ध्र (गाँठ के निकल जाने के फलस्वरूप बने छेद) में से पार निकल

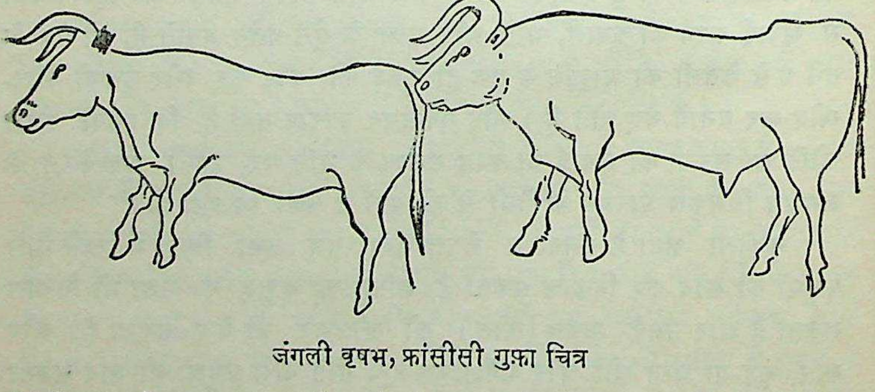

जंगली वृषभ, फ्रांसीसी गुफ़ा चित्र

जाएँ, हालाँकि वह छेद भाले की मोटाई से एक इंच से कुछ कम ही अधिक चौड़ा होता था। इस सीधे-सादे भाले के कारण 100 पौंड से भी अधिक भार वाले पशुओं को इतनी दूर से मार पाना सम्भव हो गया, जितना कि कोई चतुर मनुष्य प्रतिवात (वायु से उलटी दिशा में) बढ़ता हुआ उनके निकट तक पहुँच सकता था।

एक बार अपने शिकार को मार लेने के बाद शिकारी के सामने यह समस्या होती थी कि लाश को किस प्रकार संभाला जाय। हम यह मान लेते हैं कि हम ऐसे बहुत ही आरम्भिक शिकारियों के बारे में विचार कर रहे हैं, जिन्होंने तब तक पकाना नहीं सीखा था और जिनकी प्राणियों को मारने में रुचि मुख्यतया इस कारण थी कि इससे भोजन प्राप्त होता है और इस कारण नहीं थी कि उससे अन्य गौण वस्तुएँ—खालें, हाथी दाँत, हिरनों के श्रृंग, सींग या हड्डियाँ प्राप्त होती हैं। मानव युग (प्लीस्टोसीन) के अधिकांश प्राणी, जिनकी हड्डियों पर इस बात के प्रमाण दिखाई पड़ते हैं कि उनकी

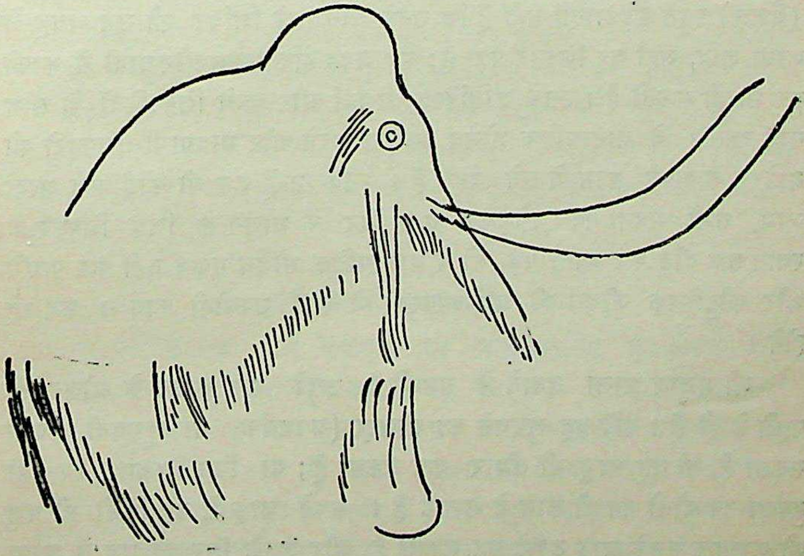

महाहस्ति (मैमथ), फ्रांसीसी गुफ़ा चित्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और मनुष्यों का ध्यान गया था, बड़े पशु थे। जंगली बैल, जंगली घोड़े, लाल हिरन (जो अमेरिकी ऐल्क के निकट सम्बन्धी थे) महाहस्ति (मैमथ), ये सब इतने भारी पशु थे कि मनुष्य उनको समूचा उठाकर नहीं ले जा सकता था। शिकारी और उसके साथी इस बात के लिए विवश थे कि वे या तो उसके माँस को उसी जगह खा डालें या फिर उन्हें बोझ को बाँटने के लिए उसे अलग-अलग टुकड़ों में काटना पड़ता था।

आजकल अफ्रीका में जब बौने (पिग्मी) लोग किसी हाथी को घायल कर देते हैं, तो वे उसका तब तक पीछा करते हैं, जब तक वह मर नहीं जाता और उसके बाद सारा गिरोह—पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे—उस हाथी की लाश के आसपास आ जुटता है, जिससे जब तक वह खाने योग्य है, तब तक उसे जितना खाया जा सके, खा लिया जाय। टियेरा डेल फ्युयेगो में आदिवासी लोग किसी बड़ी ह्वेल मछली के माँस को खाने के लिए दूर-दूर से आकर इकट्ठे हुआ करते थे। इस प्रकार का भोज सप्ताहों तक चलता रह सकता है।

हाथी और ह्वेल विशेष रूप से बड़े पशु हैं। घोड़ा, बैल, हिरन या कुरंग (गैजल) इतने बड़े प्राणी नहीं हैं कि उनके लिए सारे शिविर को उस जगह ले जाया जाय, जहाँ वह शिकार पड़ा है; यह जगह शरणस्थल और पानी से काफी दूर भी हो सकती है। इसके अतिरिक्त, स्त्रियाँ और बच्चे शिकारियों के साथ नहीं रहते। वे वानस्पतिक भोजन इकट्ठा करने और मन्दगामी शिकारों को बटोरने के अपने काम में लगे रहते हैं। यदि उन्हें जब भी कोई पशु मारा जाय, तभी अपना काम छोड़कर एक बार के भोजन के लिए शिकार के स्थान तक दौड़ कर जाना पड़े, तो वे वानस्पतिक भोजन एकत्र नहीं कर पाएँगे और कौटुम्बिक जीवन की अर्थ-व्यवस्था में कोई उपयोगी कार्य न कर रहे होंगे।

जो मनुष्य भाला बनाने में समर्थ है, उसके पास काटने के औज़ार तो पहले से ही हैं। यदि वह खुरचने का औज़ार (अपघर्षक, या खुरचनी) बना सकता है, तो वह चाकू भी तैयार कर सकता है; या फिर चकमक का वही टुकड़ा इन दोनों का ही काम दे सकता है। अपने चाकू से वह किसी भी पशु को काटकर उसके चार टुकड़े कर सकता है और उसके सिर को धड़ से अलग कर सकता है। यदि एक मरे हुए घोड़े जैसे भारी पशु तक के पाँच भाग कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लिये जाएँ, तो उसे घर ले जाया जा सकता है। बोझा कन्धे पर उठाने से पहले शिकारी लोग आँख की पुतली के पीछे की चर्बी काट कर खा सकते हैं, जिससे उन्हें अपनी यात्रा के लिए ऊर्जा प्राप्त हो। इसी प्रकार वे हृदय, यकृत् तथा उन अन्य नरम और सुपच आन्तरिक अंगों को काटकर खा सकते हैं, जिनमें विटामिन खूब होते हैं। ठीक ऐसा ही पाषाण युग के जीवित शिकारी आजकल भी करते हैं। एक बार स्त्रियों और बच्चों के पास शिविर में पहुँच जाने पर चाकू वाला मनुष्य माँस को नयाचार के अति प्राचीन सिद्धान्तों के अनुसार विभक्त कर सकता है, जिससे प्रत्येक व्यक्ति को उतना अंश प्राप्त हो जाय, जितना कि समूह की रक्षा में अधिकतम योग देने के लिए उसे मिलना ही चाहिए। मनुष्य जैसे प्राणी के लिए, जिसके कि दाँत कड़े कच्चे माँस और कंडराओं को काटने और फाड़ने के लिए अनुकूलित नहीं हैं, ठीक तरह खाने के लिए किसी न किसी प्रकार का चाकू आवश्यक ही है। सामाजिक भोजन में, जिसका सारभूत तत्त्व बाँटकर खाना है, भोजन का बँटवारा सुविधाजनक ढंग से करने के लिए, यदि माँस पहले से ही भली प्रकार न पका लिया गया हो तो, किसी न किसी प्रकार के काटने के औज़ार की आवश्यकता है। क्योंकि मनुष्य ने जब पकाना सीखा, उससे पहले से ही वह माँस खाता था, इसलिए ऐसी किसी मानवीय स्थिति का मनसेक्षण (मानस दर्शन) कर पाना कठिन है, जिसमें शिकार होता रहा हो और चाकू उपलब्ध न रहे हों। चाकू शब्द का विस्तृततम अर्थों में प्रयोग करते हुए कहा जा सकता है चाकुओं के बिना मनुष्य कभी रह ही नहीं सकते थे।

चकमक के गुण-धर्म

जब मनुष्य ने एक बार चकमक को जान बूझकर खुरचनियों और और चाकुओं के रूप में गढ़ना शुरू कर दिया, तब उन्हें चकमक के गुणधर्मों का भी ज्ञान हो गया। चकमक एक प्रकार का अशुद्ध प्राकृतिक काँच है, जो आग्नेय (औब्सिडियन) काँच की भाँति ऊष्मा की क्रिया से नहीं बना होता, अपितु खड़िया मिट्टी और चूने के पत्थर में बिखरे हुए सिलिका के सूक्ष्म कणों के परस्पर आकर्षण द्वारा बना होता है। एक-दूसरे की ओर खिचाव की प्रक्रिया में ये कण परस्पर समकेन्द्रीय परतों के रूप में इकट्ठे हो जाते हैं, जो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मोती की वृद्धिकाल की परतों के समान होती हैं और इस प्रकार चकमक का जो पिंड या ग्रन्थि बनती है, उसकी बाहरी सतह सफेद खड़िया जैसी पपड़ी से ढकी रहती है । यह बाहरी परत इतनी नरम होती है कि इसमें काटने योग्य धार नहीं बन सकती । व्यावसायिक औज़ार बनाने की शुरूआत के तौर पर इसे हटा ही देना पड़ता है । ये ग्रन्थियाँ (गाँठें) आकार में इमली के एक बड़े बीज से लेकर कद्दू जितनी तक बड़ी होती हैं ; इसलिए किसी भी एक प्रदेश में बनाये गए औज़ारों का अधिकतम आकार वहाँ उपलब्ध होने वाले चकमक के आकार पर निर्भर होता है । यह ठीक है कि बहुत-सी चकमक की ग्रन्थियाँ अनियमित आकृति की भी मिलती हैं, जिनमें से कुछ बेढंगे आलुओं से मिलती-जुलती होती हैं, परन्तु इनकी मूल आकृति गोलाकार होती है ।

चकमक की किसी ग्रन्थि को ऐसे टुकड़ों में तोड़ने के लिए, जिन्हें औज़ारों के रूप में परिष्कृत किया जा सके, औज़ार-निर्माता उस ग्रन्थि पर किसी प्रकार के हथौड़े, जैसे उपल या छड़ी, से ऐसे कोण पर चोट करता है, जिससे एक चपटा-सा शल्क उतर जाय । इस उतरने वाले शल्क की आकृति को नियंत्रित किया जा सकता है, क्योंकि चकमक की ग्रन्थि की वृद्धि-परतें इस ढंग की होती हैं कि उनमें वैसा ही तन्तु-क्रम (ग्रेन) बन जाता है, जैसा कि लकड़ी में होता है । लकड़ी की भाँति चकमक भी इस तन्तु-क्रम के साथ-साथ फटता है । संघट्टन के बिन्दु पर आघात की शक्ति इतनी काफी प्रबल होती है कि वह तन्तु-क्रम को भी काट देती है, परन्तु ज्यों-ज्यों फटाव की रेखा के साथ-साथ शक्ति कम होती जाती है, त्यों-त्यों वह रेखा तन्तु-क्रम की ओर मुड़ती जाती है, वह तन्तु-क्रम के साथ मिल जाती है और तब तक उसके साथ चलती जाती है, जब तक कि वह टूटकर अलग न हो जाय । दिशा के इस विचलन के कारण चकमक के शल्क के अवशेष (बचे हुए भाग) की आकृति विशिष्ट प्रकार की एक गुटिका जैसी दिखाई पड़ने लगती है, और जहाँ से वह शल्क उतरा होता है, उस स्थान पर का क्षतचिह्न कुछ तदनुरूप अवतल (नतोदर) हो जाता है; यह उस नमूने से मिलता-जुलता होता है, जैसा कि यदि आप किसी शीशे की भारी प्लेट पर बन्दूक की गोली की चोट करें, तो दिखाई पड़ता है । शल्क की वक्रता (गोलाई) और गुटिका का आकार और उसकी स्थिति (पोज़ीशन) ये ऐसे तत्त्व हैं, जिन्हें कि औज़ार-निर्माता समझता है । वह अपनी

मरज़ी की ग्रन्थि के चुनाव द्वारा और प्रत्येक चोट की शक्ति और दिशा द्वारा नियंत्रित कर सकता है।

जब ऊपर की पपड़ी काट दी जाती है और कई शल्क उतार लिये जाते हैं, तब ग्रन्थि का जो केन्द्रीय नाभिक बच रहता है, उसे क्रोड (कोरा) कहा जाता है। यह चकमक के कारीगर की मर्ज़ी है कि वह चाहे तो शल्क के औज़ार बनाये, चाहे क्रोड के, या चाहे तो दोनों के। वह चाहे इनमें से जिसका भी प्रयोग क्यों न करे, ऐसा कम ही होता है कि वह एक ही चोट में या चोटों की एक ही शृंखला में एक ऐसा टुकड़ा तोड़ पाये, जो ठीक उसके अभीष्ट आकार का हो। शुरू में शल्कों को उतारने के लिए जो चोटें की गई थीं, उनकी अपेक्षा हल्की चोटों से जहाँ-तहाँ थोड़ी-थोड़ी काट-छाँट करने से अपरिष्कृत कोरा चकमक परिष्कृत पूरा औज़ार बन जाता है।

शुरू-शुरू में उसकी धार बिलकुल निर्दोष हो सकती है, किन्तु थोड़े-से प्रयोग से ही उसमें दाँता पड़ जायेगा, क्योंकि चकमक भले ही अधिकाँश धातुओं की अपेक्षा अधिक कठोर होता है, किन्तु वह बहुत भंगुर भी होता है। माँस काटते समय किसी हड्डी पर जा टकराने से उसमें दाँता पड़ जायगा। धार की मरम्मत करने के लिए औज़ार-निर्माता धार के पास-पास से बहुत-से छोटे-छोटे शल्क उतार देगा। धार को पैना करने की इस प्रक्रिया को अनुशोधन (रिटचिंग) कहा जाता है। पुरातत्त्ववेत्ताओं को चकमक के औज़ार बनाने की प्रक्रिया में बीच में ही छोड़ दिये गए, उपयोग में न लाये गए, हज़ारों शल्कों में जो भी पूरे बने हुए औज़ार मिले हैं, उनमें से लगभग सभी का अनुशोधन किया गया है और हो सकता है कि उनमें से बहुत-से टूट भी गए हों। सम्भाव्यतः एक औज़ार औसत रूप से केवल कुछ ही दिन काम दे पाता था। हमें यह सन्देह इसलिए होता है, क्योंकि जो जीवित शिकारी, अब भी चकमक के औज़ारों का प्रयोग करते हैं, वे पूरे औज़ार न बने हुए कोरे चकमक या पूरी तरह तैयार फालतू औज़ार अपने साथ लेकर चलते हैं।

उत्तान मानुष के औज़ार

पाँच लाख से भी अधिक वर्षों में मानव प्राणियों ने औज़ार बनाने के प्रयत्न में चकमक की करोड़ों ग्रन्थियाँ तोड़ी हैं और क्योंकि चकमक लगभग

अनश्वर-सा होता है, इसलिए वे टुकड़े अब भी बचे हुए हैं । उनके ज्यों-का-त्यों बचे रहने के कारण, और इस कारण कि उनकी आकृति हमें उनके बनाने वालों और उनका उपयोग करने वालों के बारे में बहुत कुछ बता देती है, पुरातत्त्ववेत्ताओं ने चकमकों का बहुत गहन अध्ययन किया हैं । पृथ्वी तल के कुछ भागों में भूक्षरण (भूमि के कटाव) के कारण वे अनावृत हो गए हैं, जैसा कि अरब प्रायद्वीप के तथाकथित 'चरती' मैदान में, जहाँ यह लगभग असम्भव ही है कि व्यक्ति भूमि पर पाँव रखे और वह चकमक के किसी टूटे हुए टुकड़े पर न पड़े; इन टुकड़ों में से अनेक वस्तुतः औज़ार हैं । अन्य स्थानों पर, जहाँ मिट्टी कटी नहीं है, जैसे कि लन्दन और समुद्र के बीच टेम्स नदी के कगारों के आस-पास व्यावसायिक रेतीले किनारों पर वे इस प्रकार फैले पड़े हैं, जैसे कि पुडिंग में आलूबुखारे ।

पुरातत्त्ववेत्ता किसी भी एक स्थान या प्रदेश से कुछ चकमकों को इकट्ठा कर चुकने के बाद उन्हें अलग-अलग छाँटता है । पहले वह शल्कों को क्रोडों से अलग कर लेता है और उसके बाद औज़ारों को उन टुकड़ों से अलग कर लेता है, जो औज़ारों के निर्माण की प्रक्रिया में ही त्याग दिये गए थे । यदि वे सब चकमक किसी एक अविराम कालावधि की एक ही साँस्कृतिक परम्परा के प्रतिनिधि हों, तो उस पुरातत्त्ववेत्ता को उनमें कुछ नियमितताएँ दिखाई पड़ेंगी । उदाहरण के लिए, मनुष्यों के एक समूह ने अपने अधिकाँश औज़ार शल्कों से बनाये होंगे और इसलिए वे अधिकाँश क्रोडें, जिन पर से अन्तिम शल्क उतारा गया होगा, छोटी और निकम्मी रह गई होंगी । कुछ अन्य लोगों ने अधिक ध्यान क्रोडों की ओर दिया होगा । यह आवश्यक नहीं कि इनमें से किसी भी मामले में क्रोडों या शल्कों का प्रयोग बिलकुल अनन्य रहा हो । यह विभेद केवल मात्रात्मक है ।

शल्कों की आकृति गढ़ने और उनका अनुशोधन (रिटचिंग) करने की व्यक्तिगत आदतों से भी बड़े रूढ़िवादी नमूने प्रकट होते हैं, यह बात हमने अपनी ईरान की यात्रा में सन् 1949 में पाई थी, जबकि हमने उस देश के पश्चिमी भाग में बिसीतून नामक गाँव में एक छोटी-सी गुफा की खुदाई की थी । कुछ ही घन गज़ मिट्टी में से हमें 1100 से अधिक पूरे बने हुए औज़ार प्राप्त हुए । हमारी खाई गुफ़ा के छोटे आकार के कारण संकरी तो अवश्य

थी, परन्तु वह गहरी थी। 12 फुट में ही हमें मिट्टी के ऐसे परिवर्तन मिले, जो जलवायु में हुए परिवर्तनों के और इस कारण इस बात के सूचक थे कि उस गुफ़ा में लोग यदि हज़ारों नहीं, तो सैकड़ों वर्षों की लम्बी अवधि तक रहते रहे हैं। फिर भी उस समूची कालावधि में औज़ारों के प्रकार सारे समय बहुत कुछ एक-जैसे ही बने रहे। अपेक्षाकृत अधिक सामान्य औज़ारों में दो धार वाले और एक धार वाले चाकू थे।

इस गुफ़ा को खोदते हुए हमने यों ही अपने मन से छः स्तर बना लिये और प्रत्येक स्तर में प्राप्त हुए चकमकों को हमने अलग रखा। उसके बाद जब हमने चाकुओं की साँख्यिक ढंग से गणना की, तो हमने देखा कि प्रत्येक स्तर में प्रत्येक एक धार वाले चाकू के बदले 1·4 दो धार वाले चाकू पाये गए थे। मैं नहीं जानता कि इस संख्या का कारण क्या है, परन्तु यह मुझे निश्चय है कि इस एकरूपता का कुछ अर्थ अवश्य है। इन लोगों की कार्य की आवश्यकताएँ सुनिर्दिष्ट थीं और उनका जीवित बचना इस बात पर निर्भर था कि उनके पास ठीक समय पर ठीक औज़ार तैयार रहे, ठीक उसी प्रकार जैसे कि एक सैनिक का जीवित बचना उस पर आक्रमण होने की दशा में उसके शस्त्रास्त्रों की किस्म और दशा पर निर्भर रहता है।

बिसीतून के शिकारी चकमक से भाले के फलक भी बनाते थे। इस कार्य के लिए वे कई प्रकार के शल्कों का उपयोग करते थे और उन सबको ठीक एक ही आकृति में काटते थे। चाहे उन्होंने किसी भी प्रकार के शल्क का उपयोग क्यों न किया हो और चाहे उन्होंने उसे किसी भी ढंग से क्यों न काटा हो, किन्तु जैसा कि मैंने नापकर देखा, उनका कुन्दे (बट) वाला सिरा सदा ठीक एक जैसा ही होता था। घटबढ़ की थोड़ी-सी अभिसीमा के अन्दर ही सिर्फ सबसे निचले स्तर को छोड़कर बाकी सब स्तरों में सब प्रकार के कुन्दे वाले सिरों की मोटाई 5/16 इंच थी। चकमक की नोक वाले भालों से शिकार शुरू करने के कुछ ही समय बाद इन लोगों ने यह देखा होगा कि किस प्रकार के फलक अन्य फलकों की अपेक्षा अधिक सरलता से टूट जाते हैं और यह कि कुछ प्रकार के फलक इतने मोटे हैं कि वे शिकार के माँस में घुस नहीं पाते। कुछ भाले ऐसे भी रहे होंगे, जिनके फलक मूठों से आसानी से अलग हो जाते होंगे। यह अनुभव, परीक्षण और भूल की वह मानक प्रक्रिया थी, जो बहुत

समय तक आविष्कारों पर लागू होती रही है और अब भी आविष्कारक लोग अपने परीक्षणात्मक नमूनों में से दोषों को हटाने के लिए इस प्रक्रिया का उपयोग करते हैं।

इस उदाहरण को प्रस्तुत करने में मैं मनुष्य के औज़ार निर्माण के इतिहास के उस ज्ञात आरम्भ से कई लाख वर्ष आगे कूद आया हूँ, जो आजकल अफ्रीका में लगभग 7 लाख वर्ष पहले शुरू हुआ माना जाता है। अब हम अंशतः इतिहास के कालक्रम से और अंशतः उन कपि-मानवों, अर्ध मानवों और मनुष्यों के विभिन्न प्रकारों के, जिनके द्वारा औज़ार बनाए जाने का पता चल चुका है, या यह माना जाता है कि उन्होंने औज़ार बनाये थे, क्रम-विकास के अनुक्रम से इसकी रूपरेखा बनाएँगे।

सबसे पुराना आस्ट्रैलोपिथैसाइन, जो शाद झील (लेक शाद) के पास मिला था, औज़ारों के बिना पाया गया था। इसी प्रकार सबसे पुराने दक्षिण अफ्रीकी कपि-मानव भी औज़ारों के बिना पाये गए थे, परन्तु उस प्रदेश की उन्हीं गुफाओं में, जिनमें कि उस प्रदेश के सबसे हाल के कपि-मानव पाये गए हैं, थोड़े-से अपरिष्कृत औज़ार कुछ संदिग्ध साहचर्य में पाये गए थे। ओल्डुवाई बालक और ज़िंजानथ्रोपस के साथ भी अपरिष्कृत औज़ार पाये गए थे।

जावा के अर्ध मस्तिष्क वाले मनुष्य एक बाढ़ के मलवे में पाए गए थे। उनके साथ प्रत्यक्ष साहचर्य में कोई औज़ार नहीं पाये गए, परन्तु उसी भूगर्भीय काल के अनेक औज़ार उसी द्वीप में खोदकर निकाले गए हैं। बर्मा में और भारत में एक स्थान पर औज़ार पाये गए हैं। इनमें से अधिकाँश कर्तन औज़ार हैं; ये अनगढ़ क्रोडें हैं, जिनकी केवल एक धार अधकचरे अनुशोधन द्वारा पैना ली गई है, और कुछ थोड़े-से अपरिष्कृत शल्क भी हैं। बर्मा में ये औज़ार फासिल लकड़ी के बने हुए हैं। पुरातत्ववेत्ता सामान्यतया यह मानते हैं कि पिथैकैन्थ्रोपस (वानर मानव) इन औज़ारों को बनाते थे और इनका उपयोग करते थे।

पेकिंग के निकट स्थित उस गुफा में, जिसमें से सिनान्थ्रोपस (चीन-मानव) की हड्डियाँ मिली थीं, उसके घर बार का मलबा भी सुरक्षित पड़ा हुआ मिला है। उसके साथ उन हज़ारों पशुओं की, जिनमें हरिण भी सम्मिलित हैं, तोड़ी हुई हड्डियाँ मिली हैं, जिनको उसने खाया था। शिकार सदा भली प्रकार

नहीं मिलता था, यह बात इस तथ्य से पता चलती है कि उसने अपनी ही जाति के लोगों को भी खाया था। वहाँ सिनान्थ्रोपस की जितनी भी लम्बी हड्डियाँ मिली हैं, वे सब उस निक्षेप में पाये गए अन्य पशुओं की हड्डियों की भाँति तोड़ी हुई हैं। जो भी कोई लाशों को भोजन के लिए तैयार करता रहा था, वह पहले सिर को धड़ से अलग कर देता था और उसके बाद हरेक खोपड़ी के महारन्ध्र (फोरामैन मैगनम) में नीचे की ओर से एक छड़ी घुसेड़ता था। मस्तिष्क को खोपड़ी में से निकालने के लिए खोपड़ी के आधार की ओर की अपेक्षाकृत पतली हड्डियों को फाड़ना खोपड़ी की मेहराब को तोड़ने की अपेक्षा कहीं आसान था।

सिनान्थ्रोपस (चीन-मानव) के औज़ार स्फटिक (क्वार्ट्स), क्वार्ट्ज़ाइट और अन्य कई सामग्रियों से बने थे। उनमें से कुछ अपरिष्कृत गंडासे हैं, कुछ अन्य बड़े और भद्दे ढंग से काटे हुए शल्क हैं, जो चाकुओं के रूप में काम आते रहे होंगे। जावा और बर्मा के औज़ारों की भाँति उनमें वैसी बढ़िया कारीगरी की विशेषित परम्परा का अभाव है, जिसकी तुलना पहले उल्लिखित ईरान स्थित बिसीतून के चाकुओं और फलकों में पाई जाने वाली कारीगरी से की जा सके। जब तक इस वक्तव्य का खंडन करने के लिए कोई और प्रमाण न मिले, तब तक हमें यह निष्कर्ष निकालने का अधिकार है कि अर्ध मस्तिष्क वाले मनुष्य इस प्रकार के उपयोग योग्य औज़ार बना सकते थे, जो लकड़ियों को छीलने और पशुओं की लाशों को काटने के लिए काफी अच्छे थे, परन्तु उनकी चकमक की कारीगरी में पूर्ण मस्तिष्क वाले मनुष्यों की कुशलता की सुरूचिपूर्ण छाप नहीं थी।

उपल औज़ारों से कुठार तक

अब तक ज्ञात औज़ारों में सबसे पुराने औज़ार वे हैं, जो ओल्डुवाई कन्दरा में आस्ट्रैलोपिथैसाइन स्तरों से, अल्जीरिया से और फ़िलस्तीन से प्राप्त हुए हैं। ये औज़ार अधिकाँशतः पानी द्वारा गोल हो गए उपल हैं, जिन्हें एक ही चोट द्वारा कर्ण बनाते हुए या ऊर्ध्वाधर दिशा में फाड़ दिया गया है और उसके बाद उनमें से कुछ का एक सिरे के साथ-साथ अनुशोधन कर दिया गया है अर्थात् उनकी एक धार को पैना दिया गया है। इस प्रकार के औज़ार वस्तुतः

ओल्डुवाई बालक के साथ, ज़िंजानथ्रोपस के साथ और फिलस्तीन में तिबेरियास झील वाले स्थान पर मिले खोपड़ी के टुकड़ों के साथ पाये गए थे। यद्यपि इन स्थानों का काल-निर्धारण अभी तक पक्का नहीं हो सका है, फिर भी वे सम्भाव्यत: 7 लाख वर्ष से अधिक पुराने नहीं हैं। दक्षिण-पूर्वी और पूर्वी एशिया में अब तक खोजे जा चुके पुराने से पुराने औज़ार इससे बाद के हैं, परन्तु हो सकता है कि उनमें से कुछ 5 लाख वर्ष से अधिक पुराने हों।

अफ्रीका और फिलस्तीन में ये उपल औज़ार क्वार्टज़ाइट की इस प्रकार की गेंदों के साथ पाये गए हैं कि उन पर से शल्क (परतें) इस प्रकार उतारे गए हैं कि वे देखने में बेस-बाल की तरह लगभग गोल हैं, जबकि कुछ अन्य गँडासों जैसे अधिक लगते हैं। हो सकता है कि ये गोल पत्थर पशुओं पर फैंके जाते रहे हों।[1] ये पत्थर की गेंद पूर्वी अफ्रीका में पुरातत्वीय निक्षेपों में सबसे पुरानी उपल-तहों की अपेक्षा कुछ थोड़ा-सा बाद की हैं। ज्यों-ज्यों औज़ार-निर्माता उपलों को काट-छाँट कर औज़ार बनाते रहे, त्यों-त्यों वे लम्बाई की ओर फटे हुए उपलों को अन्य ढंग से फटे हुए उपलों की अपेक्षा अधिक पसन्द करने लगे और अनुदैर्घ्य (लम्बोतरे) औज़ारों के काम के सिरों को छीलकर चोंचों के रूप में बनाने लगे। वे औज़ार, जो छीलकर बनाये गए होते हैं और जिनमें एक ही क्षैतिज धार होती है, जो एक ही पार्श्व से शल्क उतार कर बनाई गई होती है, गंडासे (चौपर) कहलाते हैं। वे अन्य औज़ार, जो दोनों पार्श्वों में बारी-बारी से चोट करके शल्क उतार कर बनाये जाते हैं, 'कर्तन-औज़ार (चौपिंग टूल) कहलाते हैं। गंडासे और कर्तन-औजार दक्षिण-पूर्वी और दक्षिणी एशिया के सबसे पुराने स्थानों की अपनी विशेष वस्तुएँ हैं।

---

[1] इन पत्थर की गेंदों के प्रयोग के सम्बन्ध में अनेक व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं। क्योंकि पहले यह सोचा गया था कि ये गेंदें सदा तीन के समूहों में ही पाई जाती हैं, इसलिए यह माना जाता था कि वे ढेलबाँसों (बोला) द्वारा (जो शतुरमुर्गों का शिकार करने के लिए अर्जेन्टाइना के आदिवासियों द्वारा और गौचो—यूरो-अमेरिकी—लोगों द्वारा पशुओं को पकड़ने के लिए प्रयुक्त किया जाने वाला अस्त्र है) फेंके जाने के काम आते थे। ये गेंदें सदा तीन के समूह में नहीं मिलतीं और सब गोल भी नहीं होतीं।

मध्य प्लीस्टोसीन के आरम्भ में अफ्रीका, यूरोप, निकट पूर्व और भारत के—किन्तु सुदूर पूर्व के नहीं—औज़ार-निर्माता कर्तन-औज़ारों से आगे बढ़कर उनसे ही निकले हुए और औज़ार का निर्माण करने लगे, जिसे कुठार (हाथ-कुल्हाड़ी) कहा जाता था, जो क्वार्टज़ाइट या चकमक से बनता था। यह कुठार क्रोड निर्मित औज़ार हैं, जिसकी आकृति बहुत कुछ बादाम से इस

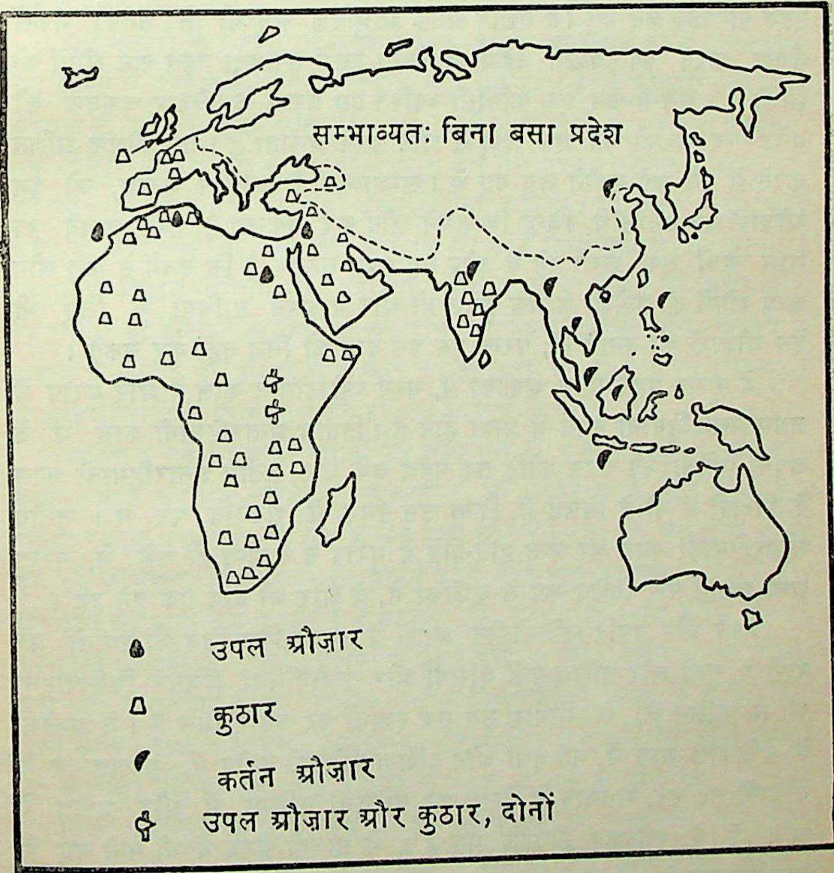
सम्भाव्यतः बिना बसा प्रदेश
उपल औज़ार
कुठार
कर्तन औज़ार
उपल औज़ार और कुठार, दोनों

प्रारम्भिक कर्तन औज़ारों के मिले हुए प्रधान अवशेष

दृष्टि से मिलती होती है कि इसके दो सिरे होते हैं, एक तो नोक और दूसरा गोल किया हुआ कुन्दा, और इस दृष्टि से भी, कि यह दोनों पार्श्वों की ओर से द्विपृष्ठीय और द्विपार्श्वीय दृष्टि से सममित (सीमिट्रीकल) होता है। पहले-पहल बने ये कुठार अपरिष्कृत होते थे, किन्तु ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों इस दुहरी सममितता को लाने के लिए क्रोड पर से शल्क बहुत ही अधिक कौशल और बहुत ही सफाई के साथ उतरे जाते थे। अन्त में ये उपकरण इतने परिष्कृत बन गए कि यद्यपि अनेक आधुनिक मनुष्यों ने उनकी नकलें तैयार करने का प्रयत्न किया है, किन्तु इसमें सफलता बहुत कम लोगों को मिली है। कम-से-कम एक फ्राँसीसी व्यक्ति इस प्रकार के औज़ार चकमक की क्रोड पर लकड़ी की एक छड़ी से चोट करके बनाता है। यह कौशल अर्जित करने में उसे कई महीने लग गए थे। सम्भाव्यतः वे प्राचीन मनुष्य, जो इन औज़ारों को बनाते थे, जिन्हें कि हमने खोद कर निकाला है, उन्हें बनाने का काम वर्षों तक करते रहे थे और यह बहुत सम्भव है कि उनमें से कुछ लोग अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक कुशल हों और वे अपने साथियों के लिए भी इन औज़ारों को बनाते हों; परन्तु हम इस बात को सिद्ध नहीं कर सकते।

ये कुठार पहले पहल अफ्रीका में, मध्य प्लीस्टोसीन काल में और यूरोप में प्रथम अन्तरहिमानी काल में प्राप्त होते हैं। द्वितीय अन्तरहिमानी काल में वे अपनी पूर्णता की चरम कोटि तक पहुँच चुके थे। तृतीय अन्तरहिमानी काल के निक्षेपों में भी वे मिलते हैं, किन्तु उस समय वे अवनति पर थे। तृतीय अन्तरहिमानी काल का अन्त होते-होते वे यूरोप से समाप्त हो चुके थे, परन्तु अन्य स्थानों पर, विशेष रूप से अफ्रीका में, वे और भी बाद तक बने रहे।

मध्य और उपरि प्लीस्टोसीन कालों में मनुष्य जिन-जिन भी स्थानों पर रहते थे, पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी एशिया और इण्डोनेशिया (जिसमें फिलिपाइन्स भी सम्मिलित है) के सिवाय उन सब स्थानों पर कुठार मिले हैं। वे अफ्रीका के अधिकाँश भाग में, पश्चिमी और दक्षिण-पश्चिमी यूरोप में, कृष्णसागर के दक्षिणी तट पर, लेबनान से ईरान तक पश्चिमी एशिया में और भारत में भूमि में से खोदकर निकाले गए हैं। वे साउदी अरब में भी पाये गए हैं, हालांकि उस देश में अभी तक व्यवसायी पुरातत्ववेत्ताओं ने खुदाई नहीं की है। अफगानिस्तान में कोई कुठार नहीं पाया गया। भारत और पश्चिमी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रदेश के मध्य सम्बन्ध सम्भाव्यतः बलोचिस्तान के पर्वतों के दक्षिण की ओर एक तंग समुद्र-तटवर्ती पट्टी के द्वारा रहा होगा, जो अब एक पूर्णतया वनस्पति-हीन उजाड़ प्रदेश है। हो सकता है कि यहाँ ऐसे कुठार नदियों की तली में दबे हुए हों। कुठारों के साथ उतान मानुष और सैपियन्स मानुष, दोनों की खोपड़ियाँ पाई गई हैं। इन कुठारों की कारीगरी अलग-अलग कोटि की है।

इन कुठारों के विषय में सबसे अधिक ध्यान आकर्षित करने वाला तथ्य यह है कि वे जहाँ कहीं भी पाये जाते हैं, वहाँ सब जगह उनमें आकृति (बनावट) का एक ही अनुक्रम पाया जाता है। उन ढाई लाख वर्षों में, जबकि मनुष्य ने इन औज़ारों को बनाया था, शैली में बहुत कम परिवर्तन होता था। परन्तु जो-जो भी परिवर्तन हुए, वे सभी जगह दिखाई पड़ते हैं। निम्नतर पुरापाषाण काल के, जैसा कि उस काल की संस्कृति को नाम दिया गया है, पुरातत्व का विद्वान से विद्वान विशेषज्ञ भी किसी एक खास काल के इंग्लैंड के कुठार और फिलस्तीन या दक्षिणी अफ्रीका के कुठार में फर्क केवल सामग्री और ऋतुओं के प्रभाव के कारण हुए अन्तर के आधार पर ही बता सकता है। इस एकरूपता से कुछ सांस्कृतिक व्याख्याओं को उद्दीपन मिलता है।

आजकल हमें इन तीनों स्थानों पर लोग एक ही जैसी सामग्री, आकृति और आकार वाले चूड़ीदार रेंच और टायर-पम्पों का प्रयोग करते मिल सकते हैं। इसका कारण स्पष्ट है—वे सब के सब पम्प और रेंच एक ही कारखाने में या एक ही अभिकल्प (डिज़ाइन) का प्रयोग करने वाले कुछ कारखानों में बने हैं। परिवहन की आधुनिक पद्धतियों के कारण यह सम्भव हो पाता है कि एक ही कारखाने में बनी चीज़ें सारी दुनिया में पहुँच जाएँ। परन्तु इस बात की सम्भावना नहीं के बराबर है कि द्वितीय अन्तर हिमाच्छादन काल में कोई व्यक्ति अपने जीवन काल में इंग्लैंड, फ़िलस्तीन और दक्षिण अफ्रीका, इन तीनों स्थानों पर जा सका हो, या इन तीनों स्थानों के मध्य संचार या परिवहन की कोई सुसंगठित व्यवस्था रही हो। इस कोटि की एकरूपता सम्भवतः अधिकतम कल्पना की जा सकने योग्य परिरक्षणशील (रूढ़िवादी) सांस्कृतिक परम्परा द्वारा ही उत्पन्न की जा सकी होगी। इसका अर्थ यह है कि अब से पाँच लाख वर्ष पहले जो मानव प्राणी रहते थे, वे उस कौशल को, जो उन्होंने अपने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पिताओं से सीखा था, सूक्ष्म से सूक्ष्म बारीकियों समेत अपने बच्चों को सिखाने में समर्थ थे, जैसा कि इस समय जीवित आस्ट्रेलियावासी और बुशमैन अब भी करते हैं। इस प्रकार के शिक्षण के लिए वाणी और एक दृढ़ अनुशासन, दोनों की ही आवश्यकता है और विस्तृत प्रदेशों में कुठार की शैलियों की एकरूपता इस बात की द्योतक है कि पड़ोसी दलों के सदस्य किन्हीं नियमित समयों पर एक साथ मिलकर ऐसे कार्यों को करने के लिए एकत्रित होंगे, जिनमें इन वस्तुओं के उपयोग की आवश्यकता पड़ती हो। संक्षेप में कहा जाय तो, जिस समय संसार के कुठार बनाने वालों ने एकरूप कुठार बनाने शुरू कर दिए थे, उस समय मानव समाज वास्तविक रूप धारण कर चुका था।

इन वस्तुओं का क्या उपयोग होता था, यह शायद हमें कभी पता न चले। उनकी लम्बाई दो इंच से लेकर दो फुट तक अलग-अलग पाई जाती है। यह किसी मानक औज़ार के सम्बन्ध में नहीं कही जा सकती। कोई अध्यवसायी पुरातत्ववेता संसार के संग्रहालयों में रखे हुए कुठारों का यह देखने के लिए अध्ययन कर सकता है कि उनमें से कितने उपयोग द्वारा कमज़ोर हो गए हैं, कितने मिट्टी के साथ सम्पर्क में आने के कारण कुँठित हो गए हैं और कितनों पर तेल युक्त हाथों को बार-बार रगड़ कर उसको चमकाया गया है। इस अध्ययन से यह पता चल सकेगा कि उनमें से कुछ का प्रयोग औजारों के रूप में बिलकुल ही नहीं हुआ था। यह सम्भव है कि उनमें से कम से कम वे, जो सबसे अधिक सुन्दर हैं, पवित्र वस्तु माने जाते थे। वे मनुष्य के साथ मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्धों के प्रतीक थे और मनुष्य के उस भूदृश्य के साथ, जिसमें कि वह निवास करता था, उसके जल और वृक्षों तथा चट्टानों और पशुओं समेत, सम्बन्ध के प्रतीक थे। इस प्रकार के प्रतीक स्वस्थ मानवीय सम्बन्धों को और मन की शान्ति को बनाए रखने के लिए ठीक उसी प्रकार आवश्यक हैं, जिस प्रकार ईसाइयों के लिए सलीब (क्रौस) और प्यूऐबलो आदिमवासियों के लिए 'कचीना' गुड़ियाएँ होती है।[1] इस प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग एक समुदाय के सदस्यों

---

[1] इसे लिख चुकने के बाद मैंने देखा कि सी० वान रियैट लोव ने सन् 1935 में लिखी हुई एक पुस्तक में यही सम्मति प्रकट की है: 'दि प्लीस्टोसीन जियोलौजी एण्ड प्रीहिस्ट्री ऑफ युगांडा' भाग 2, युगांडा के भूगर्भीय सर्वेक्षण की स्मारिका (जियोलौजिकल सर्वे ऑफ युगांडा मैमोयर) संख्या 6, कौलचैस्टर, इंगलैंड, 1952।

के लिए अपने मतभेद दूर करने और एक टोली के रूप में काम करने में सहायक होता है। शिकार की बढ़िया तकनीकों में टोली के रूप में काम करने की आवश्यकता होती है। जो शिकारी धार्मिक प्रतीकों के समूह में समान विश्वास रखने के कारण आपस में मिलकर काम कर सकते थे, वे अकेले बर्छेबाज़ की अपेक्षा अधिक आहार घर ला सकते थे और फालतू बचे हुए आहार द्वारा उनके वयोवृद्ध शिक्षकों का पेट-भर सकता था। इस प्रकार चकमक को छील कर कुठार बनाने की उत्कृष्ट तकनीकें और आरम्भिक मानवीय व्यवहार के अन्य पहलू, जिनका कि हमारे पास कोई अभिलेख नहीं है, दूसरों को सिखाये जा सकते थे और इस प्रकार एक दूसरे तक पहुँचाये जा सकते थे। कुठारों के प्रकारों की अविच्छिन्नता का यह कारण समझ में आने वाला तो है, किन्तु हम इसे सिद्ध नहीं कर सकते। इस समय जीवित, आस्ट्रेलिया के आदिवासी, जो इस समय बचे हुए मानव प्राणियों में सबसे आदिम हैं, इससे मिलती-जुलती पवित्र वस्तुएँ लकड़ी और पत्थर से बनाते हैं, जिन्हें 'चुरिंगा' कहा जाता है, और उनका उपयोग भी इसी ढंग से करते हैं। परन्तु हमें यह नहीं मालूम कि वे ऐसा कितने समय से करते आ रहे हैं।

जहाँ कहीं भी कुठार पाये गए हैं, वहाँ हल्के भार के शल्क औज़ार भी उनके साथ मिले हैं। ये शल्क औज़ार किन्हीं सुनिर्दिष्ट और स्वतः स्पष्ट प्रयोजनों के लिए बनाये जाते थे, जैसे कि खालों का खुरचना या माँस का काटना, और उनके सम्बन्ध में कोई रहस्य छिपा हुआ नहीं है। शल्कों को क्रोडों से अलग करने की और शल्कों का अनुशोधन करने की शैलियाँ अलग-अलग स्थानों पर और अलग-अलग कालों में अलग-अलग ढंग की रही हैं, जबकि कुठारों में परिवर्तन केवल समय के अनुसार हुआ है। इससे यह अनुमान होता है कि कुठार, जो इतने भारी थे कि उन्हें इधर-उधर ले जाना कठिन था, अंशतः प्रतीक वस्तु रहे होंगे और शल्क औज़ार पूर्णतया उपयोगितामूलक थे। इसके अलावा शल्क औज़ार कुठारों की अपेक्षा अधिक स्थानों पर पाये गए हैं। यह सम्भव है कि इन कुठारों का उपयोग केवल उन खास मौसमों में ही होता हो, जबकि वन्य भोजन इतना प्रचुर होता हो कि वह एक स्थान पर एक ही समय में सैकड़ों व्यक्तियों का पोषण करने के लिए पर्याप्त हो। उस समय वृद्ध मनुष्य एकत्रित जनसमूह के लिए इन भारी और शानदार समारोहों के औज़ारों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से माँस काटते होंगे और ऐसे समारोहों के मध्य की अवधि में उन्हें उसी प्रकार संभाल कर रख देते होंगे, जैसे आस्ट्रेलिया के आदिवासी अपने 'चुरिंगाओं' को रख देते हैं।

शल्क औज़ार

कुठार-निर्माताओं द्वारा प्रयुक्त किये गए शल्क औज़ार कई शैलियों पर बने हैं। ये शैलियाँ इस बात पर निर्भर हैं कि शल्कों को उतारने के लिए क्रोड को किस ढंग से तैयार किया गया था और इस ढंग पर भी निर्भर हैं कि उपयोग में लाने के लिए शल्क का अनुशोधन किस ढंग से किया गया था। शल्कों को प्राप्त करने का सबसे सरल तरीका यह है कि क्रोड पर यों ही कहीं चोट की जाय और उसके बाद उसे आगे और आगे घुमाते हुए और चोट करते हुए बीच-बीच में यह देखा जाय कि अगली चोट करने के लिए कौन-सा तल अधिकतम उपयुक्त होगा। इस प्रकार तैयार किये गए शल्कों में उपयोगी शल्कों की प्रतिशतकता बहुत कम होगी और यह पहले से नहीं कहा जा सकेगा कि उन शल्कों की आकृति क्या होगी। उनसे औज़ार बनाने के लिए बहुत अनुशोधन की आवश्यकता होगी। इस तकनीक में चकमक, समय और ऊर्जा का बहुत अपव्यय होता है।

यदि कोई मनुष्य किसी क्रोड के एक पार्श्व से एक चपटा-सा शल्क उतार सके, तो उसके बाद वह उस नई सतह को एक प्रहार मुख के रूप में प्रयुक्त कर सकता है और उसके किनारे पर बार-बार चोट करता रह सकता है। इस प्रकार उतारे गए शल्क इससे पहले की तकनीक की अपेक्षा कहीं अधिक एकरूप होंगे और इसमें चकमक, समय और ऊर्जा का व्यय भी कम होगा; विशेष रूप से तब, जबकि वह व्यक्ति सावधानी से एक और भी चौड़ा और चपटा प्रहारमुख ठीक जगह पर बार-बार चोट मारकर तैयार कर ले; इन चोटों के कारण चकमक की शीशे जैसी सतह पर स्पष्ट पहचाने जाने वाले निशान या मुखिकाएँ (फैसेंट) बन जाएँगी। उस दशा में वह अपनी बनाई वस्तु के सम्बन्ध में पहले की अपेक्षा अधिक भरोसा रख सकेगा और इसमें अपव्यय भी कम होगा। उसने अपना अधिकाँश समय उत्पादन के लिए औज़ार बनाने में लगाया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है और आधुनिक उद्योगों की भाँति प्राचीन उद्योगों में भी सफलता का रहस्य यही था।

इंग्लैंड, फ्राँस, मध्य अफ्रीका और अन्य कुठारों वाले प्रदेशों में सबसे पुराने पाये गए शल्क पहले प्रकार के या अविचारित प्रकार के हैं और यही बात जावा, बर्मा और चीन में पाये गए शल्कों के विषय में भी सत्य है।[1] मुखिका-युक्त प्रहारमुख यूरोप, अफ्रीका और पश्चिमी एशिया में तृतीय हिमाच्छादन काल तक के पुराने प्राप्त होते हैं।

दोनों तकनीकों से बनाये गए शल्कों का अनुशोधन या तो सावधानी से निदेशित हल्की, किन्तु तीक्ष्ण चोटों द्वारा, या लकड़ी या हड्डी के किसी टुकड़े से दबाव डालकर किया जाता था। आस्ट्रेलिया के आदिवासियों को चकमक के औज़ारों के किनारों पर से अपने दाँतों से दबाकर शल्क उतारते हुए देखा गया है।

ये औज़ार पौधों को गिराने, काटने और लकड़ी को छीलने, पशुओं को काटने, उनकी खाल उतारने और खाल के अन्दर के भाग से माँस को खुरचने के लिए पर्याप्त अच्छे थे। हो सकता है कि उनमें से कुछ के साथ राल या गोंद द्वारा लकड़ी की मूठें लगा दी गई हों, जिससे वे चाकू या भाले की नोकों के रूप में काम आ सकें। उस समय तक भी हड्डी, हाथी दाँत या शृंग पर कारीगरी करने के लिए विशेष उपकरणों का आविष्कार नहीं हुआ था और इन सामग्रियों से बने औज़ार बहुत विरल हैं।

ब्रोकन हिल में हाल में ही की गई खुदाइयों से ऐसा सूचित होता है, किन्तु हम इसे सिद्ध नहीं कर सकते, कि रोडेशियाई मानव शल्क औज़ार बनाता था, जबकि सल्डान्हा खाड़ी का मानव दो प्रकार के औज़ारों के साथ पाया गया था—बहुत बाद के कुठारों और बहुत शुरू के शल्क औज़ारों के साथ। यह बात अनिश्चित है कि इन दो उद्योगों में से सल्डान्हा खाड़ी मानव का साहचर्य किसके साथ रहा था।

---

1. सिनान्थ्रोपस (चीन मानव) के भी कुछ शल्क क्रोड को एक पत्थर की निहाई पर रखकर उस पर चोट करके बनाये गए थे। इस प्रकार शल्क दोनों सिरों से एक साथ उतारे जाते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जावा में सोलो खोपड़ियों के साथ एक स्टिंग रे बार्ब (एक ऐसी छड़ी, जिसमें काँटेदार अरे निकले हुए होते हैं) मिली थी, जो समुद्र के काफी दूर थी, एक गढ़ी हुई हड्डी की नोक, जो बार्ब से मिलती-जुलती थी और बीस पत्थर के औज़ार मिले थे, जिनका कि विवरण नहीं लिखा गया है। क्योंकि इन अवर्णित पत्थर के औज़ारों को ब्रोकन हिल मानव के औज़ारों से मिलता-जुलता बताया गया है, इसलिए वे सम्भाव्यत: गढ़कर औज़ार बनाये गए शल्क थे। क्योंकि सैपियन्स मानुष इस प्रकार के औजार बनाते थे और अब भी बनाते हैं, इसलिए उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस) और सैपियन्स मानुष की औज़ार बनाने की तकनीकों में कोई व्यवधान दिखाई नहीं पड़ता। यह संक्रमण शनै:-शनै: क्रमशः हुआ था।

यह बात नियंडरथल मानव के अवशेषों के बारे में भी सत्य है। सब नियंडरथलों के पास भी एक ऐसा ही औज़ारों का संग्रह होता था, जिन्हें मूस्तेरियाई औज़ार कहा जाता है। इसमें से कुछ औज़ार छोटी क्रोडों से बने थे और कुछ शल्कों से। पश्चिमी यूरोप में कुछ स्थानों पर शल्क सीधी-सादी क्रोडों से, चोट मार कर उतारे जाते थे, परन्तु अन्य स्थानों पर सभी जगह मुखिकायुक्त क्रोडें बनाई जाती थीं। शल्कों का उपयोग खुरचनियों, चाकुओं और नोकों के रूप में किया जाता था; उनका अनुशोधन इतने बढ़िया ढंग से किया जाता था कि उनकी धारें और नोकें मोटे चमड़े वाले पशुओं की खाल को पार कर सकती थीं। कुछ मूस्तेरियाई नोकें लकड़ी के डंडों या हत्थों में लगाई जा सकती थीं। चकमक की नोक वाले भाले से, जो नियंडरथल लोगों को प्राप्त सर्वोत्तम हथियार था, वे गेंडे जैसे दैत्यकाय पशुओं और पहाड़ी बकरियों जैसे उछलने-कूदने वाले और बच भागने वाले पशुओं का शिकार करते थे। उनकी गुफ़ाओं में भरी हुई पशुओं की ढेर-की-ढेर हड्डियाँ शिकारी के रूप में उनके कौशल और बल की साक्षी हैं।

अभी तक खोजे जा चुके नियंडरथल मनुष्य एक ही प्रकार के औज़ार अवश्य बनाते थे, जिसमें कि काल और स्थान के कारण यथोचित परिवर्तन होता था, परन्तु जिस परम्परा का वे अनुसरण करते थे, वह उनकी भौतिक अभिसीमा (रेंज) से परे तक, विशेष रूप से अफ्रीका में, फैली हुई थी, जहाँ सैपियन्स, रोडेशियाई या दोनों प्रकार के मनुष्य इसी प्रकार की तकनीकें काम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

में लाते थे। एक से अधिक प्रकार के मनुष्य एक ही प्रकार के औज़ार बनाते थे, यह तथ्य इस बात का अच्छा प्रमाण है कि विभिन्न मानव-समुदायों के सदस्यों में परस्पर मिलन होते रहते थे; ये मिलन सैपियन्स मानुष की उपस्पीशिज़ों और स्थानीय जातियों में ही नहीं हुआ करते थे; अपितु बहुत सम्भवत: सैपियन्स मानुष और उत्तान मानुषों के बचे हुए समूहों में भी हुआ करते थे।

औज़ार हमें क्या बताते हैं

यदि हम इन औज़ारों का भौगोलिक दृष्टि से विश्लेषण करें तो हमें वैसा ही कुछ परिणाम प्राप्त होता है, जैसा कि इन औज़ार-निर्माताओं के भौतिक अवशेषों के विश्लेषण से प्राप्त होता है। अफ्रीका में उपल औज़ार और गंडासे बहुत पुराने थे। दक्षिणी और पूर्वी एशिया में हमें जो पुराने से पुराने औज़ार मिले हैं, वे अफ्रीका के औज़ारों की अपेक्षा कुछ बाद के हैं। अफ्रीका में अपरिष्कृत शल्क भी पुराने मिलते हैं; उतने ही पुराने, जितने की दक्षिणी और पूर्वी एशिया में मिले हैं, या उससे भी कुछ पुराने। अफ्रीका और पश्चिमी यूरोप की कुठार-परम्परा पश्चिमी एशिया में भी फैली, परन्तु वह ईरान के ठंडे पर्वतों को पार नहीं कर पाई। किन्तु उसके बदले वह भारत तक पहुँच गई; अनुमानत: भारत महासागर के ईरानी समुद्र तक के साथ-साथ फैले हुए उष्ण जलवायु के एक संकरे से क्षेत्र में होती हुई वह यहाँ पहुँची। भारत में कर्तन औज़ार और कुठार, दोनों की परम्पराएँ मध्य प्लीस्टोसीन काल में साथ-साथ विद्यमान थीं। बाद में वे परस्पर मिलीं, और घुल-मिल कर एक हो गईं।

इस समीक्षा में यह अर्थ निहित है कि मध्य प्लीस्टोसीन काल के आरम्भ में मनुष्य आस्ट्रैलोपिथैसाइनों की भाँति अनगढ़ उपल औज़ारों का प्रयोग करता था और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों उसने अधिकाधिक कार्यक्षम औज़ारों का आविष्कार किया, जिनमें से कुछ विशुद्ध रूप से उपयोगिता को दृष्टि में रखकर बनाये गए थे और अन्य कुछ औज़ार अंशत: सौन्दर्यात्मक थे; और यह स्थिति तब तक रही, जब तक कि चकमक के जो-जो भी उपयोग हो सकते थे, वे सब के सब लगभग पूरे न हो गए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रोमैथियस ने आग खोज निकाली

आज की दुनिया में आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका और अन्य भागों में रहने वाले आदिम शिकारियों को एक बड़ी सुविधा यह है कि उनके पास आग है, जिसका प्लीस्टोसीन काल के आरम्भ में कोई पता ही नहीं था। आग का सर्वप्रथम सुनिश्चित प्रमाण चाउकाउतियेन की गुफाओं में अग्निकुण्डों का पाया जाना है। सिनान्थ्रोपस (चीन मानव) को यह पता था कि अपने आपको गर्म किस प्रकार रखा जा सकता है और इसलिए वह मानव कुटुम्ब के उन अन्य सदस्यों की अपेक्षा, जो तीन लाख साठ हजार वर्ष पहले जीवित थे, कहीं अधिक ठण्डे जलवायु में रह पाने में समर्थ था। उसके बाद हमें आग का अगला प्रमाण यूरोप में, अब से कोई ढाई लाख वर्ष पहले स्वैन्सकौम्बी में और स्पेन में प्राप्त होता है।

अफ्रीका में चालीस हज़ार वर्ष पहले आग के होने का कोई चिह्न नहीं मिलता। चालीस हज़ार वर्ष पहले का चिह्न भी उत्तरी रोडेशिया में कलाम्बों प्रपातों के पास एक बाद के कुठार-स्थल में प्राप्त होता है। इससे पहले आग का चिह्न न पाये जाने का कारण यह नहीं है कि वहाँ आग की खोज नहीं की गई। एक विशाल अनावृत शिविर में, जिसमें मानव प्राणी समय-समय पर बहुत दीर्घ काल तक रहते रहे थे, कोयले या राख का कोई निशान नहीं मिलता। यह स्थान पूर्वी अफ्रीका में ओलरगिसेली है, जिसकी खुदाई लैविस लीकी ने की थी। उसने आग के निशानों की खोज की, किन्तु उसे कोई निशान मिले नहीं।

पाषाण युग के इस समय बचे हुए शिकारियों में से कोई भी, यदि उसका बस चले तो, आग के बिना डेरा नहीं डालता; क्योंकि भले ही गर्मी के लिए आग की आवश्यकता न भी हो, तो भी यह हिंस्र पशुओं से रात्रि में उनकी रक्षा करती है। यदि ओलरगिसैली के शिकारियों के पास आग होती, तो वे अवश्य उसका प्रयोग करते, क्योंकि वह एक ऐसा प्रदेश है, जिसमें सिंह तथा अन्य भयंकर मांसाहारी पशु प्रचुरता से पाये जाते हैं। अफ्रीका की कुठार-परम्परा के अन्य पुराने स्थलों का भी ठीक यही हाल है। पिथैकैन्थ्रोपस और सोलो मानव के निवास-स्थान इण्डोनेशिया में बोर्नियो में आग लगभग उसी काल में पाई गई है, जिसमें कि रोडेशिया में।

सब आधुनिक मनुष्य आग का उपयोग अवश्य करते हैं, परन्तु उनमें से कुछ को यह पता नहीं है कि आग उत्पन्न किस प्रकार की जाती है। आस्ट्रेलिया के कई कबीलों और बंगाल की खाड़ी में स्थित अण्डेमान द्वीप समूह के नैग्रिटो लोगों का यही हाल है। सर्व प्रथम आग असन्दिग्ध रूप से उत्पन्न की गई आग नहीं, अपितु चुराई गई आग थी। जंगली आग ज्वालामुखियों से या दावानल (वन की आग) से प्राप्त की जा सकती है। कुछ विरल अवसरों पर और कुछ थोड़े-से स्थानों पर मनुष्य जलती हुई लकड़ी के टुकड़े उठा सकता था और उन्हें अन्यत्र कहीं ले जा सकता था। उसकी सावधानी से परिचर्या करके, उसके ऊपर कूड़ा करकट डाल कर, और जब वह बुझने लगे, तब फूंक मारकर वह उसे कितने ही समय तक जलाये रख सकता था। एक कुटुम्ब दूसरे कुटुम्ब से आग ले सकता था और इस प्रकार एक शिविर से दूसरे शिविर तक और यहाँ तक कि एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप तक पहुँच सकती थी। यदि किसी एक शिविर के लोगों के पास आग न रहे, तो वे किसी दूसरे शिविर में जाकर आग ले सकते थे।

आग उत्पन्न करने का सबसे पहला प्रमाण चीन में नहीं, अपितु यूरोप में प्राप्त होता है। तृतीय अन्तरहिमाच्छादन काल के पिछले भाग की 'क्रापिना' की गुफा की खुदाई करने वाले लोगों को उस प्रकार की अधजली आग उत्पन्न करने की लकड़ी मिली है, जिस प्रकार की स्काउट लोग बनाया करते हैं; यह इस बात का ठोस प्रमाण है कि अब से लगभग एक लाख वर्ष पहले यूरोपवासियों के पास न केवल आग थी, अपितु उन्हें यह भी मालूम था कि आग उत्पन्न किस प्रकार की जाती है।

यह कुछ विचित्र जान पड़ता है कि प्रोमैथियस, वह यूनानी देवता, जिसने देवताओं के राजा के यहाँ से आग चुराई थी और जो संस्कृति का लाने वाला और मानव जाति का उद्धारक था, एक चीन वासी अर्ध मस्तिष्क वाला मनुष्य निकले, और आग को पहले-पहल उत्पन्न करने वाला एक यूरोपवासी हो। इससे परवर्ती बारूद के इतिहास का स्मरण हो आता है। चीनी लोग बारूद का उपयोग पटाखे बनाने के लिए करते थे और उसी का उपयोग यूरोपवासियों ने तोपें छोड़ने के लिए किया, जिनके द्वारा उन्होंने 'नई दुनिया' (अमेरिका) और अफ्रीका को जीता। परन्तु इस समानता (तुलना) को बहुत दूर तक नहीं

घसीटना चाहिए। आग के इतिहास के बारे में इतना कम ज्ञात होने को अभी इतना कुछ बाकी है कि सामान्यीकरण उचित न होंगे।

जब तक मनुष्य के पास आग नहीं थी, जब तक उसमें पशुओं से यही, थोड़ा ही अन्तर था कि विषदन्तों (कीलों) और पंजों के बजाय उसके पास औज़ार थे। जब उसे आग पहले पहले मिली, तो वह इस से उन हिंस्र शिकारी पशुओं को डराकर भगा सकता था, जो रात में उसकी घात लगाये रहते थे। अब वह न केवल अपने डेरे पर अपने शरीर को गर्म रख सकता था, अपितु शिकार पर जाते समय भी धीमे-धीमे जलने वाली लकड़ी की मशालें साथ रखकर उनसे गर्मी प्राप्त करता रह सकता था। आग की सहायता से वह अपनी भौगोलिक अभिसीमा को पहले की अपेक्षा कुछ और अधिक उत्तर की ओर बढ़ा सका। अन्य पशुओं ने इस काम को अपने शरीर पर समूर (लम्बे बाल) उगाकर सम्पन्न किया।

किन्तु उष्णता के अलावा बिलकुल भिन्न दृष्टि से भी आग मनुष्यों के सामाजिक जीवन के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। जब सूर्य छिप जाता है, जब छायाएँ म्लान हो जाती हैं और अन्धकार बढ़ने लगता है, तब हवा शान्त हो जाती है। उस समय पृथ्वी में से गन्धें उठने लगती हैं और वन में से रात्रिचर पशु-पक्षियों की आवाज़ें आने लगती हैं। उस समय चिन्ता और भय को दूर करने के लिए चमकती और चटखती हुई आग से बढ़कर और कोई वस्तु नहीं होती। यही वह समय होता है, जबकि सारा दल आकर इकट्ठा हो जाता है। दाँत और नेत्र गोलकों के श्वेत भाग आग के प्रकाश में चमकने लगते हैं। पुराने शिकारों का अभिनय किया जाता है और नये शिकारों की योजना बनाई जाती है। अच्छे मौसम में पुरुष और स्त्रियाँ आग के प्रकाश में कभी-कभी तो सवेरा होने तक नाचते रहते हैं। मानव प्राणियों के किसी ऐसे अन्तरंग समूह की कल्पना कर पाना कठिन है, जो उस सामाजिक सान्निध्य के बिना रह रहा हो, जो कि अग्नि के प्रकाश से प्राप्त होता है।

रक्षा, उष्णता और सहचारिता के केन्द्र बिन्दु के रूप में काम आने के अलावा आग का एक चौथा मुख्य उपयोग भोजन पकाना है। हमें यह पता नहीं कि पकाने का आरम्भ कब हुआ, क्योंकि लोगों के निवास के स्थलों पर पाई गई जली हुई हड्डियाँ कच्चे माँस का भोजन कर चुकने के बाद कूड़ा-

करकट के रूप में फेंक दी जाने के बाद भी जली हुई हो सकती हैं और भोजन पकाने की प्रक्रिया में भी जली हो सकती हैं। आस्ट्रैलोपिथैसाइनों के पास आग नहीं थी, परन्तु वे मज्जा को, जो एक सांद्रीकृत खाद्य है और जिसे सभी शिकारी बहुत बढ़िया मानते हैं, खुरचकर खाने के लिए अपने शिकारों की हड्डियों को फाड़ देते थे। शिकारी लोग मज्जा के लिए सदा से हड्डियों को फाड़ते आये हैं।

यदि किसी पशु को भून लिया गया हो और हड्डियाँ अभी गर्म हों, तो पिघली हुई मज्जा हड्डियों को फाड़े बिना उनमें से चूसी जा सकती है। परन्तु आस्ट्रेलिया में इस समय रहने वाले शिकारी प्रायः अपने शिकार के माँस को उसी जगह पका लेते हैं, जहाँ वे उसे मारते हैं और उसे बाद में अपने शिविर में लाकर खाते हैं, जबकि वह ठण्डा हो चुका होता है। क्योंकि ठण्डी मज्जा लगभग उतनी ही कड़ी होती है, जितनी कि कच्ची मज्जा, इसलिए उन भूनी हुई हड्डियों को भी फाड़ना ही पड़ता है। परन्तु उबालने से मज्जा पूरी तरह हड्डी से अलग हो जाती है और उन स्थानों पर, जहाँ हमें पता है कि वहाँ के लोग माँस को उबालते थे, हड्डियाँ केवल दो टुकड़ों में तोड़ी हुई मिलती हैं। परन्तु ये स्थल बहुत बाद के काल के हैं और उनसे हमें इस विषय में कुछ पता नहीं चलता कि मनुष्य ने पहले पहल खाना कब पकाया।

पकाने से भोजन में केवल इतना ही परिवर्तन नहीं होता कि मज्जा हड्डियों से अलग हो जाय, अपितु और भी बहुत कुछ होता है। पकाने से माँस और कन्द-मूलों के कठोर तन्तु टूटकर अलग-अलग हो जाते हैं, जिससे ऐमीनो अम्ल और शर्करा मुक्त हो जाती है। इसके कारण भोजन पहले की अपेक्षा चबाने में नरम हो जाता है और इसके फलस्वरूप उसे खाने में कम समय लगता है। सी० आर० कारपेण्टर ने स्याम (थाइलैंड) में अपने कालनिष्ठ अध्ययन में बड़ी सावधानी से निरीक्षण करके यह बात देखी थी कि गिबन अपने जाग्रत समय का कम-से-कम आधा भाग खाने में बिताते हैं और शेष आधा भाग भोजन के स्थानों के बीच आने-जाने में बीत जाता है। वे अपना भोजन जब और जहाँ पाते हैं, तभी और वहीं खा डालते हैं। जंगली गुरिल्लों का, जो बाँस की कोंपलों को खाते हैं, जो बहुत ही सख्त चारा है, दिन का अधिकाँश समय खाने में ही बीत जाता है। यदि आस्ट्रैलोपिथैसाइन और

आदिम मनुष्य कच्चे कन्द-मूलों को और कच्चे माँस और तरुणास्थियों (नरम हड्डियों) को चबाते थे, तो उनके जबड़े चाहे कितने ही मज़बूत या उनके दाँत कितने ही बड़े क्यों न रहे हों, उनके पास एक औसत दिन में शिकार करने और औज़ार बनाने के लिए बहुत कम समय बचता होगा। परन्तु जब एक बार मनुष्य ने खाना पकाना शुरू कर दिया, तो वह अपने भोजन के समय को घटाकर केवल दो घण्टे प्रतिदिन कर सका होगा।

प्रातःकाल और दिन के उजाले के बाकी घण्टों में वह शिकार करने जा सकता था, अपने मारे हुए शिकार को उठाकर घर ला सकता था, अपने हथियार बना सकता था, अपने इष्ट-बन्धुओं से बातचीत कर सकता था और अपने पुत्रों को अनेक कौशल सिखा सकता था। भोजन पकाने का प्रारम्भ मनुष्य को मुख्य रूप से पशु जैसे भौतिक अस्तित्व के ऊपर उठाकर एक पूर्णतया मानवीय अस्तित्व की ओर ले जाने में निर्णायक तत्व रहा होगा। पकाने के ज्ञान के अभाव में आदिम मनुष्यों की दिनचर्या इतनी अधिक व्यस्त रहती होगी कि उसमें बहुत साँस्कृतिक परिवर्तन का मौका ही न मिलता होगा। सांस्कृतिक परिवर्तन की सम्भावना के बिना क्रम-विकासत्मक परिवर्तन में कोई जैव (बायोलोजिकल) लाभ न हुआ होता, इस बात की सम्भावना नहीं है कि आग के बिना उत्तान मानुष का क्रम-विकास सैपियन्स मानुष के रूप में हो सकता था। और प्रसंगतः, हो सकता है कि आरम्भिक चकमक औज़ारों की शैलियों के सैंकड़ों सहस्राब्दियों तक इतना रूढ़ (पुराणपन्थी) बने रहने का कारण आग के ज्ञान का अभाव ही रहा हो।

आग का उपयोग मनुष्य तथा अन्य सब पशुओं के मध्य एकमात्र सुस्पष्ट अन्तर है। आग ऐसी शक्ति का पहला स्रोत थी, जिसका मनुष्य ने उपयोग करना सीखा और जो उसके शरीर के अन्दर भोजन और वायु के ऊर्जा में रूपान्तरित होने से प्राप्त नहीं होती थी। इसने मनुष्य को अपेक्षाकृत अधिक कार्यक्षम प्राणी बना दिया और पिछले आठ हज़ार वर्षों में वह इसके अधिकाधिक उपयोग ढूंढता गया है और सदा अधिकाधिक मात्रा में ईंधन जलाता रहा है। प्रकृति की शक्तियों को वश में करने में, पृथ्वी को जीतने में और अंशतः उसके विनाश में और उसकी वर्तमान समस्याओं की तीव्रता से वृद्धि में आग उसका मुख्य साधन रही है।

इडिपस का विद्यारम्भ

आग की खोज से पहले हमारे पूर्वजों ने अवश्य ही ऐसे कुटुम्बों के समूहों में रहना सीख लिया होगा, जो मिलकर बाँट कर भोजन करते थे और अपनी सन्तानों के विवाह परम्परागत नियमों के अनुसार करते थे। इस पुस्तक का केन्द्रीय विचार यह है कि मनुष्य ऊर्जा को निरन्तर अधिकाधिक बढ़ती गति से सामाजिक संरचना में रूपान्तरित करता रहा है। ज्यों-ज्यों उसने पृथ्वी के भंडार से अधिक और अधिक ऊर्जा खींची है, त्यों-त्यों उसने अपने आपको बढ़ते हुए आकार और जटिलता वाली संस्थाओं में संगठित किया है। यह प्रगति अवश्य ही कहीं न कहीं से तो शुरू हुई ही होगी। सबसे आदिम मनुष्यों के अध्ययन का आरम्भ करने के लिए हमें सामाजिक संरचना के उस प्रकार की खोज निकालने की आवश्यकता है, जिसमें आग को अपने वश में करने से पहले वे रह पाये होंगे। तब हमारे पास शेष इतिहास-क्रम के लिए एक आधार-रेखा बन जायगी।

क्योंकि अभी तक किसी भी व्यक्ति ने काल-यंत्र (ऐसा-यंत्र, जिससे काल को उलटा घुमाकर अतीत का हाल जाना जा सके) का आविष्कार नहीं किया है, इसलिए हमारे पास कपि-मानवों, पिथैकैन्थ्रोपसों या सिनान्थ्रोपसों के सामाजिक जीवन का कालनिष्ठ अध्ययन करने का कोई उपाय नहीं है; और यहाँ तक कि लगभग आधुनिक, नियंडरथल लोग भी पृथ्वी से लुप्त हो चुके हैं। इस समय केवल सैपियन्स मानुष के कुछ आदिम रूप और जीवित बन्दर और कपि (एप) ही विद्यमान हैं, जिनके आधार पर हमें अपना काम करना है। हमारे आदिमतम पूर्वजों के, जो प्लीस्टोसीन के आरम्भ से पहले रहे होंगे, जीवन का अनुमान केवल इन अब तक बची हुई समाज व्यवस्थाओं के साथ तुलना द्वारा ही किया जा सकता है।

अन्वेषकों तथा नये प्रदेशों में जाकर बसने वाले लोगों ने आधुनिक जगत् के जितने भी आदम आहार-संचयको (भोजन संग्रह करने वाले) लोगों का पता चलाया है, उनके सब के सब समूह कुछ परम्परागत कुटुम्बों के गिरोहों में रहते हैं। किसी न किसी प्रकार के गिरोह बन्दरों की भी अपनी विशेषता हैं। उदाहरण के लिए, दक्षिणी अमेरिका के क्रोशक (हाउलर) बन्दर दोनों लिंगों के चालीस या पचास व्यक्तियों के परिवार बनाकर रहते हैं। इनमें मादाएँ,

जो यौन आवेश तथा आकर्षण के सुस्पष्ट चक्रों (साइकल) में से गुज़रती हैं, डिम्ब-क्षरण के दिनों में नर बन्दरों के प्रणय के लिए तैयार होती हैं। यह क्रम हर चार सप्ताह बाद शुरू होता है और दो या तीन दिन तक चलता है। जब यह प्रारम्भ होता है, तब मादा उग्र हो उठती है और अपने आपको एक के बाद एक नर बन्दर के सम्मुख प्रस्तुत करती है; जब यह क्रम समाप्त होता है, तब वह फिर सलज्ज उदासीनता धारण कर लेती है। इन मादाओं के ऋतु-चक्र अलग-अलग समयों में बिखरे रहते हैं। एक समय में दो या तीन से अधिक मादाएँ यौन समागम के लिए उद्यत नहीं होतीं और इन दो-तीन पर सब नर बारी-बारी से चढ़ते हैं।

बैबून, जो हमारे भूमि पर रहने वाले साथी हैं, बड़े अन्तःपुरों (हरम) में रहते हैं। चार या पाँच सशक्त नर इस प्रकार के गिरोह के नाभिक के रूप में होते हैं; उनमें से प्रत्येक का अपनी-अपनी मादाओं का निजी अस्तबल होता है, जिन्हें वह ईर्ष्यापूर्वक अपने साथियों से बचाकर रखता है। अपेक्षाकृत तरुण नर, जो इस समाज से बहिष्कृत होते हैं, दल के बाहरी छोरों पर शत्रुओं पर निगाह रखने के लिए चौकीदारी करते हैं। उनका कभी-कभी मादाओं से अल्पकालीन समागम होता है, किन्तु बाद में जब मादाओं में भरपूर वासना जाग्रत हो जाती है, तब वे फिर बूढ़े राजाओं के पास पहुँच जाती हैं। गुरिल्ला और चिम्पाँज़ी, दोनों एक अन्तःपुर वाले गिरोह बनाकर यात्रा करते हैं। प्रायः यह देखा जाता है कि एक सक्रिय नेता के अलावा अन्य नर या तो इतनी छोटी आयु के होते हैं कि उन्हें दूर भगाने की आवश्यकता नहीं होती, या फिर वे इतने बूढ़े होते हैं कि वे उस नेता का मुकाबला ही नहीं कर सकते। वस्तुतः इनमें से पिछले वे कपि हैं, जिन्होंने सामाजिक सुरक्षा के सुख के लिए अपने पुरुषत्व के अधिकारों को त्याग दिया है।

गिबन[1] एक-परिवारी दलों में रहता है, जिनमें एक नर, एक मादा और

---

[1] जंगल में इन प्राइमेटों (वानरों) में से अनेक के व्यवहार के विषय में हमारा विशद ज्ञान सी० आर० कार्पेन्टर द्वारा इस कार्य-क्षेत्र में किये गए बढ़िया कार्य पर आधारित है। उदाहरण के लिए देखिये उसकी पुस्तक 'फील्ड स्टडी इन स्याम ऑफ़ दि बिहेवियर एण्ड सोशल रिलेशन्स ऑफ़ दि गबन' (गिबन के व्यवहार तथा सामाजिक

उनके तारुण्य-पूर्व की आयु वाले दोनों लिंगों के बच्चे होते हैं। जब कोई नर बच्चा इतना बड़ा हो जाता है कि वह अपनी माँ से या उसकी माँ उससे प्रणय करने योग्य हो, तो उसका पिता उसे कुटुम्ब से बाहर खदेड़ देता है। इसी प्रकार माता अपने साथ प्रतियोगिता करने वाली पुत्रियों को कुटुम्ब से निकाल देती है। ये तरुण कपि अपने माता-पिताओं के आहार संचय करने के मैदानों के बीच में घूमते-फिरते एक-दूसरे से मिलते हैं और इस प्रकार नये कुटुम्ब बन जाते हैं। परन्तु जब कोई माता मर जाती है और उसकी कोई इतनी बड़ी पुत्री होती है, जो लगभग कुटुम्ब से खदेड़ दिये जाने योग्य आयु की होती है, तो पिता उसी से विवाह कर लेता है और इसी प्रकार यदि पिता के साथ दुर्घटना घटित हो, तो माता और पुत्र का संयोग हो सकता है।

सामाजिक संरचना में ये व्यतिक्रम (परिवर्तन) शरीर-क्रिया पर आधारित हैं। रौबर्ट ऐम० इर्कीज़ ने, जिसने मादा चिम्पाँज़ियों के व्यवहार का बहुत सावधानी से अध्ययन किया है, यह पता चलाया है कि उनका भी स्त्रीमद (रति) चक्र लगभग उसी प्रकार सुस्पष्ट होता है, जैसा कि मादा क्रोशक (हाउलर) बन्दरों का। अन्तःपुर (हरम) का जीवन स्पष्टतः इस दशा का सूचक है। गिबन, जो कि शरीर-रचना की दृष्टि से मनुष्य का निकटवर्ती एक-मात्र प्राइमेट है, शरीर-क्रिया की दृष्टि से इन बन्दरों से भिन्न है। क्योंकि मादा गिबन सदा काम-लोलुप रहती है, इसलिए उसके जीवन-साथी को एक से अधिक साथिनों की आवश्यकता नहीं होती। मादा गिबन सदा आक्रमणशील होती है और यदि उसकी कोई प्रतिद्वन्द्विनी आ जाय, तो या तो वह उसे समाप्त कर देती है या फिर स्वयं समाप्त हो जाती है। मानव स्त्री मादा गिबन से सबसे अधिक मेल खाती है।

इन आधारों पर यह मान पाना संभव है कि आदिमतम मनुष्य, उस समय, जब कि उन्होंने वाणी, औज़ारों और आग को वश में करना शुरू किया, एक-परिवारी समूहों में रहते थे, जिनमें प्रत्येक जनक (माता या पिता) अपनी समलिंगी सन्तान को, ज्योंही वह दूसरे जनक (माता या पिता) के मन में आकर्षण उत्पन्न करने लगती थी, त्योंही कुटुम्ब से बाहर खदेड़ देता था।

सम्बन्धों के विषय में स्याम में किया गया कार्यक्षेत्रीय अध्ययन), कम्पैरेटिव साइकोलौजी मोनोग्राफ्स, खंड 16 अंक 5, जौंस होपकिंस प्रैस, बाल्टीमोर 1940।

एक बड़ा परिवर्तन उस समय हुआ होगा, जब साँस्कृतिक शिक्षण की आवश्यकता इतनी प्रबल हो उठी होगी, कि इतनी कच्ची उम्र में घर से निकाल दिया जाना जीवित बच पाने की दृष्टि से बहुत बुरा, और इतना अधिक माँस घर लेकर आना, कि जिसे पति-पत्नी और उनके छोटे बच्चे सड़ जाने से पहले खाकर समाप्त न कर सकें, आर्थिक दृष्टि से बुरा सिद्ध हुआ होगा। तब हमारे पूर्वजों ने गिरोहों में रहना शुरू किया।

इडिपस व्यवहार का स्थान इडिपस ग्रन्थि ने अवश्य ही उसके कुछ समय बाद लिया होगा, जब मानव प्राणियों ने वर्तमान के साथ अतीत और भविष्यत् को भी शब्दों में व्यक्त करना सीख लिया होगा और वे अव्यक्त भावनाओं को भी शब्दों में प्रकट करने लगे होंगे। उसी समय, दरिद्रतम परिवेशों को छोड़कर अन्य सब परिवेशों में सवा मन माँस वाले पशुओं के माँस को इसलिए बाँट लेने की आवश्यकता ने, कि कहीं वह खराब न हो जाय, अनेक कुटुम्बों को गिरोहों के रूप में संगठित कर दिया होगा। इस प्रकार के गिरोहों के बनने का सबसे सरल ढंग यह रहा होगा कि विवाह के बाद या तो पुत्र, या फिर पुत्रियाँ, किन्तु दोनों नहीं, अपने कुटुम्बों के साथ रहते रहें।

यदि पुत्र और पुत्रियाँ, दोनों ही विवाह के बाद अपने कुटुम्ब के साथ रहने लगें, और सगे या चचेरे या ममेरे भाई बहन आपस में विवाह करने लगें, तो गिरोह पूरी तरह एक आत्म-सम्पूर्ण इकाई बन जायगा। तब अभाव या आवश्यकता के समय गिरोहों में शान्तिपूर्ण सम्पर्क के लिए कोई यन्त्रजात उपलब्ध न होता; पड़ौसी से उधार माँग पाना असम्भव हो जाता। इतना ही नहीं, जो लड़के साथ-साथ पले होते, वे उन लड़कियों के लिए आपस में झगड़ते, जिनके साथ उनका पालन-पोषण हुआ होता और इससे गिरोह की शान्ति और एकता के लिए संकट उपस्थित हो जाता। बुद्धिमत्तापूर्ण उपाय यह था कि एक गिरोह के लड़के दूसरे गिरोह की लड़कियों से और इसी प्रकार उस गिरोह की लड़कियाँ दूसरे गिरोह के लड़कों से विवाह करें। यह उपाय सम्भाव्यतः उतना तर्क द्वारा नहीं खोज निकाला गया था, जितना कि परीक्षण और भूल सुधार द्वारा। साथ ही बालकों को यह भी सिखाया जाता होगा कि विनाशकारी प्रतिद्वन्द्विताओं को रोकने के लिए उन्हें किन-किन श्रेणियों की स्त्रियों से दूर रहना चाहिए और उन्हें हर आयु के स्त्री-पुरुषों के साथ किस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ढंग से व्यवहार करना चाहिए ।

यह अध्यापन का काम अपेक्षाकृत वृद्ध पुरुषों का रहा होगा। पहले की ही भाँति वे लड़कों को किशोरास्था में पहुँचने पर घर से बाहर निकाल देते होंगे, किन्तु सदा के लिए नहीं। ये लड़के जब शिविर से दूर होते होंगे, तब भय के मनोवैज्ञानिक प्रभाव द्वारा तथा अंशतः भूख के प्रभाव द्वारा ये बूढ़े लोग तरुण मस्तिष्कों को उन नियमों का पालन करने की आवश्यकता अनुभव कराने का यत्न करते होंगे, जिन्हें समझ पाने का उनके पास कोई साधन नहीं था और जिन्हें हमने भी अभी हाल ही में समझना शुरू किया है ।

पंडोरा ने आत्माओं को मुक्त किया और स्वयं भी उनमें मिल गई

प्रोमैथियस की कहानी की भाँति इडिपस की दन्तकथा भी हमें सुदूर काल की ओर वापस ले जाती है, जब मनुष्य मानवीय बन रहे थे। पौराणिक दन्त-कथाओं की एक तीसरी पात्र पंडोरा भी रंगमंच पर उसी सामान्य युग में अवतरित हुई होगी । एक समय था, जब मनुष्यों को मृत्यु का ज्ञान नहीं था । उसके बाद पंडोरा को एक दो हत्थे वाला मर्तबान मिला, जो एक ढक्कन से बन्द था । पंडोरा ने उस ढक्कन को खोल दिया । उस मर्तबान में से पंखों वाले प्राणियों का एक पूरा दल का दल बाहर निकल पड़ा और उड़ता हुआ सब ओर फैल गया । वह दल अपने साथ व्याधियाँ और दुर्भाग्य लिये हुए था। इस प्रकार मृत्यु मनुष्य तक पहुँची । इससे पहले की अन्य दो कहानियों की भाँति यह कहानी भी उस समय जो कुछ घटित हुआ होगा, उसका भयावह रूप से यथार्थ प्रतीकात्मक चित्रण है ।

किसी पशु को यह पता नहीं है कि मृत्यु अपरिहार्य है । कुरंग दिन पर दिन जीवन-यापन करता जाता है । जब तब मृत्यु उसके सम्मुख आती है, परन्तु हर बार वह उसका एक पृथक् घटना के रूप में सामना करता है । अन्त में जब सिंह उसके ऊपर टूट पड़ता है और अपने नाखूनों से उसे चीर-फाड़ डालता है, तब वह मर जाता है और वहाँ उसकी कहानी समाप्त हो जाती है । एक समय अवश्य ऐसा रहा होगा, जब मनुष्य भी इसी ढंग से रहता था; और उसके बाद ज्ञान के आरम्भ का एक समय आया, जब उसने यह समझ लिया कि वह

चाहे कुछ भी करे या कुछ भी न करे, उसे अन्त में मरना अवश्य होगा। यह बहुत ही भयावह ज्ञान था; यह इतना भारी बोझ था कि इसे लेकर वह दिनानुदिन चल नहीं सकता था; विशेष रूप से एक ऐसे काल, और एक ऐसी सांस्कृतिक दशा में, जिसमें कि किसी न किसी रूप में मृत्यु का सामना करना लगभग एक दैनिक घटना थी। पुराने शिकारी 'केवल अकस्मात् लुप्त नहीं हो गए' और न वे धमनीकाठिन्य (नाड़ियों का कड़ा हो जाना), शराब (बूबोन) और टेलीविजन देखने की अचेतन कर देने वाली मानसिक विह्वलता के ही शिकार हुए, अपितु वे जवानी में ही मर गए थे, या अपने पूर्ण यौवन को पार करते न करते अत्यधिक परिश्रम के कारण मर गए थे। मृत्यु कोई बहुत दूर का कर्तव्य या अत्यधिक परिष्कृत सभ्यता की असह्य जटिलताओं से पलायन नहीं थी, अपितु एक सदा उपस्थित रहने वाली और भयावह विपत्ति थी।

इस समस्या को अपने मन में रखते हुए मनुष्य के सम्मुख अपनी अधिकतम कार्यक्षमता को बनाये रखने का एक उपाय, और केवल एक ही उपाय, था और वह था — मरणोत्तर जीवन में विश्वास। जब उसे एक बार यह विश्वास हो गया कि उसे आगे जीते जाना है, तो वह परलोक में आत्माओं की कल्पना कर सकता था (या प्रेत लोक का आविष्कार कर सकता था) और उन आत्माओं के बीच में उन पशुओं और पौधों की आत्माओं की श्रेणियां भी रख सकता था, जो उसके दैनिक जीवन का मानवेतर अंश थीं। ये आत्माएँ इधर-उधर उड़ती रहती थीं और उस पर दृष्टि रखती थीं। कभी-कभी वे उसके पास आतीं, उसे सन्देश देतीं और कठिनाई में पड़ने पर उसकी सहायता करती थीं। यदि कोई काम बिगड़ जाय, तो उसके लिए वह उन आत्माओं को दोष दे सकता था। धर्म लोगों के लिए एक अफीम जैसी जड़ता लाने वाली वस्तु न होकर शक्ति का एक महान् स्रोत बन गया।

जब कोई मनुष्य बीमार पड़ जाता, तो आत्माओं में विश्वास उन सब लोगों के ध्यान को, जिनके मन में उस दुर्दैव के कारण विक्षोभ उत्पन्न हुआ होता था, एक ही दिशा में केन्द्रित कर देता था। जब कोई कन्या किशोरावस्था में पदार्पण करती थी, जब कोई लड़का दीक्षा-योग्य आयु का हो जाता था, जब किसी युगल का विवाह होता था, या जब कोई व्यक्ति उत्पन्न होता या मर जाता था, तब इन परिवर्तनों के कारण उस छोटे-से समुदाय की दिन-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चर्या में उत्पन्न होने वाला विक्षोभ संवेगात्मक ढंग के कर्म-काण्डों (धार्मिक कृत्यों) द्वारा दूर हो जाता था। मनुष्य के मस्तिष्क में संवेग का केन्द्र, और इसीलिए धार्मिक विश्वास, अत्यधिक विकसित रूप में है। संवेग और विश्वास समाजों के निर्माण के अनिवार्य साधन हैं। उच्चतम कला और गम्भीरतम दर्शन संवेगयुत और आदर्शवादी मनुष्यों की उपज हैं।

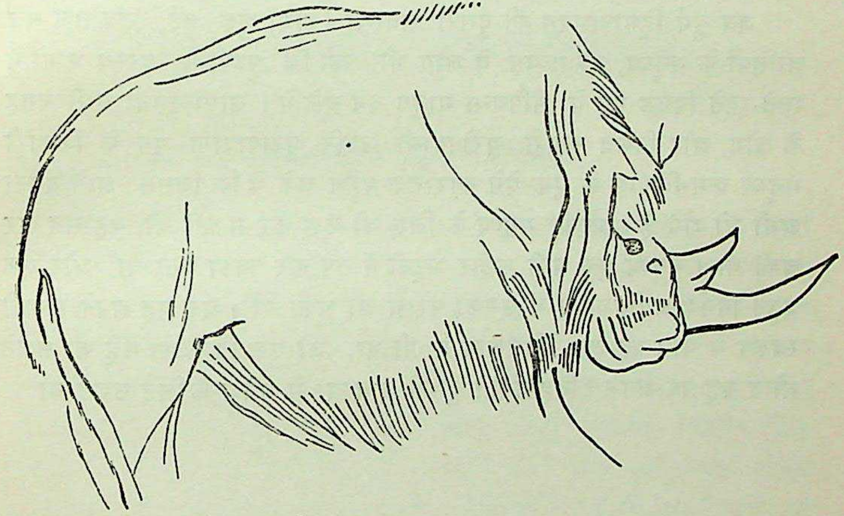

गैंडा, फ्रांसीसी गुफ़ा चित्र

जब मनुष्य अपने शारीरिक और सांस्कृतिक विकास की (जिसकी कि हमने यहाँ प्लीस्टोसीन काल के मध्य से लेकर चतुर्थ हिमाच्छादन के बढ़ाव तक की रूपरेखा प्रस्तुत करने का यत्न किया है) सुदीर्घ अवधि के अन्त तक पहुँचा, तब मानव प्राणी, कम से कम यूरोप में रहने वाले मानव प्राणी, उससे बहुत समय पहले से अपने आस-पास के इस संसार को चिन्तनात्मक दृष्टि से देखना शुरू कर चुके थे और विश्व की व्यवस्था के एक सिद्धान्त की अनुभूति को ऐसे रूपों में अभिव्यक्त करने लगे थे, जो अब तक भी चली आ रही है। सैपियन्स मानुष उससे बहुत पहले से सुरुचिपूर्ण ढंग से चकमक के कुठार बनाता रहा था। नियंडरथल मानव अपने मृतकों को उनके शरीरों के आस-पास औज़ार और उनके किये हुए शिकार रखकर गाड़ना सीख चुका था,

जिससे ये वस्तुएँ परलोक में उसके काम ग्रा सकें ।

धार्मिक व्याख्या की शब्दावली में कहा जाय, तो मनुष्य को ग्रात्मा प्राप्त हो चुकी थी । मानव-वैज्ञानिकों की भाषा में कहा जाय, तो मानव-प्राणी पूरे ग्रर्थों में मनुष्य बन चुके थे, जो न केवल ग्राग तथा ऊर्जा के उन ग्रन्य स्रोतों का, जिसकी कि खोज ग्रभी होनी है, उपयोग करने में समर्थ थे, ग्रपितु ग्रपने ग्रापको समझने में भी समर्थ थे ।

जब वूर्म हिमाच्छादन की दूसरी प्रावस्था (दौर) शुरू हुई, तब तक सब जातियों के मनुष्य, सम्भाव्यतः वे लोग भी, जो कि पृथ्वी के दूरस्थ भागों में रहते-रहते पिछड़ गए थे, सैपियन्स मानुष बन चुके थे। सामान्यतया सभी जगह के लोग, ग्रौर विशेष रूप से यूरोपवासी उपरि पुरापाषाण युग के शिकारी मनुष्य क्रम-विकास के एक ऐसे स्तर तक पहुँच चुके थे कि जिससे ग्रागे बढ़ना ग्रभी भी शेष है । प्रकृति मनुष्य के लिए जो कुछ कर सकती थी, वह सब कर चुकी थी । मनुष्य एक बड़ी कठोर भट्टी में तप कर पक्का बना था ग्रौर एक बहुत निर्मम प्रयोगशाला में उसको परखा जा चुका था । ग्रब वह ग्रपने ग्रसली स्वरूप में था ; वह एक विलक्षण प्राणी था, जो एक विलक्षण कहे जा सकने योग्य ग्रह पर ग्रपने इतिहास की दूसरी प्रावस्था में प्रवेश के लिए उद्यत था ।

3

कुशल शिकारी और चिकित्सक

इतिहास की दूसरी प्रावस्था

अब से लगभग 35 हज़ार वर्ष पहले, जब अन्तिम हिमाच्छादन का पहला बढ़ाव अपनी अधिकतम दक्षिणी सीमा तक पहुँच चुका था और उसका किनारा पिघलना और फिर उत्तर की ओर हटना शुरू हो चुका था, सैपियन्स मानुष स्पीशिज़ के रूप में अपना सुदीर्घ शैशव समाप्त कर चुका था। जैसा कि अन्य शिशुओं के साथ होता है, उसका सारा समय और प्रयत्न भोजन, गर्मी और आधारभूत अनुभव पाने में लगा रहा था और उसका अधिकाँश व्यौहार (लेन-देन) अपने कुटुम्ब के दायरे तक ही सीमित था। अब तक उसका जीवन सांस्कृतिक कम और जैव अधिक रहा था। कारण यह है कि अन्य पशुओं की भाँति उसके विषय में भी परिवेश (आस-पास की परिस्थितियों) ने ही यह निर्धारित किया था कि वह कहाँ रहे और उसकी संख्या कितनी रहे।

फिर भी प्लीस्टोसीन काल के भूमि पर रहने वाले सब प्राइमेटों (वानरों) में वही सबसे अधिक संस्कृत था। वह अपनी भौंडी माँस-पेशियों को अपने संवेगों के अनुसार चलाने लगा था और उसने सहकारी प्रयत्न, नेतृत्व, टोली में मिलकर काम करने और वृद्धों तथा रोगियों की सेवा द्वारा अपनी शक्ति को बढ़ाना सीख लिया था। जब उसे पशु-बहुल मैदानों में जाने का मौका मिला, तो उसे दुर्बलता से भी बल प्राप्त हुआ, क्योंकि बूढ़े और अपंग लोग शिविर में आग के पास बैठकर शिकारी के लिए शस्त्र और वस्त्र तैयार करने लगे।

इस काम को दूसरे लोगों को सौंपकर अब शिकारी अपना अधिक समय

शिकार की खोज में लगा सकता था और औजार-निर्माता तथा खालों के वस्त्र बनाने वाले लोग अपनी तकनीकों को सुधारकर निर्दोष बना सकते थे। अब भी मनुष्य को भोजन प्राप्त करने के लिए शारीरिक दृष्टि से लगभग जी-जान से प्रयत्न करना पड़ता था, परन्तु अब उसका प्रतिफल पहले की अपेक्षा कहीं अधिक था। वह कम प्रयत्न से अधिक फल प्राप्त करना सीख रहा था। न केवल उसके शस्त्र और वस्त्र अब पहले से अच्छे थे, अपितु अब उसने बहुत समय बाद यह बात खोज निकाली थी कि पशु-बहुल शिकार क्षेत्रों में शीत काल में भी किस प्रकार उन स्थानों पर जीवित रहा जा सकता है, जो पहले सर्दी के कारण उसके लिए बन्द थे। मानवीय इतिहास की दूसरी प्रावस्था के आरम्भ में, जो कुशल शिकारी और चिकित्सक का युग थी, मनुष्य का जीवन पहले की अपेक्षा कम संकटमय हो गया था और उसमें संस्कृति और जीव विज्ञान में बढ़िया सन्तुलन स्थापित हो गया था।

मनुष्य सारी पृथ्वी पर फैल गया और एक स्पीशीज़ बन गया

उस समय पहले-पहल मानव प्राणियों के पास उन पशु-बहुल शिकार के मैदानों में जाने के लिए अपेक्षित तकनीकी कौशल आ गया था, जो हिमाच्छादन की बर्फ़ के निचले किनारे पर फैले हुए थे। यह हिम 'पुरानी दुनिया' में स्कैंडिनेविया तथा बाल्टिक प्रदेशों में केन्द्रीभूत था। मनुष्यों को सर्दी का सामना इससे पहले भी करना पड़ा था, किन्तु वे वस्तुतः उस पर विजय नहीं पा सके थे। सिनान्थ्रोपस उत्तरी चीन की सर्दियों में रहकर भी जीता बच गया था, किन्तु वह साइबेरिया में नहीं बस सका था। बाद में नियंडरथल लोगों ने भी पूर्वी यूरोप की काटती हुई सर्दी से दूर रहने का ही यत्न किया था।

जिस सर्दी ने यूरोपवासी नियंडरथल लोगों को परास्त कर दिया था, वह आर्द्र (गीली) सर्दी थी, जो सबसे भयंकर प्रकार की सर्दी होती है। वूर्म हिमाच्छादन की अवधि में फिर दो बार सर्दी उत्तर की ओर से नीचे की ओर बढ़ी, परन्तु वह सूखी सर्दी थी। शीत की इन चरम सीमाओं के बीच में मौसम कुछ थोड़ा-सा सुधरा। इसके फलस्वरूप तरुहीन उत्तरी ध्रुव के निर्जन अंचल, जो हिम के चारों ओर फैले हुए थे, उत्तर की ओर हट गए और उनके पीछे-

पीछे झाऊ (स्प्रूस) और गुल मेंहदी (बालसम) के जंगल उगे और उसके बाद बाँज (ओक) और प्रभूर्ज (ऐश) उगे, जो पश्चिमी यूरोप के जंगलों में आज भी उगते हैं। बर्फ़ के किनारे वाले भाग पर पिघला हुआ पानी भूमि में पैठने लगा और उससे घनी वनस्पतियों की, विशेष रूप से फर्नों की एक संकरी पट्टी तैयार हो गई, जिससे आकर्षित होकर रेनडियर और अनगिनत कृन्तक प्राणी (रोडेण्ट) वहाँ आने लगे, जिससे वे बर्फ़ के पिघलने से नरम हुई मिट्टी में बिल खोदकर रह सकें। भालू बेरों और कृन्तक प्राणियों, दोनों को खाने के लिए वहाँ आने लगे और मनुष्य सब प्रकार के प्राणियों का शिकार करने के लिए वहाँ पहुँचने लगे।

यह ग्रीष्म काल का बहुत ही बढ़िया शिकार होता था। जो शिकारी ग्रीष्म ऋतु में इतने सारे पशुओं को मार कर उनका माँस इकट्ठा कर लेते थे, उन्हें सर्दियों में उसके पास ही टिकना पड़ता था, क्योंकि तुषार रेखा इतनी अधिक दूर थी कि जब मौसम बदलने लगे, तो वे वहाँ से अपने शरण स्थल तक नहीं पहुँच सकते थे। दूर टुण्ड्रा में मैमथों (महा हस्तियों) के यूथ थे, जिनमें से प्रत्येक प्राणी कई-कई टन भारी होता था। इन प्राणियों में से किसी एक की भी लाश समूचे शिविर के कई सप्ताह के भोजन के लिए काफी थी। किन्तु यह तभी हो सकता था, जबकि शिकारी और उनके परिवार किसी प्रकार अपने आपको सर्दी में जमने से बचा सकें। जंगली घोड़ों और रेनडियरों के रेवड़ों से भी इतनी ही मात्रा में माँस मिल सकता था, किन्तु इन प्राणियों का आकार अपेक्षाकृत छोटा था। वहाँ रह पाने का प्रतिफल यह था कि बढ़िया भोजन प्रचुर मात्रा में मिल सकता था, किन्तु समस्या यह थी कि सर्दी में जीवित किस प्रकार रहा जाय। अधिकाँश स्थानों पर ईंधन के लिए लकड़ी तो थी, किन्तु शिकारी शिकार पर जाते समय अपने साथ आग नहीं ले जा सकता था। उसे गर्म कपड़ों की आवश्यकता थी और इन्हें बनाने के लिए उसे नये औज़ारों की ज़रूरत थी। इन औज़ारों का या तो उसने स्वयं आविष्कार किया, या दूसरों की नकल करके—हमें पता नहीं कि उसने किन की नकल की—बना लिया और उसकी समस्या हल हो गई।

उसके बाद जो समय आया, उसमें सब लोग पहले की ही भाँति शिकारी थे। यह काल लगभग 35 हज़ार ई० पू० से शुरू हुआ, जब हिमाच्छादन की

परत पहली बार आधी वापस लौट चुकी थी, और 7 हज़ार ई० पू० में, जबकि कृषि का आविष्कार हुआ था, यह समाप्त हो गया । लगभग 8 हज़ार ई० पू० में बर्फ़ की परत अब तक अन्तिम बार पिघली और तभी प्लीस्टोसीन काल समाप्त हो गया । जो लोग बर्फ़ से जमे हुए प्रदेशों पर प्रथम सफल आक्रमण और हिम की समाप्ति के बीच के काल में रहते रहे, उनकी संस्कृति 'उपरि पुरापाषाणिक संस्कृति' कहलाती है और हिम की समाप्ति से लेकर कृषि का आरम्भ होने के बीच के काल में रहने वाले लोगों की संस्कृति 'मध्य पाषाणिक संस्कृति' कहलाती है । संसार के उन भागों में, जहाँ कि कृषि का आविष्कार हुआ था, मध्य पाषाण काल बहुत संक्षिप्त सा रहा; परन्तु जहाँ कृषि को पहुँचने में अधिक देर लगी, वहाँ मध्य पाकाण काल कई हज़ार वर्षों तक बना रहा और कुछ स्थानों पर तो यह अब भी चल रहा है ।

उपरि पुरा पाषाणिक संस्कृति के काल की अवधि में और मध्य पाषाणिक काल में 6 हज़ार ई० पू० से पहले मानव-प्राणियों ने पहले-पहल यूरेशियाई महाद्वीप के विशाल आन्तरिक भाग पर उत्तरी ध्रुव सागर तक कब्ज़ा कर लिया और बैरिंग जलडमरू मध्य (जल-संधि) को पार करके वे अलास्का पहुँच गए । वहाँ से उन्होंने शिकारों के पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए दक्षिण की ओर बढ़ना शुरू किया और वे दक्षिणी अमेरिका के दक्षिणतम छोर तक जा पहुँचे । जिन भागों तक पहुँचने में वे असमर्थ रहे, वे केवल उत्तर-पूर्वी कनाडा के तरुहीन उजाड़ मैदान और ग्रीनलैंड के समुद्र तट, अतलाँतक और प्रशान्त महासागर के मध्य में विद्यमान द्वीप और दक्षिणी ध्रुव महाद्वीप थे । इन भूभागों को विजय करने के लिए अभी और आविष्कारों की प्रतीक्षा करना आवश्यक था ।

इस तीव्र विस्तार के फलस्वरूप मनुष्य पृथ्वी के सब प्रकार की जलवायु वाले प्रदेशों में पहुँच गया । जैसा कि प्राणि-वैज्ञानिकों को भली-भाँति मालूम है, प्राणी की ऐसी किसी भी स्पीशिज़ को, जो नये जलवायु वाले प्रदेशों में जा पहुँचती है, नई दशाओं के अनुसार अपने आपको बदलना पड़ता है अन्यथा वह नष्ट हो जाती है । मनुष्य आवश्यकतानुसार अपने आपको बदल पाने में समर्थ था । इसका एक कारण यह भी रहा हो सकता है कि उसकी परिवर्तन की शक्यता उसके विस्तार काल में हुए जातियों के मिश्रण द्वारा बहुत अधिक बढ़ गई थी ।

इन विस्तारों को मनुष्यों की जिस जाति ने पहले पहल शुरू किया, वह काकेशियाई लोगों की उन्नत जाति थी। इन लोगों के माथे ऊँचे और ठोडियाँ खूब स्पष्ट थीं। उनका क्रम-विकास पश्चिमी एशिया में हुआ था और वहाँ से वे शिकारों के पद-चिह्नों से बने रास्तों का अनुसरण करते हुए यूरोप में जा पहुँचे थे। वहाँ उन्होंने नियंडरथल लोगों को समाप्त करके, सम्भाव्यतः अंशतः उन्हें अपने में मिलाकर उनका स्थान स्वयं ले लिया। उसके बीस हज़ार वर्ष बाद इसी प्रकार के लोग उत्तरी अफ्रीका और पूर्वी अफ्रीका में भी जा पहुँचे।

पूर्णतया विकसित मंगोल लोग भी चीन में अपने निवासस्थान से चलकर दो दिशाओं में फैल गए। उत्तर की ओर वे प्रशान्त महासागर-तटवर्ती हिमरहित स्थानों में से होते हुए बेरिंग जलडमरूमध्य तक जा पहुँचे और सूखी भूमि पर चलते हुए वे उसे पार करके अमेरिका पहुँच गये। ऐसा प्रतीत होता है कि बेरिंग जलडमरूमध्य तक पहुँचने से पहले उनकी भेंट उन कुछ काकेशियाई शिकारियों से हुई थी, जो पश्चिम की ओर से पर्वतों को पार करके आ गए थे; वे आमूर नदी के इलाके में दूर तक घुस चुके थे और उसे पार करके सखालिन द्वीप और होकाइदो तक पहुँच गए थे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने आइनू जाति को जन्म दिया। इस आइनू जैसे काकेशियाई तत्व का कुछ अंश अमरीकी आदिवासियों की जातीय गठन में भी प्रविष्ट हो गया। दक्षिण की ओर मंगोल लोग दक्षिण-पूर्वी एशिया और इण्डोनेशिया में जा पहुँचे। वहाँ उनका उन स्थानों के मूल निवासी आस्ट्रेलियाई लोगों से मिश्रण हुआ और उन्होंने आस्ट्रेलियाई लोगों को पूर्व की तरफ न्यूगिनी और आस्ट्रेलिया की ओर धकेल दिया।

इन काकेशियाई और मंगोल विस्तारों के फलस्वरूप 'नई दुनिया' में लोग बसे और 'पुरानी दुनिया' के भूमध्य रेखा के निकटवर्ती और उससे दक्षिण की ओर के भागों में ऐसी नई जातियों के लोग पहुँच गए, जिनमें रक्त का बहुत मिश्रण हुआ था। इस प्रकार सैपियन्स मानुष की दो सबसे अधिक उत्तर की ओर रहने वाली और सबसे पुरानी जातियाँ अपने मूल निवासस्थानों से निकल कर दूर-दूर तक फैल गईं, यहाँ तक कि वे, और जिन लोगों को उन्होंने उनके निवासस्थानों से खदेड़ दिया था, वे पृथ्वी के हिमरहित अधिकांश भाग पर छा गए। केवल तरुरहित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उजाड़ प्रदेश ग्रौर समुद्र से घिरे हुए द्वीप उनसे बचे रह गए। इन विस्तारों उद्व्रजनों के फलस्वरूप कुछ लोगों ने ग्रन्य लोगों को ग्रपने ग्रन्दर खपा लिया ग्रौर इनके फलस्वरूप कई जातियों के जनन-ग्राधार विस्तृत हो गए ग्रौर इस प्रकार मनुष्य ज्यों-ज्यों नये परिवेशों में पहुँचता गया त्यों-त्यों उनके वरण के लिए शरीर-रचनात्मक ग्रौर शरीर-क्रियात्मक सम्भावनाएँ पहले की ग्रपेक्षा कहीं ग्रधिक हो गईं। विश्व प्राणी के रूप में उसकी सफलता का श्रेय ग्रंशतः इन परिवर्तनों को भी दिया जा सकता है। इसके द्वारा मनुष्य के विश्व के एकीकरण में पहली सीढ़ी तय कर ली गई।

इन वक्तव्यों के लिए प्राथमिक साक्ष्य ग्रनेक पुरातत्व सम्बन्धी रिपोर्टों ग्रौर गुफाग्रों तथा उस काल के ग्रनावृत स्थानों में बने शिविरों में पाई गई सैकड़ों खोपड़ियों तथा ग्रन्य हड्डियों के विवरणों से प्राप्त हो सकता है। इस काल के सम्बन्ध में साक्ष्य इससे पहले के कालों की ग्रपेक्षा कहीं ग्रधिक पूर्ण है, क्योंकि उस समय लोग ग्रपेक्षाकृत ग्रधिक थे ग्रौर क्योंकि वे ग्रपेक्षाकृत ग्रधिक विस्तृत भौगोलिक ग्रभिसीमा में फैले हुए थे ग्रौर क्योंकि उन्होंने ग्रपने मृतकों को दफनाने में ग्रधिक परिश्रम किया था। स्वभावतः इस साक्ष्य का ग्रधिकांश भाग यूरोप से प्राप्त होता है, क्योंकि पुरातत्व का ग्रध्ययन वहीं शुरू हुग्रा था। परन्तु प्रतिवर्ष ग्रफ्रीका, मध्य पूर्व ग्रौर ग्रमेरिका से भी ग्रधिकाधिक जानकारी प्राप्त हो रही है।

स्वयं यूरोप में भी उपरि पुरा पाषाण युग की सामग्री का ग्रधिकांश भाग फ्रांस से प्राप्त हुग्रा है ग्रौर फ्रांस में खुदाई की सबसे बढ़िया जगह दोर्दोन की घाटी है। इस घाटी के मध्य में लेज़ीज़िये की पल्ली (गाँव) स्थित है, जो उपरि पुरा पाषाण युग के यूरोप की राजधानी थी ग्रौर इस समय सारे संसार के पुरातत्व-वेत्ताग्रों की काशी (पवित्रतम तीर्थ) है। दोर्दोन शिकारियों के लिए एक नैसर्गिक स्वर्ग था, क्योंकि यहाँ सफेद चूने की चट्टानों के बीच में चौड़े, हरे-भरे प्रपाती खड्ड दूर तक फैले चले गए हैं। किसी चट्टानी उभार पर बैठा हुग्रा ग्रवेक्षक (चौकसी करने वाला पहरेदार) घाटी में मीलों तक ऊपर ग्रौर नीचे की ग्रोर देख सकता था। ग्रतलांतक से ग्राने वाली ग्रार्द्र वायु के कारण शिकार के पशुग्रों के चरने के लिए पर्याप्त हरी-हरी कोपलें यहाँ होती थीं। उन पशुग्रों के दलों को ग्रवेक्षक पाँच मील दूर तक से पहचान सकता था। सीटी बजाकर

संकेत द्वारा या हाथ के इशारे से वह अपने नीचे खड़े साथियों को सही दिशा में धावा करने का संकेत कर सकता था और ऊँची चट्टानों की दीवारें बीच में फँसे हुए शिकारों को सब ओर से घेर लेने में सहायता देती थीं। शिकार पूरा हो चुकने पर उनकी लाशों को निकट ही स्थित गुफाओं में ले जाया जा सकता था, जहाँ ज़ोर से जलती हुई आग विजेता शिकारियों के स्वागत के लिए तैयार रहती थी। इन चट्टानों की दीवारों में ही औज़ार-निर्माता के लिए चकमक प्रभूत मात्रा में उपलब्ध था। गुफा के बाहर शीतल जल की एक धारा बहती थी। उन दिनों में, या अन्य किन्हीं भी दिनों में, मनुष्य इससे अधिक क्या आकांक्षा कर सकता था ?

लेज़ीज़िये जाने वाला दर्शक साइकिल या मोटर बस द्वारा यात्रा करके, या पैदल ही क्रोमैगनन, ल मूस्तिये, लौगैरी हौत, लौगैरी बास्से और लास्को जैसी विश्व-विख्यात गुफाओं तक पहुँच सकता है। इन गुफाओं में वे विख्यात गुहा-चित्र देखे जा सकते हैं, जो कम से कम पिछले सोलह हज़ार वर्षों से पचास डिग्री फारेनहाइट के आसपास तापमान और लगभग सौ प्रतिशत की नमी के कारण चामत्कारिक रीति से सुरक्षित रहे हैं। इन चूने की चट्टानों में बनी गुफाओं के अन्दर इतना तापमान और इतनी नमी क्या दिन, क्या रात और क्या गर्मी, क्या सर्दी, सालों साल सदा एक-सी बनी रहती है।

इन गुफाओं के मुखाग्र भाग में वे कटाव भी देखे जा सकते हैं, जो फ्रांसीसी, अमेरिकी, अंग्रेज और जर्मनवासी दर्जनों पुरातत्ववेत्ताओं ने फर्श के निक्षेपों की खुदाई करते समय काटे हैं। इन पुरातत्ववेत्ताओं ने एक के बाद एक मिली तहों में पाये औज़ारों के प्रकारों में अन्तर के फलस्वरूप 'संस्कृतियों' का एक ऐसा जटिल अनुक्रम खोज निकाला है, जो लेज़ीज़िये में तो प्रत्येक विद्यालय के छात्र तक को कण्ठस्थ है और जिसे याद करना अमरीका के कालेज के छात्रों को भी कठिन जान पड़ता है।

सबसे निचली तलों में सामान्यतया मिट्टी की वह परत है, जिसमें नियंडरथल मानव द्वारा छोड़ी गई हड्डियाँ और चकमक पाये गए हैं। इसके ऊपर कुछ स्थानों पर एक बंजर तह है, जो प्रथम वूर्म हिमाच्छादन के बढ़ाव की चरम सीमा की अवधि के दिनों की सूचक है। उसके बाद उपरि पुरा पाषाण संस्कृतियों की, जिन्हें पैरीगोर्डियन और औरिगनेसी संस्कृतियाँ कहा जाता है,

एक परस्पर सम्बन्धित शृंखला मिलती है,[1] जो हमें द्वितीय वूर्म हिमाच्छादन की सूखी सरदी के चरम शिखर के काल तक, अर्थात् अब से लगभग 25 हज़ार वर्ष पहले तक, ले आती है। यह वह काल था, जब मनुष्य पहले-पहल इस प्रकार के तापमानों में रहकर भी जीता बच पाने में समर्थ हुआ था। इन निक्षेपों में पाये गए सैकड़ों आरे और सुइयाँ इस बात की सूचक हैं कि वह गर्म खालों से बने हुए वस्त्र पहनता था। दसियों हज़ार तोड़ी हुई हड्डियाँ इस बात की सूचक हैं कि वह माँस को उबालता था और हड्डियों में से मज्जा चूसता था। रेनडियरों के वे हज़ारों सींग, जो सबके सब वृद्धि की एक ही अवस्था में हैं और खोपड़ी से एक ही ढंग से तोड़ कर अलग किये गए हैं, इस बात के सूचक हैं कि वह अपनी गुफाओं और चट्टानी शरणस्थलों का निवासस्थान के रूप में उपयोग केवल शीत काल में ही किया करता था।

यदि हमारी गुफा का अनुक्रम पूर्ण हो, तो उससे ऊपर की परत तथाकथित सोलूतरी युग की होगी, जब मैमथ (महाहस्ति) का शिकार अपने चरम शिखर पर था। इस काल में मध्य यूरोप के मैदानों के साथ-साथ जिसमें चैकोस्लोवाकिया और रूस भी सम्मिलित थे, फ्रांस को भी मैमथों (महाहस्तियों) का प्रधान देश होने का गौरव प्राप्त था। वहाँ भूमि के अन्दर से पूरे गाँव के गाँव खोद निकाले गए हैं, जिनमें मकानों की पंक्तियाँ बनी हुई हैं, मैमथों की हड्डियों के ढेर हैं, और कब्रें हैं, जिनमें दर्जनों कंकाल हैं। मकान भूमि के नीचे बनाये गए थे, जिससे शीत ऋतु की सर्दी से बचाव हो सके और छतें लकड़ी के शहतीरों या मैमथों की हड्डियों के ऊपर टिकी हुई हैं। फ्रांस, चैकोस्लोवाकिया तथा अन्य स्थानों पर सोलूतरी संस्कृति का प्रधान चिह्न चकमक का एक लम्बा, पतला, पत्ते की आकृति का फलक है, जिसका दोनों पार्श्वों पर बढ़िया ढंग से अनुशोधन (पैना करना) किया गया है और जो एक बढ़िया कुठार की भाँति दोनों ओर से सममित है।

---

[1] सम्पूर्ण फ्रांसीसी अनुक्रम के लिए ऐच. ऐल. मोवियस, जूनियर का 'रेडियोकार्बन डेट्स एण्ड अपर पेलियोलिथिक आर्कियोलौजी इन सेंट्रल एण्ड वैस्टर्न यूरोप' (रेडियो कार्बन द्वारा काल-निर्धारण तथा मध्य एवं पश्चिमी यूरोप में उपरि पुरापाषाण युग का पुरातत्व), करैंट ऐन्थ्रोपोलौजी, खण्ड 1, अंक 5—6,1960, पृष्ठ 355-91 देखिये।

अब हम फिर फ्रांस की ओर आते हैं। अब यहाँ हमें जो अगली तह मिलती है, वह सूखी सर्दी के तीसरे चरम शिखर के काल की है—जो हिमनद की अन्तिम बार वापसी तक बना रहा। यह मगदेली काल है, जिसमें उजाड़ मैदानों में और सनोवर (स्पूस) के जंगलों के छोरों पर रेनडियरों का शिकार किया जाता था। हड्डियों तथा शृंगों के बने हुए कुछ विशेष प्रकार के हार्पून (काँटेदार बर्छे) मगदेली काल के विशेषतासूचक नमूने हैं। जब रेनडियर उत्तर की ओर वापस लौटे, तब मगदेली काल के शिकारी भी उनका पीछा करते हुए उत्तर की ओर चले गए और फ्रांस में, जिसमें अब बांज और प्रभूर्ज (ऐश) के जंगल थे, कुछ नये लोग आ गए। वे दक्षिणी देशों से मध्य पाषाण युग की संस्कृति लेकर आये और पुरा पाषाण युग के बचे हुए लोगों से मिल गए।

फ्रांसीसी उपरि पुरा पाषाण युग का अनुक्रम ऊर्जा की किसी नई विजय का सूचक नहीं है और न उसकी अवधि में गुफा चित्रों के सिवाय कोई उल्लेखनीय आविष्कार ही हुए; और ये गुफा चित्र भी उस काल की सब संस्कृतियों में नहीं पाये जाते। इसलिए विश्व इतिहास के दृष्टिकोण से इस अनुक्रम की बारीकियाँ महत्त्वहीन हैं। किन्तु व्यवसायी पुरातत्ववेत्ता के लिए वे महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि उनमें पायी जाने वाली घट-बढ़ या फेर-फार के आधार पर वह संसार के उन अन्य स्थानों पर, जहाँ कि खुदाई अपेक्षाकृत कम हुई है, उनमें से प्रत्येक का मूल खोज निकालने और सारे संसार के लिए चतुर्थ अर्थात् वूर्म हिमाच्छादन काल की एक समय-सूची तैयार कर पाने की आशा कर सकता है।

चतुर्थ हिमाच्छादन की अवधि में फ्रांस बसे हुए संसार के छोर पर स्थित था। यह एक सर्वविदित सिद्धान्त है कि छोर पर बसे हुए क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के उन जीवित प्राणियों के आने और जाने का, जिनका कि मूल-स्थान अन्यत्र कहीं होता है, एक जटिल-सा नमूना (प्रणाली) दिखाई पड़ता है और उपरि पुरापाषाण-कालीन फ्रांस भी इसका अपवाद नहीं था। उपरि पुरा पाषाण युग के फ्रांस के आदितम निवासियों के प्रतिनिधि रूप में केवल एक अस्थि कंकाल है, जो कौम्बकैपले में मिला है और उसके निम्नतर पैरीगोर्डियन औजार भी मिले हैं। इसका काल वूर्म 1 और वूर्म 2 के बीच का उष्णमध्यान्तर (इण्टर-स्टैडियल) निर्धारित किया गया है। कौम्ब कैपले एक मध्यम कद का और

पतला मनुष्य था। उसके हाथ पैरों की हड्डियाँ और खोपड़ी यूरोपियन ढंग की थीं। उसका चेहरा लम्बा था, उसकी नाक उभरी हुई थी और उसकी नाक की हड्डियाँ सम्भाव्यत: जीवन के प्रारम्भिक भाग में टूट जाने के कारण झुकी हुई थीं। उसे आसानी से आधुनिक यूरोपवासी व्यक्ति समझा जा सकता है।

वूर्म हिमाच्छादन की शेष अवधि में यूरोप में इससे मिलते-जुलते लोग बसते रहे। इस बात को प्रमाणित करने के लिए हमारे पास पचास से अधिक अस्थि कंकाल हैं।[1] इनमें से कुछ लोग लम्बे थे, कुछ अन्य ठिगने थे और अधिकांश हड्डियाँ इस बात की गवाही देती हैं कि वे लोग घर से बाहर उत्साहमय जीवन बिताते थे। किसी भी जनसमुदाय के सदस्यों की भाँति इन खोपड़ियों में व्यक्तिशः परस्पर भिन्नता है; परन्तु औज़ारों की शैलियों में पाये जाने वाले परिवर्तनों के बावजूद, जिन्हें फ्रांसीसी पुरातत्ववेत्ताओं ने अनेक 'उद्योगों' (इण्डस्ट्री) में विभक्त कर लिया है, ये लोग हैं एक ही। इनमें सबसे अधिक विख्यात लेज़ीज़ियें के निकट स्थित क्रोमैगनन का वृद्ध पुरुष है। वह लगभग 6 फुट ऊँचा और पुष्ट माँसपेशियों वाला व्यक्ति था। उसका सिर बड़ा, ठोड़ी ऊबड़-खाबड़ और चेहरा चौड़ा और आँखें गहरी थीं। वह देखने में एक चौड़े चेहरे वाले आयरलैंडवासी जैसा दिखाई पड़ता होगा।

हमें इन लोगों की आकृतियों के विषय में उससे कहीं अधिक मालूम है, जितना कि हड्डियों से पता चलता है, क्योंकि उन्होंने छोटी-छोटी प्रतिमाएँ, अर्ध्युच्चित्र (बास रिलीफ), दीवार-नक्काशी और भित्ति-चित्र बनाये हैं, जिनमें मानव प्राणियों का अंकन है। सर्दी के बावजूद वे लोग सामान्यतया नग्न दिखाये गए हैं। स्त्रियाँ लगभग सभी मोटी हैं। उनकी चर्बी ठीक उसी नमूने पर बँटी है, जैसी कि यूरोपियन जाति की आजकल जीवित मोटी स्त्रियों के शरीर में दिखाई पड़ती है। कुछ एक प्रसामान्य (नार्मल) हैं, जैसी कि ला मगदेलीन में एक गुफा की दीवार पर नक्काशी की गई एक स्त्री की तस्वीर है (देखिए पृष्ठ 142)। मनुष्यों के चेहरे काकेशियाई हैं, जिनकी नाकें उभरी हुई हैं; उनके दाढ़ियाँ हैं और त्वचा का रंग सफेद है।

---

[1] देखिये सी. ऐस. कून की पुस्तक 'दि रेसिज़ ऑफ़ यूरोप', दि मैकमिलन कम्पनी न्यूयार्क, 1939।

तीन अस्थि कंकालों को गैर काकेशियाई बताया जाता है। मोनाको के निकट ग्रिमाल्दी में अपेक्षाकृत कुछ पहले के गड़े हुए एक माता और उसके शिशु के कंकाल को नीग्रो जातीय बताया गया है। इसका मुख्य कारण यह है कि बच्चे के छेदन दन्त (काटने वाले दांत) अन्दर की ओर उद्रेख युक्त हैं, जैसे कि नीग्रो लोगों के होते हैं। मैं इसे उपरि पुरा पाषाण युग के जन समुदाय की एक प्रसामान्य परिवर्तनशीलता का अंश समझता हूँ। चांसलैड में मिली एक अन्य सब दृष्टियों से सामान्य मगदेली खोपड़ी को केवल इसलिए ऐस्किमो जातीय बताया गया है, क्योंकि उसके जबड़ों की माँसपेशियाँ भारी थीं।

उत्तरी अफ्रीका के काकेशियाई आक्रमणकारियों के भी लगभग इतनी ही संख्या में अस्थि कंकाल मिले हैं, जिनमें से 28 अस्थि कंकाल अल्जीरिया की एक गुफा अफालू बू रूमेल से मिले हैं। इनमें से क्रमांक 28 कंकाल, जो सबसे पुराना है और जो बिलकुल तली में पड़ा हुआ था, एक पतले चेहरे वाली स्त्री का है, जो कौम्ब कैपले से मिलता-जुलता है। परन्तु कौम्ब कैपले इस स्त्री की अपेक्षा बीस हज़ार वर्ष पुराना था। अन्य लोग बड़े, वर्गाकृति चेहरे वाले, ऊबड़-खाबड़ लोग थे, जो बहुत कुछ क्रोमैगनन जैसे और आजकल पाये जाने वाले कुछ 'बर्बरों' (मोरक्को वासी एक जाति) जैसे थे।

इन यूरोपवासियों और उत्तरी अफ्रीकावासियों का मूल उद्गम, जो बहुत समय तक एक रहस्य बना रहा था, अब कुछ स्पष्ट होने लगा है और उसकी कुँजी है—फिलस्तीन, लेबनान और सीरिया में खोदकर निकाले गए चकमक और कंकाल। प्रथम वूर्म के काल में, जो भूमध्यसागर के निकट हल्का शीतल तो था, किन्तु बहुत ठण्डा नहीं था, आबादियों का यह परिवर्तन हुआ। सबसे पुरानी खोपड़ी एक नियंडरथल स्त्री की है, जो अल ताबून (चूल्हा) की गुफा में कारमेल पर्वत में पाई गई है। इसके निकट स्थित मुगारेत अल सखूल (मेमनों की गुफा) में संकोणाश्म (चूने पत्थर आदि के जमने से बनी चट्टान) में दबे हुए नौ कंकाल पाये गए थे। यद्यपि इनका काल वूर्म एक ही था, परन्तु वे ताबून की स्त्री की अपेक्षा 10 हज़ार वर्ष बाद के हैं। ये सखूल में पाये गए कंकाल केवल अंशतः नियंडरथल जातीय हैं। इनकी खोपड़ियाँ ऊँची मेहराबों वाली थीं और गोलाकार थीं, यद्यपि उनके चेहरों के प्रत्यंग सारतः आधुनिक थे। उनमें से एक के, जो हारवर्ड में रखा हुआ सखूल क्रमांक 5 है, भारी-

भारी भौंहों के उद्रेख थे, माथा सीधा था, जबड़े बड़े-बड़े थे और एक ठोडी थी। यूरोप और उत्तरी अफ्रीका में पाई गई उपरि पुरा पाषाण युग की कुछ अधिकतम ऊबड़-खाबड़ खोपड़ियाँ उससे मिलती-जुलती हैं और वे सबकी सब उसके बाद की हैं। फिलस्तीन में जबल काफजा (कूदने का पर्वत) में पाई गई उसी काल की सात खोपड़ियों की एक और श्रृंखला है, जिसका अभी तक पूरा वर्णन नहीं किया गया है, परन्तु उनमें से एक खोपड़ी के जो फोटो लिए गए हैं, वे अपेक्षाकृत अधिक आधुनिक और सखूल क्रमांक 5 के कुछ कम पाशविक रूपान्तर दिखाई पड़ते हैं और वे उपरि पुरा पाषाण युग की अधिकांश खोपड़ियों से अधिक मिलते-जुलते हैं।

इस विषय में सन्देह की गुँजाइश नहीं है कि उपरि पुरा पाषाण युग के लोग या तो स्वयं फिलस्तीनवासियों के, या पश्चिमी एशिया में, किन्तु कुछ अधिक उत्तर की ओर, रहने वाले उनसे मिलते-जुलते किन्हीं अन्य लोगों के वंशज थे। परन्तु वूर्म 1 काल के फिलस्तीनवासी किनके वंशज थे? इस विषय में तीन सम्भवनाएँ सुझाई गई हैं। वे 'प्रगतिशील' पूर्वीय ढंग के स्थानीय नियंडरथलों से सीधे ही विकसित हो गए। वे नियंडरथलों और अन्य किन्हीं अज्ञात काकेशियाई लोगों के मध्य सम्मिश्रण से उत्पन्न हुए। उनके पूर्वज स्टीनहिम, स्वैन्सकौम्बी, फोन्तेश्वाद और अन्य आदिम यूरोपवासी थे, जो फिलस्तीन में रहते थे और वहीं विकसित हुए थे। फिलस्तीन वह प्रदेश था, जिस पर नियंडरथलों के आक्रमण केवल कभी-कभी होते थे। हमें पता नहीं कि इन तीन व्याख्याओं में से कौन-सी ठीक है, या कोई-सी भी ठीक है भी या नहीं।

उसके विस्तार और समेकन में सहायक औज़ार

उपरि पुरा पाषाणिक लोग अब भी औज़ार बनाने की मुख्य सामग्री के रूप में चकमक पर ही निर्भर थे। परन्तु अपने पूर्ववर्ती लोगों से उनमें यह अन्तर था कि उन्होने इस माध्यम अर्थात् चकमक पर अपने नियंत्रण को इतना अधिक परिष्कृत कर लिया था, जितना कि वह अधिकतम प्राकृतिक सीमा तक किया जा सकता है। आरम्भिक आरिगनेसी काल में वे उतने ही बढ़िया निर्दोष औज़ार बनाने लगे थे, जितने कि आधुनिक काल के जीवित आदिमकालीन

शिकारी बनाते हैं। प्लीस्टोसीन काल के शुरू में वे अपने आधारभूत काटने के औज़ार जिस भी प्रकार की सामग्री उनके हाथ लग जाती थी, उसी से बना लेते थे : उपल, क्वार्ट्ज़ाइट और फासिल लकड़ी और विभिन्न श्रेणियों और कोटियों का चकमक। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों वे चकमक का अधिकाधिक प्रयोग करने लगे। चकमक अनेक किस्मों का होता है और बढ़िया किस्म के चकमक का उन स्थानों से, जहाँ कि वह पाया जाता था, दूर-दूर तक व्यापार होता था। लाखों वर्षों की अवधि में पृथ्वी के उन भागों में, जहाँ कि मनुष्य बहुत लम्बे समय से रह रहे थे, बढ़िया चकमक की मात्रा कम और कम होने लगी। क्रोडों से ऐसे तरीके से शल्क उतारना आर्थिक दृष्टि से भला नहीं था कि किसी ग्रन्थि का 10 में से 9 भाग, और यहाँ तक कि आधा भाग भी, फेंक देना पड़े; और यदि चकमक का बहुत-सा अंश बरबाद ही हो जाना हो, तो उसके बड़े-बड़े टुकड़ों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ढोकर ले जाने में कोई तुक नहीं थी।

आरम्भिक उपरि पुरा पाषाण काल के शिकारियों के सम्मुख औज़ार बनाने के लिए चकमक के कोरे टुकड़े तैयार करने का कोई और बढ़िया उपाय खोजने की आवश्यकता बिलकुल स्पष्ट थी और शायद वह बहुत तीव्र भी थी। कुठार काल के सांस्कृतिक स्तरों पर कभी-कभी चकमक का कोई ऐसा टुकड़ा मिल जाता है, जो अपनी क्रोड से इस ढंग से तोड़कर उतारा गया था कि उसकी मोटाई लगभग एक समान थी और उसके दोनों पार्श्व एक दूसरे के समानान्तर थे। इस प्रकार के टुकड़े को पुरातत्ववेत्ता फलक (ब्लेड) कहते हैं। सामान्य शल्कों की अपेक्षा इस फलक का लाभ यह है कि इसको और अधिक गढ़े बिना इसका चाकू के रूप में उपयोग किया जा सकता है, या अनुशोधन करके इसे अलग-अलग प्रयोजनों के लिए एक दर्जन विशिष्ट आकृतियों में से किसी भी एक में गढ़ा जा सकता है। जहाँ-तहाँ हल्की-हल्की चोटें करके उसे एक खुरचनी बनाया जा सकता है, जो खाल के अन्दर से माँस के अन्तिम सिरों को साफ़ करने के लिए उपयुक्त हो। एक धार पर हल्की-हल्की चोटें मारने से एक धार खुंडी हो जाएगी, जिससे उस फलक को चाकू के तौर पर तर्जनी उँगली और अंगूठे के बीच में पकड़ा जा सकता है। इसके पार्श्वों को थोड़ा अवतल (नतोदर) बना देने से वह बढ़ई (लकड़ी का काम करने वाले कारीगर)

के यहाँ बर्छे के डंडों को छीलने के रन्दे के रूप में काम आ सकता है और यदि वह उसके एक सिरे को नोकीला बना ले, तो वह उससे बरमा बना सकता है।

कभी-कभी संयोगवश जब शल्क बनाने की प्रक्रिया में उनसे यों ही कुछ थोड़े-से फलक बन गए होंगे, तब उन्होंने इस प्रकार के औज़ार बनाए होंगे। ऐसा प्रायश: नहीं होता था, क्योंकि उन्हें यह पता नहीं था कि इस प्रकार के फलक जान-बूझ कर किस प्रकार तैयार किये जा सकते हैं। किसी ने किसी स्थान पर कभी इस बात को खोज निकाला कि चकमक की क्रोड को नलिकाकार आकृति में बना पाना और उसके बाद उसकी परिसीमा पर हथौड़ा और चकमक की सतह के बीच में एक सींग या हड्डी की छेनी रखकर कुशलतापूर्वक एक के बाद एक चोट करके एक के बाद एक फलक उतारते जाना सम्भव है। शिकारी अपने साथ इस प्रकार की एक फलक-क्रोड ले जा सकता था और तब उसे यह भरोसा रह सकता था कि यदि उसके फलक टूटते गए, तो उनकी जगह काम चलाने के लिए उसे 10 से 20 तक अन्य अच्छे फलक मिल सकेंगे।

हमें सबसे शुरू के जिन फलकों का पता है, वे वूर्म 1 की अवधि में फिलस्तीन, लेबनान और सीरिया में बने थे। वे कई स्थलों पर शल्क औज़ारों के साथ पाये जाते हैं। धीरे-धीरे ही फलकों की संख्या शल्कों की संख्या से अधिक होती है। वूर्म 1 और 2 के मध्य की अवधि में एक सच्ची फलक संस्कृति उत्पन्न हो चुकी थी। दक्षिण-पश्चिमी ईरान में हाल ही में किये गए एक सर्वेक्षण से भी इसी प्रकार के शल्कों से फलकों के विकास का पता चला है। हो सकता है कि फलक बनाने की विधि पश्चिमी एशिया से कृष्ण सागर के तट तक हिमाच्छादनों के मध्यान्तर काल में या तो तुर्की समुद्र तट से बास्पोरस होकर, या पहाड़ों के ऊपर से ले जाई गई हो। दक्षिणी रूस में यूरोपीय उपरि पुरा पाषाणिक संस्कृतियाँ इस निकटपूर्वीय नमूने से विकसित हुई हो सकती हैं। पुरातत्वीय इतिहास की इस रूपरेखा की पुष्टि ऊपर उल्लिखित 'उपरि पुरा पाषाणिक मनुष्यों का मूल स्थान पश्चिमी एशिया में होने के' सिद्धान्त से होती है और इससे वह सिद्धान्त भी पुष्ट होता है।

यदि फलक निर्माण के आविष्कार से केवल इतना ही हुआ होता कि चकमक की बचत हुई होती और सब काम निकाल देने वाला एक कोरा औज़ार तैयार हुआ होता, तो इस बात की सम्भावना कम ही है कि उपरि पुरा

पाषाणिक मनुष्य यूरोप के अपेक्षाकृत ठंडे भागों में रह पाने में, उत्तर-पूर्व की ओर बढ़कर एशिया पहुँच पाने में और अपनी आश्चर्यजनक कला का सृजन कर पाने में समर्थ हुए होते। इन घटनाओं की शृंखला का सूत्रपात एक और ही विशेष औज़ार के बन जाने के फलस्वरूप हुआ। वह औज़ार था—तक्षणी (ब्यूरिन)। यह एक प्रकार की छेनी या नक्काशी करने का औज़ार था, जिसके कारण सींगों, शृंगों और हाथी दाँत के गौण औज़ार बना पाना ठीक उसी प्रकार सम्भव हुआ, जिस प्रकार आधुनिक खराद (लेथ) परिचालक के रुखानी (छेनी) उसे अपनी मशीनों के लिए आवश्यक दंड (छड़ें) तैयार करने में समर्थ बनाती है।

तक्षणी की सफलता इस तथ्य में निहित है कि औज़ार बनाने की सामग्री की दृष्टि से चकमक में जो एक दोष था, यह उस पर विजय पा लेती है। चकमक के इसी गुण के कारण, कि जब वह किसी हड्डी से टकराता है, तो टूट जाता है, वह हड्डियों को गढ़ने के औज़ार बनाने की दृष्टि से घटिया सामग्री सिद्ध होता है और यही बात शृंगों और हाथीदाँत के औज़ार बनाने के सम्बन्ध में भी लागू होती है। यही कारण है कि हमें निम्न और मध्य पुरा पाषाणिक स्थलों पर जो थोड़े-से हड्डियों के बने औज़ार मिले हैं, वे बड़े भद्दे (अपरिष्कृत) हैं और समस्थानीय लकड़ी के टुकड़ों की अपेक्षा कुछ अधिक अच्छे नहीं हैं। तक्षणी एक प्रकार की छेनी होती है, जो धार के पतले सिरे की ओर से काटती है, और फलक का चौड़ा अंश धार को गहराई में सहारा देने के लिए रहता है। यह टूटने से पहले हड्डी, शृंग या हाथीदाँत को काफी समय तक काटती रह सकती है। फलक के चौड़े पार्श्व की ओर बनाई गई छेनी काटते हुए शायद तुरन्त ही टूट जाय।

तक्षणी को बनाना एक सीधी-सादी, किन्तु नाजुक प्रक्रिया है। औज़ार निर्माता फलक को अपने एक हाथ में पकड़ता है और उस पर एक ही तीक्ष्ण, किन्तु हल्की चोट सिरे पर और एक पार्श्व की ओर को करता है। इस चोट से एक ज़रा-सा फलक टूटकर अलग हो जाता है और जहाँ वह चोट पड़ी होती है, उसके ऊपरी भाग में एक अवतलता (नतोदरता) बन जाती है, जो स्पष्ट पता चलती है। समकोण पर बनी वह धार, जहाँ कि चोट की गई थी, खूब तेज़ और मज़बूत होती है, क्योंकि फलक की सारी चौड़ाई उसे सहारा देने के

लिए रहती है। कोई भी औज़ार-निर्माता इस फलक का छेनी के तौर पर उपयोग करके एक खाँचा (गहरी लीक) बना सकता है और फिर भी उसका औज़ार टूटेगा नहीं। हड्डी और सींगों को वह मज्जा की खोखली नाली तक या स्पंजयुक्त अंश तक काट सकता है। हाथीदाँत पर इससे वह चाहे जैसी खुदाई कर सकता है।

एक विशेष प्रकार की छेनी द्वारा हड्डी, शृंग और हाथीदाँत को, जिनमें चकमक की अपेक्षा कई विशेष सुविधाएँ हैं, खोद कर वह चाहे जिस प्रकार के गौण औज़ार बना सकता है। इन सामग्रियों में चकमक की अपेक्षा एक सुविधा तो आकार की है। महाहस्ति (मैमथ) का दाँत इतना बड़ा होता है कि उससे कई फुट लम्बा उपकरण तैयार किया जा सकता है। एक और सुविधा लचक की है। जब कोई शिकारी एक बार हाथीदाँत या बारहसिंगे के सींग को खोद-खोदकर उससे हार्पून का फलक बना लेता है, तो उसके बाद वह फलक आसानी से टूटता नहीं, जबकि चकमक का बना हुआ उसी जैसा फलक हड्डी से पहली बार टकराते ही चूर-चूर हो जायेगा। यदि गहराई तक अन्दर घुस पाने का ही प्रश्न हो, तो उसकी नोक पर चकमक का एक छोटा-सा फलक लगाया जा सकता है और यदि वह फलक टूट जाय, तो आसानी से उसे बदला जा सकता है। हार्पून के फलक के शीर्ष भाग में तस्मा बाँधने के लिए औज़ार-निर्माता चकमक के बरमे से उसमें एक छेद कर सकता है।

इन सामग्रियों के उपयोग के कारण मनुष्य की बड़े-बड़े स्तनपायी प्राणियों का, न केवल महा-हस्तियों, घोड़ों और रेनडियरों का, अपितु समुद्र के सील और यहाँ तक कि ह्वेल मछली जैसे स्तनपायी प्राणियों का भी, शिकार करने की क्षमता बहुत अधिक बढ़ गई। बर्छे से आगे बढ़कर वह हार्पून तक पहुँच गया, जो समुद्र में शिकार करने के लिए आवश्यक था। बर्छे और हार्पून में अन्तर यह है कि बर्छे का शीर्ष भाग, अर्थात् फलक, उसके डण्डे के सिरे पर स्थायी रूप से जड़ा हुआ होता है, जबकि हार्पून का शीर्ष भाग, अर्थात् फलक, उसके दाँते शिकार प्राणी के शरीर में गड़ जाने के बाद डण्डे से अलग हो जाता है। हार्पून के शीर्ष भाग में एक तस्मा बँधा होता है, जिसे शिकारी अपने हाथ में पकड़े रहता है। डण्डा फलक से अलग होकर पानी में तैरने लगता है और उसे बाद में पकड़ा जा सकता है। बर्छे की अपेक्षा हार्पून में

सुविधा यह है कि हार्पून लगने के बाद जब प्राणी तड़पता हुआ छटपटाता है, तब डण्डे के टूट जाने की या फलक समेत शिकार के शरीर में से बाहर निकल आने की सम्भावना अपेक्षाकृत कम रहती है। डण्डा टूट जाने या उसके फलक समेत बाहर निकल आने, इन दोनों ही दशाओं में वह पशु बचकर भाग सकता है।

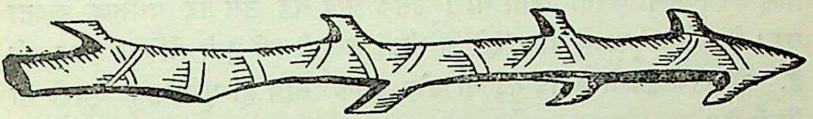

मगदेली काल के हार्पून का फलक

मगदेली काल में यूरोपवासी मनुष्य सील मछलियों का शिकार करने लगे थे और मध्य पाषाण काल में वे ह्वेल मछलियों का शिकार कर रहे थे। ठण्डे स्थानों में जीवन-यापन कर पाना सर्वप्रथम समुद्र में शिकार के काम आने वाले हार्पून के कारण नहीं, अपितु एक कहीं अधिक सरल आविष्कार के कारण सम्भव हुआ और वह आविष्कार था—हड्डी या हाथी दाँत की बनी हुई सुई। इस सुई द्वारा उपरि पुरा पाषाणिक पुरुष या उपरि पुरा पाषाणिक स्त्री गर्म खालों को सीकर ऐसे बढ़िया वस्त्र बना सकती थी, जिन्हें शिकारी ठण्डे मौसम में घर से बाहर पहन सकता था। इस प्रकार वह पृथ्वी के ठण्डे प्रदेशों में भी अपनी त्वचा और अपने वस्त्रों के मध्य के वायुयुक्त स्थान में कुछ घन फुट उष्ण कटिबन्ध का जलवायु ले जा सकता था और इस प्रकार वह पृथ्वीतल के उससे पहले न बसे हुए उन भागों में जा बसा, जिनमें कि जलाने के लिए लकड़ी थी। यह सब वह आविष्कारों की उस श्रृंखला के कारण कर पाने में समर्थ हुआ, जिसका आरम्भ तक्षणी से हुआ था और जो रूस और अमेरिका, दोनों में प्रवेश के लिए मनुष्य का पहला पारपत्र (पासपोर्ट) थी।

आविष्कारों की यह परम्परा इससे भी अधिक उपयोगी एक ऐसा तकनीक के लिए प्रवेश द्वार थी, जिसने बाद में इन आविष्कारों का स्थान ले लिया। जब हिमयुग का कोई कारीगर श्रृंग या हाथीदाँत का कोई औज़ार बनाता था, तब तक्षणी ही उसका एक मात्र औज़ार नहीं होती थी। तक्षणी से वह केवल इतना कर सकता था कि वह मोटे तौर पर वह जो आकृति बनाना चाहता है,

उसे बना ले; परन्तु उस औज़ार की सतह का परिष्कार करने के लिए और धार को पैनाने के लिए उसे किसी अपघर्षी वस्तु से, जैसे बलुआ पत्थर के टुकड़े से, या लोमड़ी की खाल में एक चम्मच ऐमरी की रोड़ी भर कर उससे घिस कर चिकना करना पड़ता था। उसके बाद वह उस पर पालिश करता था। मैंने बैल्ट गुफा में बारहसिंगे के सींगों से बनी हुई ऐसी छैनियाँ प्राप्त की हैं, जो ठीक ढंग से बनाई गई थीं और उनके साथ ही मुझे वहाँ ऐमरी भी मिली है।

ये छैनियाँ इस प्रकार बनाई गई हैं कि दो चिकनी की गई और पालिश की गई सतहें परस्पर एक न्यून कोण पर मिलती हैं, जिससे छैनी की काटने वाली धार बनती है। इस प्रकार की छैनियाँ नरम लकड़ी को काटने के लिए तो उपयोगी हैं, परन्तु इनमें से कोई भी सामग्री इतनी कठोर नहीं है कि उससे पेड़ों को काटा जा सके या उनमें से तख्ते चीरे जा सकें। हिमाच्छादन के बाद के आरम्भिक काल में कोई व्यक्ति इतना मेधावी रहा था, कि उसने हड्डी, शृंग और हाथीदाँत की सतह को रगड़कर चिकना करने और उस पर पालिश करने की तकनीक को पत्थर पर लागू करने की बात सोची।

यदि आप संग यशव (जैड) जैसा कोई बहुत कठोर और पक्का पत्थर लें और उसे इस प्रकार घिसें और उस पर पालिश करें कि वह एक चिकना और फन्नी-जैसी धार वाला औज़ार बन जाय, तो आप जो औज़ार बना पायेंगे, वह एक छैनी होगी। यदि आप उसी जैसा कुछ और बड़ा औज़ार बनायें और उसे किसी लकड़ी या शृंग के हत्थे से बाँध दें, जिससे कि आप उसे घुमा सकें और उसके पीछे कुछ भार डाल सकें, तो जो औज़ार बनेगा, वह कुल्हाड़ी या बसूला होगा। वह कुल्हाड़ी है या बसूला, यह उसकी आकृति और उसकी काट करने की दिशा पर निर्भर है। पालिश की हुई पत्थर की कुल्हाड़ी से मनुष्य इतने बड़े पेड़ों को काट कर गिरा सकता है, कि वे मकान, नौका या स्लैज गाड़ी बनाने के काम आ सकें। वह उस कुल्हाड़ी से तख्ते भी काट सकता है। वह दस मिनटों में उतना काम कर सकता है, जिसे तक्षणी द्वारा करने में किसी मनुष्य को कई घण्टे लगें; और पता नहीं कि कई घण्टों में भी वह उस काम को कर भी पायेगा या नहीं।

परिष्कृत पत्थर की कुल्हाड़ी सबसे पहले किसने बनाई? इस बात को

कोई नहीं जानता। अब तक मुझे जो सबसे पुरानी इस प्रकार की कुल्हाड़ियाँ मिली हैं, वे कास्पियन समुद्र के पश्चिम-मध्य एशिया के क्षेत्र से प्राप्त हुई हैं; किन्तु वे केवल कृषि काल की ही हैं। फिर भी कास्पियन समुद्र तट पर जो किसानों की कृषि का काल था, जो 6 हज़ार ई० पू० में शुरू हो गया था, कालक्रम के अनुसार वह अन्य बहुत-से लोगों का शिकार काल भी था। यह सम्भव है कि परिष्कृत पत्थर की कुल्हाड़ी की सूझ शिकारियों में फैल गई हो, जिन्हें शस्त्र, नौकाएँ, तम्बुओं के चौखटे और उन बाड़ों को, जिनमें कि वे अपने शिकारों को खदेड़ लाते थे, बनाने में इस कुल्हाड़ी से तात्कालिक सुविधा दिखाई पड़ी हो। इसके बहुत समय बाद ही उन्हें शिकार वृत्ति त्याग देने और कृषि द्वारा जीवन-यापन करने के लिए उद्यत कर पाना सम्भव हुआ होगा। परिष्कृत पत्थर की कुल्हाड़ी कृषि की अभिसीमा से परे उत्तरी जंगलों में रहने वाले लोगों के लिए विशेष रूप से वरदान थी, क्योंकि वहाँ नौकाएँ, स्की या बर्फ़ पर चलने के जूते और स्लैज गाड़ियाँ बहुत ही आवश्यक हैं। हम इस प्रक्रिया की संगति एक अन्य क़दम को, परिष्कृत पत्थर से पिट्सवर्ग इस्पात की ओर प्रगति को, देखकर समझ सकते हैं। कनाडा में वहाँ के आदिवासी इस्पात की कुल्हाड़ियों का प्रयोग तीन सौ साल से कर रहे हैं। इस नई कुल्हाड़ी के लाभों को समझने में उन्हें ज़रा भी देर नहीं लगी। न्यूगिनी में अब शायद ही कोई ऐसा कबीला बचा हो, जो परिष्कृत पत्थर की कुल्हाड़ियाँ बनाता हो। पिछले 20 वर्षों में उनमें से लगभग सभी ने इस प्रकार की कुल्हाड़ियाँ बनाना बन्द कर दिया है और बाहर से आयात की जाने वाली इस्पात की कुल्हाड़ियों को अपना लिया है।

घिसने और पालिश करने की तकनीक मानवीय संस्कृति के अधिकतम बाहरी छोरों तक पहुँच गई है। अंडमान द्वीप समूहों के निवासी, भोजन संचय करने वाले नेग्रिटो, कई शताब्दियों से टूटे-फूटे जहाज़ों में से लोहे के टुकड़े निकालते रहे हैं और उन्हें ठण्डा ही घिसकर उनसे उपकरण बनाते रहे हैं। फ़ुएगो के रहने वाले आदिवासी भी यही काम करते रहे हैं। यहाँ तक कि आस्ट्रेलिया में भी, जो मानव-जाति का अच्छा खासा संग्रहालय है, अनेक आदिवासी, उस समय तक, जबकि वहाँ पहले-पहल अंग्रेज बसने के लिए पहुँचे, पत्थर को घिसकर कुल्हाड़ियाँ बनाना शुरू कर चुके थे। इस विषय में कोई

सन्देह नहीं है कि यह तकनीक एक से अधिक इलाकों में स्वतन्त्र रूप से आविष्कृत कर ली गई थी और यह प्रचुर शिकार और कुछ फुर्सत (खाली समय) की दशाओं में औज़ार बनाने के सम्बन्ध में लम्बे समय तक किये जाने वाले परीक्षणों का तर्कसंगत परिणाम थी।

तक्षणी का निर्माण पश्चिमी यूरोप से साइबेरिया होकर बेरिंग जल-सन्धि (जलडमरूमध्य) और अलास्का तक फैल गया। वहाँ ये औज़ार मिट्टी की एक वन्ध्य परत के, जो स्वयं एक ऐस्किमो स्थल के नीचे दबी हुई है, नीचे एक प्राचीन निक्षेप में पाये गए हैं। ये औज़ार दक्षिणी गोलार्द्ध में नहीं ले जाये गए थे। क्योंकि ये सींग और हाथीदाँत जैसी विशेष सामग्रियों के लिए उपयुक्त थे, इसलिए वह केवल वहीं पहुँचे, जहाँ ये वस्तुएँ शिकार करने में काम आती थीं और जहाँ गर्म वस्त्रों की आवश्यकता होती थी।

लकड़ी की कारीगरी एक सार्वत्रिक आवश्यकता है। यही कारण है कि परिष्कृत पत्थर की कुल्हाड़ी ने तक्षणा (ब्यूरिन) पर विजय प्राप्त की, उसे पीछे छोड़ दिया और उसे ठीक उसी प्रकार समाप्त कर दिया, जिस प्रकार परवर्ती इतिहास में लोहे ने काँसे पर विजय प्राप्त की और उसे पीछे छोड़ दिया। परन्तु जिस समय परिष्कृत पत्थर की कुल्हाड़ी का आविष्कार हुआ था, उस समय तक मानव प्राणी बसने योग्य संसार के सब कोनों में फैल चुके थे। चकमक के औज़ार, जिनमें तक्षणी भी थी, इस प्रसार को सम्भव बनाने के लिए पर्याप्त रूप से कार्यक्षम थे।

मनुष्य द्वारा धनुष का आविष्कार

उपरि पुरा पाषाण काल के अधिकांश भाग में लकड़ी का बर्छा, जिसके आगे विभिन्न सामग्रियों से बनी नोकें लगी रहती थीं, शिकारी का प्रधान शस्त्र था। आधुनिक काल में भी तस्मानिया निवासियों और पश्चिम मध्य आस्ट्रेलिया के मरुभूमि में रहने वाले कबीलों द्वारा प्रयुक्त किया जाने वाला यह एक मात्र शस्त्र था। इसका प्रयोग करने के लिए शिकारी को सरकते हुए अपने शिकार के इतने निकट तक पहुँचना होता था कि वहाँ से वह सही निशाने पर भाला फेंक सके। वह एक अतिरिक्त साधन बर्छा-क्षेपक (स्पीयर थ्रोअर) का प्रयोग करे, तो बर्छा फेंकने की इस अभिसीमा को और बढ़ाया जा

सकता है। बर्छा-क्षेपक कोई लगभग दो फुट लम्बा एक लकड़ी का टुकड़ा होता है। इसके एक सिरे पर शिकारी के हाथ के लिए छेद या घट्टे होते हैं और

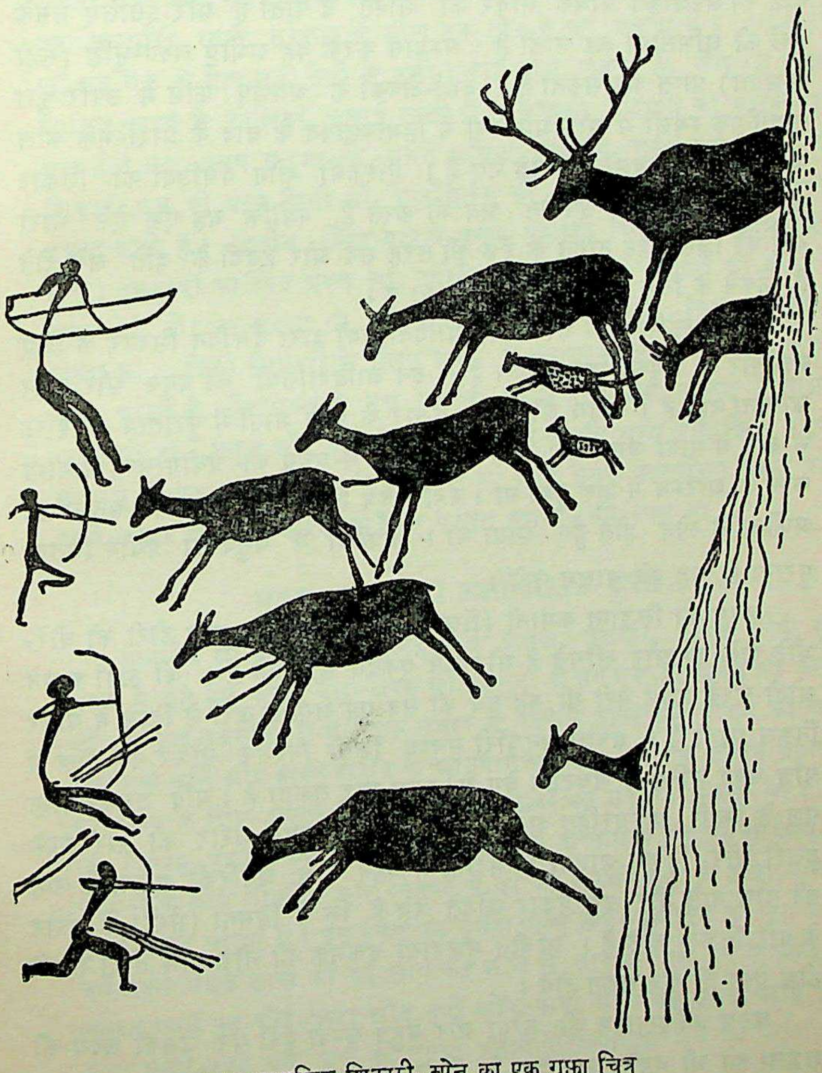

मध्य पाषाणिक शिकारी, स्पेन का एक गुफ़ा चित्र

दूसरे सिरे पर भाले का सिरा फँसाने के लिए एक खूँटी या गड्ढा होता है। इस साधन का अपनी भुजा के विस्तार के रूप में प्रयोग करके वह अपनी बाँह को अपेक्षाकृत अधिक लीवर की शक्ति दे पाता है और इसलिए उसके बर्छे की अभिसीमा बढ़ जाती है। अभ्यास करके वह अभीष्ट लक्ष्य-शुद्धि (सही निशाना) प्राप्त कर सकता है। बर्छा-क्षेपकों के अवशेष फ्रांस में उपरि पुरा पाषाणिक स्थलों में और अमेरिका में हिमाच्छादन के बाद के प्रारम्भिक काल की गुफाओं के स्थलों पर पाये गए हैं। ऐस्किमो लोग चिड़ियों का शिकार करने के लिए इसका उपयोग अब भी करते हैं, क्योंकि यह एक ऐसे भारी बर्छे को जिसमें हैट टाँगने के रैक की तरह सब ओर हड्डी के दाँते लगे होते हैं, फेंकने के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है।

यह आस्ट्रेलिया के अधिकाँश आदिवासियों द्वारा दैनंदिन शिकार के लिए आमतौर से प्रयुक्त किया जाता है। इन आदिवासियों को धनुष और बाण का पता नहीं है। धनुष और बाण संसार के अन्य भागों में पुरातत्व की दृष्टि से बाद में पाया जाता है। पश्चिमी यूरोप में धनुष का प्रयोग मध्य पाषाण काल के आरम्भ में शुरू हुआ था। वहाँ धनुष किसी अन्य स्थान से, अनुमानतः अफ्रीका से स्पेन होते हुए आया था। अफ्रीका में धनुष का प्रयोग कितना पुराना है, यह हमें मालूम नहीं।

धनुष का सिद्धान्त कमानी (स्प्रिंग) का सिद्धान्त है। आप डोरी को धीरे-धीरे पीछे की ओर खींचते हैं और उसे एकदम छोड़ देते हैं। जो ऊर्जा आपने थोड़ी करके उसमें भरी थी, वह सब की सब एक क्षण के ज़रा से हिस्से में बाहर निकल आती है। अच्छा धनुर्धारी मनुष्य किसी निश्शंक साँभर की कोख में पाँच अश्व शक्ति के संघट्टन वेग से बाण मार सकता है। यदि उसका बाण पशु के किसी अस्थिरहित अंग में लगे, तो वह उसके शरीर को पार करके दूसरी ओर निकल जाएगा। मैदानों में रहने वाले अमेरिकी मूलवासी लोहे की नोक वाले तीर इस प्रकार छोड़ते रहे हैं कि वे बिसनों (भैंसों) के शरीर के पार निकल जाते हैं। प्राचीन मूलवासी चकमक की नोक वाले तीरों से भी ठीक ऐसा ही कर सकते होंगे।

धनुष प्रक्षेपणास्त्र की सीमा और बहुत लम्बी दूरी पर उसकी लक्ष्य की शुद्धता को भी बहुत बढ़ा देता है, विशेष रूप से तब, जबकि बाण में पंख

लगे हुए हों। यह एक निःशब्द शस्त्र है। यदि शिकारी का एक निशाना चूक जाय, तो वह पशुओं के यूथ को चौंकाये बिना एक और निशाना आज़मा सकता है। जहाँ बर्छेबाज़ अधिक से अधिक तीन बर्छे लेकर चल सकता है, वहाँ धनुर्धारी अपने तरकस में बीस तक तीर ले जा सकता है। इन तीरों को वह एक के बाद एक तेज़ी से उसी प्रकार चला सकता है, जैसे कि स्वतः चालित शस्त्र से गोलियाँ चलाई जाती हैं। केण्टुकी राइफल का आविष्कार पूरा होने तक धनुष मनुष्य का सबसे अधिक कार्यक्षम शस्त्र रहा और कुछ शिकारी अब भी अन्य किसी भी आग्नेयास्त्र की अपेक्षा धनुष को ही अधिक पसन्द करते हैं। द्वितीय विश्व-युद्ध में धनुष कमाँडो (अंग्रेजों की आक्रामक सेना) टुकड़ियों का प्रिय अस्त्र था, क्योंकि शत्रु के किसी सन्तरी की गर्दन में जब कोई तीर जा लगता था, तो वह बिना कोई आवाज़ किये समाप्त हो जाता था। किसी शिकारी के लिए धनुष से बढ़कर कोई और हथियार ढूँढ पाना कठिन है, विशेषरूप से तब जबकि उसके पास एक अच्छा प्रशिक्षित कुत्ता भी हो। धनुष और कुत्ते के इस संयोग के कारण मध्य पाषाणिक मनुष्य सचमुच ही एक दुर्धर्ष शिकारी बन गया था और इसके फलस्वरूप उसके पास अन्य प्रकार की कारीगरियों के लिए फालतू समय बचने लगा था।

मनुष्य का दूसरा ऊर्जा-स्रोत—कुत्ता

मानवीय आविष्कार के इतिहास में फलक, तक्षणी, हार्पून शीर्ष, सुई, समूर के बने हुए कपड़े, बर्छा-क्षेपक और धनुष, ये सब एक ही श्रेणी की वस्तुएँ थीं। ये उन तक़नीकों में यान्त्रिक सुधार थे, जिसके द्वारा वह भोजन को अपने मुख तक लाने और अपने शरीर के आसपास की वायु को एक समान तापमान पर रखने के लिए अपनी माँस-पेशियों की ऊर्जा का उपयोग करता था। यह एक विशिष्ट प्रकार की प्रगति है। इस प्रकार के साधनों की तुलना आधुनिक मशीनों के बाल बीयरिंग और स्नेहकों से की जा सकती है। वे ऊर्जा में बचत करने वाली वस्तुएँ हैं। इस चित्र का दूसरा पहलू ऊर्जा-उत्पादन का है। लाखों वर्ष पहले उसके द्वारा की गई आग की खोज के बाद से हिम युग के अन्त तक मनुष्य ऊर्जा का कोई दूसरा स्रोत नहीं खोज पाया था। यह दूसरा स्रोत उसके द्वारा सबसे पहले पशु, कुत्ते को पालतू बनाने से प्राप्त हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अन्य दो या तीन मनुष्यों को अपनी सहायता करने के लिए मना कर मनुष्य माँस-पेशियों की उपलब्ध ऊर्जा को दुगुना या तिगुना कर सकता है। यदि मनुष्य को केवल इतने की ही आवश्यकता होती, तो वह कुत्ते को उस समय, जबकि वह उसके अलाव के पास जूँठन माँगता हुआ आ पहुँचा था, परे खदेड़ दे सकता था। कुत्ता मनुष्य से तेज़ दौड़ सकता है और शिकार का पीछा करने की दृष्टि से यह उपयोगी बात है। परन्तु शिकार का पीछा करने और हाँका करने के लिए मनुष्य को पहले ही यथोचित स्थानों पर खड़ाकर दिया जा सकता है। कुत्ते को पालतू बनाने के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि इसके द्वारा मनुष्य को चेता (नर्व) ऊर्जा और अधिक मात्रा में प्राप्त हो गई, क्योंकि उसके इन्द्रियगम्य ज्ञान की अभिसीमा और विस्तृत हो गई। कुत्ता उन ध्वनियों को भी सुन सकता है, जो मनुष्य के कान के लिए बहुत अधिक ऊँची हैं और वह उन हल्की गंधों को भी सूँघ सकता है, जिन्हें किसी भी मनुष्य की नाक सूँघ ही नहीं सकती। जंगली दशा में पाया जाने वाला कुत्ता चतुर शिकारी होता है। इस प्रकार कुत्ते और मनुष्य का सम्मिलन दोनों के लिए लाभदायक साझेदारी सिद्ध हुआ।

मनुष्य की सहायता से कुत्ता उसकी अपेक्षा, जबकि वह अकेला शिकार करता, अपने शिकार को अधिक सुनिश्चित रूप से प्राप्त कर सकता है और हड्डियाँ और अंतड़ियाँ उसके हिस्से में आती ही हैं। साथ ही वह शिकारी-दल की कार्यक्षमता को बहुत अधिक बढ़ा सकता है। वह चिड़ियों का पता लगा सकता है और उन्हें उड़ा सकता है। वह हिरणों और मृगों को घेर सकता है और उन्हें खदेड़ सकता है। वह छोटे-छोटे प्राणियों को दौड़कर पकड़ सकता है और उन्हें मार सकता है और किसी बड़े पशु की लाश की तब तक रखवाली करता रह सकता है, जब तक कि उसका स्वामी वहाँ आ न जाय। पथरीली या पत्तों से ढकी भूमि पर, जहाँ शिकार का कोई पद-चिह्न शिकारी को दिखाई नहीं पड़ सकता, वह मीलों तक शिकार की खोज लगाता जा सकता है। उसकी नाक वह काम कर सकती है, जो शिकारी की आँख करती है। रात के समय जबकि आग मन्द हो जाती है, उसका बालों से युक्त शरीर अपने स्वामी को गर्म रखता है और वह पास आते हुए खतरे की चेतावनी पहले से दे सकता है। सुदूर उत्तर के बर्फ़ से जमे हुए बियाबान प्रदेशों में वह अपने स्वामी की

स्लैज गाड़ी खींच सकता है और यहाँ उसकी शारीरिक ऊर्जा बहुत ही मूल्यवान सिद्ध होती है, क्योंकि कुत्ते और स्लैज गाड़ी के बिना शिकारी अपने परिवार के लिए भोजन प्राप्त नहीं कर सकता।

जिन लोगों ने अफ्रीका और मध्य पूर्व के कृषि-प्रधान गाँवों में यात्रा की है, वे बताते हैं कि वहाँ के लोग अपने कुत्तों की बहुत कम कद्र करते हैं। वे कुत्तों को विष्ठा खाकर पेट भरने के लिए और सर्दियों में गोबर के ढेर पर सोने के लिए छोड़ देते हैं। और जब कुत्ते उनसे प्रेम पाने का प्रयत्न करते हैं, तो वे उन्हें पीटते और गालियाँ देते हैं, जबकि ऐसे अवसरों पर पश्चिम के निवासी कुत्तों को थपकियाँ देते हैं, प्यार-भरी आवाज़ें करते हैं या चुटकियाँ बजाते हैं। परन्तु जिन लोगों ने गड़रियों को ध्यान से देखा है, वे इससे भिन्न कहानी सुनाते हैं। भेड़ों की देखभाल करने वाले कुत्तों के साथ सभी जगह अच्छा बर्ताव किया जाता है, क्योंकि वे भेड़ियों से रेवड़ की रक्षा करते हैं और भेड़ों को इकट्ठा करते हैं और उनके ही कारण यह सम्भव होता है कि एक ही लड़का बारह आदमियों का काम कर सकता है। जब आप किसी मरुस्थल में पहुँचते हैं और वहाँ किसी अभिमानी अरब, अफगान या बलूची से मिलते हैं, जिसके पास पतली-पतली टाँगों वाला 'सलूकी' कुत्ता होता है, तो आपको और भी बड़ा परिवर्तन देखने को मिलता है। जो शिकारी कुत्ता तीव्रगामी कुरंग को दौड़कर पकड़ सकता है, वह देखते ही पहचाना जाता है कि वह अत्यन्त लाड़ से पाला गया पशु है। उसे घुड़दौड़ के घोड़े की तरह कम्बल उढ़ाया जाता है। जब आप मध्य आस्ट्रेलिया के मरुस्थल में पहुँचते हैं, तो आप देखते हैं कि वहाँ शिकारी कुत्ता परिवार का ही एक सदस्य समझा जाता है और वह उतने ही महत्त्वपूर्ण सामाजिक कृत्य को पूरा करता है, जितना कि किसी सन्तानहीन अमेरिकन दम्पति के घर में कौकर स्पैनियल कुत्ता करता है।

हमें यह ठीक-ठीक पता नहीं कि कुत्ते को पहले-पहल कब पालतू बनाया गया था, परन्तु हमें उसकी हड्डियाँ पुरातत्वीय स्थलों में तब तक प्राप्त नहीं होतीं, जब तक कि मध्य पाषाण युग शुरू नहीं हो जाता। वस्तुतः कुत्ते की हड्डियों और भेड़िये की हड्डियों में अन्तर कर पाना बहुत कठिन है। इसकी एकमात्र उपयोगी कसौटी जबड़ों के आकार में हुई सामान्य घटौती है, जो आदिमतम नमूनों में पहचानी जानी कठिन है। क्योंकि गत सौ वर्षों में जिन

पुरातत्ववेत्ताओं ने पुरा पाषाणिक स्थलों की खुदाई की है, उनमें से हर किसी को अन्तर का पता नहीं था, इसलिए हो सकता है कि कुछ कुत्तों की हड्डियाँ पहचान में आने से रह गई हों।

शिकार करने और मछली मारने की प्राचीन पद्धतियाँ

यद्यपि हमारे पास इस बात का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है कि उपरि पुरा पाषाणिक मनुष्य किन पद्धतियों से शिकार करते थे, फिर भी हमें यह पता है कि उसी प्रकार के या उनसे भी घटिया शस्त्रों से सज्जित इस समय जीवित लोग किस प्रकार शिकार करते हैं; और यह बात पर्याप्त होनी चाहिए। तीन जातियाँ, जो स्थान की दृष्टि से एक-दूसरे से इतनी अधिक दूर हैं, जितना कि मानव-प्राणियों को एक-दूसरे से दूर कर पाना सम्भव है (हालांकि वे सब दक्षिणी गोलार्द्ध में रहती हैं, किन्तु उनके मध्य स्थल भाग का सम्बन्ध सबका सब भूमध्य रेखा के उत्तर में होकर है) और जो जाति की दृष्टि से पूर्णतया अलग-अलग हैं, आस्ट्रेलियावासी, दक्षिणी अफ्रीका के 'बुशमैन' और टियेरा डेल फुएगो के 'ओना' हैं। ये तीन जातियाँ सम्भाव्यतः उपरि (और आरम्भिक) पुरा पाषाणिक मनुष्यों की शिकार की तकनीकों का काफी कुछ ईमानदारी से

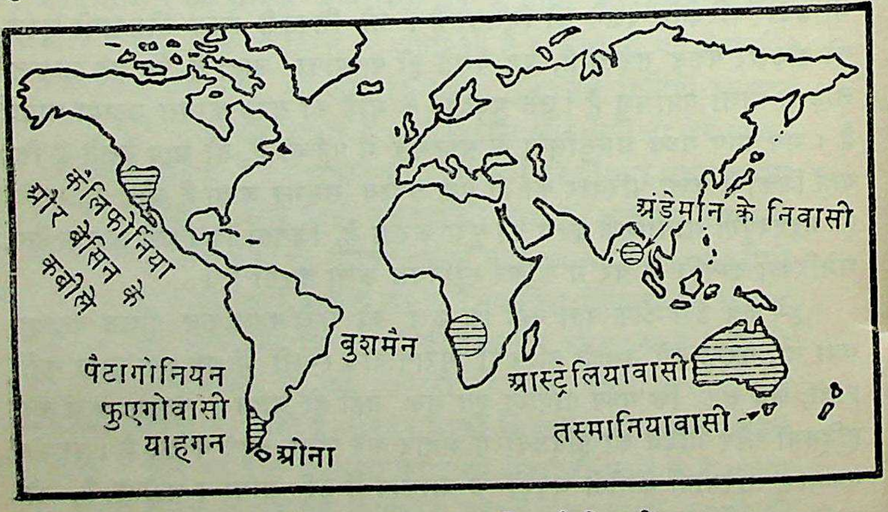
कैलिफोर्निया और बेसिन के कबीले
अंडेमान के निवासी
बुशमैन
पैटागोनियन फुएगोवासी याहगन
ओना
आस्ट्रेलियावासी
तस्मानियावासी

आधुनिक काल के कुछ आदिवासी शिकारी

प्रतिनिधित्व करती हैं। अन्तर केवल इतना है कि उनके पास तक्षणी नहीं है और यह है कि उनके पास कुत्ता है। यदि हम तस्मानियावासियों पर दृष्टि डालें, जिनके पास तक्षणी और कुत्ता दोनों ही नहीं है, तो हम वस्तुतः तकनीकी दृष्टि से तृतीय अन्तरहिमाच्छादन काल में वापस पहुँच जाते हैं।

ये सब जातियाँ उन पशुओं का शिकार करती हैं या करती थीं, जिनका वज़न खाल-खाल उतारने से पहले 150 पौंड के आस-पास होता है। ये सब की सब जातियाँ कुछ थोड़े-से परिवारों से बने गिरोहों में रहती हैं, ये परिवार एक-दूसरे के सम्बन्धी होते हैं। और इनमें कुल-मिलाकर चार से दस तक ऐसे पुरुष होते हैं, जिनकी आयु शिकार करने के योग्य होती है। ये लोग परस्पर मिलकर कम से कम एक शिकारी टोली बना लेते हैं। इस टोली के सदस्य सवेरे तड़का होने से काफी पहले उठते हैं और जल्दी-जल्दी थोड़ा-सा कलेवा करने के बाद अपना साज-सामान उठाकर चल पड़ते हैं। वे किसी ऐसे स्थान पर जाते हैं जहाँ यह विश्वास करने का कोई कारण होता है कि उन्हें शिकार मिल सकेगा। पहला काम शिकार का पता चलाने का होता है और इसके लिए वे जंगल में दूर-दूर फैल जाते हैं। एक-दूसरे से सम्पर्क बनाये रखने के लिए वे पहले से निश्चित ऐसे संकेतों का, जैसे पक्षियों की बोली की नकल का, उपयोग करते हैं, जिनसे उनका शिकार यथासम्भव कम से कम चौंके। जब शिकार दिखाई पड़ जाता है, तब इस टोली के कुछ सदस्यों को, प्रायः कनिष्ठ सदस्यों को, इसलिए भेजा जाता है कि वे चुपके-चुपके चलकर शिकार के पीछे की ओर पहुँच जाएँ और उसे आगे, टोली के मारने वाले सदस्यों की ओर दौड़ायें या फिर वे उसके पीछे की ओर बच भागने के मार्ग को रोक दें और जब पशु भागने लगे, तो उसे मार डाले।

स्वयं वधिक शिकारी या तो घात में बैठ जाते हैं, जिससे शिकार उनके पास तक पहुँच सके, या छद्म वेश में छिपकर उन पशुओं के बीच में जा पहुँचते हैं, जिनका उन्हें शिकार करना है। यदि हिरणों का शिकार करना हो, तो शिकारी एक ऐसी नकाब (मुखौटा) लगा लेता है, जिसके ऊपर दो शृंग लगे होते हैं। इन शृंगों को अन्दर से खोखला कर लिया जाता है, जिससे उनका वज़न कम हो जाय। वह अपने हाथ में दो लकड़ियाँ लेकर भी चल सकता है, जो अगली टांगों जैसी प्रतीत हों और इसके साथ ही वह अपना धनुष और

तरकस भी छिपाकर अपने पास रखता है। इस ढंग से अपने आपको छद्म वेश से छिपाकर इस प्रकार बढ़ते हुए कि वायु शिकार की ओर से उसकी ओर आ रही हो, वह अपने शिकार से केवल कुछ गज़ की तक दूरी पर पहुँच सकता है। जब वे पशु उसे देख लेंगे, उसके बाद भी उसे इतना समय मिल जायगा कि वह एक दर्जन तीर छोड़ सके। वासन्तक (ग्वैनैको) का शिकार करते समय शिकारी अपने सिर पर सफेद समूर का बना हुआ टोपी-जैसा शिरोवस्त्र धारण करता है, जो वासन्तक (ग्वैनैको) के सिर के अग्रभाग की खाल से मिलता-जुलता होता है। सावधानी से अवलोकन करते रहने तथा पशुओं की आदतों का अनुकरण करने के फलस्वरूप शिकारी की सफलता की गुंजाइश बहुत बढ़ जाती है।

शिकार का चुपचाप पीछा करना, चाहे छद्म वेश धारण करके चाहे छद्म वेश के बिना, प्रतिदिन काम में आने वाली वह सामान्य पद्धति है, जिसका अधिकांश शिकारी लोग उपयोग करते है; किन्तु यह उनकी एकमात्र पद्धति नहीं है। कभी-कभी लोग बहुत बड़ा झुण्ड बनाकर तड़का होने से पहले ही जंगल में पहुँच जाते हैं। पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे, सब मिलकर एक बहुत बड़ा घेरा बना लेते हैं, जिसका व्यास कई मील होता है। इस घेरे में प्रत्येक व्यक्ति इस ढंग से खड़ा होता है कि वह अपने दोनों पार्श्वों में खड़े अपने साथियों के पुकारने की आवाज़ को सुन सके। उसके बाद वे चिल्लाना और जंगल में हाँका करना शुरू करते हैं और उस घेरे के अन्दर विद्यमान सब पशुओं को उसके केन्द्र की ओर खदेड़ते हैं। ज्यों-ज्यों वे अपने घेरे की परिधि कम करते जाते हैं, त्यों-त्यों वे परस्पर निकट और निकट होते जाते हैं, जिससे पशु उस घेरे से निकलकर बाहर नहीं भाग सकते। अन्त में वे एक-दूसरे से इतना निकट आ जाते हैं कि आपस में हाथ पकड़ सकें; और अन्त में तो उनके कन्धे तक एक-दूसरे से छूने लगते हैं। इस समय तक डरे हुए जंगली पशुओं का दल उस घेरे के केन्द्र में उछल-कूद करने लगता है और वहाँ शिकारी उन पशुओं को गदाओं, भालों या तीरों से मार डालते हैं। इस पद्धति से बहुत-से लोगों के लिए थोड़े-से समय के लिए बहुत-सा माँस मिल जाता है। परन्तु ऐसा बहुत दिनों बाद एक बार किया जाता है, क्योंकि इससे पास-पड़ौस में पशुओं की संख्या बहुत कम हो जाती है। तस्मानियावासी इस पद्धति का प्रयोग करते थे। आधुनिक शिकारियों में केवल वे ही ऐसे थे, जिनके पास

कुत्ते नहीं थे।

इससे मिलता-जुलता एक और तरीका यह है कि इस प्रकार की बाड़ें बनाकर, जो एक ही जगह जाकर मिलती हैं, पशुओं को पहले एक तंग रास्ते में खदेड़ कर लाया जाता है और वहाँ से उन्हें एक बाड़े में खदेड़ दिया जाता है। इस पद्धति का कैलिफोर्निया में कई आदिवासी गाँवों के मनुष्य प्रतिवर्ष करते थे और केवल यही एक ऐसी घटना होती थी, जिसमें कि उन गाँवों को मिलकर एक इकाई के रूप में काम करना पड़ता था। यह तथ्य उनके धार्मिक समारोहों में भी प्रतिबिम्बित होता था। ये समारोह इस प्रकार व्यवस्थित किये जाते थे कि जिससे सम्बन्धित गाँवों में परस्पर अधिकतम सद्भाव और शान्ति बनी रह सके। उत्तर की ओर के प्रदेशों में रेनडियर और कैरीबू (वाहकुरंग) प्रतिवर्ष इस ढंग से प्रव्रजन करते हैं कि उसका समय पहले से जाना जा सकता है। शिकारी लोग इसके लिए बाड़ें बनाकर, फन्दे लगाकर और नदियों को पार करने के स्थानों पर घात में बैठकर तैयारी करते हैं। वे सैकड़ों की संख्या में इन पशुओं का शिकार कर लेते हैं और उस माँस को या तो सर्दी में जमा कर, या उसे धुएँ में रखकर परिरक्षित करते हैं और उसे तरुगृहों में या भूमि के तले बनाये गए गुप्त भण्डारों में रखते हैं। फ्रांस की गुफाओं में हजारों की संख्या में पाये गए रेनडियरों के शृंगों और उन कलाकृतियों के आधार पर, जिनमें कि रेनडियर यूथों को पानी में खड़ा हुआ अंकित किया गया है, हम यह अनुमान करते हैं कि उपरि पुरा पाषाण युग के लोग इन चालाकियों को सीख चुके थे। ये शृंग, जो खोपड़ी के साथ दृढ़तापूर्वक जुड़े हुए हैं, यह सूचित करते हैं कि शिकार नवम्बर में किया जाता था।

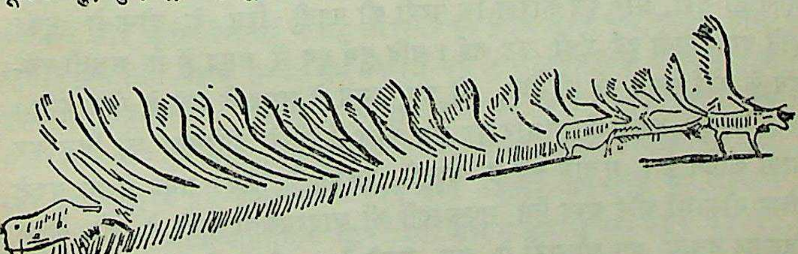

रेनडियर यूथ, हड्डी पर की गई नक्काशी, फ्रांस

आजकल कनाडा और साइबेरिया के जंगलों में शिकारी अनेक प्रकार के जालों (फन्दों) का प्रयोग करते हैं। इसका कारण यह है कि वे समूर वाले पशुओं को पकड़ कर जीविकोपार्जन करते हैं और उन पशुओं की खालों का व्यापार अन्यत्र गैरशिकारी लोगों द्वारा तैयार की गई वस्तुओं से करते हैं। उन दिनों, जबकि हर कोई शिकार करता था, इस प्रकार का कोई व्यापार नहीं था और उत्तरी वनों के शिकारी केवल आहार के लिए और उन खालों के लिए पशुओं को मारते थे, जो उनके अपने वस्त्रों और तम्बुओं को बनाने के लिए आवश्यक होती थीं। टियेरा डेल फुएगो, दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया के सीमान्तीय शिकारी फन्दों का उपयोग शायद ही कभी करते हैं। वस्तुतः संसार में सबसे बढ़िया फन्दे कृषि करने वाले लोगों द्वारा, उदाहरण के लिए चीनियों, मलायावासियों और अमेज़न नदी के बेसिन में रहने वाले कुछ आदिवासियों द्वारा बनाये और प्रयोग में लाये जाते हैं। ये बढ़िया फन्दे केवल उन लोगों द्वारा बनाये जाते हैं, जिनके पास परिष्कृत पत्थर की कुल्हाड़ियाँ या धातु के बने हुए औज़ार हैं। यूरोप में मध्य पाषाणिक स्थलों में, जहाँ लकड़ी की अन्य वस्तुएँ परिरक्षित रही हैं, ये फन्दे नहीं मिले। ये फन्दे पत्थर की कुल्हाड़ी का आरम्भ होने के बाद, अर्थात् 6 हज़ार ई० पू० के बाद, ही प्राप्त होते हैं।

हिमाच्छादनोत्तर काल से पहले परिष्कृत ढंग से मछली पकड़ने का भी कोई प्रमाण नहीं मिलता। इसका एक कारण यह हो सकता है कि समुद्र का स्तर कई बार इस कारण ऊँचा और नीचा होता रहा है कि पृथ्वी का जल कभी हिमशिखरों के रूप में एक जगह बँध गया और कभी उनके पिघलने से मुक्त हो गया, और इस कारण कि पृथ्वी की पपड़ी हिम के बोझ से मुक्त होने पर काँपती हुई ऊँची उठ गई। यदि वूर्म युग में समुद्र में से मछली पकड़ने के कोई स्थान रहे भी होंगे, तो इस समय वे समुद्र के जल के नीचे होंगे। और, विशुद्ध तकनीकी आधार पर उस काल में उनके अस्तित्व को सिद्ध कर पाना कठिन है। सुचारु रूप से मछली पकड़ने के लिए समुद्र में जा सकने योग्य नौकाओं और अन्य ऐसे उपकरणों की आवश्यकता होती है, जो केवल घिसकर बनाये गए औज़ारों से बन सकते हैं; और यूरोप में उपरि पुरापाषाणिक मनुष्यों के पास घिसकर बनाये गए औज़ार नहीं थे।

हिमाच्छादनोत्तर काल के पिछले भाग में, अर्थात् लगभग 6000 से 3000 या यहाँ तक कि 2000 ई० पू० तक भी, जब अन्यत्र अन्य जातियाँ खेती शुरू कर रही थीं, डेनमार्क और चीन में समुद्र-तटवर्ती लोग प्रव्रजन करने वाली या उथले स्थानों में सेकने वाली मछलियों को बहुत बड़ी संख्या में पकड़ना, उन्हें सुखाना और भोजन के रूप में उन्हें उसी ढंग से इकट्ठा करके रख देना सीख रहे थे, जिस प्रकार कि किसान अपने अनाज को गोदामों में भरकर रख देता है। इस प्रभूत भोजन की सहायता से ये जनसमुदाय बढ़े और जब समुद्र-तटवर्ती गाँवों के पीछे की ओर किसान लोग खेत जोतने लगे, तब भी ये लोग अपने मछली मारने के काम में ही लगे रहे। किसान भी धुएँ में सेकी हुई और सुखाई हुई मछलियाँ पसन्द करते हैं। नवागन्तुकों के साथ ज़ोरदार व्यापार होने के फलस्वरूप और अधिक मछियारों के लिए गुँजाइश निकल आई।

इन मछियारों के विषय में हमें इसके सिवाय कुछ मालूम नहीं कि वे ज्वार-भाटे के पानी के किनारे बने ढूहों पर सुविधापूर्ण मकान बनाते थे, बड़े-बड़े पेड़ों के तनों को अन्दर से खोद-खोद कर नौकाएँ बनाते थे, जाल बुनते थे और हड्डी के मछली पकड़ने के काँटे बनाते थे। उनकी सारी तकनीक परिष्कृत पत्थर से बने बढ़ई के उन औज़ारों पर निर्भर थी, जिनका आविष्कार अन्य स्थानों पर अन्य लोगों ने किया था और जिन्हें किसान लोग अपने साथ लाये थे। मछियारे गाँवों में रहते हैं और यदि वे कभी प्रव्रजन करते भी हैं, तो वे केवल मौसम के कारण कुछ समय के लिए करते हैं, ठीक उसी ढँग से, जैसे कि ग्रीष्म काल में अमेरिकी लोग समुद्र के किनारे चले जाते हैं। एक जगह जमकर रहने का जीवन कृषि के लिए आवश्यक शर्तों में से एक है और कुछ वनस्पति-शास्त्रियों और भूगोलवेत्ताओं ने यह स्थापना की है कि कृषि पहले-पहल मछियारों में शुरू हुई; परन्तु उनका तर्क विशुद्ध रूप से सैद्धान्तिक है। हमारे पास जितने भी पुरातत्वीय प्रमाण हैं, वे इस बात की ओर संकेत करते हैं कि वाणिज्य के तौर पर मछली मारना उसके बाद ही शुरू हुआ, जबकि परिष्कृत पत्थर की कुल्हाड़ी जैसे तकनीकी साधन अन्य स्थानों पर कृषि का प्रारम्भ हो जाने के बाद मध्य पाषाणिक शिकारियों और मछियारों तक पहुँच चुके थे।

इस प्रकार के मछियारों का एक समूह, जो हमारे काल तक जीवित बचा चला आया है, अमेरिका के उत्तर-पश्चिमी समुद्र तट के विख्यात टोटमपोल आदि-

वासी थे । वे भी परिष्कृत पत्थर से बने बढ़ई के औज़ारों का उपयोग करते थे । इन औजारों में बसूले, छेनियाँ और फन्नियाँ भी थीं । इन औजारों से वे देवदार के लक्कड़ों को चीरकर तख्ते बनाते थे और उन्होंने सजावट की एक शानदार कला का आविष्कार किया था, जो उन्नीसवीं शताब्दी के शुरू में ह्वेल मछली मारने वालों और व्यापारियों से इस्पात के औज़ार प्राप्त कर लेने के बाद और भी विकसित हुई । आहार संचय और आहार के परिरक्षण में उनका वर्ष का केवल थोड़ा-सा समय लगता था । इसलिए बाकी समय उन्हें अपना ध्यान मानवीय सम्बन्धों की ओर दे पाने की फ़ुरसत रहती थी । उनके मुख्य विषय मनोविनोद और मान (यश) थे । मनोविनोद का प्रबन्ध शरत्-कालीन नृत्यों की एक सुरुचिपूर्ण शृंखला (माला) द्वारा किया जाता था । इन नृत्यों में पौराणिक घटनाओं का अभिनय और परलोक से समुद्र के ऊपर होते हुए अपने दिवंगत पूर्वजों के वार्षिक आगमन का अभिनय किया जाता था । मान कुल और सम्पत्ति के दुहरे आधार पर परिष्ठा के एक परिष्कृत मूल्यांकन का प्रतीक था और स्वयं सम्पत्ति का मूल्य एक समारोह द्वारा बढ़ाया जाता था । इस समारोह का नाम 'पौटलाच' था । इसमें प्रतिद्वन्द्वी पूँजीपति स्वयं अपनी सम्पत्ति का विनाश करने में एक-दूसरे से प्रतियोगिता किया करते थे ।

प्लीस्टोसीन काल के अन्तिम भाग में हमारे पूर्वजों के इतिहास की रूप-रेखा तैयार करने के दृष्टिकोण से इन आदिवासियों का अध्ययन केवल यह सिद्ध करता है कि यदि अच्छे औज़ार, पर्याप्त भोजन और कुछ मौसमों में खाली समय उपलब्ध हो, तो कृषि-पूर्व अवस्था के लोगों में सब प्रकार की सामाजिक जटिलताएँ उत्पन्न हो सकती हैं और यह सम्भव है कि औरिगनेसी काल के हमारे पूर्वज ऐसे स्तरीकृत समाजों में भी रहते रहे हों, जो औना या तस्मानियावासी लोगों के सीधे-सादे जीवन से उतने ही भिन्न होंगे, जितना कि रैकेट क्लब के सदस्य का जीवन मैक्सिको के एक वैटबैक के जीवन से भिन्न होता है । उत्तर-पश्चिमी समुद्र तट के पेशेवर मूर्तिकारों और चित्रकारों, हेडा लोगों ने, सुन्दर कलाकृतियाँ तैयार कीं, किन्तु औरिगनेसी काल के कलाकारों ने भी इसी प्रकार की कलाकृतियाँ बनाई हैं ; वे भी अपनी तकनीकों को निर्दोष बनाने के लिए इस कार्य में विशेषता अर्जित करने में समर्थ हुए होंगे ।

आदिमकालीन कलाएँ और उद्योग

नये आविष्कारों के फलस्वरूप उत्पन्न इन सब परिवर्तनों में आर्थिक जीवन का एक पहलू पिथैकैन्थ्रोपस के समय से लेकर लगभग नहीं ही बदला और यह पहलू था संचय करने का—स्त्रियों द्वारा नित्य प्रति कन्द, बेर जैसे फल, कीड़े और अन्य भोज्य वस्तुओं और पदार्थों को खोजने का काम, जिससे उनके पतियों द्वारा लाये गए माँस की अनुपूर्ति हो सके। हम इस बात को, कि इसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ, इसलिए मानते हैं क्योंकि यह काम आजकल भी किया जाता है और केवल आदिम शिकारियों की पत्नियों द्वारा ही नहीं, अपितु यूरोप में तथा अन्यत्र कृषक समाजों में भी खास-खास मौसमों में स्त्रियों द्वारा किया जाता है। हम स्वयं भी इस काम को करते हैं, जबकि हम टोकरियाँ लेकर जामुनें चुनने जाते हैं।

चुनने और इकट्ठा करने के लिए पात्रों की आवश्यकता होती है। वे अधिकतम आदिम लोग, जिनके विषय में हमें पता हैं, सबके सब विभिन्न प्रकार के देशों से, जिनमें जड़ें, छालें और मनुष्य के बाल सम्मिलित हैं, टोकरियाँ और सामान रखने के थैले बुनने में कुशल हैं। क्योंकि इस कौशल के लिए किन्हीं उपकरणों की आवश्यकता नहीं होती, इसलिए यह मानवीय इतिहास में आसानी से बहुत पुरानी वस्तु रही हो सकती है। कन्द-मूलों और फलों को उठाकर ले जाना काफी आसान है। परन्तु एक और कहीं अधिक आवश्यक वस्तु ऐसी हैं, जिसे एक जगह से दूसरी जगह ले जाना एक टेढ़ी समस्या है। यह वस्तु है—पानी। अवमानवीय प्राइमेट (वानर) अन्य पशुओं की भाँति पानी वहीं पी लेते हैं, जहाँ वह बह रहा होता है। केवल मनुष्य ऐसा है, जो उसे ढोकर वहाँ ले जाता है, जहाँ कि वह रहता है। तस्मानिया-वासी जो उद्योग विद्या की दृष्टि से सबसे सीधे-सादे लोग हैं, तब तक, जब तक कि उनका पता चला था, इस समस्या को पूरी तरह हल नहीं कर पाये थे। अधिकांशतया वे झरनों और जलधाराओं पर जाकर ही पानी पी लेते थे। उनके पास पानी रखने के लिए एक प्रकार की बड़ी-बड़ी नरचुलों के खोखले अंशों के सिवाय और कोई पात्र नहीं था। इन नरकुलों का प्रयोग भी वे केवल तभी करते थे, जबकि वे समुद्र-तट के निकट होते थे। सौभाग्य से तस्मानिया में झरने और जलधाराएँ बहुत दूर-दूर नहीं हैं। आस्ट्रेलिया में, जहाँ कि जल के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्रोत एक-दूसरे से बहुत दूर-दूर हैं, आदिवासी लोग पानी को लकड़ी को खोद कर बनाई गई कूंडियों में भर कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते थे। सम्भाव्यतः इन कूंडियों को बनाने में उन्हें अन्य किसी भी वस्तु को बनाने की अपेक्षा अधिक परेशानी उठानी पड़ती थी। पानी के ऊपर थोड़ी-सी पत्तियाँ डाल दी जाती थीं, जिससे वह ले जाते समय छलक कर गिरे नहीं। दक्षिणी अफ्रीका में बुशमैन मरुस्थल में पानी शतुरमुर्ग के अण्डों के खोलों में भर कर ऐसे स्थानों पर रखते थे, जहाँ शिकार करते समय उन्हें उस पानी की आवश्यकता पड़ सकती थी। टियेरा डेल फुएगो में नौकारोही (कैनो) आदिवासी (याहगन) भूर्ज वृक्ष की छाल को सीकर बनाई गई बाल्टियों में, जिन्हें लाल रंग दिया गया होता था, पानी भर कर एक जगह से दूसरी जगह ले जाते थे और पदाति (फुट) आदिवासी (औना) इसी प्रकार वाहकुरंग (ग्वैनैको) की खाल को सीकर बनाई गई थैलियों का उपयोग करते थे।

आधुनिक आदिम लोगों की खाना पकाने की पद्धतियों के विषय में जो कुछ हमें मालूम है, उससे इस बात की सम्भावना कम ही प्रतीत होती है कि प्लीस्टोसीन के अन्तिम भाग में रहने वाले हमारे पूर्वज भूनने के सिवाय अन्य किसी पद्धति का प्रयोग करते थे। तस्मानियावासी, आस्ट्रेलियावासी, फुएगोवासी और बुशमैन, सबके सब अपना भोजन इस प्रकार तैयार करते हैं, या तैयार करते थे, कि वे उसे आग के ऊपर रख देते हैं; कभी-कभी वे उसे साफ़ भी करते हैं, किन्तु प्रायः साफ़ नहीं करते। तस्मानियावासी और अधिकाँश आस्ट्रेलियावासी उसकी खाल उतारने तक का कष्ट नहीं करते। कृषि का आरम्भ होने से पहले उबालने की विधि का कोई स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध नहीं है। साथ ही इस समय जीवित बचे हुए आदिम लोग अधिकाँशतः भोज्य वस्तुओं के परिरक्षण की विधि से अनजान ही हैं। ऊपर उल्लिखित सभी लोग चर्बी-शिला (ग्रीज़ स्टोर) को काम में लाते थे। यह पत्थर का एक चपटा टुकड़ा होता था, जिसके ऊपर वे फालतू बची हुई वसा को रखकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते थे। यह बहुत कुछ वैसी ही वस्तु थी; जैसे आजकल का कोई गृहिणी बेकन (सूअर का माँस) में से टपकने वाली वसा की बूँदों को किसी पुराने कॉफ़ी के डिब्बे में बचाकर रख लेती है। यह चिकनाई, जो अनेक बातों के लिए उपयोगी थी, संकटकालीन आहार के तौर पर खाई जा सकती थी।

यह बहुत सम्भव है कि यूरोप और एशिया में रहने वाले उपरि पुरा पाषाणिक मनुष्य सर्दी के परिरक्षक गुण का लाभ उठाते हों और शीत काल में माँस को सप्ताहों या महीनों तक बचाकर रख पाते हों। परन्तु हिमाच्छादन के वाद के काल में बड़े पैमाने पर मछली मारने का आरम्भ होने से पहले खाद्य परिरक्षण की अन्य तकनीकों का कोई प्रमाण हमें नहीं मिलता। इसका यह अर्थ नहीं है कि उस समय ये तकनीकें थीं नहीं, अपितु केवल इतना है कि हमें उनके विषय में मालूम नहीं है।

समकालीन प्रमाणों से हमें आरम्भिक वस्त्रों का भी बड़ा घटिया सा चित्र प्राप्त होता है। तस्मानियावासी सीली जलवायु में, जहाँ कि वर्ष भर का औसत तापमान 54 अंश फारनहाइट और जुलाई का औसत तापमान 45 अंश फारनहाइट होता है, नंगे ही रहने के आदी हैं। बच्चों वाली स्त्रियाँ बच्चे को अपनी पीठ पर बाँधने के लिए कंगारू की खाल का उपयोग करती थीं और सर्दियों में पुरुष और स्त्रियाँ दोनों ही कभी-कभी अपनी पीठ पर कंगारू की एक या दो खालों को रेशे की डोरियों से सीकर बनाये गए वस्त्र डाल लेते थे और इस वस्त्र को डोरियों द्वारा गर्दन या कमर पर बाँध लिया जाता है। टियेरा डेल फुएगो के अत्यन्त शीतल जल में याहगन लोगों के लिए पीठ पर सील मछली का चमड़ा डाल लेना उन्हें गर्म रखने के लिए काफी होता था। उसके साथ-साथ वे अपनी नौकाओं में मिट्टी से बनाये हुए अग्निकुंडों में आग जलाये रखते थे। रात में वे अपनी झोपड़ियों के अन्दर भी आग रखते थे।

टियेरा डेल फुएगो के पर्वतीय मेरुदंड के उत्तर की ओर स्थित ऊँचे मैदानों में, जहाँ शीतलतम महीनों में औसत तापमान 24 डिग्री फारनहाइट तक नीचे रहता है. ओना आदिवासियों ने अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं के उपयुक्त एक सीधा-सादा वस्त्र तैयार कर लिया था। वाहकुरंग (ग्वैनैको) की कई गरम खालों को इकट्ठा सीकर वे एक वस्त्र बनाते थे, जो इतना बड़ा होता था कि उनके सारे शरीर को ढक ले; और वे अपने पैरों के लिए मकासिन (हिरन के चमड़े के जूते) भी बनाते थे। इस वस्त्र को पकड़े रहने की आवश्यकता के कारण उनका एक हाथ काम में नहीं आ सकता था, इसलिए शिकारी को यह आदत पड़ जाती थी कि जब वह अपने धनुष से निशाना साधने लगता था, तो वह अपने वस्त्र को जमीन पर गिरा देता था।

इस प्रकार का वस्त्र ऐसे ठंडे जलवायु में तो, जैसा कि अमेरिका में मैसाचुसैट्स या मिचीगन का है, काम चला सकता है, परन्तु हिमाच्छादन के बढ़ाव के दिनों में, जबकि हमारे कुछ पूर्वज वहाँ महाहस्तियों (मैमथों) का शिकार करने निकलते थे, रूस के बीहड़ मैदानों में यह वस्त्र काम नहीं दे सकता था। उनके पास अवश्य ही कोई ऐसा परिधान रहा होगा, जो न केवल शरीर को गर्म रखता होगा, अपितु उन्हें कपड़े पहने-पहने निर्बाध रूप से गति भी करने देता होगा। निगमनात्मक (आनुमानिक) आधार पर वस्त्रों के ज्ञात इतिहास को और आधुनिक शीतल जलवायु वाले प्रदेशों में रहने वाले लोगों में पाये जाने वाले वस्त्रों के प्रकारों को आधार मानते हुए यह स्थापना करने का मन नहीं होता कि उस समय तक ऐस्किमो पोशाक का आविष्कार हो चुका था। ऐस्किमो पोशाक और ओना लोगों की पोशाक के बीच की कोई वस्तु उस समय रही होगी, जिसमें कपड़े पहने-पहने मनुष्य अपनी बाहें भली-भाँति हिला-डुला सकता होगा। पैरों में पहनने के लिए गर्म जूते भी उनके पास अवश्य रहे होंगे। तत्कालीन गुफ़ा चित्रों में पुरुषों को नग्न और स्त्रियों को पूंछदार लंहगे या ऐप्रन पहने दिखाया गया है। सम्भाव्यतः यह ग्रीष्म ऋतु की और घर के अन्दर पहनने की पोशाक थी।

उपरि पुरा पाषाणिक स्थलों पर लाल गेरू की मात्राएँ, प्रायः लौह ऑक्साइड के चूरा किये गए और घिसे गए डलों के रूप में पाई गई हैं। हो सकता है कि इन डलों को पशुओं की वसा में मिलाकर बनाया गया हो। लगभग आजकल जीवित सभी शिकारी इस प्रकार के मिश्रण का उपयोग प्रसाधन के रूप में करते हैं। वे इसे भूषात्मक नमूनों में अपने शरीर पर इस ढंग से पोत लेते हैं कि जिससे उनका गोत्र, लिंग या परिष्ठा (हैसियत) सूचित होती हो। वसा शीत से बचाव करती है और चिकनाई और लाल रंग का मिश्रण धूप से बचाव करता है। बहुत सम्भाव्य यह है कि इस सूझ का आविष्कार उपरि पुरा पाषाणिक काल का आरम्भ होने तक हो चुका होगा।

आरम्भिक परिवहन

कारण और कार्य की उस परम्परा में, जो प्राथमिक औज़ारों, वाणी और आग से शुरू होती है और जो गौण औज़ारों और खाद्य के परिरक्षण और

सिलाई जैसी तकनीकों में से होकर गुज़री है, तकनीकी अर्थों में उसकी अन्तिम उपज परिवहन और संचार है। लोगों को और उनके सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना और उनको एक दूसरे से बात करवाना ही वह वस्तु है, जिससे समाजों का आकार और जटिलता बढ़ती है। उपरि पुरा पाषाणिक युग और मध्य पाषाणिक युग के मनुष्यों के संचार (संदेश प्रेषण) के सम्बन्ध में हमें इसके सिवाय लगभग कुछ भी मालूम नहीं कि ऐसा प्रतीत होता है कि शिकारी लोग एक मौसम में मारे हुए अपने शिकारों की गिनती छड़ियों पर निशान खोदकर रखा करते थे। परन्तु यह भी हो सकता है कि ये संख्याएँ विवाहों के लिए भेजे गए औपचारिक निमन्त्रणों की सूचक हों और लकड़ियों पर खुदी हुई ये लकीरें उन दिनों की संख्या बताती हों, जिनके बीतने के बाद वह समारोह होना है। आस्ट्रेलियावासी इस प्रकार की संदेश प्रेषण की छड़ियाँ बनाते हैं।

जहाँ तक हम कह सकते हैं, उपरि पुरा पाषाणिक शिकारियों के पास अन्तिम बार हम हिम के पिघलने से पहले उनके अपने अंग-प्रत्यंगों की शक्ति के सिवाय परिवहन का और कोई साधन नहीं था। यही बात दक्षिणी गोलार्द्ध में इस समय पाये जाने वाले आहार संचयक लोगों के विषय में भी सत्य है। इन लोगों को जब स्थल पर यात्रा करनी होती है, तब वे अपना सामान अपनी पीठ या सिर पर लाद कर पैदल चलते हैं। मध्य पाषाणिक काल में यूरोपवासी मनुष्य ने स्लैज और स्की, दोनों का आविष्कार किया, जिससे उसे शीत काल में एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्वयं जाने और अपने सामान को ढोकर लाने-ले जाने में सहायता मिली। ग्रीष्म काल में वह लकड़ी को खोद कर बनाई गई नौकाओं को जंगलों में होकर बहने वाली नदियों में लग्गी से खेकर एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाता था। स्लैज और स्की की भांति ये नौकाएँ भी दलदलों में परिरक्षित मिली हैं।

आस्ट्रेलियावासी, और तस्मानियावासी भी, जिनके औज़ार उपरि पुरा पाषाणिक यूरोपवासियों की अपेक्षा घटिया थे, धाराओं को पार करने लायक नौकाएँ बनाने में समर्थ थे। इस सकार की नौकाएँ नदियों के किनारे उगने वाले सैंकड़ों सरकंडों को इकट्ठा करके और उन्हें घास या छाल की रस्सियों द्वारा एक लम्बे सिगार की आकृति के बंडलों में बाँधकर बनाई जा सकती हैं।

इस प्रकार के तीन बंडल आपस में इस प्रकार जोड़ दिये जाते हैं कि उनमें से एक बंडल तली के रूप में और दो पार्श्वों के रूप में रहते हैं। इस प्रकार की नाव में एक या एक से अधिक यात्री बैठ सकते हैं। मिश्रवासी इस प्रकार सरकंडों के बडण्लों से बनी हुई नौकाओं का उपयोग नील नदी में बहुत प्राचीन काल में करते थे और बोलीविया तथा पेरू के आदिवासी उन्हें आजकल भी तीतीकाका झील में चलाते हैं। इस प्रकार की नाव बनाने के लिए किसी औज़ार की आवश्यकता नहीं है। मनुष्य उन्हें अपने इतिहास के किसी भी काल में बना सका होगा; परन्तु उसने उन्हें कब बनाना शुरू किया, यह एक रहस्य ही है।

हिम युग के पिछले भाग के शिकारियों का सामाजिक और बौद्धिक जीवन

इन सब नये तकनीकी साधनों के उपयोग के कारण उपरि पुरा पाषाणिक मनुष्य को निम्न और मध्य कालों के अपने पूववर्ती लोगों की अपेक्षा अनेक सुविधाएँ हो गई थीं। वह समय और प्रयास, दोनों की ही दृष्टि से पहले की अपेक्षा अधिक सुचारू रूप से शिकार कर सकता था और वह अपना भोजन अपेक्षाकृत जल्दी खा सकता था। अधिकांश परिवेशों में उसके समुदायों (बिरादरियों) का आकार सम्भाव्यतः पहले की अपेक्षा बड़ा था और आध्यापन तथा समारोहों के लिए मिल सकने वाला समय भी पहले से अधिक था। स्वयं पुरातत्वीय अभिलेख से भी हमें इससे पूर्ववर्ती कालों की भाँति उसकी सामाजिक संरचना (गठन) के सम्बन्ध में कुछ संकेत उपलब्ध होते हैं। परन्तु अब हमें इस सम्बन्ध में विचार बनाने के लिए, कि मानवीय प्राणी किस प्रकार एक दूसरे के साथ निर्वाह करते होंगे, इस समय जीवित कपियों का अध्ययन करने की आवश्यकता नहीं है। इस प्राचीन सांस्कृतिक स्तर के इस समय बचे हुए लोगों से हमें प्रभूत मात्रा में प्रमाण मिल जाते हैं और उनकी सहायता से हम एक साधारण चित्र तैयार कर सकते हैं।

उस समय कोई व्यक्ति जिस विश्व में रहता था, वह विश्व स्वयं उस व्यक्ति, अन्य लोगों, दुनिया के उस मानवेतर अंश, जिसे वह देखता था और अनुभव करता था, और उन बहुत-से प्रतीकों से मिलकर बना था, जिनका उसके लिए उस जीवन-प्रणाली में बहुत महत्त्व था, जिसमें वह और उसके साथी

जीवन-यापन करते थे । व्यक्ति पच्चीस वर्ष की आयु तक घर से बाहर के जीवन की कठिनाइयों को पार कर चुकने के बाद स्वस्थ और, चिड़ियाघर के रक्षकों की भाषा में, खूब हृष्ट-पुष्ट होता था : वह अपने पूर्ण यौवन में अत्यधिक कार्यक्षम प्राणी होता था । कुछ देर के लिए यदि यह मान लें कि वह व्यक्ति नर था, तो निस्सन्देह उसके एक या एक से अधिक पत्नियाँ और बच्चे होते थे । उसके कई भाई और बहिनें तथा अन्य निकट सम्बन्धी होते थे । सम्भवतः उसके माता-पिता भी तब तक बचे होते थे, परन्तु यदि वे पिता या माता जीवित हों. तो उस पैंतालीस या पचास वर्ष की आयु में उसे वृद्ध समझा जाता था—वस्तुतः वह जराजीर्णता की अन्तिम अवस्था में होता था । वह मनुष्य जिन व्यक्तियों को, जो अधिकांशतः उसके निकट सम्बन्धी होते थे, देखने का आदी था और उनसे उसका संव्यवहार होता था, उनकी कुल संख्या पचास से कम ही होती थी । वह जिन भी किन्हीं व्यक्तियों को देखने का अभ्यस्त था, उनमें से हरएक को वह जानता होता था । व्यवहार की विधियाँ हज़ारों वर्षों से इस प्रकार सावधानी से बनाई जाती रही थीं कि उसे ठीक-ठीक पता होता कि जब उसे उसकी सास रास्ते में आते हुए मिल जाय, तो उसे क्या करना चाहिए या उसे अपने वृद्ध पिता को जीर्ण और टूटे हुए दांतों से चबाने के लिए मांस का कौन-सा खंड देना चाहिए ।

यदि वह किसी अपरिचित को देख पाता, तो वह बहुत सावधान रहता । यदि किसी विशेष प्रकार के शरीर पर किये गए लेप या किसी अन्य स्पष्ट चिह्न द्वारा वह यह देख लेता कि अपरिचित व्यक्ति किसी शत्रु दल का सदस्य है, तो वह या तो उसे मार डालता या उससे छिप जाता । मारने या छिपने का चुनाव किसी सीमा तक उन दोनों के मिलने पर निर्भर होता था । यदि वह स्थान उसके अपने घरेलू प्रदेश में होता और वह अपरिचित व्यक्ति अनधिकृत रूप से उस इलाके में आया हुआ प्रतीत होता, विशेष रूप से यदि वह चोरी से शिकार कर रहा होता, तो उसका जवाब यही होता कि उसे बर्छी फेंक कर मार डाला जाय । यदि हमारा मनुष्य स्वयं ही चोरी से शिकार कर रहा होता, तो सुनिश्चित रूप से वह आक्रमण करने के बजाय छिपने का यत्न करता । परन्तु यदि अपरिचित व्यवित अपने शरीर पर किसी विशेष प्रकार का लेप किये रहता—उदाहरण के लिए इस बात का सूचक लेप कि वह

व्यापार करने आया है—या किसी एक दल से दूसरे दल के पास किसी प्रकार का सन्देश ले जा रहा होता, तो हमारा मनुष्य उसके पास पहुँचकर उससे मिलता और विनम्र विधियों के अनुसार या तो केवल वाणी द्वारा, या यदि दोनों किसी एक ही भाषा को न जानते होते, तो संकेत-भाषा द्वारा वार्तालाप शुरू हो जाता।

मानवेतर जगत् के साथ सम्बन्ध भी प्रचुर थे और महत्त्वपूर्ण थे। पशुओं की ओर, क्योंकि वे संख्या में मनुष्यों की अपेक्षा अधिक थे, मनुष्य का ध्यान सदा बना रहता था। वह दिनानुदिन उनका शिकार करता था। यहाँ तक कि पच्चीस वर्ष की आयु होने तक वह उनकी आदतों को भली-भाँति जान जाता था और यहाँ तक कि वह अलग-अलग भालुओं और भेड़िओं को व्यक्तिशः उनके पद चिह्नों को देखकर पहचान लेता था। वह यह भी बता सकता था कि वे स्वस्थ हैं या बीमार; उनका पेट भरा है या वे भूखे है; वे बूढ़े हैं या जवान; नर है या मादा; मादा गर्भवती है या उसके छोटे-छोटे बच्चे हैं। उसे यह भी पता था कि शीन वृक (वोल्वराइन) कब पेड़ पर चढ़ सकता है, या कोई रीछ कब किसी ठूँठ पर उसकी घात में बैठा हो सकता है। उसके अनेक पूर्वजों और सम्बधिन्यों को पशुओं ने पंजों या दाँतों से चीर-फाड़कर मार डाला था; और इन पाठों को भुला नहीं दिया गया था। पशुओं की ओर ध्यान देने में उसका उतना ही समय और उतनी ही ऊर्जा लगती थी, जितनी कि आजकल किसी व्यक्ति का समय और ऊर्जा उसके अपने धन्धे में लगती है। शिकार के कारण उसे लगातार कई दिन तक अपने शिविर से दूर रहना पड़ता था और यदि वह अकेला ही शिकार न कर रहा हो, तो उसका साहचर्य केवल अन्य दो या तीन मनुष्यों तक ही सीमित रह जाता था।

स्त्रियों के लिए पौधों की दुनिया (वनस्पति जगत्) लगभग इतनी ही तल्लीन करने वाली थी। वनस्पतियों से कन्द, मूल और बेर जैसे फल और रसभरी पत्तियाँ प्राप्त होती थीं, जिनसे तरह-तरह का भोजन बनता था, जो न केवल आवश्यक पौषणिक तत्व प्रदान करता था, अपितु जब शिकार नहीं मिलता था, तब वही प्राण-धारण का भी सहारा होता था। वनस्पतियों से भोजन पकाने के लिए और परिवार को सर्दी से बचाने के लिए ईंधन प्राप्त होता था। वनस्पतियों से टोकरियाँ और थैले, रस्सियाँ और चटाइयाँ बनाने

के लिए रेशे प्राप्त होते थे। वनस्पतियों में रोग को ठीक करने और पीड़ा को कम करने के रहस्यमय गुण भी थे। इन गुणों का आरोप उन आत्माओं या भूत-प्रेतों पर किया जाता था, जो या तो दृश्य रूप से पौधों में स्वयं रहती थीं, या उनकी मार्फत अपना काम करती थीं। जली हुई लकड़ी एक और प्रकार की वस्तु बन जाती थी—लकड़ी का कोयला—काला रंग। खनिज जगत् से लौह ऑक्साइड लाल रंग के रूप में प्रयोग के लिए और खड़िया (केओलिन) सफेद रंग के रूप में प्रयोग के लिए प्राप्त होती थी। चकमक भी आधारभूत वस्तु था और चकमक भूमि के हर किसी भाग में प्राकृतिक रूप से नहीं पाया जाता था। जिनके पास चकमक था, वे उसका व्यापार कर सकते थे, या अन्य कबीलों के लोगों को अपने क्षेत्र में आकर खानों में से चकमक निकालने की अनुमति दे सकते थे। इस प्रकार की उदारता का प्रतिफल इस रूप में मिल जाता था कि इससे अनेक दलों के सदस्यों को एक-दूसरे से मिलने का, अपने विचार दूसरों तक पहुँचाने का और लौह ऑक्साइड या विशेष प्रकार की लकड़ियों आदि अन्य वस्तुओं का व्यापार करने का अवसर मिल जाता था। केवल इस प्रकार के सम्मेलनों द्वारा ही चकमक के शल्क उतारने की नई तकनीक का प्रसार दूर-दूर तक हो सका होगा।

पहाड़ी के पार अपने पड़ौसियों से समय-समय पर सम्बन्ध बनाये रखना एक और कारण से भी अच्छी नीति थी; विशेष रूप से उस दशा में, जबकि उस क्षेत्र का जलवायु परिवर्तनशील हो, अर्थात् किसी साल वर्षा अधिक होती हो और किसी साल कम। कल्पना कीजिये कि 'क' गिरोह के क्षेत्र में सूखा पड़ने के कारण अधिकाँश पशु भाग कर 'ख' गिरोह के प्रदेश में चले जाते हैं। उस दशा में यदि 'क' गिरोह के लोग अपना प्रदेश छोड़कर कहीं अन्यत्र न जा सकें, तो वे भूखों मर जाएँगे। परन्तु यदि वे 'ख' गिरोह के लोगों से अनेक बार मिल चुके हों, उनके साथ नृत्य कर चुके हों और समारोहों में सम्मिलित हो चुके हों, तो सम्भवतः उनका सन्देशवाहक यह निमन्त्रण लेकर वापस लौटेगा : 'यहाँ आजाओ और हमारे साथ शिकार में हिस्सा बटाओ।"

हर साल ऐसे कुछ समय होते हैं, जबकि भोजन अन्य समयों की अपेक्षा अधिक प्रचुर मात्रा में होता है। प्रचुरता के इन समयों में कुछ वर्गमील भूमि पर बहुत-से लोग जीवन-यापन कर सकते हैं। यही समय होता है, जबकि

लोग इकट्ठे हो सकते हैं; जब दो से लेकर आधा दर्जन तक गिरोहों के सदस्य दो या तीन सौ व्यक्ति परस्पर मिल सकते है। बहुत-से व्यक्तियों की प्रत्येक सभा के लिए कोई न कोई कार्य-सूची की आवश्यकता होती है, नहीं तो वह सभा एक अव्यवस्थित भीड़ बन जाती है और उसमें झगड़ा होने लगता है। इस प्रकार की सभाओं के लिए कार्य-सूचियाँ काल समादृत और परम्परागत होती हैं। वृद्ध पुरुष परस्पर औपचारिक ढंग से बातचीत करते हैं, नवयुवक कुश्ती लड़ते है और कुछ निश्चित समयों पर मनोनीत व्यक्ति उठकर नाचते हैं। वे अपने नृत्यों में कुछ पशुओं के व्यवहार से, इन पशुओं का पीछा करते हुए या उनकी घात में बैठे हुए शिकारियों के कार्यों से या बहुत पहले मर चुके पूर्वजों के प्रसिद्ध कार्यों में से ली गई अन्य घटनाओं का अभिनय करते हैं। रात हो जाने पर आग की चमक उनके रंगों से पुते हुए शरीरों और चेहरों पर पड़ती है। औपचारिक नृत्य की चर्या बदल जाती है और मिथुन झुरमुटों की ओर चल पड़ते हैं। यौन सम्बन्धों के सामान्य नियम टूट जाते हैं और इन निशीथ समागमों में केवल माता और पुत्र के, पिता और पुत्री के तथा भाई और बहन के आधारभूत वर्जन की ही रोक रहती है।

इस प्रकार की सभाओं से जैव प्रयोजन के साथ-साथ एक सामाजिक प्रयोजन भी पूरा होता था। जिन स्त्रियों के अपने पतियों के साथ यौन सम्बन्ध निष्फल रहे होते थे, उनको एक अवसर और मिल जाता था, जिससे सभी सम्बन्धित समूहों का जीवित बचे रहने की दृष्टि से मूल्य बढ़ जाता था। जीनों (जैन्स) का यह विनिमय ठीक उतना ही महत्त्वपूर्ण था। जितना कि चकमक के बदले विशेष प्रकार की लकड़ियों का व्यापार। जीनों का यह विनिमय विशेष प्रकार से समारोह की आड़ में किया जाता था और इससे परिवर्तन और वरण की उस प्रक्रिया में सहायता मिलती थी, जो योगदान देने वाले सब समाजों के बने रहने के लिए आवश्यक थी। इस प्रकार के सम्मिलनों के बाद विभिन्न समूहों में औपचारिक विवाह भी सम्पन्न होते थे।

स्वयं समूह में पिता, माता और बच्चों वाले कुछ थोड़े-से अलग-अलग परिवार होते थे। इन समूहों में साधारणतया दो, और कभी-कभी तीन पीढ़ियों के लोग होते थे, परन्तु अपने शरीर-क्रियात्मक पूर्ण यौवन के बाद कम ही व्यक्ति जीवित बचते थे। पीढ़ियों का अपने आप में कोई महत्त्व नहीं था।

यह हो सकता था कि कोई व्यक्ति स्वयं चालीस वर्ष का हो और उसका भाई बीस ही वर्ष का हो। किसी स्त्री की कन्या और बहन दोनों ही बराबर आयु की भी हो सकती थीं। आयु का महत्त्व अधिक था, क्योंकि एक-सी आयु और एक-से लिंग वाले व्यक्ति एक-से काम करते थे और उन कामों को मिलकर करते थे।

ये आयु समूह अलग-अलग चिह्नों द्वारा, वस्त्रों की शैली द्वारा, शरीर पर रंग पोतने की विधि के द्वारा या स्वयं व्यवहार द्वारा अलग पहचाने जाते थे। किसी भी एक गिरोह के सदस्यों द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली प्रतीकों की तालिका बिलकुल पूरी होती थी। इसमें लोगों के मध्य, और मानव प्राणियों और अ-मानव या अति मानव जगत् के मध्य सब सम्भावित सम्बन्धों का प्रतिनिधित्व रहता था। सबसे पहली बात भाषा का निर्माण है। हमें यह पता नहीं कि प्लीस्टोसीन के पिछले भाग के शिकारी कौन-सी भाषाएँ बोलते थे, किन्तु इतना हम अवश्य कह सकते हैं कि वे भाषाएँ अनेक थीं। आजकल जीवित सरल शिकारियों की लगभग उतनी ही भाषाएँ होती हैं, जितने कि उन गिरोहों के समूह होते हैं, जो समृद्धि के मौसमों में समारोहों के लिए एक जगह इकट्ठे होते हैं। हमें इस बात का भी भरोसा है कि उनकी वे भाषाएँ उनकी आवश्यकताओं के लिए इस दृष्टि से प्रर्याप्त थीं कि शिकार किए जाने वाले प्रत्येक प्रकार के प्राणी के नामों की एक पूरी की पूरी तालिका होती थी, जिनसे उसका लिंग, आयु और उसकी दशा सूचित होती थी। यदि बर्फ़ महत्त्वपूर्ण वस्तु थी, तो बर्फ़ के लिए एक दर्जन या उससे भी अधिक शब्द होते थे, जबकि अंकों की सूची तीन या छः से सीधी 'बहुत' अर्थात् अनन्त तक पहुँच जाती होगी।

अन्य प्रतीक मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्ध को प्रकट करते थे। उपयोगी पशु या जड़ी बूटी की प्रत्येक श्रेणी की एक आत्मा होती थी, जो समय-समय पर अपने आपको लोगों के सामने प्रकट करती थी और लोगों को महत्त्वपूर्ण सन्देश देती थी। शिकार के क़ानूनों और पशुओं के संरक्षण के नियमों को वर्जनों की एक प्रणाली द्वारा कठोरतापूर्वक लागू किया जाता था, जिससे कुछ खास मौसमों में कुछ महत्त्वपूर्ण स्पीशिज़ें इस भय के कारण संरक्षित हो जाती थीं कि कहीं उनसे उनकी आत्माएँ बदला न लें। इन आत्माओं का शिकार में

सफलता पाने के लिए भी आह्वान किया जा सकता था। इसके लिए शिकारी लोग किसी विशेष प्रकार के प्राणी के पौराणिक सृजन की घटना का अभिनय किया करते थे। सबसे बड़ी बात यह है कि प्रकृति का वह समतुलन, जिसमें मनुष्य भी भाग लेता है, विचलित नहीं किया जाना चाहिए। समारोहों में प्रतीकात्मक ढंग से यह बात स्थापित की जाती है कि मनुष्य के लिए उन परिवेशों में, जिनमें कि वह रहता है, हिरन को मारना प्राकृतिक घटनाओं के स्वाभाविक क्रम का ही एक अंश है।

शिकारी के जगत् को केवल दूर तक फैले हुए भूभाग के उस अंश तक, जिस पर कि वह अपने शिकार का पीछा करता है, उसके अपने समूह के और पहाड़ी के पार रहने वाले मित्रों और शत्रुओं के समूहों के सदस्यों तक, जिन पशुओं और पौधों से वह जीवन धारण करता है, उन तक और इन पशुओं और वनस्पतियों की आत्माओं तक ही सीमित नहीं किया जा सकता। इस जगत् में उसके अपने पूर्वजों की आत्माएँ भी सम्मिलित होनी चाहिएँ; ये पूर्वज भले ही मर चुके हैं, फिर भी एक अर्थ में जीवित हैं। किसी मृत मनुष्य की आत्मा के जीवित बने रहने के समय की अवधि इस बात पर निर्भर रहती कि जो लोग अभी जीवित हैं, उनके लिए उस व्यक्ति का महत्त्व कितना था। यदि वह अपने पूर्ण यौवन में बढ़िया शिकारी, गिरोह का नेता, माँस का विभाजन करने वाला, झगड़ों का निपटारा करने वाला, बालकों का शिक्षक और एक अच्छा पति रहा था, तो उसकी मृत्यु के कारण उस गिरोह के जीवन में एक ऐसा विक्षोभ उत्पन्न होगा, जिसके कारण उसकी प्रतिमा गिरोह के अधिकांश सदस्यों के मन में बार-बार आती रहेगी। वह अवश्य ही साकार और निकट रहेगा। उससे प्रार्थना की जा सकती है, उसका आह्वान किया जा सकता है और उससे उन जैसे ही मामलों में, जिसका निपटारा करने का उसे अभ्यास था, निर्णय देने के लिए अनुरोध किया जा सकता है।

यदि वह एक मामूली शिकारी, घटिया पति और झगड़ालू व्यक्ति रहा हो, तो उसकी आत्मा धुँधली-सी होगी और बहुत वर्ष बीतने से पहले ही लोग उसे भूल जाएँगे। उसकी आत्मा लुप्त हो चुकी होगी। कुछ वर्ष बीत जाने पर और उस समय, जबकि कोई ऐसा जीवित व्यक्ति बाकी न रहे, जिसने कि उस महान् पुरुष को स्वयं देखा हो, जिसकी कि आत्मा मृत्यु के बाद भी महान् हो,

उस व्यक्ति के कारनामे शनैः-शनैः अतीत काल के उससे भी महानतर नायकों के कारनामों के साथ घुल-मिल जाते हैं और बाद में उसका नाम उन पुराने नायकों के नामों का स्थान ले लेता है। शनैः-शनैः यह अदृश्य जगत् स्थायी पात्रों से भर जाता है। ये वे नर और नारी होते हैं, जिन्होंने उस भूभाग को बनाया था, जिन्होंने अमुक पहाड़ी को ऊँचा उठाया था या अमुक झरने को निकाला था। उनमें से कुछ पात्र पुरुषों और स्त्रियों, तरूणों और वृद्धों, मनुष्यों और प्रकृति के मध्य विक्षोभ के क्षेत्रों के प्रतीक होते हैं। इनमें से अन्तिम श्रेणी में आने वाले प्रमुख पात्र मौसम हैं; तूफान किसी ऐसी महान् आत्मा के क्रोध के कारण उत्पन्न हो सकते हैं, जो उन मनुष्य प्राणियों के किसी अनजाने किये गए ऐसे कार्यों से क्षुब्ध हो उठी है, जिससे दल के अन्दर लोगों के पारस्परिक सम्बन्ध बिगड़ते हों।

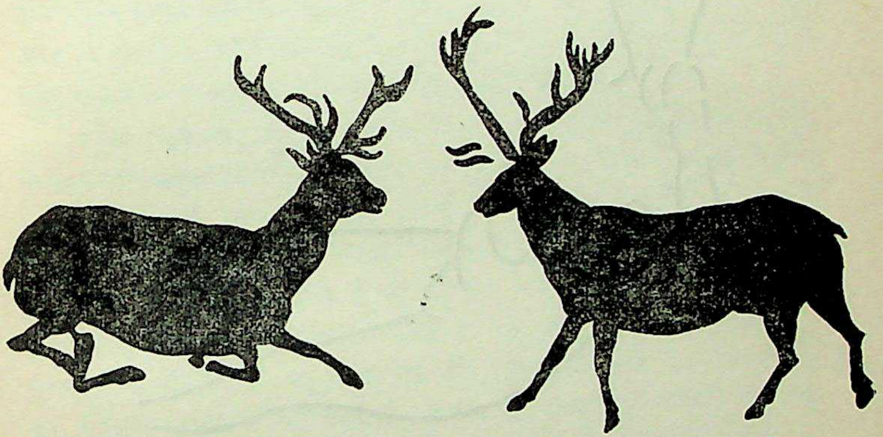

गुफा चित्रों की शरीर-रचनात्मक दृष्टि से निर्दोष कला—स्पेन में क्रीटास (टेरूएल) के निकट कैलापेटा गुफा में बारहसिंगे।

विक्षोभ की अवस्था में हमें जिस वस्तु से बड़ी शान्ति मिलती है, वह कला है। सौभाग्य से उपरि पुरा पाषाणिक युग के मनुष्यों की उत्कृष्ट कला फ्रांस, स्पेन और इटली की गुफ़ाओं में सदा एक से बने रहने वाले तापमान और आर्द्रता के कारण परिरक्षित रही है। ये गुफ़ा-चित्र, जो खनिज रंगों से बनाये

गए हैं और वे रूप रेखाएँ, जो तक्षणियों से खोदी गई हैं, सब कालों की उत्कृष्ट कला-कृतियों में से हैं। पशुओं के शरीरों का निर्दोष अंकन इस बात का सूचक है कि ये चित्रकार, जो उत्कृष्ट मानचित्रकार थे, उन पशुओं की शरीर-रचना को अंतरंग रूप से जानते थे, जिनके चित्र वे बनाते थे। जब उन्होंने उन पशुओं के चित्र बनाने शुरू किये, उससे पहले उन्होंने ऐसे दर्जनों पशुओं का भली भाँति शवच्छेदन किया होगा; ठीक उसी प्रकार, जैसे कि लियोनार्दो अपनी कला के लिए मनुष्यों के शरीरों का शवच्छेदन किया करता था। एक विख्यात चित्रकार पर्सी लीसन के कथनानुसार मगदेलीन गुफ़ाओं में पशुओं के अनेक चित्र इस दृष्टि से बनाये गए हैं कि वे पशु मृत दिखाई पड़ें। केवल लास्कौ गुफ़ा के शानदार भित्ति चित्रों में गठन (कम्पोज़ीशन) दिखाई पड़ती है, परन्तु हड्डियों पर की गई नक्काशियों में पशु साभिप्राय रूप से समूहों में चित्रित किये गए हैं।

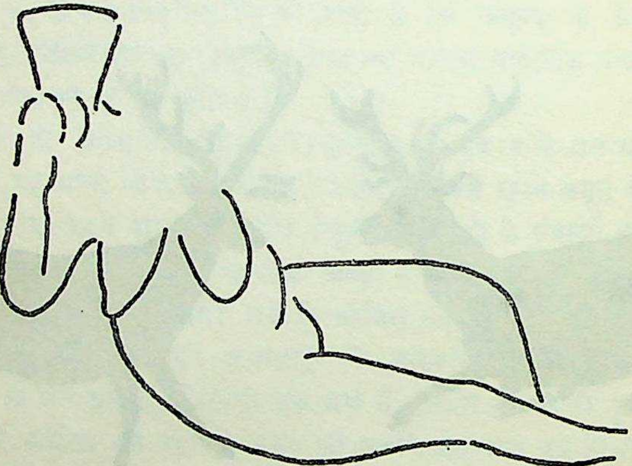

उपरि पुरा पाषाणिक भित्ति पर की हुई नक्काशी, ला मगदेलीन फ्रांस

पालमों के निकट सिसली की एक गुफ़ा में नकाब पहन कर नृत्य करने वाले लोगों के समूह का एक विलक्षण रूप से गठित चित्र है। इन नर्तकों ने दो वध्य पुरुषों को घेरा हुआ है। इन पुरुषों को उनकी एड़ियों से उनकी गर्दनों

तक चमड़े की रस्सियाँ खींचकर उनका गला घोटा जा रहा है।[1] जैसा कि उन लोगों के साथ प्रायः होता है, जिनका कि गला घोटा जा रहा हो, या जिनकी गर्दनें टूट गई हों, या ये दोनों ही बातें हों, इन दो वध्य पुरुषों को इस रूप में चित्रित किया गया है कि उनका शिश्न-हर्षण हो रहा है। नर्तक लोग अपने हाथ उठाये उन्हें घेरे हुए हैं। उनके नकाबों को पहचानना कठिन है, और हो सकता है कि वे पक्षियों या पशुओं के सिरों के द्योतक हों। उनमें से कुछ अन्तरिक्ष-यात्रियों के शिरस्त्राण जैसे दिखाई पड़ते हैं।

अनेक पुरातत्ववेत्ताओं और अन्य विशेषज्ञों ने इस बीभत्स दृश्य की व्याख्या के सम्बन्ध में अनुमान लगाये हैं, परन्तु वे किन्हीं सुनिश्चित निष्कर्षों पर नहीं पहुँचे।

एक फ्रांसीसी गुफ़ा में बढ़िया ढंग से खींचे गए एक चित्र में एक शिकारी शृंगोंवाला छद्म वेश धारण किये हुए चित्रित किया गया है। मनोवैज्ञानिकों और समीक्षकों को इस कलाकृति में अनेक प्रकार के दूषित अभिप्राय दिखाई पड़े हैं। परन्तु एक मानव-वैज्ञानिक की दृष्टि में, जो आदिमकालीन शिकारी की तकनीकों से परिचित है, यह केवल एक ऐसे मनुष्य का चित्र है, जो हिरनों का शिकार करने के लिए उद्यत है। शायद वह शिकार का अभ्यास कर रहा है, या शायद वह वन की उस आत्मा से, जो हिरनों को वश में रखती है, प्रार्थना कर रहा है कि वह कोई मोटा-सा हिरन उसके सामने भेज दे। परन्तु मेरे विचार से तो यह चित्र उड़ान शुरू करने से पहले विद्युत् द्वारा गर्म होने वाली समताप-मंडलीय पोशाक धारण करते हुए किसी अमेरिकन के चित्र की अपेक्षा कुछ भी अधिक दूषित भावना युक्त नहीं है। इसे चित्रित करने में कलाकार का बाह्य उद्देश्य कुछ भी क्यों न रहा हो, किन्तु उसने यह चित्र इसलिए बनाया, क्योंकि उसे अपने अन्दर सृजन की प्रेरणा अनुभव हुई और उसने अपने आपको अभिव्यक्त करना चाहा, जैसा कि प्रत्येक कलाकर चाहता है, चाहे वह किसी गुफा की दीवार पर किसी बिसन (भैंसे) का चित्र बना रहा हो, या फिर किसी बैंक के मुख्य हाल में कोई भित्ति-चित्र बना रहा हो।

---

[1] यह और अन्य सैकेड़ों पुरा पाषाणिक कलाकृतियाँ पाओलो ग्रेज़ियोसी की पुस्तक 'पेलियोलिथिक आर्ट' में दी गई हैं, जो मैकग्रौ हिल, न्यूयार्क द्वारा 1960 में प्रकाशित की गई है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हिम-युग की संस्थाएँ

समूह शब्द के, जिसका कि एक सामान्य अर्थ है, स्थान पर समाजशास्त्र-वेत्ता 'संस्था' शब्द का प्रयोग करते हैं, जो अपेक्षाकृत अधिक तकनीकी शब्द है और इसका प्रयोग एक विशेष अर्थ में किया जाता है। किसी भी संस्कृति में व्यक्ति जिन संस्थाओं का अंग हो सकता है, वे हैं—परिवार, आर्थिक संस्था, राजनीतिक संस्था, धार्मिक संस्था, शैक्षणिक संस्था और संघ। क्योंकि इस पुस्तक का मूल स्वर ही उस पद्धति का लेखा प्रस्तुत करना है, जिसके द्वारा मानव प्राणी अनजाने ही प्रकृति की शक्तियों पर अधिकाधिक नियन्त्रण करने के और अपने बढ़ते हुए तकनीकी कौशल के द्वारा अपनी संस्थाओं के आकार और जटिलता को बढ़ाते गए हैं, इसलिए हमें इस बात का ठीक-ठीक निश्चय कर लेना चाहिए कि 'संस्था' शब्द का अर्थ भली भाँति समझ लिया गया है। यदि आप कभी-कदास गिरजाघर में जाते हैं और उसके सदस्य नहीं हैं, तो आप धार्मिक संस्था के अंग नहीं हैं। वह विशिष्ट धार्मिक संस्था उन कुछ सदस्यों से मिलकर बनी है, जो नियमित रूप से गिरजाघर में जाते हैं और वहाँ अपने नेता के शब्दों और मुद्राओं से एक साथ प्रतिभावित होते हैं। इसी प्रकार जो लोग नियमित रूप से किसी कारखाने में काम करते हैं और अपने नियोक्ता (मालिक) के आदेशों का पालन करते हैं, वे एक आर्थिक संस्था के अंग हैं। यदि वे किसी यूनियन के सदस्य हैं, तो वे एक संघ के भी अंग हैं। यदि आप अविवाहित और अनाथ दोनों ही नहीं हैं, तो आप एक परिवार के अंग हैं।

शिकार की तकनीकों से संस्थाओं में यह अन्तर है कि वे कोई ऐसे पुरातत्वीय अवशेष नहीं छोड़ जातीं, जिन्हें आसानी से खोज कर निकाला जा सके, किन्तु केवल जहाँ-तहाँ कुछ थोड़े-से संकेत मिल जाते हैं। आजकल जीवित शिकारियों की सामाजिक प्रणालियों के साक्ष्य के साथ-साथ बहुत कुछ निगमन (अनुमान) प्रणाली का उपयोग करने से हमें उस काल की संस्थाओं की रूपरेखा तैयार करने में सहायता मिलती है। हमारी इस तैयार की हुई रूपरेखा के अनुसार हिमयुग के अन्तिम भाग में परिवार एक घनिष्ठ रूप से गठित निकाय था, जैसा कि वह लगभग सदा ही रहा है। परिवार में दो और

कभी-कभी तीन पीढ़ियाँ एक समय में रहती थीं, परन्तु इससे अधिक पीढ़ियाँ बहुत ही विरल पाई जाती थीं। वह इस दृष्टि से अपने आप में एक आर्थिक संस्था भी था कि यह अपना भोजन, वस्त्र, उपकरण और शरणस्थान (घर) स्वयं तैयार करता था। गिरोह एक प्रभुतासम्पन्न राज्य था, जिसका अनौपचारिक रूप से कोई नेता असाधारण शिकारी होता था; वह अच्छी सूझ-बूझ का आदमी भी होता होगा, हालांकि सम्भाव्यतः अपेक्षाकृत बड़ी आयु के पुरुष एक समूह के रूप में मिलकर महत्त्वपूर्ण निश्चय किया करते होंगे। वे स्वयं ही एक न्यायालय के रूप में भी कार्य करते थे। यदि कोई सदस्य इतना विक्षोभ उत्पन्न करता था कि उससे सामाजिक प्रक्रियाओं के सामान्य गति में बाधा पड़ती थी, तो प्रौढ़ पुरुष किसी एक रात में इकट्ठे होकर उस आदमी को समाप्त कर देते थे। राज्य ने आर्थिक कृत्यों को भी अपने हाथ में ले लिया था। सर्वोत्तम शिकारी या अपेक्षाकृत वृद्ध पुरुष परिवारों में माँस का वितरण किया करते थे और इस बात का ध्यान रखते थे कि कोई व्यक्ति भूखा न रह जाय।

शैक्षणिक संस्था परिवार और गिरोह, दोनों के बीच सम्मिलित रूप से विद्यमान थी। शिशु की बिलकुल प्रारम्भिक शिक्षा उसकी माता, बड़ी बहनों और बड़ी बहन की आयु की अन्य लड़कियों द्वारा होती थी। जब बच्चा कुछ बड़ा होता था, तो वह अपनी आयु के अन्य बच्चों के साथ खेलने लगता था और उसके बाद लड़के अपने पिता के साथ शिकार के लिए जाने लगते थे और लड़कियाँ अपनी माता के साथ सामग्री संचय करने का काम करती रहती थीं। किशोरावस्था में पहुँचने पर लड़कों की शिक्षा का काम पूरी तरह गिरोह अपने हाथ में ले लेता था। लड़कों को एक समूह में अन्य लोगों से पृथक् कर लिया जाता था और यहाँ अपेक्षाकृत बड़ी आयु के लोग उन्हें अगली कठोर परीक्षाओं की परम्परा में से गुज़ारते थे, जिनमें अनेक बार अंग-भंग भी कर दिया जाता था। हम इस बात को इसलिए जानते हैं क्योंकि फ्रांसीसी गुफाओं की दीवारों पर कुछ ऐसे हाथों के छायाचित्र बचे रह गए हैं, जिनमें कुछ अँगुलियाँ काट दी गई हैं; और अलजीरिया तथा जर्मनी में किशोरावस्था से ऊपर की आयु वाले व्यक्तियों की कुछ ऐसी खोपड़ियाँ मिली हैं, जिनमें उनका ऊपर का मध्यम कृन्तक दन्त तोड़ दिया गया है। इस समय जीवित आदिम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लोगों में अंगुली काट देना और दाँत तोड़ देना किशोरावस्था के विद्यालयों में सामान्य तौर से किये जाने वाले अंग भंग हैं।

चेता-प्रणाली को इस प्रकार के झटके देने और उपवास कराने तथा रात्रि जागरण द्वारा किसी बालक को ऐसी शरीर-क्रियात्मक दशा में पहुँचाना कठिन नहीं था, जिसमें कि भूत प्रेत सरलता से दिखाई पड़ने लगें, विशेष रूप से तब, जबकि उस बालक से इस प्रकार के भूत-प्रेतों को देखने का यत्न करने के लिए कहा जाय। नकाब पहने हुए उन व्यक्तियों का, जो पूर्वजों तथा अन्य आत्माओं का अभिनय करते हुए सामने आते थे, उस बालक पर गहरा प्रभाव पड़ता था। इस गहरे संत्रासन के साथ-साथ इस सम्बन्ध में अनेक नाटकीय व्याख्यान भी दिये जाते थे कि तरुण पुरुषों से स्त्रियों के प्रति, बच्चों के प्रति, अपने से बड़ों के प्रति और पशुओं, वनस्पतियों और आत्माओं (भूत-प्रेतों) के जगत् के प्रति किस प्रकार के उचित व्यवहार की आशा की जाती है। इस पाठ्यक्रम में से गुज़रने वाले बालकों के जीवन काल में घटने वाली प्रत्येक सम्भावित परिस्थिति को ध्यान में रखा जाता था। क्योंकि यह विद्यालय अपेक्षाकृत प्राचुर्य और निष्क्रियता के समयों में ही लग सकता था, इसलिए अनेक गिरोह अपने वार्षिक सम्मेलनों के अवसर पर इसमें भाग लेते थे और जो बालक इसमें साथ रहे होते थे, वे भविष्य में एक-दूसरे को अपना सहपाठी समझते थे। इस प्रकार की शिक्षा संस्था बहुत बार राज्य की सीमाओं का भी अतिक्रमण कर जाती थी, जैसा कि हमारी अपनी संस्कृति में भी होता है, जब कि किसी अमेरिकन विश्वविद्यालय में एक दर्जन देशों से आये हुए विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हैं। पिछले अध्याय में बताये गए कारणों से मैं यह मानता हूँ कि ये वन-विद्यालय निम्न पुरा पाषाण संस्कृतियों जितने पुराने काल में भी थे।

हिमयुग के पिछले भाग की धार्मिक संस्था भी इसी प्रकार राजनीतिक सीमाओं का अतिक्रमण किये हुए थी और किसी भी स्वस्थ समाज में ऐसा होना भी चाहिए। उन पूर्वज वीर नायकों को, जो किसी एक गिरोह के पूज्य होते थे, वे अन्य गिरोह भी अपना दायक मानने लगते थे, जो समारोहों के अवसर पर गिरोहों से मिलते थे। किसी एक सम्प्रदाय के उन नायकों को भी, जिन्हें कि उस भूभाग का और वहाँ के पशुओं का जन्मदाता कहा जाता था,

अन्य सम्प्रदाय अपना नायक मान लेते थे और इसी प्रकार वृद्ध पुरुषों की बालकों को शिक्षा देने की क्षमताओं को भी परस्पर मिला दिया जाता था। धर्म उस व्यवहार का सर्वयोग है, जो किसी विक्षोभ के बाद व्यक्ति या समूह के समतुलन को फिर ठीक बनाने के लिए अपेक्षित होता है। प्रत्येक व्यक्ति कभी न कभी अपनी बीमारी के कारण, या अपनी पत्नी या पति या बच्चे की बीमारी के कारण विक्षुब्ध होता है और समूह के कल्याण के लिए इस विक्षोभ को यथासम्भव न्यूनतम स्तर तक कम कर दिया जाना चाहिए। विक्षोभ को कम करने या समाप्त करने के लिए अधिकतम मानवीय कौशल की अपेक्षा होती है। जिस व्यक्ति में इस प्रकार का कौशल हो, समूह के लिए उसका मूल्य अधिकतम होता है। यह कौशल किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जिसमें शुरू से ही इस बात की प्रतिभा हो, एकाग्रता, प्रशिक्षण और अभ्यास द्वारा अर्जित किया जा सकता है।

प्राचीनतम व्यवसाय-चिकित्सा

धार्मिक क्रिया-कर्म करने वाला व्यक्ति, शामन, सबसे पहला विशेषज्ञ था। सबसे प्राचीन व्यवसाय वेश्यावृत्ति नहीं, अपितु शामन का व्यवसाय है। इस विषय में कोई सन्देह नहीं हो सकता कि प्लीस्टोसीन काल के पिछले भाग में शामन विद्यमान थे, क्योंकि वे इस समय जीवित सब शिकारी लोगों में, यहाँ तक कि हाल में ही लुप्त हुए तस्मानियावासियों में भी पाये गए हैं।

शामन सामान्यतया कोई पुरुष होता है, हालांकि कभी-कभी कोई ऐसी स्त्री भी, जो सन्तान उत्पन्न करने की आयु को पार कर चुकी हो, इन कार्यों को कर सकती है। शामन जब बालक ही होता है, तभी से वह अपने साथियों से भिन्न होता है। वह कुछ सपने देखने वाला, बहकने वाला और कुसमंजित होता है। जिस समय यह आशा की जाती है कि वह शिकारी के रूप में अपनी कुशलता प्रदर्शित करेगा, उसके आस-पास वह बीमार पड़ जाता है। इस बीमारी के दिनों में उसकी ओर शामनों का ध्यान आकृष्ट होता है और वे पहचान लेते हैं कि यह उनका नया रंगरूट है। अन्य बालकों को उच्चतर शिक्षा के लिए जिन नियमित कार्यक्रमों में से गुज़रना पड़ता है, उनके स्थान पर या उनके अतिरिक्त इस नौसिखिये शामन को विशेषज्ञों द्वारा विशेष शिक्षा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दी जाती है। वे उसे अपने किसी एकान्त स्थान में छिपाकर रखते हैं। इस स्थान पर वह तरह-तरह के सपने देखता है और शिकारी लोग स्वप्नों को

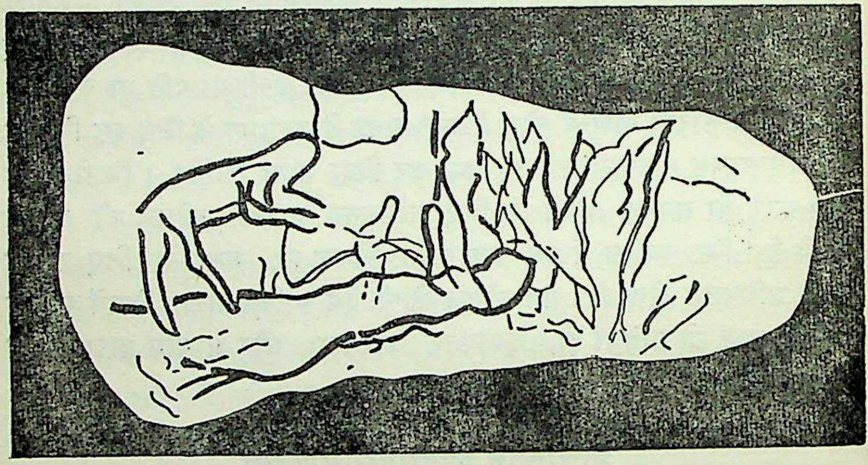

एक शामन एक रोगी का इलाज कर रहा है, एक फ्रांसीसी गुफ़ा चित्र

उतनी ही गम्भीरता से लेते हैं, जितना कि फ्रायड के अनुयायी मनोविश्लेषक। तब कुछ असाधारण बात होती है। हमें बताया गया है कि ओना लोगों में, जो उपरि पुरा पाषाणिक मनुष्य के उतने ही वैध प्रतिनिधि हैं, जितना कि कोई हो सकता है, शामन लोग जादू से नौसिखिये बालक की आँतों को निकाल लेते थे और उन आँतों की जगह हंस के पेट जैसी कोई नरम रोएँदार आत्मिक वस्तु रख देते थे। रोएँदार वस्तु उन आत्माओं के बैठने के लिए सुविधाजनक आसन होती थी, जो शामन के अन्दर समय-समय पर आती थी। यह सब वस्तुतः क्या होता था, यह शायद कभी भी पता नहीं चलेगा।

परन्तु एक बात के विषय में हम निश्चित हो सकते हैं। शामन अपने शरीर की उन कुछ क्रियाओं पर, जिन्हें सामान्यतया स्वतःचालित समझा जाता है, शरीर-क्रियात्मक नियंत्रण करना सीख लेता था। एक तरुण योगी की भाँति उसे प्राणायाम के अभ्यास द्वारा इलहाम की दशा उत्पन्न कर लेना सिखाया जाता था। तेज़ी से चक्कर काटते हुए नृत्यों और कुछ मन्त्रों के पाठ द्वारा शरीर का तापमान बदल जाता था और समाधि की सी अवस्था उत्पन्न हो

जाती थी। जो प्राध्यापक तीन सौ या इससे भी अधिक विद्यार्थियों के सम्मुख गर्म कमरों में घण्टे भर तक ऊँची आवाज़ में भाषण देते हैं, जिससे कि उनकी आवाज़ सब लोगों तक पहुँच सके, वे कई बार अपने से ऊपर की बात कह जाते हैं; ये बातें ऐसी होती हैं, जिन्हें कहने का उन्होंने कभी विचार तक नहीं किया होता। इस भौतिक जगत् की, कपियों से लेकर परमाणुओं तक, प्रत्येक वस्तु को जान लेने की अपनी अधीरता में हमने विज्ञान के एक ऐसे पहलू की उपेक्षा कर दी है, जिसके लिए किसी प्रयोगशाला की और किन्हीं उपकरणों की आवश्यकता नहीं होती, केवल मानवीय शरीर की आवश्यकता होती है। आदिम मनुष्यों के पास प्रयोगशालाएँ और औज़ार नहीं थे, इसलिए उन्होंने मानव शरीर का ही भरपूर अध्ययन किया था।

विश्वसनीय प्रत्यक्षदर्शियों ने शामनों की कुछ चामत्कारिक क्रियाओं के वास्तविक विवरण हमारे सम्मुख प्रस्तुत किए हैं। ओना लोगों के साथ अपने प्रारम्भिक जीवन के अप्रतिम विवरण में ल्यूकास ब्रिजिज़[1] ने हाउशकेन नामक एक शामन के कार्यों का वर्णन किया है। ब्रिजिज़ ने हाउशकेन से अपनी शक्तियों का प्रदर्शन करने के लिए कहा था। "हाउशकेन ने मेरे अनुरोध को अस्वीकार नहीं किया, किन्तु विनम्रतापूर्वक उसने कहा कि ऐसा करने की उसकी इच्छा नहीं है। यह इस बात को कहने का ओना लोगों का ढंग था कि वह शनैः-शनैः ऐसा करने को तैयार हो सकता है।

"इसके बाद कोई 15 मिनट बीत गए। तब हाउशकेन ने कहा कि उसे प्यास लगी है और वह पानी पीने के लिए एक निकटवर्ती धारा पर गया। उस समय उज्ज्वल चाँदनी की रात थी और पृथ्वी पर जमी हुई बर्फ़ के कारण, जो कुछ अब हम देखने वाले थे, उसके प्रदर्शन का स्थान दिन जैसा ही प्रकाशमान लग रहा था। वापस लौटने पर हाउशकेन भूमि पर बैठ गया और एकलय स्वर में मन्त्र पढ़ने लगा। यह मन्त्रपाठ कुछ देर चलता रहा और उसके बाद उसने एकाएक अपने दोनों हाथ अपने मुँह पर रख लिए। जब उसने उन

---

1. ल्यूकास ब्रिजिज़, 'अटरमोस्ट पार्ट ऑफ दि अर्थ', ई० ई० डटन एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क और हौडर एण्ड स्टौफ़्टन लन्दन, 1949। पृष्ठ 263–4, 284–6 से उद्धरण दोनों प्रकाशकों की अनुमति से लिए गए हैं।

हाथों को मुँह पर से हटाया, तो उनकी हथेलियाँ नीचे की ओर थीं और दोनों हाथ एक-दूसरे से कुछ इंच दूर थे। हमने देखा कि वाहकुरंग (ग्वैनैको) के चमड़े की एक पट्टी, जो जूते में लगने वाले तस्मे से लगभग तिगुनी मोटी होगी, उसने अपने हाथ में ढीली ढाली पकड़ी हुई थी। यह पट्टी उसके अंगूठों के ऊपर से होकर उसके आधे बन्द हाथों की हथेलियों के नीचे से गुजरती थी और उसकी कनिष्ठिका अंगुलियों पर से होती हुई इस प्रकार नीचे को मुड़ जाती थी कि उसके दोनों हाथों से उस पट्टी का लगभग तीन-तीन इंच भाग नीचे की ओर झूल रहा था। यह पट्टी 18 इंच से अधिक लम्बी प्रतीत नहीं होती थी।

"इस पट्टी को कस कर खींचे बिना हाउशकेन ने अपने हाथों को खूब वेग से हिलाना शुरू किया और धीरे-धीरे वह उन्हें एक-दूसरे से दूर हटाता गया। यहाँ तक कि वह पट्टी लगभग चार फुट लम्बी हो गई और उसके दोनों सिरे अब भी पहले की ही भाँति दिखाई पड़ रहे थे। तब उसने अपने भाई चाश्किल को बुलाया। चाश्किल ने उसके दाएँ हाथ से उस पट्टी का एक सिरा पकड़ लिया और उसे पकड़े-पकड़े धीरे-धीरे पीछे हटने लगा। अब वह पट्टी हाउशकेन के बाएँ हाथ में से बढ़ती-बढ़ती चार फुट से बढ़कर लगभग दुगुनी हो गई। इसके बाद ज्योंही चाश्किल ने आगे की ओर क़दम रखा, त्योंही वह पट्टी हाउशकेन के हाथ में वापस लौटकर लुप्त हो गई, यहाँ तक कि उसे (चाश्किल को) अपने भाई के पास जाकर उस पट्टी का दूसरा सिरा पकड़ लेना पड़ा। हाथों के निरन्तर कम्पनों के साथ-साथ वह पट्टी फिर छोटी और छोटी होने लगी। जब उसके दोनों हाथ लगभग आपस में आकर मिले, तब उसने एकाएक उन्हें अपने मुँह से लगा लिया और एक लम्बी चीख मारी। उसके बाद उसने अपने हाथ हमें दिखाए। अब हथेलियाँ ऊपर की ओर थीं और वे बिलकुल खाली थीं।

"कोई शतुरमुर्ग भी उस आठ फुट लम्बी चमड़े की पट्टी का एक बार में सुस्पष्ट प्रयास के बिना नहीं निगल सकता था। वह गेंडुली फिर गई कहाँ, यह मैं नहीं कह सकता। वह हाउशकेन की आस्तीनों में नहीं जा सकती थी, क्योंकि जब उसने यह प्रदर्शन आरम्भ किया था, तब उसने अपना वस्त्र नीचे गिरा दिया था। वहाँ बीस और तीस के बीच व्यक्ति उपस्थित थे, परन्तु उनमें से केवल आठ या नौ ही हाउशकेन के आदमी थे। बाकी लोग उसके बिलकुल ही

मित्र नहीं थे और वे सब बड़े ध्यान से उसके इस करतब को देख रहे थे। यदि वे कोई घटिया-सी चालाकी पकड़ पाते, तो उस महान् चिकित्सक का सारा प्रभाव जाता रहता और फिर वे कभी उसके किसी जादू में विश्वास न करते।

"यह प्रदर्शन अभी समाप्त नहीं हुआ था। हाउशकेन उठकर खड़ा हो गया और उसने अपना वस्त्र फिर धारण कर लिया। एक बार फिर उसने मन्त्र पाठ शुरू कर दिया और ऐसा लगा कि वह समाधि में पहुँच रहा है और उसमें कोई अन्य आत्मा आ गई है। वह अपनी पूरी ऊँचाई तक तनकर खड़ा हो गया। फिर वह मेरी ओर एक क़दम बढ़ा और उसने अपना एकमात्र वस्त्र भूमि पर गिर जाने दिया। उसने एक बड़ी प्रभावोत्पादक मुद्रा में अपने हाथ अपने मुख पर रखे और फिर उन्हें मुट्ठियाँ बन्द किये हुए और दोनों हाथों के अंगूठे एक-दूसरे से सटाये हुए अपने मुख से हटाया। उसने उन हाथों को मेरी आँखों जितनी ऊँचाई पर ऊपर उठाया और जब वे मेरे चेहरे से दो फीट से भी कम दूर थे, तब उसने उन्हें धीरे-धीरे एक-दूसरे से अलग करना शुरू किया। मैंने देखा कि अब उन हाथों के बीच में छोटी-सी, लगभग अपारदर्शक एक वस्तु थी। उस वस्तु का व्यास बीच में एक इंच के लगभग था और उसके बाद वह किनारों की ओर पतली होती हुई उसके हाथों में थमी हुई थी। हो सकता है कि वह किसी चिपचिपी या लचकीली अर्ध-पारदर्शक वस्तु का टुकड़ा रहा हो; परन्तु वह भी कुछ था, जीवित प्रतीत होता था और बड़ी तीव्र गति से घूम रहा था, और हाउशकेन स्पष्टतया अपनी माँस-पेशियों के तनाव के कारण जोर से काँप रहा था।

"जब मैंने इस विचित्र वस्तु को ध्यान से देखा तो, तब चाँदनी इतनी काफी उज्जवल थी कि उसके प्रकाश में पढ़ा जा सकता था। हाउशकेन अपने हाथों को धीरे-धीरे एक-दूसरे से और दूर करने लगा और वह वस्तु अधिक और अधिक पारदर्शक होती गई, यहाँ तक कि जब उसके हाथ एक-दूसरे से कोई 3 इंच दूर हो गए, तब मैंने देखा कि वह वस्तु वहाँ रही ही नहीं। वह टूटी नहीं थी और न बुलबले की तरह फटी ही थी। वह मुझे पाँच सैकिंड से भी कुछ कम समय तक दीखते रहने के बाद बस यों ही लुप्त हो गई थी। हाउशकेन ने सहसा कोई अचिन्तित गति नहीं की, अपितु धीरे-धीरे उसने अपने हाथ खोले और उन्हें मेरे देखने के लिए सामने कर दिया। वे साफ़ और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सूखे दिखाई पड़ रहे थे । वह एकदम नंगा था और उसके आस-पास उसका कोई साथी नहीं था । मैंने नीचे बर्फ़ पर दृष्टि डाली ; और अपनी गम्भीरता के बावजूद हाउशकेन अपनी हल्की मुस्कराहट को न दबा सका, क्योंकि नीचे बर्फ़ पर कोई भी वस्तु मुझे दिखाई न पड़ी ।

"बाकी लोग भी हमारे चारों ओर भीड़ बनाकर इकट्ठे हो गए थे और ज्योंही वह वस्तु लुप्त हुई, त्योंही उनमें से कुछ के मुँह से डरी हुई-सी आवाज़ निकली । हाउशकेन ने उन्हें यह कहकर आश्वस्त किया :

"इससे घबराओ मत ; मैं इसे फिर अपने पास वापस बुला लूँगा ।"

"उन मूलवासियों का यह विश्वास था कि वह एक बहुत ही दुष्ट आत्मा थी, जो उस शामन की अपनी आत्मा थी, या सम्भवत: उसकी आत्मा का अंश थी, जिसमें से यह निकली थी । यह आत्मा भौतिक रूप भी धारण कर सकती थी, जैसा कि हमने अभी देखा था या फिर बिलकुल अदृश्य भी हो सकती थी । इस आत्मा में यह शक्ति थी कि यह उन लोगों की, जिनसे उसका मालिक रुष्ट हो जाय, शरीर-रचना में कीड़े, छोटी चुहियाएँ, कीचड़, नुकीले चकमक के टुकड़े, या यहाँ तक कि जैली मछली या ऑक्टोपस का बच्चा प्रविष्ट करा सकती थी । मैंने एक हट्टे-कट्टे पुरुष को इस विभीषिका और इसकी भयावह सम्भावनाओं के विचार मात्र से थरथराते देखा है ।"

ल्यूकास ब्रिजिज़ असाधारण रूप से निर्लिप्त व्यक्ति था और बहुत अच्छा वृत्तलेखक था । जो कुछ उसने देखा, उसकी व्याख्या वह नहीं कर पाया । यह स्पष्ट है कि अपने इन विचित्र कृत्यों को करने के लिए हाउशकेन को अपने आपको एक प्रकार की भाव-समाधि में पहुँचा देना पड़ता था । ऐसा वह कैसे करता था, यह स्पष्ट नहीं है और न यह बात इस पुस्तक के प्रयोजन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण ही है । यह तो तथ्य है ही कि वह अपने दर्शकों में से ओना लोगों पर अपनी अलौकिक शक्तियों में विश्वास बिठा देता था । उन ओना लोगों का विचार था कि उन अलौकिक शक्तियों के द्वारा वह अपने शत्रुओं में रोग उत्पन्न करवा सकता था और अपने मित्रों के रोग दूर कर सकता था । इस ख्याति के कारण उसका जीवन सरलतर और कठिनतर, दोनों ही बन जाता था । उसे भोजन की प्राप्ति के लिए कम परिश्रम करना पड़ता था, क्योंकि अन्य लोग उसे भोजन देते थे । उसे यह भी सन्तोष रहता था कि वह लोगों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के ध्यान का केन्द्र बना रहता था। इसके साथ ही उसका जीवन सदा संकट में भी रहता था। बीमारी या दुर्भाग्य का दोष उसके सिर मढ़ा जा सकता था और उसे आसानी से मार दिया जा सकता था। जैसा कि ब्रिजिज़ ने विशिष्ट रूप से कहा है : "ओना लोगों के सदा चलते रहने वाले कुल-युद्धों में बहुत बार आक्रमणकारी दल का मुख्य उद्देश्य यह होता था कि विरोधी दल के चिकित्सक को मार डाला जाय।"

एक बार ल्यूकास ब्रिजिज़ ने दो शामनों और उनमें से एक की पत्नी को यह अवसर दिया कि वे उसे अपने व्यवसाय में दीक्षित करने के लिए तैयार करने का प्रयत्न करें। "मेरा दीक्षारम्भ थोड़ी-सी जलती हुई अग्नि के निकट सम्पन्न हुआ। जिस ओर से हवा आ रही थी, उस ओर वाहकुरंग (ग्वैनैको) की खालों की एक आड़ खड़ी कर ली गई थी। मेरे उपक्रम की गम्भीरता के सम्बन्ध में एक भाषण देने के बाद तिनिन्सिक ने मुझ से कपड़े उतार देने को कहा। मैंने वैसा ही किया और अपने कपड़ों तथा कुछ वाहकुरंगों (ग्वैनैको) की खालों के ऊपर अधलेटा-सा बैठ रहा। वह मेरी छाती और मुँह पर इतना ध्यानपूर्वक हाथ फेरने लगा, जितना कि कोई डाक्टर अपना स्टेथस्कोप लगा कर सुनता है। वह एक नियत ढंग से हिलता-डुलता था और जहाँ-तहाँ कुछ सुनने के लिए रुकता था। वह मेरे शरीर को बड़े ध्यान से घूर भी रहा था, मानों वह ऐक्स-रे परिचालक की भाँति मेरे शरीर के आर-पार देख रहा हो।

"उसके बाद उन दोनों पुरुषों ने अपने वस्त्र और लेलुव्हाचिन ने अपना बिना बाँहों का लबादा नीचे गिरा दिया, परन्तु वह अपने स्त्रियों के आन्तरिक वस्त्र पहने रही। उसके बाद उन्होंने अक्षरशः अपने सिर—और हाथ परस्पर मिला लिए और एक ऐसी वस्तु ला उपस्थित की, जिसे मैं देख सकता था। हो सकता है कि वे बहुत ही हलके धूसर रंग के नरम रोएँ रहे हों, जिन्हे धूनक कर एक झबरे पिल्ले की आकृति दे दी गई थी। यह पिल्ला कोई चार इंच लम्बा होगा; उसका शरीर खूब पुष्ट था और कान खड़े हुए थे। अपने हाथों के कम्पनों द्वारा और सम्भवतः अपने श्वास द्वारा वे उसे इस प्रकार गति दे रहे थे कि वह जीवित-सा लगता था। जब वे तीन जोड़ी हाथ उसे एक साथ पकड़े हुए कंठ्य ध्वनियाँ करते हुए मेरी छाती के पास लाये, तब मुझे एक प्रकार की विशेष गन्ध अनुभव हुई, जो इस वस्तु में से आती प्रतीत होती थी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मुझे वह वस्तु अपने शरीर पर दबती हुई अनुभव नहीं हुई, परन्तु किसी भी अलक्षित गति के बिना ही वह उनके हाथों में से ग़ायब हो गई।

"यह क्रिया तीन बार दुहराई गई और यद्यपि यह समझा गया कि हर बार एक नया पिल्ला मेरे शरीर में प्रविष्ट करा दिया गया है, परन्तु मुझे तो केवल उन जादूगरों के हाथ का स्पर्श ही अनुभव हुआ।

"अब एक गम्भीर, मानों प्रत्याशा की सी निस्तब्धता छा गई। उसके बाद तिनिन्सिक ने मुझसे पूछा कि क्या मुझे अपने हृदय में कोई चीज़ हिलती-डुलती लग रही है, या मुझे अपने मन में कोई स्वप्न जैसी विचित्र वस्तु दिखाई पड़ रही है, या मेरी कुछ मन्त्र पाठ करने की इच्छा हो रही है। इसका सच्चा उत्तर बिलकुल स्पष्ट था—'नहीं'; किन्तु मैंने अपने इस इन्कार को यथासम्भव नरम ढंग से प्रकट किया···। नहीं, मैं ऐसा शामन बनने को तैयार नहीं था, जिसे सैकड़ों मील दूर हुए किसी प्राणान्तक दिल के दौरे तक के लिए दोषी ठहराया जा सके।"

यदि ब्रिजिज़ कोई ओना होता, तो उसे शायद यह विश्वास हो जाता कि वे रोएँदार पदार्थ (पिल्ले) उसके शरीर में प्रविष्ट हो गए हैं। उसे अपने अन्दर शायद कोई चीज़ हिलती-डुलती भी अनुभव होती और शायद उसे मन्त्र-पाठ की भी इच्छा हुई होती। तब वह निम्नलिखित रीति से चिकित्सा का कार्य करने में समर्थ हो सकता था: "चिकित्सक रोगी के पास खड़ा होकर या उसके पास घुटनों के बल बैठकर उस स्थान की ओर खूब ध्यान से देखता था, जिस स्थान पर कि पीड़ा हो रही होती थी और उसके बाद उसके चेहरे पर आतंक का सा एक भाव आ जाता था। स्पष्ट था कि वह किसी ऐसी वस्तु को देख रहा होता था, जो हमारे लिए अदृश्य होती थी। उसके बाद या तो वह शनैः-शनैः आगे बढ़ता, या फिर वह एकाएक इस प्रकार झपट पड़ता, जैसे उसे यह भय हो कि जिस दुष्ट वस्तु ने यह कष्ट उत्पन्न किया था, वह बचकर निकल भागेगी। अपने हाथों से वह उस दुष्ट प्रेत को रोगी के शरीर के एक अंग में इकट्ठा करने का यत्न करता था—सामान्यतया यह अंग वक्षस्थल होता था—और वहाँ वह अपना मुँह लगाकर बड़े ज़ोर से चूसता था। कभी-कभी यह संघर्ष घंटे भर तक चलता रहता और कुछ समय बाद इसे फिर दुहराना पड़ता। कभी-कभी शामन यह बहाना करता हुआ, कि उसने अपने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हाथों से अपने मुँह में किसी वस्तु को दबाया हुआ है, रोगी के पास से हट कर दूर चला जाता। उसके बाद, सदा शिविर से परे की ओर मुँह करके वह अपने हाथों को अपने मुँह से अलग हटाता। वह उन्हें परस्पर ज़ोर से पकड़े रहता और गले में से एक विचित्र प्रकार के चीत्कार के साथ, जिसका कि वर्णन कर पाना कठिन और अनुसरण कर पाना असम्भव है, वह इस अदृश्य वस्तु को भूमि पर पटक देता और बड़ी प्रचंडता के साथ उसे पाँवों से कुचलता। बहुत बार थोड़ी-सी मिट्टी, कोई कंकड़ या कोई बहुत ही छोटी-सी चुहिया यह बताने के लिए प्रस्तुत की जाती कि वही·उस रोगी के रोग का कारण थी।"

ल्यूकास ब्रिजिज़ थामस ब्रिजिज़ का, जो टियेरा डेल फुएगो के मूलवासियों में काम करने वाला एक धर्म प्रचारक था, पुत्र था। ल्यूकास ने अपने जीवन का अधिकांश भाग उस द्वीप में बिताया था। उसके पिता ने तो अपना सारा ध्यान उस द्वीप के दक्षिण की ओर जल मार्गों में रहने वाले याहगन लोगों के धर्म परिवर्तन और उत्संस्करण (ऐक्कल्चरेशन) पर केन्द्रित रखा, किन्तु ल्यूकास उत्तर की ओर ओना लोगों के प्रदेश में चला गया। वहाँ उसने एक भेड़-संवर्धनालय बनाया और कई शिकारियों को अपने यहाँ काम पर रखा। यदि सन् 1924 में खसरे की महामारी न फैली होती, जिसने कि उन्हें लगभग समाप्त ही कर दिया, तो वह सम्भायक्तः कई हज़ार उपरि पुरा पाषाणिक शिकारियों को पन्द्रह हज़ार वर्षीय सांस्कृतिक संक्रमण के पार इस औद्योगिक युग में ले आने में सफल हो जाता। आजकल उनमें से कुछ थोड़े-से शिकारी नैवैरिन झील के निकट झोंपड़ियों में रहते हैं, और ल्यूकास ब्रिजिज़ की मृत्यु हो चुकी है।

मानव-विज्ञान सम्बन्धी सारे साहित्य में मुझे पाषाण युग के शामन की गतिविधियों के विषय में उसके वर्णन की अपेक्षा अधिक स्पष्ट पारिस्थितिक वर्णन और कोई नहीं मिला। क्योंकि सबसे पहला विशेषज्ञ वही बना था, इसलिए शामन मानवीय सम्बन्धों का सर्व-प्रयोजनी (सारे काम करने वाला) विशेषज्ञ था। वह रोगियों का उतना इलाच कर देता था, जितना कि मानव प्राणियों का अनुभावन (सजैशन), मालिश, चूषण और शिरा-शल्य क्रिया द्वारा हो पाना संभव है। वह शत्रु के साथ अदृश्य युद्ध द्वारा अपने समूह की हिम्मत बढ़ाता था। कोई बड़ी आपद आ पड़ने पर उसका दोष आसानी से

उसके सिर मढ़ दिया जाता था। सबसे बड़ी बात यह हैं कि वह लोगों का मनोविनोद करता था। वह अपनी चुहियाओं और बिल्लौरी स्फटिकों में उतना ही विश्वास रखता था, जितना कि कोई ईसाई पुरोहित उस शराब और उन बेफरों में रखता है, जिनका उपयोग वह पवित्र संभोजन (कम्यूनियन) में करता हैं। शामन से विशेषज्ञों की, जिनमें पुरोहित, निदान तंत्रज्ञ, शल्य चिकित्सक, अध्यापक तथा विद्वान सम्मिलित हैं, एक लम्बी परम्परा निकली है। अच्छे पुरोहित, अच्छे चिकित्सक, अच्छे अध्यापक या अच्छे विद्वान को अपना काम भली भाँति सम्पन्न करने के लिए थोड़ा प्रदर्शन प्रिय होना चाहिए। जिन पाठकों का रूझान मेरी भाँति कुछ-कुछ शामन की ओर है, वे इस बात को भली भाँति समझ लेंगे।

शिकारी को किसी अभिरुचि (हौबी) की आवश्यकता नहीं

जो लोग शिकारियों के बीच में रहते हैं, उन सबका ध्यान शिकारी जीवन के इस तथ्य पर गया है कि शिकार खेल-कूद जैसी आनन्द की वस्तु है। शिकारियों को अपने काम में आनन्द आता है। मनुष्य बहुत दीर्घ काल तक शिकारी रहे हैं और हमारी शरीर-क्रिया उस प्रकार के जीवन के लिए अनुकूलित है। जैसा ई० जे० फेरिस[1] ने बताया है, मनुष्य जनन-क्षमता की दृष्टि से उस दशा में सर्वोत्तम रहता है, जब वह एक या दो रात लगातार घर से बाहर रहे; इससे उनकी शुक्रकोशिकाओं को संचित होने का अवसर मिल जाता है। शिकार के कारण उसे इन अल्पकालीन अनुपस्थितियों का मौका मिल जाता है। शिकार से सारे शरीर की इतनी अच्छी व्यायाम हो जाती है कि अन्य किसी व्यवसाय में शायद ही होती हो। इसमें तीव्र दृष्टि शक्ति का विशेष महत्त्व रहता है। दूर तक देख पाने की क्षमता (दूर दृष्टि) एक बड़ी परिसम्पत्ति है। ज्यों-ज्यों हमारी आयु बढ़ती है, त्यों-त्यों हम निकट-दृष्टि होने के बजाय दूर-दृष्टि अधिक होते जाते हैं। कृषि तथा अन्य अ-कुशल परिश्रम करने से हाथों की पेशियाँ और ऊतक (टिशू) जैसे विरूप और मोटे हो जाते हैं,

---

[1] ई० जे० फेरिस, 'ह्यूमन फर्टिलिटी एण्ड दि प्रौबलम्स ऑफ दि मेल' दि औथर्स प्रैस व्हाइट प्लेन्स ऐने० वाई० 1950।

शिकारी के वैसे न होकर उचित रूप से पुष्ट हो जाते हैं।

शिकार में तुरन्त निश्चय करने, तुरंत कार्य करने और टोली में मिलकर काम करने की क्षमता को विशेष महत्त्व दिया जाता है। आज्ञा पालन और नेतृत्व के गुणों को विकसित करने के लिए इससे बढ़िया और कोई विद्यालय नहीं हो सकता। साहस भी इसका एक आवश्यक उपादान है और एक यह बिलकुल मानवीय विशेषता भी, कि मनुष्य अपने समूह के अन्य सदस्यों के प्राण बचाने के लिए स्वयं मरने को तैयार हो जाता है। मनुष्य एक ऐसा प्राणी है, जिसे शिकार करने के लिए ही गढ़ा और चुना गया है। जो सम्पन्न लोग अपनी इच्छानुसार समय बिताने में समर्थ हैं और खाली समय निकाल पाते हैं, वे शिकार करना पसन्द करते हैं। अंग्रेजी का 'पैरैडाइज़' (स्वर्ग) शब्द फ़ारसी के 'परीदायजा' से बना है, जिसका अर्थ मूलतः केवल शिकारगाह था। अच्छा शिकारी सदा सतर्क और अप्रत्याशित परिस्थितियों का लाभ उठाने के लिए सदा उद्यत रहता है। वह सदा नई-नई चीज़ों की खोज में रहता है। हमारे समाज में वे लोग, जिन्हें अपने काम में आनन्द आता है, और जिन्हें किसी अभिरुचि (हौबी) की या लम्बी छुट्टियों की आवश्यकता नहीं होती, वैज्ञानिक और अनुसन्धानकर्ता लोग हैं, जिनमें पुरातत्ववेत्ता और मानव-विज्ञानवेत्ता भी सम्मिलित हैं; ये लोग शिकार की वृत्ति को एक नये क्षेत्र में खींच लाये हैं।

4

कृषक और पशुपालक

इतिहास की तीसरी प्रावस्था

छह हज़ार ईस्वी पूर्व आते न आते स्कैण्डिनेविया की हिम की परत पिघल कर यूरोप के नक्शे पर दो सफेद बिन्दुओं के रूप में रह गई थी और उसके बाद लुप्त हो गई थी। इससे भी दक्षिण और पूर्व की ओर तुर्की, फिलस्तीन और कास्पियन सागर के दक्षिणी छोर को छूने वाले प्रदेशों में जब नव पाषाणिक मनुष्यों ने खेतों को जोतना, घरेलु पशुओं को पालना और गाँवों में रहना शुरू कर दिया, तब इतिहास की तीसरी प्रावस्था शुरू हुई। नवपाषाण युग में और इतिहास की तीसरी प्रावस्था के उससे बाद के कालों में मनुष्य ने ऐसे अनेक नए व्यवसायों का आविष्कार किया, जिनके लिए शिकारी का शरीर मूलतः उपयुक्त नहीं था। उसके हाथ हल चलाने और कारीगरी के औज़ारों से काम करने के कारण कड़े पड़ गए और उनमें घट्टे पड़ गए; या फिर लिपिक का काम करने के कारण वे नरम हो गए और उन पर स्याही के धब्बे पड़ गए। उसके दिन स्टूल पर बैठकर काम करते हुए बीतने लगे, इसलिए उसकी टांगें कमज़ोर हो गईं; और अपने हाथों से लकड़ी, मिट्टी या धातु के जिन छोटे-छोटे टुकड़ों से वह तरह-तरह की चीज़ें बनाता था, उन पर दृष्टि केन्द्रित करने के कारण उसकी आँखों पर ज़ोर पड़ने लगा। मनुष्य की गतिविधियों के प्रमुख मार्गदर्शक के रूप में अब जैव रचना की अपेक्षा संस्कृति का महत्त्व बढ़ गया।

उस समय उसने जो खोजें कीं और जो आविष्कार किये, उनकी शृंखला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के फलस्वरूप सारी पृथ्वी की जनसंख्या, मनुष्य की यात्रा करने की गति और उसकी संचार संदेश प्रेषण की अभिसीमा कई गुनी बढ़ जानी थी, यहाँ तक कि अब उद्योग विद्या अपनी वर्तमान भूमंडलीय परिसीमा तक पहुँच गई है। मनुष्य के विशेषित तकनीकी कार्यों में सुव्यवस्थित सहयोग की और बहुत बड़ी संख्या में व्यक्तियों के प्रबन्ध की आवश्यकता होती है, इसलिए मनुष्य केवल प्रसंगत: और अनजाने ही ताप की, यान्त्रिक और इलेक्ट्रानीय ऊर्जा को सामाजिक सरंचना में परिवर्तित करता जाता है। उसने जिन संस्थाओं का सृजन किया, उनकी संख्या, आकार और बारीकियों की जटिलता बढ़ती ही गई, यहाँ तक कि अब सारा संसार एक बहुत ही जटिल परस्पर गुँथे हुए संगठनों के एक सजीव ढांचे में जकड़ गया है। यह एक बहुत ही गहन, स्पन्दमान ढांचा बन गया है, जो संचार की आधुनिक तकनीकों द्वारा परस्पर संगठित है। क्योंकि प्रजातन्त्र का उपभोग उतने लोग कर सकते हैं; जिन तक एक आवाज़ पहुँचाई जा सकती है, इसलिए आधुनिक संस्थाओं में उन लोगों को भी सम्मिलित किया जा सकता है, जो रेडियो, टेलीविज़न और पत्र-पत्रिकाओं द्वारा विश्व के महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों को देख सकते हैं और उनका बात सुन सकते हैं। यहाँ भी, संचार के यन्त्रजात के निर्माण और परिचालन में मनुष्य द्वारा किया गया ऊर्जा का व्यय सामाजिक संरचना में परिवर्तित हो गया है।

यद्यपि इतिहास की तीसरी प्रावस्था केवल 8 हज़ार वर्ष तक रही, फिर भी इसमें पुरा-पाषाणिक और मध्य-पाषाणिक युगों जैसे 8 स्पष्ट युग रहे हैं। ये युग नव-पाषाण, कांस्य, लौह, बारूद, कोयला, मिट्टी का तेल, जल-विद्युत् और प्रथम परमाणु युग थे। यह तीसरी प्रावस्था पहली दो प्रावस्थाओं की अपेक्षा इतनी अधिक जटिल थी कि इसका वर्णन करने के लिए, यहाँ तक कि रूपरेखा प्रस्तुत करने के लिए भी, उनसे कई गुने स्थान की आवश्यकता है। इस पुस्तक का अवशिष्ट भाग इस प्रावस्था का ही वर्णन है।

नव पाषाण युग की प्रकृति

6 हज़ार ई० पू० से थोड़ा-सा पहले संसार का जलवायु उस स्थिति तक पहुँच चुका था, जिसे हिमाच्छादनोत्तर अनुकूलतम कहा जाता है। वह वर्तमान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जलवायु की ग्रपेक्षा थोड़ा-सा गर्म था। पृथ्वी के कुछ भागों में, जहाँ कि खूब वर्षा होती थी ग्रौर प्राणी ग्रौर वनस्पतियाँ खूब पाये जाते थे, मनुष्य एक जगह जमकर रहने लगे थे। जो लोग बड़ी झीलों ग्रौर बड़ी नदियों के किनारों पर रहते थे, उन्हें पशुग्रों के माँस के ग्रलावा मौसम में मछली ग्रौर मुर्गियाँ भी प्रभूत मात्रा में खाने को मिल जाती थीं। छाल की बनी या लक्कड़ों की बनी नौकाग्रों को चप्पुग्रों या लग्गियों से खेकर वे खाद्य सामग्री, खालों ग्रौर तैयार माल को बड़ी-बड़ी मात्राग्रों में एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाते थे। कम से कम वर्ष के कुछ भाग में ग्राम-जीवन सम्भव हो गया था। यही स्थिति सम्पत्ति की भी थी।

पुराने समय में, जबकि मनुष्य की सम्पत्ति केवल उतनी होती थी, जितनी कि वह एक शिविर से दूसरे शिविर तक ग्रपने शिकार के रास्तों पर चलते हुए ग्रपने शरीर पर ढोकर ले जा सकता था, सफलतापूर्वक जीवन-यापन के लिए जिन वस्तुग्रों की ग्रावश्यकता थी, वे थीं—शक्ति, कौशल ग्रौर बुद्धि। कुछ मनुष्य नेता होते थे ग्रौर ग्रन्य लोग ग्रनुयायी। परन्तु उनकी भौतिक सम्पत्ति में ग्रन्तर (कमी बेशी) की ग्रभिसीमा बहुत ग्रल्प थी। केवल व्यक्तित्व ग्रौर चरित्र के गुणों के कारण मनुष्य को मान प्राप्त होता था। जब सम्पत्ति को एक मौसम से जमा करके दूसरे मौसम तक रखा जा सकने लगा, तब मनुष्य जीवन ने एक नये ग्रायाम में प्रवेश किया। ग्रब श्रेष्ठता के लिए एक ग्रौर ग्राधार उत्पन्न हो गया था। पूँजीपति यह कहेगा कि इस नए ग्राधार से प्रतिभाशाली लोगों को प्रगति करने का ऐसा ग्रवसर मिला, जिससे ग्रन्ततोगत्वा सब मनुष्यों को लाभ हो सकता था; ग्रौर समाजवादी यह कहेगा कि इससे जन साधारण का शोषण होने लगा। चाहे जो भी हो, किन्तु सम्पत्ति के जन्म के कारण व्यापार को प्रोत्साहन मिला ग्रौर उसके कारण विभिन्न गाँवों ग्रौर प्रदेशों के लोगों को एक-दूसरे से मिलने के लिए ग्रौर ग्रधिक ग्रवसर प्राप्त होने लगे।

जिस समय लगभग सभी लोग मध्य-पाषाणिक शिकारी थे, जैसे कि वे नव पाषाणिक युग के ग्रारम्भिक दिनों में भी थे, उस समय मानव प्राणी उस शेष पशु समुदाय से, जिसमें कि वे रहते थे, किसी ऐसे स्पष्ट दिखाई पड़ने वाले रूप में पृथक् नहीं थे, जिसे कि किसी ग्रन्य ग्रह से ग्राने वाला कोई वस्तुनिष्ठ

(औबजैक्टिव) दर्शक तुरन्त पहचान पाता। जिस भूभाग पर वे शिकार करते थे, उसमें उन्होंने उससे अधिक परिवर्तन नहीं किया था, जितना कि अन्य अधिकांश पशुओं ने किया था—और बीवरों, मधुमक्खियों और गिंडोलों की तुलना में तो बहुत कम परिवर्तन किया था। मनुष्य की उपस्थिति के साथ शिविर की अग्नि की सहभाविता से उस दर्शक को एक सूत्र मिल सकता था और उसके आगमन पर कुत्तों के भौंकने के कारण वह यह कह सकता था कि यह परोपजीविता या अन्योन्य-पोषकता का एक उदाहरण है, जो चीटियों और ऐफिडों के मध्य परोपजीविता या अन्योन्य-पोषकता से मिलता-जुलता है; और इसके कारण उसका निर्णय अस्पष्ट हो जाता, क्योंकि मनुष्य और कुत्ते की साझेदारी भौतिक कम और आत्मिक अधिक थी। अब भी वे भाले, धनुष और चाकू, जिन्हें मनुष्य ने बनाना सीख लिया था, वस्तुतः अन्य पशुओं के विष दन्तों (कीलों), पंजों और द्रुतगामी खुरों के स्थानापन्न, उतार कर रखे जा सकने योग्य अंगों की अपेक्षा कुछ भी अधिक नहीं थे और सब व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए ब्रह्माण्डीय दृष्टि से प्रकृति अब भी सन्तुलित थी। पृथ्वी का त्वचा कैन्सर (मनुष्य) अभी तक प्रसुप्त अवस्था से उग्र अवस्था में नहीं पहुँचा था। तब तक भी उसने पृथ्वी के जंगलों को काट कर गिराया नहीं था, पृथ्वी की मिट्टी को बहाया नहीं था, उसने नगरों द्वारा नदियों के मुखों को दूषित नहीं किया था या अपने परमाणु साधनों द्वारा इस ग्रह की मृत्यु का ही संकट उपस्थित नहीं किया था।

मनुष्य ने पृथ्वी की सतह को तब उलट-पुलट करना शुरू किया, जब उसने पौधों की खेती करना और बन्दी अवस्था में पशुओं का प्रजनन करना सीख कर प्राकृतिक शक्तियों पर तीसरी विजय प्राप्त की। यह कल्पना करना तर्क संगत है कि इससे पहले बहुत लम्बे समय तक मध्य-पाषाणिक शिकारी, मछियारे और चिड़ीमार, जो फसल के दिनों में गाँवों में रहते थे, पशुओं के छोटे-छोटे बच्चों को पालते होंगे और उन्हें पाल कर बड़ा करते होंगे और बाद में जब उनका उस जगह को छोड़कर आगे चलने का समय आता होगा, तब वे उन्हें मारकर खा जाते होंगे या फिर उन्हें जंगल में छोड़ देते होंगे। इन्हीं आहार-संचयक लोगों ने यह भी देखा होगा कि अन्न के पौधे मल-मूत्र आदि के ढेर में खूब अच्छे उगते हैं, जहाँ कि उनके बीज और गुठलियाँ और शिरोभाग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

फेंक दिये जाते हैं, और इन अनजाने बोई गई फ़सलों को अवश्य खाया गया होगा।

जब तक मनुष्य ने जंगलों को साफ करने और बाड़े तथा गोठ बनाने के लिए कोई साधन न ढूंढ निकाले होंगे, तब तक केवल इन व्यवहारों और अवेक्षणों से न तो पशु पालन और न बगीचों की खेती ही शुरू हो सकी होगी। उसे जंगलों को साफ करने की आवश्यकता थी, जिससे वह पेड़ों के ठूँठों के बीच की उर्वर और नरम वानस्पतिक खाद-युक्त मिट्टी में फसल बो सके; और उसे बाड़े बनाने की आवश्यकता इसलिए थी कि उनमें वह अपने पशुओं को रख सके, जिससे न तो भेड़िये उन्हें खा सकें और न वे पशु इधर-उधर भाग ही पायें। जंगलों को साफ करने और बाड़े बनाने के लिए लकड़ी को काट सकने वाले एक बढ़िया औज़ार की आवश्यकता होती है। इस प्रकार का एक औज़ार परिष्कृत पत्थर का कुठार था। जब यह कुठार मनुष्य को प्राप्त हो गया, तब उसने कृषक और पशु-पालक का जीवन बिताना शुरू कर दिया। यह एक ऐसी जीवन प्रणाली थी, जिसका अनुसरण मानव-जाति का अधिकांश भाग आज भी करता है और यही जीवन प्रणाली हमारे अपने अस्तित्व का भी आधार है। गेहूँ, गो माँस, सूअर का माँस, दूध, सेम, लोबिया आदि फलियाँ, मिट्टी के बर्तन, बुनाई, ऊन, बीयर और शराब, ये सब मनुष्य को इस सांस्कृतिक व्यवस्था से ही प्राप्त होती हैं, जिसे मानवीय संस्कृति की नव-पाषाणिक अवस्था कहा जाता है।

जिस प्रकार तक्षणी मनुष्य का अमेरिका जाने के लिए पहला पारपत्र थी, उसी प्रकार परिष्कृत पत्थर का कुठार उसके कृषक जीवन की कुँजी था। इन दो साधनों, तक्षणी और कुठार, के बीच आविष्कारों की एक तर्क-संगत परम्परा रही होगी। तक्षणी द्वारा उपरि पुरा पाषाणिक मनुष्य शृंगों को काट कर और खुरच कर शस्त्र बनाता था। उसके बाद वह उनकी सतहों को घिस कर और पालिश करके परिष्कृत करता था। मध्य पाषाणिक मनुष्य, जिसका ध्यान लकड़ी के काम की ओर अधिक था, इसी तकनीक का प्रयोग बारहसिंगे के शृंगों की छेनियाँ और फन्नियाँ बनाने के लिए करता था। जब एक बार उसने इस पद्धति को कठोर और चिरस्थायी पत्थर पर लागू कर लिया, तब उसने कुठार बनाया; और तब संसार के कुछ थोड़े-से अनुकूल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भागों में उचित परिस्थितियों में नव-पाषाण युग शुरू हो सका होगा। इन आरम्भिक काल के कुठारों में से सर्वोत्तम कुठार जो संग यशव (जेड) के बने हुए हैं, इस्पात की ही तरह कटाई कर सकते हैं। इन कुठारों को पत्थर तोड़ कर बनाना, उन्हें घिसना और उन्हें परिष्कृत करना बहुत श्रमसाध्य कार्य था। एक कुठार को बनाने में चाहे एक महीना भी क्यों न लग जाता हो, किन्तु एक बार बन जाने के बाद, यदि उसका प्रयोग सावधानी से किया जाय, तो वह बहुत समय तक काम देता रहता था।

शुरू-शुरू में मनुष्य को अपने खेत के सब पेड़ों को काट डालने की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि यदि वह पेड़ों की छाल को एक घेरे में चारों ओर से काट देता, तो वे पेड़ निष्प्राण हो जाते और उस दशा में वह उन्हें बाद में काट कर जला सकता था। पेड़ों के तनों के बीच में वनस्पतियों के सड़ने के फलस्वरूप जमी हुई उर्वर मिट्टी से उसे कम से कम कुछ वर्षों तक बढ़िया फसल प्राप्त होती और उसके बाद वह किसी अन्य भूखण्ड को खेती के लिए साफ कर सकता था। जब गाँव के आसपास की वह सारी जमीन, जहाँ तक कि आसानी से पैदल आया जाया जा सकता था, उपयोग में आ चुकती, तब वह समुदाय विभक्त हो जाता और उसके कुछ सदस्य अन्यत्र कहीं जाकर एक नया गाँव बसा लेते।

इन गाँवों के मकान लक्कड़ों या तख्तों से नहीं बने होते थे, अपितु बाँसों के ढाँचों से बने होते थे, जिनकी दीवारें टट्टर और गारे से भर दी जाती थीं। खपचियों से आड़ बनाना, मामूली टोकरी बुनने की तकनीक है, जिसका उपयोग मकान बनाने के लिए कर लिया गया है। पहले आप एक इंच या दो इंच मोटे बाँसों की एक पंक्ति दीवार बनाने की रेखा के साथ-साथ इस तरह खड़ी कर देते हैं कि उनके मोटे भाग जमीन में गड़े हुए हों और उनके ऊपरी सिरे एक चौखटे में बँधे हुए हों। उसके बाद आप बेंत जैसी किसी लचकीली लकड़ी को, जिसे कि वसन्त ऋतु में हरा ही काट लिया गया हो, लेकर उसे बाँसों के बीच में पृथ्वी के समानान्तर इस प्रकार बुन देते हैं कि जिससे उसकी बुनाई टोकरी जैसी हो जाय। इस प्रकार सारी सतह को बुन देने के बाद उन दीवारों के अन्दर और बाहर मिट्टी का लेप कर दिया जाता है और आपके मकान का घेरा सब ओर से पूरा हो जाता है। छत का चौखटा भी बाँसों

और लचीली टहनियों से ही बनाया जाता है और उसके ऊपर खेत में पैदा होने वाले अनाज के डण्ठलों का छप्पर डाल दिया जाता है। यह नव-पाषाणिक युग का अपने विशिष्ट ढंग का मकान है। इस प्रकार के मकान आपको आज भी अनेक देशों में उपयोग में आते दिखाई पड़ सकते हैं। ग्लैस्टनबरी के गिरजाघर की आन्तरिक वेदी भी इसी प्रकार का एक मकान थी। वह कई शताब्दियों तक इसलिए परिरक्षित रही, क्योंकि वहाँ के लोगों में यह किंवदन्ती प्रचलित थी कि किसी समय ईसा उसमें रहा था।

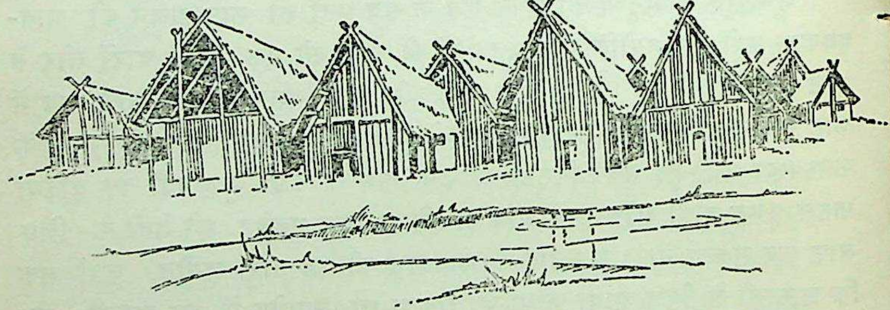

एक नव पाषाणिक ग्राम की पुनः कल्पना, फैडर्सी, जर्मनी

जब छप्पर में आग लग जावे और मकान जल कर राख हो जाय, तब उसकी गर्मी से कुछ मिट्टी अवश्य पक जायेगी, जिससे वह कठोर होकर नरम पत्थर जैसी बन जायेगी। जिन किसानों ने मकान बनाते समय मिट्टी के गुण धर्मों को पहचान लिया था और जिन्होंने आग लगने के बाद पके हुए मिट्टी के ढेलों को देखा था और जिन्हें अच्छे जलसह और अग्निसह पात्रों की आवश्यकता थी, वे अगले तर्कसंगत आविष्कार, मिट्टी के बर्तनों के निर्माण, तक पहुँच सकते थे। मामूली भोजन पकाने के लिए जलाई जाने वाली अग्नि की ऊष्मा भी बर्तनों की मिट्टी को पका कर इतना काफी कठोर बना दे सकती है कि जो मामूली घर के काम काज के लिए, जिसमें भोजन का उबालना भी सम्मिलित है, उपयुक्त हो। अब उसकी पत्नी दलिया और रसेदार सब्जी बना सकती थी; ये ऐसे मितव्ययी भोजन थे, जिनके द्वारा बच्चों का दूध सरलता से छुड़ाया जा सकता था और जिन्हें बूढ़े व्यक्ति अपने दन्तहीन मसूढ़ों से भी खा सकतेथे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जब तक वृद्ध स्त्रियों की अँगुलियाँ काम करने लायक लचकीली रहती थीं और उनकी दृष्टि ठीक रहती थी, तब तक वे साफ़ मौसम में घर के बाहर धूप में, और जब बाहर सर्दी होती थी, तब घर के अन्दर बैठकर ऊन कात सकती थीं और उसे सीधे-सादे करघों पर बुन सकती थीं। इस प्रकार किसान की भेड़ों की ऊन को, जिसे एक चकमक के फलक द्वारा कतरा जाता था, वस्त्र के रूप में परिवर्तित कर लिया जाता था। कपड़े के चौकोर टुकड़े न केवल परिधान के लिए उपयोगी थे, अपितु विनिमय के लिए मानक वस्तुओं के रूप में भी उपयोगी थे और इसलिए वे सम्पत्ति की वस्तु थे। जब पुरुष अपने कुठार और पशुओं को लेकर घर से बाहर चला जाता था, तब उसके घर की स्त्रियाँ फसल बोने और काटने के बीच के दिनों में मिट्टी के बर्तन बना सकती थीं और बुनाई कर सकती थीं; फसल बोने और काटने के दिनों में तो सब लोगों को खेतों पर काम करने की आवश्यकता पड़ती थी। इस प्रकार नव-पाषाणिक मनुष्य ने शिकारी के श्रम-विभाजन को लिंगों में, अर्थात् पुरुषों और स्त्रियों में, विभाजन तक आगे बढ़ा दिया। पशुओं को मारकर भोजन लाने और औज़ार बनाने के अपने कामों में मनुष्य ने लकड़ी काटने और बढ़ईगीरी का काम करने के कौशल और जोड़ लिए। स्त्री ने अपने दैनिक भ्रमण के स्थान पर खेतों में काम करने और कुम्हार तथा जुलाहे का कौशल अपना लिया।

बढ़ई के काम में खपचियों से बुनी हुई बाड़ें बनाना भी सम्मिलित था, जिससे जंगली पशुओं से उसके खेतों की रक्षा हो सके और कुछ बाड़ें इसलिए कि जिससे उसके अपने पशु इधर-उधर न भाग जाएँ। बकरियों का रेवड़ कुछ घंटों में ही समूची फसल को नष्ट कर सकता है। इसलिए अब सम्पत्ति की सीमा रेखाएँ उसकी अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण हो गईं; जितनी कि वे शिकार के दिनों में थीं, जब शिकारी लोग किसी घायल पशु का पीछा करते हुए अपने कबीले की सीमा से बाहर जाते हुए इसलिए डरते थे कि कहीं दूसरे कबीले वाले लोग उन पर तीर न चला दें। नव-पाषाणिक काल में सीमा रेखाओं को केवल निशान डाल देने की अपेक्षा कुछ और अधिक स्पष्ट बनाना आवश्यक था। इन सीमा रेखाओं के साथ-साथ बाड़ लगाई जानी आवश्यक थी और बाड़ बनाने के लिए कुठारों, डंडों, हथौड़े के काम आने वाले पत्थरों

और बेंतों (लचीली टहनियों) से कठोर परिश्रम करना पड़ता था । रौबर्ट फ्रौस्ट की यह अमर पंक्ति, "अच्छी बाड़ें होने से लोग अच्छे पड़ौसी बनते हैं", नव पाषाणिक काल में भी उतनी ही सत्य थी, जितनी कि यह उसके बाद सदा रही है ।

यह नव-पाषाणिक व्यवस्था, जिससे आधुनिक सभ्यता उत्पन्न हुई है, पशुओं और वनस्पतियों, दोनों की ही स्पीशिज़ों के एक साथ उपयोग पर आधारित थी, और पशु तथा वनस्पति, दोनों एक-दूसरे पर निर्भर थे । पशुओं से हमें प्रोटीन-बहुल खाद्य, खालें, वस्त्रों के लिए बाल अर्थात् ऊन और दूध प्राप्त होता है । उनसे बोझ ढोने का काम भी लिया जा सकता है और उनका गोबर खेतों को उपजाऊ बनाता है । वनस्पतियों से प्राप्त होने वाली उपज से हमें श्वेत सार (निशास्ता), शर्करा, तेल और कुछ प्रोटीनें और रेशे प्राप्त होते हैं और इसके साथ ही ऐसे मौसमों में, जब चरने के लिए घास नहीं होती या बर्फ़ पड़ जाने के कारण चरने में बाधा पड़ती है, पशुओं के लिए चारा भी प्राप्त होता है । घरेलू पशुओं को पालना उनकी देख-रेख करना और हिंस्र माँसाहारी पशुओं से उनकी रक्षा करना परम्परागत रूप से प्रत्यक्षतः पुरुषों के कार्य बने रहे हैं; शिकारी से पशु पालक की ओर संक्रमण बिलकुल स्वाभाविक है । बगीचों की खेती भी स्त्रियों द्वारा जंगली वानस्पतिक आहार की खोज का उतना ही सीधा परिणाम है । इस प्रकार इस नई व्यवस्था में प्रत्येक लिंग, अर्थात् स्त्री और पुरुष, अपने पुराने काम से नये काम की ओर समानान्तर और पृथक् रूप से संक्रमण कर पाने में समर्थ हुआ और पुरुषों और स्त्रियों के मध्य सम्बन्ध सारतः अपरिवर्तित रहे । इसके कुछ समय बाद जब मनुष्यों ने बैलों की सहायता से हल चलाना सीख लिया, तब उन्होंने कृषि के अपेक्षाकृत भारी काम को अपने हाथों में ले लिया और इससे स्त्रियों को मिट्टी के बर्तन बनाने और कपड़ा बुनने जैसे घरेलू उद्योगों के लिए और अधिक समय मिलने लगा । कृषि-वर्ष पंचांग के महत्त्वपूर्ण अवसरों पर, जैसे कि फसल काटने के समय, पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे सब मिलकर खेतों में काम करते थे । इस बीच में, क्योंकि पुरुषों ने खेती के कामों को अपने हाथ में ले लिया था. इसलिए पशुओं के रेवड़ों की देख-भाल का काम बालकों को या पेशेवर गड़रियों को सौंप दिया गया ।

परन्तु यह पशुओं और वनस्पतियों की मिश्रित अर्थ-व्यवस्था ही संसार में एकमात्र आविष्कृत कृषि प्रणाली नहीं थी। कुछ ऐसे स्थानों पर भी स्त्रियों ने बगीचों की खेती शुरू कर दी थी, जहाँ कुत्ते के सिवाय अन्य कोई पशु नहीं पाले जाते थे। उदाहरण के लिए, उत्तरी अमेरिका में मैक्सिको की खाड़ी से लेकर सैंट लारेंस तक रहने वाले अन्न की खेती करने वाले मूलवासी कई प्रकार की वनस्पतियाँ उगाते थे, जिनमें मकई, फलियाँ (सेम, लोबिया इत्यादि) और काशीफल भी सम्मिलित थे। इनसे उन्हें सन्तुलित वानस्पतिक भोजन प्राप्त हो जाता था। इसका अधिकाँश काम स्त्रियाँ करती थीं। पुरुष लोग अधिकाँशतः अपने पुरातन शिकार के व्यवसाय को ही करते थे; मौसम आने पर वे शिकार के लिए लम्बी-लम्बी यात्राओं पर जाते थे, परन्तु उसके लिए माँस का महत्त्व कम था और सुसंगठित व्यायाम सम्बन्धी और पुरुषोचित गतिविधि का अधिक। उन्होंने भूमि का उपयोग इस ढंग से किया था कि वे लोग नदियों और झीलों के किनारों पर ही केन्द्रित हो गए थे, इसलिए उनके यहाँ अत्यधिक जनसंख्या एक समस्या थी और इसी प्रकार शिकार के मौसम के अलावा बाकी समय में पुरुषों को करने के लिए कुछ काम देने का भी प्रश्न उनके सामने था। इन समाजों में खेलों की एक विशद प्रणाली विकसित हुई, जिसके द्वारा पड़ौस के गाँवों के मध्य शान्ति बनी रहती थी और इसी प्रकार एक विशद, सामयिक युद्ध की प्रणाली भी विकसित हुई, जो पुरानी खोपड़ियाँ एकत्र करने की प्रथा पर आधारित थी। ये खेल और युद्ध, दोनों ही अत्यधिक समारोहपूर्ण होते थे। इनके द्वारा पुरुष समाज में व्यवस्था बनाये रखने के लिए एक ढाँचा बना रहता था। मैलनेशिया में भी, जो एक अन्य नव-पाषाणिक संस्कृति थी, जो वर्त्तमान काल तक बची रही है, ऐसा ही विकास हुआ था।

एक इससे विपरीत प्रकार का असन्तुलन तब उत्पन्न होता है, जब कोई लोग उद्यानों की खेती किये बिना पशु पालन पर ज़ोर देने लगते हैं। मध्य पूर्व और मध्य एशिया अनेक प्रकार के ऐसे यायावर (खानाबदोशों) से भरे हुए हैं, जो अपने पशुओं को मरुस्थलों, पहाड़ी घाटियों और तरुहीन मैदानों (स्टैपी) में चराते हैं। परन्तु ये सब यायावर किसानों के साथ व्यापार करके जीवन-यापन करते हैं और इस प्रकार ये विविध रूप वाले भूदृश्य के एक मिश्रित उपयोग के अंश है; यह एक ऐसी वस्तु है, जिसका धातु के काल से पहले का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हमारे पास कोई अभिलेख विद्यमान नहीं है। ये सब के सब समंजन इतिहास के विद्यार्थी के लिए बहुत ही रोचक हैं, क्योंकि उनसे यह पता चलता है कि मानव प्राणी विभिन्न परिवेशों के अनुसार आर्थिक दृष्टि से अपना अनुकूलन करने में (अपने आपको ढालने में) कितने परिवर्तनक्षम रहे हैं। यह ठीक है कि इनमें से प्रत्येक ने हमारी आधुनिक विश्वसभ्यता में कुछ न कुछ योग दिया है; विशेष रूप से पौधों और पशुओं की, जैसे संतरे इत्यादि खट्टे फल, मकई, तम्बाकू, पाताल-मयूर (टर्की) और ऊँट जैसी विशेष स्पीशिज़ों के रूप में योग दिया है, फिर भी इतिहास की मुख्य परम्परा इनके बीच से होकर नहीं गुज़री है।

जिन देशों में 'पुरानी दुनिया' का नव-पाषाण युग शुरू हुआ, उनमें प्रगति बहुत तेज़ी से हुई। धातु के आरम्भिकतम काल के शुरू होने से पहले नव-पाषाणिक कारीगर परिष्कृत पत्थर के औज़ारों से बड़े-बड़े लक्कड़ों को अन्दर से खोदकर उनसे नावें बनाना सीख चुके थे, जिनके द्वारा अन्तर्देशीय जलमार्गों में बड़ी मात्रा में वस्तुओं का परिवहन किया जा सकता था और सम्भाव्यत: उन्होंने हल का और बैलों द्वारा खींची जाने वाली बिना पहियों की गाड़ियों (स्लैज) का भी आविष्कार कर लिया था। राज लोग पत्थरों के हथौड़ों से खान खोदना, और बड़े-ब्रड़े पत्थरों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाना और उन्हें दीवारों और ऐसे स्मारक भवनों में लगाना सीख चुके थे, जो आजकल भी इंजीनियरी के चमत्कार बने हुए हैं। इमारतों में काम आने वाले पत्थरों का आकार न्यूनतम प्रयत्न के नियम के अनुसार होता है। नव-पाषाण काल के पत्थर काटने वाले लोगों के पास घटिया औज़ार होने के कारण उनके लिए यह सरल था कि वे 10 टन भारी पत्थर को एक जगह से उठाकर दूसरी जगह ले जाएँ, बजाय इसके कि वे उसे काट कर एक-एक टन के 10 टुकड़े बनाएँ और उसकी लगभग दुगुनी से भी अधिक क्षेत्रफल वाली सतह को समतल बनाएं।

नव-पाषाणिक काल से लेकर वर्तमान समय तक मनुष्य जो भोजन खाते रहे हैं, उसका अधिकांश भाग खेतों और पशुओं के रेवड़ों की उपज था। उनका अधिकांश परिधान ऊन, घरेलू पौधों के तन्तुओं (रेशों) और पालतू पशुओं की खालों को पकाकर बनाये गए चमड़े से बना होता था। अधिकांश

मकान अब भी लकड़ी, मिट्टी और पत्थर के बनते हैं; रसोईघर के अधिकांश बर्तन मिट्टी से बनते हैं। नगरों की वृद्धि और राज्यों तथा साम्राज्यों तथा राष्ट्रसंघों के विकास के बावजूद संसार के अधिकांश लोग अब भी गाँवों में रहते हैं और उन कामों को करते हैं, जिनका आविष्कार नव-पाषाणिक मनुष्य ने किया था।

ये कार्य मुख्यत: खेतों को तैयार करना, फसलें बोना और उन्हें काटना, पशुओं की देखभाल और खाद्य सामग्री और पशुओं और वनस्पतियों से प्राप्त होने वाली गौण उपजों, जैसे ऊन और सन, के परिरक्षण और अभिसंस्कार से सम्बन्धित घरेलू काम हैं। जिन देशों में मौसम स्पष्टतया अलग-अलग होते है, वहाँ की गतिविधियाँ भी मौसमी होती हैं। कुछ दैनिक कामों को गाँव के लोग अलग-अलग परिवारों के रूप में करते हैं, परन्तु जो काम मौसमी होते हैं और जिनका सम्बन्ध सभी लोगों से होता है, उन्हें सारा समुदाय एक साथ मिलकर करता है। उदाहरण के लिए, जिन दिनों खेतों में काम कम होता है, उन दिनों सब लोग मिलकर मकान बनाते हैं।

क्योंकि किसान का सम्बन्ध मौसम से बहुत अधिक रहता है—एक तूफान सारी फसल को बरबाद कर सकता है—इसलिए चिकित्सकों के साथ-साथ वर्षा-पुरोहित और पवन-पुरोहित भी उठ खड़े हुए। प्रत्येक गाँव में प्राय: एक स्थानीय देवी या देवता होता था, जो संकट के समय वहाँ के निवासियों के विशेष हितों की रक्षा करता था। स्थानीय स्वायत्तशासी पुरोहित बाद में चलकर और बड़े सोपानतन्त्रों के अंग बन गए। पुरोहित ग्रामवासियों को विवाह और मृत्यु जैसे संक्रांति के अवसरों पर सान्त्वना और बल प्रदान करता था और गाँवों में परस्पर होने वाले झगड़ों के समय सहायता देता था।

सारे भूभाग में प्राकृतिक साधनों का समान वितरण न होने के कारण इन झगड़ों को न्यूनतम रखना आवश्यक था। बहुधा ऐसा होता था कि किसी एक गांव में कुठार बनाने का पत्थर बड़ी मात्रा में पाया जाता था; किसी अन्य गाँव में चिकनी मिट्टी पाई जाती थी और किसी अन्य गाँव में लौह ऑक्साइड पाया जाता था, जिसकी आवश्यकता लाल रंग के लिए होती थी। इन सामग्रियों के वितरण का सरलतम उपाय व्यापार था। व्यापार केवल तभी चल सकता था, जबकि शान्ति रहे। इसलिए आर्थिक दृष्टि से एकीकृत किसी प्रदेश में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्थित गाँव परस्पर एक प्रकार की मित्रता-सी स्थापित कर लेते थे, जो समय-समय पर लगने वाली पठों, होने वाले समारोहों और खेलों द्वारा बनी रहती थी। ये समारोह और खेल सीधे शिकारी लोगों के खास-खास मौसमों में होने वाले सम्मेलनों से निकले थे।

संक्षेप में, नव-पाषाणिक जीवन पद्धति इस ढंग की थी। यह न केवल अमेज़न नदी के बेसिन के ऊपरी भागों में और न्यूगिनी के पर्वतों के आन्तरिक भाग में ही, जहाँ कि बगीचों की खेती करने वाले लोग अब भी पेड़ों को पत्थरों के कुठारों से काटते हैं, अब तक बची हुई हैं, अपितु तथाकथित सभ्य जगत् के भी एक बड़े भाग में बची चली आ रही हैं। यूरोप, एशिया और अफ्रीका के अधिकांश खेती वाले प्रदेशों के ऊपर से उड़ते हुए विमान-यात्री को एक ऐसा भूभाग दिखाई पड़ता है, जो खेतों के अनेक समूहों में विभक्त हैं। ये खेत इस प्रकार बने हुए हैं कि उनमें से प्रत्येक खेत-समूह के बीच में बने हुए एक नाभिक से किसी भी खेत तक सरलता से चल कर पहुँचा जा सकता है। यह नाभिक एक गाँव होता है, जिसमें कुछ सौ ऐसे मानव प्राणी बसते हैं, जो उसी स्थान पर पैदा हुए थे और वहीं पल कर बड़े हुए हैं। वे मिल-जुल कर अपना जीवन बिताते हैं और उनका समान रूप से यह प्रयत्न रहता है कि उनकी फसलें भली भाँति उगें और उनके पशुओं की वृद्धि होती रहे। इन प्रत्यनों के फलस्वरूप मानवीय सम्बन्धों की जो व्यवस्था उत्पन्न हुई थी, वह अब भी अनेक देशों में देखी जा सकती है। इन देशों में फ्रांस, इटली, ईरान, भारत, इथियोपिया, और मैक्सिको भा सम्मिलित हैं, जहाँ पर नगरों के आविर्भाव ने ग्राम समाज और नागरिक समाज के मध्य श्रम का विभाजन मात्र कर दिया है।

इस व्यवस्था को केवल दो बड़े राष्ट्र बड़ी सीमा तक अस्त-व्यस्त कर सके हैं। अमेरिका में गत दो शताब्दियों के 'यांकी' (अमेरिकी) आविष्कारों ने ऐसी नई भूमि पर, जहाँ कि गाँव नहीं बसे हुए थे, खेती करने के लिए मशीनें बनाई। इस प्रकार अमेरिका महाद्वीप के ऊपर उड़ते हुए विमान-यात्री को एक ऐसा भूदृश्य दिखाई पड़ता है, जिसमें कि वर्गाकार खेतों का जाल बिछा हुआ है। इन खेतों की सीमा-रेखाएँ इतनी ठीक-ठीक अंकित हैं कि विमान चालक उनके द्वारा अपना मार्ग नियत कर सकता हैं; और ये वर्गाकार खंड

अलग-अलग लोगों के फार्म हैं, जो उतने ही यन्त्र चालित हैं. जितने कि कारखाने होते हैं। यहाँ के किसान श्रम की बचत करने वाली मशीनों का उपयोग करने के कारण अपने बच्चों को उच्च विद्यालयों और महा-विद्यालयों में भेज पाने में समर्थ हैं। क्योंकि खेती के लिए भी उतनी ही शिक्षा की आवश्यकता होती है, जितनी कि किसी व्यापार या व्यवसाय के लिए. और क्योंकि आधुनिक किसान शहर में रहते हुए भी रियायती टिकट लेकर अपने काम पर रोज़ उसी प्रकार आ-जा सकता है जैसे कि नगर में रहने वाला मज़दूर, इसलिए देहाती गंवार और शहर के सभ्य नागरिक के बीच का पुराना भेद-भाव समाप्त हो गया है। बीसवीं शताब्दी के अमेरिका से नव-पाषाणिक संस्कृति का नमूना लुप्त हो गया है, क्योंकि अमेरिका में यह संस्कृति कभी भी पूर्वी समुद्र-तट से आगे तक नहीं जा पाई थी और यह प्रदेश अब औद्योगिक बन गया है। कनाडा, न्यूज़ीलैंड, आस्ट्रेलिया और अर्जेन्टाइना में पहुँचे हुए यूरोप-वासियों ने भी उस भूमि पर कब्ज़ा कर लिया, जिस पर पहले से मिश्रित ग्रामीण खेती नहीं हो रही थी। उन्होंने भी अमेरिकन पद्धति का ही अनुसरण किया है, हालांकि उन्होंने उसमें कुछ सुधार अपनी ओर से भी कर लिए हैं।

दूसरा वह बड़ा राष्ट्र, जिसने यन्त्रीकरण का प्रयत्न किया है, रूस है। परन्तु वहाँ भूमि पर पहले से ही नव-पाषाणिक शैली के ग्रामीणों का क़ब्ज़ा था, जिन्हें बिना ज़ोरदार झटका दिए पुरातन जीवन पद्धति को त्यागने के लिए विवश नहीं किया जा सकता था। उनके नेताओं ने उन्हें अपने घरों से उखाड़ कर सामूहिक फार्मों में ठूंस देने के लिये राज्य की सर्वोच्च प्रभुता शक्ति का प्रयोग किया। यह समझा जाता है कि इन सामूहिक फार्मों में वे लोग मशीनों द्वारा बड़े पैमाने पर खेती की अमेरिकी तकनीकों का अनुकरण कर सकेंगे। क्योंकि रूस में न तो भूमि पर और न मशीनों पर ही किसानों का स्वामित्व है और न वे कुछ भी अपनी सन्तान के लिए संचित करके छोड़ जा सकते हैं, इसलिए इन किसानों में वैयक्तिक उद्यम की वह सीमित प्रेरणा भी नहीं बची है, जो उनमें पहले थी। नव-पाषाणिक जीवन की बेड़ियों से कृत्रिम रूप से छूट निकलने के उनके इस प्रयत्न में अभी तक सफलता नहीं मिली है। यह समझ नहीं आता कि यूरोप, भारत और चीन में यह संक्रमण किस प्रकार हो सकेगा। यद्यपि नव-पाषाणिक काल लेखन का आरम्भ होने से तीन हज़ार

वर्ष पहले और हैरोडोटस के, जिसे कि 'इतिहास का जन्मदाता' माना जाता है, जन्म से साढ़े पांच हज़ार वर्ष पहले शुरू हुआ था, फिर भी नव-पाषाणिक संस्कृति ऐसी लुप्त नहीं हो गई है कि वह प्रागितिहासवेत्ताओं की खोज का विषय बन गई हो। हो सकता है कि इसमें से बाहर निकल पाना ही संसार की सबसे कठिन समस्या सिद्ध हो।

खेती का आरम्भ

नव-पाषाणिक संस्कृति के, जिसमें कि कृषि का इतना अधिक महत्त्व था, उद्गम का एक सूत्र (सुराग) खेती किए जाने वाले विभिन्न पौधों के मूल उद्गम की खोज द्वारा मिल सकता है, विशेषरूप से उन पौधों के जंगली आदि रूपों की पहचान द्वारा। वनस्पति-शास्त्री मध्य एशिया, इथियोपिय और अन्य केन्द्र बिन्दु समझे जाने वाले स्थानों में अनेक अनुसन्धान यात्राओं पर जंगली गेहुओं, राइयों, फलियों (सेम, लोबिया आदि) और फलदार वृक्षों की खोज में, और यह देखने के लिए गए हैं कि उनका हमारे यहाँ आमतौर से पाई जाने वाली किस्मों (प्रभेदों) के साथ क्या सम्बन्ध है। इन खोजों का उद्देश्य केवल वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं, अपितु संकरण (हाइब्रिडाइज़ेशन) और वरण द्वारा पौधों का सुधार करना भी है। पौधों के सुधार में केवल फल या बीज के आकार या स्वाद का सुधार ही नहीं, अपितु उस पौधे की विभिन्न प्रकार की मिट्टी और जलवायु में उग सकने की क्षमता, बोने, निलाई करने और फसल काटने की आसानी, कीड़ों से प्रतिरक्षा की शक्ति और अभिसंस्कार और भांडागारण के लिए उपयुक्तता भी अभीष्ट होती है।

निस्सन्देह इन्हीं गुणों के आधार पर सर्वप्रथम किसानों ने यह चुनाव किया होगा कि किन पौधों की खेती शुरू की जाय और किन को जंगल में से ही चुनना जारी रखा जाय। नव-पाषाणिक कृषि के सब आधारभूत पौधों की स्पीशिज़, जैसे गेहूँ, जौ, सन और फलियां (सेम लौबिया आदि), मध्यम अक्षांशीय प्रदेशों में, जहाँ कि मौसम के परिवर्तन खूब स्पष्ट होते हैं और जहाँ प्रत्येक वस्तु कुछ ही महीनों में पक जाती है, सबसे अच्छी उगती हैं। इस कारण उनका भांडागारण आवश्यक होता था; और इसलिए खेती के लिए वे पौधे चुने गए, जो भंडार में रख देने पर अधिकतम ठीक बने रहें। सम्भावयतः

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सर्वप्रथम कृषक वे लोग थे, जिन्होंने अपने प्रधान पण्य द्रव्यों को उससे बहुत पहले इकट्ठा करना और भण्डार में रखना शुरू कर दिया था, जबकि उन्होंने उन्हें उगाने की बात सोची—इसके उदाहरण वे आदिवासी लोग हैं, जिन्हें बाहर से आकर बसने वाले श्वेतजातीय लोगों ने मध्य कैलिफोर्निया के गाँवों में बसा हुआ पाया था। ये आदिवासी अन्न, पिनोन की गिरियाँ और जंगली घास के बीज मौसम में इकट्ठे कर लेते थे और उन्हें टोकरी की तरह बुनकर बनाये गए पात्रों में रख छोड़ते थे, जिससे वे सर्दियों में खाने के काम आयें। जब सन् 1849 में स्वर्ण की खोज में आने वाले लोगों ने सैक्रामैंटो घाटी में एक विशाल बांज के वृक्ष को काटकर गिरा दिया, तब आदिवासी लोग रोने लगे, क्योंकि उनके लिए वह बांज का वृक्ष भोजन और समृद्धि का ठीक वैसा ही पवित्र प्रतीक था, जैसा कि वह उसके दो हज़ार वर्ष पहले यूनान में रहा था। मध्य कैलिफोर्निया में वैसा जलवायु पाया जाता हैं, जिसे कि भूगोलवेत्ता 'भूमध्य का जलवायु' कहते हैं। इसके वार्षिक तापमान और वर्षा का नमूना भूमध्य सागर के किनारे बसे हुए देशों जैसा ही है। यहाँ की जंगली उपजें कृषि से पूर्व के काल के पुरातन यूनान, लेबनान और फिलस्तीन से और ईराक, ईरान और तुर्किस्तान के कुछ भागों की उपजों से मिलती-जुलती हैं। ये वे प्रदेश हैं, जहाँ नव-पाषाणिक सभ्यता बहुत पुरातन काल में पहुँच गई थी। इन प्रदेशों के मध्य-पाषाणिक निवास बजुंफल। (ऐकौर्न), गिरदार फल और बीजों को उसी प्रकार संग्रह करके रखते होंगे, जिस प्रकार कैलिफोर्निया रखते हैं, जिससे वे सदियों में उनके खाने के काम आ सकें। इनमें से कुछ लोग अब भी बंजुफल खाते हैं।

वसन्त ऋतु में इन प्राचीन आहार-संचयक लोगों की स्त्रियाँ जल-धाराओं के किनारे जल-पत्तियाँ इकट्ठा करती हुई घूमा करती होंगी और चरागाहों में खाने योग्य हरी पत्तियों की खोज में कमर झुका कर उसी प्रकार चला करती होंगी, जैसे इटालियन स्त्रियाँ अमेरिका के उपनगरों के हरे मैदानों में कुकरौधों (डैंडेलियन) को ढूंढती हुई फिरा करती हैं। ग्रीष्म ऋतु में और पतझड़ में वे कंद-मूलों को, विशेष रूप से प्याज जाति के कन्द मूलों को; खोदने के लिए झुंड बनाकर जाया करती होंगी। ये प्याज़ जातीय कन्द केवल भोजन को सुगन्धित बनाने के ही काम नहीं आते, अपितु कीड़ों से बचाव के लिए भी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उपयोगी होते हैं।

इन पत्तियों वाली, कन्दों वाली और मूलों वाली फ़सलों की खेती भी की जा सकती होगी और इनमें से बहुतों की खेती की भी गई थी, किन्तु जिन कालों का अभिलेख हमारे पास है, उनमें इन्हें उतना महत्त्व प्राप्त नहीं हुआ था, जितना कि उन फ़सलों को प्राप्त हुआ, जिन्हें सरलता से भंडार में रखा जा सकता था और इस प्रकार बड़ी मात्रा में सर्दियों के लिए, जबकि भोजन प्राप्त नहीं होता था, परिरक्षित करके रखा जा सकता था। 'पुरानी दुनिया' के उन भागों में, जिनसे कि हमारी अपनी सभ्यता निकली है, जो पौधे कृषि के मेरूदण्ड बने हुए थे, वे आकार, दशा और उठाने-धरने के ढंग की दृष्टि से सबके सब एक ही प्रकार के थे। गेहूँ और जौ, जो छोटे धान्य थे, मुख्यरूप से श्वेतसार (निशास्ता) प्रदान करते थे। लौबिया, मटर और मसूर से प्रोटीन प्राप्त होता था। सरसों, सन और पटसन से तेल मिलता था। इनमें से अधिकांश के और भी कई उपयोग थे। सन और पटसन तन्तुओं अर्थात् रेशों के रूप में, गेहूँ और जौ के डंठल मकानों पर छप्पर डालने के लिए फूस के रूप में और पशुओं के तले बिछाने के रूप में और सेम आदि फलियाँ मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाने के लिए काम में आते थे।

ये सब के सब ऐसे दानों या बीजों के रूप में प्राप्त होते थे, जिन्हें सुखाया जा सकता है और कितने ही समय तक संग्रह करके भंडार में रखा जा सकता है। इस प्रकार उनमें न केवल एक इस प्रकार का आहार प्राप्त होता है, जो यदि एक बार काफी मात्रा में बो दिया जाय, तो अनेक वर्षों तक चलता रह सकता है, अपितु यदि कभी कोई फसल नष्ट हो जाये, तो उन्हें कई वर्ष बाद भी बीज के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। इसलिए वे अनिश्चित वर्षा वाले प्रदेशों में, पश्चिमी तूफानों के मार्ग के दक्षिण-पूर्वी छोर पर, जहाँ कि वर्षा केवल सर्दियों के महीनों में होती है, खेती के लिए विशेष रूप से उपयुक्त हैं। क्योंकि वे केवल एक वर्ष रहने वाले पौधे हैं, इसलिए उन सबको बखेर कर बोया जा सकता है। इस बखेरने की विधि से बोने में समय और श्रम दोनों की ही वचत होती है। ये सब धान्य या बीज इस प्रकार के हैं कि इन्हें एक-एक पौधा करके काटने की आवश्यकता नहीं होती, अपितु इनका ढेर का ढेर एक साथ काटा जा सकता है और उसके बाद पीट कर या कूट कर बीजों को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

डंठलों से अलग किया जा सकता है। इन सबको या तो उबाल कर खिचड़ी बना कर या फिर पीस कर और पका कर भोजन बनाया जा सकता है।

काटने के लिए उपयुक्तता जंगली पौधों का विशेष गुण नहीं है। जब किसी जंगली धान्य की बाल या फली पकती है, तो वह फट जाती है और बीज दूर-दूर तक भूमि पर बिखर जाते हैं। जब जंगली मटर का पौधा परिपक्व हो जाता है, तब उसकी फलियाँ फट कर खुल जाती हैं और बीज दूर-दूर तक बिखर जाते हैं। यदि ऐसा न हुआ करता, तो ये पौधे मानों आत्महत्या कर रहे होते। जो मनुष्य इस प्रकार के बीजों का संचय करते हैं, उन्हें बहुत तेज़ी से काम करना पड़ता है। वे ठीक समय पर उन पौधों के तनों और डंठलों को छड़ियों से पीटते हैं और बीजों को अपनी टोकरियों में गिराते चलते हैं। इस प्रकार एक मौसम में इससे पहले कि बीज भूमि पर गिर कर कुचले जाएँ, सड़ जाएँ या पक्षियों और गिलहरियों द्वारा उठा लिये जाएँ, एक व्यक्ति जितने बीज इकट्ठे कर सकता है, उनकी मात्रा बहुत थोड़ी होती है।

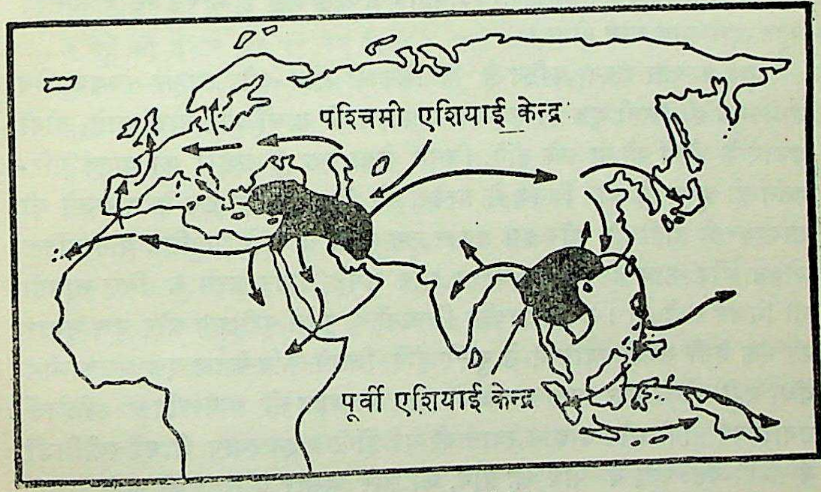

नव-पाषाणिक मूल स्थान और विस्तार

कभी कदास किसी जंगली पौधे में एक ऐसा आत्मघाती परिवर्तन हो जाता है कि जिसके कारण उसकी बालियों या डोडों में फटने की क्षमता नहीं रहती।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साधारणतया इस प्रकार का पौधा अन्त में गिर पड़ता है और उसके बीज सड़ जाते हैं। परन्तु यदि कोई मनुष्य उस पौधे को उठा ले और उसकी बालियों या डोडों को कृत्रिम रूप से खोल डाले, तो वह अगले मौसम में उसके बीजों को बो सकता है और इस प्रकार उस पौधे में हुआ वह परिवर्तन बना रहता है। इस परिवर्तन के बने रहने के कारण मनुष्य को यह आसानी हो जाती है कि उसे फसल इकट्ठी करने के लिए काफी समय मिल जाता है। इस प्रकार का अनाज का खेत तब तक खड़ा रहेगा, जब तक कि वह एक-एक मुट्ठी करके उसके ऊपर की बालियों को तोड़ न ले, चाहे उसे इस काम में महीने भर से भी अधिक समय क्यों न लग जाय। इसके बाद वह दानों को डंठलों और भूसे से अलग करने में और भी कई महीने लगा सकता है और फिर भी उसका बहुत कम अन्न नष्ट होगा।

यह कल्पना करना कठिन है कि शिकारी लोग और आहार-संचयक लोग संयोगवश ही किसी एक ही समय इस प्रकार की बालों और डोडों वाले, दोनों प्रकार के पौधों को पा सके होंगे, जिनमें ऐसा एक ही प्रकार का घातक परिवर्तन हो चुका हो और जिनमें से प्रत्येक को ठीक एक ही ढंग से संभालने की आवश्यकता होती हो, और इस प्रकार उन पौधों से उन्हें सन्तुलित वानस्पतिक भोजन और साथ ही मकान बनाने और कपड़े तैयार करने के लिए सामग्री भी मिलने लगी हो। हमारे प्राचीन किसानों के पूर्वज परीक्षण और मूल सुधार की एक ऐसी लम्बी अवधि में से गुज़रे होंगे, जिसमें कृषि केवल एक अंशकालीन धंधा रही होगी और उस अवधि में और भी बहुत सी वानस्पतिक स्पीशिज़ें उगाई गई होंगी और बाद में त्याग दी गई होंगी। इन त्याग दी गई स्पीशिज़ों में सम्भाव्यतः कुछ वे पौधे रहे होंगे, जो सारे संसार में खेती की जाने वाली स्पीशिज़ों के साथ-साथ घास-पात के रूप में अब तक चले आ रहे हैं। अन्य कुछ स्पीशिज़ें, जो घात-पात के रूप में शुरू हुई होंगी, बाद में खेती किये जाने वाले पौधे बन गईं।

इन पिछले प्रकार के पौधों में सबसे अधिक परिचित उदाहरण राई का है। राई का आरम्भ घास-पात के रूप में हुआ था, जो नरम गेहूँ के बीच में उग आती थी और न फटने वाली फलियों का परिवर्तन इसमें भी उसी प्रकार हो गया, जैसे कि वह गेहूँ में हुआ था। किसानों ने यदि इन दो धान्यों को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अलग-अलग करने की कोशिश की भी होगी, तो उन्हें इनके आकार और आकृति की समानता के कारण अलग कर पाने में बहुत कठिनाई हुई होगी। सम्भाव्यत: उन्होंने इन्हें अलग करने की कोशिश की ही नहीं। आजकल पाकिस्तान में और अन्यत्र पुराणपन्थी किसान कई प्रकार के धान्यों को इकट्ठा बोने के आदि हैं। जहाँ सर्दी हल्की पड़ती थी, उन प्रदेशों में फसल का बड़ा भाग गेहूँ होता था। परन्तु जिस किसी साल सर्दी विशेष रूप से अधिक पड़ जाती थी, उस साल राई तो बची रह जाती थी, किन्तु गेहूँ, जो कि पिछाया बोया गया होता था, अधिकाँश मर जाता था। इसके फलस्वरूप अगले वसन्त की फसल मुख्य रूप से राई की होती थी। जब लोग गेहूँ और राई के मिले हुए बीजों को उत्तर की ओर और पहाड़ों के ढलानों के ऊपर ले गए, तो राई ने गेहूँ को धकेल कर परे कर दिया। यही कारण है कि आपको रूस के नक्शे के आर-पार एक रेखा दिखाई पड़ती है, जो दक्षिण की ओर के गेहूँ उपजाने वाले प्रदेशों को उत्तर की ओर स्थित राई उपजाने वाले प्रदेशों से पृथक् करती है और यही कारण है कि उत्तरी मोरक्को के रिफ़ियन लोग ऊँची पर्वतीय घाटियों में राई बोते हैं और लहरदार मैदानों में गेहूँ बोते हैं। इसी ढंग से जई भी ऐमर में, जो गेहूँ का ही एक अन्य प्रभेद है, घास पात के रूप में शुरू हुई थी और धीरे-धीरे अन्त में वह स्काटलैंड के पहाड़ी इलाके के हवा वाले ऊँचे क्षेत्रों में पहुँच कर एक अलग फसल बन गई।

बहुत समय तक स्तालिन को अपने राज्य को विभक्त करने वाली राई और गेहूँ की सीमा रेखा अखरती रही। वह अपने सारे प्रदेश को एक-सा बनाना चाहता था। उसने प्रोफेसर वावीलोफ़ को, जो उस समय रूसी विज्ञान अकादेमी का अध्यक्ष था, और जिसने राई का मूल उद्गम खोज निकाला था, गेहूँ की एक इस प्रकार की किस्म उत्पन्न करने को कहा, जो इतनी कठोर हो कि वह राई वाले प्रदेशों में भी उग सके। वावीलोफ़ ने, जो कि संसार का सबसे प्रमुख आनुवंशिकी विज्ञ (जैनैटिसिस्ट) था, यह कहा कि यदि यह कार्य आनुवंशिक उत्पादन की दृष्टि से असम्भव न भी हो, तो भी यह बहुत कठिन होगा ; और यदि इसे किसी प्रकार किया भी जा सके, तो इसे करने में अनेक वर्ष लग जाएँगे। स्तालिन ने आदेश दिया कि यह काम दो वर्ष में हो जाना चाहिए। वावीलोफ़ इस काम को करने में असफल रहा और वह ग़ायब हो

गया। जहाँ तक उसके साथी वनस्पति-शास्त्रियों को पता है, वह मर चुका है। उसके स्थान पर लाइसैन्को की नियुक्ति हुई। उसने आनुवंशिकता के जीन सिद्धान्त को पूँजीवादी मनगढ़न्त कहकर उसका खंडन किया और वंशानुक्रमण और क्रम-विकास की व्याख्या करने के लिए उसने अपना एक अलग ही सिद्धान्त प्रस्तुत किया। उसका यह सिद्धान्त उसके अपने उच्च-अधिकारियों के सिवाय अन्य किसी को सन्तोष नहीं दे सका।

यदि यह पुस्तक रूस में लिखी जा रही होती, तो स्पष्ट रूप से और ठीक-ठीक तौर पर यह बताना सरल होता—और वस्तुतः आवश्यक होता—कि कृषि का प्रारम्भ कहाँ हुआ। क्योंकि यह पुस्तक अमेरिका में लिखी जा रही है, इसलिए हम उन क्षेत्रों में, जिनके विषय में ठीक-ठीक ज्ञान उपलब्ध नहीं है, मतभेद रख सकते हैं और अस्पष्ट विचार बनाये रख सकते हैं। इस समय हम इस विषय में उचित रूप से यह समझ सकते हैं कि छोटे धान्यों—दालों—तिलहनों के पौधों की पहले-पहल मिली-जुली खेती अनातोलिया से पाकिस्तान तक और दक्षिण की ओर तुर्किस्तान के मरुस्थलों से अरब के मरुस्थल तक फैले हुए विस्तृत भूभाग में किसी स्थान पर शुरू हुई। इस विषय में हम उचित रूप से भरोसा स्वयं वावीलोफ़ द्वारा किये गए आरम्भिक अन्वेषणों और अनुसन्धानों के कारण ही कर सकते हैं।

इस सामान्य अंचल में मनुष्यों ने उसी कृषि-सम्मिश्रण के एक अंश के रूप में उन कुछ फलों के वृक्षों और बेलों की भी खेती शुरू की, जो अब भी हमारे बागों और अंगूरों के बागों में दिखाई पड़ते हैं। इनमें से एक प्रकार की जाति, गुलाब जाति में गुलाब के फल, श्वेतकंट फल (हौथौर्न), सेब, नाशपातियाँ और श्रीफल (नाशपाती से मिलता-जुलता एक सुनहले रंग का फल) उत्पन्न हुए। ये सबके सब अनेक स्थानों पर खाये जाते हैं, यद्यपि गुलाब और श्वेतकंट के फल पश्चिमी भोजन-सूचियों में बहुत कम ही दिखाई पड़ते हैं। जंगली नाशपातियाँ और जंगली सेब अब भी ईरान में जगरौस के पहाड़ों के पश्चिमी ढलानों पर जंगली वृक्षों के रूप में उगते हैं। एक और रसीली जाति तुर्किस्तान में शुरू हुई, जो बादामों, आड़ुओं, आलूबुखारों और खूबानियों की थी। यह जाति पहले चीन पहुँची और उसके बाद यूरोप। प्राचीन कृषि इलाके के उसी उत्तरी भाग से अखरोट और अंगूर भी आये। इनमें से पिछला, अर्थात्

अंगूर, विशेष रूप से ट्रांसकाकेशिया में, जिसका अर्थ जार्जिया और आर्मीनिया लिया जाता है, शुरू हुआ था। जैतूनों और अंजीरों की, जो भूमध्य के देशों में पाये जाते हैं, खेती पहले पहल फिलस्तीन और लेबनान में की गई थी और खजूरों की खेती पहले पहल ईरान की खाड़ी के तटवर्ती दलदली इलाकों में होने का पता चला है।

पुरातन काल में खेती किये जाने वाले इन फलों में से, जिनका कि यहाँ उल्लेख किया गया है, अधिकांश ऐसे हैं, जो आरम्भिक पश्चिमी नव-पाषाणिक कृषि व्यवस्था में इस दृष्टि से ठीक बैठ जाते हैं कि उनका सबका अभिसंस्कार और परिरक्षण किया जा सकता है। जिस प्रकार की कृषि से हमारी पश्चिमी सभ्यता उत्पन्न हुई, उसमें, और दक्षिण पूर्वी एशिया और ओशनिया की प्राचीन उष्ण-कटिबन्धीय बागबानी में, जिसमें कि अधिकांश भोज्य पदार्थ उसी समय खा लेने पड़ते थे, जबकि वे तैयार होते थे, यही सारभूत अन्तर है।

मध्यपूर्व और यूरोप में सेवों को काट कर एक डोरी में पिरोकर सुखा लिया जा सकता है। अंगूर, फाड़ी हुई खुबानियाँ, अँजीरें, खजूर, बादाम और अखरोट सुखा लिये जाते हैं और सर्दियों में खाने के लिए रखे जाते हैं। जैतूनों को पेर कर उनका तेल निकाल लिया जाता है, जो मर्तबानों में रखा रह सकता है। अंगूरों और सेवों को कुचल कर और उनमें खमीर उठाकर शराब बनाई जाती है और इस प्रकार बनी हुई अंगूरी और साइडर शराबें चमड़े या मिट्टी के पात्रों में रखी जा सकती हैं, और वे अनेक शीतकालीन नीरस संध्याओं को आनन्दमय बना सकती हैं। नाशपातियों से भी एक पेय बनाया जा सकता है, जिसे 'पैरी' कहते हैं।

अनेक फलदार वृक्षों की लकड़ी कठोर होती है और रेशेदार ताड़ के सिवाय सब फलदार वृक्षों की लकड़ियों का तन्तुक्रम बहुत बढ़िया होता है। इसका कारण बिलकुल सीधा सादा है। यदि उसका स्वामी भाग्यशाली हो, तो प्रत्येक वर्ष फलों के बढ़ने और पकने के साथ-साथ प्रत्येक वृक्ष के ऊपरी ढाँचे का बोझ कई सौ पौंड बढ़ जाता है। कई बार शाखाएँ टूट जाती हैं, परन्तु तना बना रहता है। जो लकड़ी इतने बोझ को सँभाल सकती है, वह मज़बूत और लचीली होगी ही। यह लकड़ी हल, गाड़ियों

के पहिये, पंचांगुरे, फावड़ों के हत्थे और कृषि सम्बन्धी अन्य सब उपकरण बनाने के लिए जंगल में पाई जाने वाली अधिकांश लकड़ियों की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छी होती है और यही कारण है कि सम्भाव्यत: नव-पाषाणिक मनुष्य इसका इन कामों के लिए उपयोग करता था। असंस्कृत कृषि-समाजों में, जैसे कि आजकल पहाड़ों में रहने वाले रिफियन लोगों में जैतून और अखरोट के प्रत्येक वृक्ष की बड़ी सावधानी से रखवाली की जाती है और जब उसकी उपज एक खास स्तर तक घट जाती है, तो उसे काटकर उससे हल के हत्थे बना लिये जाते हैं, ठीक उसी प्रकार, जैसे कि अमेरिका में पुराने नाशपाती के पेड़ों के तने लकड़ी की नक्काशी का काम करने वाले कारीगरों के यहाँ पहुँचा दिये जाते हैं।

पशुओं का बाड़ों (अस्तबलों) में प्रवेश

यदि नव-पाषाणिक कृषि में, जिसमें श्वेतसार प्रदान करने वाले धान्यों, तिलहनों, प्रोटीन देने वाली दालों और तेल तथा शर्करा उत्पन्न करने वाले फलों का सन्तुलन था, इस सम्मिश्रण का दूसरा आधा अंश, पशुओं को पालतू बनाना, न होता, तो वह हमें सभ्यता के मार्ग पर उस बिन्दु से अधिक आगे नहीं ले जा सकती थी, जहाँ तक कि प्युएब्लो के मूल वासी पहुँच चुके हैं। इन पशुओं में से चार आधारभूत हैं: बकरी, भेड़, गाय और सूअर। इन पशुओं के मूल विषय में विशेषज्ञ उतनी ही दुविधा में हैं, जितने कि वे खेती किये जाने वाले पौधों के विषय में हैं। ये चारों पशु तथाकथित उस 'पेलीआर्कटिक' अथवा उत्तरी प्राणिजात (जीव जन्तु) के सदस्य हैं, जो 'पुरानी दुनिया' के उत्तरी समशीतोष्ण अंचल में ब्रिटेन से लेकर चीन तक फैला हुआ है। इस अभिसीमा में बकरियाँ, भेड़ें, गौएँ और सूअर काफ़ी संख्या में जंगली रूपों में विद्यमान हैं और रहे हैं, और अब प्रश्न उठता है कि किन जंगली रूपों से कौन-सी पालतू स्पीशिज़ें निकलीं?

हम पुरातत्ववेत्ताओं की इस प्रश्न में रुचि इसलिए है कि हमें यह पता है कि यदि हम पालतू पशुओं में से प्रत्येक के जंगली पूर्वज का पता चला सकें, तो हम न केवल यह बता सकेंगे कि प्रत्येक पशु को पालतू बनाने का काम कहाँ पर शुरू हुआ, अपितु यह भी कि वह कई स्थानों पर अलग-अलग स्वतन्त्र रूप से शुरू हुआ, या केवल किसी एक ही स्थान पर हुआ। एक बार यदि

हमें यह जानकारी प्राप्त हो जाय, तो हम इसका सम्बन्ध खेती किये जाने वाले पौधों के मूल उद्गमों के प्रमाणों से जोड़ सकते हैं, और तब हमें यह पता चल सकेगा कि नव-पाषाणिक अर्थ-व्यवस्था एक समूचे रूप में शुरू हुई, या आहार उत्पन्न करने की दो पृथक् तकनीकों को परस्पर मिला देने से उत्पन्न हुई, या उन दो में से एक तकनीक दूसरी तकनीक में से निकली। इसलिए जिस वस्तु की हमें खोज है, वह है—हमारी अपनी सभ्यता का मूल उद्गम।

'बकरों के दादा' की पदवी पाने का सबसे अधिक उपयुक्त उम्मीदवार तुर्किस्तान और अफगानिस्तान का तथाकथित 'बैज़वार' बकरा है। भेड़ों की प्रतियोगिता का इस दृष्टि से विजेता 'अर्गल' प्रतीत होता है, जो उत्तरी ईरान में अलबुर्ज़ पर्वतमाला में पाया जाने वाला एक जंगली मेढ़ा है। परन्तु जंगली भेड़ों की एक से अधिक स्पीशिजों और जंगली बकरियों के एक से अधिक प्रभेदों से हमारी पालतू भेड़ों और बकरियों का जन्म हुआ हो सकता है। भौगोलिक दृष्टि से भेड़ें और बकरियाँ गेहूँ के साथ-साथ पाई जाती हैं। इस बात से हमें अपने अनुसन्धान में सहायता मिलती है, किन्तु जब हम वृष (गाय-बैल) के इतिहास का अध्ययन शुरू करते हैं, तो मामला और अधिक उलझ जाता है।

यह समझा जाता है कि सब बिना ककुद वाली नस्लें **बौस** प्रिमिजेनियस की वंशज हैं, जो एक विशालकाय, उग्र स्वभाव का लम्बे सींगों वाला वृष होता था। उसके चित्र स्पेन की गुफाओं की दीवारों पर और मिनोआ के भित्ति-चित्रों में समान रूप से पाये जाते हैं। यही वह पशु है, जिसकी स्पेन के सांडों के साथ लड़ाई के प्रदर्शन मैदानों में समारोहपूर्ण मृत्यु एक प्राचीन बलि प्रथा को अब भी बनाये हुए हैं। बौस प्रिमिजेनियस दक्षिणी रूस से अल्ताई पर्वतमाला तक फैले हुए मैदानों का, जिसमें कास्पियन समुद्र के तट और तुर्किस्तान भी सम्मिलित हैं, निवासी था। वे लघुकाय और छोटे सींगों वाले नव-पाषाणिक पालतू पशु, जो पुरातत्वीय स्थलों पर हड्डियों द्वारा पहचाने गए हैं और जिनके उत्तरजीवी अब भी ओर्कनीज़ और शैटलैण्ड द्वीपों में पाये जाते हैं, इस शानदार पशु बौस प्रिमिजेनियस से बहुत दूर की वस्तु हैं। आरम्भिक पालतू क़िस्म, बौस ब्रैकीसिरोस, एक ठिगना (छोटे कद का) पशु था। यदि यह बौस प्रिमिजेनियस का वंशज था, जैसा कि हम मानते हैं, तो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यह प्रश्न उठता है कि—क्या आरम्भिक काल के किसान विशालकाय और शक्तिशाली पूरे आकार वाले पशुओं को पकड़ते और पालते थे और उनके वंशजों में से ठिगने पशुओं को छाँट लेते थे, या उन्हें जंगल में कुछ ठिगने पशु मिल जाते थे, जिन्हें कि वे पाल लेते थे ? हैम्बर्ग में जीव विज्ञान के प्राध्यापक और पालतू पशुओं के उद्गम के विषय में संसार के सबसे बड़े प्रामाणिक विद्वान् बर्टहोल्ड क्लैट का कथन है कि उन्हें जंगली दशा में ही ठिगने बने हुए पशु प्राप्त हो जाते थे। इस विषय में उसके द्वारा प्रस्तुत किया गया कारण पर्याप्त विश्वासोत्पादक है। मनुष्य ने जिन पशुओं को पाल कर ठिगना अर्थात् छोटे कद का बनाया है, उन सब के दाँत बड़े रहते हैं; उदाहरण के लिए बुलडौग या पैकीनीज के। जो पशु जंगली दशा में ही ठिगने बनते हैं, उनके दाँत छोटे होते हैं, जिससे वे उनकी हड्डियों में ठीक बैठ सकें।

इसमें कोई उचित सन्देह नहीं है कि हमारे पालतू सूअर का जन्म दो जंगली स्पीशिजों से हुआ है। इनमें से एक है सुस स्क्रौफ़ा, वह सामान्य जंगली सूअर, जो पश्चिमी यूरोप और उत्तरी अफ्रीका से मध्य एशिया और साइबेरिया तक सब जगह पाया जाता है; और दूसरा है सुस विट्टटस, जो दक्षिण-पूर्वी एशिया का जंगली सूअर है। अब तक संसार में पालतू सूअर की सबसे अधिक पुरानी ज्ञात हड्डियाँ वे हैं, जिन्हें मेरे अनुसन्धान दल ने ईरान में कास्पियन

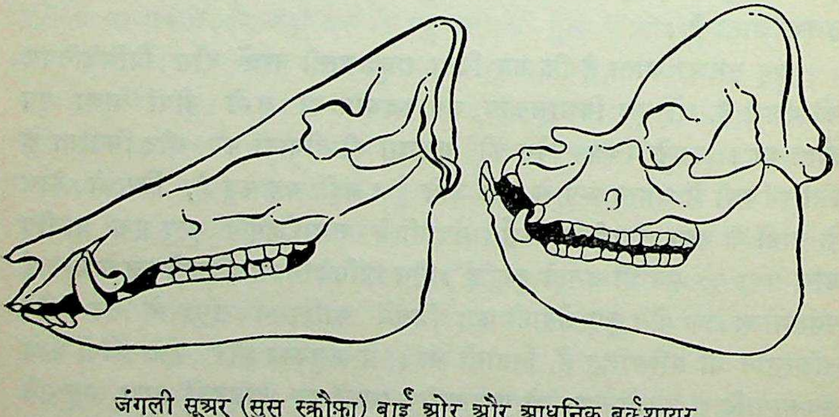

जंगली सूअर (सुस स्क्रौफ़ा) बाईं ओर और आधुनिक बर्कशायर
(विट्टटस प्रभेद)। क्लैट के अनुसार।

समुद्र के तट पर बैल्ट और होतू गुफाओं में नव-पाषाणिक स्तरों पर से प्राप्त किया था। वे फिलाडल्फिया में मेरे कार्यालय में ताकों पर रखी हुई हैं। वे बिलकुल स्पष्ट रूप से सुस स्क्रौफ़ा स्पीशिज़ की हैं। इसी प्रकार, एक सौ से भी अधिक वर्ष पहले खोदकर निकाले गए स्विटज़रलैंड के झील-घरों के नीचे के कीचड़ में से मिली सूअरों की हड्डियाँ भी सुस स्क्रौफ़ा स्पीशिज़ की ही हैं।[1] ये भी नव-पाषाणिक काल की हैं, परन्तु समय की दृष्टि से लगभग दो हज़ार वर्ष बाद की हैं। परन्तु यूरोप और अमेरिका के आधुनिक सूअरों की, जो विशेषतया माँस और चर्बी के उत्पादन के लिए चुने जाते हैं, जंगली सूअरों से कोई समानता नहीं है। उनकी छोटी थूथनियों और गोल मटोल शरीरों से स्पष्ट है कि वे दक्षिण-पूर्वी एशिया और चीन के पुरातन काल के सूअरों से सम्बन्धित हैं। हुआ यह है कि पश्चिमी जगत् के सूअर पालने वालों ने अपने यहाँ की स्पीशिज़ों के स्थान पर सुदूर पूर्व की स्पीशिज़ों को अपना लिया है। इस बात को जानने के लिए यदि हमारे पास अन्य कोई साधन न होते, तो भी हम इसे सूअरों की जूँओं के अध्ययन द्वारा पता चला सकते थे। आधुनिक यूरोप और अमेरिका के सूअरों के शरीरों पर जो जूँएँ रहती हैं, वे वही हैं, जो स्याम में पालतू और जंगली दोनों प्रकार के सूअरों की खालों पर रहती

---

[1] कार्ल ओ. सौअर ने अपनी पुस्तक 'ऐग्रीकल्चरल ओरिजिंस एण्ड डिसपर्सल,' अमेरिकन जिओग्रैफिकल सीरिज़ नं० 2 न्यूयार्क, 1952, में पृष्ठ 37 पर यह लिखा है कि स्विटजरलैंड के नव-पाषाणिक सूअर विट्टेटस थे। यह बात उसने बी० क्लैट की पुस्तक 'ऐंटेस्टेहुँग डर हॉस्टियर', बर्लिन, 1927 के पृष्ठ 85 पर किये गए एक वक्तव्य के आधार पर लिखी है। यह वक्तव्य मूलतः यह है: "Die alten europaischen, jetzt durch Einkreuzung nicht mehr reinen handschweinrassen stammen von Sus scrofe, die eingeborenen asiatischen Hausschweine, die seit viele Jahrzehnten zu dieser Einkreuzung herangezogen sind, stammen von Sus vittatus."

इसका मेरा किया हुआ अनुवाद इस प्रकार है: "यूरोपियन पालतू सूअरों की पुरानी जातियाँ, जो मिश्रण के कारण विशुद्ध नहीं रहीं, सुस स्क्रौफ़ा की वंशज हैं; मूलवासी एशियाई पालतू सूअर, जो अनेक दशाब्दियों पहले इस संकर में खींच लाये गए थे, सुस विट्टेटस के वंशज हैं।"

हैं। जंगली वराहों (बोर) की जूँएँ अलग प्रकार की होती हैं।

जूओं की पहचान द्वारा पशुओं की स्पीशिज़ों में सम्बन्ध की खोज करने का यह काम विज्ञान के क्षेत्र में नया और मनोरंजक है। यह इस खोज पर आधारित है कि जूँएँ गन्दी तो होती ही हैं, वे पुराणपन्थी भी होती हैं। जूँ का परिवेश त्वचा का एक वक्राकृति खंड होता है, जिसमें वह बालों या पंखों के आश्रय में चलती-फिरती है। यहाँ का तापमान और आर्द्रता बहुत कुछ सदा एक-सी ही बनी रहती है। घूमते-फिरते उसे अपने से भिन्न लिंगी अन्य जूँएँ मिलती हैं और वह अपने अनजान आश्रयदाता की खाल का उपयोग प्रेमियों के मिलनस्थल के रूप में करती हैं। जब किसी जूँ का आश्रयदाता (जिस प्राणी के शरीर पर वह रहती है) मर जाता है, तब वह किसी अन्य व्यक्ति की बाह्य त्वचा पर ठीक वैसा ही परिवेश ढूँढने के लिए इस शीतल संसार में रेंगना शुरू करती है। जब कोई स्तनपायी आश्रयदाता मादा पशु सन्तान को जन्म देती है, तब जूँ के लिए यह सम्भव होता है कि वह प्रसूति की उत्तेजना में उस अभागे दूध पीते बच्चे के शरीर पर पहुँच जाय। पक्षियों के मामले में वह माता के शरण देने वाले पंखों से चूज़े के पंखों पर कूद पड़ती है। जब जूँ का आश्रयदाता पशु मैथुन का आनन्द ले रहा होता है, तब वह एक प्रणयी के शरीर से दूसरे के शरीर पर पहुँच जाती है; और यदि वे आश्रयदाता पशु वर्ण-संकर कर रहे हों, तो जूँ भी वर्ण-संकर कर सकती है। इस सारी गतिविधि में, हज़ारों और यहाँ तक कि लाखों वर्षों में भी, हो सकता है कि जूँ का परिवेश बिलकुल ही न बदले, भले ही उसके आश्रयदाता पशु का परिवेश बहुत अधिक बदल चुका हो। हो सकता है कि उसके आश्रयदाता पशु की टांगें विकसित होते-होते लम्बी हो गई हों, जबड़े छोटे हो गए हों, और दाँत अपेक्षाकृत थोड़े और कम हो गए हों, किन्तु क्योंकि जूँ का परिवेश एक-सा बना रहता है, इसलिए वह ज्यों की त्यों रहती है। इस ढंग से कीटविज्ञों ने कुछ ही समय पहले एक खगवैज्ञानिक रहस्य, राजहंस (फ्लेमिंगो) के मूल उद्गम का उद्घाटन कर लिया। राजहंसों (फ्लेमिंगो) के शरीर पर बत्तखों वाली जूँएँ रहती हैं। राजहंस (फ्लेमिंगो) लम्बे पैरों वाली बत्तख है, वह सारस बिलकुल नहीं है। सारसों की जूँएँ एकदम अलग होती हैं। यही वह आधार है, जिस पर सूअर की आधुनिक नस्लों का मूल दक्षिण पूर्वी एशिया के सूअर में ढूँढ निकाला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गया है।

यह किसी को पता नहीं कि सर्वप्रथम पशुपालकों ने अपने सर्वप्रथम पशु किस प्रकार पकड़े थे, परन्तु यह अज्ञान एक विशाल समूह को तरह-तरह के अनुमान करने से रोक नहीं पाया है। ऐसे दो तथ्य उपलब्ध हैं, जिनसे इस सम्बन्ध में कुछ सूत्र मिल सकता है। पहला तो यह है कि इस समय जीवित आदिमकालीन शिकारियों में यह आदत पाई जाती है कि वे माता के मार दिये जाने के बाद पशुओं के बच्चों को मानवीय शिशुओं की भाँति पाल पोस कर बड़ा करने के लिए रख लेते हैं और वे उनसे लाड़ प्यार भी जताते हैं। दूसरा तथ्य यह है कि कुछ पुरुषों और स्त्रियों में आजकल भी यह शक्ति होती है कि वे पशुओं को अपने पास बुला सकते हैं। पशुओं की आदतों और पशुओं की आलाप पद्धति का सम्यक् ज्ञान बढ़िया शिकारी की एक योग्यता मानी जाती है। निस्सन्देह बहुत से पशु, बच्चे और वयस्क, दोनों ही उन से बहुत पहले पकड़े और बन्दी अवस्था में रखे गए थे, जबकि लोगों के पास उन्हें सब ऋतुओं में खिलाने-पिलाने की और रेवड़ों के रूप में रखने पर उनकी रक्षा करने की सुविधाएँ उपलब्ध हुईं। यदि, जैसा कि क्लैट ने कहा है और जैसा प्राचीनतम नव-पाषाणिक हड्डियों के मेरे अपने अध्ययन से पुष्ट होता प्रतीत होता है, सर्वप्रथम पालतू पशु ठिगने थे, तो यह समस्या, कि पशुओं को संभाला किस तरह जाता था, अपेक्षाकृत सरल हो जाती है।

चाहे वे कहीं से भी क्यों न आये हों और चाहे वे किसी भी तरह क्यों न पकड़े गए हों, बकरी, भेड़, सूअर और बैल का एक ऐसा कामचलाऊ मेल है, जो एक-दूसरे के लिए ठीक वैसा ही उपयुक्त है जैसे कि धान्य, दालें और तिलहन हैं; और ये एक-दूसरे के पूरक भी हैं। बकरी एक बहुत ही कष्ट-सहिष्णु पशु है, जो ऐसी भूमि पर भी चर कर काम चला सकती है, जिस पर ऊँट के सिवाय अन्य किसी पशु का निर्वाह नहीं हो सकता। बकरी से माँस और दूध मिलता है और इसकी खाल खूब मजबूत होती है, जो तरल पदार्थों को रखने के लिए पात्र के रूप में काम आने के उपयुक्त होती है। इसके बाल चिकने और जलसह होते हैं, जिसके कारण वे तम्बू और सब मौसमों में काम आने वाले लबादे बनाने के लिए अच्छे रहते हैं। इतना ही नहीं, बकरी भेड़ों के लिए मार्गदर्शक और रक्षक के रूप में भी काम करती है। यह गड़रिये की उसके

कुत्ते के बाद दूसरी सहायिका है। स्वयं भेड़ से भी ऊन प्राप्त होती है, जो वस्त्र बनाने के लिए प्रमुख सामग्री है; साथ ही वह दूध भी देती है। भेड़ों की कुछ किस्में माँस के लिए तैयार की गई हैं; कुछ अन्य किस्में उनकी मोटी, चर्वी वाली पूँछों के लिए तैयार की गईं हैं और कुछ अन्य किस्में उनके नवजात मेमनों की नरम ऊन के लिए तैयार की गई हैं। जब तक हरी या सूखी, कैसी भी घास हो, भेड़ों को लगभग कहीं भी चराया जा सकता है। जब तक भेड़ियों, सिंहों और बाघों से कोई खतरा न हो, तब तक एक आदमी और एक कुत्ता सौ भेड़ों और बकरियों के मिले-जुले रेवड़ की संभाल कर सकते हैं।

सूअर की खाल उतारना कठिन होता है; उसे दुहा नहीं जा सकता और उससे कड़े बालों के सिवाय और कोई वस्तु प्राप्त नहीं होती। फिर भी उसके बड़े दन्तों को चाकू के रूप में और आभूषणों के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। इसके प्रधान गुण ये हैं कि इसकी बहुत जल्दी-जल्दी और बड़ी संख्या में बच्चे देने की आदत होती है और इसमें बहुत तेज़ी से बढ़ने की क्षमता होती है। इस प्रकार यह बहुत ही बढ़िया माँस-उत्पादक है। इसके अलावा इसे वंजुफल और करंज (बीज) के फलों के भोजन पर जंगली मैदानों में पाला जा सकता है। वहाँ यह कन्दों को खोद-खोद कर खाता है और इस प्रकार मैदानों और चरागाहों को सींगों वाले पशुओं के चरने के लिए छोड़ देता है। अब तक कोई भी मनुष्य ऐसा उपाय नहीं खोज पाया कि जिसके द्वारा सूअरों को सरलता से हाँका जा सके, या उन्हें आवाज या अन्य किसी प्रकार के संकेत के अनुसार काम करने को सधाया जा सके। एक सूअरपाल केवल थोड़े-से सूअरों को ही सँभाल सकता है।

पालतू बैल अपने अन्य तीन साथियों से इस दृष्टि से भिन्न है कि वह इतना काफी बड़ा होता है कि वह अपनी पीठ पर भारी बोझ ढो सकता है, जिसमें तम्बू और घर का सामान, पुरुष, स्त्रियाँ, बच्चे, कुत्तों के पिल्ले, भेड़ों और बकरियों के मेमने भी सम्मिलित हैं। इसे ग्रीष्मकालीन स्लैज (बिना पहिये की) गाड़ियों में भी जोता जा सकता है, जो ईरान के कास्पियन समुद्र वाले तट पर, काकेशस में और बास्क देश में अब भी काम में आती हैं और इसे हलों, सिरावन (पटेला) और पहिये वाले वाहनों में भी जोता जा सकता है। गाय को दुहा जा सकता है और उसका दूध स्वभावतः मलाई और मलाई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रहित दूध में विभक्त हो जाता है। इस मलाई को मथ कर या किसी खाल के थैले में डाल कर ज़ोर से हिला कर मक्खन निकाला जा सकता है। गाय का चमड़ा मज़बूत होता है और उपकरणों के पट्टों, चमड़े की रस्सियों और यहाँ तक कि ढालों और कवचों को बनाने के लिए भी उपयोगी होता है। गाय के सींग को खोद-खोद कर उससे चम्मचें बनाई जा सकती हैं और पीने के लिए प्याले भी बनाये जा सकते हैं।

इतना ही नहीं, गाय या बैल से उपलब्ध खाद्य वस्तुओं का अभिसंस्कार करके उन्हें सरलता से धान्य, सेम, लोबिया आदि फलियों और तेलों के साथ संग्रह करके रखा जा सकता है। मक्खन को यदि उबाल लिया जाय, तो वह काफी समय तक टिक सकता है। मक्खन निकले दूध में रैनेट मिलाकर उसका पनीर बनाया जा सकता है (रैनेट एक ऐसी वस्तु होती है, जो दूध पीते बछड़े के आमाशय में से निकाली जाती है) और पनीर को बेकन और पेट के माँस, हेम और सौसेज की पट्टियों के साथ छत की कड़ियों से लटकाया जा सकता है। मारे हुए पशुओं के अधिकांश अंगों को धुआँ दिखाने और सुखाने से वे ऐसे खाद्य के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं, जिन्हें सर्दियों भर रखा जा सकता है। आवश्यकता पड़ने पर तुरन्त पशु को मारने की अपेक्षा माँस को परिरक्षित करके रखने में बहुत स्पष्ट लाभ हैं। पशुओं को मारने का समय पतझर का होता है। उससे पहले पशु यथोचित रूप से मोटे हो चुके होते हैं और सर्दियों की कठिनाई का काल अभी आने को होता है। सर्दियों में चारा बहुत कम होता है और उन दिनों रेवड़ों को यथासम्भव छोटा ही रखा जाना चाहिए। इसलिए उन दिनों जवान नर पशु मार दिये जाते हैं और गर्भवती भेड़ें और बकरियाँ कुछ थोड़े-से विशिष्ट रूप से सशक्त मेढ़ों और बकरों के साथ बचाकर रख ली जाती हैं। इसी सिद्धान्त का अनुकरण करते हुए ईराक, मिश्र और मोरक्को में खजूरों की खेती करने वाले किसान कुछ थोड़े-से नर वृक्षों के सिवाय बाकी सब नर वृक्षों को, जिन पर फल नहीं लगते, काट डालते हैं और मादा वृक्षों को हाथ से केसर लगा कर निषिक्त करते हैं। इस केसर को वे बड़ी सावधानी से नर वृक्षों के फूलों पर से उतारते हैं।

जिन पुरातत्ववेत्ताओं ने फ्रांस में और अन्यत्र गुफाओं में से खोज कर निकाली गई पशुओं की उन हजारों हड्डियों का अध्ययन किया है, जो पुरातन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शिकारियों के आहार की सूचक हैं उन्होंने इस को देखा है कि वे लगभग सभी पशु उस समय मारे गए थे, जब वे पूरे बड़े हो चुके थे । जहाँ कहीं कोई नवपाषाणिक निक्षेप इस प्रकार की तह के ऊपर पड़ा हुआ मिलता है, वहाँ पर एक तात्कालिक परिवर्तन दिखाई पड़ता है । कम से कम आधी हड्डियाँ भेड़ों और बकरियों के मेमनों और अन्य अवयस्क पशुओं की होती हैं । जहाँ कहीं हमें ऐसा संक्रमण दिखाई पड़ता है, हम यह समझ लेते हैं कि उस विशिष्ट स्थान में उस समय पशुओं का पालन शुरू हो चुका था । इस परिवर्तन के बिन्दु का ठीक-ठीक पता चलाने के लिए और साथ ही सरलता से यह बताने के लिए कि उन हड्डियों के आसपास किस प्रकार के पशु पाये जाते थे, हम उन नमूनों को उसी स्थान पर बाँध लेते हैं; और जब हम घर पहुँचते हैं, तब हम उन्हें साफ करते हैं और उन्हें प्लास्टिक के एक घोल में डालकर कठोर कर लेते हैं, और उन पर संख्या डाल देते हैं, जिससे उन्हें कितना ही मिलाने-जुलाने पर भी यह भूल जाने का भय न रहे कि उनमें से कौन-सा नमूना किस स्तर पर पाया गया था । उसके बाद हम शरीर के अंगों के अनुसार, सिर से लेकर खुर तक, उन हड्डियों को अलग-अलग छाँट लेते हैं और उसके बाद उन्हें स्पीशिजों के अनुसार अलग-अलग छाँटते हैं । भेड़ों और बकरियों के मामले में अनेक हड्डियों को भेड़-बकरी की दुहरो श्रेणी में छोड़ देना पड़ता है; परन्तु कुछ थोड़ी-सी हड्डियाँ, जैसे कि सींग और जबड़े, ऐसी होती हैं, जो अलग-अलग पहचानी जा सकती हैं । इन जबड़ों और दाँतों की पड़ताल करके हम शीघ्र ही यह पता लगा सकते हैं कि प्रत्येक स्पीशिज में से कितने पशु उसी समय मार डाले गए थे, जबकि उनके दूध के दाँत थे और कितने पशु उस समय तक जीवित रहने दिये गए, जब तक कि उनके स्थायी दाँत न निकल आये । अब तक अध्ययन की गई घरेलू पशुओं की प्रत्येक शृंखला में भेड़ों और सूअरों में से कम से कम पचास प्रतिशत ऐसे थे, जो दाँतों के परिपक्व होने से पहले ही मार दिये गए थे । बैल के विषय में यह बात नहीं है, क्योंकि बछड़ों को भार ढोने या गाड़ियाँ खींचने वाले पशु के रूप में परिपक्व आयु तक बचाकर रखा जाता था । जंगली पशुओं, जैसे कुरंगों और हिरनों की हड्डियों के लगभग सब के सब नमूने यह बताते हैं कि वे लगभग सभी पशु उस समय तक बड़े हो चुके थे, जबकि वे मारे गए थे ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मनुष्य का प्रकृति की शक्तियों से खिलवाड़

नए स्रोतों से भोजन प्राप्त करने और उसे अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त करने तथा मानवीय समाज के एक विशिष्ट नमूने के रूप में ग्रामीण जीवन का संगठन करने से बिलकुल भिन्न एक बात यह थी कि नव-पाषाणिक युग में मनुष्य ने प्रकृति की शक्तियों से खिलवाड़ करना शुरू कर दिया था। सबसे पहले उसने उन जंगलों को काट कर जला डाला, जो हजारों वर्षों से खड़े हुए थे और उनके स्थान पर छोटी-छोटी झाड़ियाँ लगाई या खेत बनाये; और उन स्थानों पर, जहाँ कि वर्षा बहुत कम या अनिश्चित होती थी, भूक्षरण की वह सारी की सारी प्रक्रिया शुरू कर दी, जिसके कारण पृथ्वी की सतह के बहुत बड़े-बड़े क्षेत्र बरबाद हो गए और वे देखने में ऐसे लगने लगे जैसे कि किसी जीवित शरीर की त्वचा पर घावों के निशान बन जाते हैं। कुछ पौधों और पशुओं की स्पीशिज़ों के प्रति अन्य स्पीशिज़ों की अपेक्षा अधिक कृपा दिखाकर उसने उनके जीवित बचे रहने के लिए उन्हें अपने ऊपर आश्रित बना लिया, क्योंकि उसने उनकी स्वयं अपने सहारे रह कर आगे प्रजनन की या सफलतापूर्वक जीवित रहने की शक्ति को नष्ट कर दिया। इस प्रकार उसने नैसर्गिक वरण की शक्तियों को विफल करके प्रकृति के समूचे सन्तुलन को अस्तव्यस्त कर दिया। हम भी तब से लेकर अब तक यही करते रहे हैं। सेब, अनार, नाशपाती और अंजीर जैसे फल उनके जंगली आदिरूपों की अपेक्षा बीस गुने बड़े हैं। धान्यों और दालों की पक जाने पर फट कर बिखर जाने की क्षमता नष्ट हो गई है और वे अनेक पालतू पशुओं की भाँति जीवित बचे रहने के लिए पूर्णतया मनुष्य पर निर्भर हो गए हैं।

भेड़ों का एक चलते-फिरते और मिमियाते हुए ऊन के कारखाने के रूप में रूपान्तर हमारे पूर्वजों द्वारा की गई प्रकृति की सबसे अधिक नाटकीय विकृति है, और इसी प्रकार बड़े-बड़े ऊघस वाले और बड़ी मात्रा में दूध देने वाले पशुओं का चुनाव भी ऐसी ही विकृति है। इन दोनों परिवर्तनों में उस बहिर्जनस्तर (ऐक्टोडर्म) पर भी प्रभाव पड़ता है, जिसमें कि सींग और त्वचा और साथ-साथ बाल और दूध उत्पन्न करने वाली ग्रन्थियाँ भी सम्मिलित हैं। यदि किसी पशु को ऊन के लिए, या दूध के लिए, या इन दोनों के लिए चुना गया है, तो उससे यह आशा नहीं की जा सकती कि उसके वैसे ही लम्बे बड़े-बड़े

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सींग होंगे, जैसे कि उसके जंगली पूर्वजों के होते थे, क्योंकि इन सारे शरीर-ऊतकों (टिश्यू) का पोषण केवल एक ही स्रोत से होता है। जब पशु मनुष्यों और कुत्तों के संरक्षण में रहने लगे, तब उन्हें लम्बे सींगों की कोई आवश्यकता न रही। इसी कारण पालतू सूअरों के खतरनाक बड़े दन्त नहीं उगते, जो कि उनके जंगल में रहने वाले और कन्द मूल खोद कर खाने वाले सजातीय पशुओं के होते हैं। पुरातत्वीय अवशेषों में जो हड्डियाँ पाई गई हैं उनमें सींगों और दाँतों के आकार और आकृति में परिवर्तन शुरू हो चुके थे, हालाँकि इन आदिमतम पालतू पशुओं के सींग और दाँत तब भी जंगली पशुओं के सींगों और दाँतों से आधुनिक पशुओं के सींगों और दाँतों की अपेक्षा अधिक मिलते-जुलते थे।

कई पालतू पशुओं के ठूँठ (छोटे पैरों वाले) रूप विकसित हो गए हैं, जिनमें उनकी टाँगें छोटी और मुड़ी हुई होती हैं और शरीर बहुत नीचे और लम्बोतरे होते हैं। इस प्रकार के पशु बुलडौग, डैकशण्ड, पेरुवियन (मूलवासी) पग कुत्ता, छोटी टाँगों वाली भेड़ें तथा अन्य कई पशु हैं। कई नस्लों में पूँछ छोटी हो गई है और उसकी कशेरुका मिलकर एक हो गई है। सामान्य नियम यह है कि सब पालतू पशुओं की हड्डियाँ छोटी और छिद्रिल होती हैं और उनमें वसा की मात्रा बहुत अधिक होती है; और हम केवल किसी हड्डी के स्पर्श से यह बता सकते हैं कि वह किसी पालतू पशु की है या किसी जंगली पशु की। पालतू पशुओं की टाँगें भी छोटी और पतली होती हैं और उनके शरीर में चर्बी प्रभूत मात्रा में होती है। यह बात वस्तुतः माँस के लिए पशुओं के चुनाव के परिणामस्वरूप हुई है और यह इस तथ्य के कारण सम्भव हो पाई है कि मनुष्यों के संरक्षण में रहते हुए पशुओं को जीवित बचे रहने के लिए तीव्र गति की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। कुछ मनुष्यों के भी हाथ और पैर छोटे-छोटे होते हैं और उनका रुझान मोटापे की ओर होता है। बीमा कम्पनियों के कथनानुसार इस प्रकार के मनुष्य तरुण अवस्था में ही मर जाते हैं। रेवड़ों में पाले जाने वाले पशुओं के लिए दीर्घायुष्य का कोई महत्त्व नहीं है। सामान्यतया उनको तरुणावस्था में ही मार डाला जाता है।

पशुओं और पक्षियों की लगभग उन सभी स्पीशिज़ों में, जिन्हें कि पालतू

बना लिया गया है, थूथ और खोपड़ी दोनों ही उनके जंगली रूपों की अपेक्षा छोटी हो गई हैं। थूथनी इसलिए छोटी हो गई है, क्योंकि मनुष्य उनके लिए भोजन तैयार कर देता है और इससे दाँतों और जबड़ों का काम कम हो जाता है और तब वे छोटे हो जाते हैं। इस परिवर्तन की दृष्टि से पशु स्वयं मनुष्य का अनुकरण करते हैं। खोपड़ी इसलिए छोटी हो जाती है, क्योंकि मनुष्य ने स्वाभाविक शत्रुओं और खराब ऋतुओं से रक्षा करके पशुओं की ज्ञानेन्द्रियों के पूर्ण विकास को अनावश्यक बना दिया है और मस्तिष्क के वे भाग, जिनमें कि आँखों, कानों और नथुनों से प्राप्त होने वाले सन्देश ग्रहण किये जाते हैं, मस्तिष्क में आगे और पीछे वाले भाग में स्थित हैं। काम में न आने के कारण धूसर सामग्री के इन अंगों का पूरा विकास नहीं हो पाता और इस प्रकार मस्तिष्क और वह खोपड़ी, जिसमें वह मस्तिष्क रहता है, दोनों ही छोटे हो जाते हैं।

ये परिवर्तन एक ही पीढ़ी में भी हो सकते हैं, जैसा कि जर्मनी में किये गए परीक्षणों से स्पष्ट हो गया है। वहाँ एक प्राणि-वैज्ञानिक ने जंगली लोमड़ियों का एक जोड़ा पकड़ा और उन्हें एक चिड़ियाघर में रख दिया। जब लोमड़ी ने बच्चे दिये और वे बच्चे बड़े होने लगे, तब उसने उनमें से कुछ को जंगल में छोड़ दिया। वहाँ जंगल में बड़े होने पर उन्होंने फिर बच्चे दिए। उसने इन बच्चों को फिर पकड़ा और इन तीनों पीढ़ियों के प्राणियों को मार कर उसने उनके मस्तिष्कों को तोला। मूल जंगली पीढ़ी के प्राणियों के मस्तिष्क 50 ग्राम वज़न के थे; जो पीढ़ी बन्दी अवस्था में उत्पन्न हुई और पली थी, उसके मस्तिष्क का वज़न 35 ग्राम था और दूसरी जंगली पीढ़ी (अर्थात् कुल मिलाकर तीसरी) के मस्तिष्कों का भार 50 ग्राम था। इससे यह सिद्ध हुआ माना जाता है कि मस्तिष्क के आकार में हुए परिवर्तन, जो ज्ञानेन्द्रियों वाले क्षेत्र का उपयोग न किये जाने के सूचक हैं, आनुवंशिक नहीं होते और कम से कम एक ही पीढ़ी में आनुवंशिकता का उन पर प्रभाव नहीं होता। उन पशुओं के विषय में, जो मनुष्य द्वारा आठ हजार वर्ष तक अपने आश्रय में रखे गए थे और जिन्हें वह चरागाहों तक ले जाता और वहाँ से वापस लाता रहा था, कुछ निश्चय से नहीं कहा जा सकता। कुछ प्रतिवर्तन (रिवर्शन) भी हुए हैं, जैसे ऐपैलेशिन द्वीप समूह के रेज़रवैक सूअरों और कैटेलिना द्वीप के जंगली बकरों में।

परन्तु वे अपने सुदूर जंगली पूर्वजों से कितना घनिष्ठ रूप में मिलते-जुलते हैं, और इस प्रकार स्वतन्त्र छोड़ दिये गए पशुओं में से कितने सन्तान को जन्म दिये बिना मर गए हैं ?

जब पशु एक बार पाल लिये जाते हैं, तब उनमें सबसे अधिक स्पष्ट दिखाई पड़ने वाला एक परिवर्त्तन यह होता है कि उनकी खालों (रोमयुक्त चर्म) का रंग अधिक चमकीला हो जाता है। जंगली रूपों में यह प्रत्येक स्पीशिज के लिए सदा एकरूप होता है, क्योंकि यह नैसर्गिक वरण का परिणाम होना है। वर्णहीन (सफेद) हिरन के लिए ऐसे जंगल के परिवेश में, जहाँ उसकी प्रत्येक गति सुदृश्य होती है प्रजनन की आयु तक जी पाने का अवसर बहुत कम होगा। फिर भी सफेद भेड़ें और चितकबरे पशु और बकरियाँ, यदि उनके चरवाहे चाहें तो, बुढ़ापे की परिपक्व आयु तक जीवित रह सकते हैं। जान बूझ कर रंग के चुनाव का एक अच्छा उदाहरण बाइबल के सभी पाठकों को विदित है। यह 'सृष्टि की पुस्तक' (जैनेसिस) में 30 : 31-43 में है। अपनी पत्नियों, लीह और राशेल, के मूल्य के रूप में जैकब ने अपने ससुर लाबान की भेड़-बकरियों को कुछ वर्षों तक चराना मंजूर कर लिया। लाबान इस बात के लिए राज़ी हो गया कि इस सेवा की समाप्ति पर वह जैकब को सारी काली तथा भूरी भेड़ें और धारीदार तथा चित्तीदार बकरियाँ दे देगा। इस चुनाव का सम्भाव्यतः कारण यह था कि प्रत्येक व्यक्ति अपने पशुओं को अन्य व्यक्तियों के पशुओं से सरलता से अलग पहचान सके। आजकल मध्यपूर्व के गाँवों में, जहाँ सब पशुओं को इकट्ठे एक रेवड़ में चराया जाता है, किसी एक व्यक्ति की यह कोशिश होती है कि उसके पास केवल भूरे रंग की भेड़ें हों; कोई अन्य व्यक्ति यह यत्न करता है कि उसके पास केवल सफेद रंग की भेड़ें हों और इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति किसी एक ही रंग की भेड़ें अपने पास रखना चाहता है, जिससे उन भेड़ों को अलग छाँटना आसान हो जाय और झगड़े कम हों।

परन्तु जैकब के मन में एक और ही बात थी। उसने नदी के किनारे से बहुत-सी छड़ियाँ काट लीं और उनको छील कर उनमें छल्ले और चित्तियाँ बना दीं। इन लकड़ियों को उसने पानी में गाड़ दिया और उसके बाद वह बकरियों को पानी पिलाने के लिए वहाँ लाया। उसे यह आशा थी कि धारीदार

और चित्तीदार होने का गुण पानी के अभिकरण द्वारा लकड़ियों से बकरियों की सन्तानों में पहुँच जायेगा। यह वस्तुतः संसर्गज जादू का श्रेष्ठ उदाहरण है। यह इस विश्वास के समान ही है कि मछली खाने से मनुष्य का मस्तिष्क अच्छा हो जायेगा, क्योंकि मछली और मस्तिष्क के ऊतक (टिश्यू) देखने में कुछ-कुछ एक जैसे होते हैं। जैकब इस युक्ति द्वारा बकरियों की किस्म को सुधारने का यत्न नहीं कर रहा था और इस बात की कोई सम्भावना नहीं है कि उन नव-पाषाणिक मनुष्यों को, जो जैकब से कई हज़ार वर्ष पहले हुए थे, वरण द्वारा पशुओं की नस्ल सुधारने के विषय में कुछ भी ज्ञान रहा हो।

परन्तु यह बिलकुल सम्भव है कि पशुओं के वे विशेष गुण, जैसे धारियाँ, चित्तियाँ या सफेद ऊन, जिनके लिए नव-पाषाणिक मनुष्य अपने पशुओं का जादू के आधार पर, या उनकी अलग-अलग पहचान के लिए अपने पशुओं का चुनाव करते रहे होंगे, आनुवंशिकतया उन अन्य गुणों से सम्बन्धित थे, जिन्होंने वस्तुतः आर्थिक दृष्टि से नस्लों में सुधार किया—उदाहरण के लिए उनकी ऊन अधिक भारी कर दी, उनका दूध बढ़ाया या उनकी पूँछों को और मोटा कर दिया। वनस्पति जगत् में, यह बिलकुल सम्भव है कि तरबूज और कद्दू पहले झुनझुनों या पात्रों के रूप में काम आने के लिए और बाद में भोज्य बीजों के लिए उगाये गए हों। इनके अनेक जंगली रूपों के फल कड़वे होते हैं, जिससे पशु उन्हें न खायें। ये फल केवल तभी भोज्य बने होंगे, जब इनमें मीठे फल वाले परिवर्तन हुए होंगे।

उन पौधों के समान, जिनके कि बीज फटकर बिखरते नहीं और उन पौधों के समान, जिनकी कि बीज उत्पन्न करने की क्षमता जाती रही है, पालतू पशु भी परोपजीवी हो गए हैं। उनकी इन्द्रियगम्य बोध शक्ति में कमी की तुलना कुछ कीड़ों में हिलने-डुलने की क्षमता की समाप्ति से की जा सकती है। अपने आश्रयदाता की अग्नि, बाड़ों, भालों और धनुषों के आश्रय में रह कर उन्हें हिंस्र पशुओं का कोई भय नहीं रहा है। मनुष्य की बुद्धि उनमें नहीं है, इसलिए वे यह नहीं जानते कि अपरिहार्य वध उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। इसलिए भेड़ आशापूर्ण रीति से मिमियाती है; स्तनों में दूध का दबाव अनुभव होने पर गाय रम्भाती है और बकरी 'मैं-मैं' करती है। चुप रहने की अपेक्षा

भोजन, पानी और दुहे जाने के लिए याचना करना और बाड़े में वापस लौट जाना अधिक लाभदायक है। फिर भी प्रकृति का यह परिवर्तन एकाएक नहीं हो गया और नव-पाषाणिक मनुष्य ने अपना प्रारम्भ पशुओं के बाड़ों में होने वाली उन ध्वनियों के बिना ही किया होगा, जो कि उन सर्वप्रथम कवियों के, जिनका कि अभिलेख हमें मिलता है, समय तक काफ़ी परिचित हो चुकी थीं।

आदिमतम कृषक—पुरातत्वीय प्रमाण

नव-पाषाणिक लोगों के मूल उद्गम के सम्बन्ध में ये सामान्यीकरण वनस्पतियों और पशुओं, दोनों के ही रूपों के सम्बन्ध में आधुनिक वितरणों के आधार पर, अथवा बाइबिल जैसे परवर्ती स्रोतों से निगमन (अनुमान) के आधार पर नहीं किये गए। ये पुरातत्वीय स्थलों में, मुख्यतया मध्य पूर्व के पुरातत्वीय स्थलों में, पाये गए वास्तविक पौधों और पशुओं के अवशेषों पर आधारित हैं। जहाँ तक हमें पता है, मध्यपूर्व ही नव-पाषाणिक कृषि और पशु पालन का मूल स्थान था। ये निष्कर्ष लगभग बीस स्थलों की, जिनमें तुर्की, लेबनान, फिलस्तीन, ईराक, ईरान, रूसी तुर्किस्तान, अफगानिस्तान और पाकिस्तान में स्थित गुफाएँ और टीले दोनों ही सम्मिलित हैं, खुदाई की उपज हैं। इस सामग्री से हमें अपनी मानव की इस कहानी में अग्नि को वश में करने के पश्चात् अगले बड़े क़दम के विषय में एकमात्र तथ्यात्मक ज्ञान उपलब्ध होता है।

इनमें से कुछ स्थल, जैसे कि लेबनान स्थित बाइब्लोस, वस्तुतः नगर स्थल हैं, जिनमें कि खुदाई करने वालों की धीरता और अध्यवसाय के कारण ही वे नीचे की नव-पाषाणिक नींवों तक पहुँच पाये हैं। अन्य स्थल, जैसे ईरान में स्थित 'तप हिसार' मुख्यतया नव-पाषाणिक बस्तियों के टीले हैं, जिनमें ऊपरी भाग में कांस्य युग और उसके बाद की सामग्रियाँ पाई जाती हैं। कुछ थोड़े-से स्थल, जैसे उत्तरी ईराक में स्थित 'जार्मो', जिनकी खुदाई रौबर्ट ब्रेडवुड ने की थी, मध्य-पाषाणिक निक्षेपों से लेकर आदिमतम नव-पाषाणिक काल तक और उसके परवर्ती अनुक्रमों तक एक सातत्य के द्योतक हैं। इनमें से एक स्थल में उन्हीं माउण्ट कार्मेल गुफाओं में, जिनके ऊपरी स्तर से यूरोपवासी

मनुष्य के क्रमविकास पर बहुत प्रकाश पड़ता है, एक अन्यथा विशुद्ध मध्य पाषाणिक संस्कृति का चकमक के हंसियों के फलकों के साथ विचित्र मिश्रण प्राप्त होता है ।

ये चकमक के हंसियों के फलक दमकीले हैं । सब घासों के तनों में सिलिका रहती है । यही कारण है कि घास खाने वाले पशुओं के दाँत लम्बे होते हैं और वे उस पशु के व्यस्क जीवन में निरन्तर बढ़ते रहते हैं; सिलिका दाँतों को घिस डालती है । सिलिका चकमक के हंसियों के उन फलकों की सतहों को भी दमका देती है, जो उसे काटने के लिए काम में लाये जाते हैं । इन चमकीले हंसियों के फलकों का केवल एक ही अर्थ हो सकता है और वह है—फटकर न बिखरने वाले अन्नों की खेती । अधिकाँश पुरातत्ववेत्ताओं ने, जिन्हें की इस वानस्पतिक तथ्य का पता नहीं था कि जंगली धान्य कभी भी काटे नहीं जाते, अपितु छड़ी की सहायता से टोकरी में झाड़कर इक्ट्ठे किये जाते हैं, मध्य-पाषाणिक उपकरणों, जंगली पशुओं की हड्डियों और चमकीले हंसियों के फलकों का यह अर्थ निकाला है कि उस समय जंगली अन्न काटे जाते थे । यह बहुत ही असम्भावित है कि हम फटकर बिखरने-वाले अन्नों की सर्वप्रथम खेती का प्रमाण कभी पा सकेंगे । इसका करण स्पष्ट है । हम इस विषय में निश्चित हो सकते हैं कि जहाँ कहीं भी चमकीले हंसियों के फलक हमें प्राप्त होते हैं, वहाँ या तो अनाज काफ़ी समय तक उगाया जाता रहा था, या उसकी खेती हाल ही में किसी ऐसे अन्य स्थान से, जहाँ कि उसका विकास पहले हो चुका था, लाकर वहाँ शुरू की गई थी ।

यदि मध्य पूर्व ही वह स्थान था, जहाँ कि नव-पाषाणिक युग का आरम्भ हुआ था, तो वहाँ इतने कम नव-पाषाणिक स्थल मिलने का कारण क्या है, जब कि पश्चिमी लोग वहाँ इतने समय से जाते रहे हैं और पुरातत्ववेत्ताओं ने वहाँ इतनी खुदाइयाँ भी की हैं ? इसका उत्तर चिन्ताजनक भले ही हो, किन्तु है बिलकुल आसान । मध्य पूर्व केवल नव-पाषाणिक सभ्यता का ही मूल उद्गम स्थान नहीं है, अपितु वह काँस्य युग की महान् साक्षर सभ्यताओं, मिश्र, सुमेरिया, बैबीलोनिया और सिन्धु घाटी की सभ्यताओं का भी उद्गम स्थान है । इन महान् साक्षर सभ्यताओं ने न केवल आरम्भिकतम लेखन को जन्म दिया था, जो कि आज भी बचा हुआ है, अपितु मान्यता पाने योग्य

कलाकृतियों, जैसे मूर्तियों और अर्ध्युच्चित्रों (बास रिलीफ) को तथा प्रभूत स्वर्णाभूषणों को भी जन्म दिया था। पटियाएँ (टेब्लेट), मूर्तियाँ और स्वर्णाभूषण वे बहुमूल्य वस्तुएँ हैं, जिनके लिए असार्वजनिक संग्रहकर्ता और सार्वजनिक संग्रहालय, दोनों ही ऊँची क़ीमत दे सकते हैं। उनका चोर-बाज़ार खूब फल-फूल रहा है। इसलिए जिन पुरातत्ववेत्ताओं ने इन स्थलों की खुदाइयाँ की हैं, जहाँ से इस प्रकार की बहुमूल्य वस्तुएँ निकली हैं, वे मानववैज्ञानिक न होकर कलाविशेषज्ञ अधिक रहे हैं। उनका व्यवसाय सीधा उन्नीसवीं शताब्दी के प्राचीन पुरातत्व से निकला है, जो अपने आप में पुराने यूनानी और लैटिन साहित्य के अध्ययन से निकला था। यह मनोवृत्ति, कि केवल 'सर्वोत्तम' ही ध्यान देने योग्य वस्तु है, यूनानी और लैटिन परम्परा से इधर ले ली गई है।

जिन मिश्र और मैसोपोटामिया के विशेषज्ञ खुदाई करने वालों ने उन स्थलों की खुदाई की है, जहाँ से इस प्रकार की बहुमूल्य सामग्रियाँ प्राप्त हुई हैं; वे अपनी खुदाइयों पर बहुत बड़ी धनराशियाँ, जो लाखों डालरों में होती हैं, खर्च करने को तैयार रहते हैं और उनके पास इतनी धनराशि होती भी है। उनका काम यह है कि वे अपने न्यासपतियों के लिए ऐसी वस्तुएँ ले जायें, जिन्हें कि वे न्यासपति चाहते हैं। नव-पाषाणिक वस्तुएँ प्रभावोत्पादक नहीं होतीं। पत्थर की कुल्हाड़ियाँ, चकमक के बने हंसियों के फलक, टूटे-फूटे बर्तनों के ठीकरे और पशुओं की टूटी हुई हड्डियाँ ऐसी वस्तुएँ नहीं हैं, जिन्हें देखने के लिए संग्रहालय में भीड़ की भीड़ आए। जब कोई पुराने ढंग का काँस्य युग में रुचि रखने वाला पुरातत्ववेत्ता, जो किसी कला-संग्रहालय की ओर से काम कर रहा होता है, खुदाई करते-करते नव-पाषाणिक स्तर तक पहुँच जाता है, तब वह खुदाई बन्द कर देता है। यदि निजी तौर पर उसे उन सभ्यताओं के, जिनका कि उसने अपनी खुदाई द्वारा अनावरण किया है, मूल उद्‌गमों में रुचि हो भी, तो भी वह अपने उच्च अधिकारियों के सम्मुख अपनी खुदाई को और आगे जारी रखने का औचित्य सिद्ध नहीं कर सकता।

जिन पुरातत्ववेत्ताओं की रुचि अपेक्षाकृत अधिक पुरातन कालों में होती है और जो कला की दृष्टि से कम मूल्यवान वस्तुएँ खोदकर निकालते हैं, उन्हें कला संग्रहालयों का समर्थन शायद ही कभी प्राप्त होता है। ये लोग विश्वविद्यालयों की ओर से काम करने जाते हैं, जिनके पास खुदाई पर व्यय करने

के लिए अपेक्षाकृत कम धनराशि होती है, क्योंकि वे लोग किन्हीं धन-सम्पन्न संगीत-नाटक-शालाओं (ओपेरा) और कला संग्रहालयों के संरक्षकों के लिए काम नहीं कर रहे होते, अपितु विश्वविद्यालयों के न्यासधारियों के लिए काम कर रहे होते हैं। इस प्रकार के पुरातत्ववेत्ता ईरान या अफगानिस्तान की अपेक्षा न्यूमैक्सिको की किसी गुफ़ा में काम करते हुए अधिक दिखाई पड़ेंगे। केवल पिछली दो दशाब्दियों में इस स्थिति में परिवर्तन हुआ है। अब हमारे न्यासधारी नव-पाषाणिक युग में और पुरा-पाषाणिक युग में भी उतनी ही रुचि लेने लगे हैं, जितनी कि वे काँस्य युग में लेते रहे हैं और इन गतिविधियों के लिए कला से सम्बन्धित संस्थाओं की ओर से भी समर्थन प्राप्त होने लगा है। एक और दृष्टि से यह बहुत अच्छी वस्तु है, क्योंकि युद्ध के बाद मध्यपूर्वीय देशों से प्राचीन कला-वस्तुओं के निर्यात पर लगाये गए निर्बन्धन (प्रतिबन्ध) इतने अधिक हो गए हैं कि नगरीय टीलों की खुदाई पर बड़ी-बड़ी धन-राशियों का व्यय अब उचित नहीं समझा जा सकता। यदि मध्यपूर्व एक और दशाब्दी तक युद्ध से बचा रहा, तो हमें आशा है कि हम नव-पाषाणिक युग के मूल उद्गम के विषय में उससे कहीं अधिक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे, जितना कि अब तक हमें है।

जिन नव-पाषाणिक स्थलों की खुदाई की गई है, उनमें से अधिकाँश टीले हैं। जिस भी यात्री ने बगदाद से तेहरान तक सड़क पर यात्रा की है, उसने अवश्य ही इस प्रकार के हज़ारों टीले देखे होंगे। इनमें से कुछ टीलों पर अब भी इमारतें बनी हुई हैं, जबकि अन्य अनेक टीले इतने ऊँचे या इतने ढलवाँ हो गए हैं कि उनके पार्श्वों पर गाँव नहीं बस सकते। हज़ारों वर्षों तक किसी गाँव की विद्यमानता के फलस्वरूप ही इस प्रकार के टीले बने हैं। जब कच्ची ईंटों से बनी दीवारें टूटकर गिर गईं, तब उनके मलबे को फैलाकर समतल कर दिया गया और उसके ऊपर नई दीवारें बना दी गईं। इस प्रकार के टीलों की निचली तली के स्तर पर साधारणतया मिट्टी के बर्तन और चकमक के हंसियों के फलक और साथ ही पालतू पशुओं की हड्डियाँ पाई जाती हैं। यह गाँव ऐसे लोगों द्वारा बसाया गया था, जो पहले से ही किसान थे।

परन्तु एक स्थल ऐसा था, जिसमें लोग चकमक के हंसियों या मिट्टी के बर्तनों के उपयोग का ज्ञान प्राप्त होने के पहले से ही रह रहे थे; यह स्थल

'जार्मो' है, जो ज़गरौस पर्वत माला को छूते हुए एक मैदान के किनारे पर उत्तरी ईराक में 'किर्कुक' के निकट स्थित एक टीला है। इसकी खुदाई शिकागो के रौबर्ट ब्रेडवुड ने की थी। ब्रेडवुड के शानदार काम से मध्य-पाषाणिक जीवन से नव-पाषाणिक जीवन की आदतों की ओर संक्रमण स्पष्ट हो जाता है। इस स्थल से प्राप्त हुई सबसे पुरातन सामग्री, जो कि घोंघे के खोलों का नमूना है, कार्बन-14 के काल निर्धारण द्वारा 4758 ई० पूर्व ± 320 वर्ष की मानी गई है। यह काल मृत्तिका शिल्प से पहले का काल है। यद्यपि जो लोग वहाँ रहते थे, उनके पास उस समय मिट्टी के बर्तन नहीं थे, फिर भी वे धान्यों की खेती करना और भेड़ों, बकरियों, सूअरों और पशुओं को पालना शुरू कर चुके थे।

ब्रेडवुड का सा सौभाग्य या सद्विवेक बार-बार लोगों को प्राप्त नहीं हो सकता। मेरी सम्मति में कृषि के आरम्भ की खोज के लिए सर्वोत्तम स्थान टीलों की तली में नहीं, अपितु गुफ़ाओं में है। आरम्भिकतम कृषक, विशेषरूप से उससे पहले के कृषक, जबकि उन्होंने धान्यों की खेती शुरू की थी, सम्भाव्यत: 'छीला और जलाया' ढंग की खेती करते थे। कुछ एकड़ जंगल के वृक्षों की छाल को एक छल्ले के आकार में काट कर और उसके बाद उन पेड़ों के सूख जाने के बाद वे उन्हें जला देते थे और बाकी बच गए ठूँठों के आस-पास की मिट्टी में बीज बो देते थे। कुछ वर्ष बाद जंगली झाड़ियाँ इतनी घनी हो जाती होंगी कि उसी स्थान पर खेती करने के बजाय किसी अन्य नए स्थान पर चले जाना अधिक आसान होता होगा। यदि पत्थर के औज़ारों द्वारा अत्यधिक परिश्रम करके इन झाड़ी-झंखाड़ों को नियन्त्रण में रखा भी जा सकता हो, तो भी मिट्टी की उर्वरता बहुत शीघ्र ही कम हो जाती होगी। आरम्भिक किसान एक स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर जाते रहते थे और वे शायद ही कभी किसी स्थान पर इतनी देर तक रहते थे कि वहाँ पर कोई टीला बन सके।

आरम्भिकतम कृषक लोग आखिरकार मूलत: मध्य-पाषाणिक लोग थे और मध्य-पाषाणिक लोग जहाँ गुफ़ाएँ मिल सकती थीं, वहाँ गुफ़ाओं का प्रयोग किया करते थे। गुफ़ाएँ सर्दियों में बकरियों को आश्रय देने के लिए बढ़िया स्थान हैं और गोबर से गर्माहट उत्पन्न होती है। गुफ़ाएँ इस दृष्टि से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भी अच्छी जगह थीं कि उनमें मुर्दों को गाड़ा जा सकता था। जब एक बार काफ़ी कुछ एक जगह जम कर रहने का जीवन अपना लिया जाता है और जनसंख्या कुछ थोड़े-से परिवारों से बढ़कर सौ या इससे भी अधिक व्यक्तियों तक जा पहुँचती है, तब मृत्युओं की संख्या बढ़ जाती है और लाशों को ठिकाने लगाना एक समस्या बन जाती है। यूरोप में कुछ नव-पाषाणिक स्थलों में लाशों को फर्श के नीचे गाड़ दिया जाता था। फ्राँस, माल्टा और कैनैरी द्वीपों में उन्हें गुफ़ाओं में ढेर लगाकर रख दिया जाता था। क्योंकि नव-पाषाणिक लोग साधारणतया मृतकों के साथ ऐसी वस्तुएँ भी रख देते थे, जो कि परलोक में उनके काम आयें, इसलिए गुफ़ाओं में कुछ बढ़िया पत्थर की कुल्हाड़ियाँ, चकमक के औज़ार, खुदाई करने की छड़ियाँ (डिगिंग स्टिक वेट्स) और आभूषण अब भी उन लाशों के साथ रखे मिलते हैं, जिनके साथ वे रखे गए थे। यह भी सम्भव है कि किसी व्यक्ति को वास्तविक बीज और धान्य भी प्राप्त हो जायँ। इसके अलावा मिट्टी के बर्तनों के टुकड़ों और पालतू पशुओं की हड्डियों से यहाँ की मिट्टी भरी हुई है। नव-पाषाणिक जीवन का अध्ययन करने के लिए जिस-जिस भी वस्तु की आवश्यकता है, वर सब यहाँ विद्यमान है। केवल वे मकान यहाँ उपलब्ध नहीं हैं, जिनमें कि लोग स्वयं रहते थे।

सन् 1949 और 1951 में हमारे अनुसन्धान यात्री दल ने उत्तरी ईरान में एक स्थल की खुदाई की, जिसे बैल्ट केव (बैल्ट गुफ़ा) कहा जाता है। इसमें सांस्कृतियों का एक अनुक्रम विद्यमान था। बिलकुल तली में, जिसका कि काल 9530±550 ई० पू० निर्धारित हुआ है, एक मध्य-पाषाणिक स्तर था, जिसमें अनेक सील मछलियों की हड्डियाँ पाई गई हैं और इस बात का प्रत्येक प्रमाण मिलता है कि उस समय वहाँ का जलवायु आर्द्र था। उसके ऊपर एक शुष्क मध्य-पाषाणिक संस्कृति है, जिसका काल 6620±380 ई० पू० निर्धारित किया गया है; इसमें कुरंग (गैजल) प्रमुख पशु था। इसके बाद नव-पाषाणिक युग का आरम्भ आता है, जिसमें पालतू बकरियाँ और भेड़ें तो थीं, किन्तु मिट्टी के बर्तन नहीं थे। इसका काल 5480±330 ई० पू० निर्धारित किया गया है। यह मुझे मालूम नहीं कि जो लोग उस समय इस गुफ़ा में रहते थे, वे गेहूँ या जौ की खेती करते थे या नहीं। चाहे जो भी हो,

किन्तु इतना तो है ही कि वे भेड़ें और बकरियाँ रखते थे और प्रति वर्ष कुछ भेड़ों और बकरियों के मेमनों को मार डालते थे; क्योंकि पशुओं की हड्डियों में से 25 प्रतिशत हड्डियाँ छोटे बच्चों की हैं। इसके कुछ समय बाद, जिसका कि समय कार्बन-14 विश्लेषण द्वारा 5330±260 ई० पू० (5070 ई० पू० और 5590 ई० पू० के बीच का) निर्धारित किया गया है, वे मिट्टी के बर्तन बनाना, धान्य की फसलों को काटना, सूअरों को और उसके कुछ समय बाद गौओं को पालना शुरू कर चुके थे।

इन खुदाइयों के बाद से और भी पश्चिम की ओर इनसे भी पुराने नव-पाषाणिक अवशेष मिले हैं। 'जैरिचो' का नगर, जो समुद्र तल से भी नीचे के एक गरम शाद्वल में स्थित है, 7850±160 ई० पू० से लेकर, जबकि वह एक मध्य-पाषाणिक बस्ती था, अब तक निरन्तर बसा रहा है। 6480±160 ई० पू० के लगभग इसके निवासियों ने नव-पाषाणिक जीवन पद्धति अपना ली थी, हालांकी मिट्टी के बर्तन उनके पास तब भी नहीं थे।

1952 और 1961 के बीच जैम्स मैलार्ट ने मध्य अनातोलिया के दो गाँवों में नव-पाषाणिक संस्कृतियों का अनुक्रम खोज निकाला। इन गाँवों में से जिसका पहले पता चला, वह 'हाकुलर' नामक गाँव था। यहाँ मिट्टी के बर्तन लगभग 5500 ई० पू० में पहुँच चुके थे, जो लगभग वही काल है, जिसमें कि वे बैल्ट गुफ़ा में पाये गए हैं। इसके नीचे एक और स्तर था, जिसमें मिट्टी के बर्तन नहीं थे। 1961 में मैलार्ट ने 'कैटलहुयुक' नामक एक और गाँव खोज निकाला, जो जैरिचो जितना पुराना है।

जैरिचो और तुर्की के स्थलों, दोनों में ही चिनकर बनाये गए कमरे हैं, जो एक-दूसरे से आने-जाने के रास्तों द्वारा जुड़े हुए हैं। तुर्की स्थित स्थलों में समूचे के समूचे मकान इतनी भली प्रकार परिरक्षित रह गए हैं कि उनसे हम यह जान सकते हैं कि आदिमतम मकान दालानों के चारों ओर बनाए जाते थे; उनमें भंडार के लिये अलग कमरे होते थे, जिनमें छत पर से सीढ़ी लगाकर नीचे की ओर उतरकर प्रवेश किया जाता था। रहने के प्रत्येक कमरे में एक अग्निकुंड होता था, चूल्हा होता था, अनाज रखने के कुठले होते थे और सोने के लिए मंच होता था, जिसके नीचे पूर्वजों की हड्डियाँ संभाल कर रख दी जाती थीं। कुछ खोपड़ियों को पलस्तर लगाकर फिर पूर्वावस्था में ले आया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गया था और उनमें, जैसा कि आधुनिक न्यूगिनी में किया जाता है, आँखों की जगह कौड़ियाँ लगा दी गई थीं। मिलते-जुलते ढंग से सजाई गई खोपड़ियाँ जैरिचो में भी पाई गई हैं।

कार्बन-14 द्वारा काल निर्धारण[1]

पुरातत्वीय स्थलों का यथार्थ काल निर्धारण केवल 1948 में शुरू हुआ, जब विलर्ड ऐफ० लिब्बी ने ई० सी० ऐंडरसन और जे० आर० आर्नल्ड की सहायता से अपनी प्रयोगशाला शिकागो विश्वविद्यालय में एक अंशकालिक व्यवसाय के रूप में स्थापित की। बैल्ट गुफ़ा से लाये गए नमूने, जिनमें अधजली हड्डियाँ थीं, उन सर्वप्रथम नमूनों में से थे, जिनका डाक्टर लिब्बी ने अध्ययन किया। उनके बाद तो उसने संसार के सभी भागों से भेजे गए सैंकड़ों नमूनों का काल निर्धारण किया है, और संयुक्त राज्य अमेरिका, पश्चिमी यूरोप, न्यूज़ीलैंड और जापान में अनेक विश्वविद्यालयों और सरकारी अभिकरणों में अन्य प्रयोगशालाएँ स्थापित की गई हैं। जिन संस्थाओं ने पहले पहल शिकागो का अनुगमन किया, उनमें से एक पैन्सीलवेनिया विश्वविद्यालय भी था। कम से कम एक तेल कम्पनी और एक वाणिज्य संगठन भी कार्बन-14 द्वारा काल निर्धारण सम्बन्धी परखें करते हैं। डाक्टर लिब्बी संयुक्त राज्य अमेरिका के परमाणु-ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष रहे हैं और उन्हें संसार की (अब तक) सबसे विनाशकारी शक्ति के एक शान्तिपूर्ण उपयोग का आविष्कार करने के कारण नोबल पुरस्कार प्राप्त हो चुका है।

कार्बन-14 द्वारा काल-निर्धारण परमाणु-ऊर्जा के सम्बन्ध में किये गए अनुसंधान से प्राप्त होने वाले लाभों में से एक है। यह लाभ इस ज्ञान पर आधारित है कि "कार्बन डायाक्साइड ब्रह्मांडीय विकिरण द्वारा रेडियो सक्रिय (रेडियम धर्मी) हो जाती है। क्योंकि पौधे कार्बन डायाक्साइड के सहारे जीते हैं, इसलिए सब पौधे रेडियो-सक्रिय होंगे। इस प्रकार हम यह निष्कर्ष

---

[1] डबल्यू० एफ० लिब्बी, 'रेडियो कार्बन डेटिंग' (रेडियम-धर्मी कार्बन द्वारा काल निर्धारण) यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो, 1952। ये उद्धरण पृष्ठ 5-6 से लिये गए हैं।

निकालते हैं कि सब जीवित वस्तुएँ ब्रह्मांडीय विकिरण के कारण रेडियोसक्रिय हो जाएँगी।" जब तक कोई अंगी (वनस्पति या प्राणी) जीवित रहता है, तब तक उसके कार्बन में रेडियो-सक्रियता की एक जितनी ही मात्रा बनी रहती है। जितनी वह कम होती है, उतनी ही उसमें और आ जाती है। परन्तु जब वह अंगी मर जाता है, उसके बाद केवल विघटन ही होता है। किसी भी मृत अंगी में कार्बन-14 के परमाणुओं का विघटन एक नियत दर से ही होता है, और इस दर पर "उस रासायनिक समास की, जिसमें कि वह रेडियो सक्रिय पिंड रहता है, प्रकृति का और उसके परिवेश के तापमान, दबाव और अन्य भौतिक विशेषताओं का बिलकुल ही कोई प्रभाव नहीं पड़ता।" लम्बी बात को संक्षेप में कहा जाय तो, परमाणु-भौतिकी-विशेषज्ञ किसी भी जैव या जैव ढंग से बनी हुई सामग्री के किसी अंश के काल का सही-सही पता उसके कार्बन-14 के परमाणुओं के विघटन की दशा को गीगर गणक-यन्त्रों द्वारा नाप कर बता सकते हैं। 1952 तक वे 20 हज़ार वर्ष पहले तक जा सकते थे; अब और अच्छे उपकरणों द्वारा वे 40 हज़ार वर्ष पहले तक का काल निर्धारण कर सकते हैं। काल निर्धारण के लिए सर्वोत्तम सामग्री लकड़ी का कोयला है; लकड़ी, टोकरी जैसी वस्तुएँ, प्राचीन रोटी, बीज और जीर्णांक (पीट) भी इस दृष्टि से उतने ही अच्छे हैं, परन्तु वे अपेक्षाकृत कम परिरक्षित रहते हैं। यही बात पशुओं की खालों, सींगों और बाह्य त्वचा के अन्य रूपों के विषय में भी सत्य है। हड्डी का, यदि वह जल या झुलस गई हो, इस काम के लिए उपयोग किया जा सकता है और शुक्तियों का भी काल निर्धारण हो सकता है। बिना जली हड्डी और सींगों की क्रोड़ें, अब तक इस दृष्टि से बेकार सिद्ध हुई हैं। क्योंकि पुरातत्ववेत्ताओं ने इन काल निर्धारण योग्य सामग्रियों की बोतलें भर-भर कर इकट्ठी करनी शुरू कर दीं, इसलिए स्वतन्त्र जगत् (गैर साम्यवादी देशों) की प्रयोगशालाओं आदेशों की इतनी भरमार हो गई है कि उन्हें अग्रताओं की एक अनुसूची बना लेनी पड़ी है और उनमें से कुछ प्रयोगशालाएँ अलग-अलग भौगोलिक प्रदेशों और पुरातत्वीय स्तरों का ही का काम विशेष रूप से करती हैं। प्रत्येक नई तिथि एक पंच-कार्ड पर लिख दी जाती है और उसके सैट चन्दा देने वाले संगठनों में वितरित कर दिये जाते हैं। प्रत्येक प्रकाशित तिथि में एक कूट अक्षर (कोड लैटर)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

होता है (पेन्सीलवेनिया विश्वविद्यालय के लिए 'पी', कोलम्बिया विश्वविद्यालय की लैमौंट प्रयोगशाला के लिए 'ऐल', इत्यादि) और एक क्रमांक होता है— उदाहरण के लिए, ईरान स्थित होतू गुफा में 11860±840 ई० पू० के लिए पंच कार्ड पी-39 है।

इस सम्बन्ध में कार्य परिचालन की कठिनाइयाँ भी बढ़ गई हैं, जिससे इस प्रक्रिया की गति मन्द हो गई है। कार्बन-14 का चिकित्सा कार्यों के लिए भी प्रयोग किया जाता है। इस कारण कुछ अस्पतालों का सान्निध्य काल— निर्धारण की इन परखों के लिए अनुपयुक्त रहता है; जब-जब भी वायु अस्पताल की धुएँ की चिमनी की ओर से प्रयोगशाला की ओर बहती है, तभी वह गीगर गणक यन्त्र को अव्यवस्थित कर देती है। 1952 की ग्रीष्म और पतझर ऋतु में हमारी प्रयोगशाला को कई बार काम कर देना बन्द कर देना पड़ा और एक या दो सप्ताह प्रतीक्षा करने के बाद फिर नए सिरे से काम शुरू करना पड़ा। इसका कारण यह था कि नेवादा से उड़ा हुआ खुला कार्बन-14 वायुमण्डल में विद्यमान था। उत्तरी अमेरिका और यूरेशिया में परमाणु बमों के परीक्षणों द्वारा वायु में फेंका गया परमाणु-मलवा सामान्यतया पश्चिमी वायु के साथ-साथ उत्तरी गोलार्द्ध में ठीक उसी मार्ग पर चलता है, जिसमें कि अधिकांश प्रयोगशालाएँ स्थित हैं। यही कारण है कि न्यूजीलैण्ड में स्थित प्रयोगशाला में अपेक्षाकृत बहुत कम अव्यवस्था होती है। परन्तु हमारे अनेक पुरातत्वीय स्थल भी, जिनमें 'पुरानी दुनिया' के नव-पाषाणिक स्थल सम्मिलित हैं। पश्चिमी तूफानों के मार्ग में स्थित हैं। आजकल जब हम खुदाई करते हुए भूमि से कोई लकड़ी का कोयला निकालते हैं, तो हम उसे तुरन्त संभाल कर पोलीइथांइलीन की मोटी नलियों में रखकर उसे मुहर-बन्द कर देते हैं और फिर उसे प्रयोगशाला में जाकर ही उनमें से निकालते हैं। परन्तु यदि खिलवाड़ में गम्भीरतापूर्वक और भी कई परमाणु बमों का विस्फोट कर दिया गया, तो सम्भव है कि डाक्टर लिब्बी की यह काल-निर्धारण की पद्धति भी पुरानी पड़ जाय।

'पुरानी दुनिया' में नव-पाषाणिक प्रव्रजन

होतू गुफा में और तुर्की में सबसे पुराने मिट्टी के बर्तन और मोटी दीवारों

वाले, रगड़ कर चमकाये गए लाल बर्तन हैं। उसके बाद सबसे पुराने बर्तन अपेक्षाकृत पतले और अधिक कठोर बर्तन हैं, जिन पर दो रंगों में चित्रकारी हुई है। परन्तु ईराक, ईरान, अफगानिस्तान और पाकिस्तान में चित्रित बर्तन सबसे शुरू के हैं। यह चित्रकारी दो शैलियों में मिलती हैं; एक तो पांडु (धूमिल पीले) रंग पर लाल रंग की। पांडु रंग के बर्तन ईराक में केन्द्रित हैं और लाल रंग के बर्तन तुर्किस्तान और ईरानी अधित्यका में, जबकि पाकिस्तान के स्थलों में दोनों प्रकार के बर्तन मिलते हैं। यद्यपि बर्तनों के ये प्रकार अपने आप में बहुत कम महत्त्व के हैं, फिर भी ये, जिनमें से कुछ पर सींगदार बकरों के बहुत सुन्दर चित्र अंकित हैं, आरम्भिक कृषि-सम्बन्धी हलचलों के लिए मार्गदर्शक सूत्र के रूप में काम आ जाते हैं। परन्तु इनके आधार पर अभी तक कोई ऐसे निष्कर्ष नहीं निकाले जा सके, जिनसे सब लोगों को सन्तोष हो सके, क्योंकि पुरातत्ववेत्ताओं की यह एक आदत होती है कि उनमें से प्रत्येक यह समझता है कि जिस स्थल की खुदाई उसने की है, वही सबसे पुराना है।

चाहे जो भी हो, किन्तु ये चित्रित मिट्टी के बर्तन धातु का युग शुरू होने से पहले—अर्थात् 3000 ई० पू० से पहले विकसित हो चुके थे और सारे मध्य पूर्व में फैल चुके थे। किन्तु नव-पाषाणिक संस्कृति का एकमात्र यही विस्तार नहीं था। वे किसान, जो परम्परागत धान्यों की खेती करते थे और परम्परागत पशुओं को पालते थे, मिश्र की नदीमुख भूमि (डेल्टा) को पार करके उत्तरी अफ्रीका के उपजाऊ मैदानों और घाटियों में बसने के लिए पहुँचे थे। सन् 1947 में एक अनुसन्धान यात्री दल ने, जिसका एक सदस्य मैं भी था, यहाँ की गुफाओं में से उन लोगों के अवशेष खोद निकाले थे। ये गुफाएँ जिब्राल्टर के जलडमरूमध्य (जल सन्धि) के निकट टैंजियर की सीमा में स्पेनी पानगृह के ठीक नीचे स्थित हैं और इनसे संसार का सबसे बढ़िया स्नान योग्य समुद्र तट दिखाई पड़ता है। अन्य किसी भी अनुसन्धान दल ने ऐसी बढ़िया परिस्थिति में शायद ही कभी काम किया हो।

उत्तरी अफ्रीका के नव-पाषाणिक लोगों ने सूअर पालने पर सबसे अधिक ध्यान दिया था। बांज के उन सघन जंगलों को देखते हुए, जो कभी इस सारे भूभाग पर छाये हुए थे, यह आश्चर्यजनक बात नहीं है। उनके मिट्टी के बर्तन सुपरिचित नरम प्रकार के थे; उनके चकमक पराम्परागत ढंग के फलक थे,

और उनके कुठार बैसाल्ट के बने हुए थे। वे जिब्राल्टर के जलडमरूमध्य पर 3000 ई० पू० से पहले पहुँच चुके थे; किन्तु वे ठीक-ठीक कब पहुँचे थे, इस विषय में हमें पक्का पता नहीं है। व्यक्तिगत रूप से मैं इससे कम से कम छह सौ वर्ष पहले की तिथि मानना पसन्द करूँगा। उनमें से कुछ जलडमरूमध्य को पार करके स्पेन पहुँच गए और अन्त में जाकर उन्होंने फ्रांस और ब्रिटिश द्वीपों को बसाया, जबकि कुछ अन्य लोग इसी समानान्तर ढंग से भूमध्यसागर के परले तट पर आगे बढ़े और वे यूनान, क्रीट और इटली में बस गए। इस बीच में अन्य अग्र-यात्री हैलेसपोंट के पार होकर और कृष्ण सागर के पश्चिमी तट के साथ-साथ डैन्यूब के मुहाने की ओर बढ़े। इसी नदी के और इसकी सहायक नदियों के किनारे चलते-चलते वे लोग अन्त में जर्मनी पहुँच गए, जहाँ उन्हें दक्षिण की ओर प्रव्रजन करके आते हुए लोगों के अग्रिम दल मिले। ये डैन्यूबी लोग (इस उत्तरी शाखा को यही नाम दिया गया है) मिट्टी के नरम बर्तन और काले पत्थर के कुठार और बसूले भी बनाते थे। यूरोप के कुछ नव-पाषाणिक गाँवों की बहुत सावधानी से खुदाई की गई है। सामान्यतया वे कम ऊँची पहाड़ियों पर बसे हुए है और उनके चारों ओर ज़मीन में लट्ठे गाड़ कर उनकी दीवारें बना दी गई हैं। मकान छोटे-छोटे और इकमंजिले थे। वे लकड़ियों को टहनियों से बुनकर और उन पर मिट्टी लेपकर बनाये गए थे और उनके फर्श कुटी हुई मिट्टी के थे। ऐसा प्रतीत होता है कि लोग प्रातःकाल अपने खेतों में काम करने के लिए जाते थे और रात होने पर सुरक्षा के लिए अपनी प्राचीरों के अन्दर लौट आते थे; उनके वंशज भी तब से अब तक ठीक ऐसा ही करते आ रहे हैं।

इसके बाद सम्भाव्यतः एक हज़ार वर्ष बीत गए और उसके बाद चित्रकारी किये हुए मिट्टी के बर्तन डैन्यूबी गलियारे से होकर यूरोप पहुँचे और वहाँ उनका अनुकरण किया गया। यदि नरम मिट्टी के बर्तन नव-पाषाणिक तुर्की में 5400 ई० पूर्व तक पुराने और चित्रकारी किये हुए बर्तन 5 हज़ार और 4 हज़ार ई० पू० के बीच के मिलते हैं, तो पश्चिमी यूरोप में संचलन की गति बहुत ही मन्द रही थी। मध्य पूर्व की तुलना में पश्चिमी जगत् में सर्दी और बर्फ़ की, चौड़ी नदियों और बहुत ठण्डे पहाड़ों की अनेक रोकें और बाधाएँ थीं। यह जगत् मध्य पूर्व की अपेक्षा प्राकृतिक साधनों की दृष्टि से इतना अधिक उत्कृष्ट था कि दोनों

की कोई तुलना ही नहीं है। इन प्राकृतिक साधनों को वश में करना कठिन था, किन्तु उनसे भविष्य के लिए कहीं अधिक आशा की जा सकती थी। यह आशा यूनानियों और रोमनों के काल तक भी बहुत स्पष्ट नहीं हो पाई थी।

कास्पियन के बेसिन से बाहर निकलने वाला पूर्वी मार्ग इससे भी अधिक कठिन था। यह माना जाता है कि नव-पाषाणिक किसान साधारण पौधों और पशुओं के साथ चीन में उनके यूरोप पहुँचने के थोड़ा बाद प्रविष्ट हुए। इसका कारण यह था कि उन्हें रास्ते में नदियों की ऐसी घाटियों में, जिनमें पवनोढ़ मृत्तिका (लोयस; हवा से उड़ाकर लाई गई नरम मिट्टी, जिसमें खेती करना सरल होता है) भरी होती है, खेती करने का अवसर नहीं मिला, अपितु उन्हें मरुस्थलों के शाद्वलों में खेती करनी पड़ी थी और एक महाद्वीपीय विभाजक को पार करना पड़ा था। क्योंकि चीन की ओर जाने का मार्ग अपेक्षाकृत कठिन था, इसलिए अपेक्षाकृत थोड़े लोग उस पर से गुज़र पाये होंगे। इसके अलावा पर्वतों के पूर्व की ओर उन्हें एक भिन्न प्रकार का जलवायु मिला। आरम्भिक नव-पाषाणिक युग के खेती किये जाने वाले पौधे वे हैं, जो सर्दियों की वर्षा और गर्मियों की सूखा के चक्र में पनपते हैं। यूरोप में, ये दशाएँ भूमध्यसागर के साथ-साथ पाई जाती हैं, जबकि अन्यत्र सारे साल समय-समय पर एक-सी वर्षा होती रहने के कारण किसी प्रकार की रुकावट नहीं थी। परन्तु उत्तरी चीन में सर्दियों में वर्षा नहीं होती और प्रशान्त महासागर से आने वाली हवाएँ गर्मियों में वर्षा लाती हैं। बाहर से लाये गए पौधे यहाँ बहुत कठिनाई से ही उगाये जा सकते थे, किन्तु इसका उपाय यह था कि स्थानीय पौधों को ही, जो स्थानीय जलवायु की दशाओं के उपयुक्त थे, उपजाया जाय।

वस्तुतः चीन वनस्पति दमन (पौधों को खेती के योग्य बनाने) का संसार का सबसे बड़ा केन्द्र रहा है। वहाँ की आर्थिक दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण दो स्पीशिजें चावल और सोयाबीन हैं। चावल के लिए, जो प्रति एकड़ गेहूँ से बीस गुना धान्य उत्पन्न करता है, हाथ की मेहनत की तो अधिक, किन्तु पशुओं के प्रयोग की अपेक्षाकृत कम आवश्यकता होती है। लेकिन इससे इतनी विशाल कृषक जनसंख्या का पेट भर सकता है कि चावल उपजाने वाले इलाके में गाँव के बाद गाँव लगभग लगातार बसे मिलते हैं। गांवों के बीच में चरवाहों के लिए कोई ऐसा स्थान खाली नहीं छूटा होता, जहाँ वे अपने रेवड़ों को चरा

सकें। धान के भूसे के, मकान बनाने और कपड़ा बनाने की सामग्री के रूप में, चटाइयाँ बनाने के लिए और ईंधन के रूप में इतने सारे आर्थिक उपयोग होते हैं कि जहाँ चावल मुख्य भोजन होता है, वहाँ पर जोते जाने वाले बैलों के लिए भी काफी चारा मुश्किल से ही बचता है, फिर दूध और माँस के लिए रखे गए पशुओं का तो कहना ही क्या! दूध और माँस के स्थान पर एक बढ़िया वानस्पतिक खाद्य सोयाबीन है। जो चिकनाई और प्रोटीन, दोनों की दृष्टि से बहुत बढ़िया है। सोयाबीन की दही चावल के साथ बहुत बड़े प्रदेश में खाई जाती है। चीनी लोगों ने यदि कभी पशुओं को दुहना शुरू किया भी हो, जो कि बहुत संदिग्ध है, तो भी वे उसे बहुत पहले त्याग चुके थे। खाने के लिए वे विशेष रूप से जिस एकमात्र पशु को पालते हैं, वह सूअर है, जो मैला साफ करने वाला पशु है। यह न केवल गाँवों की गलियों को साफ रखता है, अपितु यह मनुष्य की विष्टा को भी माँस में रूपान्तरित कर देता है। हान वंश के मिट्टी के पात्रों पर, जो 100 ई० पू० से ईस्वी सन् 100 तक के हैं, चित्रों में शौचालय सूअरों के बाड़ों के ऊपर बने हुए दिखाये गए है।

पानी, जो चावल के लिए उपयोगी है, यात्रा और परिवहन के लिए भी उपयोगी है। चीनी लोगों ने बहुत समय पहले नदियों में माल और लोगों को नावों में ढोकर ले जाना और नहरें बनाना सीख लिया था। इन प्राकृतिक जलमार्गों और उनके पूरक कृत्रिम मार्गों के बाहुल्य के कारण परिवहन के लिए पालतू पशुओं का उपयोग अनावश्यक हो गया। पशुओं द्वारा परिवहन के स्थान पर जल द्वारा परिवहन नव-पाषाणिक युग में किस सीमा तक होने लगा था, इसका पता चलाना बहुत कठिन है, क्योंकि चीन में जिन नव-पाषाणिक स्थलों की वैज्ञानिक ढंग से खुदाई हुई है, उनकी संख्या मनुष्य के हाथ की अँगुलियों से भी कम है। जैसा कि मध्य पूर्व में हुआ, यहाँ भी परवर्ती कालों की कलापूर्ण वस्तुओं के बाहुल्य ने वैज्ञानिक अनुसन्धान को गौण कर दिया। यह पता करना बहुत ही रोचक होगा कि नव-पाषाणिक युग के कास्पियन ढंग के कृषक जीवन से चीनी ढंग के कृषक जीवन की ओर परिवर्तन ठीक-ठीक किस प्रकार हुआ। शायद किसी दिन हमारे बच्चे इस बात का पता चला सकें।

यह पता करना विशेष रूप से मनोरंजक होगा कि मध्य और दक्षिणी

चीन में और हिन्द चीन में पौधों की खेती का आरम्भ वस्तुतः मध्य एशिया के शाद्वलों और पर्वतों को पार करके आने वाले नव-पाषाणिक यात्रियों ने किया था, या वह स्वतन्त्र रूप से पौधों की स्थानीय खेती द्वारा हुआ था, जैसा कि कुछ प्रमुख वनस्पति-शास्त्रियों का मत है। दुर्भाग्य से चीन के लगभग सब आदिमकालीन पुरातत्वीय स्थल उत्तर में स्थित हैं। यह सम्भव है कि एक स्थानीय नव-पाषाणिक संस्कृति, जिसमें परिष्कृत पत्थर के कुठार थे, काले और चटाई अंकित (मैट-मार्क्ड) मिट्टी के बर्तन थे और जिसमें स्थानीय खाद्यों के पौधे और साथ ही पालतू सूअर की विट्टेटस स्पीशिज़ थी और कुत्ता था, दक्षिणी चीन में 2400 ई० पूर्व से पहले, जो उत्तरी चीन नव-पाषाणिक संस्कृति का परम्परागत रूप से आरम्भ बिन्दु माना जाता है, विद्यमान थी। दुर्भाग्य से इस सिद्धान्त को प्रमाणित करने या खंडित करने का कोई उपाय नहीं है। इसके पक्ष में सबसे बड़ी युक्ति, वानस्पतिक अनुमान के अलावा, कार्बन-14 द्वारा निर्धारित 1530±200 ई० पू० की एक वह तिथि है, जो हाल ही में माइक्रोनेशिया में स्थित सैपान द्वीप में एक आदिम स्थल के लिए पाई गई है। यदि कृषक लोग उस समय तक मैरियाना द्वीप में पहुँच चुके थे, तो वे फिलिपाइन्स से उससे भी कुछ पहले ही चले होंगे; और यदि वे, जैसा कि हम मानते हैं, फिलिपाइन्स में दक्षिणी चीन से आये थे, तो 2400 और 1500 ई० पू० के बीच की 900 वर्ष की अवधि उनकी यात्रा की सब गतिविधियों और घटनाओं के लिए पर्याप्त प्रतीत नहीं होती।

परिष्कृत पत्थर के कुठार बनाने की नव-पाषाणिक तकनीकें दक्षिणी चीन में पालतू सूअर के साथ-साथ ही प्रसारित हुई होंगी। कचालू, रतालू, खट्टे फलों और शहतूत की खेती केवड़े (पैंडेनस) के साथ-साथ, जो 'लीची' की गिरी का एक निकट सम्बन्धी है, करनी पड़ी होगी। विलायती फणस (ब्रेड फ्रूट), केले और नारियल को या तो एशियाई मुख्य भूमि पर या द्वीपों पर खेती योग्य बनाना पड़ा होगा। पाली जाने वाली मुर्गी को पालतू बनाना पड़ा होगा। उन लोगों को अपना प्रव्रजन दो कुदानों में पूरा करना पड़ा होगा: पहले इंडोनेशिया तक, और वहाँ से माइक्रोनेशिया तक। एक पृथक् और तद्देशीय दक्षिण-चीन नव-पाषाणिक संस्कृति के सम्बन्ध में साक्ष्य विशुद्ध रूप से पारिस्थितिक है। किन्तु वह ऐसा नहीं है कि केवल हाथ हिलाकर उसकी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उपेक्षा की जा सके।

जापान में जोमोन मृत्-पात्र कला के आरम्भ के लिए कार्बन-14 द्वारा 7500±400 ई० पू० की तिथि निर्धारित हुई है; इससे सुदूरपूर्व में नव-पाषाणिक संस्कृति के मूल उद्गम की समस्या में एक और नई जटिलता बढ़ गई है। ये मिट्टी के बर्तन अपरिष्कृत, नोकीली तली वाले पात्र हैं, जो स्पष्टतया तद्देशीय हैं। जहाँ तक हमें पता है, आरम्भिक जोमोन संस्कृति आहार-संचयक संस्कृति थी। जोमोन संस्कृति का पिछला भाग, जो कृषि वाला था, लगभग 2550 ई० पू० का है। जापान में इन दो तिथियों के बीच मे किसी समय खेती शुरू हुई होगी।

अन्ततोगत्वा नव-पाषाणिक अविच्छिन्नता की समस्या तब स्पष्ट हो पायेगी, जब हमें उस काल के भौतिक संचलनों की खोज करने के लायक काफी नव-पाषाणिक कंकाल प्राप्त हो जाएँगे। अब तक पश्चिमी एशिया में ज्ञात सबसे पुराने कंकाल यूरोपीय प्रकार के हैं। हाल ही में फिलस्तीन में स्थित जैरिचो की एक मृत्-पात्र-पूर्व सतह में से खोपड़ियों का एक समूह मिला है, जिससे इस बात की पुष्टि होती है। इन खोपड़ियों में चेहरे पलस्तर द्वारा बनाये गए हैं और उन पर अंग-प्रत्यंग चित्रित कर दिये गए हैं। ये और मध्य यूरोप, पश्चिमी यूरोप और भूमध्य के देशों से प्राप्त हुए अन्य नव-पाषाणिक कपाल, सब एक-जैसे हैं। आदिमतम नव-पाषाणिक संस्कृति को मध्य एशिया से पश्चिम की ओर विभिन्न मार्गों से एक ही प्रकार के मानव प्राणी, जो आजकल नौर्डिक लोगों में और भूमध्य के वासियों में सुपरिचित हैं, ले गए थे। परन्तु पूर्व की ओर? जोमोन खोपड़ियाँ, जिनमें से एक आरम्भिक काल की और बाकी बाद के काल की हैं, सबकी सब मंगोलजातीय हैं।

अभी भी भौतिक और साँस्कृतिक रूप से नव-पाषाणिक लोगों के विषय में हमें जितना कुछ जानने की आवश्यकता है, वह हमारे वर्तमान ज्ञान की अपेक्षा बहुत ही अधिक है। नव-पाषाणिक स्थल या मिले-जुले स्थलों में नव-पाषाणिक स्तर उतने रोमाँचकारी नहीं हैं, जितने कि प्लीस्टोसीनकालीन मनुष्य के अवशेष; और न वे बहुमूल्य खज़ानों के अन्वेषकों को उतना प्रतिफल देने वाले हैं, जितने कि काँस्य और लौह युग के अवशेष। परन्तु सभ्यता के इतिहास के दृष्टिकोण से नव-पाषाणिक काल बहुत महत्त्वपूर्ण है।

मानवीय इतिहास की पहली प्रावस्था में मनुष्य शिकारी बना और दूसरी प्रावस्था में उसने अपने इस कौशल को पूर्णता तक पहुँचा दिया ; उसे इतना भोजन प्राप्त होने लगा, कि जो उसकी आवश्यकता को पूरा करने के बाद बचा रहता था ; उसने श्रम का एक अपरिष्कृत-सा विभाजन कर लिया और किसी सीमा तक वह जमकर रहने लगा । सैकड़ों पीढ़ियों तक शिकार करते रहने के कारण जैव दृष्टि से उसकी शरीर-क्रिया एक विशेष नमूने की बन गई थी ; यह नमूना अन्य व्यक्तियों के प्रति उसके व्यवहार में प्रतिबिम्बित होता था । मानवीय व्यवहार को साँस्कृतिक आवश्यकताओं ने कितना ही अशोधित क्यों न किया हो, फिर भी वह अभी तक भी शरीर-क्रिया का ही एक विस्तार मात्र है । अब से कोई 8 हज़ार वर्ष पहले जब सर्वप्रथम किसानों और चरवाहों ने शिकार करना छोड़ दिया, तब भी उन्होंने वंश-परम्परा में प्राप्त हुए इन नमूनों को बनाये रखा । उनकी समस्या यह थी कि इन नमूनों को ग्रामीण जीवन की नवीन आवश्यकताओं में किस प्रकार ठीक बिठाया जा सकता है और यही समस्या आज भी अधिकाँश संसार के सामने विद्यमान है ।

5

सर्दी और समुद्र

नव-पाषाणिक रहन-सहन की आदतें आधुनिक यूरोप, भारत, चीन, दक्षिणी अमेरिका और ऊँची सभ्यता वाले अन्य प्रदेशों में बची चली आ रही हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि इन प्रदेशों के निवासी अब भी परिष्कृत पत्थर के औज़ारों से लकड़ी काटते हैं, अपितु यह है कि उनके ग्रामीण जीवन के मस्तिष्क के ढाँचे में अब भी नव-पाषाणिक नमूना ज्यों का त्यों बना हुआ है। हाल के समय तक बची चली आ रही समूची नव-पाषाणिक संस्कृतियों की खोज के लिए हमें आहार-उत्पादक लोगों के उनके अन्तिम गन्तव्य स्थानों की ओर प्रव्रजनों की रूपरेखा खोज निकालनी होगी और यह देखना होगा कि नव-पाषाणिक मनुष्य ने नक्शे पर उससे पहले के शिकारियों द्वारा न बसाये गए खाली स्थानों को किस प्रकार भर दिया। नव-पाषाणिक उद्योग-विद्या इतनी सूक्षम थी कि इसके द्वारा मनुष्यों ने तरूरहित ठंडे प्रदेशों पर विजय प्राप्त कर ली और वे नौकाओं पर चढ़कर दूर समुद्र में स्थित नए द्वीपों तक पहुँच गए। प्राचीन धरती के छोरों पर हम उन्हें ऐसे समुदायों और राज्यों में रहते हुए पाते हैं, जो सामाजिक जटिलता की दृष्टि से शिकारियों के सीधे सादे गिरोह से लेकर राजा अल्फ्रैड कालीन अंग्रेजों के समाज तक जितने जटिल हैं। मानवीय इतिहास की तीसरी प्रावस्था ने मनुष्य को शुरू से ही ऐसे साधन प्रदान कर दिये, जिससे वह सार्वदेशिक और साथ ही मुख्यतया सांस्कृतिक बन सके।

नव-पाषाणिक इतिहास के पहले 3 हज़ार वर्षों के बाद नव-पाषाणिक

संस्कृति के वाहक लोग अन्ततोगत्वा खेती करने योग्य स्थल भाग के सीमान्तों तक पहुँच गए। यूरोप और एशिया के उत्तरी जंगलों में उन्होंने अपनी औज़ार बनाने की तकनीकें उन शिकारियों को सिखाईं, जो इन तकनीकों को सीखकर अपने लिए केबिनें, स्लेज गाड़ियाँ और बढ़िया फन्दे (जाल) बना सकते थे। पालतू पशुओं के स्थान पर जंगल में रहने वाले लोगों ने मांस, खालों, दूध और बोझा खींचने के लिए रेनडियर को पालतू बनाया। रेनडियर-पालन लैपलैंड से लेकर बेरिंग जलडमरूमध्य तक सारे प्रदेश में फैल गया। बेरिंग जलडमरूमध्य में पहले-पहले रूसी अन्वेषकों को ऐसे लोगों के गाँव मिले थे, जो समुद्र के स्तनपयी प्राणियों का शिकार करके और ह्वेल मछली की चर्बी, हाथीदांत और सील मछलियों और वालरसों की खालों का रेनडियर पालने वाले लोगों के साथ रेनडियर की खालों के बदले व्यापार करके जीवन-यापन करते थे। स्थल भाग पर समुद्र से दूर अन्दर की ओर रहने वाले लोगों को चमड़े की रस्सियों और जूतों के लिए समुद्र में रहने वाले स्तनपयी पशुओं की खालों की, और औज़ारों के लिए हाथीदांत की आवश्यकता होती थी। जो लोग समुद्र में रहने वाले स्तनपायी पशुओं को पकड़ते थे, उन्हें वस्त्र बनाने के लिए रेनडियर की खालों की आवश्यकता होती थी। समुद्र तट पर बसे हुए गाँवों में से सात में ऐस्किमों रहते थे। ये ऐस्किमो लोग बेरिंग समुद्र के दोनों किनारों पर रहने लगे थे और जब आधुनिक श्वेतजातीय लोग उन प्रदेशों की खोज करते हुए वहाँ पहुँचे, तब तक वे अलास्का और कनाडा के बंजर ध्रुवसागरीय तट के साथ-साथ पूर्व की ओर फैलते हुए लैब्रेडोर और ग्रीनलैंड तक पहुँच चुके थे। अमेरिका वाले किनारे पर वे समुद्र के स्तनपायी पशुओं और वाहकुरंगों (कैरीबू), दोनों का शिकार करते थे और इस प्रकार उन्हें जिन दो प्रकार की सामग्रियों की आवश्यकता थी, उन दोनों को वे प्राप्त कर लेते थे।

ऐस्किमो लोगों का तरुविहीन ध्रुव प्रदेश पर अधिकार

अमेरिकावासियों को जितनी भी आदिमकालीन जीवन पद्धतियों का ज्ञान है, उसमें से ऐस्किमो संस्कृति, जो अलास्का से लेकर ग्रीनलैंड तक विभिन्न रूपों में फैली हुई है, उन्हें सबसे अधिक ज्ञात है। ऐस्किमो लोग उत्तरी ध्रुव के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निकट रहते हैं; वे बर्फ़ के मकान बनाते हैं; गर्म कपड़े पहनते हैं; उन पशुओं का शिकार करते हैं; जो देखने में रेनडियर जैसे लगते हैं और स्लैज गाड़ियों में जुते हुए झबरे कुत्तों को हाँकते हैं। ऐस्किमो लोगों का सम्वन्ध सांटा क्लौस की किम्वदन्ती के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। ऐस्किमो संस्कृति का बहुत बड़ा अंश सूझ-बूझ से युक्त, यान्त्रिक और स्वस्थ है, इसलिए यह शिशु विद्यालयों में पढ़ाये जाने के लिए बहुत उपयुक्त विषय है और यह बच्चों को घर से बाहर खेल-कूद के लिए बढ़िया सामग्री जुटा देती है। अमेरिकी बच्चों के लिए ऐस्किमो लोग सर्दी की ऋतु, बर्फ़ में मनोविनोद, क्रिसमस वृक्षों और छत के ऊपर खुर मारते हुए रेनडियरों के प्रतीक बन गए हैं।

बच्चों के मनोपरिवर्तन के लिए एक विषय प्रस्तुत करने के अतिरिक्त विश्व-इतिहास में ऐस्किमो लोगों का महत्त्व इसलिए है कि जहाँ तक हमें पता है, वे ही सवसे पहले लोग थे, जिन्होंने काष्ठहीन अत्यधिक ठंडे परिवेश में जीवन-यापन का तरीका ढूँढ निकाला और इस प्रकार भूतल के एक ऐसे अंश पर अधिकार कर लिया, तो उससे पहले बिना बसा हुआ था।[1] ध्रुव समुद्र के एशियाई पार्श्व में जंगल समुद्र तट के निकट तक आ जाते हैं। परन्तु अमेरिकी पार्श्व में वृक्षावली समुद्र तट से इतनी दूर है कि समुद्र के स्तनपायी पशुओं का शिकार करने वाले लोग वहाँ तक नहीं पहुँच सकते। वे इस कारण जीते बचे रहने में समर्थ हुए, क्योंकि नव-पाषाणिक औजारों के द्वारा वे सेलखड़ी (सोपस्टोन) को खुरच-खुरच कर उससे दीपक बनाते थे, या फिर वे मिट्टी के दीपक बना लेते थे और इन दीपकों के ऊपर वे अपना भोजन सेलखड़ी या मिट्टी से बने बर्तनों में उबाला करते थे और ईंधन के रूप में ह्वेल मछली की चर्बी का उपयोग करते थे।

पत्थर को खुरच कर गढ़ना, मिट्टी के बर्तन बनाना और उबालना नव-पाषाणिक तकनीकें हैं। ह्वेल की मछली को जलाना ऐस्किमो लोगों की अपनी मौलिक सूझ भी हो सकता है, या यह भी सम्भव है कि यह उन्होंने किन्हीं अन्य

---

[1] ऐस्किमो प्रदेश के कुछ भागों में प्राप्त हुए इससे भी पहले के ढंग के उपकरण इस बात के सूचक हो सकते हैं कि वहाँ उससे भी और उष्णतर काल में मनुष्य विद्यमान थे।

लोगों से सीखा हो। मध्य पूर्व में जैतून का तेल ईंधन के रूप में उससे तीन हज़ार वर्ष पहले से प्रयुक्त किया जाता था, जबका कि ऐस्किमो लोगों के अस्तित्व का सर्वप्रथम प्रमाण हमें उपलब्ध होता है; और मध्य एशिया के तुर्क और मंगोल लोग बहुत समय तक मक्खन जलाते रहे थे; इस पद्धति को तुर्क लोग साइबेरिया के उत्तरी ध्रुव समुद्र तट तक ले गए थे; चीनी लोग बहुत समय तक विभिन्न प्रकार के बीजों का तेल अपने दीपकों में जलाते रहे हैं और आइनू और जापानी लोग, दोनों ही मछली के तेल का प्रयोग करते हैं।

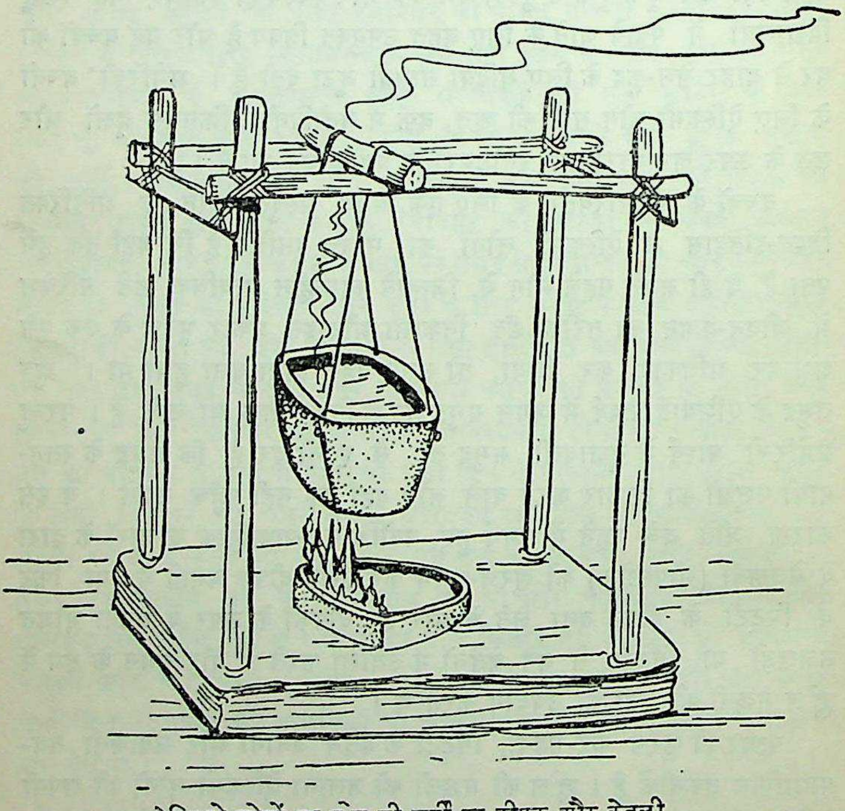

ऐस्किमो लोगों का ह्वेल की चर्बी का दीपक और केतली

ऐस्किमो लोगों ने भोजन पकाने, गर्म करने और प्रकाश करने के लिए

ह्वेल की चर्बी के प्रयोग का आविष्कार स्वयं किया या नहीं, यह केवल शास्त्रीय प्रश्न है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे इसका प्रयोग करते थे। परन्तु ईंधन के एक स्रोत का मिल जाना ही काफ़ी नहीं था; उनके परिवेश में जीवित बचे रहने के लिए अच्छा परिवहन भी अत्यावश्यक था। इस मामले में उन्हें फिर उन आविष्कारों से सहायता मिली, जा नव-पाषाणिक संस्कृति में किये जा चुके थे। पत्थर को घिसकर बनाये गए चाकुओं और बसूलों द्वारा उनके लिए यह सम्भव हुआ कि उन्हें जो थोड़ी-बहुत लकड़ी मिल पाती थी, उसका वे अधिकतम उपयोग करें और उससे स्लैज गाड़ियों के ढाँचे और नौकाएँ बना सकें। अन्य स्थानों पर स्लैज गाड़ियाँ और ढाँचों से बनाई गई नावें नव-पाषाणिक लोगों के उपकरण रहे थे। स्लैज गाड़ी खींचने के लिए पशुओं की जोड़ी का उपयोग भी नव-पाषाणिकों का आविष्कार था। ऐस्किमों लोगों ने अपनी स्लैज गाड़ियों और नौकाओं का और कुत्तों की टोली द्वारा उन दोनों को खिचवाने का आविष्कार स्वयं किया था या नहीं, यह प्रश्न उतना ही गौण है, जितना कि ह्वेल की चर्बी जलाने के आविष्कार का प्रश्न। कृत्यात्मक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ये सब नव-पाषाणिक आविष्कार थे, जो नव-पाषाणिक औज़ारों के उपयोग द्वारा ही सम्भव हो सके थे।

परन्तु यदि वे प्रत्येक जवान और बूढ़े, पुरुष और स्त्री के लिए कम से कम एक बढ़िया ढंग से सिली हुई दुहरे समूर की पोशाक बना पाने में समर्थ न हुए होते, तो इन आविष्कारों से और ह्वेल-चर्बी-दीपक के आविष्कार से भी ऐस्किमो लोगों का काम न चल पाता। इस पोशाक में बारह मुख्य खण्ड होते हैं—एक तो समूर की कमीज होती है, जिसके साथ सिर ढकने का वस्त्र भी लगा होता है; एक पतलून होती है और एक मोजों और जूतों का जोड़ा होता है। इनमें से प्रत्येक वस्त्र इस प्रकार दुहरा बना होता है कि अन्दर वाली तह के बाल शरीर के साथ छूते हैं। और बाहर वाली तह के बाल बाहर की ओर रहते हैं। यह पोशाक इन प्रदेशों में जीवित रहने के लिए ह्वेल-चर्बी-दीपक की अपेक्षा भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। इन पोशाकों को पहनकर बंजर प्रदेशों में रहने वाले कैरीबू आदिवासी, जिन्हें सर्दियों में ईंधन की बहुत तंगी रहती है, अपने बर्फ़ के मकानों में, यदि वे पर्याप्त चिकनाई खाते रहें, तो गरमाई के बिना भी जीवित रह सकते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार की पोशाक की सारभूत विशेषता यह है कि वह बढ़िया ढंग से सिली होनी चाहिए। यह सीने का काम स्त्रियाँ करती हैं। समूर को प्रत्येक व्यक्ति के ठीक नाप के अनुसार काटने के लिए उस स्त्री के पास बढ़िया चाकू होना चाहिए। यह चाकू 'उलू' कहलाता है। यह एक अर्धचन्द्राकार सलेट के पत्थर को घिस कर बनाया गया उपकरण होता, जो काठी बनाने वाले कारीगर के उस चाकू से बहुत कुछ मिलता-जुलता होता है, जिसे कि पश्चिमी जगत् का प्रत्येक कुशल चमार प्रयोग में लाता है। यह चाकू बंजर ध्रुव प्रदेश में ऐस्किमो लोगों के जीवित रह पाने के सामर्थ्य की उतनी ही महत्त्वपूर्ण कुँजी है, जितना ह्वेल चर्बी दीपक।

ऐस्किमो लोग तरुहीन ध्रुव प्रदेश में केवल इसलिए आनन्दमय और सफल जीवन बिता पाने में समर्थ नहीं हुए कि वे नव-पाषाणिक औज़ार, ह्वेल-चर्बी-दीपक, केतलियाँ और गर्म कपड़े बनाना जानते थे, अपितु इसलिए कि वे मेधावी लोग थे और उनके पास जो थोड़ी-सी प्राकृतिक सामग्रियाँ या व्यापार-योग्य वस्तुएँ थीं, उनके उपयोग में वे अत्यधिक मितव्ययिता, सूझबूझ और कौशल से काम लेते थे। अलास्का में व्यापार द्वारा साइबेरिया से होकर थोड़ा-सा लोहा आ जाता था। ग्रीनलैण्ड में वे देशज लोहे के बड़े-बड़े टुकड़ों में से तोड़ कर अलग किये गए छोटे टुकड़ों को ठण्डा ही घिसते थे और उत्तर पश्चिमी कनाडा के 'कोरोनेशन गल्फ़' प्रदेश में वे देशज ताँबे को इसी ढंग से ठण्डा ही घिसकर उपयोग में लाते थे। ये धातुएँ औज़ार बनाने के लिए उपयोगी थीं, किन्तु ऐस्किमो लोग केवल उन पर ही निर्भर नहीं थे। जब उन्हें कोई धातु प्राप्त नहीं होती थी, तो वे चकमकों से चाकू और हार्पून की नोकें बना लेते थे और सलेट के पत्थर से उलू (चाकू) और बसूले बना लेते थे और सेलखड़ी को गढ़ कर दीपक और केतलियाँ बना लेते थे। उन्हें बहकर आई हुई जो थोड़ी-सी लकड़ी प्राप्त होती थी, उसके टुकड़े करके उनसे वे नौकाओं और स्लैज गाड़ियों के ढाँचे बनाते थे और उन्हें पाटते थे। इस लकड़ी का उपयोग वे अस्त्रों के दंड (हत्थे) बनाने के लिए भी करते थे। खालें कपड़े, तम्बू और नौकाओं के आवरण बनाने के काम आती थीं। स्नायुओं को बट कर सीने का धागा, रस्सियों और धनुषों का कमानीदार पुश्ता बनाने के काम में लाया जाता था। अन्तड़ियों को बरसाती कोट के रूप में पहना जाता था।

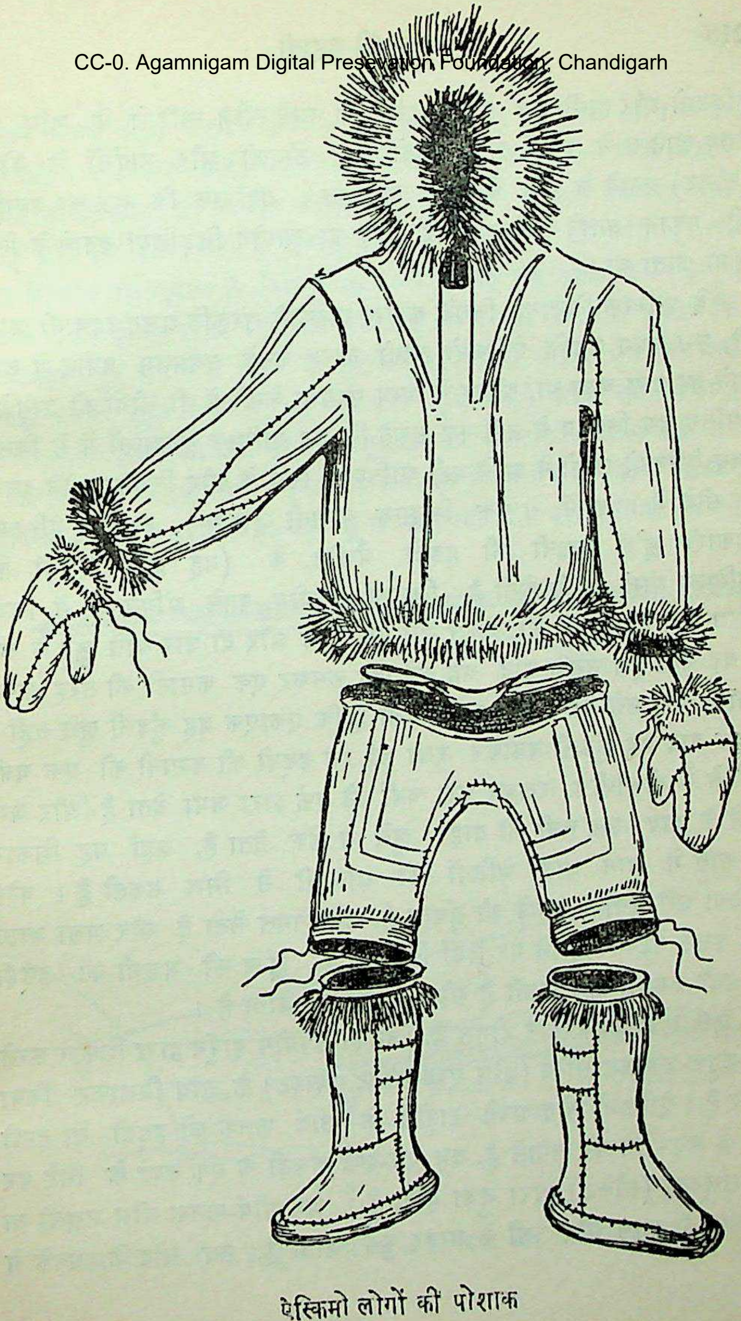

ऐस्किमो लोगों की पोशाक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हड्डियों और हाथी-दाँत की खुदाई करके उन्हें स्लैज गाड़ियों के भूमि पर रगड़ खाने वाले भागों और जोड़ों तथा टोगलों और हार्पूनों के कोटर (सौकेट) बनाने के काम में लाया जाता था। यहाँ तक कि बर्फ़ का उपयोग भी मकान बनाने के लिए और हिम का उपयोग खिड़कियाँ बनाने के लिए किया जाता था।

वे यान्त्रिक सिद्धान्त, जिनके कारण एस्किमो संस्कृति अलग पहचानी जाती थी, उस समय जबकि ऐस्किमो लोगों द्वारा उनके सर्वप्रथम प्रयोग में लाये जाने का पता चला था, संसार के अन्य सभ्यता केन्द्रों में भी लोगों को ज्ञात थे। इसलिए हम निश्चय से नहीं कह सकते कि उन यान्त्रिक सिद्धान्तों में से कितने स्वयं ऐस्किमो लोगों ने अपने यहीं आविष्कृत किये थे और कितने उन्होंने दूसरों से सीखे थे। इनमें से एक सिद्धान्त कमानी (स्प्रिंग) का है। ऐस्किमो शिकारी ह्वेल मछली की हड्डी, बैलीन, के (यह ह्वेल मछली की वाणिज्य योग्य हड्डी होती है, जिसका उपयोग पहले अंगियाओं में किया जाता था) एक टुकड़े को लेकर उसे एक चपटे और दो धार वाले छुरे के रूप में गढ़ लेता है। उसके बाद वह उसे खूब कसकर एक कमानी की तरह लपेट देता है और उसे इस प्रकार अटका देता है कि एकाएक वह कुँडली खुले नहीं। उसके बाद वह कुँडली बनाकर रखी हुई इस हड्डी की कमानी को एक चर्बी के डले के बीचोंबीच रखकर उस चर्बी को वर्फ़ द्वारा जमा देता है और जम जाने के बाद उस चर्बी को बाहर खुले में फेंक देता है, जहाँ वह शिकार की घात में आने वाले भेडियों को आसानी से मिल सकती है। कोई भेड़िया उस चर्बी के टुकड़े को सूँघता है, उसे निगल लेता है और चला जाता है। उसके पेट में पहुँचने पर चर्बी पिघलती है, ह्वेल की मछली की हड्डी की बनी कमानी खुल जाती है और भेड़िया मर जाता है।

एक अन्य आविष्कार टोगल है, जिसका उपयोग हार्पून द्वारा शिकार करते हुए कंदुक-उलूखल सन्धि (बौल एण्ड सौकेट ज्वाइंट) के साथ मिलाकर किया जाता है। ऐस्किमो लोग अपने हार्पूनों के शीर्ष फलक को हड्डी या हाथी दाँत के अग्र-दण्ड पर लगाते हैं, यह अग्र-दण्ड लकड़ी के एक डण्डे के सिरे पर एक उलूखल (सौकेट) द्वारा जुड़ा होता है। जब शीर्ष-फलक सील मछली या वालरस की खाल और चर्बी के अन्दर घुस जाता है, तब चोट के धक्के से

अग्र-दण्ड अपनी कंदुक-उलूखल संधि से अलग हो जाता है और उसी समय शीर्ष-फलक अग्र-दण्ड के सिरे से अलग हो जाता है और वह घाव के अन्दर फँसा रहता है। जब डोरी कसती है, तब यह शीर्ष-फलक उस डोरी के साथ समकोण बना लेता है और इस प्रकार माँस के अन्दर फँसा हुआ टोगल बन जाता है, जो उतना खिंचाव सह सकता है, जितना कि डोरी बर्दाश्त कर सकती है। हार्पून का दण्ड अलग होकर पानी पर तैरने लगता है और यह भय नहीं रहता कि वह छटपटाते हुए प्राणी के झटके से टूट जायेगा (और उत्तरी ध्रुव के मध्य में, जहाँ लकड़ी बहुत दुर्लभ है, यह एक बड़ी सुविधा है) और तब शिकारी मृत परिश्रान्त प्राणी को बर्फ़ पर या समुद्र तट पर अपने पास खींच लेता है।

टोगल और कन्दुक तथा उलूखल के संयोजन से सील मछलियों के शिकार में सुविधा हो गई। परन्तु बड़ी-बड़ी ह्वेल मछलियों और वालरसों को किनारे

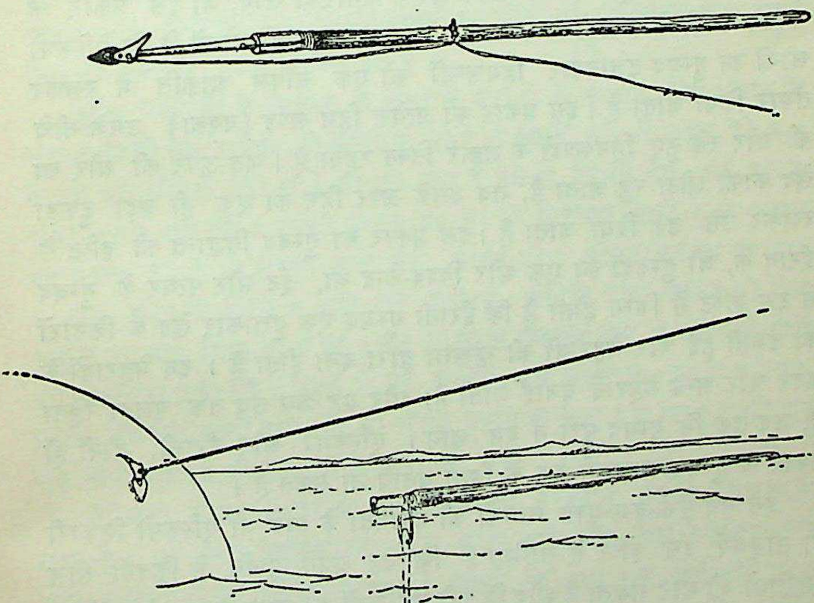

ऐस्किमो लोगों का हार्पून, चोट करने से पहले और उसके ठीक बाद

पर खींच लाने के लिए इससे भी आगे एक और आविष्कार की आवश्यकता थी और यह आविष्कार था घिरनी या चर्खी (पुली) का आविष्कार। नाव में बैठा कोई साहसी शिकारी हार्पून से बिंधे हुए किसी विशालकाय समुद्री पशु के शरीर से आती हुई डोरी से एक हाथी दाँत से बनी हुई घिरनी धानी बाँध देता था। समुद्र तट पर चमड़े की रस्सियाँ ठोस बर्फ़ में बनाये हुए छिद्रों में से गुज़ारी जाती थीं और मनुष्यों की एक टोली उन रस्सियों को अपनी ओर खींचते-खींचते उस शिकार किये गए प्राणी की लाश को समुद्र तट तक खींच सकती थी।

ऐस्किमो लोगों का सम्भाव्यत: सबसे अधिक विख्यात आविष्कार उनका बर्फ़ का गुम्बद है, जो मकान बनाने के सामान्य उपाय के रूप में केवल मध्य कनाडा के समुद्र तट पर बनाया जाता है। अन्य स्थानों पर इगलू केवल संकटकालीन घर होते हैं। वे अनेक तरुण अमेरिकी लोग, जो इस प्रकार के मकान बनाने के प्रयत्नों में असफल रहे, शायद वह नहीं जानते थे कि ऐस्किमो लोगों का गुम्बद ढलानदार हिमखण्डों को एक सर्पिल आकृति में रखकर तैयार किया जाता है। इस प्रकार का प्रत्येक हिम खण्ड (चक्का) उसके नीचे की ओर रखे हुए हिमखण्डों के सहारे टिका रहता है। जब ऊपर की ओर का छेद काफी छोटा रह जाता है, तब उसके ऊपर हिम का एक ही बड़ा टुकड़ा रखकर उसे ढक दिया जाता है। इस प्रकार का गुम्बद सिद्धान्त की दृष्टि से ईरान के, जो गुम्बदों का एक और विश्व-केन्द्र था, ईंट और पत्थर के गुम्बद से इस दृष्टि से भिन्न होता है कि ईरानी गुम्बद एक वृत्ताकार छेद के किनारों को ढकती हुई चार मेहराबों की श्रृंखला द्वारा बना होता है। इन मेहराबों के ऊपर चार अन्य मेहराबें बनाई जाती हैं; और यह क्रम तब तक चलता रहता है, जब तक कि गुम्बद पूरा न बन जाय। ऐस्किमो और ईरानी, दोनों ही प्रकार के गुम्बद अस्थायी टेक के बिना बनाये जा सकते हैं।

इन सब सूझ-बूझ-युक्त साधनों की सहायता के बाद भी ऐस्किमो शिकारी का सामर्थ्य इस दृष्टि से सीमित है कि वह अपने हार्पून से कितनी सील मछलियों को मार सकता है और कितनी मछलियों को पकड़ सकता है। भोजन यहाँ स्वल्प है और अलास्का और ग्रीनलैंड के बीच के ऐस्किमों प्रदेश के अधिकाँश भाग में एक गाँव में रह सकने वाले लोगों की संख्या 50 और 80 के

बीच तक ही सीमित रहती है। सर्दियों में दो या तीन परिवार, जिनमें कुल मिलाकर लगभग पच्चीस व्यक्ति होते हैं, एक मकान में रहते हैं। गर्मियों में प्रत्येक परिवार अपने खाल के बने हुए तम्बू में अलग रहता है। अलग-अलग परिवारों को इस बात की छूट रहती है कि वे एक समुदाय को छोड़कर किसी दूसरे समुदाय में जा मिलें। वहाँ औपचारिक रूप से कोई मुखियागीरी की प्रथा नहीं है, हालाँकि लोग घटिया शिकारी की अपेक्षा बढ़िया शिकारी की बातों पर अधिक ध्यान देते हैं। ऐस्किमों लोगों में पत्नियों की अदला-बदली के विषय में बहुत अधिक बातें कही गई हैं। संसार के अन्य बहुत से लोगों की भाँति ऐस्किमो आतिथेय (मेज़बान) भी अपने पुरुष अतिथि को अपनी पत्नी की सेवाएँ सौजन्यवश और प्रायः पत्नी की इच्छा के विरुद्ध भी, प्रस्तुत करता है। एक ही कुटुम्ब या शिविर के सदस्य बहुधा एक-दूसरे की पत्नी से व्यभिचार नहीं करते, क्योंकि इससे वहाँ भी उसी प्रकार की भावनाएँ जाग्रत होंगी, जैसी कि अन्य किन्हीं स्थानों पर होती हैं। ऐस्किमो लोग इसके लिए एक-दूसरे की हत्या भी कर देते हैं।

ह्वेल मछलियों के शिकार के दिनों में जहाजों के कप्तान लोग मौसम के शुरू में किसी एक रसोइये को ऐस्किमो लोगों के किसी गाँव में उतार देते थे। वे उसे एक अँगीठी और शीरे का एक ढोल दे देते थे, जिससे वह वहाँ रहकर 'रम' शराब बना सके। इसका कारण यह था कि निरन्तर हिलते-डुलते जहाज पर शराब बनाने का भपका काम नहीं करता था। मौसम समाप्त हो जाने पर और समुद्र के जमने से पहले उस रसोइये, अँगीठी और शराब को फिर जहाज़ पर चढ़ा लिया जाता था। सन् 1930 में 'प्वाइंट होप' में ऐस्किमो लोगों की जनसंख्या 250 थी। इनमें से 22, अर्थात् कुल जनसंख्या का 9 प्रतिशत, व्यक्ति घुँघरीले बालों वाले थे, जो शराब बनाने के लिए एक जगह उतारे गए एक नीग्रो रसोइये की करतूतों के परिणाम थे।

ऐस्किमो समाज संसार के अन्य किसी भी सरलतम समाज जितना ही सरल है। वह अनेक चकमक का प्रयोग करने वाले और आहार-संचय करने वाले समाजों से भी अधिक सरल है। इसकी सरलता कुछ थोड़ी-सी संख्या वाले उन व्यक्तियों का, जो एक-दूसरे को समझते हैं, और उनके द्वारा जीवित रहने के लिए किये जा रहे संघर्ष का एक कृत्य है। वहाँ लिंगों (स्त्रियों और

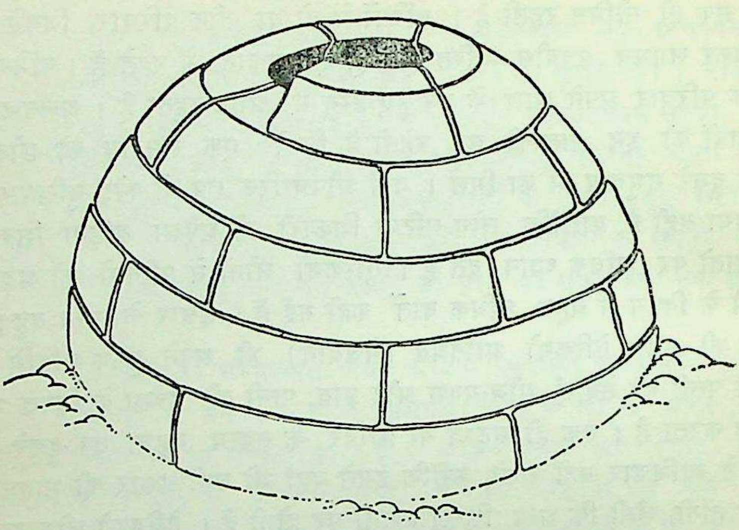

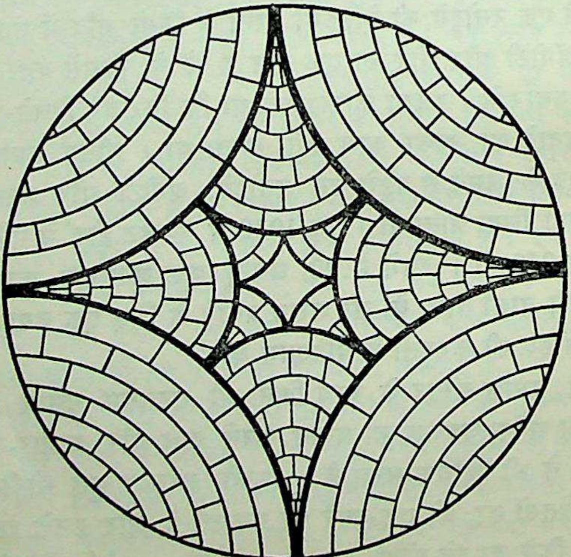

ऐस्किमी और ईरानी गुम्बद

पुरुषों) के मध्य श्रम विभाजन के अलावा और कोई श्रम-विभाजन नहीं है; वहाँ कोई विस्तृत रिश्तेदारी नहीं है; आयु के आधार पर कोई श्रेणीकरण नहीं है; कोई औपचारिक राजनीतिक संगठन नहीं है और शामन लोग भी अपना काम केवल अंशकालिक रूप से ही करते हैं। अपने जीवन निर्वाह के लिए उन्हें भी शिकार करना पड़ता है। पुरातत्वीय आधार पर यह बात व्यवहारत: निश्चित है कि किसी न किसी समय इन लोगों के पूर्वजों के पास खाने को अब की अपेक्षा अधिक था और इसलिए वे अब की अपेक्षा बड़े समुदायों में रहते थे और इस प्रकार एक साथ रहने की आवश्यकताओं के कारण उनकी सामाजिक संरचना अपेक्षाकृत अधिक परिष्कृत हो गई थी, जिसके अवशेष अब भी दक्षिणी अलास्का के, जहाँ खाद्य सामग्री और लकड़ी अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक प्रचुर मात्रा में थी, ऐस्किमो लोगों में दिखाई पड़ते हैं। यदि हममें से कुछ लोग अगले युद्ध के बाद बचे रह गए और अपने आपको कठिनाइयों और सरल जीवन के प्रति उसी प्रकार अनुकूलित कर पाये, जैसे कि ऐस्किमो लोगों ने कर लिया है, तो हमारी सामाजिक संरचना भी अब की अपेक्षा सरल हो जाएगी।

सैद्धान्तिक आधार पर, ऐस्किमो लोगों के धार्मिक और ब्रह्मांड विज्ञान सम्बन्धी विश्वासों की पड़ताल करना मनोरंजक होगा। ये वे लोग हैं, जो मनुष्य द्वारा आविष्कृत कुछ अधिकतम उन्नत यान्त्रिक सिद्धान्तों का उपयोग करने में समर्थ हुए हैं। ऐस्किमो किसी अगनबोट की मोटर को खोलकर उसके पुर्ज़े अलग-अलग कर सकता है और फिर बिना कठिनाई के उन्हें ज्यों का त्यों जोड़ सकता है। हमारी यान्त्रिक सभ्यता में ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो उसकी तात्कालिक मानसिक क्षमता से परे की जान पड़ती हो। फिर भी जिन प्राकृतिक प्रपंचों के साथ उसका सीधा सम्बन्ध रहता है, उसकी उसने जो व्याख्या की है, वह बहुत सरल ढंग की है। एक समय की बात है कि एक पिता अपनी दो लड़कियों के साथ मछलियाँ पकड़ने गया हुआ था। लड़कियाँ नाव में से नीचे गिर पड़ीं। जब उन्होंने नाव के ऊपरी किनारे को पकड़ने की कोशिश की, तो उसने उनकी अँगुलियों को काट दिया और उन्हें समुद्र में फेंक दिया। उन अँगुलियों के जोड़ों से सील मछलियाँ उत्पन्न हुईं। सील मछलियों की आत्माओं का नियन्त्रण एक बुढ़िया करती है, जिसका नाम 'सैडना' है।

वह समुद्र के नीचे रहती है। जब वह चाहती है, तब वह सील मछलियों की आत्माओं को छोड़ देती है और तब वे पानी की सतह के ऊपर आ जाती हैं, जिससे हार्पूनों द्वारा उनका शिकार किया जा सके। जब भोजन की कमी पड़ जाती है, तब उस गाँव या परिवार के लोग यह समझते हैं कि किसी व्यक्ति ने कोई ऐसा काम कर दिया है, जिससे सैडना रुष्ट हो गई है और उसने सील मछलियों को वापस अपने पास बुला लिया है। तब सब लोग अपने-अपने मन में यह सोचते हैं कि उनसे कौन-सी त्रुटि हुई है और वे अपनी-अपनी त्रुटियों को बताते हैं। अन्त में सैडना के क्रोध का कोई न कोई कारण निश्चित कर लिया जाता है और उसके लिए प्रायश्चित किया जाता है।

सैडना में विश्वास एक ऐसा यन्त्रजात है, जिससे किसी जनसमूह में किसी विक्षोभ के बाद समतुलन स्थापित करने में सहायता मिलती है। अपने आप में यह जीवन रक्षा का एक उतना ही आवश्यक उपाय है, जितना कि ऐस्किमों लोगों द्वारा काम में लाई जाने वाली शिकार करने की और अपने आपको गर्म रखने की तकनीकें हैं। इस विश्वास में अपमिश्रण (छल कपट) का अभाव कोई असाधारण बात नहीं है; संसार के अधिकाँश प्राक्साक्षर और कुछ साधारण लोग भी ऐसी ही भोली भाली सरल बातों में विश्वास करते हैं। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस विश्वास में विभिन्न प्रकार के लोगों में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया गया है। ऐस्किमों लोगों के अन्य भी देवी-देवता और भूत-प्रेत हैं, किन्तु वे सब के सब सैडना की भाँति ऋतु या शिकार के किसी पहलू के ही प्रतीक हैं और वे सब व्यक्तियों पर अपना अच्छा या बुरा प्रभाव समान रूप से डालते हैं। विश्वासों का यह समूह और इसके साथ चलने वाले व्यवहार उतने ही सरल हैं, जितना कि ऐस्किमो लोगों का वह समाज, जिसके कि वे काम आते हैं। किसी धार्मिक व्यवस्था की सरलता या जटिलता का बुद्धि से कोई सम्बन्ध नहीं है, अपितु यह तो समाजों की अपेक्षित जटिलता पर निर्भर होती है, जैसा कि हम अभी एक और उदाहरण से देखेंगे।

हवाई का नव-पाषाणिक द्वीप-स्वर्ग

नव-पाषाणिक औज़ारों, स्लैज़ गाड़ियों को खींचने वाले कुत्तों और पालों-वाली नौकाओं के होते हुए भी ऐस्किमों लोग एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की

सीमाओं में रहते रहे, जो अन्य किसी भी ज्ञात समाज-व्यवस्था से कम सरल नहीं थी। इसका कारण यह था कि वहाँ भोजन स्वल्प था, जन-समुदाय अर्थात् बिरादरियाँ छोटी-छोटी थीं, बस्तियों के बीच दूरी बहुत अधिक थी और उनकी अधिकांश ऊर्जा अपने आपको गर्म रखने में ही लग जाती थी। इसके प्रतिकूल पोलीनेशियावसी लोगों ने, जिनके पास भी नव-पाषाणिक औज़ार, कुत्ते और पालों वाली नौकाएँ थीं, एक ऐसी जटिल समाज-व्यवस्था विकसित की, जो मध्यकालीन यूरोप की कई समाज-व्यवस्थाओं जितनी जटिल थी; इसका कारण यह था कि वहाँ खाद्य सामग्री प्रचुर मात्रा में थी, द्वीपों में रहने वाली बिरादरियाँ बड़ी-बड़ी थीं और एक-दूसरे के निटक रहती थीं, और वहाँ का जलवायु गर्म था।

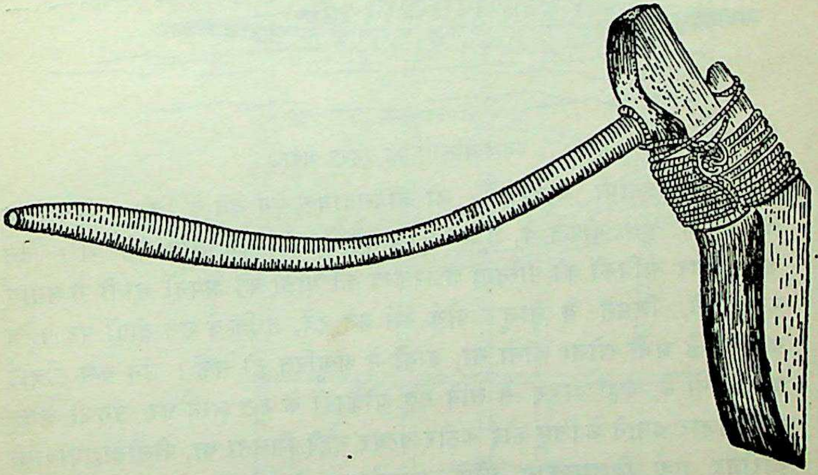

हवाई से प्राप्त एक पत्थर का बसूला

किसी समय, जो बहुत सुदूर अतीत का नहीं था, पोलीनेशियावासियों के पूर्वज इन द्वीपों की ओर बड़े-बड़े दुहरे जहाज़ों में बैठकर चले थे। ये जहाज नव-पाषाणिक औज़ारों द्वारा बड़े-बड़े लट्ठों को काटकर बनाये गए थे। इन जहाज़ों को बहुत-से नाविक मिलकर चलाते थे। चौकोर और केंकड़े के पंजों की आकृति वाले पालों की सहायता से वे अनुवात दिशा में बहते चले

जाते थे और जब उन्हें प्रतिवात दिशा में जाने की आवश्यकता होती थी, तो वे लोग चप्पू चलाते थे। उनके पास इकहरे आगे की ओर निकले हुए शहतीर वाले और असममित खोखु (हल) वाले वैसे जहाज नहीं थे, जैसे कि आधुनिक माइक्रोनेशियावासी लोगों के पास हैं और जिनके द्वारा वे वायु के साथ चलते चले जाते हैं। फिर भी वे लोग विशुद्ध माँसपेशियों के परिश्रम द्वारा वहाँ पहुँच गए, जहाँ कि वे पहुँचना चाहते थे।

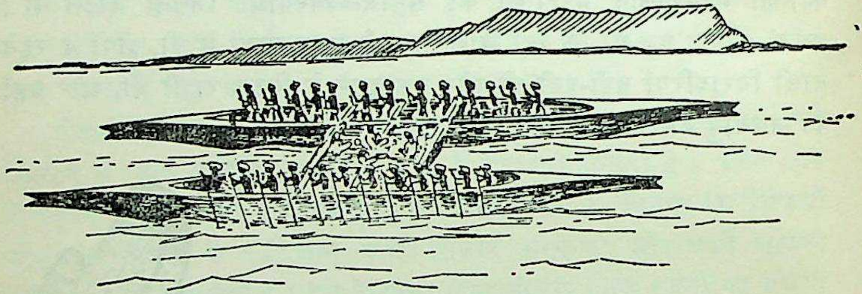

हवाईवासियों का दुहरा जहाज़

इन समुद्रगामी बाड़ों में, जो जीवनदायक पेय देने के लिए नारियलों से लदे हुए थे, कुत्ते भौंकते थे, सूअर घुरघुराते थे और मुर्गे बांग देते थे। उन जहाज़ों पर नाविकों की पत्नियाँ शकरकन्द की गांठों को अपनी छाती से लगाए रखती थीं, जिससे वे नाज़ुक पौधे गर्म बने रहें, ताकि वे उन द्वीपों पर पहुँच कर, जिन्हें अभी खोजा जाना था, बागों में अंकुरित हो सकें। उन कम ऊँचाई वाले द्वीपों में, जहाँ बाहर से लाये गए औज़ारों के टूट जाने पर उनकी जगह नए औज़ार बनाने के लिए कोई कठोर पत्थर नहीं मिलता था, पोलीनेशियावासी कारीगर एक विशालकाय घोंघे, ट्राइडैकना, के खोलों को घिस-घिस कर कुल्हाड़ियाँ और बसूले बनाते थे। उन्हें मिट्टी के बर्तन बनाने की कला का ज्ञान नहीं था। ये मिट्टी के बर्तन कुछ द्वीपों पर तो बनाए जा सकते थे। किन्तु कुछ अन्य द्वीपों पर नहीं बनाए जा सकते थे। मिट्टी के बर्तनों को बनाने की कला के अज्ञान के कारण वे लौकियों, लकड़ी और नारियल के खोलों से बढ़िया पात्र बनाते थे। बुनाई के बजाय वे शहतूत और केवड़े (पैंडेनस) के वृक्षों की कोमल छाल को हथौड़े से पीट-पीट कर वल्कल वस्त्र

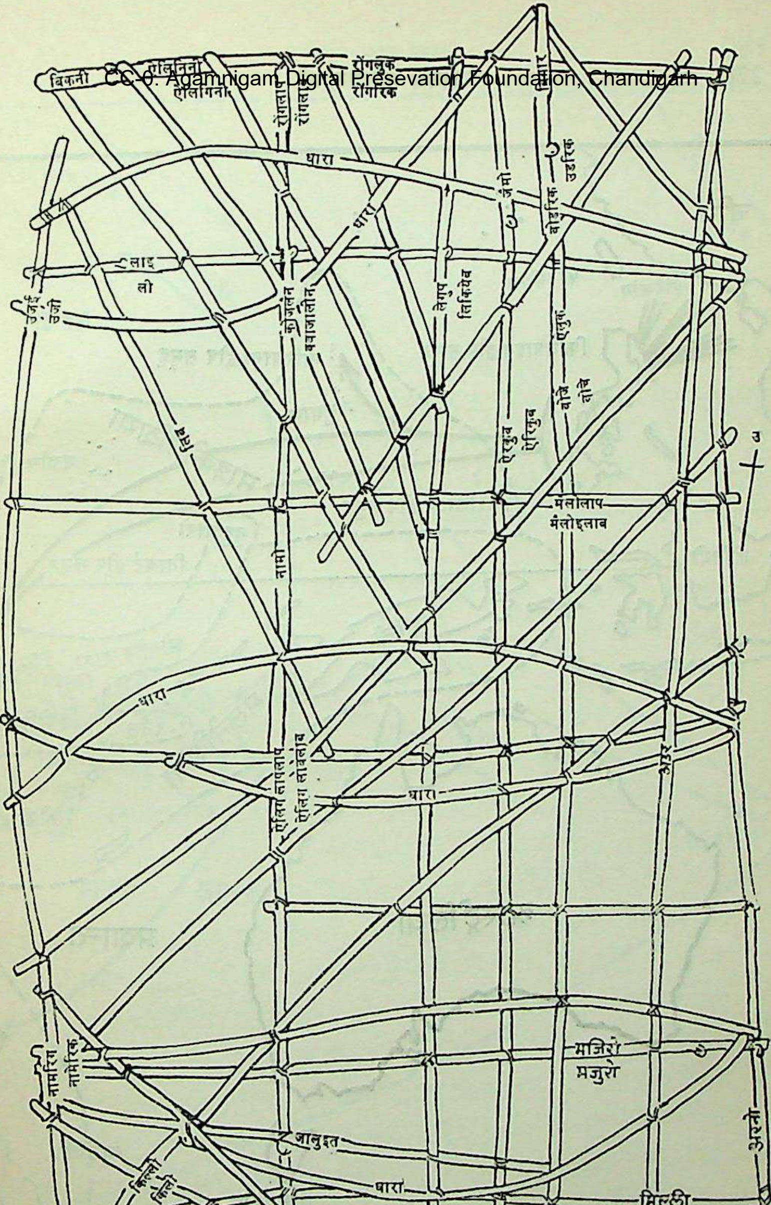
विकनी
ऐलिनिनो
ऐलीगनो
रोंगलाप
रोंगलाप
रोंगलुक
रोंगरिक
धारा
धारा
उइरिक
उइरिक
जैमो
बोइरिक
लाइ
ली
उजे
उजी
फोजलेन
क्वाजालीन
लिग्पू
लिकियेब
एलुक
वोजे
वोजे
ऐरिकुब
ऐरिकुब
विब
उ
मलोलाप
मलोइलाव
नामो
धारा
ऐलिंग लापलाप
ऐलिंग लोपलोप
धारा
औउर
मजिरो
मजुरो
नामरिक
नामरिक
अरनो
आलुइत
किल्ली
किली
धारा
मिल्ली
मिली
एबोन

मार्शल द्वीपों का मूलवासियों द्वारा निर्मित रेखा चित्र, जो रौबर्ट लुइ स्टीवेन्सन द्वारा संकलित किया गया है। यूनिवर्सिटी म्यूज़ियम (विश्वविद्यालय संग्रहालय)।

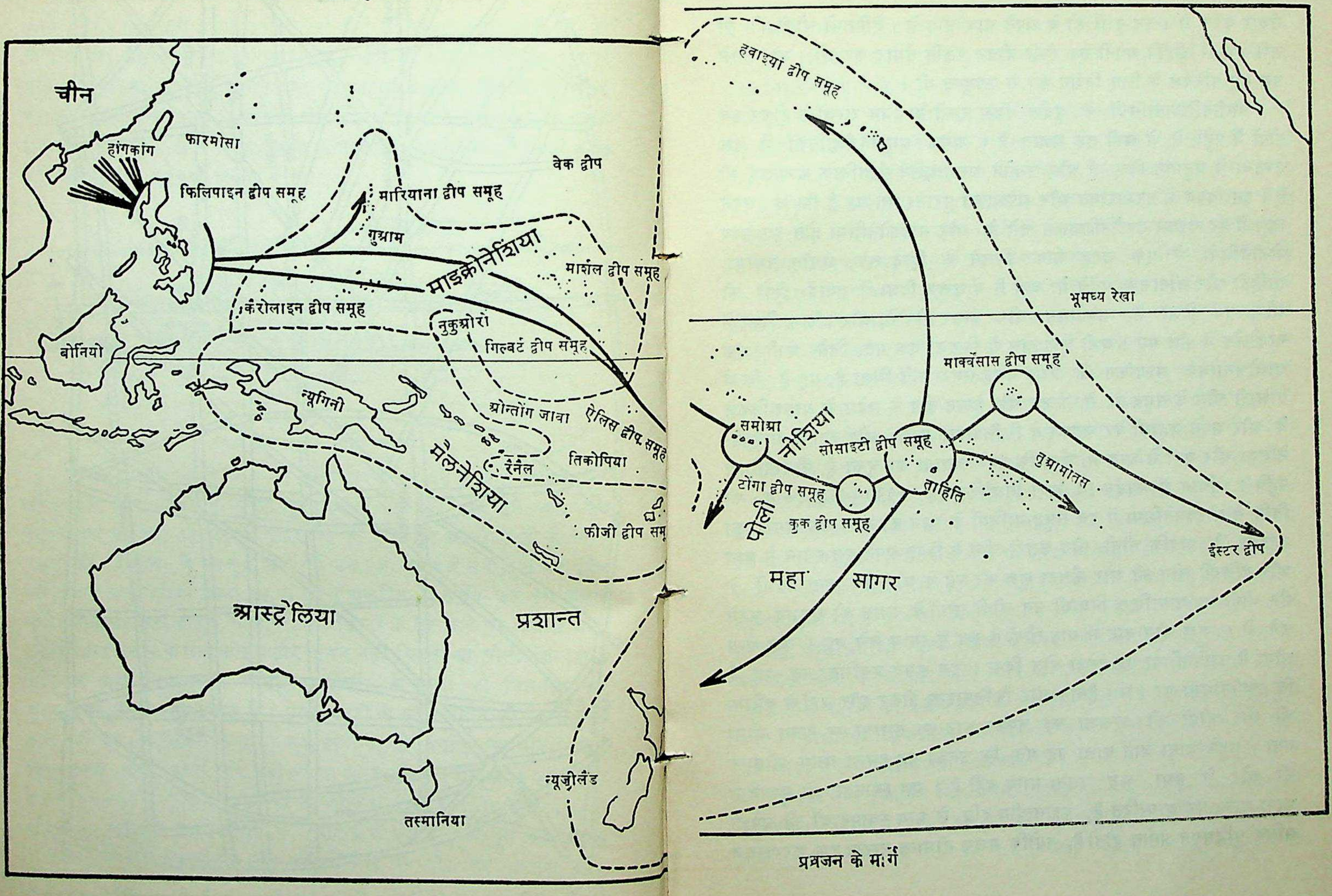
चीन
हांगकांग
फारमोसा
फिलिपाइन द्वीप समूह
मारियाना द्वीप समूह
वेक द्वीप
गुआम
माइक्रोनेशिया
मार्शल द्वीप समूह
कैरोलाइन द्वीप समूह
नुकुओरो
गिल्बर्ट द्वीप समूह
बोर्नियो
न्यूगिनी
ओन्तोंग जावा
ऐलिस द्वीप समूह
मैलेनेशिया
रैनेल
तिकोपिया
फीजी द्वीप समूह
आस्ट्रेलिया
प्रशान्त
न्यूज़ीलैंड
तस्मानिया
हवाइयां द्वीप समूह
भूमध्य रेखा
मार्क्वेसास द्वीप समूह
समोआ
पोलीनेशिया
सोसाइटी द्वीप समूह
टोंगा द्वीप समूह
ताहिति
कुक द्वीप समूह
तुआमोतस
ईस्टर द्वीप
महा सागर

पोलीनेशिया और माइक्रोनेशिया : प्रव्रजन के मार्ग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तैयार करते थे। इन वृक्षों को वे अपने साथ लाए थे। ऐस्किमो लोगों की सी सूझ-बूझ से उन्होंने अपनी एक ऐसी जीवन पद्धति तैयार कर ली, जो उनसे इस नए परिवेश के लिए विशेष रूप से उपयुक्त थी।

पोलीनेशियावासियों के पूर्वज जिस रास्ते या जिन रास्तों से होकर इन द्वीपों में पहुँचे थे, वे अभी तक अज्ञात हैं। अनेक प्रमुख वैज्ञानिकों ने इस सम्बन्ध में अनुमान किए हैं और उन्होंने अलग-अलग सैद्धान्तिक कल्पनाएँ की हैं। इस विषय में परम्परागत और अपेक्षाकृत पुराना मत यह है कि वे अपने जहाज़ों पर चढ़कर इण्डोनेशिया से चले थे और माइक्रोनेशिया होते हुए मध्य पोलीनेशिया में एक जगह आकर मिलने के बिन्दु तक, अर्थात् समोआ, ताहिती और तोंगा तक, पहुँचे थे; वहाँ से वे उत्तर दिशा में हवाई द्वीपों की ओर, पूर्व दिशा में मार्क्वेसास और ईस्टर द्वीप में, और दक्षिण दिशा में न्यूज़ीलैंड में फैल गए। अभी कुछ हाल में निकला एक मत, जिसे अभी तक आलोचनात्मक मूल्यांकन के लिए यथेष्ट समय नहीं मिला है, यह है कि वे दक्षिणी चीन के समुद्र तट से, कैन्टन और हेनान द्वीप के प्रदेश से बाहर निकले थे और अपने जहाज़ों पर चढ़कर वे फ़िलिपाइन्स पहुँचे; और वहाँ से माइक्रोनेशिया और वहाँ से अन्त में, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, पोलीनेशिया पहुँचे। सैपान में कार्बन-14 द्वारा निर्धारित एक 1530±200 ई० पू० की तिथि से माइक्रोनेशिया में इन समुद्र-यात्रियों के आने का काल उस समय का ठहरता है, जबकि चीनी लोग उत्तरी चीन में स्थित अपने मूल स्थान से मध्य और दक्षिणी चीन की ओर फैलना शुरू कर रहे थे और जब इन प्रदेशों के गैर चीनी नव-पाषाणिक निवासी उन चीनी लोगों के दबाव को अनुभव करने लगे थे। कुछ लोग बाद में थाइ लोगों के रूप में स्याम चले गए। कुछ अन्य लोगों ने इण्डोनेशिया पर हल्ला बोल दिया। इस समय प्रचलित मत यह है कि इण्डोनेशिया पर हल्ला हैनान और फ़िलिपाइन्स होकर और वहाँ से दक्षिण की ओर द्वीपों की शृंखला का चक्कर काट कर सुमात्रा पर हल्ला बोला गया। पहले माना जाने वाला यह मत, कि उनका यह हमला मलय सीमान्त की ओर से हुआ, अब उतना मान्य नहीं है। यह स्थापना, जो मुख्यतया भाषा-शास्त्र पर आधारित है, पुरातत्वीय दृष्टि से अन्य स्थापनाओं की अपेक्षा अधिक बुद्धिसंगत प्रतीत होती है, क्योंकि मलय सीमान्त सारतः एक शरणस्थल

है। चाहे जो भी हो, पोलीनेशिया के बाहरी द्वीपों की बसापत बहुत पुरानी नहीं है। हवाई में सबसे पुराने पुरातत्वीय स्तर का काल ईस्वी सन् 1004± 180 निर्धारित हुआ है।

एक तीसरा मत, जो सन् 1947 में 'कोन-तीकी' की समुद्र यात्रा द्वारा बड़े नाटकीय ढंग से सामने आया है और जिसे थोर हेयरडहल ने प्रस्तुत किया है, यह है कि पोलीनेशियावासी अलग-अलग, एक के बाद एक आने वाली कई टुकड़ियों में अमेरिका से वहाँ पहुँचे थे। इस मत की मीमांसा हम आगे चलकर तब करेंगे, जब हम अमेरिकी आदिवासी सभ्यता के मूल उद्गम के विषय में विचार करेंगे। हमारे वर्तमान प्रयोजन के लिए पोलीनेशियाई लोगों के उद्गम स्थान कम महत्त्वपूर्ण हैं; अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि पोलीनेशियावासी आधुनिक काल तक भी अत्यधिक सुसंगठित नव-पाषाणिक संस्कृतियों को बनाये हुए थे। इन संस्कृतियों के इतनी देर तक बचे रहने के कारण मानव-वैज्ञानिकों को उनका विस्तारपूर्वक अध्ययन करने का अवसर मिल गया। यह संस्कृति स्वभावतः अपेक्षाकृत बड़े द्वीपों या द्वीपसमूहों में, जहाँ उष्ण कटिबन्धीय पौधों की खेती आसानी से की जा सकती थी, सबसे अधिक जटिल थी। इस प्रकार का एक द्वीप-समूह हवाई द्वीप समूह है।

17 जनवरी सन् 1779 को, जब जनरल वाशिंगटन न्यूजर्सी में स्थित मौरिसटाउन में सर्दियाँ बीतने की प्रतीक्षा कर रहा था, तब एक ब्रिटिश प्रजाजन ने, जिसका नाम जेम्स कुक था और जो हवाई द्वीप समूह के छोटे-छोटे द्वीपों के चारों ओर चक्कर लगाता रहा था, सबसे बड़े द्वीप हवाई में काराकाकूआ खाड़ी में लंगर डाल दिया। यह प्रसिद्ध समुद्र यात्री पहले ताहिती, न्यूज़ीलैंड और पोलीनेशिया के अन्य भागों को देख चुका था, इसलिए वह इस द्वीप के आकार को, और जो लोग अपनी नौकाओं पर चढ़कर उसके तीन जहाज़ों को देखने आये थे, उनकी संख्या को देखकर चकित रह गया। हवाई के निवासियों को और भी अधिक आश्चर्य हुआ। इससे पहले उन लोगों ने कभी भी यूरोपीय जहाज़ों या यूरोपीय लोगों को नहीं देखा था।

संयोग ऐसा हुआ कि जिस समय कप्तान कुक वहाँ पहुँचा, उस समय वहाँ प्रतिवर्ष होने वाले सहभोज, खेलकूद और धार्मिक पूजा के चतुर्मासीय समारोह खूब धूमधाम से हो रहे थे। इस अवसर पर महान देवता 'केन' की पूजा की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जाती थी। इस अवसर पर राजा के सन्देशवाहक द्वीप में दौरा करते थे और कर उगाहते थे। वे अपने साथ एक बाँस के ऊपर एक चौखटे से लटकता हुआ एक बड़ा आयताकार वल्कल वस्त्र लेकर चलते थे। उस वस्त्र के ऊपरी भाग के ऊपर एक छोटी-सी लकड़ी की प्रतिमा लगी रहती थी। दूर से जहाज़ों को आते देखकर हवाईवासियों को उन जहाज़ों के पालों और 'माकाहिकी' देवता में (उस लकड़ी की मूर्ति और उसके राजचिह्न उस वल्कल वस्त्र का यही नाम था) घनिष्ठ समानता लगी। कप्तान कुक का आगमन एक भविष्यवाणी के अनुसार ठीक बैठता था। जब वह समुद्र के किनारे पर उतरा और उस द्वीप के महाराजा के मिलने के लिए राजकीय निवास की ओर चला, तो लोग उसके सामने आकर भूमि पर लेटकर प्रणाम करने लगे। यद्यपि उसे उस समय इस बात का पता नहीं चला था, परन्तु बाद के विवरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ग़लती से उसे उस द्वीप में वापस लौटकर आया हुआ देवता समझ लिया गया था।

इस प्रकार उसे देवता समझ लेने के बाद भी हवाईवासियों को उन जहाज़ों से जो भी धातु की वस्तु उनके हाथ लगी, उसे चुरा लेने में कोई संकोच नहीं हुआ; और उनकी इस चोरी की समता केवल उनकी उस उदारता द्वारा ही की जा सकती है, जो उन्होंने उन जहाज़ों के नाविकों को सूअर, कचालू और अन्य खाद्य सामग्री लाकर देने में दिखाई थी। 14 फरवरी को प्रातःकाल यह पता चला कि रात के समय वे लोग 'डिस्कवरी' जहाज की पतवार ही चुरा ले गए हैं और कप्तान कुक ने स्वयं उनका पीछा किया। उसके बाद जो उलट-पुलट घटनाएँ हुईं, उनमें एकत्रित विशाल जन समूह राजा के नियन्त्रण से बाहर हो गया और कप्तान कुक की एक लोहे के छुरे से हत्या कर दी गई। इस छुरे को वह स्वयं इन द्वीपों में बेचने के लिए लाया था। इसके 24 दिन बाद 10 मार्च, 1779 को बैंजामिन फ्रैंकलिन ने, जो फ्रांस में अमेरिका का राजदूत था, पास्सी में स्थित अपने निवास-स्थान से सब अमेरिकी जहाज़ों के कप्तानों के नाम एक खुला पत्र भेजा, जिसमें उनसे अनुरोध किया गया था कि वे कप्तान कुक की राष्ट्रीयता का ध्यान किये बिना उसे और उसके बेड़े को सहायता पहुँचाएँ। फ्रैंकलिन ने कहा कि कप्तान कुक का कार्य "अपने आप में एक सचमुच प्रशंसनीय उपक्रम है, क्योंकि भौगोलिक

ज्ञान में वृद्धि होने से दूरस्थ देशों में संचार (सम्पर्क स्थापन) में सुविधा होती है ग्रौर उपयोगी उपजों ग्रौर निर्मित माल के विनिमय में ग्रौर कलाग्रों के विस्तार में भी सहायता मिलती है, जिसके द्वारा मानव-जीवन का समान रूप से ग्रानन्दोपभोग कई गुना हो जाता है ग्रौर बढ़ जाता है, ग्रौर ग्रन्य प्रकार के विज्ञानों में भी वृद्धि होती है, जितसे मानव-जाति को सामान्य रूप से लाभ होता है··· ।" जब डा० फ्रैंकलिन का यह पत्र ग्रमेरिकी कांग्रेस के पास पहुँचा, तब इसमें निहित ग्रादेशों को तुरन्त उलट दिया गया । किन्तु उस समय तक कप्तान कुक थोड़ी-सी कटी हुई हड्डियों के रूप में हवाई द्वीप के समुद्र तट से कुछ मील दूर समुद्र की तली में पहुँच चुका था ।

यद्यपि पोलीनेशिया के द्वीप एक-दूसरे से बहुत ग्रधिक दूरी पर थे, फिर भी उनमें एक ऐसी संस्कृति थी, जो उन सब में कुछ कम या ग्रधिक एक-सी ही थी । इसका ग्रपवाद केवल यह था कि न्यूजीलैण्ड में वहाँ के शीतल जल-वायु के कारण इस संस्कृति में कुछ ग्राशोधन कर लिये गए थे ग्रौर एक यह कि ग्रपेक्षाकृत छोटे ग्रौर ग्रपेक्षाकृत ग्रलग-थलग पड़े हुए द्वीपों में सांस्कृतिक नमूना ग्रनिवार्यतः बड़े द्वीपों, जैसे हवाई ग्रौर मार्क्वेसास ग्रौर न्यूजीलैण्ड के द्वीप-समूह, या बहुत पास-पास स्थित द्वीप-समूहों की ग्रपेक्षा, जिनमें एक द्वीप से दूसरे द्वीप तक नौका द्वारा छोटी-छोटी यात्राएँ करके जाया जा सकता था, ग्रधिक सरल था । इस प्रकार के द्वीप-समूहों में, सोसाइटी द्वीप-समूह (ताहिती), समोग्रा ग्रौर तोंगा, ग्रपने-ग्रपने ग्राश्रित द्वीपों समेत, सर्वाधिक उल्लेखनीय थे ।

प्रत्येक बड़े द्वीप या द्वीप गुच्छ में लोग बीस से लेकर चालीस तक के कुटुम्ब-समूहों में गाँवों में रहते थे । ये छोटे-छोटे गाँव बड़े-बड़े बागों के बीच में बसे होते थे । इन बागों में न्यूनतम काम करने से ग्रधिकतम खाद्य सामग्री उत्पन्न होती थीं । शकरकन्द, कचालू, रतालू, विलायती फणस, केवड़ा, केले ग्रौर नारियल मुख्य भोजन थे ग्रौर कागजी शहतूत की बढ़िया छाल वल्कल वस्त्र बनाने के काम ग्राती थी । सहभोजों ग्रौर बलिदानों के लिए भोजन सूग्ररों, कुत्तों ग्रौर मुर्गियों को मारकर तैयार किया जाता था । प्रोटीन का एक ग्रौर भी बड़ा स्रोत वे मछलियाँ थीं, जिन्हें कि द्वीप वासी जलधाराग्रों

और खुले समुद्र में काँटों द्वारा या जाल द्वारा पकड़ते थे । इसी प्रकार कछुए, डौल्फिन और किसी जगह फँसी हुई ह्वेल मछलियाँ भी प्रोटीन का उत्कृष्ट स्रोत थीं । जहाँ यह ठीक है कि खाद्य सामग्री इतनी काफी थी कि वह बची रहे और बड़ी मात्रा में विशेषज्ञ लोगों का भरण-पोषण कर सके, वहाँ यह भी ठीक है कि प्रत्येक द्वीप में जितने व्यक्तियों का निर्वाह हो सकता था, उनकी संख्या भी सीमित ही थी । जनसंख्या को संतति निरोध की तकनीकों द्वारा (जिनमें गर्भपात भी सम्मिलित था), युद्ध द्वारा, नर बलि द्वारा, और सब द्वीपों में तो नहीं, किन्तु कुछ द्वीपों में नर-मांस-भक्षण द्वारा कम रखा जाता था । शुरू-शुरू के दिनों में, नए प्रदेशों की खोज और बसने के दिनों में प्रव्रजन भी अवश्य ही जनसंख्या कम करने का एक साधन था ।

जिस समय श्वेतजातीय मनुष्यों ने इन द्वीपों को खोज निकाला, उस समय वहाँ मामूली आकार के प्रत्येक द्वीप में एक अलग राज्य था। समोआ द्वीप-समूह के उपोलो जैसे अपेक्षाकृत बड़े द्वीपों में तीन स्वयंशासित जिले थे । ऐसी दशा में वे सम्पूर्ण समोआ के सर्वोच्च राजा के प्राधिकार के नीचे शिथिल रूप से संयुक्त रहते थे । राज्य छोटे-छोटे थे, क्योंकि प्रत्येक जिले में वे अधिकांश वस्तुएँ उत्पन्न होती थीं, जिनकी कि वहाँ के निवासियों को आवश्यकता होती थी । परिवहन, संचार और युद्ध कला की नव-पाषाणिक तकनीकें इतनी बढ़िया नहीं थीं कि उनके द्वारा दूर-दूर तक विजय की जा सके । भले ही किसी राजा के नाविक कितने ही कुशल क्यों न हों और उसके सैनिक कितने ही वीर क्यों न हों, फिर भी जब उसके उपकरण नौकाओं और लकड़ी के भालों तक ही सीमित हों, तो वह न्यू इंग्लैंड ज़िले से बड़े प्रदेश का प्रशासन नहीं कर सकता था ।

जब कप्तान कुक हवाई द्वीप में पहुँचा, तब उसने देखा कि केन्द्रीय ज्वालामुखी के चारों ओर एक घेरे में जो गाँव बसे हुए थे, वे एक ही राज्य में संयुक्त थे और वह राज्य पोलीनेशिया के अन्य किसी भी राज्य जितना बड़ा था । जब हवाई द्वीप के निवासियों ने श्वेतजातीय लोगों से जहाज़ और बारूदी हथियार ले लिये, तब सन् 1795 में कामेहामेहा प्रथम उन्हें एक राज्य के रूप में संगठित करने में समर्थ हुआ । हमें उसके राज्य की, विजय से पहले और विजय

के बाद, दोनों कालों की सामाजिक गठन के विषय में विस्तार से मालूम है।[1] यह संस्कृति सम्भाव्यतः नव-पाषाणिक समाज का सबसे अधिक जटिल रूप थी, जो उस काल तक बची रह गई थी, जिसमें कि आधुनिक शिक्षित लोग इसे देख पाने और इसका वर्णन कर पाने में समर्थ हुए। क्योंकि जटिल नव-पाषाणिक समाज-व्यवस्था का इससे और अच्छा विवरण अन्यत्र नहीं मिल सकता, इसलिए यह हमारे अध्ययन के योग्य है। इसकी संस्थाओं की वारीकियों से हम यह देख सकते हैं कि नव-पाषाणिक समाज 5 हज़ार वर्ष पूर्व कितने जटिल हो सकते थे और लोग अनुकूल परिवेश में नव-पाषाणिक उद्योग विद्या का उपयोग करते हुए ऊर्जा को कितने सुचारु रूप से सामाजिक संरचना में रूपान्तरित कर सकते थे।

आरम्भिक यूरोपीय प्रेक्षकों ने, जो अपने देशों की सामाजिक संरचना के कारण श्रेणीभेद के विषय में जागरूक थे, इस बात की ओर ध्यान दिया कि हवाई द्वीप के लोग कुलीनों, जन साधारण और दासों की श्रेणियों में विभक्त थे। इनमें से प्रत्येक श्रेणी के अपने कर्त्तव्य, अपने विशेषाधिकार और अपने अलप अधिकार-चिह्न (निशान) थे। कुलीन लोग अपने रूप-रंग और डीलडौल से भी पहचाने जा सकते थे, क्योंकि वे अन्य लोगों की अपेक्षा कुछ बड़े कद के और साफ रंग के होते थे, जो निस्सन्देह उनके भोजग में अन्तर और धूप से बचे रहने के फलस्वरूप होता था। यह वात सर्वत्र, जिसमें यूरोप और अरब देश भी सम्मिलित है, कुलीन लोगों के विषय में सत्य है।

श्रेणी-भेद के विषय में जागरूक अन्य देशों के समान हवाई में भी वंश-परम्परा (वंशावली) का सबसे अधिक महत्त्व था। थोड़ा भी महत्त्व रखने वाला हर कोई व्यक्ति अपने वंश की रूपरेखा यदि माता और पिता, दोनों ही पक्षों में नहीं, तो कम से कम एक पक्ष में तो उस काल तक वतला सकता था, जबकि 24 पीढ़ी पहले ये द्वीप बसे थे और उससे आगे वह वंश-परम्परा देवताओं तक जा पहुँचती थी। एक विशेष प्रकार की वंश-परम्परा कई पीढ़ियों

---

[1] हवाई द्वीप की संस्कृति का यह चित्र डेविड मैलो की पुस्तक 'हवाइयन ऐंटीक्विटीज़' पर आधारित है। यह पुस्तक बी० पी० विशप म्यूज़ियम स्पैशल पब्लिकेशन नं० 2, होनोलूलू द्वारा 1903 में प्रकाशित की गई थी।

तक पितृ-पक्ष में चलती थी और उसके बाद किसी एक पूर्वज के मातृ-पक्ष की ओर पहुँच जाती थी। यह पूर्वज ऐसा होता था, जिसका पिता अपनी-पत्नी की अपेक्षा कुछ निम्न श्रेणी का होता था। राजा वह व्यक्ति होता था, जिसके सबके सब पूर्वज सर्वाधिक महत्त्व के रहे होते थे। अपनी इस उत्कृष्टता को बनाये रखने के लिए युवक राजा अपनी बहिन से विवाह कर लेता था। जब उसका एक उत्तराधिकारी उत्पन्न हो जाता था, उसके बाद राजा और रानी अपने अन्य जीवन सहचर बना सकते थे और प्रायः बनाते भी थे।

कुलीन लोगों में से कुछ लोग दूर बाहर की ओर स्थित जिलों के उपशासक होते थे; कुछ अन्य सैनिक, पुरोहित और दरबारी होते थे। ये सबके सब या तो राजकीय अहाते में, या उसके निकट ही रहते थे। एक सामन्त राजकीय वेष भूषा का रक्षक होता था। एक अन्य राजा के भोजन की देख भाल करता था। एक अन्य सामन्त राजकीय पेशाबदान की सँभाल करता था। अन्य लोग कवि या पेशेवर नर्तक होते थे। एक सबसे महत्त्वपूर्ण पद वंश-परम्परा-विशेषज्ञ का होता था। वह वंश-परम्परा-विशेषज्ञ तथा अन्य सुदीर्घ स्मृति वाले राज सभासद कुलीन लोगों की परिषदों की आधिकारिक बैठकों में राजा के निकट रहते थे। ऐसे अवसरों पर सिंहासन-भवन के बाहर दो सन्तरी खड़े कर दिये जाते थे। जब कोई व्यक्ति सिंहासन-भवन में प्रवेश के लिए आता था, तब एक सन्तरी उसका नाम ज़ोर से पुकारता था। तब सिंहासन-भवन के अन्दर बैठे हुए लोग चुनौती देकर उससे पूछते थे—"तुम किसके वंशज हो ?" जब नवागन्तुक अपनी पितृ-पक्ष की वंश-परम्परा दस पीढ़ियों तक बता देता था और वंश-परम्परा-विशेषज्ञ उसके वक्तव्य का सत्यापन कर देता था, तब उसे सिंहासन-भवन में प्रवेश करने दिया जाता था। उससे अगले आगन्तुक को अपने मातृ-पक्ष की वंश-परम्परा दस पीढ़ियों तक बतानी पड़ती थी और यह क्रम तब तक चलता था, जब तक कि सब लोग अन्दर आकर बैठ नहीं जाते थे।

इन राज सभासदों को राजकीय भण्डार से भोजन मिलता था। यह भण्डार खाद्य सामग्रियों और वस्त्रों के रूप में दिये गए उपहारों और करों द्वारा भरा जाता था। इसके अलावा जो समुद्री स्तनपायी जन्तु तैरते हुए किनारे पर आ लगते थे, उन सबका और जहाज़ों के टूटे-फूटे अंश के रूप में

प्राप्त लोहे का, विशेष रूप से लोहे की पत्तियों और ढोलों का स्वामी राजा होता था। कप्तान कुक के आने से पहले हवाई द्वीप के निवासी लोहे का उपयोग कुछ समय तक, उसे ठण्डा ही हथौड़े से पीटकर और घिसकर, छेनियाँ और हथियार बनाने के लिए करते रहे थे।

राज सभासद लोग खेल-कूद, क्रीड़ा, संगीत और नृत्य के व्यसनी होते थे और वे उच्छृंखल जीवन के लिए, जिसमें समलिंगकामुकता भी सम्मिलित थी, और घमण्ड के लिए और जन साधारण के साथ बर्ताव में उद्धतता के लिए विख्यात थे। परन्तु जिन कुलीनों को आगे चलकर उच्च सरकारी पद सँभालने होते थे, उन्हें यौवन काल में अन्य लोगों से अलग परिपक्व वयस और बुद्धि वाले शिक्षकों के पास रखा जाता था।

जन साधारण के लोग विशेष-विशेष व्यवसायों को करते थे, जो किसी सीमा तक आनुवंशिक होते थे। बहुसंख्यक लोग जहाँ किसान या मछियारे होते थे, वहाँ कुछ थोड़े-से लोग कारीगर होते थे। सम्भाव्यत: किसी एक कुशल शिल्प को करने वाले लोग कुछ सौ से अधिक नहीं होते थे। औद्योगिक पिरामिड के बिलकुल निचले आधार के रूप में कुठार-निर्माता थे। इस वर्ग का बहुत मान था। जो बढ़ई उनके कुठारों को खरीदते थे, वे जहाज-निर्माताओं, मकान बनाने वालों और शहतूत की छाल के लट्ठे (टापा-लौग) बनाने वालों की श्रेणियों में विभक्त थे। कुछ लोग रेशों का सामान बनाने वाले भी थे, जिनमें जाल-निर्माता भी सम्मिलित थे। ये कारीगर अपनी तैयार की गई वस्तुओं का विनिमय और मछियारों से सीधी सादी वस्तु-विनिमय प्रणाली द्वारा करते थे। क्योंकि प्रत्येक द्वीप इतना काफ़ी बड़ा था और उसमें इतनी विविधता थी कि वहाँ के निवासियों की आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु वहीं उत्पन्न हो जाय, इसलिए अन्तरद्वीपीय व्यापार नहीं होता था।

वहाँ की निम्नतम श्रेणी के विषय में, जिसे शायद ग़लत तौर पर 'दास' कह दिया गया है, बहुत कम मालूम है। इस श्रेणी में कुछ थोड़े-से लोग होते थे, जिनके माथे पर और आँखों के पास एक विशेष ढंग से गोदना गुदा रहता था। भारत के अछूतों और जापान के 'एता' लोगों की भाँति उन्हें उच्चतर श्रेणियों के लोगों के मकानों में घुसने नहीं दिया जाता था।

प्रत्येक परिवार के अहाते में एक-एक कमरे वाले पाँच मकान होते थे।

ये मकान होते थे—दाम्पत्य कक्ष, पुरुष का भोजन कक्ष, स्त्री का भोजन कक्ष, स्त्री का वल्कल कूटने का सायबान और एक वह कमरा, जिसमें कि पति अपनी पूजा की मूर्तियाँ रखता था। बाहर की ओर खुले में दो अलग-अलग पति और पत्नी का भोजन पकाने के स्थान होते थे। पत्नी अपने पति के भोजन कक्ष या पूजा घर में नहीं जा सकती थी। यदि वह जाती, तो उसे मार डाला जाता था। जब पत्नी को मासिक धर्म हो रहा होता था, तब वह एक छठे मकान में, जो एक विशेष कुटिया होती थी, रहती थी। यही एक मात्र ऐसा निवासस्थान था, जहाँ वह सुनिश्चित रूप से एकान्त में रह सकती थी, क्योंकि इस कुटिया में पुरुष के अनधिकार प्रवेश का दंड मृत्यु होता था।

हवाई के देवताओं, देवियों और छोटी-मोटी प्रेतात्माओं की नामावली में जन-जीवन में विक्षोभ के क्षेत्रों का प्रतिफलन दिखाई पड़ता है। 'केन', स्रष्टा या सर्वोच्च देवता, मनुष्यों के पारस्परिक सम्बन्धों का प्रतीक था और इसलिए वह राजाओं का विशेष देवता था। युद्ध का देवता 'कू' राज्यों के मध्य सम्बन्ध का प्रतीक था। कृषि का देवता 'लौंगों' भोजन देने वाला देवता था और इसलिए सूखा, तूफ़ान या युद्ध के कारण भोजन न मिलने की दशा में उसे संकट का देवता भी माना जाता था। एक चौथा देवता 'कानालोआ' पूर्वजों की पूजा और कावा-पान के समारोह का, जो चीन के चाय-समारोह जैसा ही होता था, प्रतीक था। पूर्वजों की पूजा और कावा-पान कुलीनों के काम थे, इसलिए कुलीन लोग 'कानालोआ' की पूजा करते थे।

बढ़ई लोग आठ पुरुष देवताओं की और एक देवी की पूजा करते थे। ये सबके सब लकड़ी की गढ़ाई के व्यवसाय में अलग-अलग विशेषीकरणों के प्रतीक थे। मछियारों का एक बड़ा देवता था और कई छोटे-छोटे देवता थे, जिनका सम्बन्ध मछियारों के काम के विभिन्न पहलुओं से था। सब विशेष व्यापारियों और व्यवसायों में यही सिद्धान्त लागू होता था। यदि कोई व्यक्ति इन देवताओं की एक पूरी सूची बना ले, तो उसके पास हवाई द्वीप के समाज में श्रम-विभाजन की, जो बहुत ही जटिल व्यवस्था थी, एक रूपरेखा तैयार हो जायेगी।

अपने निजी पूजा घर में प्रत्येक सामान्य नागरिक अपनी निजी पूजा-मूर्तियाँ रखता था। उसका विश्वास था कि ये मूर्तियाँ उसके देवताओं के

ग्रासन हैं, या ये कम से कम ऐसे संवेदनशील विन्दु हैं, जिनके द्वारा उसकी प्रार्थनाएँ ग्राकाश में स्थित देवताग्रों के निवासस्थान तक प्रेषित की जा सकती हैं। वह उनकी पूजा निजी तौर पर एकान्त में, जोर-जोर से बोलकर प्रार्थना करते हुए ग्रौर ग्रन्न बलि देकर करता था। कुलीन लोग ग्रौर राजा मन्दिरों में पूजा करते थे। वहाँ उनकी ग्रोर से प्रार्थनाएं पुरोहित लोग करते थे। पुरोहित लोग ही सार्वजनिक धार्मिक कृत्यों को भी, जिसमें राजप्रासाद के निकट पवित्र ग्रहाते में पवित्र वेदी पर नर-बलि देना भी सम्मिलित था, किया करते थे। मंदिर ग्रौर राजमहल का सामीप्य उस द्वीप-समाज में व्यवस्था वनाये रखने के लिए शासन ग्रौर कर्मकाण्ड (धर्म) की युगल शक्तियों का प्रतीक था।

नव-पाषाणिक पुरोहित, जैसा कि हवाई द्वीपों के सोपान-तन्त्र के उदाहरण से स्पष्ट है, शिकारी संस्कृति के सीधे-सादे शामनों से बहुत दूर पहुँच चुके थे। वे चार महान् देवताग्रों की सेवा के लिए विशेषित होते थे ग्रौर इन चार प्रभागों में से प्रत्येक के ग्रन्दर कुछ लोग प्रार्थना करने के विशेषज्ञ होते थे ग्रौर कुछ लोग वलि देने के, जबकि कुछ ग्रन्य लोग भविष्यवक्ताग्रों के रूप में ऊँचे बाँसों पर बने हुए, वल्कल से ढके ग्रासनों पर बैठकर देवताग्रों की इच्छा सूचित किया करते थे। एक ग्रौर श्रेणी के विशेष पुरोहित (कथावाचक) कुछ विशेष ग्रवसरों पर लम्बी-लम्बी ग्रौर जटिल गाथाग्रों का पाठ किया करते थे, जिनमें ग्रपने पूर्वजों का वर्णन सृष्टि के प्राचीन दिनों से शुरू किया जाता था। इस प्रकार की गाथाग्रों से वही प्रयोजन पूरा होता था, जो साक्षर संस्कृतियों में धर्मग्रन्थों द्वारा, देवताग्रों के कृत्यों, ग्रारम्भिक राजाग्रों के कृत्यों ग्रौर उन पुरोहितों के कृत्यों के वर्णनों द्वारा पूरा होता है, जिन्होंने बहुत पहले लोगों को पूजा करना सिखलाया था।

राजा का बड़ा विशेषाधिकार, ग्रौर वस्तुतः उसके प्राधिकार का प्रमुख वाहन उसका एकान्त का ग्रधिकार था। उसका शरीर इतना प्रतापी माना जाता था कि यदि वह कभी ग्रपने महल से बाहर निकले, तो सब सामान्य लोगों को भूमि पर लेटकर साष्टाँग प्रणाम करना चाहिए, ग्रन्यथा वे तुरन्त मर जाएँगे। कोई व्यक्ति राजा से ऊँची जगह पर नहीं बैठ सकता था ग्रौर उसकी उपस्थिति में केवल विशिष्ट लोग ही भोजन कर सकते थे। सामान्यतया

विक्षोभ को बचाने के लिए राजा केवल रात में ही बाहर निकलता था और राज-सभा भी रात में ही लगा करती थी। शुरू में राज-सभा 'कुकुई' की गिरी की बत्तियों के प्रकाश में लगती थी; उसके बाद जब शाम का भोजन हो चुकता था, तब राज सभा नारियल के तेल के प्रदीपों के प्रकाश में, और अन्त में मशालों के प्रकाश में प्रभात होने तक लगा करती थी। इस एकान्त के अधिकार ने वर्जन (टैबू) जारी करने की प्रथा का रूप ले लिया। यह वर्जन (टैबू) शब्द हमारी सामान्य भाषा में भी आ गया है।

जब राजा किसी वस्तु का, वस्तुओं की किसी श्रेणी का, काल की किसी अवधि का, या किसी क्रिया, या क्रियाओं की किसी श्रेणी का वर्जन कर देता था, तो उसका अर्थ यह होता था कि उसके सिवाय और कोई व्यक्ति उस वस्तु को अपने पास नहीं रख सकता, या उस क्रिया को नहीं कर सकता, या उस निर्धारित कालावधि में सब गतिविधियाँ स्थगित रहेंगी। वर्जन के भंग या उल्लंघन का दण्ड मृत्यु था। यह ठीक है कि वर्जन का उल्लंघन करने का काम राजा के रक्षकों के हाथ में होता था, किन्तु लोग वर्जन की अमोघता में इतना अधिक विश्वास रखते थे कि भय अपना दण्ड स्वयं ही देता था। इसी प्रतीक के कारण राजा का अपना स्वास्थ्य भी सर्वदा घोर संकट में रहता था कि कहीं कोई प्रजाजन वर्जन का उल्लंघन न कर दे; और उसकी प्रत्येक बीमारी और अस्वास्थ्य की दशा में दोषी लोगों की निरन्तर खोज की जाती थी, जिससे नर-बलि के लिए आसानी से शिकार प्राप्त हो जाते थे। परन्तु यह अपेक्षाकृत एक सदय मृत्यु होती थी, क्योंकि इस प्रकार मरने वाले व्यक्ति को अपने भविष्य की पहले से कोई चेतावनी नहीं मिलती थी, अपितु उसे एकाएक पीछे से आकर सिर पर गदा मारकर बेहोश कर दिया जाता था।

सब कुछ मिलाकर पोलीनेशियन संस्कृति, जिसका कि उदाहरण हवाई संस्कृति थी, अपने समृद्ध उष्ण कटिबन्धीय परिवेश के उपयुक्त थी। बढ़िया परिष्कृत पत्थर के औज़ारों के कारण, अनेक प्रकार के खेती किये जाने वाले पौधों के कारण, माँस के लिए पाले जाने वाले तीन पशुओं के कारण, दूर तक पानी में जाने वाले जहाज़ों के कारण, और मछलियों के प्राचुर्य के कारण हवाई द्वीप के लोग भली भाँति जीवन-यापन कर सकते थे और अपनी संख्या

बढ़ाते जा सकते थे । ऐसे प्रदेश में जहाँ भोजन प्राप्त करने के लिए बहुत थोड़े परिश्रम की आवश्यकता होती थी, विशेषीकरण के अत्यधिक विकास के कारण न केवल सब कोई व्यस्त रहते थे, अपितु उच्च कोटि की कला भी विकसित हो पाई थी । राष्ट्रीय संकट के समय वर्जन प्रणाली, जो साधारण समय में बड़ी बोझल और अनावश्यक प्रतीत होती होगी, व्यवस्था बनाये रखती थी और आतंक नहीं फैलने देती थी । यदि किसी तूफान के कारण थोड़े-से नारियल के पेड़ों के सिवाय बाकी सब नारियल के पेड़ नष्ट हो गए हों, तो राजा यह निश्चय कर सकता था कि किन लोगों को भोजन मिलेगा और कौन लोग बिना भोजन के मरेंगे । यदि किसी अन्य द्वीप से योद्धा लोग आक्रमण करते, तो राजा अपने आदमियों को कठोर अनुशासन में रखकर अपने लाल और पीले पंखों से बने लबादे को पहनकर उनका नेतृत्व करता था । वर्जन प्रणाली उन सब संकट कालों में, जिनकी कि पोलीनेशियावासी भविष्य में आने की कल्पना कर सकते थे, व्यवस्था बनाये रखने का काम करती थी । जब श्वेतजातीय लोग चौकोर पालों वाले बड़े-बड़े जहाज़ों में चढ़ कर तोपें और बन्दूकें लिये हुए आये, तब पोलीनेशियाई व्यवस्था उसी प्रकार टूट गई, जैसे कि यदि उड़न-तश्तरियाँ वास्तविक होतीं, तो हमारी व्यवस्था भी टूट सकती थी । कप्तान कुक के समय पोलीनेशियाई संस्कृति जिस प्रकार कार्य कर रही थी, उसके विशद आधुनिक वर्णनों से हमें यह पता चलता है कि नव-पाषाणिक सभ्यता कितनी कुछ समृद्ध हो चुकी थी ।

पश्चिमी नव-पाषाणिक संस्कृति अतलांतक में बची हुई है ।[1]

जैसे नव-पाषाणिक संस्कृति का पूर्वीय रूप प्रशान्त महासगर के द्वीपों में उनकी खोज होने तक बचा रहता था, ठीक उसी प्रकार पश्चिमी नव-पाषाणिक रूप, जिससे कि हमारी अपनी सभ्यता निकली है, अतलांतक के दूरस्थ देशों में बचा रहा । यह स्थान कैनेरी द्वीप समूह के सात द्वीप थे, जो स्पेनी पश्चिमी अफ्रीका के रियो डि ओरो उपनिवेश के समुद्र तट के पास

---

[1] देखिये ई० ए० हूटन, 'ऐंशियेंट इनहैबिटैण्ट्स ऑफ दि कैनेरी आइलैंड्स', हार्वर्ड ऐफ्रिकन स्टडीज़, खण्ड 7, कैम्ब्रिज, मैसा०, 1925 ।

तूफानी समुद्र में अलग-थलग पड़े हुए हैं। इन द्वीपों के निवासी, जिन्हें स्पेन-वासियों ने पन्द्रहवीं शताब्दी में परास्त किया था, 'बर्बर' लोग थे, जो मोरक्को और अल्जीरिया के रिफ़ियन, श्लूह और कबाइली लोगों के सम्बन्धी हैं। ये रिफ़ियन, श्लूह और कबायली स्वयं रोमन काल तक नव-पाषाणिक किसान रहे थे। किसी समय उनके मुख्य भूमि (महाद्वीप) पर रहने वाले पूर्वजों ने अवश्य ही नौकाएँ बनाई होंगी, क्योंकि अन्यथा वे स्वयं अपने पशुओं को ले कर इन पहाड़ी द्वीपों के सीधे खड़े समुद्र तटों पर न पहुँच पाते। जब इन लोगों का पता चला, उस समय उनके पास किसी प्रकार के जहाज़ न थे और न द्वीपों में परस्पर सम्पर्क स्थापित करने का ही कोई उपाय था। इसका कारण यह था कि इन द्वीपों में इस प्रकार का कोई पत्थर नहीं मिलता, जो परिष्कृत पत्थर के कुठार बनाने के उपयुक्त हो। पुरातत्ववेत्ताओं को वहाँ जो थोड़े-से कुठार मिले हैं, वे बाहर से लाये गए पत्थर के बने हैं और सम्भाव्यतः वे उस काल के हैं, जबकि यहाँ के निवासी पहले पहल इन द्वीपों में पहुँचे थे। कुठारों के अभाव के कारण उनका बढ़ईगीरी का काम तो बहुत सीमित हो गया था, किन्तु इससे उनकी विशद सामाजिक संगठन की क्षमता कम नहीं हुई थी, क्योंकि उनके पास अब भी नव-पाषाणिक खाद्यों के पौधे और पशु थे।

यद्यपि हर द्वीप में अलग-अलग चीज़ों की खेती होती थी, परन्तु सामान्यतया ये लोग गेहूँ, जौ और सेम, लोबिया आदि फलियाँ, और साथ ही अंजीर भी उगाते थे। उनके पालतू पशु कुत्ता, भेड़, बकरी और सूअर थे। पालतू बड़े पशुओं के अभाव से यह पता चलता है कि वे अन्न की खेती खुरपे और फावड़े द्वारा करते थे, हल द्वारा नहीं। वे अपने सींगों वाले पशुओं का दूध निकालते थे और उससे पनीर बनाते थे।

इन सभी द्वीपों के रहने वाले लोग मिट्टी अपरिष्कृत बर्तन बनाते थे, परन्तु सबसे बड़े द्वीप 'ग्रान कैनेरिया' पर रहने वाले लोग रंगों द्वारा चित्रित बर्तन बनाने तक प्रगति कर चुके थे। इस प्रकार के बर्तन अफ्रीका की मुख्य भूमि पर रहने वाले 'बर्बर' लोग अब बनाते हैं। कपड़ा बुनने की कला या तो उन तक पहुँची ही नहीं थी या बाद में त्याग दी गई थी। उनके वस्त्र रगड़ कर साफ की गई बकरियों की खालों से बने हुए होते थे, जिन्हें अंशतः किसी

लाल वानस्पतिक वस्तु से रंग लिया जाता था। जिन सुइयों से वे अपने लबादों को सीते थे, वे हड्डियों की बनी होती थीं, जैसे कि उनके अन्य कई उपकरण भी हड्डियों से ही बने होते थे। मकानों के लिए वे बिना खिड़की वाले, इकमंज़िले मकान गारे का प्रयोग किये बिना पत्थरों को एक-दूसरे के ऊपर रखकर बना लेते थे। एक घर, जो कि राजा का होता था, अन्दर की ओर लकड़ी के तख्तों से पटा हुआ होता था। कुल्हाड़ियों के अभाव को देखते हुए यह एक बहुत ही विलास की वस्तु थी।

अपेक्षाकृत छोटे द्वीपों में जीवन जटिलतारहित था और सामाजिक संरचना सीधी सादी थी। यह बात आजकल भी महासागर में बिखरे हुए छोटे द्वीपों के, जैसे ऐज़ोर्स में कोरवो द्वीप और दक्षिणी अतलान्तक में ट्राइस्टन डा कुन्हा, विषय में सत्य है। यहाँ की जीवन प्रणाली द्वीपीय और साथ-साथ नव-पाषाणिक थी। परन्तु अपेक्षाकृत बड़े द्वीपों में विशेष रूप से ग्रान कैनेरिया और टैनेरिफ़ में, भूतल इतना काफी विशाल था और वर्षा इतनी काफी होती थी कि वहाँ कई हज़ार लोगों का निर्वाह हो सकता था। वहाँ स्थान एक दूसरे से इतनी काफी दूर थे और पहाड़ इतने सीधे खड़े थे कि वे गाँव, जिनके निवासियों के पास परिवहन का एकमात्र साधन उनके अपने पैर ही थे, एक-दूसरे से पृथक् पड़ जाते थे। इन दूरियों के प्रभाव को कम करने में दो पटुतापूर्ण उपायों ने सहायता दी। वे लोग पर्वतीय जलधाराओं और चरागाहों को बाँसों के सहारे छलाँग लगा कर पार करते थे और उन्होंने दूर-दूर स्थित पहाड़ियों के बीच सन्देश प्रेषण के लिए सीटी बजाने की एक भाषा तैयार कर ली थी। इस प्रकार का प्रत्येक द्वीप गाँवों में विभक्त होता था और इन गाँवों के समूहों से मिलकर अलग-अलग राज्य बने होते थे। अलग-अलग द्वीपों में और अलग-अलग समयों में इन राज्यों की संख्या कम-अधिक होती रहती थी, किन्तु कभी भी एक द्वीप में दो से कम राज्य नहीं होते थे।

प्रत्येक राज्य में दो सामाजिक वर्ग होते थे : एक तो जनसाधारण और दूसरे कुलीन लोग। साधारण लोग, जो छोटे-छोटे बाल रखते थे, खेत जोतते थे, पशु पालते थे, उन्हें दुहते थे, और पनीर बनाते थे। कुलीन लोगों को कोई भी ऐसा कार्य करने की अनुमति नहीं थी, जो आर्थिक दृष्टि से उपयोगी हों; उनका काम प्रशासन और सैन्य सम्बन्धी था। यद्यपि उनके औज़ार बहुत

ही अपरिष्कृत थे, फिर भी वे बहुत बढ़िया भाले बनाते थे। इन भालों की अगली नोकें दाँतेदार होती थीं, जिससे वे घाव के अन्दर घुसकर टूट जावें। वे ढालें भी बनाते थे और चोट से बचाव के लिए होमर द्वारा वर्णित देवताओं की भाँति अपने भुजाग्र पर पशुओं का चमड़ा भी लपेटते थे। गोफिया या गुलेल से पत्थर फेंकने में वे बहुत ही प्रवीण थे। यद्यपि उनके पास केवल ये ही हथियार थे, फिर भी वे अनेक वर्षों तक स्पेन-वासियों को अपने द्वीपों में आने से रोकने में सफल हुए। कुलीन लोगों को काम करने से छुट्टी मिल जाने के कारण उन्हें सैन्य अभ्यास के लिए, और विशेष रूप से सैन्य संगठन और अनुशासन के लिए, समय मिल जाता था। यह बात ध्यान देने योग्य है कि इस नव-पाषाणिक समुदाय (बिरादरी) में श्रम का विभाजन मुख्यतया पुरुषों और स्त्रियों के मध्य नहीं था, जैसा कि मलनेशिया के बागबानी करने वालों और उत्तरी अमेरिका के आदिवासियों में था, अपितु यह श्रम विभाजन दोनों लिंगों के कुलीन लोगों और दोनों लिंगों के जनसाधारण के मध्य था। सब पुरुष योद्धा नहीं होते थे, अपितु केवल कुलीन पुरुष योद्धा होते थे। राजा स्वयं कुलीन समूह का शिरोमणि था। वह युद्ध और शान्तिकाल में उनका नेता होता था, किन्तु वह कोई भी काम अपने कुलीन लोगों की परिषद् के साथ पूरे परामर्श के बाद ही कर सकता था। यह कुलीन परिषद् इस कार्य के लिए एक विशेष स्थान पर बुलाई जाती थी। राजा का एक खास विशेषाधिकार यह था कि वह जहाँ कहीं भी जाता, वहाँ वह अपने आतिथेय (मेज़बान) की पत्नी के साथ शयन कर सकता था और इस प्रकार जो बच्चे उत्पन्न होते थे, वे बड़े होने पर कुलीन बना दिये जाते थे, किन्तु शर्त यह थी कि इस बीच में वे ठीक ढंग से व्यवहार करते रहे हों।

ग्रान कैनेरिया में दो राजा थे, जिनमें से प्रत्येक पूर्णतया स्वतन्त्र था; किन्तु वे दोनों एक धार्मिक नेता की न्यायाधिकरण सम्बन्धी उच्चता को स्वीकार करते थे, जो अपने परम्परा के ज्ञान द्वारा, अपनी अलौकिक गति-विधियों द्वारा, या इन दोनों के ही द्वारा प्रशासनिक मामलों की वैधता की स्वीकृति देता था। पहाड़ियों के शिखरों पर देवस्थान बने हुए थे, जहाँ लोग आपत्ति के समय अपने पूर्वजों की आत्माओं के लिए दूध और मक्खन की बलि

देने जाते थे; और एक विशेष सफेद इमारत के अन्दर पुरोहितानियों का एक दल रहता था। वे सफेद बकरी की खाल के लबादे पहनती थी और एक मठ-स्वामिनी उन पर शासन करती थी। यह इमारत एक अभय-स्थान थी। कोई भी व्यक्ति शत्रु से बचकर भागता हुआ वहाँ शरण ले सकता था और किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि वहाँ उसे हानि पहुँचा सके। संकट के समय, जैसे कि सूखा पड़ने पर, ये पुरोहितानियाँ लोगों के एक जलूस का नेतृत्व करती हुई समुद्र तट पर स्थित कुछ चट्टानों के पास जाती थीं। वहाँ वे बलियाँ चढ़ाती थीं और छड़ियों से लहरों को पीटती थीं और विलाप करती थीं। इस द्वीप में एक विशेष मन्दिर भी था, जिसमें दो प्रतिमाएँ, एक पुरुष और एक स्त्री की, थीं और इनके अलावा कुछ पवित्र शिलाएँ भी थीं, जहाँ तीर्थयात्री लोग जाते थे।

इस सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं हो सकता कि आधारभूत सिद्धान्तों की दृष्टि से कैनरी द्वीपों के लोगों की सामाजिक सरंचना में मध्यपूर्व और यूरोप का नव-पाषाणिक जीवन प्रतिबिम्बित था; यही वह सांस्कृतिक आधार था, जिससे कांस्य युग की सभ्यता और फलतः हमारी अपनी आधुनिक संस्कृति विकसित हुई। अनाजों के संस्कार और पशु पालन के साथ-साथ मिश्रित खेती के कारण पुरुषों और स्त्रियों, दोनों के लिए सन्तुलित कार्य बना रहता था। और इतना काफी अन्न बच रहता था कि जिससे उन विशिष्ट लोगों का निर्वाह हो सके, जिनका मुख्य व्यवसाय उद्योग विद्या न होकर मानवीय सम्बन्ध थे। शासन, क़ानून और कर्मकांड के विशेषज्ञ, जो राजनीतिक और धार्मिक संस्थाओं के अध्यक्ष होते थे, संकट काल में अपने क्रियाकलापों द्वारा समाज को आन्तरिक रूप में संगठित बनाये रखते थे, जबकि विशिष्ट लोगों का समूह सैन्य शक्ति के रूप में कार्य करता था और अन्तर्राष्ट्रीय उपद्रवों की रोकथाम करता था। तीर्थयात्रियों के देवस्थान, धार्मिक महिलाओं के मठ, शकुनस्थान और शरण-मन्दिर वे कर्मकांडीय प्रपंच हैं, जो हमें इस नव-पाषाणिक संस्कृति से निकली हुई सभ्यताओं के इतिहास में मध्य पूर्व में, यूरोप में, चीन में और भारत में बारम्बार दिखाई पड़ेंगे। बहुत बार जो यह कहा जाता है कि हमारे पूर्वज एक ऐसे आरम्भिक कृषि काल में से गुज़रे थे, जिसमें स्त्रियों का शासन होता था और उत्तराधिकार स्त्रियों का होता था और जिसमें एक उर्वरता

की सर्वोच्च देवी की पूजा हुआ करती थी, इसका ज्ञात तथ्यों या तार्किक निगमनों से बिलकुल ही समर्थन नहीं होता। सांस्कृतिक क्रम-विकास की वह धारा, जो हमारी आधुनिक पश्चिमी सभ्यता में आकर परिणत हुई है, एक ऐसे रास्ते पर बहती रही है, जिसमें कि स्त्रियों और पुरुषों के बीच सम्बन्ध शिकार के दिनों से लेकर वर्तमान समय तक एक जैसे ही बने रहे हैं।

नव-पाषाणिक युग में यौन भाव और जादू

सामाजिक सिद्धान्त-निर्माताओं द्वारा सामान्यतया व्यक्त किया गया एक अन्य विश्वास यह है कि जब नव-पाषाणिक किसानों को एक बार पौधों और पशुओं के प्रजनन की प्रक्रिया में यौन भाव के महत्त्व का पता चल गया, तब उन्होंने प्रकृति को उसके पुनरूत्पादन के कार्य में सहायता देने के लिए इन्द्रिय लोलुपतायुक्त कर्मकांडों का आविष्कार किया। उदाहरण के लिए, हमें पता है कि न्यूगिनी में नव-पाषाणिक किसानों की यह आदत थी कि वे कृषि उत्सव के रूप में अपने बगीचों में सम्भोग किया करते थे। पहली दृष्टि में यह प्रतीत होगा कि वे पौधों की उर्वरता में वृद्धि करने के लिए मानवीय उर्वरता को जाग्रत कर रहे होते थे; परन्तु यह व्याख्या आधुनिक चिन्तन पर आधारित है और नव-पाषाणिक मनोवृति की उपज नहीं है। इस प्रथा को समझने के लिए एक संक्षिप्त-सी समीक्षा करना आवश्यक है।

शिकारियों के लिए, जो पशुओं को मार कर अपना जीवन निर्वाह करते हैं, कार्य के प्रति उनकी मनोवृत्ति में यौन-भाव का कोई वास्ता नहीं होता। केवल उन दिनों, जबकि स्त्रियों को मासिक धर्म होता है या वे सन्तान को जन्म देती हैं, उन्हें पुरुषों के संसर्ग से अलग रखा जाना चाहिए। ये ऐसी विषम परिस्थितियाँ हैं, जिनमें भोजन अर्जन करने वाले व्यक्ति को नहीं उलझाया जाना चाहिए, क्योंकि जहाँ तक सम्भव हो, उसे विक्षुब्ध नहीं किया जाना चाहिए। परन्तु बागवानी करने वाले लोगों में, जिनकी स्त्रियाँ ही खेती का अधिकांश काम करती हैं, पुरुषों के पास करने को बहुत कम काम होता है। विशेष ऋतुओं में शिकार के लिए की गई वन-यात्राएँ इन लोगों को व्यस्त रखती हैं और उनके लिए संगठन का एक ढांचा भी बनाये रखती हैं, क्योंकि इतने बड़े शिकार के लिए, जो कि कई सप्ताह तक चलता रहेगा, कोई एक

नेता अवश्य होना चाहिए, जो अनुशासन बनाये रख सके। कभी-कभी शिकार के बजाय वे लोग अपने पड़ौसियों के यहाँ से मुंड या खोपड़ियाँ लाने के लिए लड़ाई भी शुरू कर सकते हैं। इस लड़ाई के लिए शिकार की अपेक्षा भी अधिक अनुशासन की आवश्यकता होती है और इसमें आनन्द भी कहीं अधिक आता है। शिकार और युद्ध, इन दोनों से ही पुरुषों को अपनी स्त्रियों की अपेक्षा कुछ बड़प्पन की अनुभूति होती है। इस अनुभूति की आवश्यकता उन्हें इसलिए होती है कि खाद्य सामग्री के उत्पादन में स्त्रियों का योगदान कहीं अधिक होता है, जो इस अनुभूति से सन्तुलित हो जाता है।

इस प्रकार की साहसिक यात्रा की तैयार के लिए पुरुष लोग कठोरतापूर्वक स्त्रियों के संसर्ग से अलग रहते हैं। वे ब्रह्मचारी रहकर आगे वाले कार्यों के लिए अभ्यास करते हैं; जैसे सिपाही लोग कवायद करते हैं और बन्दूकों से निशाना लगाने का अभ्यास करते हैं। क्योंकि इस कार्य के लिए पूर्ण एकाग्रता और साथ ही एक बड़प्पन की भावना की भी आवश्यकता होती है, इसलिए स्त्रियों की ओर ध्यान देना न केवल चित्तविक्षेपकारक होगा, अपितु दुर्भाग्य भी होगा। जब पुरुष अपने शिकार को या अपने शत्रुओं को मार चुकते हैं, तब वे रंगीन लेप करके, पंखों से सजधज कर और शिकार का मांस या शत्रुओं के सिर लेकर वापस लौटते हैं। उस समय स्त्रियाँ उनसे खूब प्रभावित होती हैं और समूह बनाकर बड़े उत्साह के साथ उनके स्वागत के लिए आती हैं और विजेता योद्धाओं को परम्परागत रीति से किये जाने वाले आत्म समर्पण के साथ यौन गतिविधियाँ फिर शुरू हो जाती हैं।

ऐसे अवसरों पर जो इन्द्रिय-लोलुपताएँ चलती हैं, वे उनकी अपेक्षा कोई अधिक प्रचंड या अविवेकपूर्ण नहीं होतीं, जो कि आदिमकालीन आहार संचयक कई गिरोहों के उस पुर्नमिलन के अवसर पर हुआ करती हैं जबकि वे वर्ष में एक बार साथ मिलकर अपने समारोह मनाने के लिए उस अवसर पर एक सहभोज में एकत्र होते हैं, जबकि उन्हें प्रकृति की ओर से कोई अस्थायी प्रचुर उपहार, जैसे कि जंगली कैक्टस की फसल या कहीं उथले पानी में फंसी हुई ह्वेल मछली, प्राप्त हो जाय। शिकारियों और किसानों में यौन-भाव के प्रति उनकी मनोवृत्ति का अन्तर सीधे सादे तौर पर यह है : शिकारी लोग देखते हैं कि शिकार को मारना सबसे आसान तब होता है, जबकि पशु यौन

भावना से भरे होते हैं और यही वर्ष का वह समय होता है, जबकि पशुओं के मांस और चर्म सर्वोत्तम अवस्था में होते हैं। अंडेमान द्वीपों में हार्पूनों से कछुओं का शिकार करने वाले शिकारी तब बहुत प्रसन्न होते हैं, जब वे देखते हैं कि उनके गोलाकार शिकार (कछुए) मैथुन करने लगे हैं। यही कारण है कि शिकारियों के जादू में ऐसे उपाय बरते जाते हैं, जिनसे पशुओं में यह यौन भावना उत्पन्न हो जाय, ताकि उन पशुओं की चेतावनी देने वाली इन्द्रियाँ जड़ हो जाएँ और इस प्रकार वे आसानी से मारे जा सकें। यदि शिकारी यौन संसर्ग से दूर रहता भी है, तो वह केवल इसलिए कि जिससे वह अपने शिकार की अपेक्षा अधिक सचेत रह सके। जिस समय शिकार किए जाने वाले पशुओं की इन्द्रियाँ जड़ हों, उस समय शिकारी को चुस्त और निर्द्वन्द्व रहना चाहिए। क्योंकि यौन-सम्भोग और प्रजनन के मध्य सम्बन्ध स्पष्ट दिखाई नहीं पड़ता, इसलिए शिकारी लोग सन्तानोत्पादन के विषय में चिन्ता नहीं करते। सब मादा पशु किसी न किसी प्रकार बच्चे देती ही हैं; इसका शिकारी के लिए महत्त्व नहीं है। सब स्त्रियों का विवाह होता है; अधिकांश स्त्रियों का कभी न कभी कई पुरुषों से सम्बन्ध होता है और सामान्यतया स्त्रियों के बच्चे होते हैं। बच्चे का पिता उस स्त्री का पति होता है, जो उस बच्चे को जन्म देती और पालती है। संसार के कुछ अधिकतम आदिवासी लोगों को आधुनिक काल में भी यौन-भाव और प्रजनन के मध्य कार्य-करण से आधारभूत सम्बन्ध का ज्ञान नहीं हालाँकि कुछ मानव-वैज्ञानिक इस बात को मानने को तैयार नहीं हैं। ध्यान देने योग्य बात यह है कि जहाँ ये लोग, जिनके विषय में हम चर्चा कर रहे हैं, इस विषय को हृदयंगम कर पाने लायक मेघावी हैं भी, वहाँ भी वे इस बात को कोई महत्त्व नहीं देते।

उस किसान की दृष्टि में, जो अपनी पत्नी के बगीचे की उपज से जीवन निर्वाह करता है, यौन-भाव और कृषि में कोई विषमता नहीं दिखाई पड़ती। सच तो यह है कि स्त्रियाँ बगीचों में काम करती हैं, स्त्रियाँ यौन प्राणी हैं और इसलिए सम्भोग और कृषि दोनों समान हैं और परस्पर सम्बद्ध हैं। आप स्त्रियों के साथ जो सबसे महत्त्वपूर्ण काम करते हैं, उससे बगीचा पनपता है। आदिमकालीन किसानों के जादू की यह व्याख्या इस विचार की अपेक्षा कहीं अधिक तर्कसंगत है कि वे पौधों के यौन जीवन को समझते थे, या अपने यौन

जीवन के विषय में ही उन्हें बहुत काफ़ी ज्ञान था। परन्तु जो किसान रेवड़ में रहने वाले पशुओं को पालता है और जो उनकी अधिकांश नर सन्तानों को दूध की प्राप्ति का ध्यान रखते हुए मार डालता है, वह यौन भावना को कहीं अधिक भली प्रकार समझता है, क्योंकि पशुओं और मनुष्यों के व्यवहार की तुलना बहुत ही स्पष्ट है और उसमें उसका हस्तक्षेप सुनिश्चित रूप से उपयोगी है। कृषि सम्बन्धी उत्सवों में, जैसे कि प्राचीन यूनानी लोगों के उत्सव हुआ करते थे, जिनमें यौन भावना भी सम्मिलित रहती है, बकरियों के सींगों, फटे हुए खुरों और पूँछों का प्रतीकों के रूप में उपयोग करके पशु जगत् को बहुत महत्त्व दिया जाता है।

अधिकांश मानवीय समाजों में इस बात को सुनिश्चित करने के लिए यन्त्रजात विद्यमान हैं कि लगभग हर किसी की यौन तृप्ति हो जाय। हमारा समाज, या वह समाज, जिसमें से कि हम अब ऊपर उठ रहे हैं, इस दृष्टि से असाधारण है कि इसमें अनेक व्यक्ति हताश और विफल रहते हैं। यही कारण है कि हम अपनी चिन्ताएँ उन अन्य व्यक्तियों के जीवनों पर थोपने लगते हैं, जिनके लिए यौन भावना एक सामान्य वस्तु है और इसलिए कोई चिन्ता या परेशानी की वस्तु नहीं है। उनके लिए यह इस समस्या की अपेक्षा, कि अगले समय के लिए भोजन कैसे प्राप्त हो, कहीं कम महत्त्वपूर्ण है।

आदिमकालीन पशु पालक की मुख्य चिन्ता अपने पशुओं के यौन-जीवन की नहीं, अपितु उनकी समुचित देख-भाल, सुरक्षा और स्वास्थ्य की होती है, क्योंकि साधारण परिस्थितियों में पशु अपने यौन-जीवन को स्वयं ही उसी प्रकार पूरा कर लेंगे, जैसे पशु पालक स्वयं करता है। यह बात सब यूरोपवासी लोगों की सामान्य लोकवार्ताओं में, और हमारी अपनी सुपरिचित बच्चों की कविताओं में प्रतिबिम्बित होती है। "यह छोटा-सा सूअर बाज़ार गया, यह छोटा-सा सूअर घर पर रह गया"; "छोटे बच्चे ब्लू आओ, अपनी तुरही बजाओ, भेड़ चरागाह में है और गाय खेत में।" बाड़े में रहने वाले पशु और रेवड़ में रहने वाले वे पशु, जो बाड़ों में रखे जाते हैं या सर्दियों में गुफ़ाओं में शरण लेते हैं, अस्वाभाविक भीड़-भाड़ और अस्वच्छता की दशाओं में रहते हैं। उन पर संक्रामक रोगों के आक्रमण आसानी से हो सकते हैं। इन रोगों से लोग बहुत डरते हैं। सच्चे कारण का पता न होने की वजह से

नव-पाषाणिक पशुपालक, जैसा कि उनके पैन्सीलवेनियावासी डच किसान वंशज आज भी करते हैं, इन रोगों की व्याख्या के लिए भूत-प्रेत इत्यादि के अलौकिक जगत् की ओर उन्मुख होते हैं। किसी दुष्ट आत्मा ने उसके रेवड़ पर टोना कर दिया है। कोई पिशाच गुपचुप उसकी सूखती हुई गौओं की शिराओं में से जीवन रक्त चूसे जा रहा है।

वह दुष्ट आत्मा कौन है? सम्भाव्यतः यह कोई ऐसा व्यक्ति होता है, जिसकी उपस्थिति ही उस समुदाय में विसमतुलन का कारण होती है। शायद यह कोई खूसट विधवा है, जो लोगों के दान पर जीती है और जब वह पीठ झुकाए रास्ते पर धीरे-धीरे चलती है, तो अपने दन्तहीन मुख से कुछ न कुछ बोलती रहती है। शायद वह दुष्टात्मा वह मुँहफट आदमी है, जो गाँव के परले सिरे पर रहता है और जिसने अपने लोग और दुष्ट स्वभाव के कारण हर किसी को परेशान किया हुआ है। कुछ दिन पहले उसे खून की उल्टी करते देखा गया था। अवश्य वही इन गौओं का खून चूस रहा है। उसे मार डालो। उस बुढ़िया को मार दो।

किसी जादूगर को पैसे देकर यह काम सौंप दो कि वह अपनी असाधारण सामग्रियों द्वारा, कपड़ों के चीथड़ों से या उस दुष्टात्मा के बालों से एक अमोघ तावीज़ तैयार करे। इस तावीज़ को उस दुष्टात्मा के बिस्तर के नीचे सरका दो। यह उसे जकड़ देगा; या गायों के गले में रीछ के नाखूनों की चमकीली मालाएँ लटका दो; ये नाखून उस दुष्टात्मा को खरोंच डालेंगे। जादू, जादू, जादू! यह चिकित्सा नहीं कर सकता, यह स्वस्थ नहीं कर सकता, किन्तु यह गृहपति की मानसिक शान्ति को अवश्य वापस ला सकता है। यह बिरादरी को उन व्यक्तियों से मुक्ति पाने के लिए एक बहाना अवश्य प्रदान कर सकता है, जो अपने साथी ग्रामीणों को परेशान करते हैं; यद्यपि वे ग्रामीण ठीक-ठीक यह नहीं बता सकते कि वे लोग उन्हें क्यों परेशान करते हैं—उन्होंने मानव-विज्ञान का अध्ययन नहीं किया। जब जादूगरनी मार दी जाती है, या पिशाच को छाती में भाला मार कर समाप्त कर दिया जाता है, तब वह समाज अपनी परेशानियों का सामना फिर नए उत्साह से कर सकता है।

जब धातु के युगों में नगर बनने लगे, तब गाँव पिछड़ गए और वस्तुतः

बिलकुल अपरिवर्तित रहे। विभिन्न प्रकार के समुदायों के मध्य हुए नए श्रम-विभाजन का ग्रामीणों की दैनिक गतिविधियों पर या ग्रामीणों के पारस्परिक सम्बन्धों पर ऐसा कोई परिवर्तनकारी प्रभाव न हुआ, जिससे उनकी विचार पद्धति पर ऐसा कोई असर पड़ता। अधिकांश संसार में आज भी नव-पाषाणिक मनोवृत्ति बनी हुई है। यह काल के तट पर एक सामाजिक सीलाकैन्थ है और भूमण्डलीय शान्ति और एकता में एक बाधा है।

6

सूर्य की शक्ति

जाति की रोक

आज जब हम इतिहास की चौथी प्रावस्था की देहरी पर खड़े हैं, तब मानव स्पीशिज़ के सामने, जो दूसरी प्रावस्था में मिलकर एक बन गई थी, कई आशंकाएँ हैं, जिनके पीछे विरक्ति का एक ही स्रोत विद्यमान है, और वह है सांस्कृतिक व्यवधान, जिसका कि उदाहरण अब तक नव-पाषाणिक शैली के गाँवों का और नव-पाषाणिक मनोवृत्ति का बचे रहना है। कुछ लोग ऊर्जा के उपभोग की दृष्टि से, तकनीकी कौशल, सामाजिक जटिलता, राजनीतिक शक्ति की दृष्टि से और इस विश्व की प्रकृति को, जिसमें मानवीय प्रकृति भी सम्मिलित है, समझने की दृष्टि से अन्य लोगों की अपेक्षा बहुत तेज़ी ले आगे बढ़ गए हैं।

अब क्योंकि संचार के भूमण्डलीय साधनों के फलस्वरूप दूरस्थ घाटियों और दूरस्थ द्वीपों में फूस के मकानों में रहने वाले लोगों ने भी हौलीवुड के चमत्कारों और आधुनिक शिक्षा के लाभों को देख लिया है, इसलिए संसार के तथा-कथित दीन-हीन लोग तब तक चैन से नहीं बैठेंगे, जब तक कि वे भी परमाणुयुगीन जीवन के रहन-सहन में हिस्सा न लेने लगें। एशिया और अफ्रीका में सामाजिक विद्रोह शुरू हो भी चुका है। इन महाद्वीपों के लोग सुव्यवस्थित ढंग से साँस्कृतिक संक्रमण कर लें, यह बात हमारी अपनी सुरक्षा की दृष्टि से हमारे हित में है। अत्यधिक जनसंख्या को केवल तभी कम किया जा सकता

है और महामारियों को केवल तभी नियंत्रित किया जा सकता है, जबकि संसार के सब राष्ट्रों के लोग हमारे अपनी संस्कृति के स्तर को घटाए बिना आधुनिक संस्कृति के सन्तोषजनक स्तर तक पहुँच जाएँ। इस प्रकार की एक घटौती, मितव्यय, प्रगति का यन्त्रजात उतना नहीं, जितना कि जीवित बचे रहने का यन्त्रजात है।

यदि सारे संसार के जीवन के स्तर को शान्तिपूर्वक ऊपर उठाया जाना है, तो हमें उन कई संवेगात्मक रोकों पर विजय प्राप्त करनी होगी, जो किसी समय हमारे एक अत्यन्त प्राचीन पूर्वज की पूंछ की भांति उपयोगी थीं, किन्तु अब उपयोगी नहीं रही हैं। इन रोकों में से सबसे बड़ी रोक जाति की है। यह भाषा और धर्म से भी बड़ी रोक है, क्योंकि कोई भी मनुष्य नई भाषा सीख सकता है, या अपना धर्म बदल सकता है, किन्तु वह अपनी त्वचा का रंग नहीं बदल सकता।

किसी एक जाति का सदस्य होने में उससे अधिक लज्जा की बात कोई नहीं है, जितनी लज्जा की बात पुरुष या स्त्री होने में, बच्चा या वयस्क होने में है, क्योंकि किसी भी व्यक्ति की जाति, लिंग या आयु उसके अपने बस में नहीं होती। किसी एक जाति की औसत मानसिक क्षमता किसी अन्य जाति की अपेक्षा अधिक है या नहीं, यह जानना मनोरंजक हो सकता है, किन्तु अब उसके विषय में कुछ भी कर पाना कठिन है, क्योंकि सब मानवीय उप स्पीशिज़ों के अपने अलग स्वतन्त्र राष्ट्र हैं। प्रत्येक जाति में मेधावी, औसत और मन्द बुद्धि, सब प्रकार के लोग हैं, जिनमें से कोई भी दो व्यक्ति ठीक एक जैसे नहीं हैं। अभी हमें ऐसे समाज का पता चलाना शेष है, जिसमें व्यक्तियों की समूची श्रेणियों के साथ इस आधार पर भेद-भाव किया जाता हो कि वे बुद्धि की परखों में उत्तीर्ण होने में असमर्थ हैं। यदि इस प्रकार का कोई समाज होता, और वहाँ की जनसंख्या में कई जातियों के लोग होते, तो प्रत्येक श्रेणी में जातियों की दृष्टि से अदल-बदल हुआ करती।

जातीय भेद-भाव उस काल का अवशेष है, जिसमें यह एक उद्देश्य को पूरा करता था; जब जाति के आधार पर श्रम के विभाजन के फलस्वरूप एक विशेष प्रकार की भौतिक और सामाजिक दक्षता बनी रहती थी। अब यह प्रयोजन शेष नहीं रहा है। इसलिए जाति एक बेहूदगी बन गई है। यह केवल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तभी समाप्त हो सकती है, जब हम लोगों को वह बात समझा दें। इस अध्याय को लिखने का यही प्रयोजन है।

मैंने इस अध्याय को पुस्तक के बीच में, नव-पाषाणिक काल और कांस्य युग-विषयक अध्यायों के बीच में रखा है, क्योंकि 3000 ई० पू० तक, जो लिखित इतिहास के आरम्भ का काल है, संसार की अधिकांश जातियाँ अपने अस्तित्व में आ चुकी थीं। जो जातियाँ उसके बाद भी बननी थीं, जैसे कि पोलीनेशियाई जाति (यदि वे वस्तुतः अलग जाति हों तो भी), वे केवल पुरानी जातियों का सम्मिश्रण मात्र हैं। अपने अध्ययन काल को इतिहास के प्रभात काल से जब-जब भी वह संसार के प्रत्येक भाग में उपस्थित हुआ, शुरू करने की एक सीमा बनाकर चलने में हमें यह सुविधा रहेगी कि यह अध्ययन ऐतिहासिक और तकनीकी दृष्टि से सरल रहेगा। उस समय अमेरिका में मूलवासी लोग बसे हुए थे और तब तक अफ्रीकावासियों को जहाज़ों में लाद-लाद कर या मरुस्थलों के पार पैदल चलाकर शीतलतर जलवायु में अन्य जातियों के लोगों की सेवा करने के लिए और अपने मालिकों के साथ मिश्रण के लिए नहीं ले जाया गया था। आस्ट्रेलिया उस समय तक भी बूमरैंग (फेंकने पर वापस लौट आने वाला एक अस्त्र) और कंगारू का देश था।

इतिहास का प्रभातकाल वर्तमान काल की अपेक्षा अधिक सरल तो था ही, साथ ही वह उससे पहले के कालों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट रूप में अभिलिखित भी था; उससे पहले के कालों के विषय में हमारा ज्ञान पूर्णतया पुरातत्वीय अभिलेखों या सांस्कृतिक अवशेषों पर ही आधारित हैं। इस बिन्दु से आगे हमें तत्कालीन मूल लेखों के, जो पत्थर, मिट्टी, पैपाइरस या खालों पर लिखे या खोदे गए थे, अपेक्षाकृत अधिक पूर्ण, किन्तु अपेक्षाकृत कम वस्तुनिष्ठ (ऑब्जैक्टिव) प्रमाण उपलब्ध होते हैं, जिनके द्वारा चकमक, परिष्कृत पत्थरों और ठीकरों के मूक साक्ष्य का अनुपूरण हो जाता है। जाति की दृष्टि से और भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अब हमें प्राचीन मिश्र, मैसोपोटामिया, भारत, चीन और अन्य प्रदेशों की कलाकृतियों में मानव प्राणियों के शरीरों और चेहरों का सही-सही अंकन प्राप्त हो जाता है। इनमें से अनेक चित्र रंगीन हैं। ये बहुत कुछ आजकल के जीवित व्यक्तियों जैसे ही दिखाई पड़ते हैं।

लिखित इतिहास के आरम्भ के बाद से मनुष्य की जातियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, क्योंकि और आगे परिवर्तनों की आवश्यकता नहीं थी। उस काल तक संसार के सभी वास-योग्य प्रदेशों में मनुष्य कुछ समय तक रह चुके थे। प्रत्येक स्थान में इतनी काफ़ी पीढ़ियाँ बीत चुकी थीं, जिससे परिवर्तन और वरण की उन जैव शक्तियों को अपना काम करने के लिए सामग्री मिल जाय, जो क्रम-विकासात्मक परिवर्तन की एकमात्र प्रमाणित यन्त्रजात हैं। पृथ्वी के स्थल भाग के दूरस्थ कोनों में स्थानीय छोटे-छोटे जन-समुदायों के अत्यधिक शीतल या अत्यधिक उष्ण प्रदेशों में अलग-थलग पड़ जाने के कारण इस क्रम-विकास की गति तीव्र हो गई मानी जाती है। इस प्रकार जातीय विभेदन केवल संयोगवश ही नहीं हो गया, अपितु एक प्राकृतिक घोर प्रोक्रूस्टीज़ी[1] प्रक्रिया के द्वारा हुआ है, जिसमें परिस्थितियों ने मनुष्य को गर्मी या सर्दी, शुष्कता या आर्द्रता के, और जिस भूभाग में वह रहता था, उसमें प्रकाश या छाया के अनुकूल ढाला है।

स्वभावत: इतिहास के प्रभातकाल में कांस्य युग के लेखक और कलाकार संसार के अपेक्षाकृत कम भागों में ही जा सके होंगे, परन्तु पृथ्वी के दूर-दूर स्थित भागों में सांस्कृतिक व्यवधान इतना अधिक रहा है कि उस समय जो जातियाँ विद्यमान थीं, उनमें से यदि सब नहीं, तो बहुत-सी वैज्ञानिक माप तौल और फोटोग्राफी के आधुनिक काल तक भी बची रह गई हैं। कुछ थोड़े-से, जातीय दृष्टि से विशिष्ट लोग जैसे कि तस्मानियावासी थे, कुछ बड़े सूक्ष्म से मिश्रण के सिवाय विलुप्त हो चुके हैं। कुछ अन्य लोग, जैसे कि अण्डेमानवासी और फुएगोवासी, लगभग समाप्त हो चुके हैं।

मानव इतिहास की शिकारी अवस्था के ये बचे हुए लोग युरोपवासी और एशियाई लोगों के साथ सम्पर्क में आने के बाद दो कारणों से शीघ्र ही मर कर समाप्त हो जाते हैं। उनमें प्राय: हमारे रोगों के विरुद्ध प्रतिरोध की क्षमता नहीं होती। सन् 1925 में खसरे के कारण अधिकांश 'ओना' लोग मर

---

[1] प्रोक्रूस्टीज़ एक डाकू था। वह जिन लोगों को पकड़ लेता था, उन्हें एक खाट पर लिटाता था। यदि उनकी टांगें लम्बी हों, तो काट कर और छोटी हों, तो खींच कर उन्हें खाट के बराबर कर देता था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गए । इसके अलावा जो लोग भीड़-भाड़ में रहने के आदी नहीं हैं, वे संकोच और आत्म संयम के थोप दिए जाने के लिए, एकान्त छिन जाने के लिए और एक अत्यधिक संगठित समाज में जीवन यापन के लिए आनुवंशिक दृष्टि से तैयार नहीं किये गए हैं । अन्य अनेक पशुओं की भाँति मनुष्य को भी हज़ारों पीढ़ियों में इस प्रकार की क्षमता के लिए तैयार किया गया है । आजकल जो लोग सबसे अधिक संख्या में पाये जाते हैं, वे वही हैं, जिनके पूर्वजों का वरण भीड़-भाड़ को सहने और संगठन के लिए अत्यधिक कठोरतापूर्वक किया गया था ।

मानव-वैज्ञानिकों के लिए मानवता की ये झालरें (अन्तिम छोर), मरुस्थलों में फैले हुए और दक्षिण महासागर के द्वीपों में फँसे हुए कुछ हज़ार शिकारी, उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं, जितने कि चीन, भारत और यूरोप में रहने वाले करोड़ों व्यक्ति । ये उस काल के बचे हुए लोग शारीरिक दृष्टि से एक-दूसरे से इतने भिन्न हैं कि उनके शरीर हमारे सामने यह बात स्पष्ट कर देते हैं कि जब मनुष्य के पास प्राकृतिक शक्तियों से अपनी रक्षा करने के लिए और कुछ थोड़ी-सी पशुओं की खालों के सिवाय और कुछ भी नहीं था, उस समय वह कितना सुघट्य था । इस प्रकार वे मनुष्य के विभिन्न जातियों में विभक्त हो जाने की समस्या को हल करने में भौतिक मानव-वैज्ञानिकों की सहायता करते हैं ।

वैज्ञानिक क्रिया-विधि और जातीय शाखाएँ

इस समस्या का समाधान करने के लिए यह आवश्यक है कि वैज्ञानिक क्रियाविधि का कठोरतापूर्वक पालन किया जाय; और इस क्रियाविधि की माँग यह है कि किसी प्रपंच की व्याख्या करने से पहले उसका ठीक-ठीक वर्णन कर लिया जाना चाहिए । यह बात जाति पर भी उतनी ही पक्के तौर पर लागू होती है, जितना कि संघनित दशा में विद्यमान भाप के फैलाव पर । वर्णन के अन्तर्गत परिवर्तनों (हेर-फेर) का अध्ययन भी आता है, और यदि ये परिवर्तन नियमित रूप से होते हों, तो उनके वर्गीकरण की आवश्यकता होती है । मनुष्य के मामले में आकार, आकृति और त्वचा के रंग जैसे लक्षणों में हुए परिवर्तन विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि मनुष्य अन्य सब प्राणियों की अपेक्षा

अधिक परिवर्तनशील है। जीवित प्राणियों के सम्पूर्ण सोपान-क्रम में ज्यों-ज्यों जटिलता बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों परिवर्तनशीलता भी बढ़ती जाती है। विषाणु और एक कोशिका वाले प्राणी अप्राणिज रासायनिक समासों की अपेक्षा कुछ ही अधिक परिवर्तनशील होते हैं और आन्तरगुही प्राणियों (सैलैण्ट्रेट) में, जैसे मूंगों और जैलीफिशों में और कीड़ों (वर्म) में एक प्राणी बहुत कुछ दूसरे जैसा ही होता है। मनुष्यों में कोई भी व्यक्ति बिलकुल एक जैसे नहीं होते, और उनके शरीर की रसायन और व्यक्तित्व में अन्तर कम से कम उतने तो होते ही हैं, जितने कि उनके दृश्य शरीर-रचनात्मक प्रत्यंगों में होते हैं।

हालाँकि इस सबसे अधिक परिवर्तनशील प्राणी का वर्गीकरण करने के लिए भौतिक मानव-वैज्ञानिक किसी एक पद्धति के विषय में सहमत नहीं हो सके हैं, फिर भी अब वे वनस्पतिशास्त्र और प्राणिविज्ञान के विस्तृततर क्षेत्रों में अत्यधिक प्रयुक्त होने वाली एक धारणा को इस कार्य के लिए अपनाना शुरू कर रहे हैं; यह धारणा रैसेंक्रीस[1] कहलाती है, जिसका अनुवाद 'जातीय समुदाय' शब्द द्वारा किया जा सकता है, उदाहरण के लिए फुदकी (टिटमाउस) चिड़िया को लीजिये। इस चिड़िया को उपनगरों या देहात में रहने वाले सभी लोग भली भाँति जानते हैं। 'पुरानी दुनिया' में फुदकी एक विशेष स्पीशिज़ (पैरस मेजर) इंग्लैण्ड से लेकर चीन तक एक अविच्छिन्न चली गई पट्टी में निवास करती है। यद्यपि इंग्लैण्ड में रहने वाली सब फुदकियाँ ठीक एक जैसी नहीं होतीं, फिर भी चिड़ियों का कोई भी सामान्य जानकार इंग्लैण्ड की फुदकी और चीनी फुदकी को अलग-अलग पहचान सकता है। यदि किसी खगवैज्ञानिक के सामने इन चिड़ियाओं में से किसी एक का शरीर रख दिया जाय, तो वह काफी सीमा तक यह ठीक-ठीक बतला सकता है कि वह चिड़िया इंग्लैण्ड और चीन के बीच किस स्थान से पकड़ी गई है।

---

[1] देखिये बर्टहोल्ड रैंस्च, 'सम प्रोब्लम्स ऑफ जियोग्रैफिकल वैरियेशन एण्ड स्पीशिज़ फार्मेशन' लिनियन सोसाइटी, लन्दन के सन् 1937 में हुए 149वें अधिवेशन की कार्यवाही, पृष्ठ 275-85, और अन्स्र्ट मेयर, 'सिस्टेमैटिक्स एण्ड दि ओरिजिन ऑफ स्पीशिज़', कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क 1941।

इस समय हम फुदकी चिड़िया की स्पीशिज के सम्बन्ध में विचार कर रहे हैं, वह एक जातीय समुदाय है, जिसके सब सदस्य सामान्यतया एक जैसे होते हैं; परन्तु उन सदस्यों में आकार, आकृति और रंग जैसे विशेष लक्षणों में हुए क्रमिक परिवर्तनों का सूत्र इसी पक्षी की भौगोलिक अभिसीमा के एक छोर से दूसरे छोर तक खोजा जा सकता है। यदि इस बीच के सारे प्रदेश समतल होते और वर्षा, तापमान और प्रकाश की उज्वलता में परिवर्तन बहुत ही शनैः-शनैः और क्रमिक होते, तब इन पक्षियों के आकार, आकृति और क्रमिक परिवर्तन की ही आशा की जा सकती थी। परन्तु इसकी अभिसीमा पर्वतों और समुद्रों को पार करती है और वनों और घास के मैदानों में से एकाएक संक्रमण करती हुई गुज़रती है, जिसके कारण फुदकी चिड़िया का प्रदेश अनेक अलग-अलग प्रान्तों में विभक्त हो जाता है। इनमें से प्रत्येक प्रान्त में फुदकी चिड़िया दृश्य रूप से और जातीय रूप से अपने साथ लगे हुए खग-प्रान्त में रहने वाली चिड़ियों से भिन्न होती है, क्योंकि इन रोकों को लाँघकर इन पक्षियों का परस्पर समागम अपने ही प्रान्त में रहने वाले पक्षियों के साथ समागम की अपेक्षा बहुत कम बार हो पाता है।

कहीं-कहीं एक जातीय समुदाय का प्रदेश अविच्छिन्न नहीं होता, विशेष रूप से, तब, जबकि उस प्रदेश के कुछ भाग द्वीप भी हों। उन पक्षियों, स्तनपायी पशुओं और जीवन के उन अन्य रूपों के लिए, जो हवा में उड़ जाते हैं या बहकर समुद्र में पहुँच जाते हैं और जो सब ओर से घिरे हुए किसी समुद्र तीर पर जाकर बचे रह जाते हैं, पीछे छूट गए अपने सजातीयों के साथ समागम करने का अवसर बहुत कम रहता है, या बिलकुल ही नहीं रहता। यदि उस नए प्रदेश का जलवायु, मिट्टी और भूभाग उनके लिए बिलकुल नए हों, तो उन प्राणियों में परिवर्तन बहुत तेज़ी से होते हैं, क्योंकि उसका दूसरा विकल्प यही होता है कि वे प्राणी लुप्त हो जाएँ। यही कारण है कि प्राकृतिक अनुसन्धानकर्ताओं को द्वीपों पर बहुत-सी नई या अनोखी स्पीशिजें मिलती हैं; इन द्वीपों में विभेदन की प्रक्रियाएँ जातियों की सीमाओं को लांघ सकती हैं।

क्योंकि मनुष्य न तो बहुत दूर तक तैर सकता है और न उड़ सकता है, इसलिए वह नव-पाषाणिक काल से पहले इस प्रकार के अलग-थलग पड़े हुए स्थानों तक पहुँचने में असमर्थ था और उसके बाद से संस्कृति ने स्पीशिज़ों के

विभेदन को अनावश्यक बना दिया है। ऐतिहासिक कालों में मानव-जन समुदाय केवल अपवाद स्वरूप ही अन्य समुदायों से पूर्णतया पृथक् रहे हैं और वह भी केवल थोड़ी-सी पीढ़ियों के लिए। मनुष्यों में स्पीशिज़ों के निर्माण का काल इससे बहुत पहले रहा था, जबकि जातीय विभेदन में गर्म कपड़ों, बर्फ़ पर चलने के जूतों, स्लेज गाड़ियों, नावों और उन साधनों के आविष्कार से सहायता मिली, जिनके कारण वह इतिहास की दूसरी प्रावस्था में अत्यधिक शीतल जलवायु वाले प्रदेशों में जाने में समर्थ हुआ। तब से मनुष्य एक ऐसा मानव जातीय समुदाय बन गया है, जो सारे भूमंडल में फैला हुआ है; इस समुदाय में ही अत्यधिक शीतल या उष्ण जलवायु वाले भौगोलिक प्रान्तों में बड़ी-बड़ी जातियाँ (रेस) विकसित हुई हैं और उनके बीच वाले प्रान्तों में उनके मध्यवर्ती रूप विकसित हुए हैं। दो उपस्पीशिज़ों, अफ्रीका के नीग्रो और आस्ट्रेलियाई लोगों, में पूरे बड़े कद के और बौने--पिग्मी और नैग्रिटो—दोनों ही प्रकार के लोग सम्मिलित हैं, जिनका क्रम-विकास स्वतन्त्र रूप से हुआ है।

जाति के प्रति जनसाधारण की मनोवृत्तियाँ

उस खग-वैज्ञानिक के लिए, जिसकी कि रुचि विशेष रूप से फुदकी चिड़ियाओं में या सामान्य रूप से सभी पक्षियों में हो, जनता की ओर से कोई विशेष परेशानी नहीं है, क्योंकि चिड़ियाओं को इस विषय में कुछ कहना नहीं होता कि उनका अध्ययन किया जाय या नहीं। परन्तु भौतिक मानव-वैज्ञानिक जब अपने कार्य क्षेत्र में काम करने जाता है, तो उसे सब प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है; क्योंकि जब भी कभी वह किसी मानव प्राणी का नाम लेना चाहता है, तभी उसे यह बतलाना पड़ता है कि वह नाप किस लिए लेना चाहता है और उसे उस व्यक्ति की सहमति प्राप्त करनी होती है, जिसका कि नाप लिया जाना होता है। अनेक देशों में उसे पहले सरकार को यह विश्वास दिलाना पड़ता है कि उसके इरादे पवित्र हैं और केवल वस्तु निष्ठ हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों में जाति का उपयोग राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में किया गया था और उससे भी पहले औपनिवेशिक क्षेत्रों में उन देशों के मूल निवासियों को रंग की दृष्टि से हीनता अनुभव करनी पड़ी थी। इसलिए कोई

आश्चर्य नहीं कि इन मामलों में मनाना-समझाना कई बार कठिन होता है।

अमेरिका और यूरोप में जब जाति-भेद अप्रिय हुआ, उससे भी पहले, और जब संसार के अधिकांश काले या पीले रंग वाले लोगों को राजनीतिक स्वतन्त्रता दी गई, और इस प्रकार यह चुनने का अधिकार दिया गया कि वे अपने शरीर की मानव-विज्ञान की दृष्टि से नाप जोख करने दें या नहीं, उससे भी पहले इस क्षेत्र में काम करने वाले लोगों को एक और प्रकार की रोकों का सामना करना पड़ता था। संसार के अनेक अपेक्षाकृत कम शिक्षित लोगों का यह विश्वास था कि उनकी त्वचा के साथ चमकीले, धातु के औज़ारों के स्पर्श से किसी न किसी रूप में उसकी आत्मा को क्षति पहुँचेगी और यह कि कैमरा एक शैतानी आँख है, जो उनकी आत्माओं को जाल में फंसाने और उन्हें दास बनाने के लिए आविष्कृत की गई है। रुधिर समूह के विश्लेषण के लिए खून निकालना सामान्य तौर से खून निकालने की श्रेणी में आ पड़ता है और इसके कारण रक्त पर आधारित भ्रातृभाव की समूची विचारधारा और संसर्गज जादू द्वारा क्षति का भय और मासिक धर्म के साथ समानता पर आधारित कर्म-कांडीय निन्दा का भय जाग्रत हो उठता है।

कभी-कभी जादू सहायक भी बन जाता है, परन्तु बहुधा नहीं। एक बार सर्दियों में एक दिन मैं उत्तरी अल्बानिया के एक छोटे-से पहाड़ी गाँव में 'बैरक्तार' अर्थात् कबीले के मुखिया, के घर के आगे अपनी मेज़ लगाकर बैठा था और मेरी पत्नी पास ही एक बड़े से सन्दूक पर बैठी थी। उसने अपने सामने नाप-जोख लिखने के खाली कागज़ और पैन्सिलों का ढेर रखा हुआ था। वह जल्दी-जल्दी उन संख्याओं और वर्णात्मक शब्दों को लिखने का यत्न कर रही थी, जिन्हें मैं जल्दी-जल्दी बोल रहा था। सर्दी के मारे उसकी अंगुलियाँ ठिठुर रही थीं। उसने कहा : "ज़रा धीमी चाल से बोलिये; मेरे हाथ अकड़े जा रहे हैं।" मैंने उसकी सुविधा के लिए अपनी बोलने की चाल को कुछ धीमा कर दिया और कुछ थोड़े-से व्यक्तियों के नाप लेते समय मैंने यही धीमी चाल रखी। मैंने देखा कि लोग अपने नाप देने के लिए मेरे सामने कतार बनाकर खड़े होते जा रहे हैं, तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। उन लोगों के नाप लेते-लेते मैंने बीच में अपने दुभाषिये से पूछा कि इन लोगों के रुख में परिवर्तन का उसे क्या कारण लगता है? उसने उतर दिया : "बात यह है कि अब आप पहले

की अपेक्षा धीमे बोल रहे हैं; इसलिए ये लोग समझते हैं कि आप प्रार्थना कर रहे हैं। ये सबके सब आपका आशीर्वाद प्राप्त करना चाहते हैं।"

जब अस्थि-कंकालों को एकत्रित करने का प्रश्न आता है, तब धर्म पुरोहितों के साथ इस प्रकार की प्रतियोगिता की ऐसी कोई गुंजाइश नहीं रहती। सचाई तो यह है कि जहाँ कहीं भी खुदाइयाँ होती थीं, वहाँ सब प्रकार के लोग स्थानीय रिवाज के अनुसार यह देखने के लिए बार-बार आते रहते थे। कि उनके आदरणीय मृतकों के साथ कोई छेड़छाड़ न की जाय। एक से अधिक बार मैंने सिर उठाकर देखा तो यह पाया कि लम्बी दाढ़ी वाले और पगड़ियाँ बाँधे हुए मुल्ला लोग हमारी खाई के किनारे पर बैठे होते थे और ज़मीन में से जो भी कोई हड्डी निकलती थी, उसी के विषय में वे यह पूछते थे : "क्या यह आदमी की है ?" केवल मुल्ला लोग ही मृतकों की हड्डियाँ उखाड़ने पर ऐतराज करते हों, यह बात नहीं है। एक बार कौड अन्तरीप के एक कस्बे में एक भौतिक मानव-वैज्ञानिक को कुछ अमेरिकन मूलवासियों के अस्थिकंकाल जमीन में से निकालने के अपराध में जेल में डाल दिया गया था। ये अस्थि-कंकाल एक पुर्तगाली किसान के खेत के बीच में बने एक टीले के नीचे से मिले थे। वह किसान इस टीले को खोदकर भूमि को खेती के लिए समतल कर लेना चाहता था। उस मानव-वैज्ञानिक को जेल इसलिए नहीं भेजा गया कि उसने मूलवासी लोगों की हड्डियाँ खोदकर निकाली थीं, अपितु इसलिए, कि यह कहा गया, कि ये खास मूलवासी वे थे, जो धर्म परिवर्तन करके ईसाई बनाए जा चुके थे।

जब तथ्य प्राप्त किए जा चुकते हैं, उसके बाद उनके प्रकाशन के समय और भी कठिनाइयों का सामना करना होता है। कई धार्मिक सम्प्रदायों के रूढ़िवादी अनुयायी अब तक भी ग़लती से यह मानते हैं कि पूर्णतया विकसित हो चुके मनुष्यों में जाति का अध्ययन किसी-न-किसी रूप में विकासवाद से सम्बन्धित है और वे सामान्य सिद्धान्त के रूप में विकासवाद के विरोधी हैं। यद्यपि उनकी आपत्तियाँ अब धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही हैं, फिर भी अभी वे इतनी दुर्बल नहीं हुई कि उनकी उपेक्षा की जा सके : इससे भी अधिक गम्भीर उन लोगों की गतिविधियाँ हैं, जो विद्या के क्षेत्र से मिथ्या भावुकता को हटाने वाले और ज्ञान से कम वास्ता रखने वाले लोग हैं और जो स्वयं

CC-0. Agamnigam Digital Preseyation Foundation, Chandigarh

मानव-विज्ञान के क्षेत्र में ही काम करते हैं। कुछ ऐसे लेखक, जो अधिकांशतः सामाजिक मानव-वैज्ञानिक हैं, अपने विचारों को मनुष्य मात्र के भ्रातृत्व की धारणा पर आधारित करके यह मानते हैं कि जाति का अध्ययन करना अनैतिक है और वे जाति को एक 'मिथ्या कल्पना' के रूप में प्रदर्शित करते हुए ग्रन्थ पर ग्रन्थ लिखे जाते हैं। उनका तर्क यह है कि क्योंकि एक बार जाति के अध्ययन के कारण जातीय फासिस्ट लोगों को ऐसी सामग्री मिल गई, जिसका उन्होंने दुरूपयोग किया, इसलिए हमें ऐसा दिखावा करना चाहिए कि जैसे जातियों का कोई अस्तित्व ही नहीं है। उनकी इस जाति-विषयक सुशीलता की तुलना केवल, यौन भावना के सम्बन्ध में विक्टोरिया-कालीन अति सुशीलता के प्रति उनकी घृणा से ही की जा सकती है। ये लेखक भौतिक मानव-वैज्ञानिक नहीं हैं; किन्तु जनता इस अन्तर को नहीं जानती।

उनके ठीक उल्टे सिरे पर जनन-विद्यावेत्ता लोग हैं, जो इस बात के लिए उत्सुक हैं कि जाति का अध्ययन किया जाय और उन्होंने हमें सब कुछ बहुमूल्य धारणाएँ और तकनीकें भी प्रदान की हैं। त्वचा-वैज्ञानिकों के साथ मिलकर उन्होंने यह सिद्ध किया है कि कोई भी जाति इस अर्थ में 'विशुद्ध' नहीं है कि प्रजनन समुदाय के रूप में साथ रहने वाले प्राणियों या व्यक्तियों का कोई भी समूह सब आनुवंशिक लक्षणों की दृष्टि से सजातीय या एकधर्मी नहीं है। यहाँ तक कि फिनलैण्ड में भी, जहाँ अधिकांश लोग पिंगलकेशी होते हैं, कुछ लोगों के बाल भूरे होते हैं। अब तक अध्ययन किये गए लगभग प्रत्येक जन-समुदाय में, अमेरिकन मूलवासियों के कुछ थोड़े-से समूहों को छोड़कर, एक से अधिक रुधिर समूह पाये जाते हैं। किसी भी जाति को अपनी विशेषता के द्योतक लक्षण उसके प्रत्येक ज्ञात प्रत्यंग (फीचर)—समूह का एक निश्चित अनुपात होते हैं। मरुस्थल में रहने वाले सब अरब लोगों की नाकें पतली नहीं होतीं, परन्तु उनमें से अधिकांश लोगों की नाकें पतली होती हैं, और पतली नाक विशेषतासूचक लक्षणों में से एक है।

जनन-वैज्ञानिक, जो फलों की मक्खियों और देसी मकई जैसी तेज़ी से प्रजनन करने वाली और आसानी से अध्ययन की जाने वाली स्पीशिजों को लेकर कार्य करते हैं, सामान्यतया अपने नमूनों का तब तक जातियों में वर्गीकरण नहीं करते, जब तक कि वे प्रत्येक क्रोमोसोम के समूचे ज़ीन-सम्बन्धी

नमूने की रूपरेखा तैयार नहीं कर लेते। स्पष्ट कारणों से, मनुष्य के सम्बन्ध में ऐसा कर पाना असम्भव है। यदि हमें उस समय तक प्रतीक्षा करनी हो, जबकि त्वचा के रंग, आँखों के रंग, बालों की बनावट और बालों की मात्रा इत्यादि के, जनन विज्ञान का उतना ही भली भाँति पता चल जायेगा, जितना कि रुधिर समूहों और हैमोफीलिया की आनुवंशिकता का पता चल चुका है, तो हम आगामी अनेक दशाब्दियों तक भी जाति के विषय में कुछ कहने की स्थिति में नहीं होंगे; और ये तो परिवर्तनशील मानवीय लक्षणों में से थोड़े-से ही उदाहरण के तौर पर बताये गए हैं।

हमें केवल इस कारण प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है कि किसी विशेष गुण की आनुवंशिकता का निर्धारण करने से पहले उसका वर्णन होना चाहिए और उसके परिवर्तनों की भौगोलिक दृष्टि से रूपरेखा तैयार कर ली जानी चाहिए। जो प्राणिवैज्ञानिक पक्षियों और स्तनपायी पशुओं की जाति का अध्ययन करता है. उसका सम्बन्ध प्रयोगशाला सम्बन्धी जनन-विज्ञान से, जिसका कि प्रबन्ध वह शायद ही कभी कर सकता है, अपेक्षाकृत कम रहता है; उसका सम्बन्ध आकार, आकृति और रंगों में हुए परिवर्तनों से अधिक रहता है, जिनमें से यदि सबका नहीं, तो अनेक का कारण परिवेशात्मक अनुकूलन को ठहराया जा सकता है। उसे मालूम है कि वे परिवर्तन चाहे अनुकूलनात्मक हों चाहे न हों, वे सब के सब आनुवंशिक हैं, भले ही वह उनके संक्रमण के ठीक-ठीक मार्ग की खोज शायद ही कभी कर सके। उसे यह भी मालूम है कि कुछ विशेष गुण, जैसे कि मनुष्यों में पाये जाने वाले रुधिर समूह, इस ढंग से आनुवंशिक होते हैं कि उनमें कोई उपान्त (हाशिया) नहीं रहता। इन मामलों में उपान्त रेखा पर स्थित कोई मामले नहीं होते। जो कुछ आपको दिखाई पड़ता है, वह बिलकुल ठीक-ठीक जीनों की क्रिया के अनुसार सुनिश्चित हुआ है। इसका एक और उदाहरण दाँतों की आकृति है। दाँत भले ही घिस जाएँ, टूट जाएँ, या उनमें घाव हो जाएँ, किन्तु जब एक बार वे बन चुकते हैं. उसके बाद वे बढ़ कभी नहीं सकते।

अन्य विशेष लक्षणों पर इतना पक्का नियन्त्रण नहीं होता। किसी भी मनुष्य का कद जीन सम्बन्धी अनेक कारणों पर निर्भर रहता है और उस पर पोषण का भी प्रभाव पड़ सकता है। किसी स्त्री की त्वचा इस कारण से श्वेत

या गहरी भूरी हो सकती है कि वह कितना समय समुद्र तट पर या सूर्य-प्रदीप के नीचे बिताती है। उसे आनुवंशिक रूप में जो वस्तु मिली है, वह उसकी त्वचा की यह क्षमता है कि उसके जीवन काल की एक निश्चित अवधि में, यदि वह आवृत रहे, तो उसका एक विशिष्ट रंग रहेगा; और उस त्वचा में यह भी क्षमता है कि उस पर सूर्य की शक्ति की इस रूप में प्रतिक्रिया होगी कि उसका रंग बदल जाएगा। नीग्रो लोगों की त्वचा में इस पिछली क्षमता का अभाव होता है और इसी प्रकार का यह अभाव वर्णहीन (ऐल्बिनो) लोगों की त्वचा में भी होता है। इनमें से पहला सूर्य के प्रकाश में रहे बिना ही काला होता है और दूसरा सूर्य की धूप में रहने पर भी काला नहीं हो सकता। अमेरिकी मूलवासी या अरब लोगों में त्वचा के सम्भावित रंगों की विस्तृततम अभिसीमा पाई जाती है। त्वचा के सभी रंग उनके शरीर के विभिन्न अंगों में देखे जा सकते हैं और ये रंग इस बात पर निर्भर रहते हैं कि वे अंग कितनी देर अनावृत रहे हैं, और जिस प्रदेश में यह व्यक्ति रहता है, वहाँ सूर्य की किरणों की तीव्रता कितनी है। फिर भी यह कहना होगा कि नीग्रो और अरब, दोनों के ही त्वचाओं के रंग आनुवंशिक हैं, किन्तु वे उस यन्त्रजात की अपेक्षा, जिसके द्वारा उनके दाँतों की आकृतियों का नियन्त्रण होता है, कुछ अधिक चक्करदार ढंग से आनुवंशिक हैं।

जाति के सम्बन्ध में मेरा विचार यह है कि सबके सब विशेष लक्षण आनुवंशिक होते हैं और वे सब एक जैसे ही रोचक होते हैं।[1] अन्तर केवल इतना है कि उनमें से कुछ का सूत्र खोजना अन्यों की अपेक्षा अधिक सरल होता है। क्योंकि जाति की प्रमुख और दृश्य कसौटियाँ अनुकूलनात्मक विशेष लक्षण हैं, इसलिए हमें यह मानना चाहिए कि मानव जाति का अलग-अलग जातियों में विभाजन अतीत के विभिन्न कालों में विभिन्न परिवेशों के प्रति उसके अनुकूलन की कुल उपज है। यह बात कुछ विचित्र नहीं है कि विभिन्न जातियों के सदस्य एक-दूसरे से इतने भिन्न दिखाई पड़ें जितना कि छोटी

---

[1] जातियों के निर्माण का नियन्त्रण करने वाली शक्तियों के विस्तृत विवेचन के लिए श्री सी० ऐस० कून की पुस्तक 'दि औरिजिन ऑफ़ रेसिज़' देखिये। प्रकाशक हैं अल्फ्रैड ए० क्नौफ, न्यूयार्क, 1962।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

टांगों वाला ऐस्किमो लम्बी टाँगों वाले किसी वात्सुई सामन्त से भिन्न दिखाई पड़ता है। मनुष्य के सबसे पुराने पालतू साथी, कुत्ते, को छोड़कर अन्य कोई पशु इतने अधिक परिवेशों में रहने में समर्थ नहीं हुआ; और वह कुत्ता भी केवल अपने स्वामी की सहायता से ही इतने विभिन्न प्रकार के परिवेशों में रह पाने में सफल हुआ है। कुत्ते के सिवाय अन्य कोई पशु मनुष्य जितना परिवर्तनशील भी नहीं है।

मनुष्य की पाँच भौगोलिक अभिसीमाएँ

मानव-जाति के बड़े-बड़े जातीय प्रभेदों ने, जैसे कि वे इतिहास के प्रभात काल में (अनुकूलात्मक विचारधारा के अनुसार) दिखाई पड़ते थे पाँच बड़ी-बड़ी भौगोलिक अभिसीमाओं पर क़ब्जा कर लिया था; उनमें से प्रत्येक प्रभेद एक जातीय समुदाय बन गया प्रतीत होता है। इस कथन में यह अर्थ निहित नहीं है कि मनुष्य एक से अधिक स्पीशिज़ है। परन्तु वह इतना अधिक संख्यक और इतना दूर-दूर तक फैला हुआ है कि उसके सम्बन्ध में अन्य अधिकांश प्राणियों की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म भेद किये जा सकते हैं। इस बात का, कि मनुष्य केवल एक ही स्पीशीज़ है, प्रमाण यह है कि सब उपशाखाएँ अपनी सीमाओं पर आकर अपनी पड़ौसी उपशाखाओं में घुल-मिल जाती हैं।

उस समय, जिसका कि हमें सर्व प्रथम ठीक-ठीक ज्ञान है, अफ़्रीका में भूमध्यरेखा के आर-पार काली त्वचा वाले लोगों का एक जनसमुदाय रहता था, जिसमें अधिकांश लोगों के बाल घुँघराले थे। मानव-वैज्ञानिकों से इतर लोग, जिन्हें वैज्ञानिक प्रमाणों की कोई चिन्ता नहीं होती, आपको बताएंगे कि इन लोगों को भी हँसने की देन प्राप्त थी; उनमें लय की सूक्ष्म अनुभूति और नृत्य के प्रति अनुराग था। इनसे मिलते-जुलते, किन्तु सम्भाव्यत: इनसे असम्बन्धित लोग भारत महासागर के पार तक विच्छिन्न रूप से फैली हुई एक पट्टी में न्यूगिनी तक पाये जाते थे, जिनकी बाहरी चौकियाँ एक-दूसरे से इतनी दूर-दूर तक फैली हुई थीं जितना कि तस्मानिया, फीजी द्वीपसमूह और फिलिपाइन्स हैं। इन काली त्वचा वाले लोगों में से कुछ लोग बहुत ही ऊँचे होते हैं, जबकि कुछ अन्य इतने ठिगने होते हैं कि उन्हें बौना तक कहा जाता है। कुछ लोग खूब मोटे-ताजे होते हैं और कुछ लोग बिलकुल ठठरी जैसे दिखाई

पड़ते हैं। इन सब लोगों को वर्गीकरण के सरल उपाय के तौर पर ही 'नीग्रो-जातीय' कहा जा सकता है, जिसमें यह बात निहित नहीं है कि इनमें से कौन किसका वंशज है, या यह बात तक निहित नहीं है कि जिन सब कबीलों और समूहों को यह नाम दिया गया है, वे आनुवंशिक रूप से एक-दूसरे के साथ सम्बन्धित हैं।

अफ्रीकावासी नीग्रो लोगों और बौनों (पिग्मियों) के उत्तर में, उत्तरी अफ्रीका, लगभग सारे यूरोप और पश्चिमी एशिया के बहुत बड़े भाग में काकेशियाई या श्वेत जातीय लोग रहते हैं। उनका प्रदेश 'पुरानी दुनिया' के स्थल भाग के मध्य में स्थित है। इसमें समुद्र की तट रेखा बहुत लम्बी है और इसमें अनेक समुद्र हैं और जल की निकटता के कारण इस क्षेत्र का जलवायु नातिशीतोष्ण है। अधिकांश काकेशियाई लोगों की विशेषता सीधे से लेकर हल्के घुंघराले तक बाल, दाढ़ी का पूर्ण विकास और अपेक्षाकृत पतली नाकें हैं; और उनके शरीरों की ढकी हुई त्वचा का रंग गुलाबी सफेद से लेकर गहरा भूरा तक होता है। रंगों की यह अभिसीमा अधिकतम है।

इसके एक छोर पर, उत्तर-पश्चिमी यूरोप में ऐसे अनेक व्यक्ति रहते हैं, जिनकी त्वचा इतने गौर वर्ण की होती है कि वह रंग ही नहीं सकती; जब यह तेज़ प्रकाश में अनावृत रहती है, तो उस पर से पपड़ियाँ उतर जाती हैं और जब उस पर फिर तेज प्रकाश पड़ता है, तो वह फिर झुलस जाती है। समुद्र में यात्रा करने वाले स्कैण्डिनेवियाई लोगों और ब्रिटेनवासी लोगों और अरब में काम करने वाले अमेरिकी तेल-कारीगरों के चेहरे की त्वचा का रंग कभी-कभी ऐसा लाल और फूला-फूला सा हो जाता है कि वह देखने में कच्चे माँस जैसा दिखाई पड़ता है। उनकी त्वचाएँ तेज धूप वाले परिवेशों के लिए नहीं बनाई गई थीं। इस अभिसीमा के दूसरे छोर भारत और श्रीलंका में ऐसे व्यक्ति भी हैं, जिनके चेहरे के प्रत्यंगों और बालों की बनावट यूरोपवासियों के प्रत्यंगों और बालों जैसी ही है। फिर भी उनकी ढकी हुई त्वचा नीग्रो लोगों जैसी ही काली होती है। नीग्रो लोगों की भाँति काकेशियाई लोगों के कद, भार और शरीर की बनावट में भी बहुत अन्तर पाया जाता है। कुछ वयस्क पुरुष श्वेतजातीय लोग, जो बहुत स्थूलकाय नहीं हैं, अपने अन्य साथियों की अपेक्षा दुगुने से भी अधिक वजनी और भारी भरकम होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

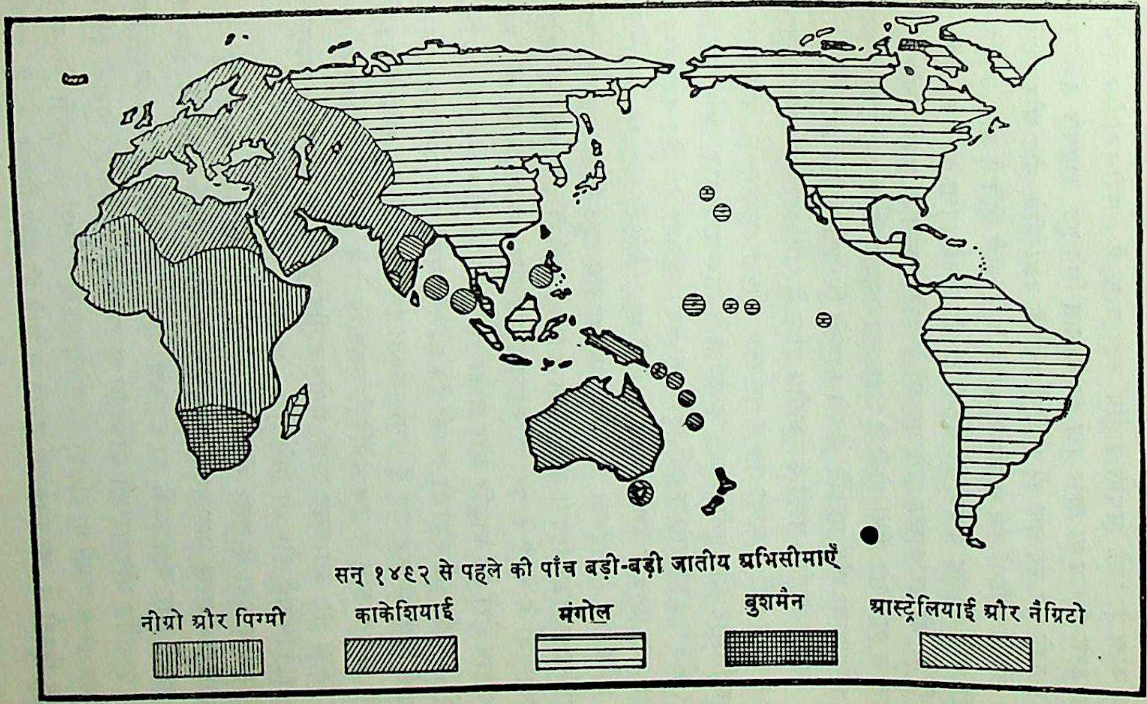

सन् १४९२ से पहले की पाँच बड़ी-बड़ी जातीय अभिसीमाएँ

नीग्रो और पिग्मी
काकेशियाई
मंगोल
बुशमैन
आस्ट्रेलियाई और नैग्रिटो

सारे पूर्वी और उत्तरी एशिया में एक तीसरा बड़ा जातीय उप-समुदाय पाया जाता है, जिसे 'मंगोल-जातीय' कहा जाता है। मंगोलजातीय लोगों की त्वचा हल्के पीताभ या ताम्र वर्ण का आभास लिये हुए श्यामल श्वेत रंग से लेकर गहरे भूरे रंग तक की होती है। उनके बाल सीधे, मोटे और काले होते हैं। उनकी दाढ़ियाँ कम बढ़ती हैं, उनके चेहरे चपटे होते हैं और उनकी आँखें मोटी चर्बी की तह में दबी हो सकती हैं और उनमें त्वचा की एक ऐसी झुर्री रहती है, जो पराकाष्ठा वाले मामलों में प्रत्येक आँख के ऊपरी और भीतरी पार्श्व के आर-पार फैली होती है। इस उप-समुदाय में भी शरीर के आकारों में बहुत विषमता और आकृति में भी मामूली भिन्नता दिखाई पड़ती है।

मंगोल-जातीय लोगों का जातीय दृष्टि से निवासस्थान मध्य एशिया से लेकर उत्तर-पूर्वी एशिया तक के अत्यन्त शीतल भूभाग में केन्द्रित है, जो दक्षिणी चीन और पूर्वी तिब्बत के पर्वतों के साथ-साथ चीन और जापान की ओर फैलता हुआ दक्षिण-पूर्वी एशिया तक पहुँचता है और वहाँ से मलाया होता हुआ समुद्र में इण्डोनेशिया के द्वीपों तक, जिनमें ताइवान (फारमोसा) भी सम्मिलित है, पहुँचता है। यद्यपि यह वक्तव्य बहुत विवादास्पद है, फिर भी अलास्का से लेकर टियेरा डेल फुएगो तक सब कबीलों और राष्ट्रों के अमेरिकी मूलवासियों में चेहरे के प्रत्यंगों, त्वचा के रंग और बनावट, बालों की आकृति और हाथ पैरों की आकृति और आकार की दृष्टि से कुछ मंगोलजातीय विशेषताएँ दिखाई पड़ती कही जा सकती हैं। जो लोग सबसे कम मंगोलाभ हैं, वे काकेशियाई दिशा में झुके हुए हैं। सम्भाव्यतः इस प्रवृत्ति से यह तथ्य सूचित होता है कि अतीत काल में जब अमेरिकी मूलवासियों ने बेरिंग जलडमरूमध्य को पार किया था, उस समय उनके मंगोलजातीय पूर्वजों के साथ कुछ आइनू लोगों जैसे काकेशियाई लोग आ मिले थे।

भूमध्य रेखा के उत्तर की ओर, जो कि पृथ्वी का स्थल गोलार्द्ध है पृथ्वी के अधिकांश स्थल भाग पर नीग्रोजातीय, काकेशियाई और मंगोलजातीय लोग बसे हुए हैं और यही पृथ्वी का वह अर्ध भाग है, जिसमें मानवीय क्रम-विकास की मध्यवर्तीय और परवर्ती अधिकांश अवस्थाएँ घटित हुई हैं। 'पुरानी दुनिया' के मुख्य स्थल भागों के दक्षिण की ओर, समुद्री गोलार्द्ध में, पृथ्वी के भूभाग के उन हिस्सों में, जो मध्यवर्ती भूभाग से आगे की ओर निकले हुए हैं, प्राचीन

मानवता के पिछड़े हुए सिरे अब तक विद्यमान हैं, जो सांस्कृतिक दृष्टि के साथ-साथ शारीरिक दृष्टि से भी पुरातन हैं। वे कुछ दृष्टियों में नीग्रोजातीय, काकेशियाई और मंगोलजातीय लोगों जैसे हैं, किन्तु कुछ अन्य दृष्टियों से वे बिलकुल अनोखे हैं। उनकी व्याख्या करना तो दूर रहा, वर्गीकर्ता के लिए उन्हें किन्हीं श्रेणियों में ठीक-ठीक बिठा पाना ही कहीं कठिन काम है।

उदाहरण के लिए, जब दक्षिणी अफ्रीका का पता पहले-पहल साक्षर जगत् को लगा, उस समय इस विशाल प्रायद्वीप के घास के मैदानों, मरूस्थलों और छोटी-छोटी झाड़ियों के जंगलों में अनेक लोग रहते थे, जो मिलकर एक अलग जातीय समुदाय बने हुए थे। वे लोग शीघ्र ही अन्य लोगों की संडासी की तरह दो ओर से आगे बढ़ती हुई गतिविधि के फलस्वरूप नष्ट हो गए, या उसी में खप गए। उत्तर-पूर्व की ओर से और ऊपर की ओर से बान्तू कबीलों ने आक्रमण किया और वे उत्तर की ओर बढ़ने वाले उन हालैंडवासियों से आ मिले, जो केप टाउन में उतरे थे। इन दो आक्रमणकारी दलों की अनिवार्य टक्कर के बाद उस तद्देशीय उपसमुदाय के सदस्यों का, जो इस संघर्ष के बीच में फंस गया था, अब जो कुछ अवशेष बचा है, वे लगभग 55 हज़ार कालाहारी बुशमैन और हौटेण्टाट लोगों के कुछ हज़ार वंशज हैं, जो इस अन्तरीप के अगौर (काले या पीले) जन-समुदाय में घुल मिल गए हैं।

दक्षिण अफ्रीकी जातीय समुदाय में किसी समय विभिन्न आकारों के लोग सम्मिलित थे। यह बात हमें प्लीस्टोसीन के पिछले भाग से लेकर वर्तमान काल तक विभिन्न युगों के काफी बड़ी संख्या में प्राप्त अस्थि-कंकालों से पता चलती है। अब हमारे पास अध्ययन के लिए जो कुछ बचा है, वह वे छोटे कद के और सम्भाव्यतः सामान्य बुशमैन हैं, जिनके पूर्वजों में से कुछ लोगों के सिर इतने बड़े थे जितना कि थामस ऐडिसन का सिर था। पीली त्वचा, जो भूरी तक पाई जाती है, चपटे चेहरे, गहरे नेत्र कोटर, मंगोलजातीय-सी दिखाई पड़ने वाली आँखों की झुरियाँ और काली गोल मिर्च जैसे बाल, जो इतने कसे हुए घुँघराले होते हैं कि बालों के गुच्छों के बीच में नंगी खोपड़ी दिखाई पड़ने लगती है—ये आधुनिक बुशमैन की विशेषताएँ हैं, और ये विशेषताएँ उनके जातीय उपसमुदाय के अन्य कबीलों और राष्ट्रों की भी रही हो सकती हैं। उनके अन्य लक्षण हैं—उनके नितम्बों पर चर्बी का स्थानीय संचय,

जिसकी कि तुलना ऊंट के ककुद से की जा सकती है और शान्त अवस्था में शिश्न की आगे की ओर बढ़ी हुई स्थिति। केवल ये दो शरीर-रचनात्मक विशेषताएँ ऐसी हैं, जो बुशमैनों और उनके सजातीय लोगों को शेष मानव-जाति से बिलकुल पृथक् कर देती हैं और यह बात भौगोलिक दृष्टि से सीमान्तीय प्रदेश के निवासियों के उपयुक्त भी है।

आस्ट्रेलिया में, जो इससे भी अधिक अलग-थलग पड़ा हुआ और इससे भी अधिक सीमान्तीय क्षेत्र है, पाँचवाँ बड़ा उपसमुदाय विद्यमान था और यह हमारा सौभाग्य है कि इससे कुछ अंश इतनी काफी देर तक बचे रहे कि उनका अध्ययन किया जा सका। इस समय जीवित पाये जाने वाले आदिवासियों में से अधिकांश लोग इकहरे शरीर के, लम्बे-लम्बे हाथ पैरों वाले लोग हैं, जिनकी त्वचा भूरी है, जिनके शरीर पर बाल बहुत कम हैं और जिनके सिर और दाढ़ी के बाल लहरदार से लेकर घुँघराले तक पाए जाते हैं; उनके दांत बड़े और मज़बूत होते हैं, उनके नथुने चौड़े होते हैं और उनकी आँखें एक-दूसरे से कुछ दूरी पर होती हैं; उनमें से कुछ की भौंहों के उद्रेख इतने भारी होते हैं और जबड़े इतने आगे को निकले होते हैं कि उन्हें देखकर सोलो मानव की याद आ जाती है। वे देखने में सबसे पुरातन मनुष्य लगते हैं और सम्भाव्यतः हैं भी। वे आस्ट्रेलिया के छोरों पर, विशेष रूप से उत्तरी द्वीपों में, जिनमें मैल्विल और बाथर्स्ट भी सम्मिलित हैं, केन्द्रित हैं। उनमें से कुछ अब तक भी प्रधान औज़ार के रूप में गंडासों का उपयोग करते हैं।

मध्य आस्ट्रेलियाई मरुस्थल के लोगों को देखकर, जिनके कि माथे अपेक्षाकृत अधिक सीधे खड़े होते हैं और जिनकी नाकें अपेक्षाकृत अधिक बड़ी होती हैं, उत्तान मानुष की याद अपेक्षाकृत कम आती है। इनमें से कुछ स्त्रियाँ और बच्चे पिंगलकेशी होते हैं। ये आदिवासी, जिनमें रिश्तेदारी की, अन्तर-कबीला सम्बन्धों की और उत्सवयुक्त जीवन की बड़ी विशद व्यवस्था विद्यमान है, आस्ट्रेलिया में क्रमविकास की दृष्टि से सबसे अधिक उन्नत हैं।

'मरे' नदी के ठंडे और उपजाऊ बेसिन में और जिप्सलैंड में, जो जलवायु की दृष्टि से स्वर्ग जैसा है, किसी समय ऐसे आदिवासियों की अब की अपेक्षा बहुत घनी आबादी रहती थी, जो मरूस्थल में रहने वाले लोगों से उतने ही भिन्न थे, जितना कि कोई बावेरिया का निवासी रब्बा-अल-खाली के निवासी

अरब से भिन्न होता है। ये लोग मोटे तगड़े और भारी लोग थे, जिनके धड़ लम्बे और हाथ पैर छोटे-छोटे थे। उनके शरीर पर बहुत अधिक बाल थे और उनकी दाढ़ियाँ लम्बी और घनी थीं, किन्तु उनके सिर गंजे होने लगते थे। क्योंकि उनके ही इलाके ऐसे थे, जिन्हें अंग्रेजों ने बसने के लिए और खेती के लिए सबसे अधिक उपयुक्त पाया, इसलिए इस श्रेणी के बहुत थोड़े आदिवासी बच पाए हैं। जो बचे हैं, वे आरक्षित इलाकों में रहते हैं। वहाँ वे श्वेतजातीय लोगों के वस्त्र पहनते हैं, जिसके कारण उनकी आवृत त्वचा का रंग आसानी से देखा जा सकता है। यह साधारणतया हल्के भूरे रंग का होता है। उनमें से कुछ की आँखें हरी-सी या नीली-सी होती हैं और उनके बाल कभी-कभी लाल भी पाए जाते हैं।

देशज तस्मानियावासी लोग, जो अब मिश्रणों के सिवाय अन्यत्र लुप्त हो चुके हैं, भौंहों के उद्रेखों और कालेपन की दृष्टि से मैलविल द्वीप के निवासियों से मिलते-जुलते थे, किन्तु उनके बाल भी घुंघराले होते थे। वे छोटे और हृष्ट-पुष्ट होते थे। वे नातिशीतोष्ण जलवायु में रहते थे और बहुत कम वस्त्र पहनते थे, या वस्त्र बिलकुल ही नहीं पहनते थे।

इन सब आदिवासियों में से 'मरे' नदी के इलाके के और जिप्सलैंड के भारी भरकम शरीर वाले लोग यूरोपीय वंश के लोगों को सबसे अधिक आत्मीय जान पड़ते थे। हार्वर्ड विश्वविद्यालय में मैं प्रतिवर्ष मानव विज्ञान—1 विभाग में एक स्लाइड दिखाया करता था; इस स्लाइड से एक आदिवासी के चेहरे के प्रत्यंगों की छाया पर्दे पर पड़ती थी। यह सफेद बालों वाला और मूँछों वाला एक रौबीला बूढ़ा व्यक्ति था। जब भी यह स्लाइड दिखाई जाती थी, तभी निरपराद रूप से लोग ठहाका मारकर हँसने लगते थे। जब तक मैं इस स्लाइड को तीसरी बार नहीं दिखा चुका, तब तक मुझे यह पता नहीं चला कि कक्षा के विद्यार्थियों को इसमें इतनी मज़ेदार बात क्या लगती है कि वे इस तरह हँसते हैं। अन्त में मुझे यह पता चला कि उन लोगों की सम्मति में चित्र में दिखाई पड़ने वाला मनुष्य ठीक मुझ जैसा दिखाई पड़ता था और वह भी विशेष रूप से सितम्बर में, जबकि मेरी त्वचा सूर्य की धूप से बहुत झुलस चुकी होती थी। इन नौ बजे के ग्राहकों को एक और जो चित्र बहुत पसन्द आता था, वह जापान के उत्तरी द्वीप के निवासी एक बालों वाले आइनू का था, जो

तालस्ताय या डार्विन से बहुत अधिक मिलता था। साहित्यिक रुचि वाले छात्रों को वह तालस्ताय से और वैज्ञानिक क्षेत्र में रुचि रखने वाले छात्रों को वह डार्विन से मिलता जान पड़ता था। स्पष्ट है कि तालस्ताय, डार्विन और मैं (यदि मुझे विशुद्ध शरीर-रचनात्मक आधार पर इतने प्रख्यात लोगों के साथ मिल जाने की अनुमति दी जा सके, तो) एक प्राचीन और सीमान्तीय यूरोपीय जनसंख्या के आनुवंशिक पुनःसंयोजनों के व्यक्तिशः बचे हुए रूपों का प्रतिनिधित्व करते हैं (या करते थे); और ये आस्ट्रेलियावासी और आइनू लोग यदि यूरोपीय नहीं हैं, तो सीमान्तीय अवश्य हैं। भौगोलिक दृष्टि से कहा जाय तो यूरोप भी एक किनारे का क्षेत्र है। यूरोपीय, आस्ट्रेलियाई और आइनू सीमान्तीय लोग मनुष्य जाति के वे अपेक्षाकृत कम विभेदीकृत प्रकार हैं, जो प्लीस्टोसीन के पिछले भाग से लेकर अब तक मनुष्य के विस्तृत भ्रमण में से बचे रह गए हैं।

परन्तु छात्रों को इससे भी अधिक अच्छी जो स्लाइड लगती थी, वह समोआ की एक राजकुमारी की थी, जिसने बड़े सुरूचिपूर्ण ढंग से एक वल्कल का लंहगा, एक माला और एक ओढ़नी धारण की हुई थी। यद्यपि वह उससे बहुत पहले मर चुकी थी, जबकि इन विद्यार्थियों का जन्म हुआ था, फिर भी 1940 और 1950 के बीच के वर्षों की शैली में उसकी उदार आकृति ऊंघते हुए छात्रों को भी सचेत कर देती थी और पिछली पंक्ति में बैठे विश्वविद्यालय की द्वितीय कक्षा के विद्यार्थियों को अपनी छिपाई हुई पत्रिकाओं पर से आँख उठाकर ऊपर देखने को विवश कर देती थी। वह राजकुमारी एक साधारणीकृत मानव प्राणी जैसी दिखाई पड़ती थी, जिसके प्रत्यंग ऐसे थे, जो मानव जाति की बड़ी-बड़ी जातियों के बीच किसी मध्य बिन्दु को सूचित करते थे। यदि यह मिश्रण का परिणाम था, जैसा कि छात्रों को बतलाया जाता था, तो मिश्रण एक बहुत ही बढ़िया वस्तु जान पड़ती थी। वह राजकुमारी मंगोल जातीयों के पोलीनेशियाई-माइक्रोनेशियाई प्रभाग की थी, जिसमें कि आजकल बहुत-से अमेरिकन नागरिक भी, विशेष रूप से हवाई में रहने वाले अमेरिकन नागरिक भी, सम्मिलित हैं।

जातीय इतिहास की रूपरेखा

अन्य किसी भी वर्णात्मक रूपरेखा की भांति जातियों के वर्गीकरण का भी

तब तक कोई अर्थ नहीं है, जब तक कि काल की दृष्टि से भी उसे न देखा जाय। सब कालों में जाति के विषय में हमारी जानकारी लिखित अभिलेखों, कलात्मक वर्णनों और अस्थि कंकालों की सामग्री पर आधारित है। प्राचीन लोगों के शरीरों के कोमल अंग विरले ही परिरक्षित रहे हैं। मिश्र में फरूनों (राजाओं) और उनके प्रजाननों के शरीरों और उनके साज सामान, और उनकी रोटियों को ज्यों का त्यों बनाये रखने में उन पर किये गए लेप का हाथ उतना नहीं, जितना कि वहाँ के शुष्क जलवायु का है। यही बात दक्षिण-पश्चिमी अमेरिका के भृगुओं (खड़ी चट्टानों) पर रहने वाले लोगों, उनकी चप्पलों और उनकी अनाज की बालियों के विषय में भी सत्य है। पेरू के समुद्र तट पर पुरातत्ववेत्ताओं और लुटेरों ने हज़ारों परिरक्षित शवों के गट्ठरों को भूमि में से खोद निकाला है, जिनमें आदिवासियों के सुखाये हुए शव सैंकड़ों गज़ बढ़िया सूती वस्त्रों में लिपटे हुए थे। इस प्रकार परिशोषण ने हमारे लिए इन एक-दूसरे से बहुत दूर पृथक् और जातीय दृष्टि से विभिन्न लोगों के बालों, त्वचा और कुछ आन्तरिक अंगों को सुरक्षित बचाए रखा है। जल समाधि ने भी कुछ हल्के रंग वाले नार्वे और स्वीडनवासियों की लाशों को, जिन्हें कि डेनमार्क की दलदलों में से खींचकर निकाला गया है, और कांस्य युग के घुड़सवारों की एक टुकड़ी की ओर उनके घोड़ों को जो अल्ताई पर्वतों में एक जलधारा के नीचे दबे रहे हैं, बचाये रखा हैं। तुषारीकरण ने भी हमें ग्रीनलेंड के शाश्वत तुषार में से ऐस्किमों लोगों की परिरक्षित लाशें प्रदान की हैं। परन्तु इस समय जिन कालों और स्थानों के सम्बन्ध में हम विचार कर रहे हैं, उनमें रहने वाले आरम्भिक लोगों के सम्बन्ध में हमारी जानकारी का अधिकांश भाग शुष्क हड्डियों से प्राप्त हुआ है। शुष्क हड्डियाँ बहुत कुछ जानकारी दे देती हैं, परन्तु वे अब भी मनुष्य को सहारा देने वाली टेक की अपेक्षा कुछ अधिक नहीं हैं।

क्योंकि अधिकांश खुदाई यूरोपीय लोगों द्वारा अपने देशों में और उन प्रदेशों में की गई है, जहाँ से उनके कुछ पूर्वज आए थे, इसलिए हमें जो हड्डियाँ मिली हैं, उनमें से अधिकांश आदिम श्वेतजातीय मनुष्यों की हैं। उपरि पुरा-पाषाणिक और मध्य पाषाणिक कालों के यूरोप, उत्तरी अफ्रीका, पश्चिमी एशिया और चाउकाउतियेन की ऊपरी गुफा से प्राप्त हुए अधिकांश

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ग्रस्थि-कंकाल भारी भरकम, मोटे ताजे ग्रौर मजबूत माँसपेशियों वाले लोगों के थे, जो क्रोमेगनन के प्रसिद्ध ग्रस्थि-कंकाल की भाँति बड़े सिरों वाले, चौड़े चेहरों वाले ग्रौर सुव्यक्त ठोड़ियों वाले थे। ये जंगलों में रहने वाले लोग थे, जिनके शरीर जंगली साँड ग्रौर जंगली वराह जैसे वन्य पशुग्रों के समान बने थे।

यूरोप ग्रौर उत्तरी ग्रफ्रीका, दोनों में बिलकुल प्रारम्भिक उपरि पुरा-पाषाणिक काल के कंकाल पतले थे ग्रौर उनके सिर ग्रौर चेहरे उनसे बाद में ग्राने वाले लोगों की ग्रपेक्षा लम्बोतरे थे। वे शिकारी कुत्तों ग्रौर कुरंगों (ग़ैज़ल) से ग्रधिक मिलते-जुलते थे ग्रौर वे स्पष्टतया सहारा ग्रौर ग्ररब मरुस्थल के समृद्ध घास के मैदानों से उत्तर की ग्रोर चले गए थे; वूर्म हिमाच्छादन काल में, जबकि ग्रतलान्तक से पूर्व की ग्रोर जाने वाले तूफानों का मार्ग ग्रब की ग्रपेक्षा बहुत ग्रधिक दक्षिण की ग्रोर से गुज़रता था, सहारा ग्रौर ग्ररब मरुस्थल में इनके ऊपर से गुज़रने वाले तूफानों के कारण प्रभूत वर्षा होती थी। सहारा में बहुत थोड़े ग्रस्थि कंकाल पाये गए हैं ग्रौर जो पाये गए हैं, भूक्षरण के कारण उनका काल निर्धारण कर पाना कठिन है। ग्ररब में प्रागैतिहासिक पुरातत्व का ग्रभी ग्रारम्भ ही हुग्रा है। फिर भी जब तक कोई ग्रन्य प्रमाण इस सिद्धान्त को खण्डित करने के लिए प्राप्त न हो जाएँ, तब तक हम उचित रूप से यह भरोसा रख सकते हैं कि काकेशियाई लोगों के इकहरे शरीर वाले (पतले) प्रभेद का निवास-स्थान ये मरुस्थल ही थे। उत्तरी ग्रफ्रीका में यह प्रभेद इकहरे शरीर वाले, लम्बोतरे चेहरे वाले वात्सुई तथा ग्रन्य पशुपालक लोगों में ग्रब तक बचा हुग्रा है।

उपरि पुरा-पाषाणिक या मध्य पाषाणिक कालों में इन शिकारियों में से कुछ पश्चिमी एशिया के पर्वतों को पार करके तुर्किस्तान के घास के मैदानों ग्रौर मरुस्थलों में पहुँच गए। जब हिमाच्छादन काल के हिम किरीट पिघल गए, उसके बाद ग्रौर हिमाच्छादनोत्तर ग्रनुकूलतम जलवायु के काल में इसी प्रभेद के लोगों ने खेतों को जोतना ग्रौर पशुग्रों को पालना शुरू कर दिया। इस काल के ग्रौर इस स्थान से जो थोड़े-से ग्रस्थि-कंकाल हमें प्राप्त हैं, उनसे इस पहचान की पुष्टि होती है। पश्चिमी एशिया में ग्रपने केन्द्र से ये नव पाषाणिक लोग सब उपलब्ध दिशाग्रों में फैल गए; वे काले सागर का चक्कर

काटते हुए डैन्यूब नदी की घाटी तक पहुँच गए और उस नदी के साथ-साथ ऊपर की ओर बढ़ते हुए वे मध्य और पश्चिमी यूरोप तक जा पहुँचे; भूमध्यसागर के उत्तरी तट के साथ-साथ चलते हुए वे ईराक, सीरिया और फिलस्तीन तक, मिस्र, उत्तरी अफ्रीका और स्पेन तक और वहाँ से पश्चिमी फ्रांस और ब्रिटेन के द्वीपों तक पहुँचे; वे अफ़गानिस्तान और सिन्धु-घाटी में पहुँचे; वे दोनों तुर्किस्तानों के शाद्वलों को पार करते हुए पीली नदी की ऊपरी घाटी तक, कोरिया के पार, और अन्त में जापान तक पहुँच गए।

इन सब नव-पाषाणिक मार्गों पर हमें श्वेत जाति की इस दुबली-पतली (पतली हड्डियों और इकहरे शरीर वाली) शाखा के चिह्न प्राप्त होते हैं। यूरोप में अनेक देशों में, चाहे इसके पिंगल-केशी (नौर्डिक) और चाहे श्यामल (भूमध्यसागरीय) रूप में आनुवंशिक रचना में यह सर्वप्रमुख तत्व है और यही बात उत्तरी अफ्रीका के विषय में भी सत्य है। मध्य पूर्व के देशों में यह तत्व कहीं अधिक सबल है। चीन में कुछ व्यक्तियों में, विशेष रूप से उत्तर और पश्चिम में, इसके कुछ चिह्न दिखाई पड़ते हैं और जापान में यह कुलीन लोगों की रेखाकृति बनावट और लम्बोतरी सुव्यक्त नासिकाओं में दिखाई पड़ता है। भारत के उत्तर में भी यह प्रधान जातीय तत्व है। परन्तु चीन से दक्षिण-पूर्वी एशिया में, और वहाँ से गंगा तक जो कृषि पहुँची थी, उसे ले जाने वाले लोग अन्य ही थे। जिन पौधों के लिए सर्दियों की वर्षा की आवश्यकता होती हैं, उनसे उन पौधों की ओर परिवर्तन, जिन्हें ग्रीष्म ऋतु में सींचना आवश्यक होता है, किसानों के एक ऐसे नए समूह द्वारा किया गया था, जिसकी शारीरिक आकृति में खेती की कला के मूल वाहकों की आनुवंशिक विशेषताएँ बहुत कठिनाई से ही खोजी जा सकती थीं।

नीग्रोजातीय लोगों की आरम्भिक गतिविधियों के सम्बन्ध में हमारा ज्ञान उतना ही कम है, जितना कि काकेशियाई लोगों की गतिविधि के सम्बन्ध में अधिक है। ओल्डुवाई कन्दरा से प्राप्त हुई एक खोपड़ी सम्भाव्यतः किसी उत्तान (इरेक्टस) नीग्रो पूर्वज की है और कांजेरा में मिली खोपड़ियाँ सैपियन्स मानुषों की हो सकती हैं। एक अन्य खोपड़ी एक स्त्री की है, जो अपेक्षाकृत पहले के हिमाच्छादन काल में पानी में डूब गई थी। इसके नीग्रोजातीय लक्षण बहुत सुस्पष्ट नहीं हैं। अभी तक किसी ऐसे व्यक्ति का पता नहीं है, जिसे एक भी

बौने (पिग्मी) का अस्थि-कंकाल प्राप्त हुआ हो। यह बात कोई आश्चर्यजनक नहीं है, क्योंकि ये बौने लोग जंगलों में ही रहते हैं, जहाँ जल में घुलने की प्रक्रिया द्वारा इन लोगों की भंगुर हड्डियाँ शीघ्र ही समाप्त हो जाती होंगी। फिर भी इस बात के प्रमाण हैं कि किसी न किसी प्रकार के नीग्रोजातीय लोग—अर्थात् चौड़ी नाक वाले, काली त्वचा वाले और ऊन जैसे घुँघराले बालों वाले लोग— उन देशों में, जो भारत महासागर का दक्षिणी किनारा बनाते हैं, बहुत ही अधिक प्राचीन हैं और यह बात बौनों (पिग्मियों) या जंगल में रहने वाले बौनों के विषय में विशेष रूप से सत्य है। ये लोग छोटे-छोटे वन्य गिरोहों में दक्षिण भारत में, अण्डेमान द्वीपों में, मलाया प्रायद्वीप में, फिलिपाइन्स के कुछ द्वीपों में पाये जाते हैं और सारे मैलेनैशिया में भी पाये जाते हैं, जहाँ उनका आकार अपेक्षाकृत कुछ बड़ा होता है। इन छोटे-छोटे लोगों का आरम्भिक इतिहास अज्ञात है, किन्तु छोटे कद के प्राणी पशुओं की अन्य स्पीशिज़ों में भी, और यहाँ तक कि पौधों की स्पीशिज़ों में भी मिलते हैं। ये किसी ऐसे परिवेशात्मक क्षेत्र में सीमित रहने के परिणाम होते हैं, जो पूरे आकार के पशुओं या पौधों की प्रजननशील जनसंख्या का निर्वाह करने की दृष्टि से बहुत छोटा होता है। पशुओं में बौनापन एक खास प्रकार की पिच्यूटरी कोशिकाओं के घट जाने के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। मनुष्य के विषय में भी यही बात सत्य होनी चाहिए।

पूरे कद वाले अफ्रीकी नीग्रो लोगों का इतिहास भी इसी प्रकार अस्पष्ट है। यदि जंगल बौने (पिग्मी) लोगों का निवास-स्थान था और पूर्वी अफ्रीका लम्बोतरे चेहरे वाले और पतली नाकों वाले लोगों का निवास-स्थान था, जबकि इस महाद्वीप का सारा दक्षिणी भाग बुशमैनों का प्रदेश था। तो पूरे कद वाले अफ्रीकी नीग्रो लोगों के लिए जो प्रदेश बच रहता था, वह केवल पश्चिमी सूडान था और सम्भाव्यतः वहीं ये लोग विकसित हुए। अफ्रीका के सम्बन्ध में हमें जब पहले-पहल पता चला, तब से लेकर नीग्रो लोगों का बहुत अधिक विस्तार हुआ है। सोलहवीं शताब्दी में इथियोपिया पर 'गल्ला' लोगों के दलों ने आक्रमण किया। ये 'गल्ला' लोग गैर-नीग्रो पशुपालक थे, जो कहीं से पश्चिम और दक्षिण की ओर आये थे। किन्हीं लोगों ने या किसी घटना ने उनको वहाँ से धकेला होगा। पूर्वी अफ्रीका पर बान्तू लोगों का अधिकार इसी

हलचल के समय में हुश्रा श्रौर उसके बाद 'ज़ुलू', 'माताबैल' श्रौर श्रन्य बान्तू योद्धाश्रों का श्रन्तरीप की श्रोर दक्षिणाभिमुख प्रयाण लगभग उसी समय हुश्रा, जबकि हालैण्डवासी लोग वहाँ श्राकर बस रहे थे। उसी समय नीग्रो लोगों को 'नई दुनिया' में भी ले जाया जा रहा था श्रौर यह निश्शंक होकर कहा जा सकता है कि श्राज दुनिया में नीग्रो लोगों की संख्या उसकी श्रपेक्षा हज़ारों गुनी नहीं, तो सैकड़ों गुनी तो श्रवश्य है, जितनी कि वह ईस्वी सन् 1000 में, श्रर्थात् श्रब से 40 से भी कम पीढ़ी पहले थी।

हाल ही में चीन में हुई खोजों से यह बात स्पष्ट हो गई है कि मंगोल-जातीय लोगों का विकास सीधा सिनान्थ्रोपस (चीन मानव) से हुश्रा है। कालानुक्रम से मिली सात खोपड़ियों श्रौर श्रस्थि कंकालों की शृंखला से यह बात स्पष्ट हो जाती है। सिनान्थ्रोपस (चीन मानव) की भाँति इन मंगोलजातीय लोगों के चेहरे चपटे से होते हैं, श्रक्षिगोलक बाहर की श्रोर उभरे होते हैं श्रौर उनके दाँत एक श्रलग प्रकार के होते हैं, जिनमें छेदन दन्त (सामने के दाँत) बेलचे की श्राकृति में मुड़े हुए होते हैं श्रौर पीछे के दाँत श्रपेक्षाकृत छोटे होते हैं। मंगोलजातीय लोगों के हाथ श्रौर पैर छोटे-छोटे होते हैं, उनके बाल सीधे श्रौर मोटे होते हैं श्रौर उनमें पुरुषों की दाढ़ी बहुत कम होती है; इस दृष्टि से वे हमारी सबसे श्रलग दिखाई पड़ने वाली उप स्पीशिज़ हैं। उनके विभेदीकरण का केन्द्र चीन था, जहाँ से वे उत्तरी ध्रुव समुद्र तट के साथ-साथ चलते हुए बेरिंग जलडमरूमध्य श्रौर श्वेत सागर तक फैल गए। एशिया की पर्वतीय संरचना इस ढंग की है कि इस प्रकार के लोगों के लिए पूर्व श्रौर दक्षिण की श्रोर प्रव्रजन करना पश्चिम की श्रोर प्रव्रजन करने की श्रपेक्षा श्रासान था। जिस समय खेती लाने वाले लोग पश्चिम से चीन में पहुँचे, उस समय वहाँ मंगोलजातीय शिकारी लोगों की श्राबादी थी, जबकि जापान के बाहरी सीमान्त में यूरोपीय लोगों से मिलते-जुलते शिकारी लोगों, श्राइनू लोगों, के कुछ श्रंश बचे हुए थे।

चीनी सभ्यता के विस्तार के साथ-साथ श्रन्य मंगोलजातीय लोग, जिन्होंने कृषि सीख ली थी, दक्षिण की श्रोर बढ़े श्रौर उन्होंने उस प्रदेश पर धावा बोला, जो बर्मा, स्याम श्रौर हिन्दचीन कहलाता है। यह प्रगति श्रागे बढ़ती-बढ़ती द्वीपों तक भी पहुँच गई, जिसके फलस्वरूप ईसा के काल तक सुमात्रा,

जावा, बाली, बोर्नियो और फिलिपाइन्स—केवल गिनाने के लिए ये थोड़े-से नाम दिये गए है—सारतः मंगोलजातीय लोगों से बस चुके थे। अन्य लोग, जो इन द्वीपों के प्रमुखतया आस्ट्रेलियाई आदियासियों से मिश्रित हो गए थे, और भी आगे प्रशान्त महासागर में बढ़ते गए और उन्होंने माइक्रोनेशियाई और पोलीनेशियाई लोगों को जन्म दिया। इसी बीच में अमेरिका में बेरिंग जलडमरूमध्य के ऊपर से चलते हुए प्रमुखतया मंगोलजातीय लोग प्रवेश कर चुके थे। आस्ट्रेलिया और न्यूगिनी एक ही इकाई हैं, क्योंकि जब 'वूर्म' काल के पिछले भाग में वहाँ सर्वप्रथम लोग पहुँचे, उस समय इन स्थल भागों के बीच के उथले समुद्र सूखे हुए थे। या तो अनेक आक्रमणों के फलस्वरूप या भौगोलिक वरण के फलस्वरूप घुँघराले बालों वाले तत्व तो बाहरी छोरों पर, न्यूगिनी और तस्मानिया में, बसे और सीधे बालों वाला तत्व इस प्रदेश के मध्य भाग में बसा। अन्य आस्ट्रेलियाई जातीय लोगों ने मध्य भारत पर हल्ला बोला, जहाँ वे अब भी आदिवासी जातियों के रूप में बचे हुए हैं। दक्षिणी अफ्रीका में पीली त्वचा वाले और काली मिर्च जैसे घुँघराले बालों वाले लोग आक्रमण और प्रतियोगिता के फलस्वरूप घटते-घटते अब लगभग 55 हजार बुशमैन और कुछ हज़ार होटैण्टौट ही रह गए हैं। ये लोग इस अन्तरीप के अ-गौर लोगों के साझीदार पूर्वज भी हैं।

संक्षेप में, प्रव्रजन और विस्तार के उन महान् कालों तक, जिन्हें कि सामान्यतया इतिहास कहा जाता है, मनुष्य का जातीय इतिहास यही है। उस काल में मनुष्य जाति की सभी बड़ी-बड़ी जातियों का विकास हो चुका था और हम उनके अवशेष हैं।

आकार, आकृति और रंग का नियन्त्रण करने वाले पारिस्थितिक नियम

मनुष्य की प्रागैतिहासिक गतिविधियों की रूपरेखा तैयार कर लेने के बाद जातियों के ऐतिहासिक वितरण का कुछ अर्थ प्रतीत होने लगता है। परन्तु जाति का वास्तविक महत्त्व तब प्रकट होता है, जब हम इसके कृत्यों का अध्ययन करते हैं। सबसे पहली बात यह है कि हमें यह पता है कि प्रकृति अपव्ययशाल नहीं है। ध्रुव प्रदेश की लोमड़ी की खाल शीत काल में केवल

संयोगवश ही, या उसकी अपनी किसी इच्छा के कारण श्वेत नहीं हो जाती। किसी भी एक स्पीशिज़ के जंगली पशु उनकी भौगोलिक अभिसीमा के एक छोर से दूसरे छोर तक किसी न किसी रूप में भिन्न होते हैं और उनकी ये भिन्नताएँ कुछ सुनिश्चित पारिस्थितिक नियमों के अनुसार होती हैं; इन नियमों का ज्ञान प्राणिशास्त्रियों को काफी समय से है।[1]

इनमें से एक ग्लौगर का नियम है : कि आर्द्र जंगलों में रहने वाले पशुओं का रुझान इस बात की ओर होता है कि उनकी खालें काले या लाल रंग की हों। एक और नियम बर्गमैन का है : कि किसी एक स्पीशिज़ के पशु अपेक्षाकृत ठण्डे प्रदेशों में बड़े होते हैं और उष्णतर प्रदेशों में अपेक्षाकृत छोटे। एक तीसरा नियम ऐलन का नियम है, जिसमें यह बताया गया है कि मरुस्थलों और शुष्क घास के मैदानों में रहने वाले पशुओं की बाँहें और टाँगें पहाड़ों या जंगलों में रहने वाली उन्हीं स्पीशिज़ों के या उनकी निकट सम्बन्धी स्पीशिज़ों के पशुओं की बाँहों और टाँगों की अपेक्षा अधिक लम्बी होती हैं। रैन्स्ख ने, जो इन नियम बनाने वालों में सबसे बाद का है, यह बताया है कि एक ही स्पीशिज़ के, या एक स्पीशिज़-समूह के जो पशु पृथ्वी के शीतल प्रदेशों में रहते हैं, उनके बाल उन पशुओं की अपेक्षा अधिक लम्बे होते हैं, जो गर्म प्रदेशों में रहते हैं। उसने यह भी स्पष्ट किया है कि जहाँ उत्तरी ध्रुव प्रदेश के पशुओं की चर्बी उनके सारे शरीर पर उनकी त्वचा के नीचे संगृहीत रहती है, वहाँ मरुस्थलों में, वह भी विशेष रूप से गर्म मरुस्थलों में, रहने वाले अपने शरीर में चर्बी संग्रह करने वाले पशुओं की चर्बी किसी एक स्थान पर ढेर के रूप में जमा रहती है, जैसे कि ऊँट के ककुद में और दुम्बे (मोटी पूंछ वाले मेढ़े) की पूंछ में।

इन नियमों से वे एकरूपताएँ स्पष्ट हो जाती हैं, जो उष्ण रक्त वाले पशुओं की विभिन्न स्पीशिज़ों द्वारा ऊष्मा, प्रकाश और पारजम्बू (अल्ट्रा वायलेट) विकिरण में पाये जाने वाले भौगोलिक अन्तर (घट-बढ़) के अनुरूप

---

[1] इस विषय पर विस्तृत ग्रन्थावली के लिए मेरी पुस्तक 'क्लाइमेट एण्ड रेस' देखिये, जिसका हार्लो शैपले संस्करण 'क्लाइमेटिक चेंज' नाम से हुआ है। प्रकाशक हैं—हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1953।

अपने आपको ढालने में पायी जाती है। उस सौर वर्णाक्रम (स्पैक्ट्रम) की, जिसके कि ये तीन अव्यवहित खण्ड मात्र हैं, अभिसीमा लगभग 24,000 ऐंगस्ट्रोम (भौतिकी वैज्ञानिक एक सेंटीमीटर के दस करोड़वें भाग की लम्बाई को एक ऐंगस्ट्रोम कहते हैं) की तरंग लम्बाइयों से लेकर 2,900 ऐंगस्ट्रोम तक है। 24,000 और 7,700 ऐंगस्ट्रोम के बीच की तरंग लम्बाइयाँ जो अव-रक्त (इन्फ्रा रैड) कहलाती हैं, केवल ऊष्मा उत्पन्न करती हैं। 7,700 और 3,900 ऐंगस्ट्रोम के बीच वर्णाक्रम का वह दृश्य भाग रहता है, जिसके द्वारा हम देखते हैं। 3,900 से 2,900 ऐंगस्ट्रोम तक पारजम्बू (अल्ट्रा वायलैट) भाग है; यह लघु तरंग विकिरण की दिखाई न पड़ने वाली वह अभिसीमा है, जो मानवीय त्वचा को झुलस देती है, उसे रंगती है, और अर्गोस्टैरोल के किरणीयन द्वारा विटामिन 'डी' उत्पन्न करती है। अर्गोस्टैरोल शरीर की त्वचा के नीचे रहने वाली चर्वी का एक अवयव (घटक तत्व) है।[1]

तापमान में पाये जाने वाले भौगोलिक अन्तर अव-रक्त तथा दृश्य ऊर्जा की उन मात्राओं के परिणाम हैं, जो वायुमंडल में से गुज़रते समय अन्य तत्वों द्वारा रूपान्तरित होने के बाद पृथ्वी की सतह के विभिन्न भागों तक पहुँच पाती हैं। अक्षांश और तुंगता दोनों का ही उनकी शक्ति पर प्रभाव पड़ता है। वायुमण्डल में विद्यमान ओज़ोन, कार्बन डायोक्साइड और पानी उन्हें कम कर देते हैं। समुद्र, मरुस्थल और हिम के मैदान उन्हें बाहर की ओर परावर्तित करते हैं, जबकि बाह्यतर आकाश में विद्यमान बादल और नीली ओज़ोन उन्हें फिर पृथ्वी की ओर धकेल देते हैं। वनस्पतियाँ उन्हें सोख लेती हैं। जल के विशाल ओघ (पुंज) उन पवनों को उत्पन्न करते हैं, जो ठण्डी वायु की विशाल मात्राओं को गर्म प्रदेशों की ओर और गर्म वायु को ठण्डे प्रदेशों की ओर बहा ले जाती हैं। यदि तापमान केवल अक्षांशों के हिसाब से बदला करता, तो जिस ढंग के तापमान की किसी प्रदेश में आशा की जा सकती थी, उसमें ये सब तत्व अब अनियमितता उत्पन्न कर देते हैं। जहाँ स्थल भाग बहुत बड़े हैं. वहाँ साधारणतया अत्युष्ण या अतिशीतल तापमान पाये जाते हैं। जहाँ ये स्थल भाग छोटे-

---

[1] देखिये मैथ्यू ल्यूकिश की पुस्तक 'ऐप्लिकेशन्स ऑफ़ जर्मिसाइडल इराइथिमल एण्ड इन्फ्रा रैड ऐनर्जी' प्रकाशक, डी० वान नौस्ट्रैंड कम्पनी, न्यूयार्क, 1946।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

छोटे होते हैं, वहाँ उनके किनारों पर स्थित महासागर तापमान की वार्षिक घट-बढ़ को कम कर देते हैं। पृथ्वी के स्थल भाग इस प्रकार बँटे हुए हैं कि मौसमों में अत्यधिक विषमता वाले सब के सब प्रदेश भूमध्य रेखा के उत्तर में स्थित हैं।

पारजम्बू विकिरणों की घट-बढ़ की रूपरेखा तैयार करना तापमान में होने वाली घट-बढ़ से भी कहीं अधिक गहन और कठिन है। पृथ्वी की सतह के सभी भागों में बाह्यतर वायुमंडल से टकराने वाली पारजम्बू तरंगें समान शक्ति की होती हैं। अन्तर केवल इस बात के कारण होता है कि उनकी कितनी मात्रा वायुमण्डल को पार करके अन्दर आ पाती है। यदि अन्य सब बातें समान हों, तो यह बात इस पर निर्भर रहती है कि सूर्य पृथ्वी के किसी विशिष्ट बिन्दु के साथ कौन-सा कोण बनाता है। जब सूर्य सीधा सिर के ऊपर स्थित होता है, तब पारजम्बू किरणों को न्यूनतम वायुमण्डल पार करना पड़ता है; इस कारण वे किरणें अधिक मात्रा में अन्दर आ पाती हैं। जब सूर्य पृथ्वी की स्पर्श रेखा के साथ 45 अंश का कोण बनाता है, तब क्योंकि वे किरणें तिरछी होकर वायुमण्डल को पार करती हैं, अतः उन्हें पहले की अपेक्षा ड्योढ़ा रास्ता पार करना पड़ता है और जब सूर्य 22 अंश के कोण पर होता है, तब तो इन किरणों को पहले की अपेक्षा तिगुने से भी अधिक रास्ता पार करना पड़ता है। पृथ्वी की धुरी में तिरछा झुकाव होने के कारण सूर्य का ऊर्ध्वाधर व्यास मौसम के अनुसार दिसम्बर में मकर रेखा से लेकर जून में कर्क रेखा तक वसन्त और शरद विषुवों में भूमध्य रेखा के आर-पार 44 अंश के मार्ग पर गति करता है।

41 अंश उत्तरी अक्षांश पर स्थित न्यूयार्क नगर में मध्य ग्रीष्म की दुपहरियों में भूमध्य रेखा पर समुद्र तल पर स्थित अन्य नगरों की अपेक्षा थोड़ा-सा अधिक पारजम्बू विकिरण आ जाता है। परन्तु क्योंकि बादल और वनस्पतियाँ पारजम्बू किरणों को भी उतने ही सुचारु रूप से परावर्तित करते और सोखते हैं, जितना कि वे विकिरणशील ऊर्जा के वर्णक्रम के अन्य खण्डों को करते हैं, इसलिए उष्ण कटिबन्ध के सब प्रदेशों पर पारजम्बू किरणों की बमबारी समान नहीं होती।

इस समय चल रहे भूवैज्ञानिक उप-काल में संसार भर में भूमध्यरेखा के

अधिकांश क्षेत्रों को वनों की मेखला ने ढँका हुआ है। इसके उत्तर और दक्षिण की ओर घास के मैदान हैं और आगे उनकी भी सीमा पर कर्क और मकर के कटिबन्धों के अक्षांशों पर मरुस्थल हैं। आजकल भूमध्य रेखा के निकट केवल अफ्रीका में खुले हुए भूभाग का एक बड़ा प्रदेश है। वायुमण्डल के पार पारजम्बू किरणों के अन्त:प्रवेश का यह संसार भर में सबसे बड़ा सान्द्रता बिन्दु है।

ऊष्मा, प्रकाश और पारजम्बू अन्त:प्रवेश में इन प्रादेशिक अन्तरों के आधार पर अन्ततोगत्वा सभी पारिस्थितिक नियमों की, विशेष रूप से रंग, आकार और आकृति का नियमन करने वाले नियमों की, व्याख्या कर पाना सम्भव हो सकता है। ग्लौगर के इस नियम का—कि आर्द्र जंगलों में रहने वाले पशुओं का रुझान इस बात की ओर रहता है कि उनकी खालें काली या लाल हों और पक्षियों का इस ओर कि उनके पंख काले या लाल हों—सम्भाव्यत: अंशत: सूर्य के प्रकाश और विटामिन 'डी' के मध्य सन्तुलन से कुछ सम्बन्ध है। पशु और पक्षी अपनी समूर को चाटने और अपने पंखों को चोंच से सँवारने के द्वारा विटामिन 'डी' प्राप्त करते है। विटामिन 'डी' शरीर के तेलों में पारजम्बू किरणीयन द्वारा उत्पन्न होता है और यह पारजम्बू किरणीयन धुँधले प्रकाश में पांडु और धूसर खालों की अपेक्षा काली और लाल खालों द्वारा कहीं अधिक सुचारु रूप से हो सकता है। पशुओं की कुछ स्पीशिज़ें जंगलों और खुले भूभागों, दोनों में रहती हैं। इनमें से जंगलों में रहने वालों की खालें गहरे रंग की होती हैं और खुले भूभागों में रहने वालों की पांडु या धूसर रंग की। पांडु और धूसर रंग की खालें छद्मावरण में सहायक होती हैं और जंगल के धुँधले प्रकाश में इस प्रकार के छद्मावरण की आवश्यकता नहीं होती। जब किन्हीं पशुओं को खुले भूभाग में से हटाकर जंगल में ला रखा जाता है, तो उनकी खालों का रंग गहरा होना शुरू हो जाता है।

बर्गमैन का यह नियम—कि अपेक्षाकृत शीतल प्रदेशों में रहने वाले एक ही स्पीशिज़ के पशु उसी स्पीशिज़ के उष्णतर प्रदेशों में रहने वाले पशुओं की अपेक्षा बड़े होते हैं—सब उष्ण रक्त वाले पशुओं की अपना आन्तरिक तापमान सदा एक-सा बनाये रखने पर आधारित है। आयतन एक घन (क्यूबिक) माप है और सतह का क्षेत्रफल द्वि-आयामी होता है। जो पशु जितना बड़ा होगा, उसका आयतन, यदि और सब बातें समान हों तो, सतह-क्षेत्रफल की इकाई के

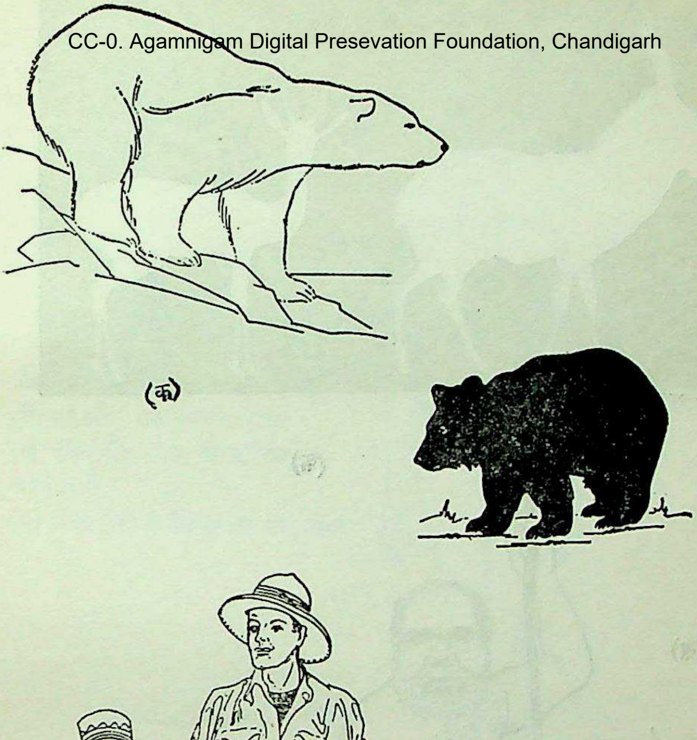

बर्गमैन का नियम । (क) ध्रुव प्रदेश का भालू और भूरा भालू ।
(ख) बौना (पिग्मी) और यूरोपीय मनुष्य ।

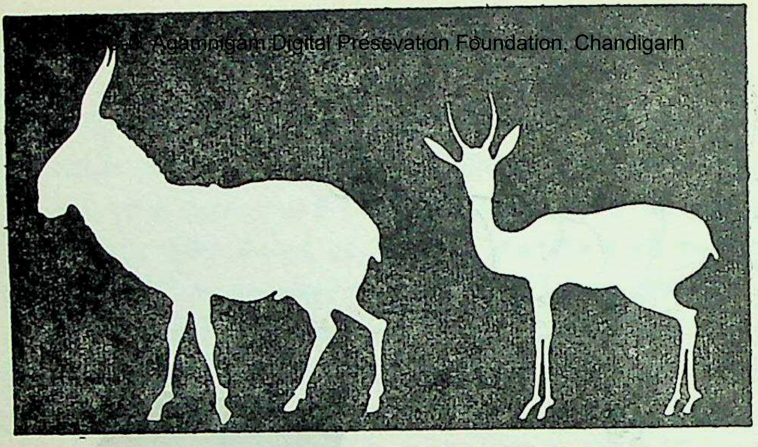

(क)

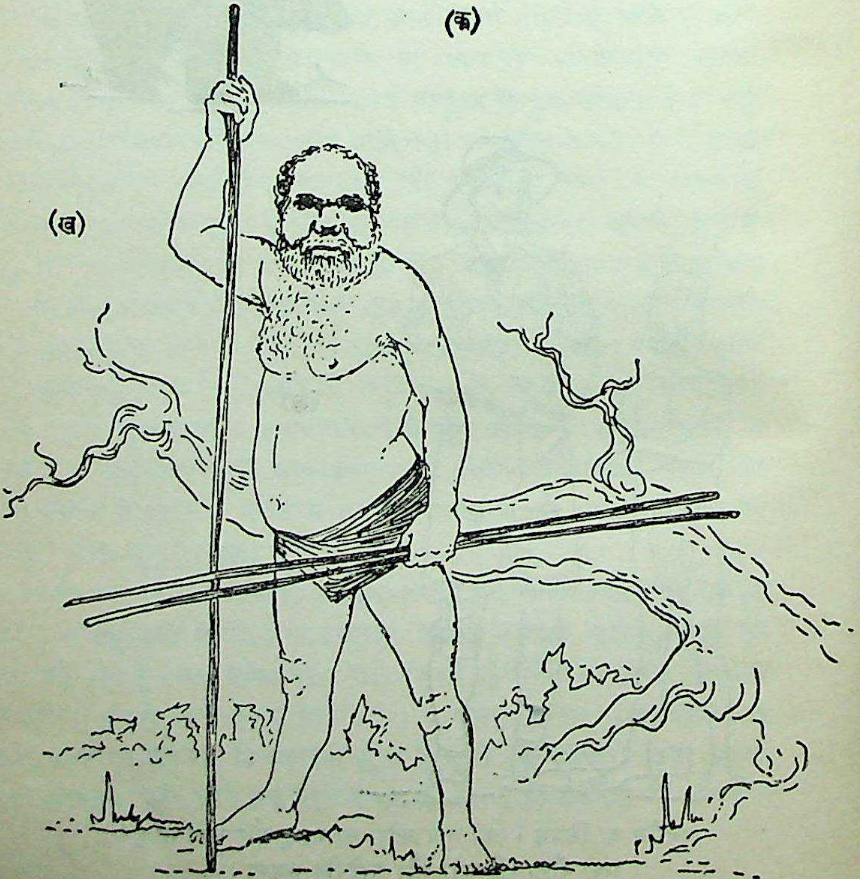

(ख)

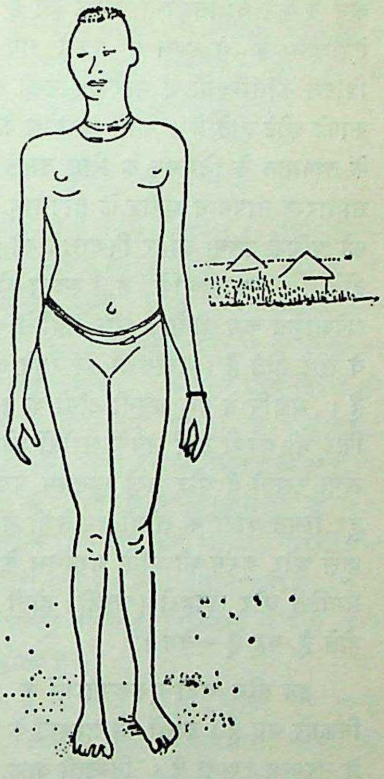

(ग)

ऐलन का नियम। (क) एक मध्य एशियाई और एक अरबी कुरंग। (ख) जिप्सलैंड एक आस्ट्रेलियाई आदिवासी। (ग) नील नदी के निकट का एक नीग्रो।

हिसाब से अधिक होगा और त्वचा के रास्ते ऊष्मा को बाहर निकलने से रोकने की उसकी क्षमता भी अपेक्षाकृत अधिक होगी। जिन जलवायुओं में वायु का तापमान शरीर के तापमान से अधिक होता है, उसमें शरीर की जीवित बचे रहने की क्षमता विकरण, संनयन (कन्वैक्शन) और वाष्पीकरण द्वारा ऊष्मा को बाहर निकाल पाने की योग्यता पर निर्भर होती है; इसलिए यदि अन्य सब बातें समान हों, तो दो शरीरों में से जो छोटा होगा, वह बड़े की अपेक्षा अधिक कार्यक्षम होगा, क्योंकि उसकी सतह का क्षेत्रफल उसके शरीर के आयतन की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक है।

बाँहों और टाँगों विषयक ऐलन का नियम इतना सरल नहीं है; उसमें

कम से कम दो सिद्धान्त उलझे हुए हैं। ऐलन ने यह खोज निकाला था कि ऐरीज़ोना के मरुस्थल में पकड़े गए खरगोश के कान लम्बे होते हैं, किन्तु ब्रिटिश कोलम्बिया में मारे गए उसी स्पीशिज़ के खरगोश के कान अपेक्षाकृत काफी छोटे होते हैं। कान खरगोश के विकिरक (रेडियेटर) होते हैं; ये शरीर के तापमान के नियमन के लिए उसके प्रमुख साधन होते हैं। जब वायु का साधारण तापमान शरीर के तापमान के स्तर से अधिक होता है, तब शरीर को अधिक ऊष्मा बाहर निकालने की आवश्यकता होती है और तब कान लम्बे होते हैं। ठण्डे प्रदेशों में, जहाँ ऊष्मा को शरीर से बाहर निकालने की आवश्यकता अपेक्षाकृत कम होती है और सर्दी से कानों के जम जाने का डर होता है, वहाँ वे छोटे होते हैं। मरुस्थलों में रहने वाले पशुओं की विशेषता लम्बी टाँगें भी हैं। यद्यपि ये पशु अपनी टाँगों के द्वारा बहुत ऊष्मा बाहर नहीं निकालते, फिर भी लम्बी टाँगें उनके शरीरों को अत्यधिक तपी हुई भूमि से यथासम्भव ऊँचा रखती हैं और उन्हें न्यूनतम प्रयत्न द्वारा चरने के मैदानों से या घास से दूर स्थित पानी के स्रोतों पर तेजी से जा पाने में समर्थ बनाती हैं। शिकारी कुत्ते और कुरंग की भाँति मरुस्थल के पशुओं के शरीर की बनावट लम्बोतरी, सुगठित और छरहरी (पतली) होती है। ये शरीर जिस प्रयोजन के लिए बने होते हैं, वह है—वेग।

इन तीन बड़ी एकरूपताओं के अतिरिक्त कुछ अन्य नियम भी खोज निकाले गए हैं। बालों की लम्बाई के विषय में रैन्स्ख का नियम ऊष्मा-नियमन से सम्बन्ध रखता है। तिब्बती याक, जिसके कि लम्बे बाल सर्दियों की रूसी पोशाक की भाँति भूमि पर घिसटते रहते हैं, और भारत के छोटे बालों वाले पशुओं के मध्य वैषम्य पर ध्यान दीजिये। चर्बी के फैलाव (वितरण) के सम्बन्ध में उसके नियम का सम्बन्ध भी ऊष्मानियमन से है : जहाँ ध्रुव प्रदेश के पशुओं की चर्बी उन्हें गर्म रखती है, जिससे कि ध्रुव प्रदेश का भालू बर्फ की शिला पर असुविधा के बिना बैठ सकता है, वहाँ उसे सुचारु रूप से काम करने के लिए सारे शरीर में समान रूप से फैले होना होता है। यदि चर्बी शरीर के कुछ थोड़े-से क्षेत्रों में इस प्रकार संकेन्द्रित हो कि वह शरीर से निकलने वाली कुल ऊष्मा में बाधा न डाले, तो अन्य जलवायुओं में खाद्य संग्रह के रूप में चर्बी का प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार ऊँट का

मांसल गलकम्बल और दुम्बे (मोटी पूंछ वाले मेढ़े) का इधर-उधर हिलता हुआ उपांग (पूंछ) इन पशुओं को चारे से रहित प्रदेशों में लम्बी यात्राओं में ऊर्जा का अतिरिक्त राशन प्रदान करते हैं और उनके कारण न तो ऊष्मा के शरीर से बाहर निकलने में बाधा पड़ती है और न चलने-फिरने में।

इन नियमों का मनुष्य पर लागू किया जाना

यदि ये नियम मनुष्य पर उसी प्रकार लागू न हो सकते होते, जिस प्रकार कि ये चमरगायों (याक), ध्रुव प्रदेश के भालुओं और दुम्बों पर होते हैं, तो इनका इस पुस्तक के विषय से कोई सम्बन्ध न होता। द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों में और उसके बाद संयुक्त राज्य अमेरिका की क्वार्टरमास्टर कोर ने जो प्रयत्न किया,[1] मुख्यतया उसके और संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और ब्रिटेन की वायु सेनाओं की अनुसन्धान शाखाओं द्वारा किये गए प्रयत्नों के फलस्वरूप, अनेक देशों के असैनिक अभिकरणों, जैसे ओहियो राज्य में यलो स्प्रिंग में स्थित ऐंटियोक कालेज की फैल्स रिसर्च इंस्टिट्यूट, के प्रयत्नों के फलस्वरूप, हम मानवीय जातीय परिवर्तन के रहस्यों का उद्‌घाटन कराना शुरू कर रहे हैं। पशुओं और पक्षियों की भाँति मनुष्यों में भी जातियों के अस्तित्व का प्रधान प्रयोजन शरीर को ऊष्मा, दृश्य प्रकाश और पारजम्बू (अल्ट्रा वायलैट) विकिरण में पाये जाने वाले अन्तरों के अनुकूल ढालना प्रतीत होता है।

उदाहरण के लिए, हमें यह मालूम है कि काले नीग्रो लोगों की त्वचा धूप से उतनी बुरी तरह नहीं झुलसती, जितनी कि श्वेतजातीय लोगों की झुलसती है और न उन्हें त्वचा का कैंसर ही होता है। उनकी त्वचा में मैलानिन अर्थात् रंग के, जो बाह्य त्वचा की सबसे गहरी परत में जमा हुआ एक रासायनिक पदार्थ होता है, ढेरों दाने होते हैं। जिन व्यक्तियों की त्वचा रंगहीन होती है, उन्हें 2967 ऐंगस्ट्रोम की शिखर सीमा पर सान्द्र पार-जम्बू (अल्ट्रा वायलेट) विकिरण की एक बहुत ही संकरी पट्टी के अन्तः प्रवेश के कारण धूप से झुलस जाने, त्वचा पर से पपड़ियाँ उतरने, छाले पड़ जाने और यहाँ

---

[1] विशेष रूप से देखिये ऐल० ऐच० न्यूबर्ग तथा अन्य साथियों द्वारा लिखित 'फीज़ियोलौजी ऑफ हीट रेडियेशन'; डबलू० बी० सौंडर्स कम्पनी, फिलाडल्फिया, 1949।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

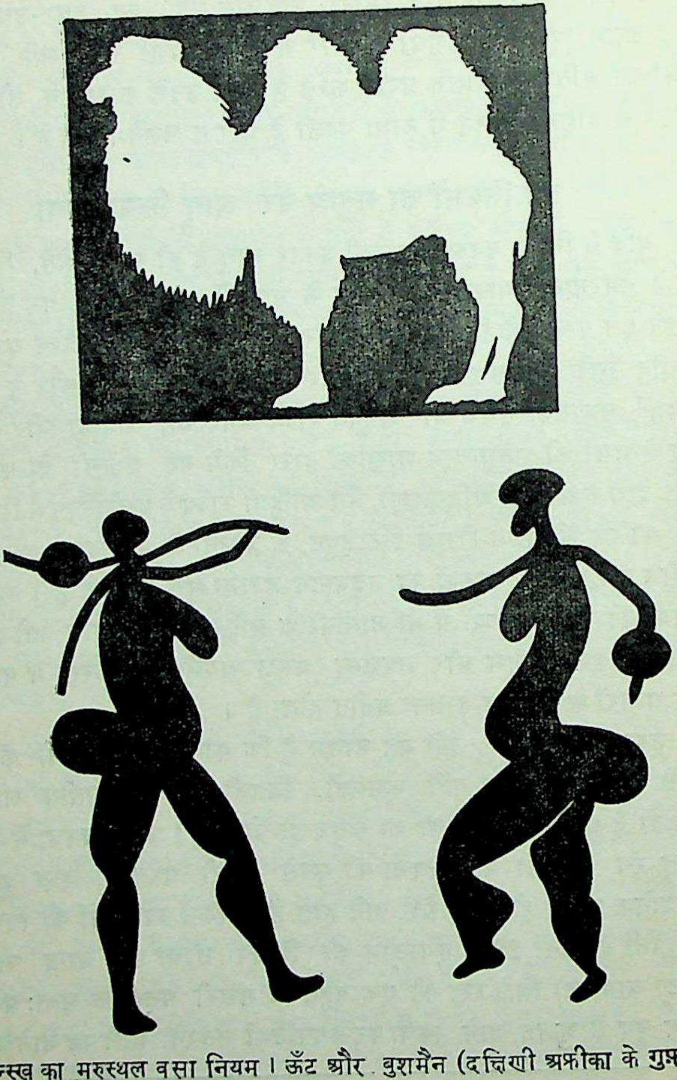

रैन्स्ख का मरुस्थल वसा नियम। ऊँट और बुशमैन (दक्षिणी अफ्रीका के गुफा चित्र) दोनों में मरुस्थल में जीवित बचे रहने के लिए आवश्यक वसा पिंड से रूप में ऐसे स्थानों पर जमा रहती है, जहाँ वह शरीर के ऊष्मा के बाहर निकलने में या चलने फिरने में रुकावट न डाले।

तक कि ज्वर और अवसन्नता का कष्ट होने लगता है। मैलानिन इन किरणों को त्वचा की संवेदनशील परतों तक पहुँचने से पहले ही सोख लेता है और उन्हें विकिरण ऊष्मा के रूप में बदल देता है; यह ऊष्मा कार्य तथा भोजन के चयापचयन (मैटाबोलिज्म) द्वारा शरीर के अन्दर उत्पन्न हुई ऊष्मा के साथ बाहर निकल जाती है।

नीग्रों तथा अन्य काली त्वचा वाले लोगों को त्वचा का गहरा (काला) रंग वंश-परम्परा से प्राप्त होता है, जबकि श्यामल श्वेतजातीय लोगों तथा मध्यम रंग की त्वचा वाले अन्य जातीय लोगों की आनुवंशिक रूप से यह क्षमता है कि मौसम विशेष में उनकी त्वचा का रंग गहरा (श्यामल) हो जाता है। ऊँचे अक्षांश वाले प्रदेशों में और जहाँ कुछ मौसमों में बादल छाये रहते हैं वहाँ, कम से कम सर्दियों में, श्वेत रंग की त्वचा लाभदायक रहती है, क्योंकि उसमें 'डी' विटामिन का अधिक से अधिक किरणीयन हो पाता है, जिसमें रंग के अधिक दाने होने की दशा में रुकावट पड़ेगी। अन्य बाल-रहित प्राणियों की भाँति मनुष्य में विटामिन 'डी' सीधा रक्त की धारा में रम जाता है, क्योंकि यह बालों के आवरण के ऊपर उत्पन्न न होकर त्वचा के अन्दर की ओर उत्पन्न होता है।

नीग्रो लोगों की त्वचा में एक मोटी ऊपरी कठोर परत भी होती है। यह छिलने से बचाती है और उन जीवाणुओं को अन्दर घुसने से रोकती है, जिन्हें मारने के लिए गर्म, आर्द्र वायु मंडल में शुष्क वायु की अपेक्षा 10 गुने पारजम्बू (अल्ट्रा वायलेट) विकिरण की आवश्यकता होती है। उष्ण कटिबन्ध में नीग्रो लोगों में रोगों का संक्रमण श्वेतजातीय लोगों की अपेक्षा कम होता है। इन सब कारणों से यह बात संगत प्रतीत होती है कि काली त्वचा वाले लोग 'पुरानी दुनिया' में भूमध्य रेखा के आस-पास के कटिबन्ध में पाए जाते हैं और इसी प्रकार इस बात की भी संगति बैठ जाती है कि पीली त्वचा वाले लोग उत्तर-पश्चिमी यूरोप के मेघ-बहुल प्रदेश में संकेन्द्रित हैं।

मानवीय आँख का भी पारजम्बू (अल्ट्रा वायलेट) विकिरण से सम्बन्ध है। आँख का लैंस दृश्य प्रकाश के लिए तो पारदर्शक है, किन्तु वह सभी जातियों के लोगों की आँखों में वायुमंडल की पारजम्बू किरणों को पूर्णतया सोख लेता है और इस प्रकार अन्धता के एक सम्भावित कारण को हटा देता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है। आँख उस प्रकाश की मात्रा को भी नियमित करती है, जिसे कि यह एक स्वतः चल डायफ्राम, परितारिका (आइरिस), द्वारा अन्दर आने देती है। वर्णहीन (ऐल्बिनो) लोगों की आँखों के सिवाय, जो इस दृष्टि से सदोष होती हैं, अन्य सब लोगों की आँखों में परितारिका (आइरिस) का पृष्ठ भाग मैलानिन की एक परत के कारण अपारदर्शक बना रहता है। मैलानिन की इस परत की तुलना कैमरे के डायफ्राम के अन्दर की ओर किये गए चमकहीन काले लेप से की जा सकती है और यह भी उसी प्रयोजन को पूरा करती है; वह प्रयोजन यह है कि आँख या कैमरे में प्रकाश आने के लिए जो छिद्र बनाया गया है, उसके सिवाय अन्यत्र कहीं से अन्दरके कक्ष में प्रकाश को न आने दिया जाय। सब जातियों में रंग की यह विशिष्ट परत भ्रूण की आँख में भी विद्यमान रहती है। नीग्रो लोगों की त्वचा के रंग की भाँति शरीर इसे सूर्य की सहायता के बिना ही उत्पन्न कर लेता है।

नीली आँख में हमें जो रंग दिखाई पड़ता है, वह एकमात्र यही रंग होता है। यद्यपि इसका असली रंग चाकलेट जैसा भूरा होता है, फिर भी इसके सामने की ओर स्थित ऊतकों (टिश्यू) के कारण इसका रंग कुछ और ही दिखाई पड़ता है। हल्के रंग की त्वचा वाले लोगों के अग्रबाहुओं में त्वचा के पार जो शिराओं के रक्त का रंग दिखाई पड़ता है, उसमें भी यही बात होती है। धुँधले से लेकर साधारण प्रकाश तक में रंग की एक परत परितारिका (आइरिस) को इतना समर्थ बनाए रखने के लिए काफी होती है कि वह प्रकाश को अन्दर न आने दे। डायफ्राम की बाहरी सतह पर लगी हुई एक और परत अत्यधिक चमकीले, विसरित (डिफ़्यूज़) प्रकाश को भी कक्ष के अन्दर नहीं जाने देती। जिन आँखों में अतिरिक्त बचाव की यह व्यवस्था रहती है, वे भूरी दिखाई पड़ती हैं। यदि यह ऊपरी परत विशेष रूप से गहरी हो, तो आँख चाकलेट जैसी भूरी या काली दिखाई पड़ती है। भूरी या काली आँखों को एक और सुविधा यह रहती है कि उनमें दृष्टि पटल (रेटिना) की शलाकाओं और शंकुओं के बीच मैलानिन के दानों का निक्षेप विसरित प्रकाश को सोख लेता है और चौंध को रोकने में सहायक होता है। नीग्रो लोगों की काली पलकें और मंगोलजातीय लोगों की मोटी पलकें और संकरे अक्षिद्वार भी चौंध को रोकने में सहायक होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वे जीन, या जीनों का वह सम्मिश्रण जिसके फलस्वरूप हल्के रंग की आँखें बनती हैं, मनुष्य जाति में और कुछ निशाचर पशुओं में समान रूप से दिखाई पड़ता है। नीले, धूसर और हरे रंग के परितारिका पट्टों (पुतलियों, आइरिस) के नमूने आस्ट्रेलियाई आदिवासियों, आइनू लोगों, कुछ अमेरिकी आदिवासियों, अरबों, भारतवासियों, साइबेरिया के मूलवासियों, और अन्य अनेक गैर-यूरोपीय लोगों में पाए जाते हैं। किन्तु बहुत लम्बे समय से धुंधले प्रकाश वाले देशों में (जैसे कि ब्रिटेन के द्वीप और बाल्टिक के आस-पास के प्रदेश हैं) रह रहे जन-समुदायों और इन जन-समुदायों के हाल ही में स्थापित हुए समुद्र-पार उपनिवेशों में यूरोपीय लोगों की आँखें हलके रंग की होती हैं।

पिंगल केश भी यूरोपीय लोगों के साथ-साथ अन्य लोगों के भी होते हैं। मरुस्थल में रहने वाले कुछ आस्ट्रेलियाई आदिवासी बचपन में पिंगलकेशी होते हैं, और उनमें से कुछ थोड़े-से लोग बाल सफेद होने तक पिंगलकेशी बने रहते हैं। पिंगलकेशिता बन्दरों और चिम्पांज़ियों में भी आ जाती है। यह किसी बहुत ही परिवर्तनशील वंश (स्टॉक) में संभावित अनेक आनुवंशिक परिवर्तनों में से एक है। हलके रंग की आँखों की भाँति किसी जन-समुदाय में इसकी आवृत्ति (वारम्बारता) आनुवंशिक यंत्रजात द्वारा बढ़ाई जा सकती है। यह अभी तक पता नहीं है कि इसका कोई वरणात्मक (सिलैक्टिव) महत्त्व है या नहीं।

पारजम्बू (अल्ट्रा वायलेट) और दृश्य प्रकाश तो पशुओं और मनुष्यों की रंग-योजना पर प्रभाव डालते हैं, और जलवायु की पराकाष्ठाएँ उनके आकार और रूप की सीमाएं निर्धारित कर देती हैं। एक पराकाष्ठा आर्द्र ऊष्मा है, जो उष्ण कटिबन्ध के जंगलों में पाई जाती है, जहाँ ऊँचे-ऊँचे पेड़ सिर के ऊपर पत्तों का वितान बना देते हैं। उनकी पत्तियों से जल के वाष्पीभवन के फलस्वरूप उनके नीचे की अल्प प्रकाशित, आर्द्र और गतिरहित वायु का तापमान 83 डिग्री फारनहाइट बना रहता है, जो संतृप्त वायुमंडल में एक संकटजनक परिसीमा है। कर्क और मकर कटिबन्धों के निकट स्थित मरुस्थलों में वर्ष के उन दिनों में, जबकि सूर्य सीधा सिर के ऊपर होता है, दोपहर के समय छाया में तापमान प्रायः 120 डिग्री फारनहाइट तक पहुँच जाता है, जबकि पथरीली या रेतीली भूमि पर वह संकटजनक रूप से 200

डिग्री फारनहाइट के आस-पास तक जा पहुँचता है।

मध्यवर्ती और उच्च अक्षाँश रेखाओं पर निम्नतम तापमान बहुत ऊँचाई वाले उन प्रदेशों में पाए जाते हैं, जो समुद्र से इतने दूर हैं कि समुद्र के कारण उनके तापमान पर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ सकता। ये बातें उत्तरी एशिया में मिलती हैं। साइबेरिया में स्थित वर्खोयान्स्क में, जो बसे हुए संसार की शीत की दृष्टि से राजधानी है,—87 डिग्री फारनहाइट तक के तापमान का अभिलेख है। उत्तरी एशिया की समूची मेखला, जिसका विस्तार उत्तर-पूर्वी यूरोप में, और दक्षिण की ओर तिब्बत के पठार में हुआ है, एक ऐसा शीतल प्रदेश है, जिसकी तुलना आकार तथा शीत की दृष्टि से ग्रीनलैंड तथा दक्षिणी ध्रुव के निर्जन (बिना बसे) हिम किरीटों के सिवाय अन्यत्र कहीं-नहीं है। 'नई दुनिया' (अमेरिका) में पर्वत पूर्व से पश्चिम की ओर न फैलकर, जैसे कि वे एशिया में हैं, उत्तर से दक्षिण की ओर फैले हुए हैं। इस सीधे से तथ्य के कारण, उत्तरी अमेरिका का इससे मिलता-जुलता शीतल अंचल (ज़ोन) इसकी भांति सब ओर से घिरा हुआ नहीं है और निःसन्देह इस अन्तर का कुछ असर इस बात पर अवश्य रहा है कि इस गोलार्द्ध में पशुओं और मनुष्यों, दोनों में ही स्पीशिज़ों और जातियों (रेस) की विभिन्नता का अपेक्षाकृत अभाव रहा है।

जैसा कि हर कोई जानता है, मानव-प्राणियों के आन्तरिक अंग केवल 98·6 डिग्री फारनहाइट के आस-पास के तापमान पर ही सुचारू रूप से काम करते हैं और इसके ऊपर और नीचे, दोनों ओर निरापद सीमा बहुत थोड़ी है। ये अंग दो स्थानों पर, धड़ में और सिर में, विभक्त हैं। न तो धड़ के अन्दर स्थित अंगों को और न मस्तिष्क को ही सामान्य की अपेक्षा बहुत अधिक गर्म या बहुत अधिक ठंडा होने दिया जा सकता है; यदि होने दिया जाएगा, तो कार्यक्षमता बहुत कम हो जाएगी। 77 डिग्री फारनहाइट और 110 डिग्री फारनहाइट पर तो मृत्यु हो जाती है। दूसरी ओर, सारे शरीर की त्वचा की सतह और अंगों के आन्तरिक ऊतकों (टिश्यू) के तापमान में काफ़ी अन्तर हो सकता है और होता है, और उससे किसी प्रकार का संकट नहीं होता। अब शरीर अपना तापमान एक-सा बनाये रखने के लिए जो ऊष्मा उत्पन्न करता है, वह केवल एक ही स्रोत, खाये हुए भोजन, से प्राप्त होती है। यह भोजन ऊर्जा में रूपान्तरित हो जाता है; यह ऊर्जा नियमित कोशा (सैल) रसायन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

द्वारा और माँसपेशियों के कार्य द्वारा शरीर को गर्मी देती रहती हैं। यदि शरीर का ठीक ढंग से काम करते रहना अभीष्ट है, तो प्रत्येक व्यक्ति को खाना खाना होगा और प्रत्येक व्यक्ति को ऊष्मा की एक निश्चित मात्रा अपने शरीर से बाहर निकाल देनी होगी।

जब वायुमण्डल का तापमान 83 डिग्री फारनहाइट से कम होता है, तब साधारण, स्वस्थ, श्वेतजातीय मनुष्य के शरीर से विश्राम की अवस्था में ऊष्मा उसके शरीर की सतह से विकिरण द्वारा निकलती रहती है। 83 डिग्री फारनहाइट पर उसे पसीना आने लगता है। यदि वायुमण्डलीय तापमान संतृप्त हो (अर्थात् उसमें आर्द्रता भरी हो) और हवा न चल रही हो, तो उसका पसीना वाष्प बनकर उड़ नहीं पाता और इस प्रकार इस मार्ग से ऊष्मा का बाहर निकलना बन्द हो जाता है। यदि आर्द्रता कम हो, तो पसीना 104 डिग्री फारनहाइट के तापमान तक भी सन्तोषजनक रूप से वाष्प बनकर उड़ता रहता है। इन सीमाओं से आगे पसीना इतनी तेज़ी से वाष्प बनकर नहीं उड़ पाता कि यह त्वचा को शीतल रख सके। तब ऊष्मा की मात्रा बहुत अधिक हो जाती है; और यदि ऐसे तापमान पर काम किया जाय, तो ऊष्मा और भी अधिक बढ़ती है। ऐसी दशाओं में काम करने वाले व्यक्ति को विवश होकर बड़ी मात्रा में पानी पीना पड़ता है। वह आठ घण्टे में इतना पानी पी जा सकता है, जितना कि उसके शरीर में कुल मिलाकर रक्त है। ऐसी दशा में एक साधारण श्वेतजातीय अमेरिकावासी व्यक्ति के हृदय को हाथों और पैरों में रक्त पहुँचाने के लिए बहुत अधिक श्रम करना पड़ता है, जिससे कि उसकी स्वेद ग्रन्थियों को पानी मिलता रह सके। मस्तिष्क में बहुत थोड़ा रक्त पहुँच पाता है और सम्भवतः इसी कारण कुछ श्वेतजातीय लोगों के लिए गर्म मौसम में सृजनात्मक कार्य कर पाना कठिन है।

यद्यपि मानवीय त्वचा में सभी जगह स्वेद ग्रन्थियाँ विद्यमान हैं, फिर भी ऊष्मा के क्षय (बाहर निकल जाने) के प्रधान मार्ग शाखाएँ, विशेष रूप से हाथ और बाँहें, हैं। किसी भी साधारण व्यक्ति में स्वेद की साधारण दशाओं में शरीर के समूचे उष्मा-क्षय का 20 प्रतिशत भाग बाँहों और हाथों से, विशेष रूप से अँगुलियों में से होता है। यह इस कारण होता है कि इन अंगों का आकृति अपेक्षाकृत पतली है और इनमें रक्तवाहिनियाँ विशेष रूप से अधिक

हैं, जो शारीरिक कार्य के वास्ते ऊर्जा-संभरण के लिए भी उपयोगी हैं। जब बाहर के वायुमण्डल का तापमान साधारण होता है, तब जो रक्त धमनियों में होकर हाथों में पहुँचता है, वह उन शिराओं के, जो धमनियों के सब ओर बुनी-सी हुई हैं, जाल में से होकर वापस लौटता है। इस प्रकार हाथ से लौटता हुआ ठण्डा रक्त धमनियों में होकर हाथ की ओर जाते हुए रक्त को ठण्डा कर देता है और इस प्रकार अधिक ऊष्मा के क्षय को रोकता है और इसके साथ-साथ ही लौटता हुआ रक्त हृदय में पहुँचने से पहले ही गर्म हो जाता है। परन्तु जब बाहर के वायुमण्डल का तापमान संकटबिन्दु से, जो 83 डिग्री फारनहाइट है, अधिक हो जाता है, तब शिराओं का रक्त एक वैकल्पिक अथवा संकटकालीन शिराजाल में से होकर, जो त्वचा की सतह के साथ-साथ बिछा हुआ है, लौटने लगता है और बाँह तथा हाथ में से गुज़रने वाले रक्त की मात्रा बढ़ जाती है। यह संकटकालीन शिरा जाल स्वेद ग्रन्थियों के लिए प्रभूत मात्रा में रक्त का संभरण करता है और इस प्रकार आन्तरिक अंगों में गति करने वाला रक्त ठण्डा हो जाता है। यह संकटकालीन शिराजाल तापमान की निचली सीमारेखा, अर्थात् 41 डिग्री फारनहाइट पर फिर सक्रिय हो उठता है। जब तापमान इस दूसरे संकट-बिन्दु से नीचे गिरने लगता है, तब वह रक्त, जो पहले भीतरी शिरा प्रणाली में से होकर बह रहा था, फिर त्वचा की सतह के पास वाली शिरा प्रणाली में से होकर बहने लगता है और उस रक्त की मात्रा बढ़ जाती है। इस प्रकार हाथ और बाँहें सर्दी में जमने से बची रहती हैं।

अग्रबाहु तथा हाथ की लम्बाई, और त्वचा-सतह के क्षेत्रफल दोनों के जातीय अन्तरों का और त्वचा के ठीक नीचे विद्यमान शिराओं के प्रकार (पैटर्न) का अत्यधिक गर्मी और सर्दी को सह पाने की अलग-अलग मनुष्यों की क्षमता के साथ बहुत अधिक सम्बन्ध है। इसकी परख करने के लिए एक परीक्षण यह है कि किसी व्यक्ति के हाथ को हिम-शीतल जल में डुबाकर रखा जाय और तब रक्त के प्रवाह और ऊष्मा-क्षय को नापा जाय। शरीर-क्रियावेत्ताओं ने इस परख को करके देखने के बाद यह पता चलाया है कि फुएगो के मूलवासी, अलास्का के मूलवासी, ऐस्किमो और साइबेरियावासी कबीलों के लोग अपने हाथों को अत्यधिक रक्त प्रवाह द्वारा गर्म रख पाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ये सबके सब मंगोलजातीय हैं। जिन भी काकेशियाई लोगों की परख की गई है, उनमें से उत्तरी ध्रुव के लैपलैण्डवासियों और नार्वे के मछियारों समेत कोई भी उस सीमा तक शीत का प्रतिभावन (रिस्पौंस) कर पाने में समर्थ नहीं हुआ।

केवल मंगोलजातीय लोग ही ऐसे प्रमाणित हुए हैं, जो साधारण सर्दी को नग्नावस्था में अपेक्षाकृत अधिक कैलोरियाँ (ऊष्मांक) जलाकर अन्य-अन्य लोगों की अपेक्षा कहीं अधिक सह सकते हैं। यह बात दक्षिणी चाइल के अलाकालुफ आदिवासियों में विशेष रूप से पाई जाती है, जो बीसवीं शताब्दी में भी काफ़ी समय तक हिमपात और हिमवृष्टि में भी नंगे ही घूमते फिरते थे। केवल मंगोलजातीय, ऐंडाज़ और तिब्बत में रहने वाले, लोग ही बहुत तुंगता वाले स्थानों पर कार्य करने में और प्रजनन में समर्थ होते हैं।

परन्तु अन्य लोगों में अन्य प्रकार के अनुकूलन हैं। आस्ट्रेलिया के आदिवासी लोग मरुस्थल में इतनी सर्दी में भी, जिसमें पानी लगभग जम जाय, नंगे सो सकते हैं। वे अपनी बाँहों और टांगों में बाहर की ओर जाने वाले धमनी-रक्त और हृदय की ओर लौटने वाले शिरा-रक्त में ऊष्मा के विनिमय द्वारा ऐसा कर पाने में समर्थ होते हैं। अलाकालुफ लोगों में जहाँ कैलोरियाँ (ऊष्मांक) जलकर समाप्त हो जाती हैं, वहाँ आस्ट्रेलियावासियों में वे बची रहती हैं। विचित्र बात यह है कि स्कैण्डनेविया के रैनडियरजीवी लैपलैण्डवासी लोग अपने तम्बुओं में आस्ट्रेलियावासियों की पद्धति से ही रात में ठिठुरने से बच पाते हैं। नीग्रो लोग विशेष रूप से इस बात के लिए विख्यात हैं कि वे आर्द्र गर्मी में भी अपने आपको ठण्डा रख सकते हैं। वे ऐसा किस प्रकार करते हैं, यह हमें अभी तक ठीक-ठीक नहीं मालूम, पर आशा है कि शीघ्र ही मालूम हो जायगा। इसका एक कारण यह है कि तरुण, सक्रिय नीग्रो लोगों में उसी आयु, पौषणिक इतिहास कार्य की आदतों वाले श्वेतजातीय लोगों की अपेक्षा कम चर्बी होती है।

परन्तु चर्बी (वसा) किसी एक जाति की बपौती नहीं है। सभी जातियों के वे मनुष्य, जो अधिक खाते हैं, अधिकतर मकानों के अन्दर रहते हैं और बहुत कम व्यायाम करते हैं, पालतू पशुओं की भाँति थुल्लड़ (मोटे) हो जा सकते हैं। अपने लिए लड़ना और भाग निकलना असम्भव बनाकर वे पालतू,

अपनी रक्षा के लिए अपेक्षाकृत अधिक सक्रिय मानव प्राणियों की संरक्षा पर आश्रित हो गए हैं और इस प्रकार स्वयं पालतू बन गए हैं। आधुनिक जीवन की वाष्प-तापित, वातानुकूलित, और श्रम की बचत करने वाली दशाओं में सब प्रकार के लोग लगभग हर किसी ऐसी जगह, जहाँ वे अपना साज-सामान ले जा सकें, जीवन-यापन कर सकते हैं।

जाति का अर्थ

मानवीय समुदायों में विद्यमान अन्तरों में से कुछ ऐसे हैं, जो एक ही पीढ़ी में या कुछ थोड़ी-सी पीढ़ियों में अर्जित किये जा सकते हैं। सिसली से आये हुए उन माता-पिता से, जो बीस से तीस वर्ष तक की आयु में अमेरिका चले आये थे, उत्पन्न अमेरिकी लोग अपने माता-पिता से काफी अधिक ऊँचे होते हैं। अंग्रेज माता-पिता से उत्पन्न वे अमेरिकी लोग, जो हार्वर्ड में शिक्षा पाते रहे हैं, हर पीढ़ी में ऊंचे और ऊँचे होते जाते हैं। कुछ अमेरिकी लोग, जो मिनेसोटा में इटालियन माता-पिता से उत्पन्न हुए हैं और वे अन्य अमेरिकी, जो वहीं फिनलैण्ड में रहने वाले लोग पुराने इटलीवासियों से कद में कहीं बड़े होते हैं। फिलस्तीन में उत्पन्न यहूदियों की नई पीढ़ी के साब्रा लोग घैटो (यहूदी मुहल्ले) में उत्पन्न होने से माता-पिता की अपेक्षा कहीं ऊँचे और हृष्ट-पुष्ट हैं।

ऊपर गिनाये गए कुछ परिवर्तनों पर पोषण, तथा घर के बाहर बनाम घर के अन्दर जीवन का भी उतना ही अधिक प्रभाव पड़ता है, जितना जलवायु के अन्तर का। मानव-शरीर आकार और आकृति की दृष्टि से इतना सुघट्य है कि हम परिवेशसम्बन्धी नये उद्दीपनों द्वारा आकारों और आकृतियों को कुछ ही पीढ़ियों में बदल सकते हैं और उन उद्दीपनों को हटा लेने की दशा में उन्हें फिर पहली अवस्था में पहुँचा सकते हैं। अन्य अन्तर अपेक्षाकृत अधिक घनिष्ठ रूप से हमारे जीनों द्वारा नियन्त्रित रहते हैं और ये हमारे त्वचा के रंग, बालों की वनावट, चेहरे की बनावट और दाँतों के आकार-सम्बन्धी प्राचीन जातिगत अन्तर हैं। इस प्रकार की विशेषताएँ, जब वे समूचे के समूचे जनसमुदाय में पाई जाती हों, केवल अन्य जातियों के साथ मिश्रण और वरण द्वारा ही बदली जा सकती हैं।

जहाँ नीग्रोजातीय और उत्तरी मंगोलजातीय लोग शरीर-क्रिया की दृष्टि

से कठिन परिवेशों में रहने के लिए अनुकूलित हो गए, वहाँ काकेशियाई अथवा श्वेतजातीय लोग इनके लिए अनुकूलित नहीं हो पाये, क्योंकि वे संसार के उन भागों में रहते रहे, जहाँ ऊष्मा और प्रकाश की दृष्टि से जलवायु अनुकूलतम था, जहाँ पारजम्बू (अल्ट्रा वायलेट) विकिरण इतना प्रबल नहीं था कि मौसम में पपड़ियाँ उतरने की क्षमता वाली त्वचा उसे सह न पाती, और जहाँ वर्ष की अधिकांश ऋतुओं में मनुष्य की रक्त संचार प्रणाली पर उसके शरीर को ठण्डा या गर्म रखने का ही बहुत बोझ नहीं बना रहता था। श्वेतजातीय लोग 'पुरानी दुनिया' के सर्वोत्तम भूभाग में उत्पन्न हुए; उन्हीं लोगों ने सभ्यता की मुख्य परम्परा को धातु युग की देहरी तक और उससे आगे पहुँचाया।

इसका अवश्य ही यह अर्थ नहीं है कि केवल श्वेतजातीय लोगों में ही सांस्कृतिक परिवर्तन उत्पन्न करने की क्षमता है, या थी। मंगोलजातीय लोगों ने उच्चकोटि की सभ्यताओं को जन्म दिया और ऐसा ही अमेरिकी आदिवासियों ने भी किया था। अफ्रीका में जलवायु सम्बन्धी असुविधाओं में रहते हुए नीग्रो लोगों ने काफी जटिल सामाजिक व्यवस्थाएँ और उच्च कोटि की कला विकसित कर ली थी, जिसकी उत्कृष्टता का मूल्यांकन करना श्वेत जगत् अभी शुरू ही कर रहा है। स्वयं श्वेतजातीय लोगों में काफी व्यवधान दिखाई पड़ता है। जापान के रोमश आइनू लोग आदिवासी ही हैं, जिन्हें मंगोलजातीय लोगों ने आरक्षित भूखण्डों की ओर धकेल दिया है, और आस्ट्रेलिया के आदिवासी, विशेष रूप से उन जातियों के, जो अंग्रेजों के वहाँ पहुँचने के समय अपेक्षाकृत अधिक शीतल और उर्वर प्रदेशों में रहती थीं, बचे हुए थोड़े-से लोग चकमक को तोड़कर बनाये गए अस्त्रों का उपयोग करने वाले शिकारी, ही थे।

क्योंकि जाति किसी समय आवश्यक थी, इसलिए इसने मनुष्य जाति के विकास में अपना योग दिया। इसने पृथ्वी के हिम से न ढके हुए सब क्षेत्रों को उन्मुक्त कर देने, अनेक प्रकार के पौधों और पशुओं को पालतू बनाने, और परिवहन तथा संचार के अनेक प्रकार के साधनों के आविष्कार को सम्भव बनाया। अनेक जातियों के सामूहिक योग दान के बिना हमारी आधुनिक सभ्यता का बन पाना असम्भव ही होता।

परन्तु सांस्कृतिक विकास के कुछ सोपानों में जाति सामाजिक तथा आर्थिक प्रतिष्ठा (हैसियत) के एक ऐसे प्रतीक के रूप में काम आती रही है, जो एक

ऐसे जगत् में व्यवस्था बनाये रखने में उपयोगी रहा है, जिससे सम्पत्ति में, तकनीकी कौशल में और शिक्षा के स्तरों में अनेक विषमताएँ परिरक्षित रही हैं। एक प्रतीक के रूप में जाति के इस उपयोग का संसार के, सौर विकिरण की पराकाष्ठाओं के लिए अनुकूलित, लोगों पर गहरा और स्थायी प्रभाव पड़ा है। जब पृथ्वीतल की विजय और आगे तक की जा चुकी और जब शिक्षा का प्रसार अपेक्षाकृत अधिक हो गया, तब काले और पीले कहे जाने वाले लोगों में, जिन्हें उनके अपने ही देशों में सर्वोत्तम क्लबों' में घुसने नहीं दिया जाता था, बहुत उग्र प्रतिक्रिया हुई और उस प्रतिक्रिया के फल अब तक भी हम भुगत रहे हैं। आधुनिक तकनीकी प्रगति ने एक ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है, जिसमें सब जातियों के लोगों में ठीक उसी प्रकार सांस्कृतिक एकता हो जायगी, जैसे कि प्लीस्टोसीन काल के पिछले भाग में सैपियन्स मानुष एक ही स्पीशिज़ बन गया था। प्रश्न यह है कि प्रगति के लिए आवश्यक विभिन्नता को गँवाये बिना उस एकता को शान्तिपूर्वक स्थापित किया जा सकता है।

इतिहास की पहली प्रावस्था में जाति का कोई गम्भीर सामाजिक समस्या बन सकना मुश्किल ही था। मनुष्य का एक ही प्राणिवैज्ञानिक प्रदेश पर दखल था; अनुकूलन का अर्थ सामाजिक दृष्टि से बचे रहना कम और भौतिक रूप से जीवित रहना अधिक था, और अन्तर्जातीय (इण्टर रेस प्रतियोगिता वंशों—जीनस) और स्पीशिज़ों में चल रही प्रतियोगिता के समक्ष गौण हो गई थी। दूसरी प्रावस्था में भी, जब कि सैपियन्स मानुष 'पुरानी दुनिया' के ठण्डे भागों में और उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका में फैल गया, जीवन इतना सरल ढंग से संगठित था कि जातीय अन्तर के आधार पर वर्गों (श्रेणियों) का बन पाना कठिन था। इस बात का पता हमें अपने इस समय बचे हुए शिकारी लोगों के अध्ययन से चलता है। इतिहास की तीसरी प्रावस्था में मानवीय सूझ-बूझ ने कुछ थोड़े-से लोगों को सुख सुविधा देने के और अधिकाधिक विस्तृत होते जाने वाले श्रम-विभाजन के साधन ढूँढ़ निकाले। राजाओं और नियोक्ताओं के लिए यह सम्भव हो सका कि वे समूचे के समूचे जन समुदायों को एक परिवेशात्मक प्रदेश से दूसरे में स्थानान्तरित कर सकें। जाति पदस्थिति (रैंक) और परिष्ठा (स्टेट्स) की प्रतीक बन गई। हमें इस बात का इसलिए पता है, क्योंकि मिश्र

की सरकार ने अपने राज्य क्षेत्र के दक्षिणी सीमान्त पर नीग्रो लोगों के उत्तर की ओर संचलन को नियन्त्रित करने के लिए एक आव्रजन केन्द्र स्थापित किया था। यह ईस्वी पूर्व की तीसरी सहस्राब्दी की बात है, जो लिखित इतिहास के ऊषाकाल के निकट का समय था। मनुष्य की कहानी के अपने इस सर्वेक्षण में अब हम फिर उसी काल की ओर लौटते हैं।

7

पहिये, धातु और लेखन

कांस्य युग का महत्त्व

3000 ई० पू० के आस-पास कोई ऐसा आकाशविहारी प्रेक्षक, जो दसियों हज़ार वर्षों से पृथ्वी के ऊपरी तल को ध्यान से देखता रहा था और हिमाच्छादन काल के हिमकिरीटों की हलचल को और वनों तथा मरूस्थलों के किनारों के आगे बढ़ने और पीछे हटने को निरखता रहा था, अब काफी लम्बे समय बाद कुछ क्षत-विक्षत हुए प्रदेशों में इस ग्रह (पृथ्वी) की त्वचा पर उन स्थानों पर, जहाँ कि मनुष्य का हाथ क्रियाशील रहा था, अनेक घावों के निशान और नग्न स्थान देख सकता था। अनेक सीधी और आड़ी तिरछी रेखाएँ, जो अस्पष्ट रूप से और कुछ गौण रीति से मंगल ग्रह की नहरों की याद दिलाती है, सिंचाई की नहरों और उन पर आश्रित खेतों को सूचित करती थीं। बड़ी-बड़ी नदियों को शीशे जैसी सतह पर धारा की दिशा और प्रबलता की परवाह न करके इधर-उधर चलते हुए बिन्दु अन्तर्देशीय नौवहन का प्रमाण थे और पीताभ पहाड़ियों के ऊपर रेंगते हुए और भी छोटे-छोटे बिन्दुओं की कतारें इस बात को प्रकट करती थीं कि इस सुसंगठित परिवहन को स्थल भाग में पशुओं की पीठ पर लादकर जारी रखा जा रहा था। कहीं-कहीं दीमक की बाँबी की तरह ऊपर को उठा हुआ कोई उभार, जिसमें तितैयों के छत्ते की भाँति अलग-अलग घर बने होते थे, अपने ईंटों के भट्टों और डबलरोटी बनाने के कारखानों, धातु की गलाई और ढलाई करने के कारखानों,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्नानघरों और पवित्र वेदियों की अनेक अग्नियों से धुएँ की रेखाएँ आकाश में छोड़ता दिखाई पड़ता था। यह कोई छोटा-सा कस्बा या बड़ा नगर होता था। संसार के कुछ थोड़े-से भागों में कांस्य युग शुरू हो चुका था।

नव-पाषाणिक युग में आधुनिक जीवन के भौतिक आधार की स्थापना की जा चुकी थी। लोगों ने भूमि को जोतना और पशुओं को पालना सीख लिया था। जिन खाद्यान्नों को वे उगाते थे, वे अब भी हमारे प्रधान भोजन हैं। उन किसानों ने, जिनके पास बैलों की पीठों और छोटी-छोटी नावों से बढ़कर परिवहन का कोई अन्य साधन नहीं था, यह अनुभव कर लिया था कि गाँव बनाकर रहना जीवित रहने का सबसे आसान और सबसे मितव्ययी तरीका है। नव-पाषाणिक युग के पिछले भाग में, संसार के उन अपेक्षाकृत अधिक सम्पन्न भागों में, जहाँ परिवहन सबसे आसान था और जहाँ खाद्य को इकट्ठा करके भंडारों में संगृहीत किया जा सकता था, बड़े-बड़े जन-समुदाय (बिरादरियाँ) बन गए थे।

यह बात उस समय तक समझी जा चुकी थी कि गाँवों के मध्य झगड़े लाभदायक वस्तु नहीं हैं। ऐसा कोई भी केन्द्रीय प्राधिकार, जो गाँवों के मध्य शान्ति बनाये रखता, उससे कहीं अधिक उपार्जन कर लेता था, जितना कि उस पर व्यय होता था। इन नये बड़ं-बड़े जन-समदायों में केन्द्रित इस प्रकार का प्राधिकार जहाँ-तहाँ अवश्य ही नव-पाषाणिक काल की समाप्ति से पहले ही बन चुका होगा, क्योंकि काँस्य युग के आरम्भ के समय इस प्रकार का प्राधिकार पहले से ही काम कर रहा था। कुछ लेखकों ने यह बताया है कि सिंचाई का नियमन करने की आवश्यकता ने सरकार को जन्म दिया। परन्तु मेरी सम्मत्ति में यह आवश्यकता अनेक घटक तत्वों में से केवल एक थी। मेरा विचार है कि अधिक महत्त्वपूर्ण कारण 'पुरानी दुनिया' की बड़ी-बड़ी नदी घाटियों में सैनिकों और पुलिस की, नाव द्वारा नदी की धारा में ऊपर या नीचे की ओर आ-जा सकने की क्षमता थी।

आरम्भिक काँस्य युग का राजा किसी बुशमैन गिरोह के उस सरदार के एक उन्नत रूप से कुछ अधिक नहीं था, जो किसी पवित्र वृक्ष के नीचे अपना आसन जगाता है, सब मारे हुए पशुओं को ले लेता है और माँस तथा उसे पकाने के लिए आग का बंटवारा करता है। वह राजा सब बहुमूल्य सामग्रियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

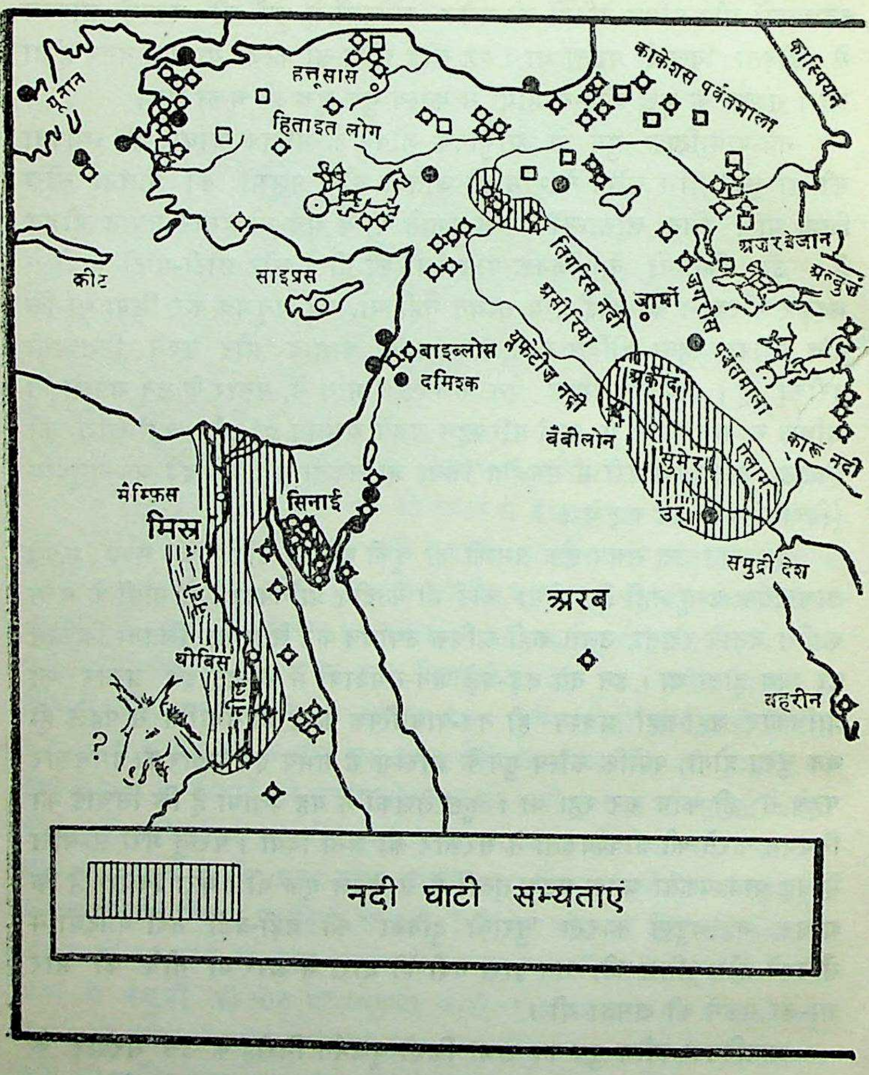
यूनान
हत्तूसास
हिताइत लोग
काकेशस पर्वतमाला
कास्पियन
क्रीट
साइप्रस
अज़रबैजान
अल्बुर्ज
तिगरिस नदी
असीरिया
जार्मो
ज़ागरोस पर्वतमाला
बाइब्लोस
दमिश्क
यूफ्रेटीज नदी
अक्काद
बेबीलोन
सुमेर
एलाम
कारूं नदी
उर
समुद्री देश
मैम्फ़िस
मिस्र
सिनाई
अरब
नील
थीबिस
?
बहरीन
▥ नदी घाटी सभ्यताएं

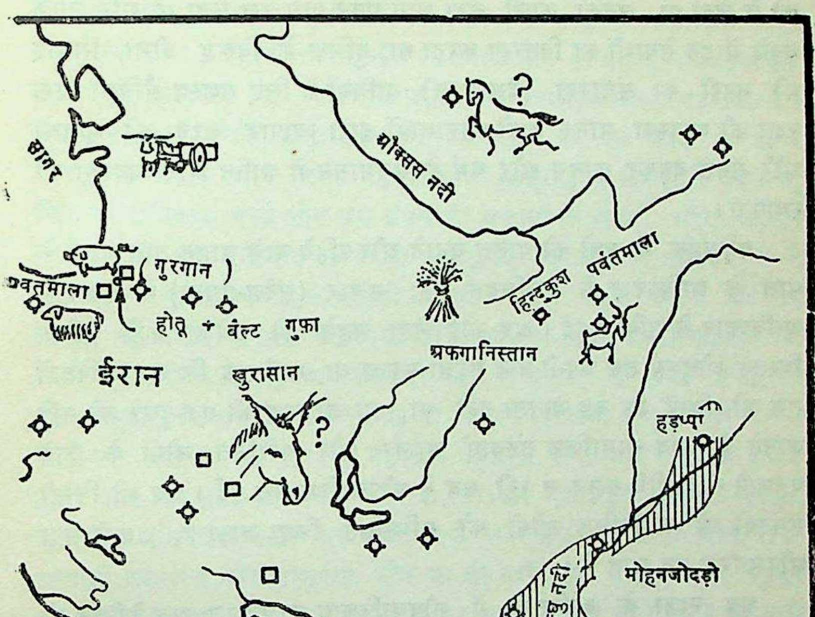
सागर
ऑक्सस नदी
?
(गुरगान)
पर्वतमाला
होतू
बेल्ट गुफा
ईरान
खुरासान
?
हिन्दकुश पर्वतमाला
अफगानिस्तान
हड़प्पा
मोहनजोदड़ो
सिन्धु नदी
◇ ताम्र के प्राप्ति स्थान
◇ वंग के प्राप्ति स्थान
○ ताम्र और कांस्य उद्योग के केन्द्र

को ले लेता था, उनका काफी बड़ा भाग अपने पास रख लेता था और उसके बदले में इन सेवाओं का वितरण करता था; दुर्भिक्ष के विरुद्ध बीमा, सिंचाई की नहरों का संधारण (देख-भाल), यात्रियों के लिए सशस्त्र सैनिकों द्वारा रक्षा की व्यवस्था, मानक बाटों और मापों द्वारा व्यापार करने की सुविधा और सबसे बढ़कर, क़ानून और धर्म के अनुशासन में शान्ति और व्यवस्था की स्थापना।

परिवहन में गधों को पालतू बनाने और पहिये वाले वाहन तथा नावों के पाल के आविष्कार से सहूलियत हुई; संचार (संदेश-प्रेषण) में लेखन के आविष्कार से सुविधा हुई। अब कोई नेता पहले की अपेक्षा कहीं अधिक विस्तृत श्रोतृवर्ग तक अपनी बात पहुँचा सकता था, यहाँ तक कि उन व्यक्तियों तक भी, जिन्हें कि वह जानता नहीं था, या जो स्वयं भी एक-दूसरे को नहीं जानते थे। जब सामाजिक संस्थाएँ सहचर और परिचित लोगों के जाने पहचाने सीधे-सीधे समूह न रहीं, तब वे औपचारिक बन गईं। जब भी किन्हीं संगठनों में अपरिचित लोगों को सम्मिलित किया जाता है, तब वे सदा औपचारिक बन जाते हैं।

अब राजा के व्यक्तित्व में सोपचारिकता का विशुद्ध तत्व केन्द्रित हो गया; साथ ही वह राजा पवित्र भी माना जाने लगा। बढ़िया कारीगरी की सब शानदार वस्तुएँ—सोना, पत्थर के बर्तन, धातु के बने शस्त्र, मूर्तियाँ, रत्नाभूषण, दुर्लभ लकड़ियाँ और सुगन्धित द्रव्य—सब उसकी निजी सम्पत्ति बन गईं। राजा द्वारा भेंट दिये जाने के अतिरिक्त विलास की वस्तुओं का अन्य कोई सार्वजनिक वितरण नहीं होता था। ज्यों-ज्यों कांस्य युग समाप्त होने लगा और धातु अधिकाधिक सामान्य वस्तु बनती गई, त्यों-त्यों एकाधिकार धीरे-धीरे शिथिल होता गया। जब नदी-घाटी सभ्यताओं में घोड़ों और रथों का प्रवेश हुआ, तब राजा लोग अपने पड़ोसियों को जीतने और लूटने के लिए सैनिक अभियात्री दल भेज पाने में समर्थ हो गए। तभी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और सांस्कृतिक आदान भी बढ़ा और इसी प्रकार कांस्य युग के लोगों द्वारा बसे हुए प्रदेश के आकार में वृद्धि हुई। फिर भी 'पुरानी दुनिया' की वे उच्च सभ्यताएँ, जो कांस्य युग के आरम्भ में विकसित हुई थीं, पृथ्वी के निवास योग्य तल के बहुत छोटे से अंश पर ही फैली हुई थीं।

उन श्रेष्ठ सभ्यताओं में, जिनमें लेखन का विकास हुआ, सामाजिक स्तूप बहुत संकरा था। यद्यपि लिपिक लोग लिखना जानते थे, परन्तु जन-साधारण उतने ही निरक्षर थे, जितने कि उनके नव-पाषाणिक दादा, पड़दादा थे। यद्यपि योद्धा लोग ताँबे, ताम्र-रजत् की मिश्र धातु के, या काँसे के शस्त्र धारण करते थे और अपने मर्मस्थानों को धातुनिर्मित कवचों से ढंकते थे, फिर भी अधिकांश बढ़ई लोग उस समय भी मकानों के खम्भों और जहाजों की तलियों को परिष्कृत पत्थर से बनाये गए बसूलों से ही तैयार करते थे और किसान लोग चकमक के हंसियों से या पकाकर बहुत कठोर की गई मिट्टी से बनाई चकमक के हंसियों की अनुकृतियों से ही अपनी फसलें काटा करते थे। नदी के किनारे खेत की उर्वर भूमि में मेहनत से अपने बैलों को हाँकता हुआ किसान यह देख सकता था कि उसका राजा एक शानदार नाव में बैठकर नदी पर जा रहा है; वह नाव बहुमूल्य रत्नों और स्वर्ण से जटित होती थी। जब कोई राजा मर जाता था, तो उसे एक बहुत बढ़िया मकबरे में दफ़न कर दिया जाता था और उसके साथ बैलों की जोड़ी और साज-सामान, शस्त्रास्त्र और आभूषण और या तो मारे हुए सैनिकों और सुन्दर तरूणियों के शव, या इस प्रकार के प्रेत-सदृश सेवकों की मिट्टी की बनी हुई छोटी-छोटी प्रतिमाएँ भी दफन की जाती थीं।

कांस्य युग का आरम्भ होते-होते उन तीन नदी-घाटियों के, जिनमें कि ये घटनाएँ घटित हुई थीं, अर्थात् नील नदी की, तिगरिस यूफ्रेटीज़ नदी की, और सिन्धु नदी की घाटियों के, बहुत-से किसान स्वतन्त्र नागरिक के रूप में अपनी परिष्ठा गंवा चुके थे और उनमें सांस्कृतिक व्यवधान उत्पन्न हो गया था, जितना कि वर्तमान शताब्दी के शुरू में इन्हीं घाटियों के किसानों के और उनके पाशाओं (pashas) और राजाओं (rajahs) के बीच विद्यमान था। जनसंख्या बढ़ते-बढ़ते इतनी हो गई कि अब हर कोई व्यक्ति अपने से मिलने वाले हर किसी व्यक्ति को पहचानता नहीं था। अपरिचित लोगों से सामना होना एक आम बात हो गई थी और अपरिचित लोगों के प्रति नृशंस होना उन लोगों के प्रति, जिन्हें कि हम रोज़ देखते हैं और जिनके साथ हमें रहना है, नृशंस होने की अपेक्षा कहीं आसान है।

कांस्य युग को कोई एक वर्गीकृत काल तो कह पाना असम्भव है, किन्तु इसको एक ऐसे संक्रमण काल के रूप में समझ पाना सम्भव है, जिसमें श्रम-साध्य हाथ की तकनीक के स्तर पर रहने वाले लोगों में पाये जाने वाले सरल प्रकार के मानवीय सम्बन्धों से एक ऐसी जटिलतर प्रणाली की ओर संक्रमण हो रहा था, जैसी कि उन लोगों में पाई जाती है, जो बड़े पैमाने पर उत्पादन की तकनीकों का प्रयोग करते हैं। कांस्य युग की समाप्ति होते-होते इन मध्य पूर्व की घाटियों के निवासी एक ऐसी संस्कृति तक पहुँच चुके थे, जिसे शक्ति से चलने वाली मशीनों के आधुनिक युग के उषःकाल तक भी कोई आविष्कार, या सारे संसार पर प्रभाव डालने वाली घटनाएँ वस्तुतः विचलित नहीं कर सकी थीं। इसी बीच में, इन नदियों के किनारे रहने वाले लोगों ने जिस संस्कृति को अधिगत कर लिया था, उसकी बारीकियाँ स्थल मार्ग और समुद्री मार्गों से अनेक दिशाओं में दूर-दूर तक फैल गई थीं। उनके आधारभूत तकनीकी आविष्कार, वैधानिक संहिताएँ, वैज्ञानिक खोजें और धार्मिक धारणाएँ उन राष्ट्रों तक पहुँच गई थीं, जो ऐसे इलाकों में बसे थे जिनके समृद्ध हो पाने की शक्यताएँ अधिक थीं; ये ऐसे राष्ट्र थे, जो यद्यपि विकसित तो उसी नव-पाषाणिक आधार से हुए थे, किन्तु उतनी तेजी से उन्नति नहीं कर पाये थे।

कांस्य युग की सभ्यता तीन आधारभूत खोजों या आविष्कारों के उपयोग पर आश्रित थी : धौंकनी युक्त लकड़ी के कोयले की भट्ठी, घूमता हुआ दण्ड (छड़) और लेखन। ऐसी अग्नि को, जो एक बन्द कक्ष में 1100 डिग्री और 1200 डिग्री शतांश के बीच तक का तापमान उत्पन्न कर सकती है, एक ही बार में पूरे भरे हुए चूल्हे की पाव रोटियों को सेकने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। ये रोटियाँ उन विशाल संख्यक लोगों को मानक भोजन के रूप में दी जा सकती हैं, जो किसी एक ही ऐसी निर्माण परियोजना में काम पर लगे हुए हों, जो उनके घर से इतनी दूर हो कि वहाँ उनकी पत्नियाँ या बच्चे उनके लिए भोजन लेकर न पहुँच सकते हों। इस प्रकार की ऊष्मा मिट्टी के बर्तनों से भरे आवे को भी तपाने के काम आ सकती है। आरम्भिक नव-पाषाणिक काल में खुली भट्टियों में लकड़ी जलाकर उत्पन्न किये गए अपेक्षाकृत कम तापमान से जो मिट्टी के बर्तन तैयार होते थे, उनकी दीवारें मोटी होती थीं, वे अन्दर से नरम होते थे और आसानी से टूट जाते थे। इसके

अलावा जो पतली दीवारों वाले कड़े बर्तन तैयार होते थे, वे भी इतने भंगुर होते थे कि उन्हें निःशंक रूप से प्रयोग में नहीं लाया जा सकता था। कांस्य युग के मिट्टी के बर्तन मोटे भी हैं और साथ ही समान रूप से तपे हुए हैं और वे इतने मजबूत हैं कि उन्हें किसी विशेष सावधानी के बिना गधे की पीठ पर लादकर ले जाया जा सकता है और उसके बाद उतारकर भूमि पर रखा जा सकता है। उसी आग और उसी भट्टी को कच्ची धातुओं को, जिनमें ताम्र, बंग, स्वर्ण, रजत् और सीसा भी सम्मिलित है, पिघलाने के काम में भी लाया जा सकता है। इन सब की सब धातुओं का प्रयोग कांस्य युग में होता था। एक बार पिघाल लिये जाने के बाद धातुओं को अपने विशुद्ध रूप में या अन्य धातुओं के साथ मिश्रित रूप में ऐसी अनेक बहुविध आकृतियों में ढाला जा सकता था, जिन्हें पत्थर को गढ़ कर पाना असम्भव या अव्यावहारिक था। यह ठीक है कि ताँबा या काँसा संगयशव (जेड, या बैसाल्ट की अपेक्षा कड़ा नहीं होता, फिर भी इसे फरसों जैसे सुविधाजनक हथियारों के रूप में ढाला जा सकता है, जिनमें हत्था फँसाने के लिए कोटर (सॉकेट) बना रहे; और इसके द्वारा चूलदार तलवारें भी बनाई जा सकती हैं।

धातु का हथियार बनाने में जितना समय लगता है, वह पत्थर या चकमक का वैसा ही हथियार बनाने में लगने वाले समय से बहुत ही कम होता है और धातु-निर्मित शस्त्र के टूटने की सम्भावना बहुत कम होती है। यदि वह टूट भी जाय, तो उसे फिर पिघाल कर फिर ढाला जा सकता है और उसमें नुकसान कुछ भी नहीं होता। धातु की पटरियों को पीट-पीटकर उनसे कवच बनाया जा सकता है, जो चमड़े या रेशों की अपेक्षा कहीं कठोर होता है और देखने में कहीं अधिक डरावना जान पड़ता है। धातु के बने कीलकों (रिवट) तथा कीलों और धातु की बनी पहियों की हालों के द्वारा हलके और तीव्रगामी रथ बना पाना सम्भव हो गया; यद्यपि सामान्य यात्रा में ये रथ बहुत हिचकोले देते थे, परन्तु कांस्य युग के पिछले भाग में इन रथों ने अपने तीव्र वेग से युद्ध क्षेत्र में जा पहुँचने और युद्ध क्षेत्र से भाग निकलने की क्षमता के कारण युद्ध कला में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया। शकट का आदि रूप सम्भाव्यतः वह ग्रीष्मकालीन स्लैज गाड़ी थी, जिसका उपयोग सुमेरियावासी और मिश्रवासी, दोनों ही करते थे और जो अब भी पश्चिमी एशिया और यूरोप के विच्छिन्न

(अलग-थलग पड़े हुए) भागों में दिखाई पड़ जाती है। इस प्रकार की एक स्लैज गाड़ी 'उर' के राजकीय कब्रिस्तान में पाई गई है। उसका कोई भी अंश धातु का बना नहीं है; हो सकता है कि इसका निर्माण नव-पाषाणिक काल में हुआ हो। मिश्र में अपेक्षाकृत भारी स्लैज गाड़ियाँ विशाल स्मारकों के पत्थरों को ढोने के लिए प्रयोग में लाई गई थीं। इनमें लट्ठों (रनर) के नीचे बेलन लगे रहते थे।

कांस्य युग से पहले शकट (वैगन) का आविष्कार हो चुका था या नहीं, इसका हमें पता नहीं है। अधिक सम्भावना इस बात की है कि पहिये का पहले-पहल उपयोग मिट्टी के बर्तन बनाने के लिए किया गया होगा। यह कार्य की गति को बढ़ाने की एक तकनीक थी, जिससे आत्रा तपाने वाले लोगों की भट्ठियों

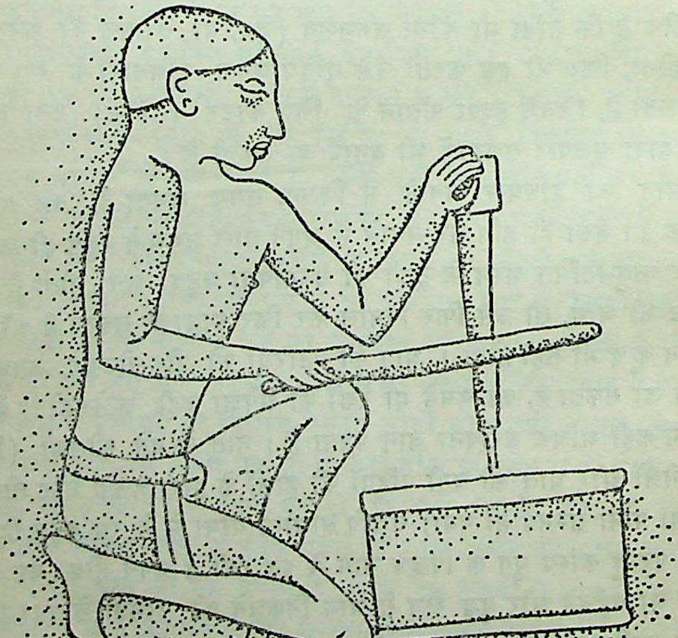

मिश्र का कमान चालित बरमा

के लिए बर्तन प्राप्त होते थे और जिससे अनाज, शराब, बीयर और तेल रखने के लिए बड़े और मज़बूत पात्र प्रचुरता से उपलब्ध होते थे। कुम्हार का चाक स्वयं सम्भाव्यत: बढ़ई लोगों और सुनारों द्वारा समान रूप से प्रयुक्त किये जाने वाले कमान चालित बरमे को देखकर बनाया गया होगा; और यह बरमा एक सीधी सादी अग्नि नाल छड़ (फायर शाफ्ट) से निकला था, जिसका प्रयोग ये सब लोग लगभग आधुनिक काल तक करते रहे हैं और जिसका उपयोग अब बालचर (स्काउट) लोग और आदिवासी लोग समारोहों के अवसर पर करते हैं। घूमते हुए दण्ड और पहिये के सिद्धान्त का, जिस पर कि हमारा उद्योग आधारित है, और आगे उपयोग कांस्य युग में नहीं किया गया, अपितु वह और भी सस्ती धातुओं की, शक्ति के और भी प्रचुर स्रोतों की, और कुछ गौण सहायक आविष्कारों, जैसे दांतेदार पहिये के होने तक रुका रहा।

नदी के किनारे रहने वाले इन समाजों में से प्रत्येक समाज में सरकार की, धार्मिक मामलों की और आर्थिक प्रक्रियायों की बढ़ती हुई जटिलता के कारण मानवीय स्मरणशक्ति पर इस सीमा तक बोझ पड़ने लगा कि लिखना आवश्यक हो गया और इसलिए लेखन का आविष्कार हुआ। जब राजकीय मूर्तिकार किसी कठोर पत्थर को गढ़कर किसी राजा की मूर्ति बनाते थे, तब अपनी बनाई हुई उस मूर्ति पर उस राजा का नाम खोद देना उनके लिए सुबिधाजनक था, जिससे भविष्य में इस विषय में कोई सन्देह न हो कि वह मूर्ति किस राजा की है। राजकीय कोषाध्यक्षों को भण्डार में विद्यमान सामानों की सूचियों की आवश्यकता होती थी। इन सूचियों को मिश्र के लिपिक सरकण्डे की कलमों से पैपाइरस के तख्तों पर लिखते थे; यह एक ऐसा आविष्कार था, जिसे विज्ञान के प्रख्यात इतिहास लेखक जौर्ज सार्टन ने प्राचीन काल के लोगों द्वारा किया गया सबसे बड़ा आविष्कार माना है।[1] मैसोपोटामिया में, जहाँ पत्थर का बाहर से आयात करना पड़ता था और पैपाइरस बनाया नहीं जाता था, अन्य प्रकार के लिपिक अपने अभिलेखों को लोहे की कलमों से कुचले हुए गेहूँ के बिस्कुटों की (श्रेंडिड व्हीट बिस्किट) की आकृति वाली मिट्टी की

---

[1] जौर्ज सार्टन, 'ए हिस्ट्री ऑफ़ साइन्स', हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, कैम्ब्रिज, मैसा० 1952, पृष्ठ 24।

पट्टिकाओं के ऊपर खोद देते थे और उनको आग में पकाकर तपा देते थे, जिससे उनका अभिलेख स्थायी बना रहे। मिश्र और सुमेरिया, दोनों में ही राजकीय कारीगर जिन धातुओं से तलवारें और राजमुकुट बनाते थे, वे बहुत दूर से लानी पड़ती थीं और सुनारों द्वारा बनाई गई वस्तुओं की दूर-दूर तक के स्थानों में वैसी ही ज़ोरदार माँग रहती थी, जैसी कि हवाई द्वीपों मे कप्तान कुक द्वारा ले जाई गई लोहे की चीज़ों की थी। कच्ची धातुओं और मूल्यवान पत्थरों को लाने के लिए जाने वाले राजकीय यात्री दलों की रक्षा का प्रबन्ध करना पड़ता था। जो व्यापारी लोग अपने कामकाज के सिलसिले में महीनों तक या वर्षों तक घर से बाहर रहते थे, उनके लिए इस बात का आश्वासन था कि उनकी घर पर विद्यमान सम्पत्ति पर किसी प्रकार की आँच नहीं आएगी। साक्षियों के मौखिक आश्वासन की अपेक्षा लिखित करार (ठेके) इस दृष्टि से अधिक सुरक्षित थे कि साक्षियों की इस बीच में मृत्यु हो जा सकती थी या पैसे के लोभ में पड़कर वे झूठ बोल सकते थे। मिश्र में मौसम के अनुसार नील नदी के पानी के बढ़ने और घटने का समय पहले से बता दिया जाना आवश्यक होता था, क्योंकि उस पर वहाँ कृषि निर्भर थी।

कृषि सम्बन्धी काल-चक्र की, पैठों के लिए दिन नियत करने और स्थल मार्ग से या जल मार्ग से यात्रा करने वाले लोगों के लिए पवन और मौसम की भविष्यवाणी करने की दृष्टि से एक पंचांग बनाने की आवश्यकता हुई। खाद्यान्नों और बहुमूल्यों पण्यद्रव्यों, दोनों के ही मूल्यांकन के लिए लम्बाई, परिमाण और भार के मानकों की भी आवश्यकता थी। समय और स्थान के मानक तैयार करने के प्रयत्नों से और उन्हें नापने और उनका परस्पर सम्बन्ध जोड़ने की गणितीय तकनीकों से विज्ञान का जन्म हुआ।

आरम्भ में विज्ञान का मुख्यतया सम्बन्ध जलवायु में होने वाले परिवर्तनों के उन कारणों के, जैसे पाला और सूखा, बाढ़ और वर्षा के, अध्ययन से था, जिनका प्रभाव कृषि पर पड़ता था। मिश्र में किसानों के लिए यह जानना आवश्यक होता था कि ठीक किस समय नील नदी में पानी बढ़ेगा, जिससे वे अपनी फसलें बिल्कुल ठीक समय पर बो सकें। यह ठीक वैसा ही था, जैसे कि उष्ण कटिबन्ध के वनों में, जहाँ मौसम में होने वाला परिवर्तन स्पष्टतया प्रतीत नहीं होता, धान बोने वाले लोगों को यह पता रहना चाहिए कि वर्षा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कब शुरू होने की आशा है। क्योंकि जो घटनाएँ आरम्भिक दिनों के विज्ञान का विषय बनीं, वे ही लोगों के विक्षोभों का भी कारण थीं, और क्योंकि पुरोहितों का अस्तित्व मुख्यतया इस प्रकार के विक्षोभों का शमन करने के लिए ही था, इसलिए विज्ञान का अध्ययन पुरोहितों का विशेष कार्य बन गया। वे प्राकृतिक घटनाओं की भविष्यवाणी कर सकते थे, इससे अशिक्षित लोगों को ऐसा प्रतीत होने लगा कि वे इन भयावह घटनाओं का नियन्त्रण भी कर सकते हैं और इस कारण इन पुरोहितों की शक्ति बढ़ गई।

क्योंकि लोगों और समुदायों में होने वाले विक्षोभ ग़ैरक़ानूनी कार्यों के मुख्य कारण होते हैं, इसलिए किसी ऐसे समाज में, जिसमें सब व्यक्ति एक ही संस्कृति में भाग ले लेते हैं और जिन सबके विश्वास बहुत कुछ एक-जैसे होते हैं, क़ानून का पालन करवाने के लिए सबसे अधिक सक्षम और सबसे कम खर्चीला अभिकरण पुरोहितों को बनाये रखना है। परन्तु उन अन्य लोगों के साथ व्यवहार करने के लिए, जिनकी संस्कृतियाँ विस्तार की बारीकियों की दृष्टि से अलग-अलग हैं और जो अलग-अलग देवताओं की पूजा करते हैं, एक धर्मनिरपेक्ष प्राधिकार की आवश्यकता होती है। इस प्राधिकार की, जो शान्ति बनाये रखने के लिए शस्त्र बल का प्रयोग करता था, सक्षमता कांस्य युग में नव-पाषाणिक मानकों की दृष्टि से इसलिए बहुत बढ़ गई, क्योंकि कांस्य युग में धातु के शस्त्र और धातु के कवच बनाने लगे थे। इस प्रकार के धर्म और राज्य के युगल सोपान-तन्त्र मिश्र और सुमेरिया में बने और वहाँ राजा इन दोनों ही संस्थापनों का सर्वोच्च अधिकारी होता था।

आरम्भिक कांस्य युग की मिश्री सभ्यता[1]

इन दो घाटियों में से, जिनमें ये सभ्यताएँ उत्पन्न हुईं, नील नदी की घाटी रचना की दृष्टि से अधिक सरल है, क्योंकि इसमें केवल एक ही नदी है। इसकी

---

[1] इस विषय में मेरा प्रधान स्रोत ऐडोल्फ ऐरमैन की पुस्तक 'लाइफ इन ऐन्शियैण्ट ईजिप्ट' रही है। इसके प्रकाशक हैं, मैकमिलन एण्ड कम्पनी, लन्दन, 1994। इसके अतिरिक्त इस विषय पर फिलाडलफिया के यूनिवर्सिटी म्यूज़ियम के मिश्र विज्ञान विभाग के सदस्यों के साथ हुए वार्तालाप से भी मुझे उपयोगी सामग्री प्राप्त हुई है।

सभ्यता भी अन्य लोगों की निकटता द्वारा मैसोपोटामिया की अपेक्षा कम जटिल बन पाई थी। इसलिए मैं पहले मिश्र के विषय में लिखूँगा।

नील नदी एक ऐसी धारा है, जिसे भूगोलवेत्ता विदेशागत धारा कहते हैं; यह मिश्र के दक्षिण में बहुत दूर मध्य अफ्रीका से निकलती है, जहाँ हिन्द महासागर से आने वाली ग्रीष्मकालीन मानसून पवनों से होने वाली वर्षा का पानी इसमें आता है। सहारा की समूची चौड़ाई को पर करके यह सूडान से लेकर अपने डेल्टा तक दोनों किनारों पर फैले हुए मरू स्थलों के बीच में होकर बहती है। इन मरु स्थलों में से गुज़रते हुए इसने अपना मार्ग अनेक स्थानों पर पुराने पत्थरों की चट्टानों को काट कर बनाया है; इनमें से अधिकतम उत्तर की ओर वाला चट्टानी स्थान 'प्रथम प्रपात' (फर्स्ट कैंटेरेक) कहलाता है। यह प्राचीन काल में इस नदी में नौवहन के लिए रोक बना हुआ था और इस प्रकार मिश्र की दक्षिणी सीमा बनाता था।

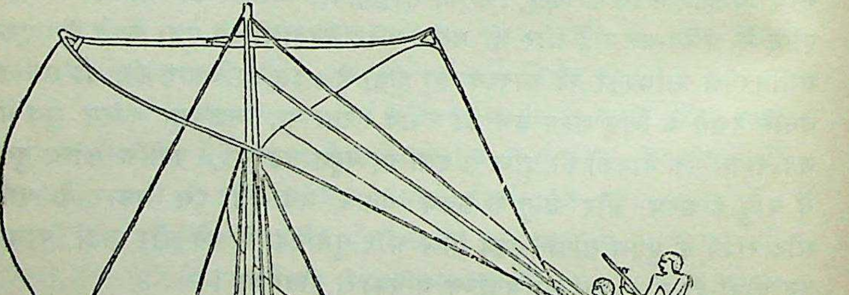

मिश्रवासियों का पाल से चलने वाला जहाज़

इस प्रपात और डेल्टा के शीर्ष भाग के मध्य यह नदी किसी भी नाव वाले व्यक्ति के लिए एक सुगम मार्ग बनी हुई थी। प्राचीन काल में मिश्र में नदी द्वारा यात्रा इतनी सामान्य बात थी कि वहाँ की भाषा में एक खास शब्द

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है, जिसका अर्थ है 'बिना नाव वाला व्यक्ति', मानों बिना नाव का होना कोई बहुत असाधारण दशा हो। डेल्टा और प्रपात के बीच, जहाँ वर्षा बहुत ही कम, कभी-कदास ही होती है, पवन सदा उत्तर से दक्षिण की ओर चलती है, जिससे कोई भी नाविक पाल तानकर अपनी नौका को बहाव के विरुद्ध ले जा सकता है और उसके बाद अपने पाल को गिरा कर वह फिर धारा के साथ-साथ बहता हुआ वापस लौट सकता है। इसके कारण मिश्र की घाटी एक सांस्कृतिक इकाई बन गई थी। यह घाटी प्राचीनतम ज्ञात काल से भाषा की दृष्टि से भी एक इकाई थी। प्राचीन मिश्री भाषा पूर्वी और उत्तरी अफ्रीका की अन्य अनेक भाषाओं के समान एक हामी (हैमिटिक) भाषा है।

ऊपरले मिश्र की कृषि योग्य भूमि लगभग पाँच हज़ार वर्ग मील है और डेल्टा की लगभग सात हज़ार वर्ग मील। ऊपरले और निचले मिश्र के दोनों राज्यों में से प्रत्येक लगभग बीस ज़िलों में विभक्त था, जिन्हें 'नोम' कहा जाता था। ऊपरले मिश्र के नोम नदी के किनारे के साथ-साथ एक क्रम से स्थित थे और नदी में ऊपर की ओर या नीचे की ओर यात्रा करने वाला व्यक्ति उनमें से किसी तक भी आसानी से पहुँच सकता था, क्योंकि कुछ थोड़े से स्थान ही ऐसे हैं, जहाँ यह घाटी दस मील से अधिक चौड़ी है। डेल्टा (निचला मिश्र) के नोम नील नदी के अनेक मुहानों के किनारों के साथ-साथ पहिये के अरों की आकृति में स्थित थे; इसलिए वहाँ तक पचहुँना अधिक कठिन था, विशेष रूप से इसलिए कि नदी की धाराओं में बार-बार मिट्टी जमती रहती थी और वे निरन्तर अपना स्थान बदलती रहती थीं। इससे डेल्टा में रहने वाले लोगों की अपेक्षाकृत पिछड़ी हुई दशा भौगोलिक आधारों पर आसानी से समझ में आ सकती है; ये लोग अधिकांशतः पशुपालक थे, जो अपने पशुओं को चरागाहों में चराते थे और घाटी के नीचे की ओर खदेड़ दिये गए थे। उस काल में मिश्रवासी लोग डेल्टा के केवल पूर्वी आधे भाग में ही रहते थे, क्योंकि पश्चिमी आधा भाग 'बर्बर' लोगों का, लीबियावासियों का निवास-स्थान था।

घाटी के सामान्य नोम लगभग 230 वर्गमील के होते थे और उनमें से प्रत्येक में लगभग एक लाख व्यक्ति रहते थे। 'पुरातन राजत्व' काल में सारे मिश्र की कुल जनसंख्या अनुमानतः लगभग साठ लाख थी। कृषि की दृष्टि से

कहा जाय, तो मिश्री सभ्यता की इकाई नव-पाषाणिक शैली का गाँव न होकर नोम था, क्योंकि नदी के जल का नियंत्रण करने की समस्या के कारण, जो एक निर्णायक तत्व था, उन अनेक गाँवों पर प्रभाव पड़ता था, जो इस प्रकार के एक क्षेत्र में संयुक्त रहते थे। हर साल नदी का पानी लगभग 19 जुलाई को चढ़ना शुरू होता है और पहली सितम्बर तक बाढ़ अपनी चरम सीमा तक पहुँच जाती है। काहिरा में पानी का चढ़ाव 23 फीट होता है; इससे कुछ फुट कम या कुछ फुट अधिक पानी आने के कारण सूखा पड़ सकता है, या खतरनाक बाढ़ आ सकती है। पानी के साधारण चढ़ाव के फलस्वरूप नदी के बिलकुल किनारे स्थित खेतों में तो पानी भर जाता है, परन्तु जो खेत नदी तट से दूर हैं, उनकी सिंचाई नहरों और रजवाहों द्वारा करनी पड़ती थी। गंदला पानी स्थानीय नहरों द्वारा अंशतः तो सीधे बहाव द्वारा और अंशतः पानी उठाने के एक हाथ चालित लीवरयुक्त उपकरण द्वारा, जिसे 'शादुफ़' कहते थे, खेतों तक ले जाया जाता था। यह शादुफ अब भी वहाँ काम में लाया जाता है। वह क्षेत्र, जिसमें इस प्रकार की नहरों का एक समूह होता था, नोम कहलाता था। प्रत्येक नोम का शासन एक राज्यपाल करता था, जो वहाँ राजा द्वारा भेजा जाता था। वह राज्यपाल ही सर्वोच्च धर्म पुरोहित के रूप में भी काम करता था। उसकी राज सभा और स्थानीय मंदिर नोम के नाभिकों के रूप में होते थे, जिनके चारों ओर ग्रामीण का जीवन चक्र घूमता था।

उद्योग विद्या की दृष्टि से कहा जाय, तो ये जीवन अत्यधिक सरल थे। जब नदी का पानी उतर जाता था, तब किसान लोग खेतों की चिपकनी मिट्टी में हल चलाते थे और ढेलों को खुरपों से तोड़ते थे। वे अनाज हाथ से बोते थे, पकने पर उसे काट लेते थे, उसकी गहराई करते थे और उसे अपने मालिकों के अनाज गोदामों में भरकर रख देते थे। हल चलाने के लिए बैलों की आवश्यकता होती थी, जबकि गाहने और बोझ ढोने के लिए गधों की आवश्यकता पड़ती थी। बाड़े में पाले जाने वाले अन्य पशु भेड़, बकरी, सूअर और बत्तख थे। अन्न, दालें और अन्य पौधे, जो वहाँ उगाये जाते थे, वे वही थे, जो नव-पाषाणिक काल से उत्तराधिकार में प्राप्त हुए थे : विशेष रूप से गेहूँ, जौ, लोबिया, मसूर, प्याज़, तिल और सन।

जहाँ तक निर्धारित किया जा सकता है, मिश्रवासी किसानों द्वारा प्रयुक्त किये जाने वाले एक भी औज़ार में धातु का कोई भाग नहीं होता था। हल और खुरपे, दोनों ही लकड़ी के होते थे; दरांती लकड़ी की बनी होती थी और उसमें चकमक के दांते लगे होते थे। अनाज पीसने की चक्कियाँ सुपरिचित चपटी मिताते सिलों (मैटेट) की बनी होती थीं, या दाना पीसने के लिए पत्थर की बनी होती थीं; ये दोनों वस्तुएँ नव-पाषाणिक काल की थीं। स्पष्टतया, राज्यपाल और जमींदार लोग अपने आश्रित लोगों के लिए इन उपकरणों को बनवाने के वास्ते बढ़ई लोगों को काम पर लगाते होंगे, परन्तु ये बढ़ई लोग किस सीमा तक धातु के बने औज़ारों से काम करते थे और सबसे शुरू के राजवंशों के काल में वे किस सीमा तक परिष्कृत पत्थर का ही प्रयोग करते रहे थे, इसका पता चलाना सरल नहीं है।

यहाँ जिस काल से हमारा सम्बन्ध है, वह 'पुरातन राजत्व' का काल है, जो लगभग 3000 ई० पू० से लेकर 2530 ई० पू० तक का था। इससे पहले की सहस्राब्दी में उत्तरी और दक्षिणी, दोनों राज्यों में से प्रत्येक आन्तरिक रूप से संयुक्त हो गया था। उसके बाद मैनिस के अधीन, जो गाथाओं में वर्णित प्रथम राजवंश था, और इस प्रकार पुरातन राजत्व का संस्थापक था, सारा मिश्र मिलकर एक हो गया और उसकी राजधानी मैम्फिस थी, जो आधुनिक काहिरा के निकट थी। एक हो जाने के बाद भी दोनों राज्यों को समान समझा जाता था और फैरूह जो मुकुट धारण करता था, वह दुहरा मुकुट होता था।

इस काल के लोगों के जीवन के बारे में उपयोगी जानकारी मिल पाना बहुत कठिन है। शिलालेखों को छोड़कर उस काल के बहुत कम प्रलेख बाकी बचे हैं। उन मूल ग्रंथों में से जिन्हें पुरातन राजत्व काल का माना जाता है, अनेक प्रतिलिपियाँ, या प्रतिलिपियों की भी प्रतिलिपियाँ हैं, जो बाद में उस समय लिखी गई थीं, जब कि उनकी विषय वस्तु का मूल लेखकों के वंशजों के लिए लगभग उतना ही कम महत्त्व रह गया था, जितना कि अब हमारे लिए है। यूनानी लेखकों द्वारा लिखे गए मिश्र के जीवन के वे विवरण जिनका कि इतिहासकार बहुत अधिक सहारा लेते हैं, बहुत बाद की और भिन्न स्थिति का, जोकि लौह युग की थी, चित्रण करते हैं। हमारा प्रमाणों का सर्वोतम स्रोत

मूर्तियों और अध्युच्चित्रों का वह संग्रह है, जो पुरातन राजत्व काल के मूर्तिकारों और चित्रकारों द्वारा गढ़ा और चित्रित किया गया है।

ये मूर्तियाँ और चित्र न केवल मिश्र में किसी भी समय बनाई गई सर्वोत्तम कलाकृतियों के प्रतीक हैं, अपितु एक ऐसी समूची कलात्मक परम्परा के लिए आदर्श भी रहे हैं, जिनका अनुकरण बहुत थोड़े तकनीकी परिवर्तन के साथ यूनानी लोगों के काल तक किया जाता रहा। इस सारी अवधि में मिश्र की सरकार आक्रमणकारियों के आने और वापस लौट जाने के कारण बीच-बीच में सबल और दुर्बल होती रही। इस सौन्दर्यबोध की अविच्छिन्नता की कुंजी उन मन्दिरों में है, जो अच्छे और बुरे सभी समयों में चालू रहे और कलाकारों को अपने यहाँ शरण देते रहे, क्योंकि जन साधारण को सदा ही सब प्रतीकों समेत अपने धर्म की ओर से सान्त्वना और आश्वासन की आवश्यकता रही है। चार बड़े मन्दिरों में से प्रत्येक एक ऐसी सड़क के, जो बढ़िया पत्थर की खदानों को जाती थी, सिरे पर या यदि ये खदानें नदी तट के काफी निकट हों, तो स्वयं खदानों पर ही स्थित था। इन मंदिरों के पुरोहित उस चूने के पत्थर के संभरण का नियंत्रण करते थे, जिससे पिरामिड बने थे। वे सेलखड़ी (अलाबस्टर) के संभरण का, जिसकी सभी कालों में मूर्तियाँ गढ़ने और दीपक बनाने के लिए आवश्यकता रही है, और डायोराइट और पौरफ़ाइरी के, जो मूर्ति बनाने के काम आने वाले कठोर और काले पत्थर हैं, और उस लाल ग्रेनाइट के संभरण का नियन्त्रण करते थे, जिससे मिश्र के सर्वोत्तम स्मारक बनाये गए थे।

जिस प्रकार चीनी लोग संग यशव (जेड) के स्पर्श को पसन्द करते हैं और फ्राँसीसी लोगों को बढ़िया शराब का स्वाद पसन्द है, उसी प्रकार प्राचीन काल के मिश्रवासियों को कठोर और बहुत ही बढ़िया परिष्कृत पत्थर के प्रति गहरा और सुरुचिपूर्ण अनुराग था। पत्थर, जो कि स्थायी था, उन्हें अतीत के साथ एक अविच्छिन्नता की अनुभूति, धार्मिक प्रकृति का एक सौन्दर्यबोधात्मक अनुभव प्रदान करता था और यह अनुभव उनकी सर्वाधिक स्थायी संस्था, मन्दिर, में सर्वोत्तम रूप में सुरक्षित था। मन्दिर लेखन की कला और प्राचीन कालों की धार्मिक और वैज्ञानिक गाथाओं का भी गढ़ था। वहाँ रहने वाले लिपिक लोग उन प्रलेखों की प्रतिलिपियाँ किया करते थे, जो जन-साधारण की

भाषा से, उनके पूर्वजों की पवित्र भाषा से दूर हटने के साथ-साथ अधिक और अधिक दुर्बोध होते जाते थे।

मिश्र में सभी कालों में इतने बड़े-बड़े मन्दिर तो कई चालू रहे, जिनमें से प्रत्येक इतना काफी बड़ा था कि उसमें पुरोहित लिपिकों का एक पूरा दल (कालेज) निवास कर सके, किन्तु तीसरी सहस्राब्दी में राष्ट्र का काम केवल एक ही नगर से चल जाता था। इसका कारण यह था कि उस समय इतनी काफ़ी विकसित गतिविधि जिसके लिए एक इस प्रकार के समुदाय की आवश्यकता हो, एकमात्र राजकीय सरकार ही थी। पुरातन राजत्व काल की राजधानी मैंम्फिस अब बाकी नहीं है और हमें यह तक पता नहीं है कि उसका आकार कितना बड़ा था। किन्तु साक्ष्य के सब उपलब्ध स्रोतों के आधार पर हम यह मानते हैं कि थीबिस और उसके बाद के नगरों के समान मैंम्फिस भी एक राजमहल और एक मन्दिर को केन्द्र बनाकर बसा हुआ था। राजमहल और मन्दिर, दोनों के चारों ओर बड़े-बड़े अहाते थे, जिनमें प्रशासनिक अफ़सर और पुरोहित लोग और वे कारीगर रहते और काम करते थे. जिन्होंने धातु, पत्थर और लकड़ी की उन उत्कृष्ट वस्तुओं का निर्माण किया था, जो आज सारे संग्रहालयों को शोभान्वित कर रही हैं।

जितना थोड़ा बहुत हमें मालूम है, उससे ऐसा प्रतीत होता है कि जिन कारीगरों ने कलाकृतियों का निर्माण किया था, वे राजमहलों और मन्दिरों में नियमित कर्मचारी वर्ग के रूप में काम करते थे। उनमें से इतने काफी लोग स्वतन्त्र रूप से जनता के लिए कार्य नहीं करते थे कि जिसके कारण कोई बाज़ार बनाने की या कारीगरों की कोई श्रेणी (संघ या गिल्ड) बनाने की आवश्यकता हो। वह आधारभूत दशा, जिसमें कि कोई महान कला पनप सकती है, भविष्य के लिए सुरक्षा की दशा में अनेक ऐसे कलाकारों का पारस्परिक मेल-जोल है, जो एक दूसरे से अपनी टिप्पणियों का मिलान कर सकें, एक दूसरे से कुछ सीख सकें और उपभोक्ता के कृपाभाजन बनने के लिए एक-दूसरे से प्रतियोगिता कर सकें। यह दशा अनेक उपायों द्वारा उत्पन्न की जा सकती है, जिनमें से एक यह है कि कलाकारों के एक समूहों को किसी बड़े घराने के साथ संलग्न कर दिया जाय; और मिश्रवासियों की प्रणाली यही थी।

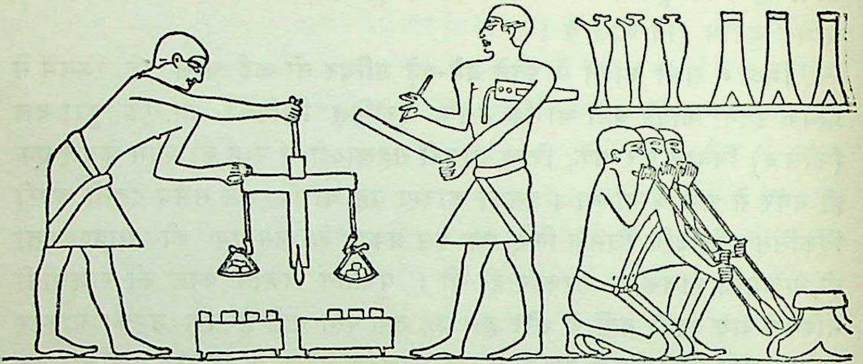

मिश्र की धातु की कारीगरी का एक दृश्य : धातु को तोलना, ताम्र को

प्रत्येक शिल्प (कारीगरी), के कारीगर, जो राजमहल में काम करते थे, राजदरबार के एक विशेष अधिकारी की देख-रेख में रहते थे। उदाहरण के लिए स्वर्णकार तीन पदक्रमों (ग्रेडों) में विभक्त थे : स्वर्णकारों का पर्यवेक्षक, मुख्य स्वर्णकार और साधारण स्वर्णकार। बढ़ई लोग भी इसी ढंग से संगठित थे। पुरातन राजत्व काल में उनके औज़ारों में, जो ताँबे से बने होते थे, आरे, बसूले, कुल्हाड़ियाँ, छैनियाँ और बरमे सम्मिलित थे। साधारण कार्यों के लिए वे जिस लकड़ी का प्रयोग करते थे, वह कीकर (अकेशिया) की लकड़ी होती थी, जिसे बढ़ई लोग हर साल बाढ़ का पानी उतरने के बाद खेतों के किनारे लगे हुए पेड़ों को स्वयं ही काट कर प्राप्त करते थे। राजकीय तथा अन्य बढ़िया कार्यों के लिए वे देवदार (सैंडार) की लकड़ी का, जो लेबनान से समुद्री मार्ग द्वारा लाई जाती थी, और अफ्रीका के अन्य भागों से लाई जाने वाली कठोर लकड़ियों का प्रयोग करते थे। क्योंकि ये आयात की जाने वाली लकड़ियाँ स्वल्प मात्रा में उपलब्ध होती थीं, इसलिए वे सामान्य लकड़ियों पर बढ़िया लकड़ियों के तन्तुक्रम की नकल चित्रकारी द्वारा कर देते थे और वे मुर्दों के शव रखने के सन्दूक कपड़े (लिनन) और गोंद द्वारा बनाते थे। बाद के कालों में वस्त्र के स्थान पर, जो अधिक मँहगा पड़ता था, पैपाइरस की पुरानी पाँडुलिपियों का प्रयोग किया जाने लगा।

बढ़इयों, मूर्तिकारों, जौहरियों और सैनिकों, सभी को धातु की आवश्यकता

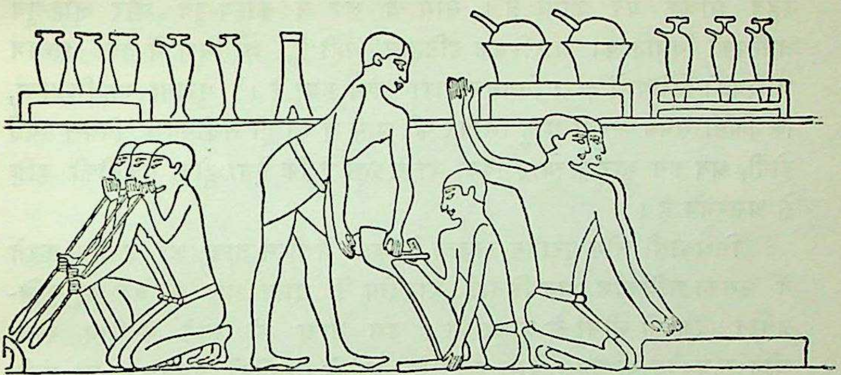

पिघालना तथा ढालना और स्वर्ण को कूट कर उसके पतले वर्क तैयार करना।

होती थी—न केवल ताँबे की, अपितु स्वर्ण की भी। ये ही दो धातुएँ ऐसी थीं, जो पहले-पहल मिश्र में और सम्भाव्यत: अन्यत्र प्रयोग में लाई जाती थीं। क्योंकि ये दोनों अपने प्राकृतिक रूप में ऊपरी सतह पर पड़े हुए निक्षेपों में प्राप्त हो जाती थीं और आसानी से दिखाई पड़ सकती थीं। अबसे पाँच हज़ार वर्ष पहले उन्हें खोज पाना आजकल की अपेक्षा असन्दिग्ध रूप से अधिक सरल रहा होगा, क्योंकि अब तो संसार के अधिकांश प्राकृतिक निक्षेप समाप्त हो चुके हैं। ताम्र की सर्वप्रथम कारीगरी प्राकृतिक धातु के टुकड़ों को हथौड़े से तोड़कर अलग करने और उन्हें कूटकर अभीष्ट आकृति का बना लेने तक सीमित रही होगी। यह बात बिलकुल आरम्भिकतम नमूनों के वर्णक्रमलेखीय (स्पैक्ट्रोस्कोपिक) विश्लेषण द्वारा निर्धारित की जा चुकी है। लेकिन यदि ताम्र को पहले गर्म न किया जाय, तो वह कूटने पर टूट जाता है। इसलिए दूसरी प्रक्रिया, जिसे तापानुशीतन (ऐनीलिंग) कहा जाता है, शीघ्र ही विकसित हो गई। जब ताम्र को पाव रोटी या मिट्टी के बर्तन पकाने के लिए बनाई किसी भट्टी में रखकर तपाया जाता था, तो वह पिघल जाता था और इस प्रकार खुले साँचे के प्रयोग का आविष्कार हुआ। जब ताम्र के किसी डले को कच्ची धातु के साथ मिलाकर भट्टी में पिघलने के लिए रख दिया जाता हैं, तब ज्यों-ज्यों ऊष्मा के कारण कच्ची धातु नीचे बैठती जाती है, त्यों-त्यों धातु का दृश्य परिमाण बढ़ता जाता है और उपयोग-योग्य ताम्र की मात्रा

बहुत अधिक बढ़ जाती है। सामान्य रूप से कांस्य-पूर्व और लौह-पूर्व धात्विकी विज्ञान का आरम्भिक इतिहास यही है, जो मिश्र में तथा अन्यत्र धात्विकी-विशेषज्ञों द्वारा निगमन द्वारा जाना गया है।[1] पुराना यह सिद्धान्त, कि किसी समय कच्ची धातु शिविर की आग में यों ही संयोगवश पिघल गई होगी, अब इस कारण त्याग दिया जा सकता है कि ऐसा होना तकनीकी दृष्टि से असम्भव है।

मिश्रवासी लोग पुरातन राजत्व के काल में जिस ताम्र का उपयोग करते थे, उसका अधिकांश भाग सिनाई प्रायद्वीप से आता था, जो बसे हुए कृषि-प्रधान प्रदेश की सीमा से बाहर था। इस ताम्र को लाने के लिए राजा लोग राजकीय यात्रीदल भेजा करते थे, जिनमें तकनीकी पर्यवेक्षक, जो इंजीनियर होने के साथ-साथ सैनिक अफसर भी होते थे, कुली लोग और खान खोदने वाले लोग, जो सैनिक भी होते थे, और लिपिक लोग, जो सैनिक नहीं होते थे, सम्मिलित रहते थे। यद्यपि इन लोगों का मुख्य कार्य खान खोदना और सामान ढोना होता था, फिर भी वे आक्रमणों का सामना करने के लिए भी तैयार रहते थे। ये आक्रमण संख्या में बहुत अधिक या बहुत गम्भीर नहीं होते होंगे, क्योंकि स्थानीय यायावर (खानाबदोश) लोग सम्भाव्यतः पैदल या गधों पर चढ़कर यात्रा करने वाले गड़रिये ही होते थे और उनके पास केवल लकड़ी और चकमक के बने हुए शस्त्र होते थे। ये यात्राएँ ही सेना के अस्तित्व का प्रधान कारण थीं।

धात्विकी विज्ञान के इतिहास में, ऐसा लगता है कि, जब एक बार मनुष्यों ने ताँबे को पिघालना शुरू कर दिया था, तब वे अन्य उन कच्ची धातुओं के सम्भावित महत्त्व को भी पहचान सके होंगे, जो इस दृष्टि से ताँबे की कच्ची धातु से समान थीं कि वे सामान्य पत्थर की अपेक्षा इतनी भारी होती थीं कि तुरन्त पहचानी जाएँ। इन कच्ची धातुओं से परीक्षण कर करके उन्होंने अन्य धातुएँ तैयार कीं। इनमें से एक धातु, जो नैसर्गिक रूप में बहुत कम पाई जाती है और सुदृश्य रूप में कभी नहीं पाई जाती, वंग (राँगा, टिन) है। मिश्र

---

[1] ऐच० ऐच० कोघलन, 'नोट्स ऑन दि प्रीहिस्टोरिक मैटलर्जी ऑफ़ कौपर एण्ड ब्रोंज इन दि ओल्ड वर्ल्ड', पिट रिवर्स म्यूज़ियम, ऑक्सफोर्ड, ओकेशनल पेपर्स ऑन टैक्नोलौजी, नम्बर 4, 1951।

से दूर कहीं पर 3000 ई० पू० के आस-पास धात्विकी विशेषज्ञों ने यह बात मालूम कर ली थी कि यदि वंग की कच्ची धातु और ताम्र की कच्ची धातु को मिलाकर पिघाला जाय, तो काँसा तैयार किया जा सकता है जो ताम्र की अपेक्षा अधिक कठोर और उपयोगी होता है और जिसका ढालना अपेक्षाकृत सरल होता है। केवल एक अपवादस्वरूप धातुखण्ड को छोड़कर काँसा मिश्र में मध्य राजत्व काल (1990 से 1880 ई० पू० तक) से पहले नहीं पहुँचा था। इस काल से पहले का केवल एक अकेला धातु खण्ड प्राप्त हुआ है।[1] मध्य राज्यत्व काल में काँसा सम्भाव्यत: उत्तर की ओर से समुद्री व्यापारियों की मार्फत, या फिलस्तीन और सीरिया से स्थल मार्ग से आने वाले व्यापारियों की मार्फत वहाँ पहुँचा था। उसके बाद से, विशेष रूप से परवर्ती राजत्व (साम्राज्य काल में, अर्थात् 1560 ई० पू० के बाद काँसा मिश्र में एक सामान्य रूप से आयात की जाने वाली वस्तु हो गई थी।

पुरातन राजत्व काल तक भी मिश्र एक अलग-थलग पड़ा हुआ देश था और ताम्र के बने हुए शस्त्र राज्य की बाहरी शत्रुओं से रक्षा करने के लिए और देश के अन्दर व्यवस्था और सुरक्षा बनाये रखने के लिए पर्याप्त अच्छे थे। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए जो राजनीतिक ढाँचा बन गया था, वह संसार में तब तक कहीं भी बनी सबसे अधिक जटिल संस्था थी। परन्तु आधुनिक दृष्टि से देखा जाय, तो वह सम्भाव्यत: किसी छोटे-से अमेरिकी विश्वविद्यालय से अधिक जटिल नहीं थी। बड़े-बड़े मन्दिर, जो उस समय कई थे, सम्भाव्यत: आजकल के किसी उच्च विद्यालय के संगठन की कोटि के ही थे। इन दोनों सोपान-तन्त्रों का अध्यक्ष राजा होता था, जो अपने जीवन काल में एक देवता माना जाता था और जो अपनी मृत्यु के बाद ओसीरिस के सुदूर देश में अन्य अनेक देवताओं के साथ मिलकर रहने के लिए चला गया समझा

---

[1] इसका एकमात्र प्रमाणित अपवाद चतुर्थ राजवंश के काल का एक उस्तरा है, जिसमें 8·5 प्रतिशत वंग है। देखिये ए० ल्यूकास की पुस्तक 'ऐंशियेंट ईजिप्शियन मैटीरियल्स ऐंड इंडस्ट्रीज', चतुर्थ संस्करण; प्रकाशक हैं ऐडवर्ड आर्नल्ड ऐंड कम्पनी, लन्दन, 1950, पृष्ठ 253। अवश्य ही कुछ अन्य अपवाद भी रहे हो सकते हैं, किन्तु उन्हें प्रमाणित कर पाना सम्भव नहीं हुआ है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जाता था ।

सिद्धान्ततः राजा सर्वशक्तिमान था और उसका शासन बिलकुल अबाधित था । वस्तुतः उसके पास मन्त्रियों और सलाहकारों का एक कर्मचारी वर्ग रहता था। इनमें से कुछ लोग उसके पिता के राज्य काल से चले आ रहे होते थे, जो उसे बालकपन से जानते होते थे, उसके प्राधिकार का प्रतीक एक दुहरा मुकुट होता था, जो दो राज्यों का प्रतिनिधित्व करता था । ऊपरले मिश्र का मुकुट एक ऊँचा पतला-सा गोला होता था, जो किसी सफेद सामग्री से बना होता था; निचले मिश्र का मुकुट लाल सामग्री से बना हुआ एक घेरा होता था, जो पीछे की ओर नुकीला बना होता था । सफेद मुकुट लाल मुकुट में बिलकुल ठीक बैठ जाता था । राजा ने अन्य चाहे कोई भी वस्तु धारण की हुई हो, किन्तु वह सामने की ओर अपने मस्तक पर एक यूरियस साँप लगाये रहता था, जो उसके राजत्व का प्रतीक था, विशेष अवसरों पर नकली बाल और नकली दाढ़ियाँ भी लगाई जाती थीं ।

इन सब सम्पत्तियों और उसके वस्त्रों की देख-भाल के लिए नौकरों के एक पूरे दल की आवश्यकता थी, जिसमें कम से कम विशेषज्ञों की दस श्रेणियाँ होती थीं, जैसे कि नकली बाल बनाने वाले और चप्पलें बनाने वाले; और इन सब प्रसाधनों का लेखा-जोखा रखने के लिए सचिवालय के कर्मचारी वर्ग की भी आवश्यकता होती थी । इन सेवकों का अधीक्षक भी एक पुरोहित होता था, क्योंकि जीवित देवता के शरीर से जो भी वस्तु छू जाती थी, वह इतनी पवित्र हो जाती थी कि बिना कर्मकाण्डीय समारोह के उसे उठाया या रखा नहीं जा सकता था । राजमहल का एक बिलकुल पृथक् कर्मचारी वर्ग, जो इसी प्रकार संगठित और उपविभक्त था, राजकीय आभूषणों को तैयार करने और उनकी सँभाल करने के लिए था । इन आभूषणों में स्वर्ण और रत्नों की बनी वस्तुएँ भी सम्मिलित रहती थीं । उनका एक काम राजकीय सिंहासन को बनाना और उसे ठीक दशा में रखना भी था। यह सिंहासन आधुनिक आकृति की अलंकृत कुर्सी होती थी, जो एक मंच के ऊपर रखी होती थी और जिसके ऊपर एक वितान मण्डप बना रहता था ।

दूर की यात्राओं में राजा नाव पर जाता था, ठीक उसी प्रकार, जैसे कि बाद के काल में ऐंटनी और क्लियोपेट्रा जाते थे । किन्तु जहाँ थोड़ी दूर तक

जाना हो, वहाँ वह एक पालकी में जाता था, जिसे बारह आदमी उठाते थे। इस पालकी के दोनों ओर दो पंखा झलने वाले चलते थे; और उसके साथ एक सामन्त पैदल चलता था। यह सामन्त अपने हाथ में एक छोटा-सा पंखा लिये रहता था, जो उसके पद (ओहदे) का प्रतीक होता था और उसके दूसरे हाथ में एक पात्र होता था, जिससे वह राजा के आस-पास वायु में इत्र छिड़कता चलता था। इस प्रकार का जुलूस प्रत्येक वर्ष राज्याभिषेक के वार्षिकोत्सव पर देखा जा सकता था। चाहे उससे पहले के राजा की मृत्यु कभी भी क्यों न हुई हो, किन्तु राज्याभिषेक सदा फसल शुरू होने के समय किया जाता था, जिससे वह 'प्रथम फल महोत्सव' के साथ आ पड़ता था।

नये पके हुए अनाज के खेत को पार करके दो पालकियाँ एक-दूसरे के पास पहुँचती थीं। इनमें से एक पालकी में राजा बैठा होता था और दूसरी पालकी में 'मिन' देवता की छिपा कर रखी हुई मूर्ति या अवशेष होता था। 'मिन' कृषि सम्बन्धी उर्वरता का देवता था। जब ये दोनों पालकियाँ परस्पर आकर मिलती थीं, तब पुरोहित लोग चार जंगली राजहँस उड़ाते थे, जिससे कि वे पृथ्वी के चारों कोनों के देवताओं तक यह शुभ समाचार पहुँचा दें कि राजा ने अपने पिता से, जो कि देवता था, लाल और सफेद मुकुट प्राप्त कर लिये हैं।

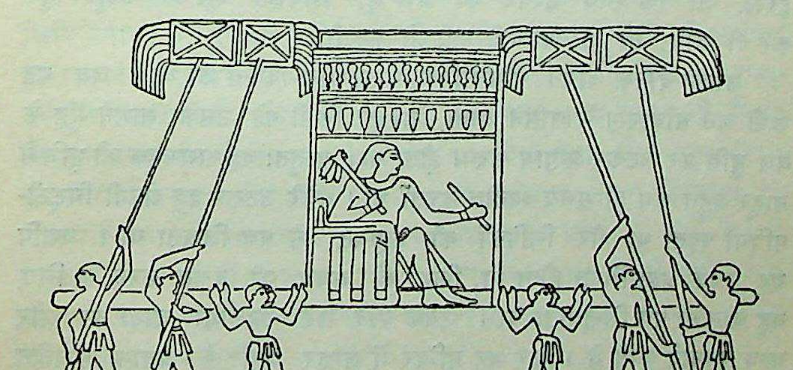

मिश्र की पालकी

इसके बाद राजा पालकी से उतर पड़ता था। अपने हाथ में एक सोने की दराँती लेकर उससे वह पके हुए अनाज की एक पूली काटता था। उसे वह एक बिलकुल सफेद साँड के सामने भूमि पर डाल देता था।

कोई अन्य समारोह ऐसा नहीं हो सकता, जिसकी व्याख्या करना इस समारोह की व्याख्या की अपेक्षा अधिक सरल हो। राजा राष्ट्र की सर्वोच्च शक्ति का प्रतिनिधि है। वह सूर्य की शक्ति का भी प्रतिनिधि है, जो उष्णता और फलवत्ता प्रदान करती है। पालकी स्थल भाग पर यात्रा करने का उस समय तक ज्ञात सबसे तीव्रगामी और सबसे नयनाभिराम साधन थी। तेज़ी से पंख हिला कर उड़ते हुए और अपना सन्देश गुँजाते हुए जंगली राजहंस आत्मा की उड़ान के प्रतिनिधि हैं। स्वर्ण पवित्र है और बहुमूल्य वस्तु है, जो सूर्य की तरह दमकता है। अनाज लोगों का भोजन है। साँड गाड़ी खींचने का साधन, सशक्त लोगों का भोजन और बल का प्रतीक है। पशुओं में सफेद रंग बहुत कम पाया जाता है, इसलिए वह पवित्र है। फसल काटने का समय एक महत्त्वपूर्ण समय है; हो सकता है कि भूखे लोग अनाज के पकने से पहले ही उसे काटना और खाना शुरू कर दें और अपनी जल्दीबाज़ी में उसे पैरों से कुचल दें। यदि सब लोग उस समय तक प्रतीक्षा करने के लिए राजी हो जाएँ, जबकि राजा द्वारा, जो कि स्वयं ईश्वर का अंश है, अधिकृत रूप से कटाई शुरू कर दी जाय, तो कोई गड़बड़ी नहीं हो सकती।

उसका दैनिक जीवन औपचारिक, सरल और एकान्त का था। जब वह कभी जन साधारण के सामने आता, तो हर किसी को उसके सामने मुँह के बल भूमि पर लेटकर प्रणाम करना होता था। वस्तुतः वह राजमहल की भूमि से बाहर बहुत कम ही समय व्यतीत करता था। सवेरे उठकर वह अपनी चिट्ठी-पत्रियाँ पढ़ता था और लिपिकों की सहायता से पत्र लिखता था। यद्यपि यह स्वयं पढ़ा-लिखा होता था, फिर भी समय की बचत करने के लिए वह बोलकर पत्र लिखवाता था। उसके बाद उसे नहलाया जाता था और वस्त्र पहनाये जाते थे। फिर वह मन्दिर में जाकर वहाँ के प्रधान पुरोहित द्वारा अपने (राजा के) कल्याण के लिए की जा रही प्रार्थना को सुनता था। उस प्रार्थना के बीच-बीच में राजा के हाल के कार्यों पर टिप्पणियाँ और भविष्य के कार्यों के लिए सुझाव भी सम्मिलित रहते थे। उसके

बाद राजा स्वयं बलि चढ़ाता था और पुरोहित लोग पवित्र पुस्तकों में से सुदूर अतीत के अन्य राजाओं की गाथाएँ पढ़कर सुनाते थे। दिन के शेष भाग में राजा लिपिकों और कर्मचारियों के कार्यालयों, न्यायालयों, राजकीय कारखानों, परिषद् कक्ष और सिंहासन भवन में से गुज़रता हुआ अपने महल में घूमता था। वह अपने परिवार और अन्तःपुर में जाता था, और लोगों को दर्शन देता था। उसके चिकित्सक उसका भली भाँति ध्यान रखते थे और उसकी खूराक को नियमित करते रहते थे। उसका भोजन मुख्यतया गोमाँस, और हँस का माँस और शराब होता था।

उसकी पत्नियों और रखेलों से जो पुत्र उत्पन्न होते थे, उन्हें राजमहल के विद्यालय में शिक्षा दी जाती थी। इस विद्यालय में उच्च अधिकारियों के पुत्र भी पढ़ने आ सकते थे, जो बहुत बार राजा के पुत्रों के चचेरे या ममेरे भाई होते थे। इस विद्यालय में बालकों की एक कक्षा कठोर अनुशासन में बिलकुल समानता के आधार पर रहती थी। इस कक्षा में छात्रों की संख्या लगभग उतनी ही होती थी, जितने कि प्रति वर्ष 'क्रोटन' या 'ईटन' में भर्ती होते हैं। इन छात्रों में परस्पर मित्रताएँ हो जाती थीं, जो सारे जीवन बनी रह सकती थीं। इस विद्यालय में वे पढ़ना, लिखना, गणित और ज्यामिति सीखते थे। वे पवित्र पुस्तकों के मूल पाठों को कंठस्थ करते थे और उन सदुपदेशों की प्रतिलिपि उतारते थे, जिनमें अतीत काल के किसी समझदार, किन्तु नीरस पिता द्वारा अपने आज्ञाकारी पुत्र को कुछ शिक्षाएँ दी गई होती थीं: वे बालक तरह-तरह के व्यायाम और तैरना भी सीखते थे, किन्तु सबसे महत्त्वपूर्ण विषय शिष्टाचार था, जिसमें नयाचार पर विशेष बल दिया जाता था। कुल मिला कर मिश्रवासी युवक मोटे तौर पर आजकल के अवर उच्च विद्यालय की जितनी शिक्षा प्राप्त करता था, किन्तु उस शिक्षा में इतिहास और विदेशी भाषाओं का ज्ञान नहीं रहता था, किन्तु उसे शिष्टाचार सम्बन्धी परिष्कार अधिक प्राप्त हो जाता था। उच्चतर शिक्षा, यदि कोई रही भी हो तो वह, केवल मन्दिरों तक सीमित थी।

इस विद्यालय के स्नातकों में से ही सरकारी कर्मचारियों की भर्ती की जाती थी। इन अधिकारियों में नोमाधीश (नोमार्क) अर्थात् नोमों के राज्यपाल होते थे। इस प्रकार के अधिकारी को राजकीय सम्पत्तियों का उपयोग

करने का अधिकार रहता था, जिससे वह पशु तथा अनाज और वहाँ के निवासी किसानों और कारीगरों की सेवाएँ प्राप्त करता था। इसके अतिरिक्त वह स्थानीय मन्दिर की जायदाद से होने वाली आय में से भी हिस्सा लेता था, क्योंकि नियमत: वह अपने नोम का उसी प्रकार प्रधान पुरोहित होता था। जिस प्रकार राजा अपनी राजधानी के मन्दिर में सिद्धान्तत: पुरोहित वर्ग का अध्यक्ष होता था। यद्यपि वह राजा के लिए संग्रह करता था, फिर भी दुर्भिक्ष के समय उसे यह अधिकार था कि वह अपने विवेक के अनुसार राजकीय अनाज-भण्डारों को खोल दे। क्योंकि वह एक छोटे-से राज्य का शासक होता था, इसलिए उसकी एक छोटी-सी सरकार भी होती थी, जिसके कर्मचारी सामान्य प्रकार के भाण्डागारिक और कारीगर, एक कोषाध्यक्ष और एक वक्ता (स्पीकर) होते थे। यह वक्ता एक विशेष निरीक्षक और खुफिया अधिकारी का काम करता था।

ओहदे की दृष्टि से राजा के बाद अगला स्थान मुख्य न्यायपति का था। वह उच्च कुल का और राजसदृश ओहदे का व्यक्ति होता था। वह नोमाधीशों का और नोमों में काम करने वाले उप न्यायाधीशों का मुखिया और प्रशासन सेवा का अध्यक्ष और क़ानून बनाने वाला होता था।

दूसरा विभागीय अध्यक्ष कोषागार का अध्यक्ष होता था। उसके कार्यालय के प्रतीक चित्रलिपि के दो अक्षर थे, जो एक (मधुमक्खी, जो अपने छत्ते में शहद जमा करती है) और एक बन्द थैली के सूचक थे। उसके अधीनस्थ कर्मचारियों में एक उप कोषाध्यक्ष होता था, जो जहाज़रानी और युद्ध का मन्त्री भी होता था। वह क़ीमती लकड़ियों, सुगन्धित गोंदों और अन्य विदेशज सामग्रियों को प्राप्त करने के लिए मिश्र की सीमा से बाहर जाने वाले सैनिक यात्री दलों का और साथ ही मरुस्थल में खदानों और खानों के उद्यमों का भी अध्यक्ष होता था।

इस राजनीतिक संस्था की तीसरी शाखा राजकीय सचिवालय था, जिसका प्रतीक पैपाइरस का एक पुलिन्दा था। सचिवालय के अध्यक्ष के नीचे लिपिकों का एक अधीक्षक होता था, जो मामूली सचिवों का नियन्त्रण करता था। यह व्यवस्था कोई अनोखी नहीं थी, क्योंकि सरकार की प्रत्येक शाखा का, जिसमें कि राजमहल भी सम्मिलित था, अपना सचिवालय होता था, जिसमें,

निश्चित रूप से तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु सम्भाव्यत: राजकीय विद्यालय में प्रशिक्षित लोग नहीं, अपितु पुरोहितों द्वारा प्रशिक्षित लोग काम करते थे।

इसलिए पुरातन राजत्व काल की राजनीतिक संस्था में एक तो राजा की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए राजमहल का एक विस्तृत कर्मचारी वर्ग होता था और दो अन्य विभाग होते थे, जिनमें से प्रत्येक का अध्यक्ष एक मन्त्रिमण्डल के ओहदे का अधिकारी होता था और जिनमें सोपानतन्त्रीय जटिलता के कम से कम तीन सोपान होते थे; उसमें उपविभाग होते थे और सचिवों तथा लिपिकों का एक कर्मचारी वर्ग होता था। जब संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार पहले पहल संगठित हुई थी, तब उसके विभाग इन विभागों की अपेक्षा कोई बहुत अधिक जटिल नहीं थे और हवाई द्वीप की नवपाषाणिक सरकार जटिलता में इसके जितनी ही थी। आजकल की अधिकांश सरकारों की तुलना में यह सरकार बेहद सरलता का नमूना थी, परन्तु 3000 ई० पू० में यह असन्दिग्ध रूप से संसार की सबसे अधिक परिष्कृत सरकार थी और यह वैसी इसलिए बन सकी थी, क्योंकि तकनीकी प्रक्रियाओं में, विशेष रूप से धात्विकी विज्ञान, लेखन और जलीय परिवहन में हुई उन्नतियों के फलस्वरूप कई लाख मनुष्य पारस्परिक सम्बन्धों के एक ऐसे जाल में आ गए थे, जिसके लिए इस प्रकार की संरचना की आवश्यकता थी।

सरकार का कार्य इस लोकप्रिय विश्वास के कारण सुकर हो जाता था कि राजा कम से कम अंशत: दैवीय था। एक धार्मिक संस्था, जो जटिलता की दृष्टि से राज्य का प्रतिबिम्ब थी, इस विश्वास को बढ़ाती थी और व्यवस्था बनाये रखने के लिए अन्य कर्मकाण्डीय साधनों की व्यवस्था करती थी। पेशेवर पुरोहित लोग, जो सबसे बड़े मन्दिरों में सौ तक और छोटे मन्दिरों में पाँच से लेकर दस तक होते थे, तीन विशेषज्ञ श्रेणियों में बँटे होते थे। प्रत्येक श्रेणी के नए दीक्षित पुरोहित को यह अवसर रहता था कि वह तीन मध्यवर्ती सोपानों को पार करता हुआ अन्त में प्रधान पुरोहित के पद तक पहुँच जाय ओहदे की दृष्टि से सबसे ऊपर वे पुरोहित थे, जो सार्वजनिक समारोह करवाया करते थे। उसके बाद पाठक पुरोहितों का स्थान था, जो अपनी स्मृति से धर्म पुस्तकों के अंश सुनाया करते थे। इसमें सन्देह नहीं कि यह प्राक्साक्षर काल

का अवशेष था, जबकि पवित्र साहित्य को कण्ठस्थ करके रखना पड़ता था, जैसा कि हवाई द्वीप में किया जाता था। तीसरे नम्बर पर वे पुरोहित आते थे, जो माँस-निरीक्षक होते थे और वे ही मन्दिरों में तरल (द्रव) बलियाँ भी चढ़ाते थे। इन पूरे समय पुरोहिताई करने वाले पेशेवर पुरोहितों के अलावा सामान्य मनुष्यों की ऐसी टुकड़ियाँ भी होती थीं, जिन्हें 'सामयिक पुरोहित' कहा जाता था, जो अपनी सेवाएँ स्वेच्छा से प्रस्तुत करती थीं। इनमें से प्रत्येक टुकड़ी स्थानीय मन्दिर में एक-एक मास तक काम करती थीं। सहभोजों के दिन इस बिरादरी के सदस्य एक पवित्र जुलूस बनाकर एक पालकी के साथ चलते थे, जिनमें उनके देवता की वस्त्र से ढकी हुई मूर्ति या अवशेष को ले जाया जाता था।

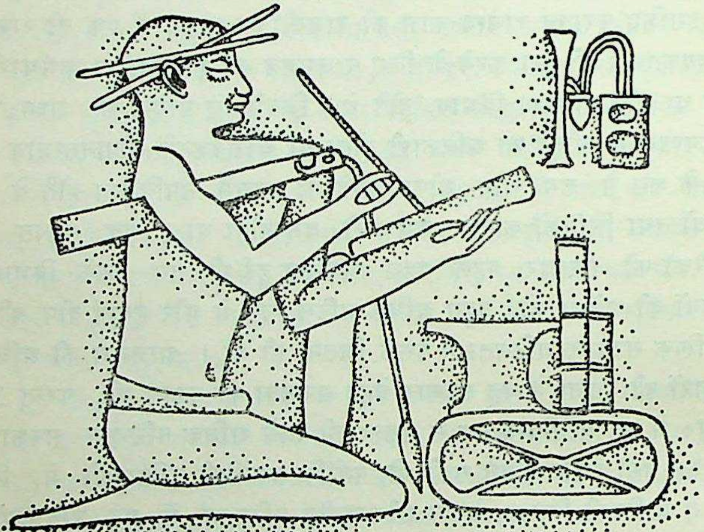

एक मिश्री लिपिक और उसके लिखने के उपकरण

इन पुरोहित लोगों ने जो धार्मिक व्यवस्था बनाई हुई थी, वह देवताओं की एक बहुत बड़ी संख्या की पूजा पर आधारित थी। इन देवताओं की संख्या बिलकुल आरम्भिक राजवंशी के काल में कुल मिलाकर कम से कम दो सौ थी और

बाद में वह बढ़ती गई। ये देवता मानवीय सम्बन्धों में विक्षोभ के उन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते थे, जो प्राकृतिक घटनाओं के कारण और आयु, लिंग तथा व्यवसाय के आधार पर श्रम विभाजन के कारण उत्पन्न होते थे। इस प्रकार प्रतीक बनाई गई कुछ वस्तुएँ ये थीं : आकाश और वर्षा; रात्रि, अन्धकार उत्तर दिशा और बुराई; अपने दैनिक और मौसमी पहलुओं की अनेक दशाओं में विद्यमान सूर्य और राजकीय शक्ति; चन्द्रमा; नील नदी; पवन; वायु और फूलों की सुगन्ध; अग्नि; कृषि; यौन आकर्षण; लेखन; धात्विकी; और न्याय। इन बारह विषयों को नोमों की संख्या से गुणा किया जा सकता है और उनमें से उन वस्तुओं की संख्या घटाई जा सकती है, जो मिश्री संस्कृति के अधिकाधिक एकजातीय होते जाने पर एक-दूसरे में घुल-मिल गए थे।

अपने शिकारी पूर्वजों की भाँति, जिनके जीवन पशुओं और पक्षियों की आदतों का अवेक्षण करने में बीतते थे, मिश्रवासी लोग अपने देवताओं के प्रतीक उन पर पशुओं के गुणों का आरोप करके बनाते थे। जैसे उन्होंने सूर्य के देवता 'रा' का प्रतीक गरूड़ को और 'आइसिस' का प्रतीक एक सारस को बनाया था। लिखने और पढ़ने का देवता 'थौथ' एक बैबून था; बैबून एक ऐसा पशु है, जो जब कीड़ों की खोज में एक के बाद एक पत्थर को उलटता जाता है, तब विद्वज्जनोचित अध्यवसायी सा, और जब वह अपने साथियों को सहला रहा होता है, तब गिनती गिनता हुआ सा दिखाई पड़ता है। नरक के देवता 'सैत' को एक रहस्यमय पशु के रूप में चित्रित किया गया था, जिसकी थूथनी और पूंछ लम्बी थी और जिसके कान वर्गाकृति थे। जो बहुत कुछ उस भू-शूकर (आर्डवार्क) जैसा होता था, जो चौंकने पर कुछ ही क्षणों में भूमि के अन्दर गड्ढा खोदकर आँखों से ओझल हो जाता है और यह मान लिया जाता है कि वह गड्ढा खोदकर नरक की ओर जा रहा होता है।[1] इनमें से प्रत्येक देवता के साथ केवल एक ही नहीं, अपितु अनेक किंवदन्तियाँ जुड़ी होती थीं, जो साधारण मिश्रवासियों में उतनी ही प्रचलित होती थीं, जितनी कि जोनाह और ह्वेल मछली की कहानी ईसाइयों में प्रचलित है। इन किंवदन्तियों में से

---

1. 'थौथ' के अभिज्ञान की व्याख्या और 'सैत' की भू-शूकर (आर्डवार्क) से तुलना मेरी अपनी सूझ है। मेरे मिश्र विशेषज्ञ साथी उन्हें स्वीकार नहीं करते।

सबसे अधिक प्रचलित और सबसे अधिक प्रभावशाली ओसिरिस की कहानी है। इसमें कुछ घटनाएँ ऐसी हैं, जिनका मिश्री संस्कृति में नव-पाषाणिक तत्व के उद्‌गम से सम्बन्ध रहा हो सकता है। ओसिरिस ने मिश्र में कृषि, पशु-पालन और कलाकौशल का सूत्रपात किया। अपनी मृत्यु के बाद वह अपने मूल निवास स्थान को लौट गया, जहाँ से यह माना जाता है कि वह उन पौधों और पशुओं को लाया था, जिन्हें कि बाद में मिश्रवासी उगाने और पालने लगे थे। मरने के बाद उन मिश्रवासियों की आत्माएँ ओसिरिस के पास पहुँचती हैं, जिन्होंने पवित्र मार्गदर्शक पुस्तक 'दिन में सामने आने की पुस्तक' (दि बुक ऑफ कमिंग फोर्थ बाइ डे) (मृतकों की पुस्तक) के मूल पाठ को कंठस्थ कर लिया है और जिन्हें ओसिरिस तक पहुँचने का रास्ता मालूम है।

ओसिरिस का निवास स्थान पश्चिम में नहीं था, जैसा कि साधारणतया इस प्रकार के स्वर्गों (हैपी हंटिंग ग्राउण्ड) का होता है, अपितु उत्तर में था। वह प्रदेश कुहरे से ढका हुआ है और ऊँचे-ऊँचे पर्वत, जिनमें से कुछ ज्वालामुखी हैं, उसके एक छोर पर स्थित है। जो पार्श्व पर्वतों से उल्टी ओर है, उधर एक बड़ी झील है; और उन पर्वतों और उस झील के बीच में नदियों और सिंचाई की नहरों का जाल-सा बिछा हुआ है। पहाड़ों की ओर एक घना जंगल है और पहाड़ों से उल्टी ओर तथा खेती की भूमि से दूर हटकर एक मरूस्थल फैला हुआ है। वहाँ के वृक्षों में से अनेक देवदारू जातीय हैं, जो ओसिरिस की दृष्टि में बहुत पवित्र हैं। सरकंडों से बने हुए एक प्रशाल में परलोक का स्वामी निवास करता है।

इस विवरण का कुछ भी अंश मिश्र से मेल नहीं खाता और न यह मेल खाने की दृष्टि से रचा ही गया है। इस विवरण से जिन अनेक स्थानों की याद आती है, उनमें से एक पश्चिमी मध्य एशिया का वह भाग है. जो अलबुर्ज और हिन्दूकुश पर्वतों के उत्तर की ओर कास्पियन समुद्र के तट तक फैला हुआ है और जिसमें आमू दरिया का प्रदेश सम्मिलित है और जो कुहरे, ज्वालामुखियों और वृक्षों तक चला गया है। वर्तमान साक्ष्य के आधार पर देखने से यह कास्पियन के पार का प्रदेश आरम्भिक नव-पाषाणिक संस्कृति का केन्द्र स्थान था; यह कितने पहले की बात है, इस विषय में हम अभी तक निश्चय से कुछ नहीं कह सकते, हालाँकि इस समय इसका काल 5400 ई० पू० उचित

प्रतीत होता है। यह बात अभी देखने को शेष है कि मिश्र के संस्कृतिवाहक लोग, जिन्हें ओसिरिस का रूप दे दिया है, इस प्रदेश से वहाँ पहुँचे थे, या मध्य अफ्रीका के झील के प्रदेश जैसे अन्य किसी स्थान से।

सुमेरियाई लोगों का स्थल तथा समुद्री मार्गों द्वारा व्यापार[1]

कुछ ऐसा ही रहस्य सुमेरियाई लोगों के उद्गम के विषय में भी बना हुआ है। मिश्रवासियों के अलावा एक वे ही लोग ऐसे थे, जिनके यहाँ लेखन उतने पुराने काल में विद्यमान था, जितना कि मिश्रवासियों के यहाँ था। भाषा की दृष्टि से वे उतने ही विदेशी थे, जितने कि मिश्रवासी स्वदेशी थे। वे अपनी भाषा को निचले मैसोपोटामिया की दलदली भूमियों में कहीं बाहर से उसके बाद लाए थे, जबकि इस प्रदेश की दो युगल नदियों ने एक बाढ़ में उनके पहले के निवासियों की, जो नव-पाषाणिक काल के पिछले भाग के या ताम्र युग के लोग थे, कुछ अपेक्षाकृत अधिक सुभेद्य बस्तियों को नष्ट कर दिया था। उनके पहले सम्भाव्यतः इस निचले मैसोपोटामिया के प्रदेश में ऐसे लोग रहते थे, जो सामी (सैमिटिक) भाषा बोलते थे। सुमेरियाई लोगों की भाषा का सम्बन्ध अभी तक अन्य किसी भाषा से नहीं जोड़ा जा सकता है। इन बाढ़ का समय 3000 ई० पू० के लगभग आँका गया है।

सुमेरियाई लोगों में यह बात परम्परागत रूप से प्रचलित थी कि वे किसी ऐसे पर्वतीय प्रदेश को, जहाँ जहाज़रानी सम्भव थी, छोड़कर वहाँ आए थे। वे अपने इस निवासस्थान सुमेरिया में धातु से पूरी तरह सज्जित होकर आए थे। इन धातुओं में केवल ताम्र और स्वर्ण ही नहीं, अपितु असली काँसा भी

---

1. यह अनुमान मुख्यतया सर लियोनार्ड वूले द्वारा किये गए बहुत विशाल कार्य पर और विशेषरूप से उनकी इन पुस्तकों पर आधारित है : 'रॉयल सीमिट्री ऐट उर' ऑक्सफ़ोर्ड प्रेस, फिलाडल्फिया और लन्दन, दो खंड, 1934; 'दि सुमेरियन', क्लैरेंडन प्रेस लन्दन, 1928; 'उर ऑफ दि चैल्डीज़', चार्ल्स स्क्रिमिनर्स सन्स, न्यूयार्क, 1930; यह सर लियोनार्ड के साथ हुए पत्र व्यवहार और यूनिवर्सिटी म्यूज़ियम के डाक्टर सैमुअल ऐन० क्रैमर के साथ हुए वार्तालापों पर भी आधारित है।

सम्मिलित था। इनके पूर्वजों ने किसी स्थान पर ताम्र और वंग को मिलाकर पिघालना सीखा था, क्योंकि सुमेरिया में तो मिट्टी के सिवाय ग्रार कुछ प्राप्त नहीं होता।[1]

वंग (रांगा) एक दुर्लभ धातु है, जिसे वे तुर्की, सीरिया या ईरान में स्थित तीन स्थानों, अज़रबेजान, गुरगान और खुरासान, से प्राप्त कर सकते थे। इनमें से सीरिया को इसलिए निकाल दिया जा सकता है, क्योंकि यदि सुमेरियाई लोगों का वंग प्राप्त करने का स्रोत सीरिया रहा होता, तो पुरातन राजत्व काल के उन मिश्रवासी लोगों को भी वह प्राप्त रहा होता, जो देवदारू की लकड़ी लेने के लिए वहाँ जाया करते थे। तुर्की, आर्मीनिया और अज़रबेजान भौगोलिक दृष्टि से एक ही पर्वतीय क्षेत्र हैं। गुरगान उत्तरी ईरान के कास्पियन समुद्र तट पर स्थित है। खुरासान ईरान का उत्तर-पूर्वी प्रान्त है, जो अफगातिस्तान के सामने पड़ता है। ये तीनों ही वंग के स्रोत हो सकते थे, क्योंकि सुमेरियाई लोग आर्मीनिया से आग्नेय काँच (ओब्सिडियन) और अफ़गानिस्तान से लाजवर्द (लैपिस लैजुली) प्राप्त करते थे। इन पत्थरों के लिए व्यापारिक मार्ग गुरगान और खुरासान में से होकर गुज़रते होंगे। सुमेरियाई लोग अपने साथ पहिये वाले वाहन भी लाये थे और पहिये वाले वाहन मध्य एशिया की अपनी विशेषता हैं; वहाँ के खुले तरूहीन मैदानों में सड़कें बनाने की आवश्यकता ही नहीं होती।

अब तक सबसे पुराने जो पहियेदार वाहन मिले हैं, वे चार पहियों वाली दो गाड़ियाँ और दो पहियों वाला एक रथ है, जो सर लियोनार्ड वूले को सन् 1927 में उर के राजकीय मकबरों में प्राप्त हुए थे। इनका काल आरम्भिकतम सुमेरियाई काल, 3000 और 2700 ई० पू० के बीच का काल माना गया है। गाड़ियों और रथों, दोनों में पहिये उनकी धुरियों के साथ कस दिये गए थे,

---

[1] आरम्भिकतम सुमेरियाई कांस्य के सम्बन्ध में इस विमर्श के लिए देखिए आर० जे० फोर्बेस की पुस्तक 'मैटलर्जी इन ऐंटिक्विटी'; प्रकाशक हैं ई० जे० ब्रिल, लीडन, 1950 और ऐच० ऐच० कौघलन की पुस्तक, 'नोट्स ऑन दि प्रीहिस्टोरिक मैटलर्जी ऑफ कौपर एण्ड ब्रोंज़ इन दि ओल्ड वर्ल्ड;' प्रकाशक हैं पिट रिवर्स म्यूज़ियम, ऑक्सफोर्ड औकेलशन पेपर्स ऑन टैक्नोलौजी, संख्या 4, 1951।

जिससे जब वह वाहन किसी मोड़ पर मुड़ता था, तब एक जोड़े के दोनों पहिये एक ही चाल से घूमते थे और उनमें से एक को घिसटना या जमीन में गड़ जाना पड़ता था। इस प्रकार का शकट (छकड़ा) नरम भू भाग में मन्द गति वाले खेती के अपरिष्कृत कार्य के लिए ही अच्छा है और इस सिद्धान्त पर बनाया गया कोई रथ गम्भीर युद्ध के लिए अनुपयुक्त होगा। इन वाहनों के साथ सर लियोनार्ड को स्थल भाग पर चलने वाली एक नाज़ुक सी स्लैज गाड़ी भी मिली थी। इस प्रकार की गाड़ियाँ अब तक भी कास्पियन के निकट प्रान्तों में, जौर्जिया में, बास्क देश में और पुर्तगाल में प्रयोग में आती हैं।

वूले के छकड़ों को बैल खींचते थे। उसकी स्लैज गाड़ियों में और रथ में जो पशु जोते जाते थे, उन्हें अभी तक पक्के तौर पर पहचाना नहीं जा सका

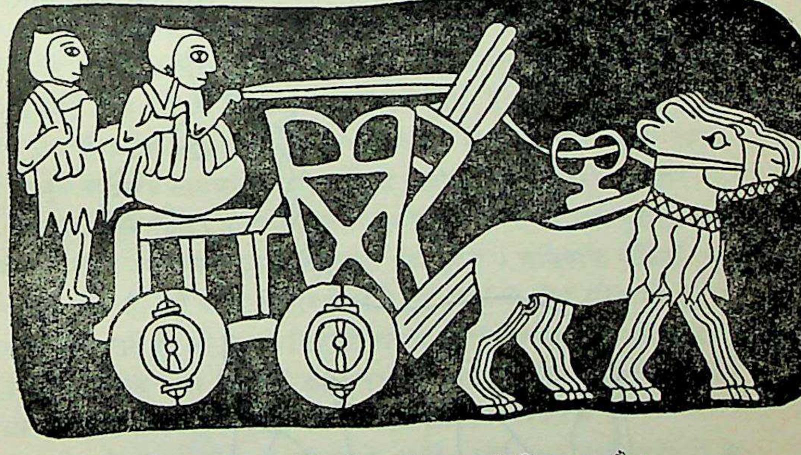

रथ, जो उर के सुमेरियाई राजकीय ध्वज से लिया गया है।

है। वे अश्व कुल के छोटे आकार के सदस्य थे; वे या तो तुरंग (टार्पन) पूर्वी यूरोप और पश्चिमी मध्य एशिया के जंगली घोड़े थे, या पालतू गधे, या गोरखर (ओनेगर, एक प्रकार का ईरानी जंगली गधा) के पालतू बनाए हुए प्रभेद थे। इस प्रकार के गधे अब केवल जंगली रूप में ही पाये जाते हैं। अच्छी तरह परिरक्षित न होने के कारण उनकी हड्डियाँ नहीं बच सकी

हैं। इस प्रकार के पशु की एक छोटी-सी रजत् प्रतिमा, जो रथ के सारथी का अंश है, और उसी स्थान पर प्राप्त एक लाजवर्द और हाथीदांत की पटिया पर बने हुए चित्र इस रहस्य को केवल और बढ़ा ही देते हैं। इनमें से कोई सा भी चित्र स्पष्ट रूप से निश्चायक नहीं है।

यदि वे गधे या गोरखर (ओनेगर) थे, तो इस प्राप्त हुई सामग्री से सुमेरियाई लोगों द्वारा किया गया एक ऐसे पशु को युद्ध के लिए प्रयुक्त करने का अपरिपक्व और असफल प्रयत्न प्रकट होता है, जो इस विशेष प्रयोजन के लिए अनुपयुक्त था। यदि वे तुरंग (टार्पन) थे, तो इसका अर्थ यह है कि ईरान या मध्य एशिया में घोड़ों को उससे पहले ही पालतू बनाया जा चुका था और यह, कि रथों द्वारा युद्ध वहाँ शुरू हो चुके थे। जब एक रानी की आत्मा को सुरक्षित ले जाने के लिए इन रहस्यपूर्ण पशुओं को बलि चढ़ा दिया गया, उसके

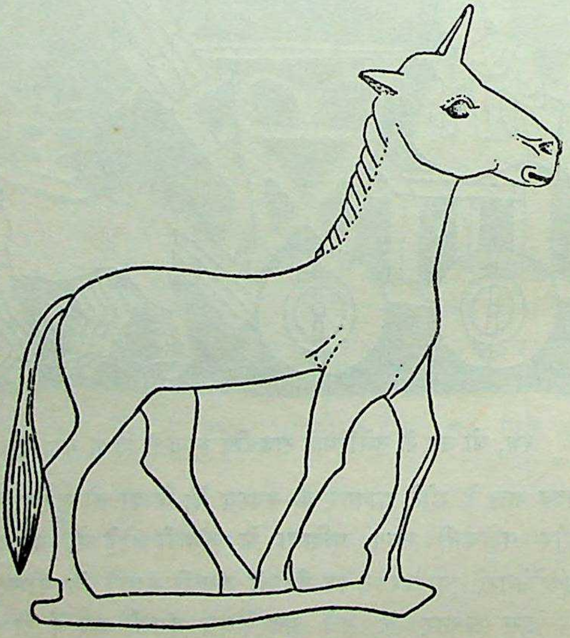

घोड़ा या गधा? उर में राजकीय मकबरे से प्राप्त हुआ लगाम के छल्ले का आभूषण।

बाद एक हज़ार से भी अधिक वर्षों तक इन स्थलों में, जिनकी कि खुदाई अब तक हुई है, न तो घोड़ों की हड्डियाँ, न घोड़ों का साज और न घोड़ों के चित्र ही प्राप्त हुए हैं। सम्भवतः स्वयं घोड़ा ही सुमेरिया से लुप्त हो गया था। वंग भी लुप्त हो गया था, जिसके फलस्वरूप सुमेरियाई लोगों को मिश्रवासी लोगों की भाँति काँसे के स्थान पर ताम्र से काम चलाना पड़ता था। काँसा, घोड़े और रथ, ये सबके सब लगभग एक हज़ार वर्ष बाद एक साथ उत्तर की ओर से आए। जब वे आ गए, तब उन्होंने परिवहन और युद्धकला में क्रान्ति कर दी और राज्य विस्तृत होते-होते साम्राज्य की देहली तक पहुँच गए।

मिश्रवासियों को स्मारकों के निर्माण में काम आने वाले कठोर और सुन्दर पत्थर के जैसे सुलभ स्रोत प्राप्त थे, सुमेरियावासियों को वैसे प्राप्त नहीं थे, अपितु उन्हें अपने मंदिर, महल और अधिकाँश मकबरे विवश होकर उन्हीं निष्प्रभ कच्ची ईंटों से बनाने पड़ते थे, जिनसे वे अपनी सामान्य दीवारें बनाते थे। कठोर और काला पत्थर खुदाइयों में अवश्य मिला है, किन्तु वह दरवाज़े के किवाड़ों की उलूखलों के रूप में है, जिन पर कुछ लिखा हुआ है और जिनका बार-बार प्रयोग हुआ है। वह उन बेलनाकार पत्थरों के रूप में, जिन पर बहुत महत्त्वपूर्ण क़ानून या अन्य सार्वजनिक प्रलेख लिखे रहते थे, और मुहरों के रूप में, भी मिलता है। कुछ थोड़ी-सी मूर्तियाँ भी इस पत्थर की बनी हुई हैं, जिसे अवश्य ही बहुत दूर स्थित पहाड़ों से लाना पड़ा होगा। अधिकाँश मूर्तियाँ चूने के पत्थरों की हैं, जो अरब के मरूस्थल से, जो वहाँ से तीस मील दूर है, या ज़गरौस की तराई से, जो दूसरी दिशा में इतनी दूर है, प्राप्त हो सका होगा। अरबी चूने के पत्थर की शिलाएँ उन कबरों को मढ़ने के लिए प्रयुक्त की गई हैं, जो उर में सर लियोनार्ड द्वारा खोजे गए मकबरों में स्थित है।

सुमेरियाई लोग मिश्रवासी लोगों से ऐसी कई महत्त्वपूर्ण दृष्टियों से भिन्न थे, जिनका प्रभाव इन दो प्रदेशों के परवर्ती इतिहास पर और शेष संसार पर हुए उनके आपेक्षिक प्रतिघात पर पड़ा। सुमेरियाई लोगों के यहाँ एक के बजाय दो नदियाँ थीं, जिनके बीच में उन्होंने बड़े परिश्रम से नहरों का एक ऐसा जाल-सा खोद लिया था, जो स्थान और ढलान की दृष्टि से इतने निर्दोष ढंग से आयोजित था कि इस समय ईराक सरकार की सबसे बड़ी आशा यह हैं कि वह किसी प्रकार इन नहरों को सुधार कर उनको पहले

की दशा में ला सके । कोई आधुनिक इंजीनियर भी इससे बढ़िया प्रणाली की योजना नहीं बना सकता । इन नहरों के निर्माण से खेती का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया और उसके साथ ही स्थल भाग में नौवहन की भी सुविधा हो गई । यह सुविधा केवल नदी में ऊपर या नीचे की ओर जाने की ही नहीं, जैसी की मिश्र में थी, अपितु नदी के आर-पार भी दूर तक जाने की थी । इस प्रकार मिश्र के एक आयाम की तुलना में सुमेर के प्रदेश में दो आयाम प्राप्त हो गए । नहरों के संधारण की भाँति इस स्थान-सम्बन्धी घटक का प्रभाव राजनीतिक क्षेत्र में भी पड़ा । मिश्र की भाँति यहाँ भी सब नहरों को

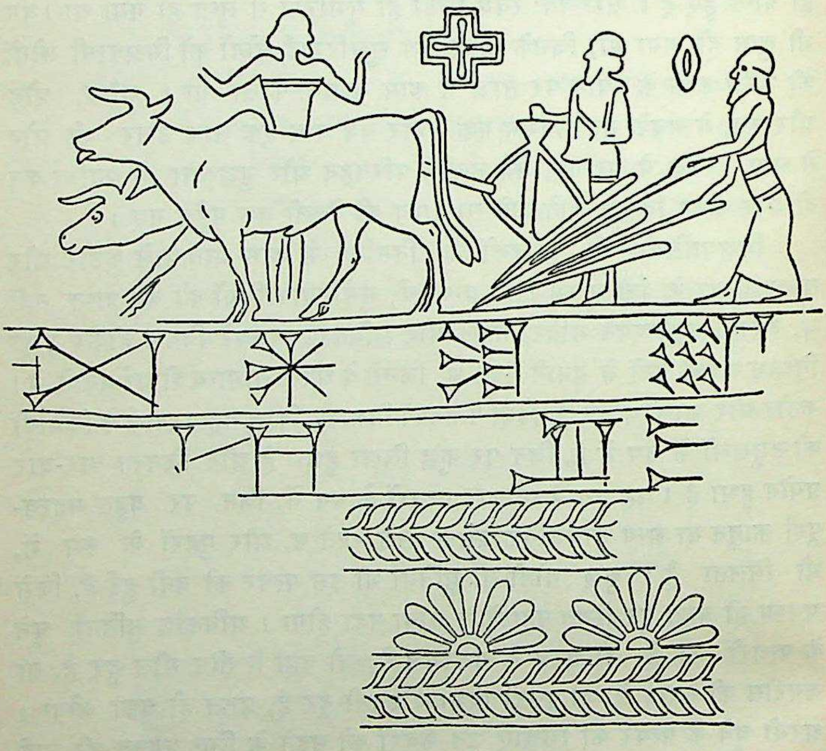

बैबीलोनिया का एक हल चलाने का दृश्य ; यह चौदहवीं शताब्दी ईस्वी पूर्व का है ; इसे एक मुहर की छाप से लिया गया है ।

अच्छी चालू दशा में रखने के लिए एक केन्द्रीय प्राधिकार की आवश्यकता थी। परन्तु मिश्र में कोई विद्रोही देर तक डटा रहने की आशा नहीं कर सकता था, क्योंकि राजा के सैनिकों को केवल नदी और नदी के किनारों से जहाँ तक नज़र जाय, वहाँ तक ही कृषि-योग्य भूमि की रक्षा करनी पड़ती थी। सुमेरिया में नहरों का जाल बिछा होने के कारण दूरियाँ कम हो जाती थीं, किन्तु उन्हीं के कारण बच भागना भी आसान हो जाता था। इस प्रकार जिन अर्थों में मिश्र एक हो गया था, उन अर्थों में सुमेरिया कभी एक नहीं हुआ। एक के बाद एक, नगर राज्य अपने साथियों को जीतते रहे और जो राज्य पहले जीत लिए गए थे, वे कभी-कभी फिर स्वतन्त्र हो जाते थे। शासन शक्ति (सत्ता) के परिवर्तन बार-बार होते रहते थे। मिश्र में इससे मिलते-जुलते परिवर्तन शासन शक्ति के स्थान के सम्बन्ध में न होकर उसके केन्द्रीयकरण की मात्रा के सम्बन्ध में ही होते थे।

इसके साथ ही सुमेरियाई लोग मिश्रवासी लोगों की अपेक्षा अन्य लोगों से कहीं कम विच्छिन्न थे। पूर्व की ओर ऐलामाइत लोग कारूँ नदी के निचले भाग में नदी की मिट्टी से बने मैदान पर कब्ज़ा किये हुए थे। वहाँ तक सुमेरियाई लोग जलमार्ग द्वारा पहुँच सकते थे। उत्तर की ओर सामी भाषा बोलने वाले अक्कादियाई लोग तिगरिस और यूफ्रेटीज़ नदियों के बीच के समतल मैदानों के उस बिन्दु से, जहाँ ये दोनों धाराएँ एक दूसरे के अधिकतम निकट पहुँच जाती हैं और मुड़वाँ घुटनों वाले आदमी के घुटनों की सी आकृति बना लेती हैं, दक्षिण की ओर वाले भाग में सुमेरियाई लोगों के साथ-साथ रहते थे। क्योंकि वे स्थान की दृष्टि से साझीदार थे, इसलिए वे राजनीतिक साझीदार भी बन गए और वे उस सिंचाई वाले खेती के प्रदेश पर, जिसमें वे सुमेरियाई लोगों के साथ हिस्सेदार थे, बारी-बारी से शासन करते थे। अन्त में जाकर सुमेरियाई भाषा घर के काम-काज में बोली जाने वाली भाषा न रही। परन्तु अक्कादियाई लोग, और उसके बाद बैबीलोनियावासी इस भाषा का प्रयोग उच्च संस्कृति और धर्म की भाषा के रूप में उसी प्रकार करते रहे, जिस प्रकार चर्च की लैटिन भाषा का प्रयोग यूरोप में उसके बाद भी शताब्दियों तक किया जाता रहा, जबकि वह सामान्य लोगों की बोलचाल की भाषा नहीं रही थी और जिसका प्रयोग 'जैसूट' लोग अब भी करते हैं।

न केवल स्वयं सुमेरियाई भाषा ही अन्य लोगों से ली गई थी, अपितु लेखन की वह कीलाकार प्रणाली भी, जो अन्य लोगों द्वारा अपना ली गई थी, और जो वर्णमाला के प्रसार से पहले अनेक भाषाओं के अनुकूल ढाल ली गई थी। इसके ठीक विपरीत, मिश्र की चित्रलिपि का प्रयोग केवल मिश्रवासी ही करते रहे।

सुमेरियाई लोगों के पश्चिमी पड़ौसी अरब के मरुस्थल के गड़रिये थे। यह मरुस्थल चमड़े के ओठों वाले ऊँटों के वहाँ पहुँचने से पहले उसकी अपेक्षा कम वंजर दिखाई पड़ने लगा है। दक्षिण की ओर सुमेरियाई लोगों की, जो स्वयं नाविक थे, भेंट उन अन्य नाविक लोगों से हुई, जिनकी हड्डियाँ अब तक भी वेहरीन द्वीप में हजारों ऐसे कब्रिस्तानों में गड़ी हुई हैं, जिनकी खुदाई अभी तक नहीं हुई। यूफ्रेटीज घाटी के ऊपरी सिरे पर काँस्य युग के अनेक लोग उस प्रदेश में रहते थे, जिसे अब सीरिया और पहाड़ों के पार लेबनान कहा जाता है। बाहर भूमध्यसागर में साइप्रस और क्रीट दोनों के निवासी धातु का उपयोग करते थे और क्रीटवासियों ने तो अपनी ही एक चित्रलिपि प्रणाली का आविष्कार कर लिया था, जिसके अधिकांश भाग को अभी तक पढ़ा नहीं जा सका है। इन लोगों में से अधिकांश के, या सभी के साथ सुमेरियाई लोगों के उसी प्रकार के व्यापारिक सम्बन्ध थे, जैसे कि उजाड़ ईरानी पठार के धातु युगीन ग्रामवासियों के साथ थे।

आरम्भ से ही व्यापार का अर्थ रहा है—वैदेशिक सम्बन्ध। इसलिए राज्य की संरचना का दुहरा प्रयोजन होता था: आन्तरिक सुरक्षा और बाहर के आक्रमणों से बचाव। इसके फलस्वरूप उन तीन श्रेणियों में से, जिनमें कि जनसंख्या विभक्त हो गई थी, सैनिक कुलीन वर्ग सबसे ऊपर था। उसके बाद एक मध्य वर्ग था, जिसके पुरुषों को आवश्यकता पड़ने पर सेना में भर्ती होने के लिए बुलाया जा सकता था और उसके नीचे पुरानी बाइबिल में वर्णित प्रकार के दासों का स्थान था। सैनिक कुलीन वर्ग में राजा और उसके निकट सम्बन्धी, सरकारी कर्मचारी, और पुरोहित तथा पेशेवर सैनिक होते थे। इन पिछले लोगों, अर्थात् पेशेवर सैनिकों, को शाश्वत रूप से तब तक के लिए भूमि दे दी जाती थी, जब तक कि खेतों पर खेती की जाती रहे। राजमहल और मन्दिर दोनों की अपनी जागीरें होती थीं।

परन्तु दूसरी श्रेणी के लोग भी भूमि के स्वामी बन सकते थे। वे किसान, कारीगर, दूकानदार, अध्यापक और व्यापारी होते थे। मिश्र की भाँति यहाँ भी धातु का अधिकांश काम राजकीय शिल्पागारों में किया जाता था और मन्दिरों में करघों के सायबान बने होते थे। परन्तु कुछ काम निजी रूप से भी किया जाता था। अध्यापक लोग मन्दिरों से संलग्न नहीं होते थे और उनके छात्र और छात्राएँ, दोनों हर प्रकार की गतिविधि में भाग लेते थे, क्योंकि सारा लेन-देन लिखित रूप में होता था और साक्षरता का प्रसार बहुत था। व्यापारी लोग, जो दूर-दूर तक व्यापार करते थे, अपने शाखा कार्यालय एशिया माइनर के दक्षिणी समुद्र-तट जितनी दूर तक महत्त्वपूर्ण स्थानों पर बसे हुए नगरों में भी स्थापित करते थे।

जहाँ तक हमें पता है, उस समय न तो कारीगरों की कोई कम्पनियाँ विद्यमान थीं और न व्यापारिक संघ ही विद्यमान थे। सबसे अधिक जटिल आर्थिक संस्था व्यापार-गृह थे, जिनकी अनेक शाखाएँ होती थीं और जिनके विदेशों से सम्बन्ध रहते थे। व्यापार में शीघ्रता और सरलता के लिए उनके पास विनिमय के तुरत तैयार माध्यम रहते थे। सरल और स्थानीय व्यापार के लिए जौ (यव) मानक माध्यम था। बड़े व्यवसाय और विदेशी व्यापार के लिए माध्यम चाँदी या स्वर्ण का शकल (एक बाट), जो तोल की इकाई था, होता था जिसकी विनिमय दर स्वर्ण के एक शकल के बदले आठ चाँदी के शकल होती थी। क्योंकि उन दिनों उधार चलता था, इसलिए व्यापारी लोग अपने साथ ऐसी लेख-पट्टियाँ लेकर जा सकते थे, जिनके द्वारा उन्हें यह अधिकार मिल जाता था कि वे एक निश्चित सीमा तक की राशि ले सकते हैं। वे व्याज पर भी उधार ले सकते थे। व्याज की अधिकतम दर जौ के लिए 33·3 प्रतिशत वार्षिक और चाँदी के लिए 20 प्रतिशत वार्षिक थी। इन परिसीमाओं के अतिरिक्त सरकार समय-समय पर पण्य द्रव्यों की भी अधिकतम सीमा निश्चित कर देती थी। सुमेरियाई सभ्यता का यह व्यापारिक वातावरण इस दृष्टि से बहुत आश्चर्यजनक है कि इसके ठीक विपरीत उसी काल में मिश्र में व्यापार पर सरकार का एकाधिकार होता था; और सुमेरिया का यह व्यापार अवश्य ही इन दोनों देशों के लोगों द्वारा एक-दूसरे से पृथक् रहने का परिणाम था। मिश्रवासियों को अपने देश से बाहर जाने की आवश्यकता केवल विलास की

वस्तुओं के लिए होती थी, परन्तु सुमेरियाई लोगों को जीवित रहने के लिए व्यापार करना पड़ता था । वे लोग वाणिज्य और कारीगरी पर, और मध्य वर्ग के महत्त्व पर जितना ज़ोर देते थे, उसके फलस्वरूप सुमेरियाई लोग आधुनिक सभ्यता की ओर आने वाले मार्ग के ठीक बीच में स्थित थे, जबकि मिश्रवासी उस मार्ग के ज़रा एक किनारे की ओर को थे ।

मिश्र की भाँति यहाँ भी राजा लौकिक शासक और प्रधान पुरोहित, दोनों का ही काम करता था । सरकार में पाँच मन्त्रालय होते थे : अन्तःपुर, युद्ध, कृषि, परिवहन और वित्त । पुरोहित लोग अपने कार्यों के आधार पर विभक्त थे और उनमें दो प्रकार के विशेषज्ञ थे, जिनसे उनके पूर्ववर्ती नव-पाषाणिक पुरोहितों का स्मरण हो आता है; ये विशेषज्ञ थे निदानशास्त्री और चिकित्सक । इनमें से निदानशास्त्री किसी भी व्यक्ति के रोग अथवा सार्वजनिक विपत्ति के कारण का पता पक्षियों की उड़ानों को देख कर या बलि चढ़ाये गए पशुओं के यकृतों की विशेष रूप से तैयार किये गए मिट्टी के नमूनों के साथ तुलना द्वारा चलाते थे। जब यह पता चल जाता था कि वह दुष्टात्मा कौन-सी है, जिसके कारण वह रोग या विपत्ति आई है, तब चिकित्सक लोग उस दुष्टात्मा को निकालते थे । परन्तु सारे औषध प्रयोग जादू के ही नहीं होते थे । एक तीसरे पेशे के सदस्य, शल्य चिकित्सक (सर्जन) वस्तुतः शल्य चिकित्सा करते थे और दवाइयाँ बतलाते थे, जो सम्भाव्यतः अधिकांश में जादू के ढंग की होती थीं।

सुमेरियाई लोग भी पिरामिड बनाते थे, किन्तु मिश्र की शैली पर राजकीय मकबरों के लिए नहीं (उनके मकबरे तहखानों में होते थे), अपितु मन्दिरों के लिए मंच के रूप में काम आने के लिए । उनके देवता, जो प्रकृति की शक्तियों और मानवीय कौशलों के प्रतीक थे, पशुओं के रूपों में न होकर मनुष्यों की आकृतियों में होते थे । प्रत्येक नगर में एक मन्दिर होता था, जो वहाँ के स्थानीय संरक्षक देवता के सम्मान में बनाया गया होता था । उस मन्दिर में अपरिचित आगन्तुकों की सुविधा के लिए अन्य देवताओं के भी विशेष पूजा स्थान बने होते थे । सुमेरियाई समाज की भाँति सुमेरियाई धर्म भी व्यापार के लिए बना था ।

यद्यपि ईस्वी पूर्व की तीसरी सहस्राब्दी में 'पुरानी दुनिया' के धातु का

प्रयोग करने वाले साक्षर लोग केवल सुमेरियाई और मिश्रवासी ही नहीं थे, किन्तु ये दो ही ऐसे थे, जिसकी लिखाई को हम पढ़ने में समर्थ हुए हैं और जिनकी जीवन पद्धति और संगठन प्रणाली की हम विस्तार से पुनः कल्पना कर पाने में समर्थ हुए हैं। ये दोनों सामाजिक विकास के इतिहास में एक ऐसी अवस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिसमें राजनीतिक और धार्मिक, दोनों संस्थाएँ आन्तरिक रूप से जटिल बन गई थीं और उनमें विशेष विभाग थे और प्रभुता (कमांड) की एक शृंखला बनी हुई थी। सुमेरिया में वे स्वतन्त्र आर्थिक संस्थाएँ एक सरल रूप में शुरू हो चुकी थीं, जिनके आधार पर आधुनिक समाज बना है।

मिश्र में उपलब्ध प्रमाण पश्चिमी मध्य एशिया में किसी स्थान पर एक उन्नत संस्कृति वाले प्रदेश के साथ बहुत पुराने संपर्क की ओर संकेत करते हैं। सुमेरिया में उपलब्ध प्रमाण उसी या उसी से मिलती-जुलती संस्कृति के एक परवर्ती और कहीं अधिक विकसित रूप की ओर संकेत करते हैं। वह संस्कृति कौन-सी थी और वह कहाँ थी, ये ऐसे प्रश्न हैं, जिनके सम्बन्ध में बहुत-से पुरातत्ववेता यह चाहेंगे कि काश, वे किसी प्रकार इन प्रश्नों का उत्तर देने में समर्थ हो पाते !

हिताइत लोगों का पर्वतों के ऊपर से रथ चालन

इसके बाद आने वाली शताब्दियों में मैसोपोटामिया की सभ्यता, ज्यों-ज्यों उसका केन्द्र उत्तर में असीरिया की ओर हटता गया त्यों-त्यों, क्रमशः कई हाथों में से गुज़री। मिश्र तथा अन्य साक्षर देशों की भाँति यहाँ भी धातु का उपयोग बढ़ा और ज्यों-ज्यों प्राचीन मध्य पूर्व के विभिन्न देश एक-दूसरे के निकट सम्पर्क में आये, त्यों-त्यों व्यापार भी बढ़ा। परन्तु यह शनैः-शनैः होने वाली सांस्कृतिक उन्नति, उन आक्रान्ताओं द्वारा. जो 1700 ई० पू० के लगभग उत्तर की ओर के किसी स्थान से आए थे, काँसे और रथों के फिर प्रयोग के प्रारम्भ के कारण, बहुत तीव्र हो गई। अब ये रथ असली घोड़ों द्वारा खींचे जाते थे। इस काल में हाइक्सोस लोगों ने मिश्र पर आक्रमण किया और वहाँ का शासन अपने हाथों में लिया, आर्यों ने भारत पर आक्रमण किया और सिंधु घाटी की सभ्यता को नष्ट कर दिया, जिसके विषय में हम आगे चल कर

पढ़ेंगे, और कसाइत लोगों ने मैसोपोटामिया पर आक्रमण किया। ये कसाइत लोग भारोपीय (भारत यूरोपीय) भाषा भाषी थे।

उत्तर में, या तो जौर्जिया और अज़रबेजान के प्रदेश में, या दक्षिणी रूस और मध्य एशिया के और भी अधिक विस्तृत तरुहीन मैदानों में कुछ हलचल हो रही थी। यह जो कुछ भी हो रहा था, वह अनातोलिया के ऊँचे प्रदेशों में हुआ। अनातोलिया हिताइत लोगों का निवास-स्थान था। इन हिताइत लोगों की ओर विशेष रूप से ध्यान देना इसलिए उचित है, क्योंकि लौह धात्विकी के अग्रदूत स्पष्टतः वे ही थे। उनका देश मध्य अनातोलिया था। यह भूभाग हलाइस नदी के मोड़ और नमक की झील के दक्षिण की ओर फैले मैदान से

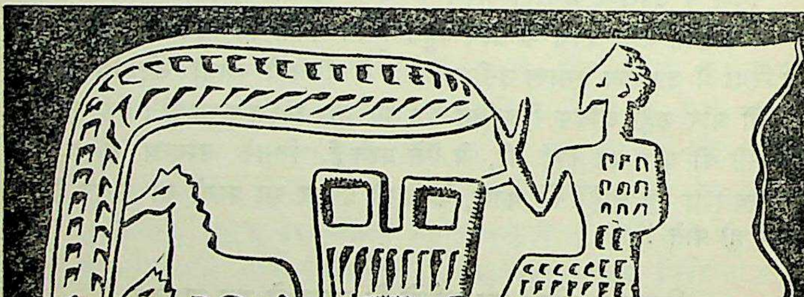

एक हिताइती रथ

घिरा हुआ है। उनकी राजधानी हत्तूसास थी। हत्तूसास एक विशाल सुदृढ़ किलेबन्दी वाला भग्नावशेष है, जो आजकल के बोघाज़कोई गाँव के निकट है। हत्तूसास सामरिक दृष्टि में इस सारी घाटी पर नियन्त्रण रखता था और उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम की ओर जाने वाले मुख्य व्यापारिक मार्गों के चौराहे पर स्थित था। हिताइत लोग स्वयं, जैसा कि भाषा वैज्ञानिक अनुसन्धानों के परिणाम के आधार पर प्रतीत होता है, भारोपीय भाषा-भाषी आक्रान्ताओं का एक ऐसा कुलीनतन्त्र थे, जो किसी उससे पुरानी काकेशियाई भाषा-भाषी नव-पाषाणिक या आरम्भिक कांस्ययुगीन जनता पर थोप दिया गया था। इस प्रकार के कई परस्पर सम्बन्धित कुलीनतन्त्र उस समय अनातोलिया में जहाँ-तहाँ बिखरे हुए थे।

हिताइतों का इतिहास दो भागों में विभक्त है : पुरातन राजत्वकाल का इतिहास, जो 1740 से 1460 ई० पू० तक रहा, और साम्राज्यकाल का इतिहास, 1460 से लगभग 1220 ईस्वी पूर्व तक रहा। इनमें से पहले काल में हत्तूसास के निवासियों ने अपने राज्य क्षेत्र को पर्वतों के ऊपर से आक्रमण करके विस्तृत किया और पड़ौस के कई प्रदेशों को अरने एक एकीकृत राज्य में मिला लिया। साम्राज्यकाल में हिताइतों ने तौरस नदी को पार करके सीरिया और मैसोपोटामिया के कुछ भागों पर शासन किया। उनके मूल पठार पर उनकी शक्ति का अन्त एकाएक तब हो गया, जबकि यूरोप से फ्रीजियन लोगों ने आक्रमण किया। सीरिया में छोटे-छोटे हिताइत राज्य कई शताब्दियों तक बने रहे और अन्त में असीरियाई लोगों ने उन्हें नष्ट किया। इन असीरियाई लोगों को बाद में ईरानियों ने समाप्त कर दिया। ये ईरानी लोग सर्वप्रथम वास्तविक साम्राज्य के संस्थापक थे।

तकनीकी दृष्टि से कहा जाय तो हिताइत साम्राज्य राजत्वकाल से दो बातों की दृष्टि से बिलकुल अलग था : घोड़ों से खींचे जाने वाले रथों का प्रयोग और लौहे की गढ़ाई का आरम्भ। इस काल में जो रथ बनने शुरु हुए, वे हल्के और तीव्रगामी थे। इनके पहिये मुक्त रूप से घूम सकते थे और उनमें से प्रत्येक में छह अरे होते थे। इस प्रकार के रथों में, जिन्हें कि घोड़ों को सँभालने में कुशल सारथी हाँकते थे, बैठे हुए भली भाँति शस्त्रों से सज्जित और अच्छे कवच पहने हुए कुछ थोड़े-से योद्धा सेना के अगले भाग में तेज़ी से

आगे की ओर झपटते थे; वे रथों से कूदकर भूमि पर उतर आते थे और जहाँ उनके पहुँचने की बिलकुल आशा नहीं होती थी, वहाँ पहुँचकर भीषण युद्ध करते थे; और उसके बाद फिर कूद कर रथ पर चढ़कर वापस सुरक्षित जगह पर लौट आते थे। इस प्रकार के कुछ थोड़े-से विशिष्ट योद्धा सैकड़ों पदातियों में मार काट मचा सकते थे और युद्ध जीत सकते थे। जब इस प्रकार की सामरिक चालों का व्यवस्थित रूप से प्रयोग सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थानों पर बसे हुए साक्षर नगर राज्यों के सदस्यों द्वारा किया जाने लगा, तो इसका अर्थ था कि साम्राज्य के निर्माण की पहली अवस्था प्रारम्भ हो गई है। इस बात के भी प्रमाण मिलते हैं कि इस काल में लोग केवल सैनिक कार्रवाइयों के लिए ही नहीं, अपितु सन्देश प्रेषण के साधन के तौर पर भी घोड़े की सवारी करने लगे थे और इस प्रकार संचार की गति बहुत अधिक तीव्र हो गई थी।

दूसरी वस्तु लोहा है। कांस्य युग के एक राष्ट्र की दृष्टि से हिताइत लोगों की स्थिति बहुत अच्छी थी, क्योंकि वे निर्यात के लिए काफी मात्रा में ताम्र उत्पन्न करते थे और चाँदी भी उत्पन्न करते थे, जो मुद्रा के रूप में काम आती थी। उनका व्यापार-सन्तुलन अच्छा था। परन्तु उसके पास वंग (राँगा) नहीं था। इस समय विद्यमान अनातोलिया की वंग की खानें तब या तो निश्शेष हो चुकी थीं, या उस समय तक उनकी खुदाई शुरू नहीं हुई थी। इस धातु को वे असीरियावासियों से लेते थे और असीरियावासी इसे और भी पूर्व की ओर स्थित किसी स्थान से प्राप्त करते थे। साम्राज्य काल की अवधि में किसी समय हिताइत लोगों ने लोहे को पिघलाना और गढ़ना सीखा था। इस लोहे का वे असीरियावासियों को निर्यात करते थे, किन्तु यह निर्यात थोड़ी ही मात्रा में होता था। राजा हातूसिलिस तृतीय (1275-1250 ई० पू०) द्वारा किसी एक अज्ञात राजा को लिखा गया एक पत्र प्राप्त हुआ है, जिसमें उसने एक आदेश (आर्डर) को पूरा न कर पाने के लिए इस आधार पर क्षमा याचना की है कि वह समय लोहे के उत्पादन की दृष्टि से बहुत खराब रहा था। वह वचन देता है कि ज्योंही उसके कारीगर उस आदेश को पूरा कर चुकेंगे, त्योंही वह उस आदेश का माल अपने उस बंधु राजा को भिजवा देगा। इस बीच में वह उसे लोहे की कृपाण का एक फलक भेज कर ही प्रसन्न करता

है।[1] इससे ऐसा प्रतीत नहीं होता कि उस समय लौह युग अपने पूरे ज़ोर पर आ गया हो। स्थिति यह थी कि जब लोहा एक सामान्य व्यापार की वस्तु बना, उस से पहले ही हिताइत साम्राज्य का उदय और अस्त हो चुका था।

राजत्व के काल में हिताइत लोगों ने हत्तूसास के पड़ोस के प्रदेशों पर और कुछ थोड़े-से अन्य नगरों तथा उनके आस-पास बसे हुए ग्रामों पर कब्जा कर लिया था। इनमें से प्रत्येक क्षेत्र की अपनी अलग भाषा होती थी और इन भाषाओं में से अधिकांश भाषाएँ एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होती थीं। प्रत्येक नगर का अपना एक विशेष देवता होता था, जिसकी पूजा स्थानीय भाषा में की जाती थी। इस प्रकार की कीलाकार लेख पट्टियाँ परिरक्षित रह गई हैं, जिन पर ये विशेष सूत्र लिखे हुए हैं। जनता तीन श्रेणियों में विभक्ति थी : कुलीन लोग, जनसाधारण और दास। भूमि का कुछ भाग उन जागीरों के रूप में था, जो राजा द्वारा श्रेष्ठ योद्धाओं को दी गई थीं, कुछ मंदिरों की सम्पति थी और कुछ सीधा राजा की सम्पति था। शेष भूमि का स्वामित्व निजि रूप से साधारण लोगों के पास था, जो स्वतन्त्र गाँवों में निवास करते थे। इस प्रकार स्थिति लगभग ठीक वही थी, जो ईराक और ईरान में आजकल है और तुर्की में इस ससय जीवित व्यक्तियों के स्मरण काल तक में थी।

ग्रीष्म ऋतु में हिताइत राजा अपने राज्य के चारों ओर स्थित पर्वतों को पार करके युद्ध के लिए जाते थे। साधारणतया वे दक्षिण प्रयाण करते थे, क्योंकि उत्तर-पूर्व के प्रदेशों में ऐसी जातियाँ बसती थीं, जिनसे लड़ना उनके लिए कठिन रहता था। सीरिया और उत्तरी ईराक के समतल मैदान उनके शिकार होते थे। अनेक अभियानों में उन्होंने अलैप्पों और बैबीलोन को जीत लिया था। जिन हिताइतों का पुरानी बाइबिल (ओल्ड टैस्टामेंट) में इज़राइली लोगों के शत्रु उत्तरी पड़ोसियों के रूप में उल्लेख है, वे साम्राज्योत्तर काल के उत्तरी सीरिया के क्षीण-शक्ति हिताइत लोग थे।

---

[1] ओ० आर० गुर्ने, 'दि हिटाइट्स', पैंगुइन बुक्स इनकार्पोरेटेड बाल्टिमोर, 1952 पृष्ठ 83।

यदि शत्रु राजा अभियान के शुरू में ही आत्म समर्पण करने और अधीनस्थ सामन्त बनने से इनकार करता था, तो हिताइत लोग रणभूमि में उसकी सेना से लड़ते थे और उसको परास्त करने के बाद वे उसके शहर पर घेरा डाल देते थे। वे शहर के दरवाज़ों और दीवारों के पास पहुँचने और उन्हें तोड़ने के लिए ढके हुए छज्जों (हुड) औंर ढहाने वाले शहतीरों का प्रयोग करते थे। उसके बाद हिताइत लोग लूटमार और हत्या करते थे, शहर को जलाकर राख कर देते थे, और बाकी बचे हुए स्त्री-पुरुषों और पशुओं को अपने साथ ले आते थे, जिन्हें वे अपने प्रदेश के अधिकारियों और कर्मचारियों में बाँट देते थे। जब किसी प्रदेश को हिताइत साम्राज्य में मिला लिया जाता था, तो उसे यह छूट रहती थी कि वह अपना अलग देवता रखे; और हिताइत राजा प्रत्येक वर्ष प्रत्येक धार्मिक केन्द्र में पूजा की अध्यक्षता करने के लिए एक विशेष दौरा किया करता था। हत्तूसास का देवता तूफान का देवता था, जिसका प्रतीक सांड, रथ, फरसा और बिजली थी, और उसे इस रूप में चित्रित किया गया है कि वह पर्वतों के सर्वोच्च शिखरों पर आरोहण कर रहा है। उसमें जियस, ज्युपिटर और थोर के साथ बहुत कुछ समानताएँ थीं, जैसा कि भारोपीय भाषा-भाषियों की पुराण कथाओं में आशा करनी ही चाहिए। यद्यपि हिताइत लोग लुप्त हो चुके हैं, फिर भी वे मानव-वैज्ञानिकों और इतिहासकारों की इस दृष्टि से सहायता करते हैं कि वे कांस्य से लोहे तक की, और राजत्व से साम्राज्यों के आरम्भ तक की, और पूर्वी सभ्यता से पश्चिमी सभ्यता तक के बीच की खाई को पाटने के लिए सेतु बन गए थे।

होमरकालीन यूनान के देवता और वीर योद्धा[1]

यदि हम किसी प्रकार इन पाटी गई खाइयों में से किसी एक के ऊपर से गुज़र कर जा सकें, जिससे हमें पश्चिमी मध्य एशिया या पूर्वी यूरोप के

---

[1] होमर कालीन सभ्यता की इस पुनः कल्पना को तैयार करने में मैंने टी० डी० सेमूर के संकलन, 'लाइफ इन दी होमरिक एज'; का उपयोग किया है। प्रकाशक हैं; दि मैकमिलन कंपनी न्यूयार्क, 1907। इसके अतिरिक्त मैंने होमर के मूल ग्रन्थों का भी उपयोग किया है।

घास के मैदानों में किसी स्थान पर कांस्य युग के पिछले भाग की किसी भारत-यूरोपीय सभ्यता का किसी साक्षी द्वारा स्वयं आँखों देखा साहित्यिक विवरण प्राप्त हो जाय, तो वह बहुत ही बढ़िया बात होगी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उस समय वहाँ ऐसी बहुत घटनाएँ घट रही थीं, जिनमें हमारी रुचि है। परन्तु इस प्रकार की आकस्मिक प्राप्ति लगभग असम्भव है। ऐसा प्रतीत होता है कि हिताइत लोगों के सिवाय कांस्य युग के भारोपीय भाषा-भाषी लोग निरक्षर थे। परन्तु होमर के काव्य में हमें इस प्रकार की एक ऐसी सभ्यता का अमूल्य प्रलेख प्राप्त होता है, जो वहाँ से ले जाकर भूमध्य के प्रदेश में स्थापित की गई थी। प्रामाणिक विद्वान और इतिहास होमर के काव्यों में वर्णित काल के विषय में, इन महाकाव्यों की रचना के काल के विषय में और स्वयं होमर के विषय में कुछ भी क्यों न कहें, किन्तु दो बातों में बिलकुल सन्देह नहीं : इन काव्यों में वर्णित संस्कृति एक समूची संस्कृति है और वह एक वास्तविक संस्कृति है, क्योंकि यह आन्तरिक दृष्टि से सुसंगत है। यह नहीं हो सकता कि कोई व्यक्ति यों ही कहीं से एक सभ्यता का आविष्कार कर ले और मिथ्यात्व की गन्ध तक न आए। होमर की सभ्यता सारतः भारोपीय भाषा-भाषियों की एक ऐसी सभ्यता है, जिसे भूमध्य सागर की परिस्थिति में ला जमाया गया है; वह नागरिक साक्षर[1] पूर्वी भूमध्य सागर के आरम्भिक कांस्य युगीन लोगों की सभ्यता नहीं है। अब हमें यह पता है कि होमर के काल के राजाओं के यहाँ लिपिक लोग होते थे, जो मिट्टी की बनी लेख-पट्टियों पर सामान का हिसाब रखा करते थे और यह हिसाब यूनानी भाषा में होता था। परन्तु या तो होमर को इस बात का ज्ञान नहीं था, या फिर यदि उसे ज्ञान था, तो परवर्ती निरक्षर युग में होने के कारण हिसाब-किताब की बारीकियाँ उसकी दृष्टि में महत्त्वहीन रही होंगी। इसके अलावा, अन्य दृष्टियों से सुनिर्दिष्ट अर्थों में न भी सही, तो भी सामान्य रूप से ये काव्य उस काल का सच्चा चित्र प्रस्तुत करते हैं।

इन कविताओं में वर्णित भू-दृश्य असन्दिग्ध रूप से यूनान था, किन्तु उस

---

[1] जे० वैन्ट्रिस और जे० चैडविक, 'एवीडैन्स फॉर ग्रीक डायलैक्ट इन दि माइसीनियन आर्काइव्ज' जर्नल ऑफ हैलेनिक स्टडीज़, खंड 73, 1952, पृष्ठ 84-103।

काल का यूनान आजकल के, या प्रसिद्ध चौथी शताब्दी ईस्वी पूर्व के यूनान की अपेक्षा वनों और चरागाहों से कहीं अधिक सम्पन्न था। पहाड़ों के ऊपर चीड़ के ऊँचे-ऊँचे जंगल थे और करंज तथा बांज के जंगल ढलानों और मैदानों तक फैले हुए थे और बारहमासी झरने मनुष्यों और पशुओं को जल प्रदान करते थे। सिंह, तेंदुए और जंगली सुअर इन जंगलों में रीछों, हिरनों और लोमड़ियों के साथ घूमते फिरते थे। जंगली बत्तखों और जंगली राजहंसों के विशाल दल पोखरों और स्थल के अन्दर की ओर आये हुए जल भागों के ऊपर कलरव करते हुए उतरते थे और तीतर झाड़ियों के नीचे दौड़ लगाते थे। स्थल भाग के केवल थोड़े-से अंश पर ही खेती होती थी और बहुत बड़ा अंश चरागाहों के लिए छोड़ दिया गया था। बस्तियों के बीच में पड़ने वाले वनों में से गुज़रने वाले रास्ते समुद्री मार्ग की अपेक्षा कहीं अधिक खतरनाक थे।

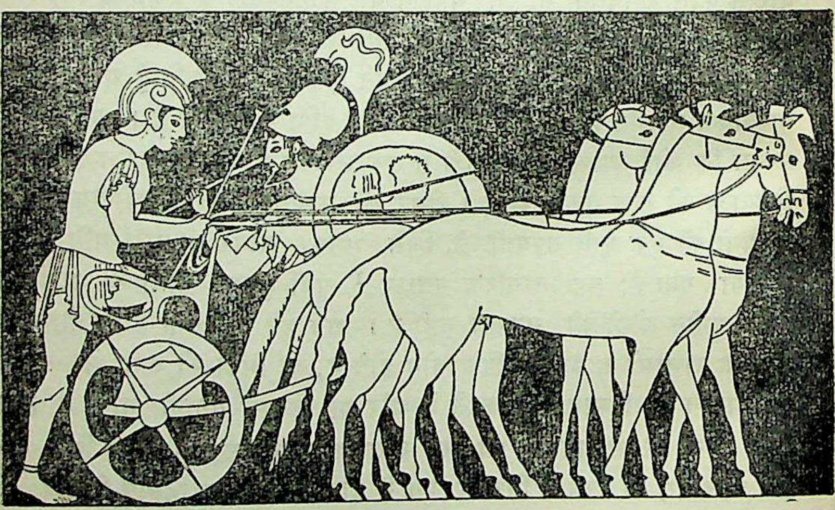

होमर कालीन रथ; एक यूनानी फूलदान से लिया गया चित्र

होमर के काल के वीर योद्धाओं के खेतों के बाड़ों में ढोरों के रेवड़ देखे जा सकते थे, उनकी गन्ध अनुभव की जा सकती थी और उसकी आवाज़ें

सुनी जा सकती थीं ढोरों के इन रेवड़ों को गर्मियों में ऊँचे चरागाहों में चरने के लिए भेज दिया जाता था और सर्दियों में उन्हें फसल कटने के बाद खेतों में बचे हुए ठूँठों को चरने के लिए छोड़ दिया जाता था। इन ढोरों को कभी दुहा नहीं जाता था। वे किसान के लिए ऊर्जा का और धन का एक चल स्रोत थे, जिनके द्वारा वह अपने खेतों को जोतता था, अपने पुत्रों के लिए बधुएँ खरीदता था, देवताओं को सन्तुष्ट करता था और अपने खाने के लिए गौमाँस प्राप्त करता था। केवल बकरियों और भेड़ों को दुहा जाता था और उनके दही से पनीर बनाया जाता था। साधारणतया दी जाने वाली बलियाँ सूअरों की होती थीं, जो पास के जंगलों में होने वाले करंज के फलों और बंजु फलों पर बहुत सस्ते में पल जाते थे। साधारणतया बोझ ढोने के लिए गधे काम में आते थे। घोड़े रथ खींचते थे और असैनिक गाड़ियों को खींचने का काम खच्चरों से लिया जाता था। ये विभिन्न प्रकार के वाहन आँगन के अन्दर की ओर किनारे किनारे-चारों ओर इस प्रकार खड़े किये जाते थे कि जिससे उसके बाँस (बम) ऊपर की ओर उठे और दीवारों के सहारे टिके रहें। राजहंस कभी पानी में और कभी पानी के बाहर पशुओं के बीच पंखों को फड़फड़ाते घूमते फिरते थे। इस राजहंसों को उनके पंखों के लिए ही पाला जाता था—ये पंख मुख्य रूप से युद्ध में काम आने वाले तीरों के पिछले सिरे (पंख) पर लगाये जाते थे। होमर के काल का सामान्य भोजन सींख-क़बाब के ढंग पर भुना गया गोमाँस, रोटी, थोड़े-से प्याज और क़भी कदास कोई सेव होता था। मक्खन तैयार नहीं किया जाता था और जैतून के तेल का उपयोग केवल प्रसाधन के रूप में किया जाता था। मज्जा, गुर्दे की कड़ी वसा (स्वेट) और चर्बी ही वे चिकनाइयाँ थीं, जो खाने के काम आती थी। मछली, शैल फिश और अंडे मनुष्यों के लिए अभोज्य माने जाते थे। पालतू मुर्गी उस समय तक यूनान में नहीं पहुँची थी।

आँगन के पीछे की ओर एक ड्योढ़ी होती थी, जिसमें प्राय: लड़के और पुरुष अतिथि सोते थे। अन्दर की ओर मकान में एक बड़ा कमरा होता था, जिसमें परिवार के लोग और अतिथि मिलकर छोटी-छोटी, लाकर रखी या हटाई जा सकने वाली मेज़ों पर खाना खाते थे। ये मेज़ें एक जगह स्थिर रूप से जमी हुई बड़ी-बड़ी कुर्सियों के पास लाकर रखी जाती थीं। रात में

विवाहित युगल ऐसे पलंगों पर सोते थे, जो हिलाये-डुलाये जा सकते थे और दिन के समय उठाकर एक जगह खड़े कर दिये जाते थे। इस सोने के कमरे में बीच की भट्टी में आग जलती थी, जो सोने के समय अंगारों का ढेर मात्र रह जाती थी। अग्नि कुंड में आग जलने से जितना प्रकाश होता था, जब उससे भी अधिक प्रकाश की आवश्यकता होती थी, तब होमर के वीर योद्धा दीवारों में लगे हुए धातु के कुंडों पर चीड़ (पिच पाइन) की लम्बी लकड़ी जलाकर रख देते थे। होमर के काव्यों में किसी भी व्यक्ति को अग्नि उत्पन्न करता हुआ नहीं दिखाया गया अपितु जब उनकी भट्टियाँ ठंडी पड़ जाती थीं, तब वे लोग एक-दूसरे से आग माँग लेते थे। बड़े प्रशाल के पीछे की ओर एक छोटा कमरा होता था, जिसमें अविवाहित लड़कियाँ सोती थीं, जब पुरुष लोग कहीं बाहर गए होते थे, तब उन लड़कियों की माताएँ भी इसी कमरे में सोती थीं। घर के बाहर एक छोटा-सा स्नानागार होता था, जिसमें परिवार की स्त्रियाँ परिवार के सदस्यों और अतिथियों को मल-मल कर नहलाती थीं।

होमर के पात्र जिस एक प्रधान वस्त्र को पहनते थे, उससे अधिफ सादा वस्त्र और कोई नहीं हो सकता। स्त्रियाँ और पुरुष दोनों एक ही वस्त्र को पहनते थे। ये ऊनी वस्त्र के एक या एक से अधिक वर्गाकार टुकड़े होते थे। पुरुषों का पहनावा साधारणतया एक ही वस्त्र होता था, जिसे वे अपने कन्धे पर डाल लेते थे, और जब वे लड़ते, काम करते या किसी घर में प्रवेश करने लगने, तब वे इस वस्त्र को उतार लेते थे। स्त्रियाँ दो वस्त्र पहनती थीं, एक आगे की ओर और दूसरा पीछे की ओर। इन दोनों वस्त्रों को पाश्वों की ओर से बाँध दिया जाता था और कमर में एक पेटी बाँध दी जाती थी। नग्नता से किसी को परेशानी नहीं होती थी।

इन मानक वर्गाकृति ऊनी कपड़ों को बुनने का काम स्त्रियों का था और इसके द्वारा वे सम्पति का संचय करती थीं, क्योंकि ये ऊनी वस्त्र अन्य वस्तुओं से विनिमय में लिये और दिये जा सकते थे और इस प्रकार वे एक प्रकार की मुद्रा का काम करते थे, जैसे कि वे तीन हज़ार वर्ष बाद उत्तर-पश्चिमी समुद्र तट के अमेरिकी मूलवासियों में भी मुद्रा के रूप में काम आते थे। पुरुषों का अधिकाँश समय पशुओं को चराने और खेती में लग जाता था, किन्तु कुछ थोड़े-से लोग विशेषज्ञ भी होते थे। जो बढ़ई और लुहार होते थे।

प्रायः एक ही आदमी इन दोनों पेशों को करता था। बढ़ई मकान, जहाज़ और रथ बनाता था और लुहार शस्त्र, औज़ार तथा कवच बनाता था। हालांकि लुहार धातु की ढलाई, कूट-पीट और जोड़ने का काम करता था, परन्तु वह धातु को पिघलाने और वंग और ताम्र को मिलाने का काम नहीं करता था। सारी की सारी धातु फीनिशिया वासियों से वस्तु विनिमय द्वारा प्राप्त की जाती थी। ये फीनीशियावासी धातु के बदले दास, पशु, खालें और शराब चाहते थे।

बढ़ई-लुहार अच्छा प्रतिष्ठित व्यक्ति होता था और अपने काम में कुशल बढ़ई-लुहार मज़े से यात्रा करता हुआ एक राज्य से दूसरे राज्य में जा सकता था और जो भी व्यक्ति उसे अधिक धन दे, उसके लिए काम कर सकता था। परन्तु सामान्य गृहस्थ व्यक्ति भी इन कौशलों को थोड़ा-बहुत जानता था, क्योंकि होमर काल के यूनानी लोगों में पुराने नौर्स और सैक्सन लोगों की भांति श्रम के बहुत पक्के विभाजन की कोई धारणा नहीं थी परम्परा यह थी—और मज़दूरों के संगठन बन जाने के बाद भी इसका कुछ अंश हमारे यहाँ अब तक भी बचा हुआ है—कि हर किसी व्यक्ति को किसी भी प्रकार का काम उतनी मात्रा में करने का हक है, जितना कि वह करना चाहता है और कर सकता है, और विशेष रूप से तब, जबकी वह उस काम को स्वयं अपने लिए करना चाहता है।

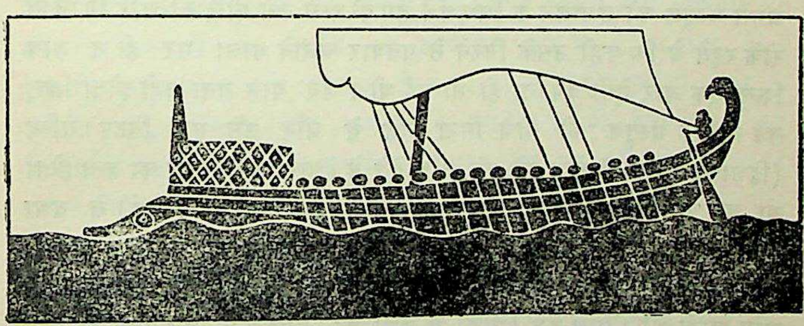

होमरकालीन जहाज, एक यूनानी फूलदान से लिया गया चित्र

होमर कालीन बढ़ई जो रथ बनाते थे, वे किसी भी सारभूत दृष्टि से

हिताइतों के रथों से भिन्न नहीं थे। स्थल मार्ग की दुर्गमता के कारण जिन दिनों समुद्र जहाज़रानी के लिए पर्याप्त शान्त होता था, उन दिनों कम ही लोग स्थल मार्ग से यात्रा करते थे। होमर के काल का वह सामान्य जहाज, जिस पर चढ़कर वीर योद्धा अपने घोड़ों और रथों समेत ट्राय गए थे, चालीस-चालीस फुट लम्बा होता था, जिसकी धरन (कड़ी) आठ फुट होती थी। उसका नौतल बांज का बना होता था और तख्ते चीड़ के होते थे। उसके अग्र भाग और पृष्ठ भाग कुछ फुट तक तख्तों से पटे हुए होते थे जिससे पिछले डेक पर कप्तान और पतवार चलाने वाले व्यक्ति के लिए और अग्र भाग में दूर-दूर तक देख-भाल करने वाले व्यक्ति के खड़े होने के लिए जगह बनी होती थी। नौतल में बने एक गड्ढे में अड़ाकर खड़ा किया गया मस्तूल एक खाँचेदार कुंवरे (खिवैये के बैठने के तख्ते) के सहारे टिका होता था। अगले मस्तूल को संभालने के लिए बंधे हुए दो रस्से उसे पीछे की ओर गिरने से रोके रहते थे कि कहीं उसके गिरने से पतवार चलाने वाला मर ही न जाय किन्तु एक बार ऐसी दुर्घटना हो भी गई थी। जब पाल तना नहीं होता था, तब नाविक मस्तूल को नीचे गिरा लेते थे और उसे एक विटप सन्धि (द्विशाखी कोण) के साथ कस कर बाँध देते थे। पाल ऊनी कपड़े का बना होता था, वह वर्गाकृति होता था और पाल लटकाने के पालदंड (यार्ड) से बंधा होता था। पाल उतारने चढ़ाने की रस्सी बैल के चमड़े की बनी होती थी और ऐसी ही चर्म-रज्जु पिछले मस्तूल को संभालने के रस्से के रूप में भी काम आती थी। पाल-दंड (यार्ड) से बंधी हुई पाल को ताने रहने के लिए लगी दो लकड़ियाँ (ब्रेस) और पाल के निचले कोने में लगी दो समंजन रस्सियाँ (शीट) पाल को ठीक स्थिति में संभाले रखती थीं। पालों की स्थिति में परिवर्तन करके जहाज़ों की दिशा मोड़ने का प्रयत्न उस समय तक नहीं किया गया था। यदि वायु अनुकूल न हो, तो बीस नाविक एक कप्तान के निदेशानुसार इस जहाज़ को खेते थे और पतवार चलाने वाला नाविक एक चप्पू द्वारा जहाज़ को अभीष्ट दिशा में मोड़ता था। ये जहाज़ समुद्र तट के पास ही पास रहते हुए चलते थे और रास्ते के स्थल भागों को देखकर वे अपनी दिशा निर्धारित करते थे और हर रात वे अपने जहाज़ को समुद्र के किनारे पर लगा लेते थे। सामान्यतया वे समुद्र तट के साथ ही साथ लगे

रहते थे। लैसबौस से सीधा एजियन सागर को पार करना बड़ी हिम्मत का काम समझा जाता था और यह समझा जाता था कि इसका प्रयास केवल ग्रीष्म ऋतु के स्वच्छतम मौसम में ही किया जाना चाहिए। शीत ऋतु में वे अपने जहाजों को पानी से बाहर निकाल कर किनारे पर इतनी दूर रख देते थे कि लहरें वहाँ तक न पहुँच सकें।

जैसा कि परवर्ती काल के अधिकांश भारोपीय भाषा-भाषी लोगों में था, होमरकालीन यूनानी लोग चार सामाजिक श्रेणियों को मानते थे: राजवर्ग कुलीन वर्ग, जनसाधारण और दास। राजा और उसके परिवार का निर्वाह राजकीय भूमि से उत्पन्न हुई उपज द्वारा और विशेष अवसरों पर उसकी प्रजा द्वारा स्वेच्छा से लाये गए, खाद्य सामग्री और पशुओं के, उपहारों द्वारा होता था। उस समय किसी प्रकार का औपचारिक करारोपण नहीं था। इसके अतिरिक्त राजा को युद्ध में प्राप्त हुई लूट में से एक विशेष भाग मिलता था और विशेष रूप से तब, जबकि वह स्वयं उस युद्ध में जाकर लड़ा हो। हालांकि वह काफी सम्पत्ति लेता था, फिर भी वह लगभग उतनी ही मात्रा में सम्पत्ति भेंट, पुरस्कार और आतिथ्य के रूप में दे भी देता था। वह सम्पत्ति के एक शोधन-गृह के रूप में काम करता था; वह धनी और दरिद्र में समता लाने वाला था और अपने राज्य क्षेत्र में रहने वाली विभिन्न श्रेणियों के बीच मध्यस्थ था। अपनी प्रजा को उसकी मुख्य देन उसका नेतृत्व था और उसको प्रजा की मुख्य देन निष्ठा (राजभक्ति) थी।

जब कोई साधारण व्यक्ति वीरता का कोई असाधारण काम कर दिखाता था, तो राजा उसे एक जागीर देता था और उसे कुलीनता की उपाधि देता था, जो आगे उत्तराधिकार में भी चलती जाती थी। कुछ साधारण व्यक्ति, जिनमें सामान्यतया बढ़ई और लुहार भी सम्मिलित थे, भूमि के स्वामी होते थे और अन्य लोग उनके यहाँ नौकर होते थे। दास युद्ध में बन्दी बनाकर प्राप्त किये जाते थे, या खरीदे जाते थे या दासों की सन्तान होते थे। इन दासों में से कुछ अपने देशों में राजा या रानी रह चुके होते थे। केवल स्त्री दासों को उनके स्वामी अपने यहां रखैल के रूप में रखते थे। इन रखैलों से उत्पन्न बच्चे, जो 'नोथोई' कहलाते थे, अपेक्षाकृत घटिया कोटि की सन्तान माने जाते थे। इस प्रकार उत्पन्न हुए अवैध पुत्र सारथी के रूप में

अपने कुलीनतर सौतेले भाई की सेवा कर सकते थे। पुरुष दास, चाहे वे खरीदे गए हों, या अपने यहाँ ही उत्पन्न हुए हों, घर से बाहर खेतों पर काम करते थे।

जैसा कि नव-पाषाणिक समाज में होता था, देश छोटे-छोटे राज्यों में बंटा हुआ था। कुलीन और साधारण लोग घर से बाहर परिषदों की सभाओं में भाग लेने के लिए एकत्रित होते थे। इन परिषद्-सभाओं को राजा अपनी इच्छानुसार बुलाता था। ये कुलीन और साधारण लोग राजा की अनुपस्थिति में शासन भी करते थे। एक विशेष अधिकारी 'उद्घोषक' (हैरल्ड) होता था, जो इन सभाओं में वाद-विवाद के नयाचार का नियमन करता था। वह उस व्यक्ति को, जिसकी कि आगे बोलने की बारी होती थी, जाकर एक विशेष छड़ी थमा देता था। यह छड़ी उद्घोषक (हैरल्ड) के पद का चिह्न थी और इसे लेकर वह एक के बाद एक राज्य में सन्देश पहुँचाता हुआ अक्षत घूम-फिर सकता था। राजा के पास अपना केवल एक ही चिह्न होता था और वह था उसका राजदंड। एक बार एक राजा ने एक अनुशासनहीन परिषद्-सदस्य के सिर पर इस राजदंड से चोट भी की थी। सामान्यतया राजा अपने से पहले राजा का ज्येष्ठ पुत्र होता था, परन्तु इस नियम के अपवाद भी काफी होते थे। कभी-कभी यह पद राजा के भाई को, कभी विधवा रानी के नये पति को और कभी राजा के दामाद को मिल जाता था। जैसा कि अन्यत्र भारत-यूरोपीय मौखिक साहित्य में भी पाया जाता है, होमर के काव्यों में यह एक सामान्य घटना थी कि कोई घूमता-फिरता वीर योद्धा किसी दैत्य को मार डालता था, वहाँ की राजकुमारी से विवाह कर लेता था और राज्य पर अधिकार कर लेता था। राजा के कर्त्तव्य को निबाहने के लिए आवश्यक शक्ति मनुष्य को केवल किसी विशेष देवता की कृपा से ही प्राप्त हो सकती थी; वह इस प्रतीक द्वारा अपने लोगों के लिए पुजारी के रूप में कार्य करता था। वह संकट के अवसरों पर प्रार्थना में और सार्वजनिक बलिदानों में उनका नेता होता था।

दूसरे राजा के यहाँ मिलने जाना राजाओं की शीतकालीन क्रीड़ा थी। राजा पहले अपना दूत भेज देता था और उसके बाद जब वह दूसरे राजा से मिलने जाता था, तो पड़ोसी राजा राज्य की सीमा पर आकर उसका स्वागत करता था और अपने अतिथि को अपने महल में ले जाता था। आगन्तुक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

राजा के सम्मान में सहभोज और क्रीड़ाएँ होती थीं। इस प्रकार की भेंटों के परिणामस्वरूप सगाइयाँ और मित्रता-सन्धियाँ हुआ करती थीं। क्योंकि इस प्रकार अधिकांश राजा एक-दूसरे को जान जाते थे, इसलिए जब युद्ध में वे अपनी सेनाओं को एक साथ मिला लेते थे, तो वे अपना एक प्रधान सेनापति चुन लेने के लिए तैयार हो जाते थे—जैसे कि 'इलियड' महाकाव्य में आगामेमनन को प्रधान सेनापति चुना गया था। ये मित्रता-सन्धियाँ शिथिल होती थीं। कोई भी राजा, जब भी चाहता, लड़ाई को छोड़कर अपने आदमियों को साथ लेकर घर लौट जा सकता था।

जो यूनानी लोग जहाज़ों पर चढ़कर ट्राय गए थे, सम्भाव्यत: उनकी संख्या पाँच हज़ार से अधिक नहीं थी। उनमें से एक भी पेशेवर सैनिक नहीं था। यूनान में प्रत्येक स्वतन्त्र मनुष्य को युद्ध का प्रशिक्षण दिया जाता था। प्रत्येक राजा अपने आदमियों को व्यक्तिगत रूप से जानता था और उसे उन सब लोगों के नाम भी पता होते थे। सेनाओं को इकट्ठा करने में केवल एक घंटा लगता था। श्रेष्ठ योद्धा भली-भाँति कवचों से सुसज्जित होते थे। वे लोग या तो कुलीन सामन्त होते थे, या फिर उस पद के लिए उम्मीदवार होते थे। ये अपने रथों में बैठकर अकेले लड़ाई लड़ने के लिए तेज़ी से आगे झपटते थे। इनकी संख्या बहुत थोड़ी थी। इसके बाद बर्छा फेंकने वालों का स्थान था। ये अपनी रक्षा के लिए कड़ी कच्ची खालें अपने गले से आगे की ओर लटकाये रहते थे। ये युद्ध की अग्रिम पंक्ति में होते थे; वहाँ वे शत्रु से लड़ते थे और यदि वे वीर योद्धाओं के काफी निकट होते, तो वे विपत्ति के समय उनकी सहायता करते थे। गोफ़िये से पत्थर फेंकने वाले और धनुष से बाण चलाने वाले लोग सेना के पृष्ठ भाग में रहते थे। वे हेराक्लीज़ की शैली पर भेड़ियों या रीछों की खालें इस प्रकार पहनते थे कि उन खालों के पंजे झूलते रहें। इस शैली का अनुकरण परिवर्ती काल के अनेक पेशेवर बलिष्ठ पुरुषों ने भी किया है।

इस प्रकार की सेना का संगठन यथासम्भव सरलतम ढंग का था। राजाओं, वीर योद्धाओं और सामान्य पुरुषों के ओहदों के अलावा और कोई ओहदा नहीं था। राजा का उद्घोषक उसके सहायक (ऐडजुटैण्ट) के रूप में काम करता था। सेना-रसद विभाग था ही नहीं। जिस खाद्य या पेय को सैनिक लोग लूट

कर प्राप्त नहीं कर सकते थे, उसे वे व्यापारियों से उन कवचों के बदले ले लेते थे, जो उन्होंने युद्ध में छीने होते थे। लड़ाई में राजा और वीर योद्धा राजाओं और वीर योद्धाओं से लड़ते थे, पदाति पदातियों से लड़ते थे, और धनुर्धारी तथा गौफियेबाज सब लोगों पर समान भाव से तीर और पत्थर बरसाते थे। एक या दो वीर योद्धा युद्ध का पासा पलट सकते थे और भली-भाँति कवचों से सज्जित दो पुरुष सेना के पृष्ठ भाग की रक्षा कर सकते थे। सरपट दौड़ते हुए घोड़ों के सुमों के सामने बहुत कम सैनिक डट पाते थे। किसी भी लड़ाई का सबसे अधिक निर्णायक काल वह एकाकी-युद्ध का समय होता था, जबकि दोनों पक्षों के श्रेष्ठ वीर योद्धा आपस में अकेले लड़ते थे। इस प्रकार का वीर योद्धा रथ में बैठकर आगे बढ़ता था। इस रथ को उसका कोई विश्वस्त मित्र, जैसे कि उसका कोई अवैध सौतेला भाई हाँक रहा होता था। यदि वह वीर योद्धा उस लड़ाई के बाद बचा रहे, तो भी जीते-जी अपनी सैन्य पंक्तियों में वापस लौट आने की सम्भावना इस सारथी की निष्ठा और वीरता पर ही निर्भर होती थी। रथ के पृष्ठ भाग से नीचे उतरकर वह वीर योद्धा अपनी विशाल धातु के घेरे वाली ढाल के पीछे डटकर खड़ा हो जाता था। यह ढाल सात बैलों की खालों से मिलकर बनी होती थी और इसका भार 200 पौंड तक होता था। यदि कभी वह वीर योद्धा पीछे की ओर गिर पड़ता और ढाल उसके ऊपर आ पड़ती, तो वह किसी की सहायता के बिना उठकर खड़ा नहीं हो सकता था। पहले वीर-योद्धा एक दूसरे पर बर्छे फैंकते थे; फिर, यदि वे उसके बाद भी सचेष्ट रहते, तो वे तलवारों से एक-दूसरे से गुंथ जाते। कुछ लोग गदाओं से भी लड़ते थे और सबके सब लोग अपने गिरे हुए शत्रुओं का गला काटने के लिए चाकू पास रखते थे। लड़ाई के समय दोनों व्यक्ति पहलवानों की तरह एक-दूसरे को ताने देते थे और यह वार्तालाप इतने ज़ोर-ज़ोर से होता था कि बर्छेबाज़ों को भी सुनाई पड़ता था। प्रायः निर्णायक प्रहार तब पड़ता था, जब कोई वीर योद्धा शस्त्रों से रहित होकर पृथ्वी पर से कोई बड़ा भारी पत्थर उठाकर बहुत ही सधे हुए निशाने से अपने प्रतिद्वन्द्वी पर फेंकता था। जब एक बार कोई वीर योद्धा धाराशायी हो जाता था, तब उसके कवच के लिए छीना-झपटी होती थी। उसके अपने साथी उस कवच को बचाने की चेष्टा करते थे और विजेता तथा उसके सारथी का लक्ष्य यह

रहता था कि या तो वे उस कवच को उतार कर भाग जाएँ या फिर वे उस लाश को रथ के पिछले भाग से बाँधकर उसे अपनी सैन्य पंक्तियों में घसीट ले जाएँ, जहाँ पर कवच को सुविधानुसार उतारा जा सकता था। क्योंकि इस कवच का औसत मूल्य नौ ढोरों के बराबर और अधिकतम मूल्य 100 ढोरों के बराबर होता था, इसलिए उसे प्राप्त करने के लिए इतना जोखिम उठाना उचित ही था।

ये लड़ाइयाँ बहुत दर्शनीय होती थीं। मानव-वैज्ञानिक साहित्य में उस प्रकार की लड़ाइयों के बहुत थोड़े वर्णन होते हैं, जैसी कि 'इलियड' में हुई हैं। अधिकांश अमेरिकी मूलवासी, मैलनेशियावासी तथा वे अन्य लोग, जो नव-पाषाणिक या उपान्तीय धातु युग में रहते रहे हैं, ब्राह्म मुहुर्त में ही एक-दूसरे पर घात लगाकर चोट करते या एक-दूसरे के गाँवों पर एकाएक हल्ला बोल कर आक्रमण करते रहे हैं। उनमें से ऐसे बहुत कम थे, जो होमर के वीर योद्धाओं की तरह दिन दहाड़े आघात-प्रत्याघात करने का दम रखते हों। होमर का विचार था कि जो व्यक्ति इस प्रकार की लड़ाई में अपने प्राणों को जोखिम में डाल सकता है, वह उत्कृष्ट पुरुष है और उसकी वीरता का फल, जिसमें स्त्रियाँ और प्रभुत्व भी सम्मिलित हैं, मिलना चाहिए। क्योंकि होमर की कविताओं का बाद के काल में यूनानियों की दृष्टि में वही महत्त्व था, जो हमारी (ईसाइयों की) दृष्टि में बाइबिल का है, इसलिए यह दृष्टिकोण प्रसिद्ध पाँचवीं शताब्दी की ऐथन्स की सभ्यता तक चलता चला आया, जबकि सुकरात जैसा पढ़ा-लिखा व्यक्ति भी अपने छात्रों के साथ मिलकर लड़ाई में गया था।

कांस्य के शस्त्रों से जो रक्ताक्त घाव हो जाते थे, उनके परिणामस्वरूप होमर को अस्थि कंकाल की और मांस-पेशियों तथा रक्त-परिसंचरण प्रणाली की शरीर-रचना के विषय में बहुत कुछ मालूम था। किन्तु तंत्रिका (नर्व) प्रणाली का उसे बिलकुल ज्ञान नहीं था और मस्तिष्क जो कुछ कार्य करता है, उसका तो उसे आभास तक भी नहीं था। यूनानी शिविर में दो शल्य चिकित्सक (सर्जन) थे, जो बाणों के अग्रभागों को काटकर शरीर में से निकालते थे और जड़ी-बूटियों के चूर्णों द्वारा रक्त बहना बन्द करते थे। वे पट्टियाँ भी बांधते थे। घाव दिखाई पड़ते हैं और उनका कारण स्पष्ट होता

है। उनके निदान या चिकित्सा में जादू का कोई प्रयोग नहीं था। इससे अधिक दुर्बोध ढंग के रोगों की व्याख्या अलग ढंग से की जाती थी।

यह बात होमर के महाकाव्य के सबसे अधिक सुपरिचित प्रसंग से स्पष्ट हो जाती है, जो इलियड के प्रथम खंड के पहले ही पृष्ठ पर है। जब कहानी का आरम्भ होता है, उस समय यूनानी लोग ट्राय के सामने शिविर डाले पड़े हैं। उन्होंने अपने जहाज़ों को पानी से निकालकर समुद्र तट पर डाल दिया है और वे उनके बीच में रह रहे हैं। उन्होंने अपना डेरा तम्बुओं में लगाया हुआ है। उन्हें वहाँ इस तरह रहते हुए दस वर्ष हो गए हैं। जैसी कि कोई भी आधुनिक व्यक्ति आशा कर सकता है, स्वच्छता के नितान्त अभाव के कारण शिविर में एक महामारी फैल गई है। बहुत-से मनुष्य मर गए हैं। उनकी लाशों को, जो खुली जमीन पर जहाँ-तहाँ पड़ी हैं, कुत्तों और चीलों ने खा लिया है। टाइफस ज्वर, आँत्र ज्वर और अमीबा पेचिश, कीटाणुओं से फैलने वाली कोई भी महामारी इसका कारण रही हो सकती है। यूनानियों के लिए यह महान् विपत्ति इतनी रहस्यमय थी कि उन्हें यह विश्वास हो गया कि किसी देवता के प्रति उनके किसी अपराध के कारण उन्हें यह दैवीय दंड मिल रहा है।

स्पष्ट है कि इससे छुटकारा पाने का उपाय यह था कि यह पता चलाया जाय कि वह रुष्ट हुआ देवता कौन-सा है और जिस अपराध के कारण वह रुष्ट हुआ है, वह किस प्रकार का है। अपनी सेना में से वे एक भविष्यद्द्रष्टा को लाए, जो शामन का यूनानी प्रतिरूप था। उसने यह पता चलाया कि वह देवता अपोलो था, जो अपने चाँदी धनुष से यूनानी शिविर पर जादू के अदृश्य बाण चला रहा था। अपराध इस प्रकार था : एक स्थानीय पुजारी, जिसका नाम क्राइसेस था, अपोलो के मन्दिर की देखभाल किया करता था। क्राइसेस की एक पुत्री थी, जिसका नाम क्राइसेसी था। आगामेमनन ने लूट के माल के रूप में क्राइसीस को पकड़ लिया था और वह उसके साथ अपने तम्बू में रह रहा था। इसी प्रकार ऐकिलिस ने ब्राइसीस नाम की एक तरुणी को हथिया लिया था। क्राइसेस ने आगामेमनन से अनुनय-विनय की कि वह उसकी पुत्री को लौटा दे, किन्तु आगामेमनन ने इन्कार कर दिया था। तब क्राइसेस ने (जैसा कि यूनानियों का विश्वास था) अपोलो से प्रतिशोध के लिए

प्रार्थना की थी। उस प्रार्थना के उत्तर में अपोलो ने यूनानियों के शिविर में वह महामारी भेजी थी।

जब एक बार यह निदान कर लिया गया और इसे मान लिया गया तब यूनानियों ने आगामेमनन पर दबाव डाला कि वह अपनी रखैल को छोड़ दे। आगामेमनन ने क्राइसीस को छोड़ दिया, किन्तु उसने साथ ही एकिलिस से ब्राइसीस को ले लिया। जैसा कि प्रत्याशित ही था, ऐकिलिस ने इस बर्ताव को बहुत बुरा माना; और जिस समय 'इलियड, की कहानी शुरू होती है, उस समय ऐकिलिस अपने तम्बू में अकेला बैठा क्रोध से जल-भुन रहा था। चाहे जो हो, किन्तु क्राइसेस सन्तुष्ट हो गया और अपोलो ने महामारी को यूनानी शिविर पर से हटा लिया। यह सबका सब बिलकुल विशुद्ध जादू है, ठीक उसी प्रकार का, जैसा कि न्यूगिनी में या ऊपरी अमेज़न के आदिवासियों में देखा जा सकता है। यूनानी लोग मनुष्य ही थे।

जिन देवताओं में यूनानी लोग, कम से कम होमर के काल के यूनानी लोग विश्वास करते थे, वे, जैसा कि देवताओं की आदत है, मानवीय सम्बन्धों में विक्षोभ के क्षेत्रों के प्रतीक थे। जियस, जो देवताओं का पिता, अग्रणी तथा राजा था, तूफानी मौसम का भी, जिसमें मेघ-गर्जन और बिजली गिरना भी सम्मिलित है, प्रतिनिधित्व करता था। ऐपाइरस के एक पर्वतीय मन्दिर डोडोना में उसका एक पवित्र निकुंज था। उसमें पुजारियों का एक समूह रहता था। ये पुजारी कभी नहाते नहीं थे और ये उस निकुंज में बाँज (ओक) वृक्षों की देख-भाल किया करते थे। और भूमि पर सोते थे। बाँज के पवित्र होने का एक स्पष्ट कारण था, दुर्भिक्ष के दिनों में इससे खाद्य प्राप्त होता था। कृषि का आरम्भ होने से पहले यह भूमध्यसागर के एक प्रधान खाद्य बंजुफल (ऐकोर्न) की प्राप्ति का स्रोत था। चाहे जो हो, जब इन पुजारियों से कहा जाता था, तो ये ज़ियस से प्रश्न पूछते थे और वह उन प्रश्नों का उत्तर अपने प्रश्वास द्वारा उन बाँज वृक्षों की पत्तियाँ हिला कर देता था। पुरोहित इन संदेशों का वैसी ही अस्पष्ट-सी भाषा में अनुवाद करते थे, जैसी कि उस प्राध्यापक की होती है, जिसे यह निश्चय न हो कि जो बात वह कहने लगा है, वह सही है भी या नहीं।

ज़ियस की पत्नी हिरा उन अनेक निष्ठा भंगों (व्यभिचारों) के कारण

ईर्ष्यालु थी जिनके द्वारा ज़ियस ने अनेक गौण देवताओं और असाधारण मर्त्य व्यक्तियों को उत्पन्न किया था। यह विश्वास करना सरल था कि कोई बहुत वीर पुरुष या कोई लावण्यमयी स्त्री अवश्य ही देवताओं के पिता की सन्तान है। हिरा धुंध और कुहरे की देवी थी और जो काम उसे पसन्द नहीं उन्हें रोकने के लिए वह धुंध और कुहरे को भेज देती थी। वह मनुष्यों के मामलों में हस्तक्षेप करने के लिए गौण देवताओं को पृथ्वी पर भी भेजती थी। क्योंकि वह यूनानियों के पक्ष में थी, इसलिए युद्ध के दूसरे दिन उसने अपने पति को अपने साथ प्रेम-लीलाओं में व्यस्त रखा, जिससे ट्रायवासियों की सहायता न कर सके। यहाँ हमें शिकारी की अपने शिकार या प्रतिद्वन्द्वी का ध्यान बंटाने के साधन के रूप में यौन तन्मयता का उपयोग करने की वही पुरानी धारणा दिखाई पड़ती है।

ज़ियस और हिरा का पंगु पुत्र हैफायस्टौस लुहारों और बढ़इयों का देवता था और उसकी बहन ऐथीन उन सब अविशेषित शिल्पों (कौशलों), जैसे कताई और बुनाई, की देवी थी, जो स्त्रियों के काम थे। अपोलो रहस्यमय रोगों का स्वामी था और उसकी बहन आर्टेमिस शिकार की स्वामिनी थी; शिकार अब तक भी आहार का मुख्य साधन था। ऐफ्रोडाइट स्त्रियों के यौन आकर्षण की प्रतीक थी; उन्हें अपनी रशना (करधनी) उधार देकर वह इतना मोहक बना देती थी, कि कोई उनके आगे अविचलित नहीं रह सकता था। हर्मीज देवताओं का संदेशवाहक था। आरेस एक भयावह और विनाश-कर्ता दैत्य था, जो फ़िन मैककूल, गर्गन्तुआ और पौल बनियन का आदिरूप था। होमर के परवर्ती काल में आकर ही वह युद्ध का विशेष देवता बना। जिस काल के विषय में होमर ने अपनी काव्य रचना की थी, उसमें सब मनुष्यों की भाँति सब देवताओं की भी लड़ने-भिड़ने में दिलचस्पी थी।

ऐसा माना जाता था कि सभी यूनानी देवता, जिनमें वे अनेक देवता भी सम्मिलित हैं, जिनका यहाँ उल्लेख नहीं किया गया है, लोगों से सम्बन्ध रखते थे, जैसे कि युद्ध के आवेश में अपोलो हैक्टर के आगे-आगे सब प्रतिद्वन्द्वियों को परास्त करता हुआ दौड़ा था। यह माना जाता था कि प्रार्थना तथा बलियों द्वारा एक सीमा तक देवताओं पर प्रभाव डाला जा सकता है। परन्तु बहुत-सी बातें ऐसी होती थीं, जो सुनिश्चित रूप से मानवीय

हस्तक्षेप की सीमा से परे होती थीं। जैसा कि बाद के शोकान्त नाटककारों ने दिखाया, कुछ विपत्तियाँ केवल मात्र देवताओं का कार्य होती हैं और इसलिए उन्हें धैर्यपूर्वक ही ग्रहण करना चाहिए। जीवन के प्रति इस दार्शनिक दृष्टिकोण को कट्टरपन्थी इस्लाम ने पराकाष्टा तक पहुँचा दिया, जिसमें छोटे या बड़े सभी प्रपंचों की व्याख्या के लिए एक रस रूप से खुदा की मर्जी की दुहाई दी जाती है। यूनानी लोगों के, जो होमर के देवताओं में विश्वास रखते थे, विचार से मनुष्य को अपने उद्यम द्वारा अपनी महत्त्वाकाँक्षाओं में सफल होने का फिर भी कुछ अवसर था, बशर्तेकि वह इस ढंग से आचरण करे कि देवता उससे रुष्ट न हों; मानव-वैज्ञानिक भाषा में इसका अर्थ है कि यदि वह इस बात का ध्यान रखे कि वह जिस समाज में रहता है, उसके सदस्यों के संतुलन को वह उनकी साँस्कृतिक स्थिति की सहिष्णुता की सीमा से अधिक विक्षुब्ध न करे। ईमानदारी-युक्त उद्यम के प्रति इस सम्मान की भावना तथा बहुमुखी व्यावसायिक प्रतिभा का यूनानी प्रायद्वीप के निवासियों की परवर्ती सफलताओं को लाने में और हमारी (अमेरिकनों की) अपनी आधुनिक पश्चिमी सभ्यता के विकास में बहुत बड़ा हाथ रहा है।

8

लोहा और साम्राज्य

ईस्वी पूर्व की तीसरी सहस्राब्दी का आरम्भ कांस्य से हुआ था और पहली सहस्राब्दी का लोहे से। अब वह सामान्य मनुष्य, जिसका दादा कांस्य युग में भी पत्थर के औज़ारों का प्रयोग करता रहा था, एक सस्ती और तेज़ कुल्हाड़ी प्रयोग में लाने लगा था। इसके द्वारा उसने लकड़ी का कोयला बनाने के लिए जंगलों को काट डाला। इस कोयले से लुहार इस नई धातु को पिघलाते और घढ़ते थे; और ज्यों-ज्यों पेड़ लुप्त होते गए, त्यों-त्यों उजाड़पन और भूक्षरण की गति तीव्र हो गई। अब मनुष्य के अस्तबल में दो नए पशु (सवारी का बड़ा घोड़ा और ऊंट) और आ गए थे; इससे मनुष्य की यात्रा के वेग, परिमाण और अभिसीमा में बहुत अधिक वृद्धि हो गई। 26 अक्षर वाली ध्वनि-अनुसारी वर्णमाला के आविष्कार से और सैकड़ों बोझल शब्द संकेतों और अर्थ-निर्धारकों के हट जाने से पढ़ने और लिखने का एकाधिकार लिपिकों के हाथ से निकल गया और कई उपयुक्त देशों में सामान्य मनुष्य साक्षर हो गए। सिक्कों पर एक निशान की मुहर लगी रहती थी, जो राज्य की ओर से उन सिक्कों की धातु की विशुद्धता की गारंटी की सूचक होती थी। इस प्रकार के सिक्कों के प्रयोग से वाणिज्य में वृद्धि हुई।

परिवहन, संचार (संदेश प्रेषण) और विनिमय में हुए इन सुधारों की क़ीमत यह थी कि मनुष्य द्वारा पृथ्वी की अपचेय (व्यय योग्य) ऊर्जा का अधिक मात्रा में उपयोग किया जाने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि सामाजिक संस्थाओं

का आकार और उनकी जटिलता बढ़ गई; जैसे, राजा सम्राट् बन गए, छोटे राष्ट्र जातीय अल्पमत बन गए और कारीगरों ने अपनी श्रेणियों और संघों का संगठन कर लिया। बुद्धिमान लोग दासों के परिश्रम द्वारा स्वयं मेहनत करने से छुटकारा पा गए और इसके फलस्वरूप उन्होंने सारे विश्व की व्यवस्था और एकता की धारणा प्रस्तुत की, और विचारकों ने विज्ञान को धर्म से पृथक् कर दिया। यूनान में एक ऐसी सभ्यता का जन्म हुआ, जिसे कुछ लोग आज भी हमारी अपनी सभ्यता से उच्चतर समझते हैं और फिलस्तीन में एक मनुष्य को मनुष्यमात्र के भ्रातृत्व का प्रचार करने के कारण सूली (क्रौस) पर चढ़ा दिया गया। लौह युग के समाप्त होने से पहले करोड़ों व्यक्ति परमात्मा की पूजा करने लगे थे और ईसाई लोग अतलान्तक को पार करके नई दुनिया (अमेरिका) में पहुँच गए थे।

इससे पहले के कालों की तुलना में लौह युग का इतिहास काफी सुविदित है। आजकल के बहुत-से लोगों ने अपनी इच्छानुसार इस काल की प्रमुख घटनाओं की व्याख्या की है और उन लोगों के साथ और उन विश्वास परम्पराओं के साथ, जो कि लौह युग में बन गई थीं, संवेगात्मक दृष्टि से अपना ऐकात्म्य स्थापित किया है। इस पुस्तक में एक अलग ही व्याख्या प्रस्तुत की गई है। मैंने इससे पहले के इतिहास की व्याख्या इस रूप में की है कि वह सारा इतिहास ऊर्जा को सामाजिक संरचना में परिवर्तित करने का इतिहास रहा है और मैं लौह युग की मुख्य-मुख्य घटनाओं की व्याख्या भी इसी दृष्टि से करूँगा। यह लौह युग इससे पहले के युगों की अपेक्षा अधिक पेचीदा रहा है और इस काल के प्रलेख भी कहीं अधिक प्राप्त होते हैं।

लोहे की कारीगरी भी उसी सामान्य क्षेत्र में शुरू हुई थी, जिसमें ताम्र और कांस्य की धात्विकी का आरम्भ हुआ था। अनातोलिया की अधित्यकाएँ, ट्रांस काकेशिया और उत्तर पूर्वी ईरान इस उद्योग के जन्म के लिए विशेष रूप से उपयुक्त थे, क्योंकि ये प्रदेश कच्ची धातु और कठोर लकड़ी, दोनों की दृष्टि से समृद्ध थे (कठोर लकड़ी कोयला बनाने के लिए उपयुक्त होती है) और इस कारण भी, कि अधित्यकाओं के निवासियों में खान खोदने की और कुशलतापूर्ण धात्विकी की परम्परा विद्यमान थी। यह उद्योग ताम्र और कांस्य के बाद शुरू हुआ, क्योंकि लोहे के लिए एक अलग प्रकार की भट्टी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

की आवश्यकता होती है और लोहा इससे पहले गढ़ी जाने वाली अलौह धातुओं की अपेक्षा गढ़ने इत्यादि की दृष्टि से कहीं दुष्कर सामग्री है। पृथ्वी तल का चार प्रतिशत भाग लोहा है। यह एक सस्ती धातु है, जो मामूली किसान, गड़रिये और बढ़ई के लिए सुलभ है। इस दृष्टि से यह अपने काल में उसी प्रकार ग़रीब लोगों के उपयोग की वस्तु बन गया था, जैसे हमारे अपने समय में फोर्ड का 'टी' मौडल बना हुआ है। उस समय छुटभइयों के लिए भी कुछ गुँजाइश हो गई थी। सब प्रकार के उत्पादन में वृद्धि हुई और व्यापार खूब बढ़ा, वह भी मुख्य रूप से सैनिक विलास-सामग्रियों और निर्मित वस्तुओं में नहीं, अपितु अनाज और खालों जैसी सर्वजनोपयोगी वस्तुओं में, जिन्हें कि हर कोई खा सकता था या उपयोग में ला सकता था। मनुष्य के वाड़े में पालतू मुर्गी और आ मिली और भोजन सूची में अंडा और बढ़ गया।

लौह युग के आरम्भ में घोड़ों की नस्ल में भी सुधार हुआ और लोगों ने रथों में बैठने के बजाय घोड़े पर सवारी करना सीखा। घुड़सवार रथों की अपेक्षा कहीं अधिक तेज़ी से आ-जा सकते थे और वे ऐसे किसी भी भूभाग में यात्रा कर सकते थे, जहाँ कि घोड़े के चरने के लिए घास और पीने के लिए पानी हो। जहाँ चराई और पानी की कमी थी, या उसका बिलकुल अभाव था, वहाँ अन्य लोग दूर-दूर तक की यात्राएँ एक बिलकुल नई सवारी, ऊंट, पर बैठकर कर सकते थे। ऊंट को पालतू पशु बनाने का आरम्भ किस प्रदेश में हुआ, यह अभी तक रहस्य ही बना हुआ है। लौह युग में डाक-सड़क प्रणाली का आविष्कार हुआ। कोई भी ईरानी सम्राट् पर्वतों और मैदानों के पार, और मरुस्थलों के किनारे-किनारे मिश्र या एशिया माइनर जैसे दूरस्थ प्रदेशों में रणभूमि के पीछे स्थित अपने सिंहासन पर से अपनी राजधानी तक पत्र भेज सकता था। वह पत्र सरपट दौड़ते हुए घोड़े की चाल से दिन-रात निरन्तर यात्रा करता था। एक पड़ाव पर पहुँचने के बाद घुड़सवार घोड़ा बदल लेता और दूसरे घोड़े पर बैठकर अगले पड़ाव की ओर चल देता। जहाँ एक घुड़सवार थक जाता, वहाँ वह उस पत्र को दूसरे घुड़सवार को दे देता। इस प्रकार घोड़े और घुड़सवार बदलते रहते, किन्तु पत्र निरन्तर आगे चलता जाता। ऊंटों पर बैठे व्यापारी बलोचिस्तान, अरब और सहारा के बियाबान प्रदेशों को पार करके भारत और अफ्रीका के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विभिन्न भागों में व्यापार करने के लिए पहुँच सकते थे । अब जहाज़ निर्माता पहले की अपेक्षा कहीं अधिक जल्दी, कहीं अधिक जहाज़ कहीं अधिक सस्ते तैयार कर सकते थे । इसलिए समुद्र द्वारा व्यापार में वृद्धि हुई, जिससे पश्चिमी भूमध्य प्रदेश भी तत्कालीन सभ्यता की परिधि में आ गया ।

दो अन्य आविष्कारों के कारण भी व्यापार में वृद्धि हुई । ये आविष्कार थे— वर्णमाला और मुद्रा । पूर्वी भूमध्य सागर में फीनीशिया-वासियों ने मिश्री पुजारियों की लिपि के मूल व्यंजनों को ऐसी वर्णमाला में बदल डाला जो सामी भाषाओं के लिए उपयुक्त थी और ईरानी लोगों ने इसी प्रकार कीलाकृति अक्षरों को अपनी आवश्यकताओं के अनुसार ढाल लिया । एशिया माइनर में, जो कि प्राचीन संसार का चाँदी का मुख्य स्रोत था, लीडियावासियों ने मुद्रा का आविष्कार किया । अब कोई भी व्यापारी वस्तुओं का मूल्य चाँदी या सोने के सिक्कों के रूप में चुका सकता था और उन वस्तुओं को वैसे ही सिक्कों के बदले बेच सकता था । जब तक सिक्के अक्षत और बिना कटे हों तब तक बहुमूल्य धातुओं को तोल-तोल कर देने की आवश्यकता अब न रही । फीनीशियाई वर्णमाला का उपयोग अन्य भाषाओं के लिए भी किया जा सकता था, विशेष रूप से तब, जबकि यूनानियों ने उसमें स्वर भी जोड़ दिए थे । अब पढ़ना-लिखना पहले से सरल हो गया था और साक्षरता पहले से अधिक हो गई थी । अब स्वतन्त्र नागरिक किसी ठीकरे पर अपनी पसन्द के उम्मीदवार का नाम लिखकर उसे किसी पद पर नियुक्त करने या उसके निर्वासन के लिए मत (वोट) दे सकता था ।

स्वतन्त्र मतदाता नागरिकों ने और भी आविष्कार किये, जैसे कि घूर्णक (घूमने वाली) आटा-चक्की और पेच, जिनके कारण आटा, शराब और तेल जैसी सर्वजनोपयोगी वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि हुई । एक दंड से दूसरे दंड तक और एक दिशा से दूसरी दिशा में शक्ति का प्रेषक एक तीसरे आविष्कार द्वारा संभव हुआ : यह आविष्कार था—दाँतेदार पहिया या गियर । इस आविष्कार से चक्की चलाने की तकनीक में एक और सुधार के रूप में पानी की शक्ति का प्रयोग शुरू हो गया । यूनानियों ने जिन्होंने इन आविष्कारों को किया था, भाप वा जैट इंजन और टैक्सियों के मीटर भी बनाए थे । परन्तु ये उपकरण सारे लौह युग में खिलौने मात्र बने रहे, क्योंकि उनके उपयोग

के लिए अभीष्ट सामग्रियाँ और दशाएँ उस समय तक उपलब्ध नहीं थीं। ये आविष्कार अपने आप में जितने महत्त्वपूर्ण थे, उसके भी अधिक महत्त्वपूर्ण वह प्रगति थी, जो यूनानियों ने उस सैद्धान्तिक विज्ञान में की थी, जिसके ऊपर हमारी अपनी तकनीकी सभ्यता आधारित है। यूनानियों ने ही इतिहास-लेखन की तकनीक का भी आविष्कार किया था। इस अध्याय में जिस काल के विषय में लिखा जा रहा है, उसमें से अधिकाँश के विषय में पाठक को जो काफ़ी कुछ जानकारी है, उसका श्रेय यूनानियों को ही है। इस अध्याय में मैं विशेष मानव-वैज्ञानिक या पुरातत्वीय ज्ञान के पर्दे की आड़ में अपनी तथ्यों या निर्णय की ग़लतियों को नहीं छिपा सकता और न मुझे उन सब बातों का ही विस्तार से वर्णन करने की आवश्यकता हैं, जो कि सब लोगों को सामान्यतया पहले से ही मालूम हैं।

उदाहरण के लिए, लोगों को आमतौर से पता है कि लौह युग एक साम्राज्य युग था। काँस्य युग की अन्तिम शताब्दियों में मिश्रवासियों का विस्तार होने के पश्चात् एशिया माइनर में हिताइत लोग, जो लोहे के घर (प्राप्ति स्थान) में रहते थे, शक्तिशाली हो उठे। उनके बाद एक के बाद एक साम्राज्य आता गया। पहले असीरियावासी आये, उसके बाद ईरानी, उसके बाद सिकन्दर के अधीन यूनानी लोग, उसके बाद रोमन और बाइजैण्टाइन, अरब, मंगोल और तुर्क लोग आये।

सभ्यता के इतिहास की दृष्टि से इसका अर्थ क्या है? संरचनात्मक दृष्टि से कहा जाय, तो इसका अर्थ संस्थाओं की जटिलता में वृद्धि है। कारीगर लोगों की संख्या बढ़ते-बढ़ते एक ऐसी स्थिति आ जाती है कि वे राजाओं और पुरोहितों के विनीत सेवक रहना बन्द कर देते हैं और मुख्यतया सामान्य लोगों के लिए काम करने लगते हैं। उनके कार्य की उत्कृष्टता के मानक और उनके द्वारा निर्मित वस्तुओं की अधिकतम क़ीमतें राजाओं के ओवरसियरों द्वारा नहीं, अपितु उनके अपने श्रेणी (गिल्ड)—नेताओं द्वारा नियत की जाती हैं, जिन्हें कि उन्होंने स्वयं चुना होता है। इस प्रकार लौह युग में एक मध्यम वर्ग उठ खड़ा हुआ, जो इतना काफ़ी बड़ा था कि स्वयं अपनी संस्थाओं को जन्म दे सके। उसी समय उन शस्त्रों के द्वारा, जिन्हें कि कारीगर लोग बनाते थे, राजाओं को उन बड़ी-बड़ी सेनाओं को शस्त्र-सज्जित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर पाने की सुविधा हो गई जिन्हें लेकर वे घोड़ों पर चढ़कर, समुद्री मार्ग द्वारा या स्थल पर प्रयाण करते हुई दूर-दूर तक के देशों को विजय करने जा सकते थे। राजनीतिक दृष्टि से एक और नया विचार उत्पन्न हुआ : विजित लोगों की हत्या करने के बजाय उनके ऊपर शासन किया जा सकता है। राज्य के अन्दर अनेक प्रकार के लोग सम्मिलित होने लगे, जिनमें से सबको साम्राज्य की सीमाओं के अन्दर रहने, काम करने और घूम-फिर सकने का समान या यथेष्ठ अधिकार होता था। कुछ लोग स्थानीय कौशलों में विशेषता प्राप्त करने लगे और इन विशेषज्ञों की बस्तियाँ सारे राज्य क्षेत्र में शहरों और कस्बों में बन गईं।

जहाँ राजनीतिक संस्था सार्वभौम बन गई, वहाँ परमात्मा की धारणा शुरू-शुरू में स्थानीय ही रही। यह पहले पहल प्रदेशों तक सीमित रही और उसके बाद एक विशेष प्रकार के लोगों तक, चाहे वे कहीं भी क्यों न हों, सीमित हो गई। यूनानी दर्शन और हिब्रू पैगम्बरों के साथ-साथ एक विश्वजनीन अच्छाई की, सारी मानव-जाति के लिए समतुलन की एक व्यवस्था की धारणा जड़ पकड़ गई, और वह तब तक बढ़ती गई, जब तककि उसकी चरम निष्पति ईसा के जीवन और सन्देश में पहुँच कर न हो गई। ईसायत को पहले पहल अस्वीकार किया गया ; उसके बाद उसे राज्य का ही एक अंग बना लिया गया और तब वह फैली। किन्तु इस बीच में अरब में इस्लाम का उदय हुआ। यह एक ऐसा धर्म था, जो कहीं अधिक सुबोध था और एक विशिष्ट काल और स्थान की आवश्यकताओं के लिए तात्कालिक दृष्टि से कहीं अधिक उपयुक्त था। पुराने काँस्य युग की सभ्यता के केन्द्रों में इसके तेज़ी से प्रसार के कारण पश्चिमी जगत् एक बार फिर, और बहुत स्पष्ट रूप से अपने उन दो मूल भागों में विभक्त हो गया, जिनसे मिलकर वह बना था ये दो भाग थे—पर्याप्त जल से युक्त उत्तर तथा पश्चिम का भाग, और बंज़र पूर्व तथा दक्षिण का भाग। साथ ही इस्लाम ने भारत और चीन के साथ भी सम्पर्क स्थापित कर दिया। इन स्थानों में हुए कुछ आविष्कारों के फलस्वरूप, जिन्हें ईसाइयों ने अपना लिया और सुधारा, इतिहास के अगले युग का प्रारम्भ हुआ, जिसमें यूरोप का प्रभुत्व रहा।

लौह युग का तकनीक विज्ञान

लौह युग की अवधि में सभ्यता का केन्द्र हटकर पश्चिम की ओर क्यों पहुँच गया, इसका एक प्रधान कारण यह था कि यूरोप कच्ची धातु और वनों, दोनों की दृष्टि से बहुत समृद्ध था; और वनों का अर्थ था—लकड़ी का कोयला। परन्तु 1400 ईस्वी पूर्व के आस-पास आर्मीनिया के पर्वतीय प्रदेश और जार्जिया और अज़रबेजान के पड़ौस के भाग (जिसमें वे अंश भी सम्मिलित हैं, जो अब रूसी और ईरानी प्रान्त हैं) कच्ची धातु और ईंधन दोनों की दृष्टि से इतने समृद्ध थे कि वे आविष्कार का और उस आरम्भिक विश्व-उत्पादन का केन्द्र बन सकते थे, जिसे अब भारी उद्योग कहा जाने लगा है। यह उत्पादन ताम्र और उससे बनने वाली मिश्र धातुओं के सम्बन्ध में अनुभव की एक पूर्व अवधि के बिना शुरू नहीं हो सकता था। ताम्र और उसकी मिश्र धातुएँ ठीक इसी प्रदेश में बड़ी मात्रा में तैयार की जाती रही थीं। सामग्री उपलब्ध थी और इसी प्रकार कुशल तकनीकी कारीगर भी उपलब्ध थे, जो एक क़दम आगे बढ़ने में समर्थ थे।

आरम्भिक धात्विकी विज्ञान के फौर्बेस और कौघलन[1] जैसे विशेषज्ञों ने धातु की कारीगरी में चार क्रमशः बढ़ते हुए सोपान माने हैं: धातु के भारी डलों का हथौड़ों के रूप में उपयोग; स्थानीय धातुओं को हल्की आँच में तपा कर या तपाये बिना उन्हें हथौड़े से पीटना, काटना और अभीष्ट आकृति में गढ़ना; कच्ची धातु की अवस्था, जिसमें कि लुहारों का ध्यान जिस प्रमुख तत्व पर रहता है, वह स्वयं धातु की बनावट ही होती है; और लौह अवस्था जिसमें कि धातु की बनावट की अपेक्षा अभिसंस्कार करना कारीगर के कौशल और व्यावहारिक ज्ञान का प्रधान क्षेत्र होता है। हथौड़े से पीटना, तपाना, बुझाना और तापानुशीतन लुहार की वे तकनीकें हैं, जिनके द्वारा वह नरम धातु के टुकड़े को एक ऐसी तलवार के रूप में बदल सकता है, जो एक ही वार में मनुष्य का सिर धड़ से अलग कर सकती है।

---

[1] आर० जे० फौर्बेस, 'मैटलर्जी इन ऐण्टीक्विटी,' ई० जे० ब्रिल, लीडन, 1950; ऐच० ऐच० कौघलन, 'नोट्स ऑन दि प्रिहिस्टोरिक मेटलर्जी ऑफ़ कौपर एण्ड ब्रोंज इन दि ओल्ड वर्ल्ड', पिट रिवर्स म्यूजियम, आक्सफोर्ड, 1951।

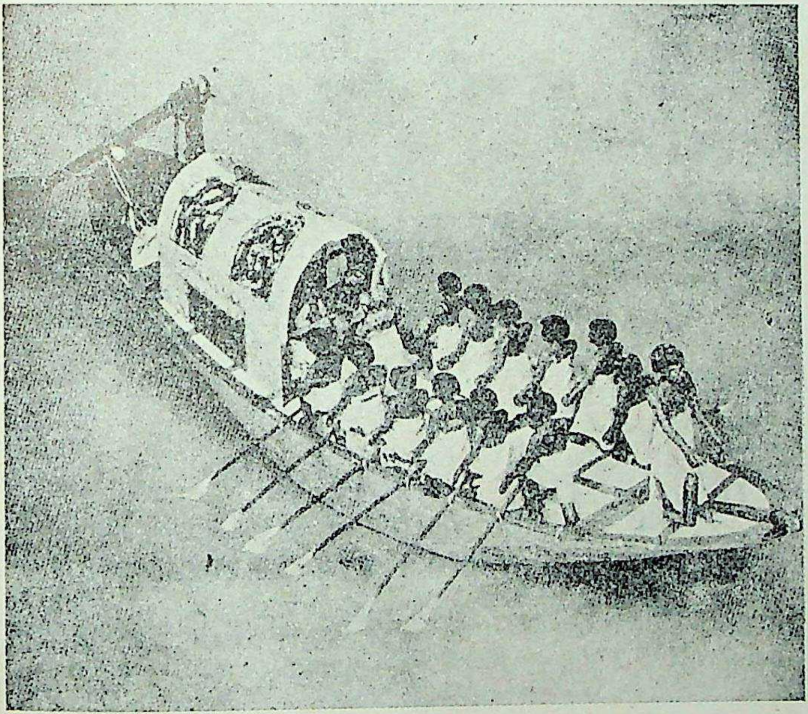

प्राचीन काल के मिश्र की नदी में चलने वाली नाव। एक नमूने का चित्र। आरम्भिक कांस्य युगीन सभ्यताओं में नील नदी, तिगरिस यूफ्रेकटीज नदियों और सिन्धु घाटी में अन्तर्देशीय जलमार्गों पर यात्रा में निर्णायक तत्व थीं।

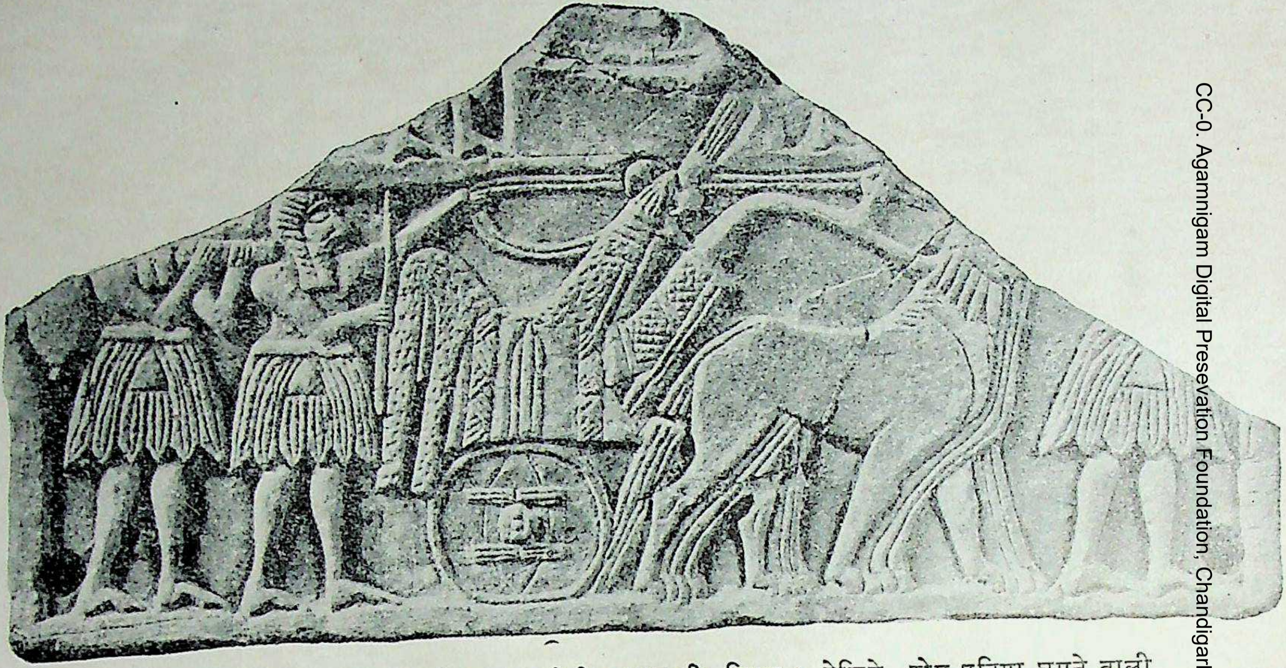

प्राचीन सुमेरियाई रथ। उर से प्राप्त चूने के पत्थर की शिला। देखिये, ठोस पहिया घूमने वाली धुरी के साथ ठुका हुआ है। सुमेरियाई लोगों के सिवाय कांस्य युग के अन्य लोगों को रथों और घोड़ों के लिए 1700 ईस्वी पूर्व का काल आने तक प्रतीक्षा करनी पड़ी और तब इन दो वस्तुओं ने युद्ध कला में क्रान्ति ही कर दी।

प्लेट 18

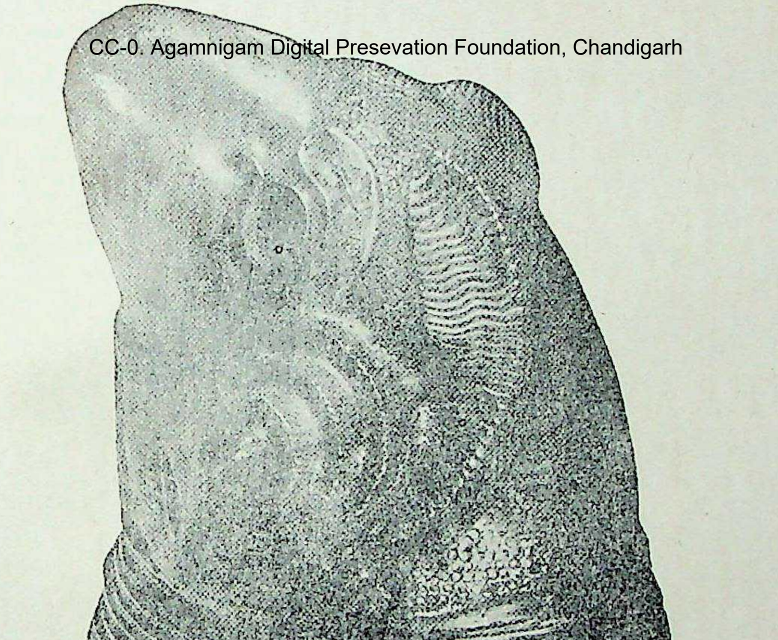

चांदी का पान पात्र । इसे एक ही घूंट में खाली करना होता है । ईरान में कुर्दिस्तान में ज़िविये कोष (ट्रेज़र) का एक पात्र, जिसका काल 700 ई० पू० है । यह मेढ़ा माउफ्लोन किस्म का है, जिसे लोह युग में पालतू बनाया गया था ।

प्लेट 19

स्वर्ग की ईरानी कल्पना। सम्राट् खुसरो द्वितीय एक शिकार पर जा रहा है। ईरान में ताक ए बोस्तान का एक अध्युच्चित्र।

प्लेट 20

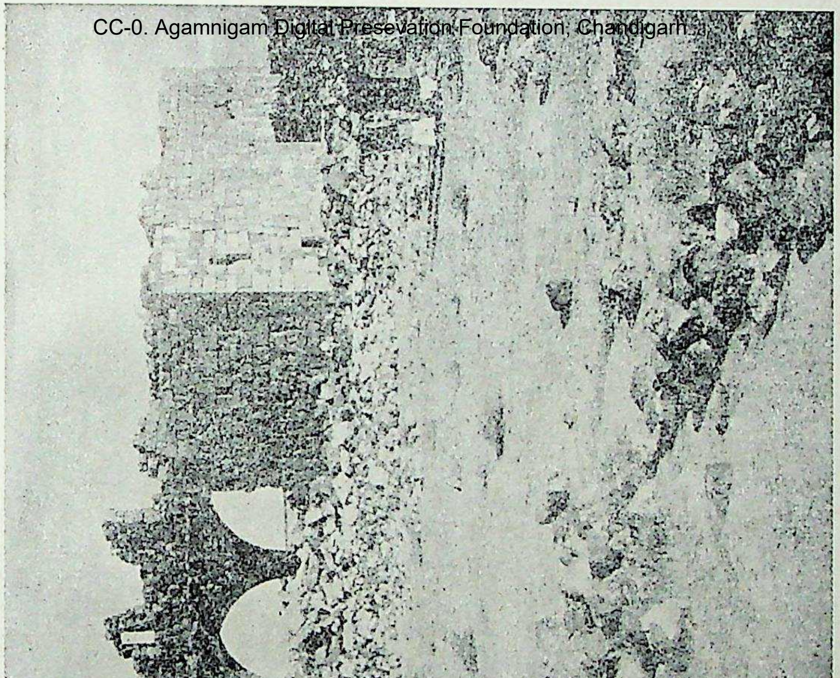

साम्राज्य की बाहरी चौकी। जोर्डन में मजमार में एक बाइज़ेण्टाइन दुर्ग, जो अरब मरुस्थल के एक छोर पर एक जल कुंड की रक्षा करने के लिए बनाया गया था।

प्लेट 21

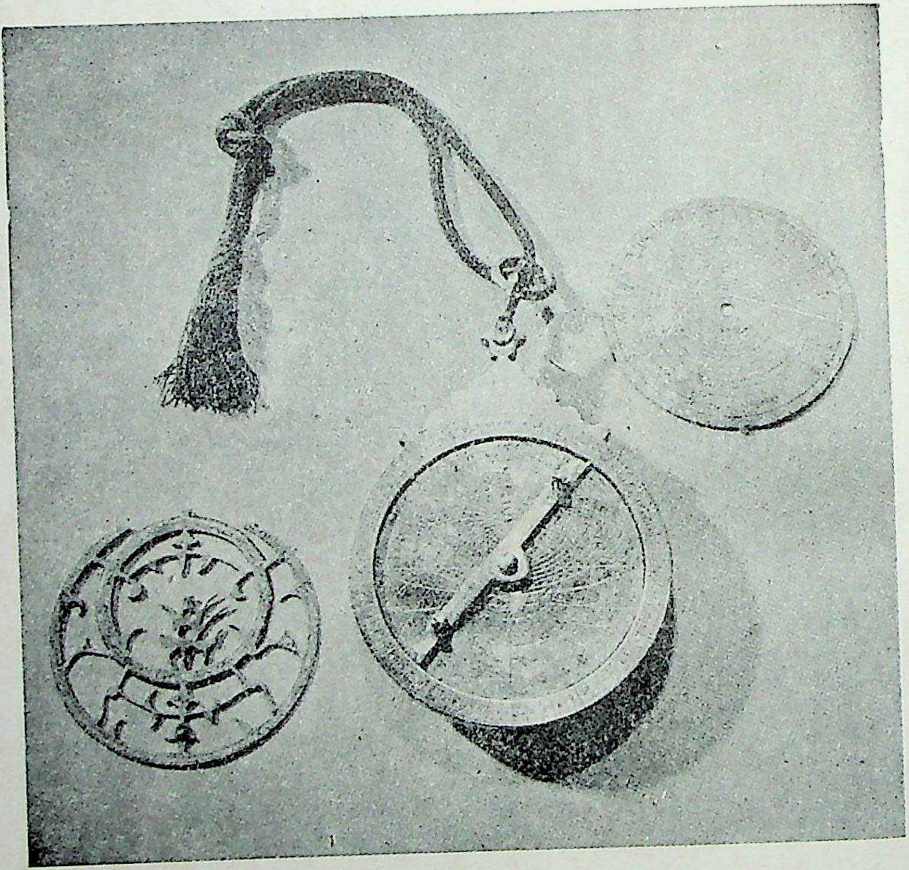

अरब लोगों का ऐस्ट्रोलेब । इसकी घुमाई जा सकने वाली सुई के सिरों पर बने हुए दो छेदों में से पहले एक तारे को और उसके बाद किसी दूसरे तारे को देखा जाता है, और इस प्रकार उनका कोण नापा जाता है । हटाई और लगाई जा सकने वाली चकत्तियों में से दो यहाँ दिखाई गई हैं ।

प्लेट 22

CC-0. Agamnigam Digital Preseyation Foundation, Chandigarh

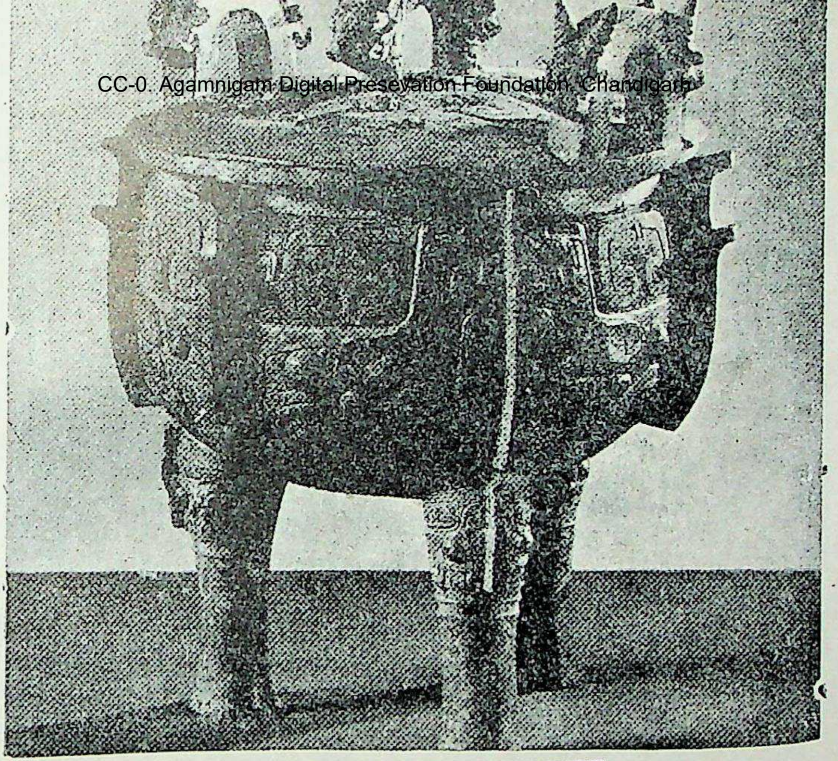

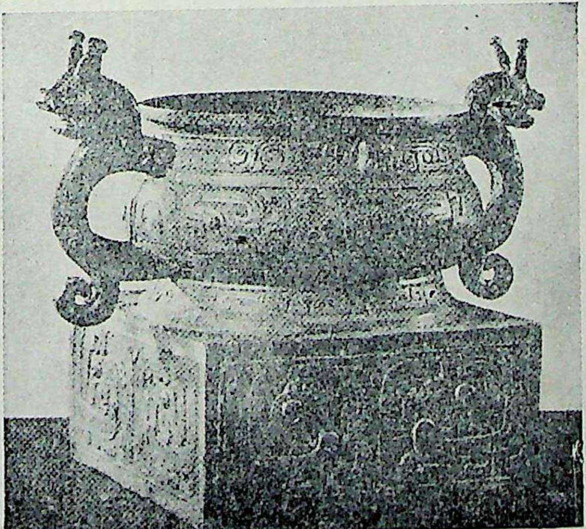

चीन के कांस्य युगीन समारोह पात्र । शांग राजवंश काल की कांसे की ढलाई साधारणतया संसार भर में सर्वोत्तम मानी जाती है ।

प्लेट 23

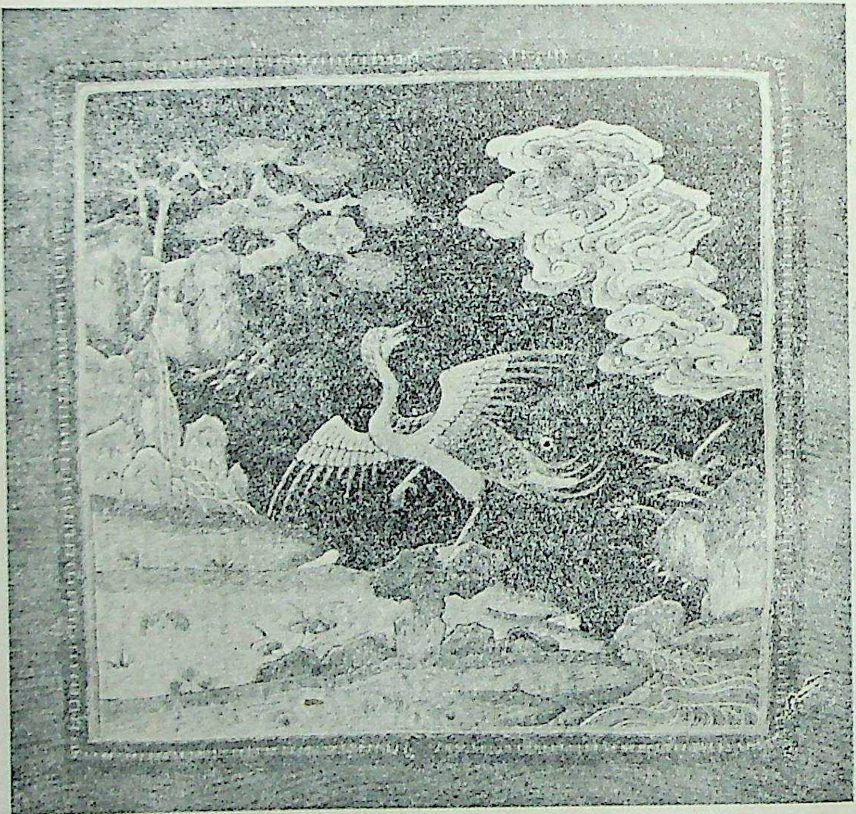

चीनी रेशमी चौकोर वस्त्र। इसे अठारहवीं शताब्दी के पिछले भाग में चौथे पदक्रम (ग्रेड) का एक असैनिक सरकारी अधिकारी धारण किया करता था।

प्लेट 24

ताम्र और स्वर्ण की भांति लोहा भी प्राकृत धातु के रूप में पाया जाता है और धातु युग के आरम्भ में इसे कूटकर और घिसकर उपयोग योग्य बना लिया जाता था। संसार का अधिकांश प्राकृत लोहा उल्का-लोह है और उसमें पाँच से छब्बीस प्रतिशत तक निकल और तीन प्रतिशत से पाँच प्रतिशत तक कोबाल्ट मिला रहता है। इन अशुद्धताओं के कारण यह लोहा बहुत कठोर होता है और इसमें जंग भी बहुत ही कम लगता है। इसलिए मिश्र और मैसोपोटामिया में स्थित काँस्य युग के पुरातत्वीय स्थलों में पाई गई लोहे की कुछ थोड़ी-सी वस्तुएँ उन्हीं स्थानों में मिलीं बाद के लौह युग की वस्तुओं से, जो कि अपेक्षाकृत अधिक विशुद्ध धातु की बनी हैं, अधिक अच्छी परिरक्षित दशा में हैं। इनमें से पिछली, अर्थात् लौह युग की वस्तुओं में इतनी बुरी तरह जंग लगा हुआ है कि वे आसानी से पहचानी ही नहीं जातीं। काँस्य युग के आरम्भिक भाग का उल्का-लोह वस्तुतः सारे संसार में सन् 1890 से पहले किसी भी जगह तैयार किये गए लोहे की अपेक्षा सचमुच ही बहुत अच्छा था। ऐकिलिस ने पैट्रोक्लस की अन्त्येष्टि के अवसर पर हुए खेलों में पुरस्कार के रूप में जो लोहा दिया था, वह संभाव्यतः इसी धातु का एक डला था। (इलियड, खंड 23)

लोहे की कच्ची धातु अनेक रूपों में प्राप्त होती है, जिनमें से कुछ तो आसानी से पहचाने जाते हैं, जबकि कुछ अन्य रूप ऐसे हैं, जिनमें कि अनुभवी अन्वेषक लोग भी धोखा खा जाते हैं। इस कच्ची धातु के सबसे अधिक आसानी से पहचाने जाने वाले रूपों में एक 'हैमाटाइट' है। इसका यह नाम इसके खून जैसे लाल रंग के कारण पड़ा है। इस हैमाटाइट का प्रयोग आदिमकालीन शिकारी लोग सारे संसार में रंग के रूप में करते थे। इसे पीसकर और चर्बी में मिलाकर वे रंगीन पैन्सिलें बनाईं गई थीं, जिनके द्वारा फ्रांस में क्रोमैगनन मनुष्यों ने गुफा-चित्र बनाए थे। आजकल आस्ट्रेलिया के आदिवासी इसे अपने शरीर पर पोत लेते है, औपनिवेशिक काल में अमेरिकी मूलवासी भी ऐसा ही किया करते थे और इसी के कारण उनका नाम 'रैड इण्डियन' पड़ गया था। यही हैमाटाइट नव-पाषाणिक काल के मिट्टी के बर्तनों की ऊपरी सतह पर पोता जाता था, जिससे एक रंगीन पट्टी बन जाती थी (यह सतह के ऊपर की एक परत होती थी, जिसे आग में तपाने से पहले बढ़िया चिकनी मिट्टी से पोत

कर बनाया जाता था) ; यह वही लाल रंग है, जो लाल के ऊपर काली चित्रकारी वाले मिट्टी के बर्तनों पर प्राप्त होता है और जो निकटपूर्व के पुरातत्ववेत्ताओं को इस दृष्टि से बहुत प्रिय है कि इसके द्वारा वे सांस्कृतिक हलचलों का पता पा सकते हैं।

ताम्र धात्विकी दो कक्ष वाले चूल्हे में पाव रोटियाँ पकाने और मिट्टी के बर्तनों को तपाने की प्रक्रिया का ही एक स्वाभाविक विस्तार थी। नीचे लकड़ी के कोयले की आग दहकती रहती थी, जिसे धौंकनी से हवा देकर दहकाया जाता था ; उसके ऊपर एक ऐसे बन्द कक्ष में, जिसमें कि धुआँ पहुँचकर उन्हें खराब न कर सके, मिट्टी के बर्तन या पाव रोटियाँ रखी रहती थीं। पाव रोटियों या मिट्टी के बर्तनों की जगह ताम्र की कच्ची धातु रख दीजिये और वह पिघलने लगेगी। पिघले हुए ताम्र को एक घड़िया में रखकर ऐसी ही आग के ऊपर रख दीजिये, तो वह बिलकुल ही द्रवित हो (पिघल) जाता है और ढाले जाने के लिए तैयार हो जाता है। लोहे को इस प्रकार काम में नहीं लाया जा सकता। लोहे को 600 डिग्री से 700 डिग्री शतांश तक के तापमान पर कच्ची धातु में से पिघाला जा सकता है, किन्तु लोहे का पृष्ठ निक्षेप (ब्लूम ; कच्ची धातु से पिघलकर टपकने वाले लोहे को पृष्ठ निक्षेप कहा जाता है) एक गन्दा-सा दिखाई पड़ने वाला पदार्थ होता है और वह अपने ही मैल से खुद मैला हो जाता है। इसे ढालने के लिए दुबारा द्रवित नहीं किया जा सकता, क्योंकि इसका गलनांक (द्रवणांक) 1530 डिग्री शतांश होता है। यह तापमान इतना ऊँचा है कि इसे कांस्य युग की भट्टियों में उत्पन्न नहीं किया जा सकता था। यदि किसी प्रकार यों ही संयोग से इतना तापमान उत्पन्न भी हो जाय और लोहे को ढाला भी जा सके, तो उसका लाभ क्या है ? यह इतना भंगुर होता है कि इसका उपयोग औज़ार या शस्त्र के रूप में नहीं किया जा सकता। लोहे के पृष्ठ निक्षेप (ब्लूम) को सुधारकर उपयोग योग्य बनाने, तपाने और फिर तपाने, कूटने और फिर कूटने के लिए, जिससे उसमें से मैल को निकाला जा सके शक्ति, धैर्य और कौशल की आवश्यकता होती है। आरम्भिक लुहार लोग ठीक यही काम करते थे और उनमें ये गुण होते थे। अन्त में उन्होंने यह खोज निकाला कि लोहे को एक विशेष एक कक्ष वाली लोहा तपाने की भट्ठी में कहीं अधिक सरलता से पिघाला जा सकता है। इस

भट्ठी में कच्ची धातु सीधी आग के ऊपर कोयलों के साथ ही साथ रख दी जाती है। उन्होंने यह भी पता चला लिया कि यदि पिसा हुआ चूने का पत्थर इस मिश्रण के साथ रख दिया जाय तो वह पिघल जाता है और उस सिलिका के साथ मिलकर एक हो जाता है, जिससे कि लोहे का मैल बना होता है और इस प्रकार वह मैल को लोहे से अलग खींच लेता है।

एक बार जब इन कौशलों को सीख लिया गया, तब लोहे को 700 डिग्री शतांश से भी कम तापमान द्वारा प्राप्त कर पाना सम्भव हो गया। 700 डिग्री शतांश का तापमान उत्पन्न करना ताम्र और कांस्य के लिए आवश्यक ऊँचे तापमानों को उत्पन्न करने की अपेक्षा कहीं अधिक सरल था। एक और खोज यह थी कि यदि लोहे को एक भट्टी में 1170 शतांश के तापमान पर लकड़ी के कोयले के सम्पर्क में रखा जाय और उसके बाद उसे हटाकर हथौड़े से पीटा जाय और फिर पानी में बुझा दिया जाय, उसके बाद फिर लकड़ी के कोयले पर रखकर तपाया जाय, हथौड़े से पीटा जाय, और फिर पानी में बुझाया जाय, तो इस प्रकार लुहार इस्पात की एक धारा तैयार कर सकता है। लकड़ी का कोयला और लौहा मिलकर एक भंगुर, स्फटिक जैसी संरचना तैयार कर देते हैं। यदि धातु को धीरे-धीरे ठंडा किया जाय, तो यह संरचना समाप्त हो जाती है। पानी में बुझाने से तापमान इतनी तेजी से घटता है कि यह संरचना बची रह जाती है। इस प्रकार बार-बार गढ़ाई द्वारा लुहार छेनी, कुल्हाड़ी या तलवार पर एक ऐसी कठोर धार बना सकता है, जिसे बनाया भी जा सकता है।

यह बहुत कठोर काम है। यह संकटास्पद कार्य भी है; चिनगारियाँ निकलकर इधर-उधर उड़ती हैं; तपी हुई धातु किसी के पाँव पर गिर सकती है और हथौड़े का लोहे वाला भाग लकड़ी वाले भाग से उचटकर किसी को लग सकता है। हमारी (अमेरिकनों की) परम्परा में, जिसे लोंगफैलो ने यशस्वी बना दिया है, "लुहार एक बलिष्ठ पुरुष होता है" वह समाज का एक प्रतिष्ठित नागरिक होता है; उसमें दम और शक्ति होती है; और उसकी दुकान अन्य प्रतिष्ठित नागरिकों के परस्पर मिलने का स्थान होती है। फिलाडल्फिया की उपनगरीय दूरभाष (टेलीफोन) निदेशिका में 2353 परिवार ऐसे दिये गए हैं, जिनके नाम स्मिथ (लुहार) हैं। इसके बाद दूसरे नम्बर

पर सबसे अधिक सामान्य व्यावसायिक नाम मिलर (चक्की वाला) है। इस नाम के 1364 परिवार उस निदेशिका में हैं। अन्य नाम जैसे टेलर (दर्जी), कूपर (ताम्रकार) चेंडलर और इसी प्रकार के अन्य नाम संख्या में अपेक्षाकृत कम हैं। स्मिथ (लुहार) लोग सच्चे और भरोसे के व्यक्ति होते हैं, जो प्रत्येक व्यवसाय और प्रत्येक सामाजिक स्तर में पाये जाते हैं। पुरानी पश्चिमी यूरोपियन सभ्यता में, जहाँ से हम (अमेरिकन) लोग आये हैं, उनके पूर्वजों का कार्य एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य था, जिसे समुचित सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था।

परन्तु मध्य पूर्व के विषय में यह बात सत्य नहीं है। वहाँ लुहारों को निश्चित रूप से निम्नतर सामाजिक वर्ग में गिना जाता है। यह बात मुझे तब बहुत ही स्पष्ट रूप से पता चली, जब मैं एक बार अपने एक ईरानी मित्र से बातचीत कर रहा था। यह ईरानी मित्र अमेरिका के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए सदा बहुत उत्सुक रहा करता था। मैंने उसे यह तथ्य

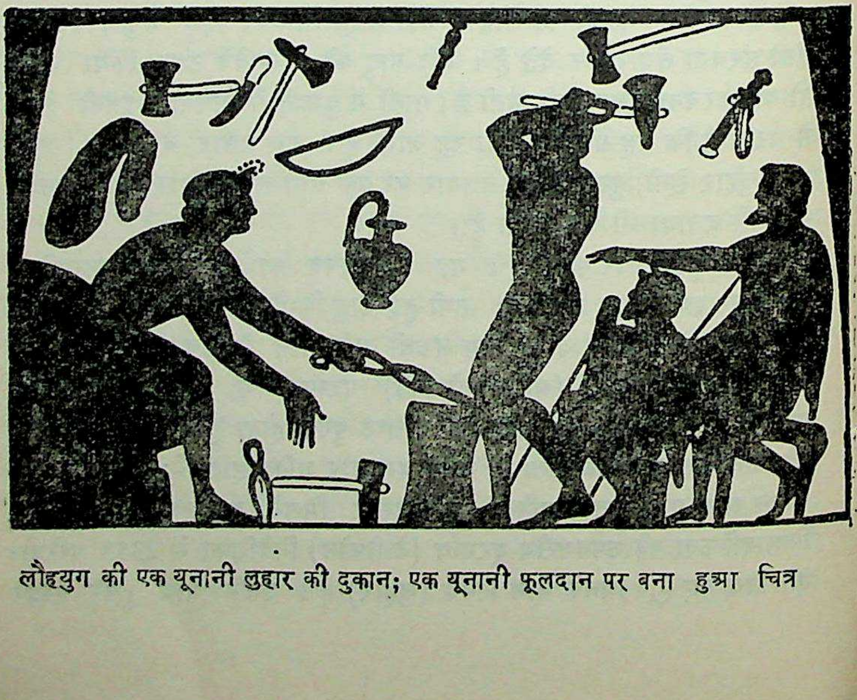

लौहयुग की एक यूनानी लुहार की दुकान; एक यूनानी फूलदान पर बना हुआ चित्र

बतलाया कि मेरे पड़दादा जौन कून, जो अपने मूल निवास-स्थान कार्नवाल से सन् 1830 में अमेरिका चले गए थे, लुहार थे। मेरे उस मित्र ने लजाते हुए तुरन्त कहा : "मैं किसी को यह बताऊँगा नहीं।"

मध्य पूर्व में लुहार लोग किसी घटिया जाति या धर्म वाले लोग ही अधिक होते हैं। मुसलमान लोगों का उन लोगों के प्रति, जो उन्हें सबसे अधिक आवश्यक औज़ार-सामग्री प्रदान करते हैं, ऐसा पक्षपात क्यों है, इसकी व्याख्या कर पाना सरल नहीं है और अनेक लेखकों ने इस विषय में अनेक सिद्धान्त प्रस्तुत किये हैं, जो अधिकाँशतः ऐतिहासिक ढंग के हैं। ये सिद्धान्त दो श्रेणियों में आते हैं : एक तो यह कि लोहे का प्रयोग उन व्यक्तियों द्वारा प्रारम्भ किया गया था, जिनके साथ वहाँ भेद-भाव बरता जाता था और दूसरे यह, कि जब लोहे का प्रयोग शुरू हुआ, उस समय काँसे का काम करने वाले कारीगर इतनी दृढ़ता से अपनी जड़ें जमाये हुए थे कि लुहारों के प्रति उनकी ईर्ष्या इस प्रतिक्रिया के रूप में प्रकट हुई कि लुहारों को हीन समझा जाने लगा। इन दोनों सिद्धान्तों में से किसी में भी जान नहीं है। एक कहीं अधिक सरल व्याख्या यह है कि यूरोप में लोहा और कोयला प्रभूत मात्रा में पाया जाता हैं और इसलिए वहाँ लोहा सरलता से स्थानीय तौर पर मिल सकता है। मध्यपूर्व में वे दोनों ही वस्तुएँ बहुत दुर्लभ हैं और लोहे का आयात उन अन्य देशों से करना पड़ता है; जहाँ यह अधिक मात्रा में होता है। क्योंकि लोहे का आयात अवश्य करना ही होगा, इसलिए जो लोग इसे एक स्थान से ढोकर दूसरे स्थान तक ले जाएँ या जो इसको घढ़कर औज़ार और शस्त्र बनाएँ, उनकी इस दृष्टि से पूरी सुरक्षा होनी चाहिए कि कोई उनके साथ लूटपाट न करे, और यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सामग्री अपने अभीष्ट स्थान तक पहुँच सके। इस सुरक्षा का पक्का प्रबन्ध करने का एक उपाय यह था कि वे लोग जहाँ कहीं भी जाएँ, सरकार वहीं उनके बचाव के लिए सेनाएँ साथ भेजे। यह उपाय बहुत ही खर्चीला और वस्तुतः अव्यवहार्य होता। एक और उपाय यह है कि लुहारों को इतना घृणित बना दिया जावे कि कोई बलवान व्यक्ति कभी उन्हें हाथ लगाने की सोच भी न सके। अपनी इस विनित दशा में लुहार पूरी तरह स्वतन्त्र है। वह चाहे जहाँ आ और जा सकता है, और वह मरुस्थलों में या पहाड़ों पर या शहर के बाज़ार में चाहे जिस मालिक

के लिए काम कर सकता है। वह अपनी बहुमूल्य धातु सामग्री को लेकर अकेला मरुस्थल में, या रात में आ-जा सकता है और कोई भी व्यक्ति उसे लूटेगा नहीं। इससे अधिक सस्ता और कोई उपाय सोचा नहीं जा सकता था। इसके अलावा दूसरा विकल्प केवल यह होता कि एक समूचे राष्ट्र में, या एक समूचे राष्ट्र-समूह में आन्तरिक सुरक्षा का प्रबन्ध किया जाय।

काँस्य युग में मध्यपूर्व में मिश्र में, सुमेरिया में और बैबीलोनिया में कुछ मात्रा में आन्तरिक सुरक्षा थी। किन्तु जहाँ तक हमें मालूम है, उसका विस्तार बहुत दूर तक नहीं था। यह सुरक्षा इसलिए रखी जा सकती थी, क्योंकि शस्त्र-निर्माणशालाओं और परिवहन के सर्वोत्तम साधनों पर सरकार का नियन्त्रण था। लौह युग में हर कोई किसान अपने पास एक लग्गी रख सकता था, जो गला काटने के लिए भी उतनी ही उपयोगी थी, जितनी कि पेड़ों की टहनियाँ काटने के लिए। परिवहन के बढ़िया साधन भी अब सामान्य रूप से पहले की अपेक्षा अधिक सुलभ हो गए थे, जिनके फलस्परूप नागरिक केन्द्रों के बाहरी छोरों पर रहने वाले समूचे कबीलों के लिए स्वतन्त्र जीवन बिता पाना और आने जाने वाले काफिलों से उनकी सुरक्षा के बदले में चुंगी वसूल कर पाना सम्भव हो गया था। लौह युग में कहीं अधिक विस्तृत प्रदेश एक ही सरकार के शासन के अधीन हो गए। किन्तु वह शासन अपने साम्राज्य के सब दूरस्थ भागों में एक-सी सुरक्षा प्रदान नहीं कर पाता था।

यह बात मरुस्थलों के विषय में विशेष रूप से सच थी। काँस्य युग में हमें मरुस्थलों में रहने वाले लोगों के विषय में बहुत कम पता चलता है। परन्तु 1100 ईस्वी पूर्व के बाद उनका अधिकाधिक उल्लेख मिलता है। उस समय बैबीलोनिया के प्रलेखों में भी एक नये पशु, ऊंट, का ज़िक्र है, जिसे 'समुद्री क्षेत्रों' का पशु कहा गया है। इन 'समुद्री क्षेत्रों' का अभिप्राय अरब के, ईरान की खाड़ी के समुद्र तट से था। ऊंटों वाले अरब लोगों ने दक्षिणी अरब में राज्यों की एक परम्परा बना ली थी, जिसमें हधरामौत, कतावान, साबा और माअन सम्मिलित थे। ये राज्य रब-अल-खाली, अर्थात् रिक्त प्रदेश के दक्षिणी और पश्चिमी किनारों पर स्थित थे। ऊंटों के काफिले ढोफर समुद्र तट से सुगन्धित गोंदों (अगर इत्यादि) को तथा भारत और अफ्रीका से मंगाये जाने वाले मसालों, हाथी दाँत की चीजों और अन्य विलास की

वस्तुओं को, जो कि जहाज़ों से हधरामौत के समुद्र तट पर उतारी गई होती थीं, लेकर एक राज्य से दूसरे राज्य में जाया करते थे। इन काफिलों के कारण नाविकों के लिए तूफानी मौसम में समुद्र यात्रा से बचना सम्भव हो गया। यह तूफानी मौसम जिद्दा के उत्तर में लालसागर में नौवहन में सदा ही कठिनाई उत्पन्न करता रहा था। यहाँ पर चलने वाली पवन, जो पानी के ऊपर से बहकर आती है, दक्षिण की ओर से आने वाली पवन से टकराती है।

अन्य काफिले ईरान की खाड़ी से लालसागर की ओर जाते हुए और ईरान की खाड़ी से दमिश्क को उस रास्ते से, जिस पर कि अब नाइरन बन्धुओं की पुलमैन बसें रात में चलती हैं, जाते हुए अरब को पार करते थे, ऊँटों के काफिले ईरान से भारत जाते हुए बलोचिस्तान में से गुज़रते थे और खुरासान से चीन जाते हुए तुर्किस्तान के शाद्वलों को भी पार करते थे। ईरानी लोग भी ईस्वी पूर्व की पाँचवीं शताब्दी में मिश्र में ऊँटों को लाये थे। और वहाँ से ऊंटों को बर्बर लोगों ने तेज़ी से अपना लिया और वे सहारा की ओर उस राष्ट्र का निर्माण करने के लिए चल पडे, जिसे तुआरेग कहा जाता है। ये तुआरेग लोग काफिलों को मार्ग दिखाते हुए मरुस्थल को पार करके नीग्रो लोगों के अफ्रीका में ले जाते थे और हाथीदाँत. सोना, दासों, धातुओं, सूती वस्त्रों और अन्य पण्य द्रव्यों को सिजिलमासा, फैज़, तारुदांत और टिम्बकटू जैसे बाज़ारों तक ले जाते थे। इस बीच में दक्षिणी अरब से आकर बसने वाले लोगों ने इथियोपिया के पर्वतीय प्रदेशों पर क़ब्जा कर लिया था और ऊंट सोमलीलैंड तक पहुँच गया था, जहाँ इसे सोमालियों और दनकालियों ने चटपट अपना लिया।

लौह युग के आरम्भ में ऊंट के आगमन से व्यापारियों को यह सुविधा हो गई कि वे बड़े-बड़े काफ़िले लेकर उन मरुस्थलों के पार जाने लगे, जिनको वे पहले पार नहीं कर सकते थे। इन काफिलों से उन आर्द्र प्रदेशों के मध्य, जिनके बीच में मरुस्थल पड़ते थे, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि हुई। ये काफिले अपने आप में एक नये प्रकार की संस्था बन गए, जिसमें एक नेता के अधीन ऊंट हाँकने वालों, मार्ग-दर्शकों, यात्रियों और माल-अधीक्षकों (सुपर कार्गो) का बड़ा सुदृढ़ संगठन होता था। इसके अतिरिक्त ऊंट पास होने से उन लोगों को, जो कि मरुस्थल के छोरों पर भेड़ें पाला करते थे,

या बंजर खेतों में अधिकाधिक खेती करने का यत्न करते थे, यह सुविधा हो गई कि वे बसन्त ऋतु की वर्षा के बाद मरुस्थल में उगने वाली वानस्पतिक सम्पत्ति का लाभ उठा पाने लगे। एक दूसरा परिणाम उन पशु चराने वाले कबीलों के आरम्भ के रूप में हुआ, जो चलिष्णु, युद्ध-प्रिय और शूर लोग थे; उन्होंने लगभग इस समय इन मरुस्थलों पर अपना आधिपत्य जमा लिया और उसे मोटरों तथा विमानों का आरम्भ होने के काल तक बनाए रखा। एक तीसरा परिणाम उन सब देशों में, जहाँ कहीं भी ंट गया, अधिकाधिक

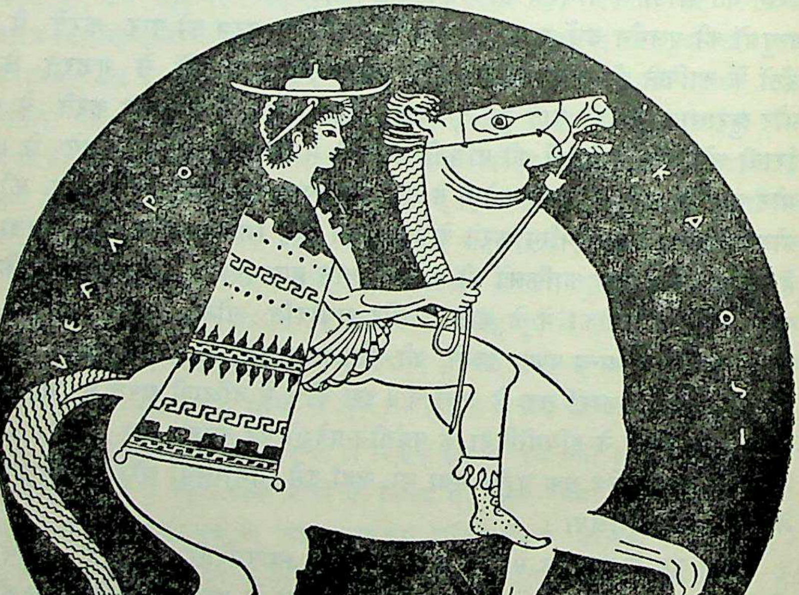

यूनानी घुड़सवार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भू-क्षरण के रूप में हुआ, क्योंकि ऊंट न केवल झाड़ियों को समाप्त कर देता है, अपितु यह पेड़ों की छाल को भी छील कर उतार देता है और इस प्रकार वे पेड़ मर जाते हैं। वनस्पतियों को नष्ट करने की ऊंट की शक्ति की बराबरी इस विषय में केवल बकरी की शक्ति से की जा सकती है। यह जानना मनोरंजक होगा कि अरब में उन स्थानों में जहाँ कि तेल के कारखानों के चारों ओर बाड़ लगा दी गई है जिससे कि चरने वाले पशु अन्दर न आ सकें, मरुस्थल का मूल भू-आवरण, तुलसी-बन्धु (सेज) और बंजर प्रदेशों में पाए जाने वाले खारी पौधे, कुछ वर्षों में ही फिर वापस आ गया है।

परिवहन में एक और सुधार तब हुआ, जब कि लोग घोड़ों पर सवारी करने लगे। आरम्भिकतम सुमेरियाई काल में लोग गधों पर सवारी करते थे और कांस्य युग में लोग सम्भाव्यतः पालतू पशुओं (बैलों) पर सवारी करते थे। यह सम्भव है कि ऊंटों पर सवारी घोड़ों से पहले की जाने लगी हो। यह बात ठीक-ठीक किसी को मालूम नहीं कि लोग जब घोड़ों को कम से कम एक हज़ार साल से रथों में जोतते रहे थे, तब उन्हें उन पर सवारी शुरू करने में इतनी देर क्यों लगी। काठी का अभाव इसका कारण रहा नहीं हो सकता, क्योंकि पाँचवीं शताब्दी के यूनानी लोग घोड़ों की नंगी पीठ पर सवारी करते थे; इस बात को कोई भी व्यक्ति पार्थिनौन के खम्भों के ऊपरी भागों को देख कर जान सकता है। न तो लगाम के दहानों का अभाव इसका कारण हो सकता है, क्योंकि ये कांस्य से ढालकर बनाये जा सकते हैं, और न रकाबों का अभाव ही, जिनका आविष्कार मध्य युग तक नहीं हुआ था। इसका कारण केवल घोड़ों का आकार और पायदारी ही रहा हो सकता है। कांस्य युग के रथों के घोड़े वस्तुतः टट्टू थे। जहाँ तक हमें पता है, बड़े काठी कसे जाने योग्य आकार के घोड़ों की, जैसे कि घोड़ों पर आजकल हम चढ़ते हैं, नस्ल पहले-पहल हमादान के निकट पश्चिमी ईरान के ठंडे और घास वाले प्रदेश में मेदिस लोगों ने तैयार की थी। यह प्रदेश मौण्टैना जैसा दिखाई पड़ता है। इसी प्रदेश से प्राचीन काल के प्रसिद्ध नीसियाई घोड़ों का निर्यात किया गया था, जो इतने बढ़िया थे कि ईस्वी पूर्व की दूसरी शताब्दी में हान काल में उन्हें खरीदने के लिए चीनीयों तक ने अपने दूत भेजे थे। यह शायद केवल संयोग की ही बात न हो कि 1949 में हमारे अनुसन्धान यात्री दल को बिसीतून गुफ़ाओं

में, जो हमादान से बहुत दूर नहीं हैं, दो स्तरों पर इस प्रकार के घोड़ों के दांत और सुमों की हड्डियाँ प्राप्त हुई थीं। इस निक्षेप की तली के निकट वाले भाग में, जो सम्भाव्यतः वूर्म हिमाच्छादन काल के आरम्भिक दिनों का रहा होगा, इन घोड़ों के इस प्रकार के ये अवशेष आम तौर से मिलते हैं। ये घोड़े जंगली थे। ऊपरी भाग के निकट, जो देरियस के काल का था, वे फिर पालतू पशु जैसे दिखाई पड़ते हैं। दांत और हड्डियाँ दोनों स्तरों पर एक ही सी हैं।

यह बहुत सम्भव है कि घोड़ों को एक से अधिक स्थानों में एक से अधिक बार, और उनकी एक से अधिक नस्लों को पालतू बनाया गया हो। घोड़ों को पालतू बनाना कोई आसान काम नहीं है। इसके लिए घोड़ियों को उस समय पकड़ना होता है, जब वे ऋतुमती होती हैं और उसके बाद उन्हें जंगली घोड़ों से मैथुन करने दिया जाता है। घोड़ी और उसके बछेड़े को सर्दियों में ठीक ढंग से अच्छी जगह रखना और उन्हें खिलाना-पिलाना पड़ता है और बछेड़े को ठीक आयु होने पर सवारी का अभ्यस्त बनाया जाता है। जैसा कि घुड़सवारी के घोड़े रखने वाला हर कोई व्यक्ति जानता हैं, यह बहुत ही खर्चीला काम है, जिसमें समय भी बहुत लगाना पड़ता है। यह काम सामान्य किसानों के बस से बाहर का है। कांस्य युग में घोड़े राजाओं और कुलीन सामन्तों के पास ही होते थे; केवल वे लोग ही उन्हें रख पाने में समर्थ थे और लौह युग में वे योद्धागीरी (नाइट हुड) के प्रतीक थे। केवल मध्य काल में पहुँचकर ही यह स्थिति आ पाई कि घोड़े ऐसे सामान्य भारवाही पशु बन गए, जिन्हें हलों और छकड़ों में जोता जाने लगा।

वह एकमात्र स्थान, जहाँ पर घोड़ों को अन्य रेवड़ वाले पशुओं की भांति मांस और दूध के लिए पाला जाता था, मध्य एशिया था; और हमें यह पता नहीं कि ऐसा सातवीं शताब्दी ईस्वी पूर्व से, जब कि ईरान में अश्वारोहण का आरम्भ होने का पता चला है, पहले किया जाता था या नहीं। इसके कुछ ही समय बाद उन पर मध्य और पश्चिमी यूरोप में सवारी होने लगी और वे यूनान तथा इटली में भी पहुँच गए। उसके बाद अरब लोगों ने घोड़ों की एक विशेष नस्ल तैयार की, जिन्हें मरुस्थल में हाथों द्वारा पुष्ट किया जाता था; यह नस्ल रणभूमि में ऊंटों के पीछे रखी जाती थी और इस पर सवारी केवल

अन्तिम और महत्त्वपूर्ण हाथापाई की लड़ाई के समय ही की जाती थी। ये अरबी घोड़े, जिन को यद्यपि कई शताब्दियों तक यत्नपूर्वक छिपा कर रखा गया था, आजकल हमारे मिश्रित नस्ल के घोड़ों का एक भाग हैं और इस विशुद्ध नस्ल के घोड़ों का प्रजनन कैलिफ़ोर्निया में करवाया जाता है।

मरुस्थल के लिए जो कुछ ऊंट ने किया, वही घोड़े ने घास के मैदानों के लिए किया। वे खानाबदोश लोग, जो घोड़ों पर सवारी कर सकते थे और सरपट दौड़ते हुए घोड़ों पर बैठकर छोटे-छोटे धनुषों से तीर चला सकते थे, और घोड़ियों का दूध पी सकते थे, बड़ी से बड़ी शक्तिशाली सेनाओं का मुकाबला करने में भली भांति समर्थ थे। कृषि वाले प्रदेशों में जिस मनुष्य के पास घोड़ा होता था, उसे पैदल लोगों की अपेक्षा कहीं अधिक सुविधा रहती थी। वह नीचे झुककर चोट कर सकता था और उसके बाद तेज़ी से बच निकल सकता था। घोड़ा जमींदार और उसके अनुचरों का प्रतीक और सहायक बन गया। सैनिक कार्यों की दृष्टि से उपजाऊ और यथेष्ट खुले प्रदेश में तोप के आविष्कार से पहले और कोई वस्तु घुड़सवार सेना का मुकाबला नहीं कर सकती थी और अधिकांश देशों में केवल टैंकों ने ही घुड़सवार सेना का प्रयोग समाप्त किया है।

मध्य पूर्व के पहाड़ों में जहाँ कि यायावर (खानाबदोश) लोग अपनी भेड़ों और ढोरों को बसन्त ऋतु में बर्फीले चरागाहों में ले जाते हैं और सर्दियों में नीचे के गर्म मैदानों में वापस ले आते हैं, सवारी का घोड़ा एक वास्तविक आवश्यकता की वस्तु है। इन प्रव्रजनों का समय इस प्रकार बिलकुल ठीक नियत रहना चाहिए कि जिससे प्रत्येक प्रकार के पशुओं की बिलकुल ठीक संख्या ठीक समय पर ठीक रास्ते को पार करके ठीक समय पर उचित दर्रे के पार पहुँच जाय। यदि ऐसा न हो, तो वे या तो बहुत देर में चल पाएँगे और प्यास से कष्ट पाएँगे, या बहुत जल्दी पहुँच जाएँगे और बर्फ में फंस जाएँगे, या इकट्ठे पहुँच कर रास्ते में अवरुद्ध हो जाएँगे और एक दूसरे से लड़ने लगेंगे। इतना ही नहीं, जो कबाइली लोग अपने पशुओं के रेवड़ को हाँक कर ले जा रहे हैं, उनकी उन बस कर रहने वाले लोगों से भी रक्षा का प्रबन्ध होना चाहिए, जिनके कि प्रदेश में से होकर वे गुज़र रहे हैं। इसी प्रकार यह व्यवस्था भी होनी चाहिए कि ये कबाइली लोग बसकर रहने वाले लोगों को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हानि न पहुँचाएँ। ठीक समय नियत करने, आदेश देने और रक्षा करने के लिए एक नेता के सुदृढ़ प्राधिकार की आवश्यकता होती है और यदि उस नेता को अपने काफिले के आगे पीछे के सब भागों में जल्दी पहुँचना हो और अपने प्रव्रजन को सफल बनाना हो, तो उसे घोड़े पर सवार रहना ही होगा। जिस किसी ने भी ईरान में कुर्दों, बख्तियारियों या कश्काइयों या मोरक्कों में मध्य ऐटलसवासी बर्बरों के प्रव्रजनों को देखा है, वह इस बात को तुरन्त समझ लेगा। इन कबीलों के लोगों को घोड़ों से सैन्य शक्ति भी प्राप्त होती है, जिसके द्वारा वे मैदानों की सरकारों द्वारा उनके पशुओं को छीनने के प्रयत्नों का प्रतिरोध भी कर सकते हैं और जिन वर्षों में खाने की कमी हो, उन दिनों मैदानों पर हल्ला भी बोल सकते हैं। ग्ज़ैनोफ़न के 'ऐनेबेसिस' में हमें उन युद्धप्रिय पर्वतीय लोगों का बहुत उल्लेख मिलता है, जिन्होंने उसके अनातोलिया के पार प्रयाण के समय कुर्दों को बहुत सताया था। परन्तु ऐसा लगता है कि वे लौह युग के आरम्भ से पहले उपद्रवी नहीं रहे थे। मरुस्थलों और तरुहीन मैदानों के अन्य यायावर (खानाबदोश) लोगों की भांति शायद उनका भी अस्तित्व घोड़ों और लोहे का प्रयोग शुरू होने से पहले न रहा हो।

घुड़सवारी के साथ-साथ ईरानियों ने डाक भेजने की प्रणाली का भी आविष्कार किया, जिससे साम्राज्य की वृद्धि में सुविधा हो जानी थी। परन्तु रोमवासियों के लिए इतना ही काफ़ी नहीं था: वे सूचना और आदेशों के द्रुत गति से प्रेषण के साथ-साथ सामान का भी द्रुत गति से परिहवन चाहते थे। इसीलिए उन्होंने रोमन सड़क का आविष्कार किया। यह रोमन सड़क इस दृष्टि से रेल की पटरी के सिद्धान्त पर बनाई गई थी कि इसमें गाड़ी की स्थिरता वाहन में धुरियों और बैठने की गद्दियों के बीच में कमानी की विद्यमानता पर उतनी निर्भर नहीं थी, जितनी कि सड़क की सतह के समतल होने पर निर्भर थी। ये सड़कें पुराने रोक-फाटक (शुल्क मार्ग) के नमूने की थीं, जो किन्हीं भी दो स्थानों के बीच यथासम्भव न्यूनतम दूरी वाले मार्ग पर बनती थीं और उनके उतार-चढ़ाव इतने अधिक ढलवाँ होते थे कि आधुनिक मोटरों के लिए उनका प्रयोग नहीं हो सकता। परन्तु वे अपने काल के घोड़ों द्वारा खींचे जाने वाले छकड़ों और रथों के लिए उपयुक्त थीं। उनकी नींव, जो चालीस इंच गहरी होती थी, पत्थर के वर्गाकृति और एक-दूसरे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

में ठीक बैठने वाले टुकड़ों से बनी होती थीं। ये नींवें हमारी आधुनिक सड़कों की अपेक्षा, जो अधिक से अधिक छतीस इंच गहरी होती हैं, अधिक पक्की

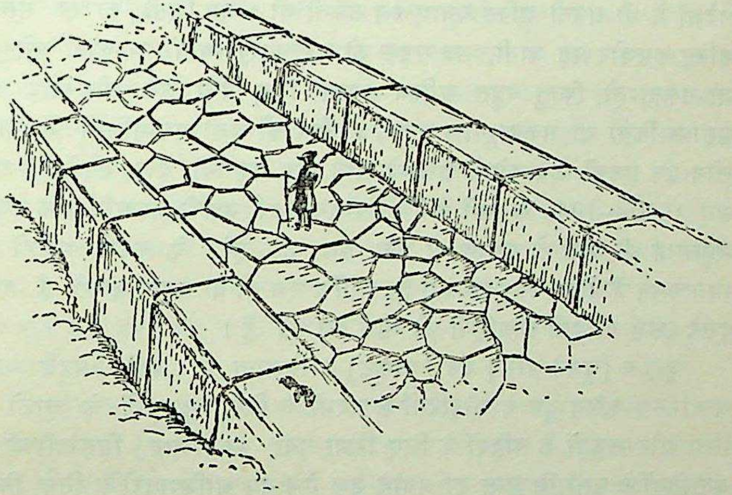

रोमन सड़क

होती थीं। इस समय की चालू दरों पर यदि वैसी एक मील लम्बी संकरी दो गलियों वाली सड़क बनाई जाय, तो उसे बनाने पर पाँच लाख से अधिक डालर खर्च होंगे।

इन सड़कों पर पैदल सेना कूच कर सकती थी और उसके सामान की गाड़ियाँ, जिन्हें घोड़े खींचते थे, उनके पीछे साथ ही साथ आ सकती थीं। इन सड़कों की सतह कठोर होने के कारण ही रोमवासियों को विवश होकर घोड़ों की अलग की जा सकने वाली नालों का आविष्कार करना पड़ा था। सरकार इन सड़कों को और इसके किनारे एक-एक दिन की यात्रा की दूरियों के अन्तर पर विश्राम स्थान (पड़ाव) बनवाती थी। क्योंकि ये सड़कें बहुत पक्की बनी होती थीं और इनके ऊपर होने वाला यातायाता बहुत हल्का होता था, इसलिए इस सड़क की मरम्मत और देखभाल की आवश्यकता बहुत कम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

होती थी; केवल इसकी रक्षा की आवश्यकता होती थी। जब तक सरकार सड़क की सतह को समतल बनाए रखती और दर्रों को डाकुओं से शून्य रखती, तब तक वह न्यूनतम खर्च द्वारा यौर्कशायर और सीरिया जैसे दूरस्थ प्रदेशों में भी अपनी शक्ति बनाए रख सकती थी। जब किसी कारण सैनिक शक्ति कमज़ोर पड़ जाती, तब सड़क को महत्त्वपूर्ण स्थानों पर काटा भले ही जा सकता हो, किन्तु बहुत अधिक प्रयास किए बिना उसे तोड़-फोड़ कर समाप्त किया जा सकता था। उत्तरी इंग्लैण्ड की खुली वन-भूमियों में यात्री लोग इन सड़कों के अवशेषों के लम्बे-लम्बे खंड अब भी देख सकते हैं; और सन् 1930—1940 के वर्षों में ये ही रोमन सड़कें उत्तरी अल्बानिया के प्रधान महामार्ग थीं और हो सकता है कि अब भी हों। ये सड़कें मोटरों के आवागमन के लिए उपयुक्त नहीं हैं, क्योंकि एक तो वे बहुत संकरी हैं और दूसरे उनमें गाड़ियों के पहियों की लीकें बन गई हैं।

घूर्णक (घूमने वाले) दंड (शाफ्ट) के सिद्धान्त का प्रयोग पहले पहल आरम्भिक काँस्य युग में जौहरियों के बरमों के लिए, कुम्हारों के चाकों के लिए और छकड़ों के पहियों के लिए किया गया था। अब सिकन्दरियाँ के यूनानियों ने उसी सिद्धान्त का प्रयोग कुछ ऐसे नए आविष्कारों के लिए किया जिनका उपयोग तुरन्त किया जाने लगा।[1] जिस पेच का आविष्कार आर्शीमिडीज ने किया था, उसका उपयोग शीघ्र ही दो व्यावहारिक उपकरणों के लिए किया गया : पानी का पम्प और दाब यन्त्र (प्रेस)। इनमें से दूसरे ने, अर्थात् दाब यन्त्र ने एक अन्य यूनानी आविष्कार, घूर्णक चक्की के साथ मिलकर जैतून-तेल-उद्योग में क्रांति उपस्थित कर दी। जैतूनों को चुनकर इकट्ठा कर लेने के बाद मज़दूर उन्हें टोकरियों में ला-ला कर एक पक्के चिने हुए चबूतरे पर उनका ढेर लगा देते हैं। इस चबूतरे का ऊपरी भाग वृत्ताकृति और थोड़ा-सा उत्तल (उन्नतोदर) होता है। इस चबूतरे के केन्द्र में से एक बल्ली ऊपर को निकली रहती है। इस बल्ली के साथ समकोण बनाती हुई एक दूसरी बल्ली लगी होती है, जो एक बड़े गोल चक्की के पत्थर के लिए तकुए का सा काम करती है। यह चक्की का

---

[1] आर० जे० फौर्बेस, 'मैन दि मेकर' हैनरी शुमैन, न्यूयार्क 1950।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पत्थर अपने किनारों के बल चबूतरे पर सीधा खड़ा होता है। इस तकुए के बाहर की ओर के सिरे पर एक हत्था होता है। मनुष्य या मनुष्यों द्वारा हाँके जाने वाले गधे इस पत्थर को घुमाते हुए उस चबूतरे के चारों ओर घूमते हैं। यह पत्थर जैतून को कुचल देता है। इन कुचले हुए जैतूनों को उथली टोकरियों में भर कर मज़दूर लोग उन्हें एक दाब-यन्त्र में तब तक एक के ऊपर एक रखते जाते हैं, जब तक कि वह दाब यन्त्र पूरा न भर जाय। उसके बाद वे एक पेच को नीचे की ओर तब तक घुमाते रहते हैं, जब तक कि निचले सिरे पर लगी हुई तख्ती आकर सबसे ऊपर की टोकरी से न छू जाय, उसके बाद वे पेच को और घुमाते हैं और उन टोकरियों में पड़े जैतूनों के दबने से तेल बाहर निकल आता है। यह उपकरण काफ़ी सरल प्रतीत होता है; किन्तु इसका सामान्य रूप से उपयोग रोमन साम्राज्य के काल तक भी शुरू नहीं हुआ था; उसके बाद तो यह जैतून उगाने वाले सभी प्रदेशों में काम आने लगा।

घूर्णक चक्की-पत्थर का प्रधान उपयोग हाथ की चक्की, या सीधी साधी चूल पर टिकी हुई अनाज पीसने की चक्की में हुआ। यह चक्की घर में लगा ली जाती थी और इससे सारे परिवार के लिए आटा नव-पाषाणिक और कांस्य युग में प्रयुक्त होने वाली पुराने ढंग की काठी-चक्की की अपेक्षा बहुत ही कम समय में पिस जाता था। इस पुराने ढंग की काठी-चक्की का प्रयोग इथियोपिया और मध्य अमेरिका के कुछ भागों में अब भी होता है। रोमनवासियों को अपने नागरिकों को सार्वजनिक पंगत में रोटी खिलाने के लिए प्रति दिन बहुत बड़ी मात्रा में आटे की आवश्यकता होती थी, उन्होंने बालू-घड़ी के आकार की बड़ी-बड़ी वाणिज्यिक हाथ-चक्कियाँ बनाईं, जिन्हें कि दास लोग चलाते थे। ये चक्कियाँ मनहूस कारखानों में लम्बी-लम्बी कतारों में लगी होती थीं।

एक और आविष्कार, दाँतेदार चक्का, भी लगभग उसी समय किया गया था। यद्यपि यह हमारी आधुनिक मशीनों का आधार बना है, फिर भी यह एक हज़ार से भी अधिक वर्ष तक उद्योग में कोई नई क्रान्ति कर पाने में असमर्थ रहा। जैसा कि यूनानियों और रोमवासियों को मालूम था, दाँतेदार चक्के द्वारा अनाज पीसने के लिए मनुष्य की शक्ति के स्थान पर जल की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शक्ति का प्रयोग कर पाना सम्भव हो गया। पानी एक चक्के को घुमाता है और वह चक्का एक क्षैतिज दंड को घुमाता है। गियरों द्वारा इस गति को एक उर्ध्वाधर दंड की गति में बदल दिया जाता है और ऊर्ध्वाधर दंड चक्की के पाट के ऊपर रखे दूसरे पाट को घुमाता है। व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाय, तो वह आविष्कार ईसा से ठीक पहले और ईसा के ठीक बाद की शताब्दियों में उच्च सभ्यता वाले प्रदेशों में उपयोग के लिए बहुत उपयुक्त नहीं था। भूमध्यसागर के निकटवर्ती और मध्यपूर्व के देशों में वर्षा केवल सर्दियों में होती है और उसका पानी प्रायः बहुत ज़ोरदार धाराओं के रूप में बहुत तेज़ी से बह जाता है। छोटी-छोटी जल धाराएँ वर्ष के अधिक भाग में सूखी पड़ी रहती हैं। टाइबर नदी में पानी का उतार-चढ़ाव इतना अधिक होता है कि रोमवासियों को विवश होकर नीचे की ओर उतारे जा सकने वाले चक्कों का प्रयोग करना पड़ा था, जो तैरती हुई चक्कियों में लगाये गए थे, जिससे पानी के स्तर में घट-बढ़ के अनुसार उनका समंजन किया जा सके। गियर से चलने वाली पानी की चक्कियाँ साल भर काम में आने वाले उपकरणों के रूप में केवल उन देशों में उपयोग हो पाईं, जहाँ पानी निरन्तर और प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता था—रोमन काल में ऐसे प्रदेश केवल 'बर्बर' प्रदेश ही थे।

पुराने रोम और यूनान के निवासियों ने दंडों और गियरोंका सामान्यतया जो प्रयोग नहीं किया, उसका एक और कारण यह था कि उन्हें बनाने में खर्चा और कठिनाई बहुत थी। काम में आ सकने योग्य गियर केवल काँसे को ढाल कर बनाये जा सकते थे और कांसा बहुत मंहगा था। इन गियरों को लोहे से गढ़ना और उन्हें दृढ़ बनाना बहुत मेहनत का काम था। इसके अलावा धातुओं को पिघलाने और गढ़ने के लिए ईंधन का एकमात्र स्रोत उस समय तक भी लकड़ी का कोयला ही था, जो देहातों में अधिकाधिक जंगल काटे जाने के फलस्वरूप दुर्लभ होता जा रहा था। ईस्वी पूर्व की चौथी शताब्दी में लिखते हुए प्लेटों तक ने बड़ी चिन्ता के साथ इस बात का उल्लेख किया कि अत्तिका का भूदृश्य और जलवायु चरागाहों, बारहमासी निर्भरों और वन पर्वतों की भूमि से बदल कर सफेद चूने के पत्थर के नग्न कंकाल जैसा होता जा रहा है, जिसमें बीच-बीच में जहाँ-तहाँ थोड़ी बहुत मिट्टी भरी

हुई है; और यह भूदृश्य उसके बाद से सदा ऐसा ही बना रहा है। मिश्र, ईराक और अरब में, जहाँ कि सारी की सारी धातु का बाहर से आयात करना पड़ता था और लकड़ी का कोयला बहुत मंहगा था, इस प्रकार का विकास हो पाना असम्भव था। इस प्रकार की मशीनें बनाने का यत्न करने की अपेक्षा दासों को पकड़कर और उनके हाथ से चक्की चलवा कर अनाज पिसवाना कहीं अधिक सस्ता पड़ता था।

लौह युग के पिछले भाग में किसी समय, सम्भाव्यत: बाइज़ैण्टाइन काल में रोम और यूनान के प्रदेशों में एक और नया आविष्कार हुआ, जिससे इन कठिनाइयों की अड़चन समाप्त हो गई। यह आविष्कार था ऊर्ध्वाधर दंड वाली अर्थात् टर्बाइन वाली पानी की चक्की, जिसमें किसी नहर के पानी के बहाव का, या पर्वतीय क्षेत्रों में बहने वाली छोटी-छोटी जलधाराओं के बहाव का उपयोग किया जा सकता था। इसमें गियर होते ही नहीं,

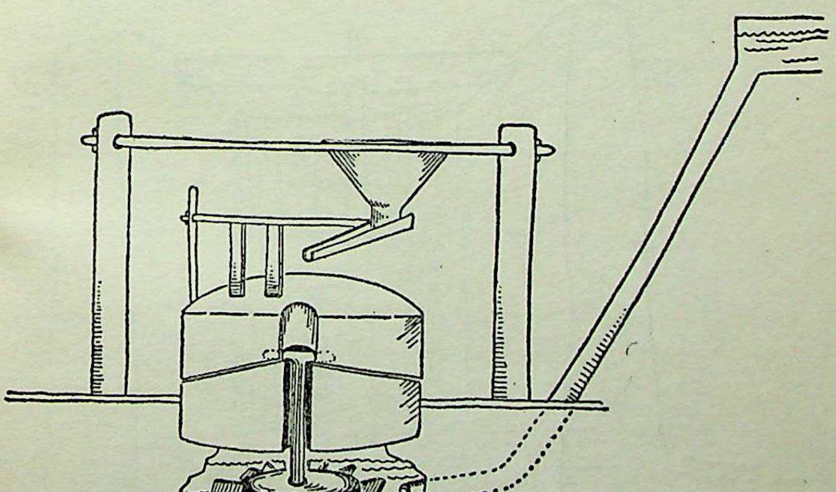

टर्बाइन पन चक्की, जिसका प्रयोग अब भी मध्य-पूर्व और बाल्कन प्रदेशों में होता है

इसलिए यह अधिकतम सुचारु रूप में कार्य कर सकती है। आजकल इस प्रकार की पनचक्कियाँ सारे ईरान, उत्तरी ईराक, तुर्की, बाल्कन प्रदेशों और उत्तरी अफ्रीका में पाई जाती हैं। ये इतनी सरल होती हैं कि गाँव का बढ़ई और राज मिलकर इस प्रकार की चक्की बना सकते हैं; और इन्हें चलाना इतना सरल होता है कि कोई भी गृहिणी अपना अनाज किसी ऐसी चक्की तक ले जाकर किसी की सहायता के बिना स्वयं पीस सकती है, ठीक उसी प्रकार, जैसे आधुनिक गृहिणी अपने परिवार के कपड़ों को कपड़ा धोने की मशीन (लौंड्रोमैट) से स्वयं धो लेती है। पूर्वी ईरान और अफ़गानिस्तान में लगभग सातवीं शताब्दी से इस सिद्धान्त का प्रयोग पवन-चक्कियों के लिए किया जाने लगा है। जहाँ वायु निरन्तर एक ही दिशा से बहती है, वहाँ पिच्छ-फलक (वेन) वाले क्षेपणी-चक्र (पैंडल व्हील) ऊर्ध्वाधर दंडों पर लगा दिये जाते हैं। एक कच्ची ईंटों की दीवार इस प्रकार खड़ी कर दी जाती है,

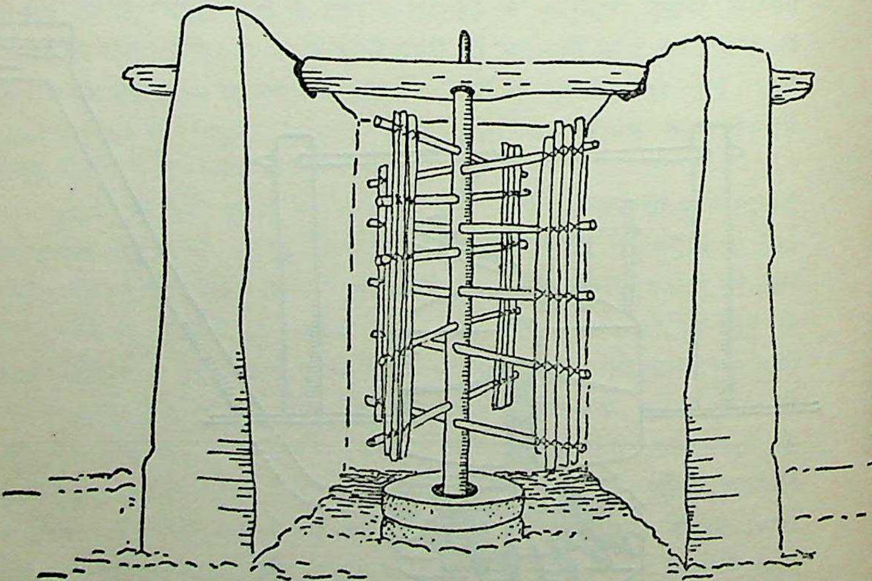

आधुनिक ईराक की ऊर्ध्वाधर दंड वाली पवन चक्की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जिससे पवन इन चक्कों के एक ही पार्श्व में लगे और दूसरे पार्श्व में नहीं; और इस प्रकार अनाज पीसा जाता है ।

इन आविष्कारों से लौह युग समाज की संस्थाओं पर न्यूनाधिक मात्रा में प्रभाव पड़ा । कांस्य युग में मिट्टी के बर्तन बनाने का नव-पाषाणिक कौशल कम से कम शहरों में स्त्रियों के हाथ से ले लिया गया था और वह काम पुरुष विशेषज्ञों को सौंप दिया गया था । इसी प्रकार पाव रोटी पकाने और बढ़िया बुनाई करने के काम का भी कुछ अंश उनसे ले लिया गया था । किन्तु अब तक भी अनाज पीसने का भारी काम स्त्रियों के ज़िम्मे ही था । यदि किसी स्त्री के पास कोई दास हो, या उसके पति ने कोई रखैल रखी हुई हो, जो इस नीरस काम को कर सके, तो वह खुशक़िस्मत थी । किसी ऐसे परिवार में, जो दास या रखैलें रख पाने में समर्थ न हो, कई भाई और उनकी पत्नियाँ, भाइयों के माता-पिता के साथ इकट्ठे मिलकर रह सकते थे । पिसाई का काम अपेक्षाकृत तरुण स्त्रियों को करना पड़ता था । पानी भर कर लाने और कपड़े धोने का काम भी उन्हीं के ज़िम्मे था और घर की वृद्ध महिला घर पर शासन करती थी । इसलिए घर में करने को काम बहुत रहता था और परिवार का अनुकूलतम आकार छह से लेकर दस व्यक्तियों तक का होता था ।

जब अनाज की पिसाई का काम घर से बाहर होने लगा, तब स्त्रियों के करने के लिए काम पहले की अपेक्षा कम हो गया और इसीलिए बड़े परिवार की आवश्यकता भी पहले की अपेक्षा कम हो गई, विशेष रूप से तब, जब, जैसा कि ऐथन्स, रोम या पौम्पियाई नगर में होता था, पानी को कुल्याओं (छोटी नहरों) द्वारा शहरों तक लाया जाने और वहाँ से उसे नलों द्वारा अपेक्षाकृत धनी मकानों की निचली मंज़िलों में और उनके निकट बने फव्वारों तक ले जाया जाने लगा । यूनान में स्त्रियों को अलग रखा जाता था । किन्तु रोम में वे स्पष्ट ही अपने खाली समय का उपयोग अनेक प्रकार से अपने मनोरंजन के लिए करने लगी थीं; यह बात गणतन्त्र के पिछले भाग और साम्राज्य के आरम्भिक दिनों के लैटिन लेखकों की कठोर उक्तियों से अनुमान करके समझी जा सकती है । अरब में, जहाँ कि आर्थिक दृष्टि से उपयोगी लगभग सभी गतिविधियाँ पुरुषों का काम थीं और पुरुष अपने व्यवसाय के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सिलसिले में लगातार कई सप्ताहों या महीनों तक घर से बाहर रहते थे, स्त्रियों का अलग एकान्त में रहना आसानी से समझ में आ सकता है।

लौह युग की नई उद्योग विद्या का एक परिणाम यह हुआ कि वस्तुओं को उपयोग्य बनाने के लिए घर में परिवार के सदस्यों द्वारा किये जाने वाले काम की मात्रा कम हो गई और इस प्रकार बड़े परिवार की संस्था की आवश्यकता भी घट गई। इस उद्योग विद्या में मानव प्राणियों के संगठन पर अधिक बल दिया गया था और उद्योगों में ऊर्जा के नये साधनों के उपयोग पर कम। परिवहन और संचार के साधनों में हुए सुधारों के कारण शासक राष्ट्रों के नागरिकों के लिए यह सम्भव हो गया था कि वे मानवीय मांसपेशी-युक्त शक्ति संयन्त्रों (मेहनत करने वाले दासों) को जीत सकें, खरीद सकें और उन्हें अपने कब्ज़े में रखकर उनसे काम करवा सकें। क्योंकि ऊर्जा ऊर्जा ही है, चाहे उसका स्रोत कुछ भी क्यों न हो, इसलिए दासता की वृद्धि के फलस्वरूप राजनीतिक और आर्थिक संस्थाओं की जटिलता में तदनुरूप वृद्धि हुई और परिवार की जटिलता में कमी हो गई।

दास तथा विशिष्ट लोग

जो लोग ऐथन्स के स्वर्णयुग के विषय में सोचते हैं और अपने मनश्चक्षुओं के सम्मुख अगोरा के आस-पास लहराती रेशमी चादरें ओढ़े, या संगमर्मर की शिलाओं पर भंगिमापूर्वक झुककर आधे लेटे हुए, सुकरात या प्लेटो के भाषण सुनते हुए सुन्दर तरुणों के दलों को चित्रित करते हैं, उनमें से हर कोई यह अनुभव नहीं कर पाता कि ये लोग 3 लाख 15 हज़ार व्यक्तियों की कुल जनसंख्या में से अपेक्षाकृत ऊपरी स्तर के केवल 43 हज़ार नागरिक थे; अर्थात् हर सात व्यक्तियों में केवल एक व्यक्ति। वे अपना समय सौन्दर्य और विद्या की साधना में इसलिए बिता पाने में समर्थ थे, क्योंकि अन्य बहुत-से लोग नगर के दूसरे छोर पर उनकी जगह उनका काम कर रहे होते थे। कई सौ कुम्हार-बड़े पैमाने पर यूनानी आसव-भाण्ड तैयार करने के लिए अपने चाक घुमाते रहते थे। ये भाण्ड किसी संग्रहालय में सजाकर रखने के लिए नहीं, अपितु मदिरा रखने के लिए बनाये जाते थे। बोतल जितनी अधिक आकर्षक होगी, शराब से भरे जाने और मुहरबन्द कर दिये जाने के बाद

उसकी विक्री की सम्भावना उतनी ही अधिक होगी। कई सौ अन्य व्यक्ति कर्तरिका (काटने के उपकरण, छुरी चाकू इत्यादि) बनाने के लिए लुहारों की भट्ठियों पर ठोक-पीट करते रहते थे, और रस्सियाँ बनाने वाले लोग कमर झुकाये रस्सी बनाने के रास्ते में धीमे-धीमे आगे और पीछे चलते थे। इनमें से बहुत कम लोग वोट का अधिकार रखने वाले नागरिक थे; सच तो यह है कि इनमें से यूनानी भी थोड़े ही लोग थे। अधिकांश लोग दास थे। जिस सभ्यता को साधारणतया एक आदर्श प्रजातन्त्र बताया जाता है, उसका आर्थिक आधार दासों का श्रम था।

रोमन काल में जब साम्राज्य का विस्तार हुआ और उसके सैनिक तथा अन्य कर्मचारी अधिकाधिक प्रकार के लोगों के सम्पर्क में आये, तब दासों का बाज़ार बड़ा हो गया। इटली में किसी जागीर के मालिक धनी व्यक्ति के लिए एक हज़ार तक दास अपने पास रख पाना सम्भव था। स्पेन में तांबे की सरकारी खानों में सैकड़ों लड़कों को ज़मीन के नीचे अनिश्चित काल तक कोयले की खानों के खच्चरों की तरह रखा जा सकता था और वे दिन का प्रकाश भी कभी कदास ही देख पाते थे। कई बार स्वयं सुशिक्षित यूनानियों को भी दास बनाकर इटली ले जाया जाता था, जहाँ वे अपने मालिकों के चिकित्सकों के रूप में और अपने मालिकों के बच्चों के शिक्षकों के रूप में सेवा किया करते थे।

लौह युग की आर्थिक संस्थाओं के विकास पर दासता की प्रथा का प्रभुत्व रहा। चौथी शताब्दी के यूनान में पैरीक्लीज़ जैसा नागरिक तलवारें बनाने के कारखाने का मालिक हो सकता था, जिसमें कि वास्तविक कार्य दासों द्वारा किया जाता था। इस प्रकार पैरीक्लीज़-निगम माल तैयार करने वाली एक ऐसी संस्था थी, जिसमें उपकरण और श्रम, जिसमें कि ऊर्जा का स्रोत भी सम्मिलित था, दोनों पर पूंजीपति का स्वामित्व था। लौरियम की खानों की खुदाई, जिनसे ऐथन्स को चाँदी प्राप्त होती थी, वे दास करते थे, जो नगर और उन दासों के मालिकों के बीच हुए ठेकों के अधीन किराये पर दिये गए होते थे। रोमन काल में सरकार दासों के श्रम द्वारा अनाज पिसवाने के लिए कारखाने चलाती थी और पारिवारिक जागीरों पर कृषि की उपज को पण्योपयोगी बनाने का अधिकाँश काम दासों द्वारा उसी ढंग से किया जाता था, जैसे

अमेरिका में गृह युद्ध से पहले दक्षिणी राज्यों के बड़े-बड़े फार्मों में किया जाता था ।

ऐथन्स में कुछ थोड़े-से कारीगर स्वतन्त्र मनुष्य और नागरिक थे; अधिकाँश लोग कुछ समय से वहाँ आकर बसे हुए 'विदेशी' (मैटिक) या 'स्वतन्त्र विदेशी' थे, जिनको कोई नागरिक अधिकार प्राप्त नहीं थे । रोम में क्योंकि नागरिकता के अधिकार का विस्तार उन प्रदेशों तक कर दिया गया था, जिनसे कि कुशल मज़दूर आते थे, इसलिए दासों का स्थान एक स्वतन्त्र कारीगर वर्ग लेने लगा था । जब तक साम्राज्य फैल रहा था, तब तक रोमवासियों के लिए यह सरल था कि वे अपने रास्ते में लोगों को बन्दी बनाते जाते, परन्तु जब एक बार साम्राज्य स्थान और तकनीक विज्ञान की दृष्टि से अपनी स्वाभाविक परिसीमाओं तक पहुँच गया, तब तक इसकी परिधि में वे अधिकांश प्रदेश आ चुके थे, जिनसे कि कुशल कारीगर आया करते थे । स्लाव, जर्मन और पिक्ट (उत्तर-पूर्वी स्काटलैंड की एक जाति) लोग चक्कियाँ चलाने के लिए तो बिलकुल ठीक थे, क्योंकि वे बलिष्ठ और दृढ़ होते थे, परन्तु उनमें वे विशेष कौशल नहीं थे, जो सीरियाई लोगों और यहूदियों में पाए जाते थे और जिन्हें अब खुले बाज़ार में नहीं खरीदा जा सकता था ।

इसके अतिरिक्त दासों में एक यह आदत थी कि वे अपने परिश्रम और मितव्ययिता द्वारा अपनी स्वतन्त्रता खरीद लेते थे; और मालिकों की एक यह आदत थी कि जिन दासों के साथ उनके व्यक्तिगत स्नेह सम्बन्ध बन जाते थे, उन्हें वे स्वतन्त्र कर देते थे । जब स्वामी और दास, सब के सब एक ही जाति के लोग हों, तो शारीरिक दृष्टि से उन्हें अलग-अलग पहचान पाना कठिन है, और विशेष रूप से तब, जबकि वे एक या दो पीढ़ियों तक एक ही स्थान पर रह चुके हों । जब स्वामी और दास दोनों ही ईसाई बन गए हों, जैसा कि बाइज़ैण्टाइन साम्राज्य में हुआ था, तब उन दोनों की इस प्रकार की पृथक्ता उससे कहीं अधिक विक्षोभ उत्पन्न करती है, जितना कि पृथक्ता से लाभ होता है, और तब स्वतन्त्र कारीगरों का एक वर्ग उत्पन्न हो सकता है ।

जहाँ पूर्व में कारीगर लोग स्वतन्त्रता का आभास-सा प्राप्त करते जा रहे थे और इस प्रकार उनके लिए अपने आपको श्रेणियों (गिल्ड) में संगठित करना सम्भव हो रहा था, वहाँ व्यापारी लोग रोमन साम्राज्य के दोनों भागों

में स्वतन्त्र व्यक्तियों के रूप में आते-जाते थे। यदि कोई दास घर पर बैठकर कोई सामान तैयार कर रहा हो, तो उसका अधीक्षण कर पाना सम्भव है, परन्तु यह नहीं हो सकता कि उसे यात्रा और व्यापार करने के लिए खुला छोड़ दिया जाय और उससे आशा की जाय कि वह उसके बाद भी दासता करता रहेगा। इसके अतिरिक्त, रोमन नागरिकता का शनैः-शनैः एशिया के उन भागों तक भी विस्तार कर दिया गया था, जिसमें विशेषरूप से योग्य व्यापारी पाये जाते थे। इस दृष्टि से फिलस्तीन विशेष रूप से उल्लेखनीय था। रोमन सेनाओं के पीछे-पीछे बहुत बड़ी संख्या में यहूदी लोग स्पैन,गाल, राइनलैंडों, और उत्तरी अफ्रीका में, और क्रिमिया तथा डैन्यूब नदी के तटवर्ती देशों में जा पहुँचे थे। जैसे उन यहुदियों के वंशजों ने अब से दो-तीन पीढ़ी पहले पश्चिमी अमेरिका में अपने व्यापारिक केन्द्र स्थापित किये थे, ठीक उसी प्रकार उन उद्यमी इजराइलवासियों ने कोलोन और वर्म्स में, लंदन, ग्रेनाडा, टैंजियर, और कार्थेज में तथा पूर्व में भी अपने व्यापारिक केन्द्र स्थापित किये थे। यह कहा जा सकता था कि जिन यहूदियों को हिटलर ने निकालकर बाहर कर दिया था, वे राइनलैंड में उतने ही पुराने समय से रह रहे थे जितने पुराने समय से कि जर्मन कबीले स्वयं रह रहे थे और जिन यहूदियों को सन् 1492 में फर्डिनेंड और इसाबेला ने स्पेन से बाहर निकाला था, वे उस प्रायद्वीप में उससे भी पहले से रह रहे थे, जब कि स्पेनी भाषा लैटिन में से निकलकर अलग रूप में विकसित हुई थी। मोरक्को में रोमन साम्राज्य के यहूदियों ने ही 'बर्बर' लोगों को नव-पाषाणिक युग से लौह युग में दीक्षित किया था।

यहूदी लोग उन विशेष लोगों में से केवल एक थे, जो रोमन साम्राज्य में इधर-उधर घूमते फिरते थे। आर्मीनियावासी और सीरियावासी लोग बड़ी संख्या में फ्राँस गए। अरब साम्राज्य के दिनों में ईरानी लोग शराबें; खपरैलें संगीत और काव्य की रचना करने के लिए स्पेन गए। जब फैज़ के संस्थापक मुलाई इदरीस ने अपना तम्बू उस फैज नदी के किनारे पर गाड़ा था, जिसके नाम पर इस नगर का नाम रखा गया, तब उस नदी के किनारे पर उसे यहूदी, ईसाई और 'अग्नि पूजक' वहाँ बसे हुए मिले थे। ऐसा प्रतीत होता है कि जरथुस्त्र के अनुयायी ईरानी लोग अरब लोगों से पहले

फ़ौज पहुँच गए थे।

अरब लोगों ने जिन अनेक राज्यों की स्थापना की थी, उनके अधीन रहते हुए विशेष लोगों की विशेष निपुणताओं का उपयोग करने की प्रणाली अपने चरम शिखर पर पहुँच गई थी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह एक ऐसी वस्तु थी, जिसे उन्होंने सिकन्दरिया के यूनानियों से और सीरियावासियों से सीखा था। ये यूनानी और सीरियावासी, दोनों ही बाइजैण्टाइन साम्राज्य के रहने वाले थे; किन्तु यह चीज़ भले ही कहीं से भी क्यों न आई हो, अरब लोगों ने इसका इसकी स्वाभाविक परिसीमाओं तक पूर्ण विकास किया। उनकी धारणा यह थी कि वे सब सभ्य लोग, जो कुछ कम या अधिक रूप में एकेश्वरवादी थे, ऐसे मानव प्राणी थे, जिनके साथ वे लोग, चाहे अपने को कुछ बड़ा मान कर ही सही, व्यवहार कर सकते थे। ईसाइयों, यहूदियों और ज़रयुश्त्र के अनुयायियों को एक ही राजनीतिक प्रणाली में संगठित किया जा सकता था, बशर्ते कि वे प्रतिपुरुष कर (पोल टैक्स) देते रहे। जो लोग आसानी से प्रान्तों की राजधानियों की पहुँच के अन्दर थे, वे प्रतिपुरुष कर देते भी थे। क्योंकि ये विजातीय 'धर्मग्रन्थ में वर्णित व्यक्ति' उन निषेधों को नहीं मानते थे, जिनका कि मुसलमान पालन करते थे। उदाहरण के लिए बधिया करके हिजड़ा बनाने (जो उन्होंने बाइजैण्टाइन लोगों से सीखा था) का निषेध, शराब के निर्माण और बिक्री का निषेध और व्याज पर उधार देने का निषेध, इसलिए इन लोगों को इन कार्यों के लिए या तो प्रकट रूप से या फिर प्रच्छन्न रूप से नौकर रखा जा सकता था। इसी प्रकार यहूदी लोग भी, जैसा कि मैंने यमन में साना में एक यहूदी के घर में रहते हुए देखा था, प्रव्रजन करके इज़राइल जाने से पहले सैबाथ की संध्या में (जो शुक्रवार की रात होती है) अपने घरों में दीपक जलाने और उन्हें बुझाने के लिए मुसलमान लड़कों को लाया करते थे।

सबसे पहला साम्राज्य : ईरान

ईस्वी पूर्व छठी शताब्दी वह समय था, जिसमें प्रथम सच्चे और पूरी तरह साम्राज्य कहे जा सकने योग्य साम्राज्य का आविर्भाव हुआ। हमादान के प्रदेश में, जिसे कि उस समय अकबताना कहा जाता था, मैदिस कहलाने

वाले लोगों के छः कबीलों ने एक चुने हुए राजा डीयोसीज़ (708—655 ईस्वी पूर्व) के अधीन एक राज्य-मण्डल (कनफैडरेशन) बना लिया था और उन्होंने ईरान के पश्चिमी पठार को संगठित करके एक बना लिया था। ये मेदिस लोग वही थे, जिन्होंने एक ठंडे खुले पहाड़ी क्षेत्र की हरी घास में घुड़सवारी के योग्य बड़े घोड़ों का प्रजनन शुरू किया था। यह प्रदेश इस कार्य के लिए आदर्श प्रदेश था। इन लोगों को उनके दक्षिण की ओर रहने वाले सम्वन्धियों ईरानियों, ने जीत लिया था। इन ईरानियों का देश यद्यपि अक्षाँशों की दृष्टि से नीचे की ओर था, किन्तु तुंगता की दृष्टि से ऊँचाई पर था और इस प्रकार घोड़ों की दृष्टि से उतना ही बढ़िया प्रदेश था। मेदिस लोगों की हत्या करने या उन्हें अपने अधीन कर लेने के बजाय ईरानियों ने उन्हें अपने अन्दर ही घुला-मिला लिया। साइरस द्वितीय 'महान्' जिसका राज्याभिषेक 561 ई० पूर्व में हुआ था, अपने आपको मेदिस लोगों का वंशज बताता था। साइरस द्वितीय ने ही पश्चिम की ओर फैले हुए निचले मैदानी भागों को, जो बहुत समय से एक प्राचीन साक्षर काँस्य युग की सभ्यता के गढ़ बने हुए थे, जीत कर ईरानी साम्राज्य का सूत्रपात किया। उसने और उसके तुरन्त वाद आने वाले राजाओं ने एशिया माइनर, सीरिया, फिलस्तीन, मिश्र, यमन और इथियोपिया तथा अफ़गानिस्तान और मध्य एशियाई मैदानों के कुछ भागों पर भी अधिकार कर लिया।

यह सब उन्होंने अपने एक सुचारु सैन्य संगठन द्वारा किया, जिसे कुलीन सामन्तों का श्रेष्ठ वर्ग चलाता था। इस वर्ग कों लड़कपन से ही पर्सीपोलिस प्रदेश के ठंडे पर्वतीय इलाकों में विशेष रूप से प्रशिक्षण दिया जाता था। इन कुलीन सामन्तों से 10,000 घुड़सवारों का राजकीय रक्षक दल बना था, जो बर्छों और छोटे घुड़सवार सेना के धनुषों से सज्जित होते थे। उन लोगों में से छह अनीकिनियों (कोर) के अफसर नियुक्त किये जाते थे। इनमें से प्रत्येक अनीकिनी में 60,000 सैनिक होते थे और उन सब को मिलाकर 3,60,000 मनुष्यों की एक सेना बनती थी। प्रत्येक अनीकिनी में दस-दस हज़ार सैनिकों की छह चमुएँ (डिविजन) होती थीं। प्रादेशिक सैनिकों को अपनी राष्ट्रीय पोशाकें पहनने और उनके अपने-अपने ढंग के हथियार रखने की अनुमति थी। कुछ सैनिक पैदल चलते थे और कुछ घोड़ों तथा ऊंटों पर सवार रहते थे। क्योंकि सैनिक विभिन्न प्रकार के भूप्रदेशों और विभिन्न जलवायु

वाले स्थानों से आये होते थे, इसलिए इनकी योग्यता बहुमुखी होती थी और यह सेना विशाल होने के कारण खुले भूभागों में डटी हुई छोटी-छोटी सेनाओं के मुकाबले में अजेय हो जाती थी।

साम्राज्य प्रान्तों में विभक्त था, जिन्हें 'सत्रपी' कहा जाता था। इन सत्रपियों की अधिकतम संख्या इकत्तीस थी। इनकी राजधानियाँ विशेष सड़कों द्वारा एक-दूसरे से सम्बद्ध होती थीं। इन महामार्गों की रक्षा सैनिक टुकड़ियाँ करती थीं और इन सड़कों पर डाकवाही घोड़ों की सेवाओं का उपयोग डाक ले जाने वाले घुड़सवार और सरकारी प्रलेखों को ले जाने वाले अन्य यात्री दोनों ही कर सकते थे। प्रत्येक प्रान्त में शक्ति एक असैनिक और एक सैनिक राज्यपाल में बंटी होती थी। दोनों में से कोई भी दूसरे की अपेक्षा प्रवर (बड़ा) नहीं होता था और दोनों में से प्रत्येक स्वतन्त्र रूप से राजधानी को अपनी रिपोर्ट भेजता था। राजधानी अलग-अलग मौसमों में सूसा, बैबीलोन, अकबताना और पर्सीपोलिस में बदलती रहती थी। इसके साथ ही विशेष निरीक्षक भी आते-जाते रहते थे और वे सम्राट् को निजी रूप से अपनी रिपोर्ट देते थे; दोनों राज्यपालों में से कोई भी उनके काम में रुकावट नहीं डाल सकता था। एक कठोर विधान-संहिता का, जो मेदिस लोगों के समय से चली आ रही थीं, बहुत दृढ़ता से पालन किया जाता था और ईराकी न्याय लोकविश्रुत था। प्रादेशिक लोगों को, और सब प्रदेशों के कुछ विशेष लोगों को, जब तक वे राजभक्त रहें, तब तक बेरोकटोक अपने-अपने ढंग से रहने-सहने की छूट थी, प्रत्येक प्रान्त पर मुद्रा के रूप में, या इन दोनों के रूप में कर लगाया जाता था।

ईरानी राजनीतिक संस्था के संगठन के विस्तृत ब्यौरे के विषय में जानकारी उपलब्ध नहीं है। स्वयं राजसभा, जिसमें कि सम्राट् जन-संसर्ग से अलग जीवन बिताता था। कम से कम उतनी जटिल तो अवश्य ही रही होगी जितनी कि प्राचीन मिश्र की राजसभा थी। पर्सीपोलिस में स्थित राजकीय कोषागार में काफी बड़ी संख्या में कर्मचारी नियुक्त थे और 3,60,000 मनुष्यों की सेना में भी कम से कम पाँच पदक्रमों के अफसरों के सोपान-तन्त्र की आवश्यकता रही होगी। इन सब मनुष्यों के खाने-पीने की, उनके लिए शस्त्रों की और अन्य साज-समान की व्यवस्था करने के लिए ही एक विशेषज्ञ

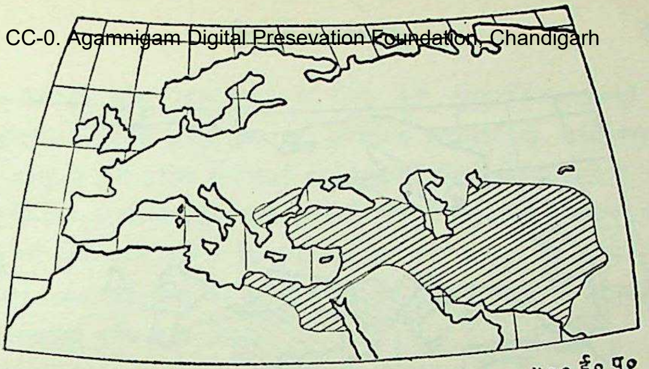

५०० ई० पू०

ईरानी साम्राज्य

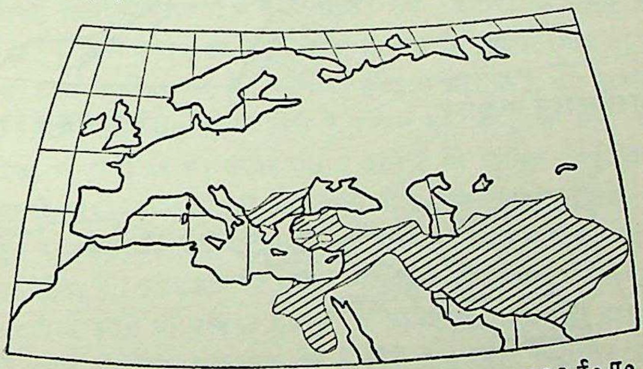

३२३ ई० पू०

सिकन्दर का साम्राज्य

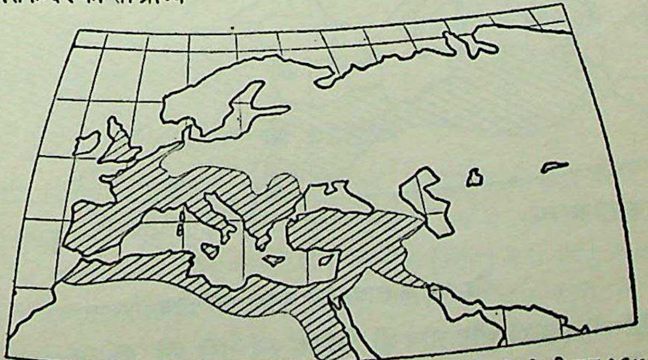

४४ ई० पू० से ईस्वी सन् १६७

रोमन साम्राज्य

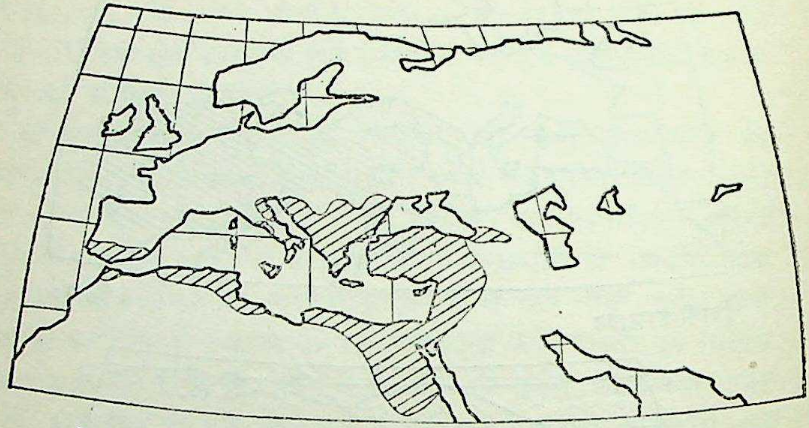

बाइज़ैन्टाइन साम्राज्य ईस्वी सन् ५३३ से ६००

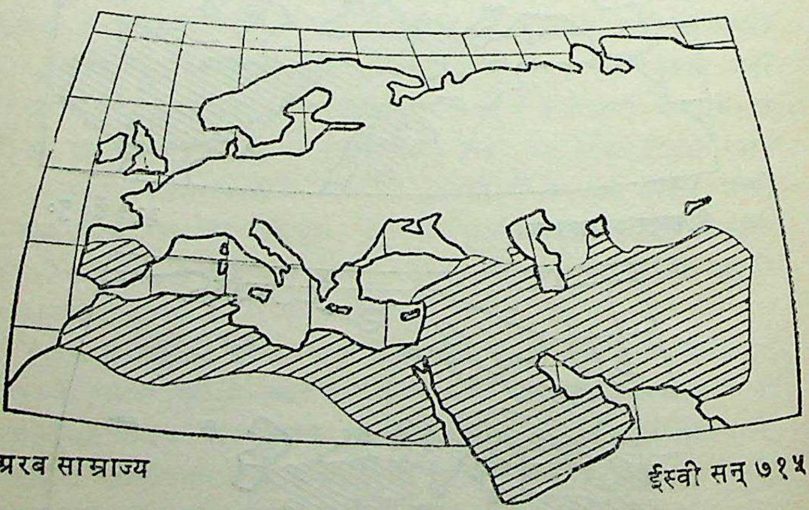

अरब साम्राज्य ईस्वी सन् ७१५

लौह युग के साम्राज्य : उनका अधिकतम विस्तार

अनीकिनी (कोर) और साथ ही लिपिक कर्मचारी वर्ग की आवश्यकता रही होगी। सड़कों और डाक के पड़ावों के संधारण (देखभाल), करों के उगाहने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

निरक्षण सेवाओं और न्यायालयों के लिए कई सरकारी कार्यालयों की आवश्यकता थी, जिनमें सबके सब अपने अभिलेख राजधानी के अभिलेखागार में जमा करते थे। ये प्रलेख सीरियाई वर्ण-माला लिपि में लिखे जाते थे, जो स्मारकों के शिलालेखों के लिए आविष्कृत कीलाकार वर्णमाला से भिन्न थी। इस बात की सम्भावना नहीं है कि 500 ई० पूर्व तक संसार की अन्य कोई राजनीतिक संस्था जटिलता की उतनी सीमा तक पहुँच सकी होगी, जितना कि ईरानी साम्राज्य पहुँच गया था।

'साम्राज्य' शब्द का प्रयोग सामान्यतया काँस्य युग के पिछले भाग की मिश्रवासियों, असीरियावासियों और हिताइतों की सरकारों के लिए आम प्रचलित अर्थ में उसी प्रकार कर दिया जाता है, जैसे कि 'संस्था' शब्द का एक शिथिल-सा आम प्रचलित अर्थ है। तकनीकी दृष्टि से कहा जाय, तो साम्राज्य एक ऐसी जटिल राजनीतिक संस्था होती है, जिनमें एक राष्ट्र के लोग अन्य अनेक राष्ट्रों के लोगों पर इस प्रकार शासन करते हैं कि शासित राष्ट्रों में से प्रत्येक अपनी भाषा, अपने क़ानूनों और अपने रीति-रिवाजों को बनाये रख सकता है। राष्ट्रों का यह संगठन समूचे साम्राज्य के लिए आर्थिक दृष्टि से लाभदायक होता है। इस प्रकार का संगठन परिवहन और संचार संदेश प्रेषण की तकनीकों में उससे भी अधिक सुधारों के फलस्वरूप सम्भव हो पाता है, जो किसी राज्य के लिए आवश्यक होते हैं और इस प्रकार के सुधार अपने आप में उर्जा के उपभोग की दर में हुई वृद्धि पर निर्भर होते हैं। लोहे की कारीगरी ने प्रति व्यक्ति उर्जा के उपभोग में काँस्य-युग के स्तर की अपेक्षा बहुत अधिक वृद्धि कर दी थी।

ऐथन्स का प्रजातन्त्र

यूनानी लोग, जिन्होंने कि ईरानी विस्तार को यूरोप की ओर बढ़ने से रोक दिया था, लौह युग में कभी भी एक राष्ट्र के रूप में संगठित नहीं हो पाये। परन्तु अलग-अलग नगर राज्यों ने अपने संघ (लीग) बना लिए थे और इन संघों के अन्दर जो प्रमुख नगर थे, उन्होंने व्यापारियों और कारीगरों के ऐसे उपनिवेश स्थापित कर लिये थे, जिनका अपनी मातृभूमि के साथ समुद्र द्वारा सम्पर्क बना रहता था। तथाकथित ऐथन्स का साम्राज्य इस प्रकार के

व्यापारिक केन्द्रों का एक जाल जैसा था, जिनका सम्बन्ध ऐथन्स से जुड़ा हुआ था। ईस्वी पूर्व की पाँचवीं और चौथी शताब्दियों में ऐथेन्स की सरकार एक ऐसा प्रजातन्त्र थी, जो लगभग सवा तीन लाख दासों (ड्रोन) के बल पर चल रहा था। केवल 43 हजार व्यक्तियों को राजनीतिक मताधिकार प्राप्त था। ये लोग अत्तिका देहाती इलाकों के रहने वाले स्वतन्त्र किसान थे; और इस नगर के मूल कबीलों के सदस्य थे। नागरिक मनुष्यों में कुछ लोग धनी थे किन्तु अन्य लोगों को अपने निर्वाह के लिए काम करना पड़ता था। विदेशी लोगों (मैटिक) को, जो स्वतन्त्र थे, या दासों को सरकार के बारे में कुछ भी कहने-सुनने का अधिकार नहीं था।

यह प्रणाली अपने आप में एक गाँव के ढंग के शासन का आश्चर्यजनक रूप से आदिमकालीन-सा अवशेष था, जिसमें सारा का सारा समाज घर से बाहर बाज़ार में किसी विषय पर वाद-विवाद करने के लिए और मत देने के लिए एकत्रित होता था। जिन पदों के लिए किसी विशेष प्रकार की कुशलता या क्षमता अपेक्षित नहीं होती थी, उन्हें उसी प्रकार लाटरी डालकर भरा जाता था जैसे हम जूरी के सदस्यों का चुनाव करते है। सेनापतियों का चुनाव या अनिष्टकारी व्यक्तियों का निर्वासन बहुमत द्वारा किया जाता था। ऐथन्स का नागरिक एक ठीकरे पर एक नाम लिख देता था और उसे एक बड़े भाँड में डाल देता था, और इस प्रकार वहाँ गुप्त मतदान होता था। प्रत्येक नागरिक को सैनिक सेवा करनी होती थी और राष्ट्रीय संकट के समय हर व्यक्ति, चाहे वह किसी भी पद पर या किसी भी व्यवसाय में काम क्यों न करता हो, युद्ध में अवश्य जाता था।

ऐथन्सवासी इस प्रकार की सरकार को इसलिए बनाये रखने में समर्थ थे, क्योंकि वे धनी थे। लौरियम में स्थित चाँदी की खानों से राज्य की आय एक सौ टैलेन्ट प्रतिवर्ष होती थी, जो लगभग 6,30,000 डालर या लगभग 30 लाख रुपये के बराबर थी। यह राशी इतनी काफी थी कि इससे उन संगमर्मर की इमारतों और मूर्तियों के निर्माण का खर्च चल सकता था, जिनके कारण ऐथन्स वास्तुकला की दृष्टि से सारे संसार का एक आश्चर्य बना हुआ था। व्यापार अच्छा था। ऐथन्सवासी जहाज़ बनाते थे, उन्हें खेते थे, उनमें भरकर कच्चा माल लाते थे और उससे नया माल तैयार करते थे और तैयार माल का निर्यात करते थे।

इस एक पुरानी परम्परा का अनुसरण करते हुए, कि योद्धा को सदा स्वस्थ रहना चाहिए , ऐथन्स के नागरिक नियमित रूप से व्यायाम और स्नान करते थे और स्वास्थ्य-गठन के लिए प्रयत्नशील रहते थे। औसत नागरिक सरकार की बारीकियों तक जाने में चाहे जितना समय व्यतीत कर सकता था वह अगोरा में होने वाले वाद-विवादों में भाग लेता था, और नाटक देखने रंगशालाओं में भी जाता था, धार्मिक जलूसों में भाग लेता था और दार्शनिकों द्वारा चलाये जा रहे विद्यालयों में भी जाता था।

जहाँ ईरानी सरकार को एक सुव्यवस्थित, गहराई की ओर गया हुआ सोपान-तन्त्र कहा जा सकता है, जिसका केन्द्र बिन्दु सबसे ऊपर सम्राट् का पद था, वहाँ ऐथन्स प्राधिकार के एक-दूसरे से जुड़े हुए भागों का एक ऐसा उथला सा जाल था, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति बारी-बारी से लाटरी द्वारा या चुनाव द्वारा ऊँचे पद तक पहुँच सकता था। यह प्रणाली ठीक-ठीक काम इसलिए करती रही, क्योंकि यह समूह छोटा-सा था और परस्पर सम्पर्क-स्थापन सरल था। परिवहन और संचार (संदेश प्रेषण) के नये साधनों का आविष्कार हुए बिना इस प्रणाली का विस्तार और अधिक विस्तृत क्षेत्रों और अपेक्षाकृत बड़े जन-समुदायों तक नहीं किया जा सकता था। उस समय विद्यमान परिवहन और संचार के साधनों द्वारा राजनीतिक संस्था ज्यों-ज्यों फैलती गई, त्यों-त्यों वह अधिकाधिक लचकहीन (अनम्य) होती गई। इस ढंग का परिवर्तन एक ऐसे प्रजातन्त्रीय नगर राज्य के, जो सिद्धान्ततः ऐथन्स के नगर राज्य जैसा था, आधार से उठकर बने हुए रोमन साम्राज्य के उदय के रूप में प्रकट हुआ, जो ईरानी प्रणाली का एक प्रवर्धित रूप था और जिसमें नागरिकता की धारणा और जुड़ गई थी।

रोमन साम्राज्य

ज्यों-ज्यों रोमन साम्राज्य फैलता गया, त्यों-त्यों इसके अन्तर्गत वे सब देश आते गए, जिन तक भूमध्यसागर के तट से स्थल यात्रा करके पहुँचा जा सकता था और जिनमें सर्दी कम पड़ती है, अर्थात् जहाँ मरुस्थलों को छोड़ कर, जनवरी का औसत तापमान ३२ डिग्री फ़ारनहाइट या इससे ऊँचा रहता है। इसका अर्थ यह था कि रोमन लोग जहाज़ और सैनिक सड़क, दोनों के

द्वारा यात्रा करके किसी भी ऐसे जलवायु वाले प्रदेश तक पहुँच सकते थे, जहाँ उनकी अपने ढंग की नातिशीतोष्ण मौसम वाली भौतिक संस्कृति थोपी जा सकती थी। रोमन सड़कें उन देशों में काम नहीं आ सकती थीं, जहाँ सर्दियों में बहुत अधिक बर्फ़ पड़ती है, क्योंकि बर्फ़ पड़ने पर इन सड़कों को चालू नहीं रखा जा सकता था, और न उन प्रदेशों में, जहाँ तापमान जमाव बिन्दु से भी बहुत नीचे चला जाता है, क्योंकि वहाँ घोर हिमीकरण के फलस्वरूप सड़कों की सतहें टूट-फूट जातीं। रोमन मकान इस दृष्टि से बनाये जाते थे कि वे गर्मियों में ठंडे रहें, न कि इस दृष्टि से कि वे सर्दियों में गर्म रहें, अतः वे घोर शीत वाले प्रदेशों के लिए अनुपयुक्त थे। जिन स्थानों पर पानी जम जाता हो, वहाँ इतने बड़े नगर नहीं बसाये जा सकते थे, जिनमें पानी लाने के लिए कुल्याएँ (नहरें) बनानी पड़ें। रोमनों के वस्त्र इतने गर्म नहीं थे कि वे ठंडे प्रदेशों की सर्दियों में काम दे सकें। रोमन सेनाएँ, जो पैदल कूच करती थीं और भारी कवचों से सज्जित होती थीं, उन मरुस्थल में रहने वाले यायावर (खानाबदोश) लोगों को नहीं हरा सकती थीं, जो ऊंटों पर सवारी करते थे और बर्छों से लड़ते थे। जब इस दृष्टि से देखा जाय, रोमन साम्राज्य की भौगोलिक परिसीमाओं का अर्थ स्पष्ट समझ में आ जाता है। 'बर्बर लोग' अपनी शीत और सूखा की रोकों के पीछे सुरक्षित थे। इस प्रकार के प्रदेशों में वे रोमन संस्कृति के उन तत्वों को, जो उनके लिए अधिकतम उपयोगी थे, अपनी चाल से अपनाते रह सकते थे।

पश्चिम में रोमन साम्राज्य के ह्रास के विषय में बहुत कुछ लिखा गया है और इस ह्रास के अनेक कारण बतलाये गए हैं। एक कारण यह था कि रोमन लोग अपने उद्योगों का यन्त्रीकरण करने में असमर्थ रहे थे। दास-श्रम को बनाये रखना भी इसके अनेक पहलुओं में से एक था। एक और पहलू यह था कि हाथ की मेहनत से पुर्तगाल, या स्पेन में किसी औपनिवेशक नगर के नागरिकों के लिए उन सब वस्तुओं को अपने यहाँ ही तैयार कर पाना सम्भव था, जिनकी कि उन्हें आवश्यकता होती थी। क्योंकि साम्राज्य के हर एक भाग में लगभग ठीक वैसा ही जलवायु होता था, जैसा कि अन्य किसी भाग में, इसलिए वहाँ कोई महत्त्वपूर्ण प्रादेशिक विशेषीकरण नहीं था और

इसलिए तैयार की गई वस्तुओं का विनिमय करना भी आवश्यक नहीं था। जब रोमन सभ्यता की नकल उपनिवेशों में स्वयं रोम की अधिकाधिक अनुकृति के साथ की जाने लगी, तो मातृ-नगर (रोम) और पुत्री-नगरों (उसकी नकल पर बने अन्य नगर) के स्तर में अन्तर बहुत कम हो गया। मार्सेलस नगर में, जहाँ स्नानागार और सर्कस रोम जितने ही मनोरंजक थे, रहना उतना ही आनन्ददायक था, जितना कि रोम में रहना। केन्द्रीकरण के लिए प्रेरक कारण जाता रहा था। ये आत्मनिर्भर उपनिवेश साम्राज्य से अलग हो कर प्राकृतिक, भौगोलिक और जातीय इकाइयाँ बन गए और अन्ततोगत्वा, जैसा कि पुर्तगाल, स्पेन, फ्राँस और इटली के विषय में हुआ, राष्ट्र बन गए। वर्तमान शताब्दी के आरम्भ तक इन देशों के लिए स्वतन्त्र रहना किसी एक साम्राज्य के अंग बनकर रहने की अपेक्षा अधिक भला था। जैसा कि अंग्रेजों ने भारत में किया, रोमन लोगों ने अपनी संस्कृति को इतने अधिक व्यापक रूप से और इतने अधिक सुचारु रूप से फैला दिया था कि उसके बाद उस पर उनका राजनीतिक नियन्त्रण सदा नहीं बना रह सकता था।

इस बीच में उत्तरी यूरोप से वे लोग, जिन्होंने साबुन, सामान रखने के ढोल, बूट और पतलून जैसे अ-रोमन उपकरणों का आविष्कार किया था, अपने पशुओं के रेवड़ों को लेकर सारे साल हरे रहने वाले चरागाहों की खोज में धीरे-धीरे दक्षिण की ओर बढ़ रहे थे। ईस्वी पूर्व की पाँचवी शताब्दी में, जब भूमध्यसागर के प्रदेशों पर कैल्ट और ट्यूटन लोगों के सर्वप्रथम आक्रमण हुए थे, स्कैण्डिनेविया और उत्तरी सागर के समुद्र तटों का जलवायु एकाएक पहले की अपेक्षा अधिक शीतल और आर्द्र हो गया था। मौसम के इस परिवर्तन से पहले जहाँ ये जर्मन भाषा-परिवार के कबीले अपने पशुओं को सर्दियों में जंगलों और चरागाहों में चरते रहने देते थे, वहाँ इस मौसम परिवर्तन के बाद वे उन पशुओं को पशुशालाओं में रखकर सूखी घास, पेड़ों की छाल और पत्तों वाली टहनियाँ खिलाकर पालने को विवश हो गए; और इसके लिए बहुत समय और परिश्रम की आवश्यकता होती थी।

जिस समय रोमन शासन अन्य कारणों से खंड-खंड हो गया था, उस समय तक फ्रैंकों और गोथों और विसीगोथों तथा अन्य जर्मन जातियों के समूचे कबीले और राष्ट्र दक्षिण की ओर बढ़ रहे थे। ज्यों-ज्यों फ्राँस और स्पेन जैसे

देशों के शासक वर्गों में सुसंस्कृत उत्तरी लोग अधिक आते गए, त्यों-त्यों उनकी दृष्टि में केन्द्रीय इटली के एक नगर की, चाहे वह कितना ही प्रख्यात क्यों न हो, जनता का भरण-पोषण करने का औचित्य समाप्त होता गया। रोम के पतन के सम्बन्ध में मुझे कुछ भी रहस्य दिखाई नहीं पड़ता. अपितु एक सम्मिश्रित-सा चित्र दिखाई पड़ता है, जिसके कुछ अंश स्पष्ट हैं; न मुझे रोम के इस पतन में कोई वैसी महाविपत्ति ही दिखाई पड़ती है, जैसी कि उन इतिहासकारों द्वारा चित्रित की गई है, जिनका दृष्टिकोण भूमंडलीय न होकर स्थानीय रहा है।

आखिरकार रोम एक साम्राज्य के रूप में लुप्त तो नहीं हो गया, अपितु उसने केवल अपना राजनीतिक केन्द्र हटाकर बाइजैण्टियम में स्थापित कर लिया। बास्पोरस के तट पर स्थित राजधानी से रोमन जहाज़ और रोमन सेनाएँ विविध प्रकार के जलवायु वाले प्रदेशों तक पहुँच सकती थीं। इन प्रदेशों में यूक्रेन के तरूहीन मैदान, अनातोलिया और बाल्कन देशों के पर्वतीय प्रदेश, और मिश्र, फिलस्तीन और सीरिया के पुराने प्रान्त सम्मिलित थे। जब इनमें से ये अन्तिम तीन प्रान्त छठी और सातवीं शताब्दी में अरब लोगों के अधीन हो गए, तब साम्राज्य का केन्द्र-बिन्दु और उत्तर की ओर हट गया, जहाँ कि स्लावी कबीले डैन्यूब नदी को पार कर रहे थे। इन कबीलों को बाइज़ैण्टाइन लोगों ने उसी प्रकार सभ्य बनाया, जैसे कि पश्चिमी लोगों ने जर्मन वासियों को बनाया था। इस प्रकार इस फटाव में केवल इटली-वासियों और यूनानियों के मध्य ही नहीं, अपितु जर्मनवासियों और स्लाव लोगों के मध्य फटाव भी सम्मिलित था। यह विभाजन अब तक भी चला आ रहा है।

यद्यपि रोम के विषय में हज़ारों पुस्तकें लिखी गई हैं, किन्तु उनमें से एक में भी उस साम्राज्य की सरकार के संगठन की एक बढ़िया तालिका नहीं दी गई। क्योंकि पाठक के सामने भी अध्ययन के लिए वे सब स्रोत खुले हुए हैं, जो कि इस पुस्तक के लेखक के लिए खुले हैं, इसलिए मेरी भाँति उसे भी यह पता है कि रोमन सरकार का यह संगठन एक ऐसी दफ्तरशाही (ब्यूरोक्रेसी) था, जो औद्योगिक क्रान्ति के समय तक सारे संसार के किसी भी देश में पाई जाने वाली दफ्तरशाही से कम जटिल नहीं थी। इस दफ्तरशाही में एक वर्ग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के लोग, जिन्हें रोमन नागरिक कहा जाता था, उस साम्राज्य में, जो उन्हें सम्पूर्ण ब्रह्मांड प्रतीत होता था, कहीं भी स्वतन्त्रतापूर्वक आ जा सकते थे। बाइज़ैण्टाइन शासन प्रणाली की, जो रोमन शासन प्रणाली का ही एक सीधा विस्तार और उसी में से निकला हुआ रूप थी, कार्यविधि के विषय में हमें कहीं अधिक जानकारी है।

बाइजैण्टाइन दफ्तरशाही[1]

बाइज़ैण्टाइन साम्राज्य की राजनीतिक संस्था कभी जड़ नहीं हुई। नई परिस्थितियों का सामना करने के लिए उसमें समय-समय पर परिवर्तन होते रहे। इस समय मैं जो वर्णन करने लगा हूँ, वह मूलत: कौन्स्टैंटाइन के काल की, ईसाइयत के राजधर्म बन चुकने के बाद की दशाओं का चित्रण है। सैनिक और असैनिक कमान को पृथक् कर दिया गया था और प्रान्तों का आकार छोटा कर दिया गया था, जिससे विद्रोह न हो। जहाँ पश्चिमी साम्राज्य में कैथोलिक चर्च साम्राज्य की शक्ति के स्थान पर धार्मिक शासन स्थापित करने के लिए उठ खड़ा हुआ था और उसने भूतपूर्व प्रान्तों को एक साँस्कृतिक एकता में गूंथ दिया था, वहाँ पूर्वी साम्राज्य में राज्य ने अपने प्राधिकार को कभी नहीं छोड़ा। यह साम्राज्य चार 'प्रिफैक्चरों' में विभक्त था, जिनमें से प्रत्येक प्रिफैक्चर एक 'प्रायटर प्रिफैक्ट' (दंडनायक) के अधीन होता था। प्रत्येक प्रिफैक्चर 'डायोसीज़ों' में बँटा होता था, जो एक-एक 'विकार' के अधीन होते थे और प्रत्येक डायोसीज़ प्रान्तों में बँटा होता था, जो राज्यपालों के अधीन होते थे। 'विकार' और उससे ऊपर के स्तर के इन सब पदाधिकारियों की नियुक्ति सम्राट् स्वयं करता था और ये सब पदाधिकारी अपनी रिपोर्ट सम्राट् को सीधे भी, और अपने से उच्चतर पदाधिकारियों की मार्फत भी भेजते थे। अपने ईरानी पूर्ववर्ती सम्राट् की भाँति बाइजैण्टाइन सम्राट् भी विशेष निरीक्षक भेज सकता था। 'प्रिफैक्ट' का एकमात्र सैनिक कर्त्तव्य सैनिकों को भर्ती करना और रसद का संभरण करना होता था।

---

[1] देखिए ऐन० ऐच० बेनैस की पुस्तक 'दि बाइजैण्टाइन ऐम्पायर'; प्रकाशक हैं—हैनरी होल्ट एण्ड कम्पनयू ी, न्यूार्क, 1926।

प्रिफैक्ट से राज्यपाल तक असैनिक पदाधिकारियों के साथ-साथ उन्हीं के स्तर के सैनिक अधिकारी भी नियुक्त रहते थे।

राजधानी में 'मास्टर ऑफ़ आफ़िसिज़' (कार्यालय-अध्यक्ष) प्रधान मंत्री के रूप में काम करता था। वह राजमहल के रक्षकों और शस्त्रागार पर नियन्त्रण रखता था। प्रान्तीय प्रशासकों से प्राप्त होने वाले सब संचारण (चिट्ठी-पत्री) उसके हाथों में से होकर गुज़रते थे, क्योंकि वही महा-डाकपाल होता था। वह इस दृष्टि से विदेश-मन्त्री भी होता था कि वह राजदूतों का सम्राट् से परिचय कराता था और वह सिविल सेवा का अध्यक्ष भी था। यह सिविल सेवा चार बड़े विभागों (ब्यूरो) में बँटी हुई थी। इन विभागों में कई हज़ार व्यक्ति पदावधि और प्रवरता की एक अनम्य प्रणाली के अन्तर्गत रह कर काम करते थे और उनकी पदोन्नति के लिए एक नियमित सोपान होता था।

राजकीय कोषागार दो कार्यालयों में विभक्त था। एक तो 'काउंट ऑफ़ दि सैक्रिड लार्गेसिज़' (पवित्र उपहारों का गणक) जिस पर साम्राज्य के प्रमुख वितीय दायित्वों की ज़िम्मेदारी थी और दूसरा 'काउंट ऑफ़ प्राइवेट ऐस्टेट्स' (निजी सम्पदा गणक) जो उन सम्पदाओं का प्रबन्ध करता था, जिन्हें उससे पहले के सम्राटों ने ज़ब्त किया होता था। एक तीसरे प्रकार का कोषागार वह था, जो प्रत्येक प्रिफैक्चर का होता था; सेना की वितीय आवश्यकताएँ इस कोषागार से ही पूरी की जाती थीं। सैनिक बजट की मदों में केवल वह सेना ही सम्मिलित नहीं थी, जिसका कि भरण-पोषण राजधानी से बाहर रहने की दशा में इस बजट द्वारा किया जाता था, अपितु नौ-सेना, दुर्ग, शस्त्रास्त्र और वेतनभोगी सैनिकों का वेतन भी इनमें सम्मिलित था। यह अकेला सबसे बड़ा बजट था, क्योंकि साम्राज्य की एकता इस पर निर्भर थी। एक और बड़ा बजट राजसभा का था, जो उसके विशद समारोहों का, जिनमें जलूस और राजकीय यात्राएँ, चर्च और राज्य के उच्च कर्मचारियों को उपहार, और नगर के ग़रीब लोगों को दान देना भी सम्मिलित था, प्रबन्ध करने के लिए होता था। आजकल की भाँति उस समय भी बास्पोरस के आस-पास भूकम्प आया करते थे। इस प्रकार की विपत्तियों का सामना राज सभा के बजट की विशेष मदों में से और उस विपत्ति से प्रभावित क्षेत्रों के

निवासियों को करों की माफ़ी देकर किया जाता था।

सार्वजनिक इमारतें एक अलग अनुसूची में थीं और जनता को मुफ्त भोजन बाँटने के लिए भी एक अलग निधि थी; इस भोजन में रोटी, माँस, तेल और शराब होती थी। एक पाँचवाँ बजट सड़कों, पुलों, कुल्याओं, हौज़ियों और नगर की दीवारों के संधारण के लिए होता था, और एक छठे बजट में धार्मिक संस्थाओं के लिए धन की व्यवस्था रहती थी : ये धार्मिक संस्थाएँ अस्पताल, वृद्धों, अनाथों, गर्भवती स्त्रियों और सेवानिवृत वेश्याओं के लिए बनाये गए निवासस्थान होती थीं। इन संस्थाओं को चलाने के लिए धन केवल राजकोष से ही नहीं, अपितु व्यक्तियों द्वारा दिये गए उपहारों से, जो कर मुक्त होते थे, भी प्राप्त होता था।

राजकोषागार जिस धन के लिए बजट बनाता था, वह अनेक स्रोतों से प्राप्त होता था। यदि कोई पुरुष उत्तराधिकारियों के बिना और वसीयत किए बिना मर जाता था, तो राज्य उसकी सारी सम्पत्ति ले लेता था। कभी-कभी प्रजा-जन स्वेच्छा से भी उपहार देते थे। ऐसा माना जाता था कि सरकारी कर्मचारी भी अपनी नियुक्ति के लिए बड़ी मात्रा में धन देते थे। अनातोलिया के कुछ शासित प्रदेश सीधे राजकोषागार में धन जमा कराते थे और शेष बजट करारोपण द्वारा पूरा किया जाता था। कर समय-समय पर बदलते रहते थे। परन्तु साधारणतया उनमें भूमि कर, पाँच प्रतिशत उत्तराधिकार कर, सब कला-कौशलों और व्यापारों पर आय कर, और राज्याभिषेकों, वार्षिक उत्सवों और सैनिक विजयों को मनाने के लिए किए जाने वाले विशेष समारोहों का खर्चा चलाने के लिए एक विशेष कर होता था। बाज़ार कर, न्यायालय में किये गए जुर्माने, बन्दरगाहों से प्राप्त राशियाँ और चुंगी इनसे भी अतिरिक्त धन राशि प्राप्त होती थी। अबाइदोस में, जो सूडान की सीमा पर एक पुरानी मिश्री सीमान्त चौकी थी, चुंगी अफसर मसालों, खालों, हाथी-दाँत, क़ीमती पत्थरों, रंगों, दासों सेवकों और हिजड़ों के आयात पर कर लगाते थे। भूमिकर के द्वारा स्थानीय बड़े-बड़े जमींदार सीधे रूप में साम्राज्य के आर्थिक ढाँचे के अन्दर आ जाते थे; यह प्रणाली पश्चिम में विकसित हुई उस प्रणाली से उल्टी थी, जिसमें कि जमींदार राज्य को धन के बजाय सैनिक सेवाएँ दिया करते थे। पूर्व में सैनिक सेवा जमींदारों के हाथ से लेकर पूरी

तरह सेना को सौंप दी गई थी। परन्तु पूर्व में इस अर्थ में सेवाएँ भी दी जानी अपेक्षित होती थीं कि यात्रा करने वाले कर्मचारियों को सब जगह आतिथ्य और डाक के घोड़ों का उपयोग करने की माँग करने का अधिकार था।

न्याय सम्राट् के अधीन एक जगह केन्द्रित था। सम्राट् को क़ानून बनाने, उनकी व्याख्या करने और अपील के सर्वोच्च न्यायालय के रूप में कार्य करने का अधिकार था, हालाँकि जब उसे कोई कठिन क़ानूनी प्रश्न तय करने होते थे, तो वह स्वयं बारह न्यायाधीशों के एक उच्च न्यायालय से सलाह लेता था। नगर में 'प्रायटर प्रिफैक्ट' जो महापौर (मेयर) के रूप में काम करता था, एक 'क्वैस्टर' (न्यायाधीश) की सहायता से न्याय का कार्य भी संभालता था। प्रान्तों में स्थानीय न्यायालयों में स्थानीय मामलों की सुनवाई हुआ करती थी। धार्मिक न्यायालय पादरियों के मामलों का और ऐसे किन्हीं भी दीवानी मामलों का, जिन्हें कि दोनों पक्ष उन्हें सौंपना चाहते हों, निर्णय किया करते थे। विवाह और धार्मिक संस्थाओं से सम्बन्धित सब विषय इन धार्मिक न्यायालयों में ही जाते थे।

सेना का आरम्भ शुरू में पदाति सेना के रूप में हुआ था, किन्तु सन् 378 में घुड़सवार गोथ लोगों की एक सेना द्वारा सम्राट् की सेनाओं की पराजय के बाद उसे घुड़सवार सेना में बदल दिया गया था। सीजर के काल का प्रायटरी रक्षक दल समाप्त कर दिया गया था और दो नई अनीकिनियाँ (कोर) बनाई गई थीं। इनमें से एक चलता-फिरता 'राजकीय रक्षा दल' था, जिसे कहीं भी भेजा जा सकता था, यह एक सीमान्तीय सेना थी, जिसके अफसरों को उत्तराधिकार युक्त जागीरें दी जाती थीं। दूसरी अनीकिनी 'राजमहल रक्षादल' थी, जो दो पुरानी सेना-अनीकिनियों (आर्मी कोर) से बनाई गई थी। सारी सेना के प्रधान सेनापति को 'ऐग्जार्क' कहा जाता था। उसके नीचे दो 'मास्टर' (मैजिस्टर) होते थे, जिनमें से एक घुड़सवारों का और दूसरा पदातियों का अध्यक्ष होता था और उनमें से प्रत्येक के नीचे एक 'जनरल' (डक्स) होता था, जो प्रत्येक सीमान्त स्थित प्रान्त में सीमान्तीय सेना का अध्यक्ष होता था।

सातवीं शताब्दी में साम्राज्य को फिर नये सिरे से सात भागों में बाँट दिया गया, जिन्हें 'थीम' कहा जाता था। इनमें से प्रत्येक का शासक एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सैनिक राज्यपाल होता था, जिसका ओहदा असैनिक राज्यपाल की अपेक्षा ऊँचा होता था। सैनिक राज्यपाल का ओहदा जनरल (स्ट्रैटैगोस) का होता था और उसके हाथ में दस हज़ार सैनिकों की एक अनीकिनी की कमान होती थी। यह अनीकिनी पाँच-पाँच हज़ार सैनिकों की दो ब्रिगेडों में विभक्त होती थी; और ब्रिगेड का अध्यक्ष ब्रिगेडियर होता था। प्रत्येक ब्रिगेड पाँच रेजीमैण्टों में बटी होती थी, जिनके अध्यक्ष कर्नल होते थे और प्रत्येक रेजीमैण्ट दो-दो सौ सैनिकों की पाँच-पाँच कम्पनियों में विभक्त होती थी। इन कम्पनियों के अध्यक्ष कप्तान होते थे। प्रत्येक कम्पनी दस-दस सैनिकों के बीस स्क्वाडों में विभक्त होती थी। स्क्वाडों के अध्यक्ष कार्पोरल होते थे।

भारी घुड़सवार सेना इस्पात की टोपियों, लम्बी कवच की कमीज़ों, बाहुत्राणों, लोहे के जूतों, चौड़ी तलवारों, कृपाणों, बर्छों और छोटे धनुषों से सज्जित होती थी। अगली पंक्तियों के घोड़ों को लोहे के वक्षस्त्राण और मस्तकत्राण पहनाये जाते थे। हल्की घुड़सवार सेना के सैनिक कवच पहनते थे और धनुष लिये रहते थे। भारी पदाति सेना कवच वाली कमीज़ें, इस्पात के शिरस्त्राण धारण करती थी और तलवारों, बर्छों और फरसों से लड़ती थी। हल्की पदाति सेना के लोग धनुष लिये होते थे, जिनमें से प्रत्येक के पास चालीस बाण होते थे, या फिर वे भालों का एक गट्ठर लेकर चलते थे। चिकित्सक-अनीकिनी में घुड़सवार वाहक लोग होते थे, जो घायल सैनिकों को उठाकर सेना के पृष्ठ भाग में चिकित्सकों के पास ले जाते थे। इंजीनियरों की अनीकिनी पशुओं की पीठ पर नौकाओं (पोन्टून) के खंड लादकर चलती थी, जिन से किसी धारा के ऊपर तुरन्त पुल बनाया जा सकता था। ये इंजीनियर लोग ही शिविरों के चारों ओर दीवारों और खाइयों की किलेबन्दी भी करते थे। सेनापति और विशेषज्ञ अनीकिनियों के अधिकारी सामरिक कला और पैंतरेबाज़ी पर लिखी गई अनेक पुस्तकों से ज्ञान प्राप्त कर सकते थे। यूरोप के तथाकथित सारे अन्धकारपूर्ण युग में बाइज़ैण्टाइन साम्राज्य की 1 लाख 60 हज़ार से भी अधिक सैनिकों की, जो निरन्तर सेवा में रहते थे, एक स्थायी सेना रही थी और इसके अतिरिक्त लगभग 40 हज़ार मनुष्यों की एक नौ-सेना भी थी। बाइज़ैण्टाइन साम्राज्य अपने अस्तित्व की सारी सहस्राब्दी में संसार का एकमात्र निरन्तर संगठित और कार्यशील

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

साम्राज्य था ।

परन्तु वे तथाकथित बर्बर लोग, जिनके हम (अमेरिकनों) में से अधिकांश लोग वंशज हैं, एकदम वैसे असभ्य और गंवार नहीं थे, जैसा कि अनेक इतिहासकारों ने उन्हें बताया है । टैसिटस ने जर्मनवासियों की बहुत प्रशंसा है; उसने उनके गुणों की प्रशंसा उस वस्तु को धिक्कारते हुए की है, जिसे वह रोमन समाज का पतन समझता था; परन्तु उसने इस विषय में विशेष कुछ नहीं लिखा कि उन लोगों का संगठन किस प्रकार का था । परन्तु यह बात समझ में आती है कि लाखों व्यक्ति अपनी बैलगाड़ियों, तम्बुओं, ढोरों, स्त्रियों, बच्चों और घुड़सवारों के साथ विस्तृत मैदानी क्षेत्रों के पार किसी प्रकार की राजनीतिक संरचना के बिना न जा सके होंगे । गैर ईसाई सैक्सनों, स्कैंडिनेवियावासियों और आयरलैंड के कैल्टों के सम्बन्ध में इस प्रकार की संरचनाओं का ज्ञान हमें है ।

गर-ईसाई आयरलैंड का स्वर्ण युग

आयरलैंड, जिसे रोमन लोग कभी जीत नहीं पाये, चार राज्यों में विभक्त था : अलस्टर, मुंस्टर, कनौट और लाइंस्टर । जहाँ ये चारों राज्य परस्पर मिलते थे, उस जगह प्रत्येक राज्य के विशेष समारोहों के मैदान थे, जहाँ खेलें, धार्मिक कृत्य और वाणिज्य हुआ करता था । ईस्वी सन् 130 में जब ओ' नीलों ने आयरलैंड को संगठित करके एक किया, तब इन चारों राज्यों के इनके एक जगह मिलने वाले चारों कोनों को मिलाकर एक पाँचवाँ प्रान्त बना दिया गया, जिसका नाम 'मीथ' रखा गया और इसकी राजधानी 'तारा' में बनी । यह 'तारा' लाइंस्टर का प्राचीन सभा-स्थल था । मीथ, जो आयरलैंड का सब से अधिक समृद्ध प्रदेश था, राजसभा का भरण-पोषण करने में समर्थ था ।

प्रत्येक प्रान्त मूलभूत इकाइयों में बंटा हुआ था, जिन्हें 'तुआथ' अर्थात् जन कहा जाता था । मूलतः 'तुआथ' शब्द कबीले का वाचक था, किन्तु कालान्तर में यह भूमि की इकाई का वाचक बन गया । एक तुआथ तीस 'बल्लियों' अर्थात् कस्बों के बराबर होता था; एक 'बल्ली' बारह 'सैसरिकों' अर्थात् जोतों के बराबर होती थी और एक जोत आयरलैंड के 120 एकड़ों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

के बराबर होती थी। 'बल्ली' इतनी भूमि होती थी कि जिस पर तीन सौ गौओं को चराकर पाला जा सकता था और 'जोत' उतनी भूमि होती थी कि जिस पर एक अकेला हलवाहा साल भर में खेती कर सकता था। आयरलैंड में कुल मिलाकर एक सौ चौरासी तुआथ (जन) थे।

'अरि-री' अर्थात् महाराजा तारा में शासन करता था। उसके अधीन पाँच प्रान्तीय राजा थे (मुँस्टर एक पूर्वी और एक पश्चिमी राज्य में विभक्त था) और उनमें से प्रत्येक के अधीन अनेक 'काउंटी राजा' होते थे। काउंटी राजा 'मोर तुआथ' अर्थात् महाजन कहलाता था। प्रशासनिक सोपानतन्त्र में 'काउंटी राजा' के नीचे 'तुआथ प्रमुख' होता था, जिसे 'पर्वतों और शिखरों का राजा' कहा जाता था। इस चार-सोपानी प्रशासनिक संगठिन के अलावा आयरलैंडवासी पाँच सामाजिक श्रेणियों को मानते थे, जो ऊपर गिनाये गए राजाओं से शुरू होती थीं। श्रेणी संख्या दो में वे कुलीन लोग आते थे, जो विभिन्न पदक्रमों के राजाओं की जागीरों के अलावा बाकी सब ज़मीनों के स्वामी थे। ये कुलीन लोग उनकी जागीरों के आकार, उन जागीरों पर काम करने वाले किसानों की संख्या के आधार पर फिर चार श्रेणियों में उपविभक्त थे और प्रत्येक श्रेणी के सदस्यों को एक नियत संख्या में ही सशस्त्र रक्षक, घुड़सवार, कवि, बैगपाइप बजाने वाले तथा अन्य आश्रित व्यक्ति रख सकने का अधिकार था; जब वे कुलीन लोग औपचारिक अवसरों पर घोड़ों पर सवार होकर देहात में जाते, तब ये सब लोग उनके साथ चल सकते थे।

तीसरी श्रेणी में 'बो एयर' अर्थात् पशु-पालक नेता आते थे; इनकी अपनी खेतों में बनी हुई इमारतें होती थीं और पशु भी इनके अपने होते थे, किन्तु खेती के लिए भूमि ये कुलीन लोगों से किराये पर लेते थे। चौथी श्रेणी में वे बिना जायदाद वाले स्वतन्त्र लोग होते थे, जो कुलीन लोगों से भूमि किराये पर लेते थे, या 'बो एयर' लोगों से अनुभाटकन (उप किराये) पर भूमि ले लेते थे और यदि ये लोग काफ़ी समृद्ध हो जाते, तो वे तीसरी श्रेणी में पहुँच सकते थे। कारीगर लोग भी स्वतन्त्र व्यक्ति थे। बड़े-बड़े कारीगर और धातु का काम करने वाले सब कारीगर तीसरी श्रेणी में आते थे, जब कि यात्रा करने वाले लोग और धातु से इतर व्यवसायों के शिक्षु लोग चौथी श्रेणी में रखे गए थे। पाँचवीं श्रेणी फिर एक मिली-जुली श्रेणी थी, जिसे भृत्य (बौंड)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वर्ग कहा जाता था। इसके सदस्य अन्य लोगों से ठेके नहीं कर सकते थे और न भूमि का स्वतन्त्र रूप से उपयोग कर सकते थे। कुछ ऐसे आदिवासी लोग भी थे, जिन्हें कबाइली प्रदेश में रहने के अधिकार के अलावा और कोई अधिकार न था और ये लोग ग्वालों, मज़दूरों या घरेलू नौकरों के रूप में काम करते थे। अन्य लोग दास थे, जो अधिकांशतः इंग्लैंड से आये हुए थे। ये दास फिर दो भागों में विभक्त थे; एक तो वे, जो कुलीन लोगों के यहाँ सेवा करते थे, और दूसरे वे, जो बिना पदवी वाले स्वतंत्र लोगों के यहाँ काम करते थे। किसी भी मनुष्य को देखकर उसका ओहदा बता पाना सरल था, क्योंकि हर श्रेणी के लोग अपनी वेश भूषा में जितनी संख्या के रंगों का प्रयोग कर सकते थे, वह नियत थी। दास लोग केवल एक रंग के कपड़े पहन सकते थे; चौथी श्रेणी के लोग दो रंग के, और इसी प्रकार यह क्रम बढ़ते-बढ़ते राजा और रानी तक पहुँचता था, जो छह रंगों के कपड़े पहनते थे।

उत्तराधिकार ज्येष्ठ पुत्र का नहीं होता था, अपितु राजकीय कुल में से चुनाव द्वारा होता था। राजा पद के लिए उम्मीदवार व्यक्ति का शारीरिक दोषों से रहित होना आवश्यक होता था। जब एक राजा कौमक की एक आँख युद्ध में जाती रही, तब उसने सिंहासन त्याग दिया था। नया राजा पुराने राजा के मरने से पहले ही चुन लिया जाता था और उसका भरण-पोषण सार्वजनिक भूमियों की आय से राजा के बाद दूसरे नम्बर पर सबसे ऊँचे ओहदे वाले व्यक्ति के रूप में, पुराने राजा की मृत्यु तक किया जाता था। कुछ विशेष परिवारों को यह आनुवंशिक अधिकार प्राप्त था कि वे प्रत्येक राजा का अभिषेक करें; ओ' हैगन्स और ओ' कैहन्स परिवार 'तारा' के ओ' नील राजाओं का अभिषेक समारोह करवाया करते थे। राज्याभिषेक के बाद महाराज अपने देश का दौरा करता था। यह दौरा सारे द्वीप के चारों ओर उसी दिशा में होता था जिस दिशा में कि घड़ी की सुइयाँ चलती हैं। इस दौरे में समुद्र राजा के बायें हाथ की ओर रहता था। महाराजा अपने विभिन्न ओहदों वाले सब उपराजाओं के यहाँ जाता था और वे बड़ी धूमधाम से उसका आतिथ्य करते थे। ये छोटे राजा महाराजा को भोजन और देहात में होने वाली उपजों के रूप में उपहार दिया करते थे और उसके बदले में महाराज उन्हें शानदार वस्तुएँ, जैसे शस्त्र, कवच, और समारोहों के

अवसर पर मदिरा पान करने के लिए सींग के बने हुए पात्र भेंट में देता था। इस विनिमय में प्रत्याशित सब उपहारों और भेंटों की बिलकुल सही-सही सूची इस अवसर पर पढ़कर सुनाई जाती थी और महाराजा की किसी भेंट को स्वीकार करने से इन्कार करना विद्रोह का प्रतीक होता था। प्रत्येक जिले में होस्टलों जैसे सार्वजनिक भवन बने होते थे। ये एक-दूसरे से इतने दूर होते थे कि वहाँ तक पैदल चलकर पहुँचा जा सकता था; इन भवनों में यात्रियों का उनके ओहदे के अनुसार सार्वजनिक खर्च से आतिथ्य किया जाता था। इस आतिथ्य करने वाले कर्मचारी वर्ग का अध्यक्ष एक 'ब्रैवी' अर्थात् आतिथ्यकर्ता होता था। अपने राज्य की परिक्रमा करते समय महाराजा इन सार्वजनिक भवनों में ही ठहरा करता था।

राजधानी में 'तारा' की पहाड़ी पर उसका एक राजकीय प्रशाल (हाल) था, जो 700 फुट लम्बा और लगभग 70 फुट चौड़ा था। उसके दोनों पार्श्वों में छह या सात दरवाज़े थे और उत्तर की ओर एक मुख्य प्रवेश द्वार था। यह प्रशाल लम्बाई की ओर पाँच पट्टियों में बंटा हुआ था। बीच की पट्टी में भट्टियाँ और कड़ाह होते थे, जिन में सहभोजों के लिए माँस पकाया जाता था। इस पट्टी के दोनों ओर भूमि के स्तर पर ही बैठने के आसनों की पंक्तियाँ चली गई थीं, जिनके पास बैंचें रखी रहती थीं, जब कि दीवारों के साथ-साथ बैठने के लिए ऊँचे आसन बने हुए थे। इस प्रशाल में औपचारिक समारोहों के अवसर पर सब ओहदों और व्यवसायों के लोग इकठ्ठे होते थे और साथ मिलकर भोजन करते थे। इन आसनों के कोष्ठों और बैठने की व्यवस्थाओं की सूची नयाचार का एक उतना ही विशद नमूना है, जितना कि कभी भी किसी आतिथेय महिला या किसी बड़े कुनबे के प्रबन्धक के सम्मुख आया होगा, और इससे उस राज्य के अन्दर विद्यमान राजनीतिक और आश्रित संस्थाओं की सोपान-तंत्रात्मक जटिलता की एक पक्की कुंजी प्राप्त हो जाती है।

राजा के साथ सदा दस-दस व्यक्तियों का एक अनुचर वर्ग रहा करता था, उनमें एक कुलीन सामन्त, एक न्यायाधीश, एक पुरोहित (जिसे बाद में 'विशप' कहा जाने लगा), एक क़ानूनों का ज्ञाता, एक कवि, एक इतिहासवेता एक संगीतज्ञ और तीन सेवक होते थे। इसके अलावा कम से कम चार सैनिकों का एक सशस्त्र रक्षक वर्ग होता था, जिसमें कभी-कभी राजा का 'चैम्पियन' भी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

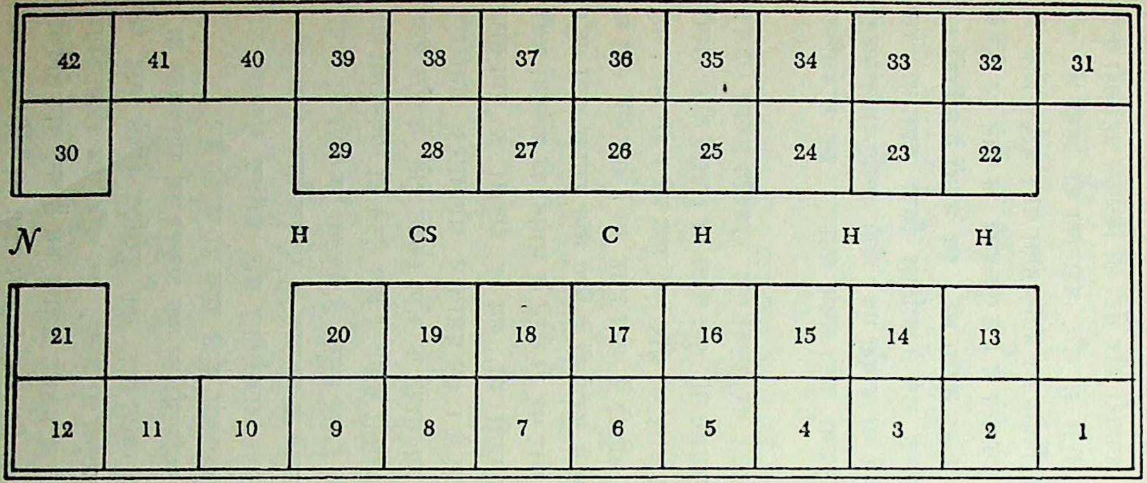
42
41
40
39
38
37
36
35
34
33
32
31
30
29
28
27
26
25
24
23
22
N
H
CS
C
H
H
H
21
20
19
18
17
16
15
14
13
12
11
10
9
8
7
6
5
4
3
2
1

दायें सिरे पर दी गई जगह में नौकर और भोजन परोसने वाले लोग होते हैं। वे सामान्य लोग, जो नीचे दी गई किन्हीं भी श्रेणियों में नहीं आते, बायें सिरे पर मुख्य प्रवेश द्वार के बिलकुल निकट साँझे प्रेशाल में बैठ सकते थे।

उत्तर

'तारा' के प्रशाल में बैठने की व्यवस्था का नक्शा

1. सारथी और परिचारक (स्टिवार्डस)
2. हिरनों का हाँका करने वाले
3. प्रथम श्रेणी के कुलीन लोग

भट्टी कढ़ाई

4. राजा और रानी
5. तीसरी श्रेणी के कुलीन लोग और तीसरी श्रेणी के कवि
6. दूसरी श्रेणी के कुलीन लोग और इतिहासकार (श्रेणी का उल्लेख नहीं है)

दक्षिण

7. चतुर्थ श्रेणी के कुलीन लोग और पाँचवीं श्रेणी के कवि
8. छठी श्रेणी के कवि
9. रसोइये
10. दुर्ग बनाने वाले

11. राजा के चैम्पियन और चतुर्थ श्रेणी के कवि
12. कठिन कार्य करने वाले सैनिक (सैंपर)
13. शतरंज के खिलाड़ी
14. भंडारी (रसोई घरों के सम्भालने वाले)
15. काँस्यकार
16. चिकित्सक
17. कर्णधार (पाइलट)
18. व्यापारी
19. भाँड (जैस्टर)
20. वैहासिक (बफून)
21. राजा के विदूषक
22. वीणावादक
23. विद्यालयों के अध्यापक
24. स्वर्णकार
25. लुहार
26. ढाल निर्माता
27. रथ निर्माता
28. ऐन्द्राजालिक
29. व्यंग काव्य लेखक (सैटायरिस्ट)
30. द्वारपाल
31. अश्वारोही
32. बीन बजाने वाले और ढोल बजाने वाले
33. न्यायाधीश (पुरोहित)
34. मुख्य पुरोहित (डाक्टर ऑफ लैटर्स) और उनके नीचे अध्ययन करने वाले
35. मुख्य कवि और द्वितीय श्रेणी के कवि
36. आतिथेय (वे लोग, जिनके हाथ में सार्वजनिक होस्टलों की संभाल का काम था)
37. प्रधान रचयिता और उसके नीचे अध्ययन करने वाले
38. भविष्यवक्ता और मामूली पुरोहित
39. निर्माता और रचियता (राइट्स)
40. रणसिंगा बजाने वाले और बेग पाइप बजाने वाले
41. उत्कीर्णक (वे लोग जो धातु के सामान पर नक्काशी करते हैं)
42. चर्मकार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सम्मिलित होता था। यह चैम्पियन एक विशालकाय, बलिष्ठ और सदा लड़ने को उद्यत व्यक्ति होता था, जिसका कर्तव्य यह होता था कि जो भी कोई व्यक्ति राजा को चुनौती दे, उससे लड़े। 'तारा' के प्रशाल में वह ग्यारह नम्बर के कोष्ट में चतुर्थ श्रेणी के कवियों के साथ बैठता था; इसलिए नहीं कि उसका ओहदा उनके बराबर था, अपितु इसलिए कि यदि कभी कोई झगड़ा-दंगा हो, तो वह तुरंत दरवाज़े के पास पहुँच सके।

पृष्ठ 412 और 413 पर दिये गए बैठने की व्यवस्था के नक्शे की सूची में प्रयुक्त किये गए अधिकाँश पारिभाषिक स्वतः स्पष्ट हैं, परन्तु कुछ थोड़े-से ऐसे हैं, जिनके स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। इतिहासकार और कवि मुख्य पुरोहित के अधीन एक धार्मिक सोपानतन्त्र का अंश थे और यही हाल न्यायाधीशों का भी था। इतिहासकार पहले दस पदक्रमों के कवियों में विशेषज्ञ लोग थे, जिनका ओहदा उनके द्वारा कंठस्थ की गई कविताओं के अनुसार होता था ये कविताएँ कम से कम सात और अधिक से अधिकतीन सौ पचास होती थीं। अपने पोलिनेशियाई प्रतिरूपों की भाँति इन कवियों ने राष्ट्र के क़ानूनों को कंठस्थ कर रखा होता था और वे उन्हें मुकदमों के अवसरों पर बोलकर ठीक उसी प्रकार सुनाते थे, जिस प्रकार आजकल हमारे क़ानूनवेत्ता लोग क़ानून की पुस्तकों को जानकारी के लिए देखते हैं। उनके विवरण में वे ऐतिहासिक घटनाएँ भी सम्मिलित रहती थीं, जिनसे उन क़ानूनों की पृष्ट भूमि या प्रसंग का भी पता चल जाता था। ये कवि लोग विशेष अवसरों पर मौलिक कविताएँ भी बनाते थे। सब पुजारियों की भाँति सब कवि कुलीन लोग थे। चारण और भविष्यवक्ता, जो देहातों में अपना काम करते थे, साधारण लोग थे।

इन कोष्ठों में भोजन पाने वाले व्यक्तियों की आपेक्षिक स्थिति का स्पष्ट अनुमान उन श्रेणी-कृत माँस-खंडों को साथ मिलाने से हो जाएगा, जिनकी सूची उन लोगों के पदों और व्यवसायों के अनुसार दी गई है। मैक ऐलिस्टर[1] ने, जिसे हमने इस विषय में प्रमाण माना है, 15 माँस-खंडों की सूचियाँ, 42

---

[1] आर० ए० ऐस० मैक ऐलिस्टर, 'तारा, ए० पैगन सैंक्चुअरी ऑफ ऐन्शियेण्ट आयरलैंड', चार्ल्स स्क्रिबनर्स संस, लंदन, 1931।

बैठने के स्थान और 53 श्रेणियाँ या व्यवसाय गिनाए हैं; इन श्रेणियों में किराए पर खेती करने वाले किसान या दास सम्मिलित नहीं हैं; यदि ये लोग इस प्रशाल में भोजन करते होंगे, तो वे मुख्य द्वार के निकट खुले स्थान में बैठते होंगे। माँस-खंडों, ओहदों और बैठने के स्थानों के समन्वय से यह पता चलता है कि उन लोगों में राजा से लेकर विदूषकों और चर्मकारों तक कुल मिलाकर छः ओहदे थे और तीन समानान्तर धुरियों पर इनके अनेक उपविभाग और विशेषताएँ थीं; ये धुरियाँ, राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक थीं।

इस सामग्री के विश्लेषण से यह पता चलता है कि पार्श्व के आसन मध्य की पंक्तियों की अपेक्षा अधिक अच्छे थे; पीछे वाले आसन सामने वाले आसनों से अच्छे थे; बीच वाले आसन दोनों किनारों की ओर वाले आसनों से अच्छे थे; उत्तर की ओर वाले आसन दक्षिण की ओर वाले आसनों से, पश्चिम की ओर वाले आसन पूर्व की ओर वाले आसनों से और दाँयी ओर वाले आसन बाँयीं ओर वाले आसनों से अच्छे थे। चैम्पियन और व्यापारी लोगों को इन सभाओं में उनके विशेष कृत्यों के कारण ऐसी जगह आसन दिये जाते थे, जो वैसे उनके अनुरूप नहीं थे। शिकार करना खेती करने से उत्कृष्ट समझा जाता था; आर्थिक दृष्टि से किए जाने वाले कार्य कुल मिलाकर घटिया ओहदे के समझे जाते थे; इन व्यवसायों में भी धातु का काम करना सबसे ऊँचा और चमड़े का काम करना सबसे नीचा समझा जाता था। वीणा या सारंगी बजाने वाले लोगों को अन्य संगीतकारों से ऊँचा माना जाता था और तमाशा करने वाले लोग राजा की उपस्थिति में बैठने के अधिकारी लोगों में सबसे निम्न कोटि के समझे जाते थे। जब हम इस बात पर ध्यान देते हैं कि इस बैठने की योजना में, जैसी कि यह अर्थद्योतक है, सेना के विभिन्न ओहदों वाले लोग सम्मिलित नहीं हैं, तो हमें यह अनुभव होता है कि प्राचीन कैल्टिक सभ्यता उतनी विशद हो चुकी थी, जितना कि प्राक्-साक्षर परिस्थितियों में किसी संस्कृति के लिए हो पाना सम्भव था। सीज़र ने जिन गाल लोगों को हराया था, उनकी सभ्यता बहुत कुछ आयरलैंडवासियों की सी ही थी; जर्मनीय प्रणाली अधिक लचकदार तो अवश्य थी, किन्तु वह सरल बिलकुल नहीं थी। वे उत्तरी लोग, जिन्होंने रोमन प्रदेशों को जीता और वहाँ सामन्तीय प्रणाली स्थापित की,

केवल उन लोगों की दृष्टि में असभ्य और बर्बर थे, जिनके देशों को उन्होंने जीता था। साँस्कृतिक विकास की उस मुख्य धारा ने, जिससे कि हमारी अपनी अमेरिकी संस्कृति निकली है, इन दोनों ही स्रोतों से समान रूप से विशेषताएँ ग्रहण की हैं।

लौह युग की धार्मिक संस्थाए

लौह युग के साम्राज्यों में मानव समाज इतना जटिल हो गया था कि विभिन्न सामाजिक वर्गों, जातीय समूहों, विभिन्न कला-कौशलों, व्यवसायों और विभिन्न पेशों के लोगों में और विभिन्न प्रान्तों के मध्य शान्ति बनाए रखने के लिए बहुत प्रयत्न करना पड़ता था। राज्य के दो कृत्यों में से एक अपने प्रजाजनों के मानवीय सम्बन्धों में घटनाओं की व्यवस्था को नियन्त्रित करना है; और दूसरा कृत्य बाह्य जगत् के आक्रमणों से उनकी रक्षा करना है। जैसा कि हम मिश्र के बारे में देख चुके हैं, शान्ति पुलिस रखने के बजाय एक केन्द्रीय धार्मिक व्यवस्था के विकास द्वारा कहीं अधिक सुचारू रूप से और कहीं अधिक सस्ते ढंग से बनाए रखी जा सकती है। रोम के जैसे जटिल समाज में एक जटिल धार्मिक सोपान तन्त्र का विकास आवश्यक हो जाता है।

जब तक रोम गणतन्त्र रहा, तब तक देवताओं के सम्प्रदायों की सेवा कुछ थोड़े-से पुरोहितों और पुरोहितानियों द्वारा, जिनका संगठन बिलकुल सरल था, और गैर पेशेवर लोगों के संगठनों द्वारा की जाती थी। जब एक बार रोम एक साम्राज्य बन गया, तब मिश्र के ढंग पर ईश्वरत्व का आरोप सम्राट् पर कर दिया गया। इस परिवर्तन का उद्देश्य स्वयं रोमवासियों को प्रभावित करना उतना नहीं था, जितना कि राष्ट्र मंडल के अन्य सदस्यों को एक सूत्र में बाँधे रखने के लिए एक शक्तिशाली प्रतीक प्रस्तुत करना था। ज्यों-ज्यों पश्चिमी साम्राज्य में राजनीतिक संस्था खंड-खंड होती गई, त्यों-त्यों उसके संगठन की पहले की जटिलता को ईसाई चर्च ने अपना लिया; यह ईसाई चर्च ही एक ऐसी अकेली शक्ति था, जो भूतपूर्व प्रान्तों को एक जगह संगठित रखने में समर्थ था।

बाइजैण्टाइन राज्य के बाद मध्य युग का कैथोलिक चर्च ही पश्चिमी जगत् की सबसे अधिक जटिल संस्था थी, जिसमें पौंटिफ (पोप) से लेकर उपासकों (वर्शिपर) के अलग-अलग स्तरों के ओहदे थे और अनेक प्रकार की श्रेणियाँ थीं, जिनके

अपने विशेष कर्त्तव्य थे। पूर्वी साम्राज्य में पुराणपन्थी चर्च इसके घनिष्ठ रूप से समानान्तर था और उससे मिश्र और सीरिया में ऐसे शाखा संगठन बन गए, जो मुस्लिम शासन के अधीन स्वतन्त्र हो गए। पुराणपन्थी इंजील-लेखकों ने रूसियों, सर्बियावासियों और बल्गेरिया-वासियों को ईसाई बनाया और उन्हें एक वर्णमाला प्रदान की, जो यूनानी वर्णमाला पर आधारित थी और जो दुरुच्चार्य ध्वनियों के लिए विशेष रूप से उपयुक्त थी। आजकल की रूसी वर्णमाला उसी वर्णमाला से निकली है।

ईसाई चर्च संरचना की दृष्टि से इतने जटिल बन जाएँ, यह बात उनके कृत्य को देखते हुए प्रत्याशित ही थी। लौह युग में साम्राज्य के निर्माण की ओर पहला क़दम प्रजाजनों के प्रति एक ऐसी सहिष्णुता की धारणा थी, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को अपने रीति-रिवाजों का, जिनमें उसका धर्म सम्मिलित था, पालन करने की छूट थी। यह ईरानियों की देन थी। इससे अगला क़दम मानवीय आवश्यकताओं की सार्वदेशिकता का, और इसके फलस्वरूप नैतिक सिद्धान्तों की सार्वदेशिकता का अनुभव किया जाना था। यह यहूदियों की देन थी, जो उन पैगम्बरों की परम्परा द्वारा प्राप्त हुई थी, जिन्होंने सम्पत्ति और ओहदे के भेदों को हटाकर समानता स्थापित करने का यत्न किया था। सम्पत्ति और ओहदे के ये भेद मध्य पूर्व में जनसंख्या की वृद्धि, भूमि की दशा के ह्रास और लोगों के अधिकाधिक विशेषित होते जाने के साथ-साथ विक्षोभ उत्पन्न कर रहे थे। याहवेह की, जो आदिम लोगों का एक ऐसा युद्ध का देवता था, जो इज़राइल की सन्तानों की कैनान को जीतने में सहायता करता था, धारणा से मानवीय मामलों में समतुलन के एक सिद्धान्त की धारणा, जो कि ईसा का परमेश्वर है, की ओर परिवर्तन इज़राइल के पैगम्बरों ने किया।

ईसा के विषय में और चाहे कुछ भी क्यों न कहा जाय किन्तु उसने मनुष्य जाति की समानता के सिद्धान्तों का और मानवीय सम्बन्धों का नियन्त्रण करने वाले नियमों की सार्वभौमता का प्रचार किया। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि ये विचार रोमन जगत् में उस समय पाए जाने वाले विभिन्न स्तरों की श्रेणियों वाले समाज की धारणा के प्रतिकूल पड़ते थे। परन्तु वे एक सार्वभौम साम्राज्य की धारणा के अनुकूल थे और इस कारण अन्त में उन्हें राज-धर्म के आधार के रूप में अपना लिया गया। जब एक बार वे राज-धर्म के रूप में

अपना लिये गए, तब उनका प्रचार साम्राज्य की राजनीतिक सीमाओं के बाहर भी इसलिए हो सकता था, क्योंकि वे इतने सरल और इतने व्यापक थे कि वे संसार के किसी भी भाग पर लागू हो सकते थे। चाहे धर्म-विज्ञानी लोग बारीकियों के ऊपर कितना ही वाद-विवाद क्यों न करते रहे, या चर्च के सोपान-तन्त्र चाहे कितने ही अधिक जटिल क्यों न हो गए, किन्तु ये सिद्धान्त कभी भी आँखों से पूरी तरह ओझल नहीं होने पाए।

संघों (असोसियेशन) का उदय

आधुनिक सभ्यता के सबसे अधिक विशेषताद्योतक लक्षणों में से एक है—उन संघों की बहुत बड़ी संख्या, जिनके कि लोग सदस्य या अंग हैं, जैसे 'रैड मैन', 'ऐल्क्स', 'बुक ऐंड थिम्बल क्लब' और 'हाकिन्स हाउस परिरक्षण समिति'। औसत अमेरिकन कम-से-कम एक दर्जन संघों का सदस्य होता है। ये संघ विभिन्न व्यवसायों वाले उन व्यक्तियों को, जो सारी जनसंख्या के किसी कम या अधिक स्पष्ट रूप से निर्धारित एक स्तर के होते हैं, एक जगह लाते हैं और इन स्तरों को भी एक-दूसरे के निकट लाने में सहायता देते हैं। क्योंकि इन संघों की तब तक आवश्यकता नहीं होती, जब तक कि कोई समाज बहुत ही अधिक जटिल न बन जाय, इसलिए ऐतिहासिक दृष्टि से इनका आविर्भाव देर में होता है। जहाँ काँस्य युग में इनका लगभग अभाव था और लौह युग के आरम्भिक दिनों में वे बहुत ही थोड़े थे, वहाँ लौह युग के पिछले दिनों में वे इतने बढ़े कि बिलकुल सामान्य वस्तु बन गए।

आर्थिक क्षेत्र में 'श्रेणी' (गिल्ड) वह संघ था, जो सबसे पहले प्रकट हुआ। उदाहरण के लिए, ऐथन्स में मूर्तिकार और चित्रकार स्वतन्त्र मनुष्य होने के नाते इन श्रेणियों के सदस्य होते थे। रोम में विभिन्न प्रकारों के व्यापारियों और कारीगरों ने अपने अलग निगम संगठित कर लिए थे और बाइजेण्टियम में यह प्रणाली एक बहुत ऊँचे बिन्दु तक पहुँच गई थी। दसवीं शताब्दी में एक पुस्तक प्रकाशित की गई थी, जिसमें इन श्रेणियों के विनियम विस्तार से दिये गए थे। नगर का प्रिफैक्ट इन 'श्रेणियों' का नियन्त्रण करता था और इन श्रेणियों के प्रधान (प्रैसीडैण्ट) उसके नीचे होते थे। इन प्रधानों को सदस्य लोग प्रिफैक्ट की स्वीकृति से चुनते थे। उसके विनियमों द्वारा

कारीगरों के न्यूनतम वेतन और निर्मित वस्तुओं की अधिकतम क़ीमतें नियत की जाती थीं और उनमें यह बात विशेष रूप से कही गई थी कि कोई भी व्यक्ति एक ही समय में एक से अधिक श्रेणियों का सदस्य नहीं हो सकता। प्रत्येक श्रेणी अपने लिए कच्चा माल इकट्ठा खरीदती थी और उसे सदस्यों में बाँट देती थी। मध्यवर्ती लोगों को निरूत्साहित किया जाता था। ग्राहकों से यह आशा की जाती थी कि वे विशेष बाज़ारों (पैंठों) या उन 'श्रेणियों' की गलियों में स्वयं आएँगे। यह प्रणाली सारे मध्य पूर्व में इस समय भी चालू है।

सम्भाव्यतः मनुष्य को ज्ञात संघों का सबसे प्राचीन रूप धार्मिक सम्प्रदाय है। उदाहरण के लिए, आस्ट्रेलियाई आदिवासियों में जब समारोहों के मौसम में कई गिरोह इकट्ठे होकर एक जगह मिलते हैं, तब ऐसे लोगों का एक विशेष समूह, जो कंगारू को पवित्र मानते हैं, एक विशेष वेषभूषा में मिलकर सर्व प्रथम कंगारू-मनुष्य की चिर प्राचीन गाथा का अभिनय करता है। इस प्रकार के प्राचीन रीति-रिवाज अनेक स्थानों पर लौह युग की संस्कृति तक भी बचे रहे, क्योंकि वे ऋतु-परिवर्तन के समय समारोह की एक आधारभूत मानवीय आवश्यकता को पूर्ण करते थे। भूमध्यसागर के देशों में, जो उस समय विश्व सभ्यता के केन्द्र थे, अनेक प्रतिस्पर्धी सम्प्रदायों ने सामाजिक गठन को सबल बनाया, क्योंकि विभिन्न सामाजिक श्रेणियों और व्यवसायों के सदस्य उनमें से प्रत्येक में सम्मिलित हो गए।

महान् काल के ऐथन्स मे इन साम्प्रदायिक संधों को 'मिस्ट्री' (रहस्य, गुह्य) कहा था। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों अनेक देवताओं के लिए निकाले जाने वाले जलूस, हमारे (ईसाइयों के) 'मर्मर' और मार्दि ग्रा' की भाँति अधिकाधिक जटिल होते गए, यहाँ तक कि उनके कुछ पहलू एक रंगशाला (थियेटर) के रूप में विकसित हो गए, सुखान्त नाटकों का आरम्भ एक लिंग-जलूस के रूप में हुआ था। जो लोग इस जलूस के नेता होते थे, वे एक लिंग की प्रतिमा लेकर चलते थे और अन्य लोग घोड़े के कान में पूँछ वाले मनुष्य की आकृति के अश्व-मानुष देवता (सैटायर) का वेश बनाये लाल चमड़े के नकली शिश्न लगाकर चलते थे। सिसली में 560 ईस्वी पूर्व के लगभग यह प्रथा एक नाटक के रूप में विकसित हो गई, जिसे यात्रा करने वाली कम्पनियों

ने मुख्य यूनानी भूमि तक पहुँचा दिया । 465 ई० पूर्व में इसका अभिनय ऐथन्स में सरकार की ओर से किया जाने लगा। शोकान्त नाटकों का विकास डायोनिसस के पुजारियों के, जो कि बकरों का सा रूप बनाये होते थे, एक जलूस से हुआ । यूरीपिडीज के काल तक प्रत्येक शोकान्त नाटक के लेखक को अपने छोटे-छोटे नाटकों की प्रत्येक त्रयी के साथ अश्वमानुष देवता (सैटायर) का एक नृत्य अवश्य जोड़ना होता था । बकरों के नृत्य का अन्त सदा एक मृत्यु के दृश्य में होता था, जिसमें एक शराब के नशे में चूर अज देवता को काट कर टुकड़े-टुकड़े कर दिये जाते थे । इस सम्प्रदाय में ऑर्फियस के सम्प्रदाय की भाँति पुराने मिश्री ओसिरिस सम्प्रदाय के साथ अनेक समानताएँ देखी जा सकती हैं ।

रंगशाला एक पवित्र स्थान होती थी और उसमें किये गए अभिनय धार्मिक होते थे । ऐथन्स में डायोनिसस की रंगशाला, जो खुले में बनी थी इतनी बड़ी थी कि उनमें पंद्रह हज़ार व्यक्ति बैठ सकते थे । ये दर्शक लोग प्रति दिन पाँच नाटक के हिसाब से लगातार तीन दिन तक नाटक देखते थे । ये नाटक वर्ष में एक बार उस समय होते थे जो कि आज कल ईस्टर (बैशाखी के आस-पास) का समय होता है । प्रति वर्ष नाटककार अपने नाटकों की पाँडुलिपियाँ नगर के 'आर्कन' को दे देते थे और वह उनमें से पन्द्रह नाटक चुन लेता था । शुरू-शुरू में समवेत गान (कोरस) ही सब कुछ होता था । इनमें नर्तकों की दो पंक्तियाँ होती थीं, जो बारी-बारी से गाती थीं । उसके बाद एक अभिनेता 'थैस्पिस' हुआ, जिससे अंग्रेजी विशेषण 'थैस्पियन' निकला है; उसने समवेत गान के बीच में प्रतिस्वन (ऐंटिफोन) के रूप में कुछ पंक्तियाँ गाने का काम अपने सिर लिया और उसके कुछ समय बाद इसमें एक और दूसरा अभिनेता जोड़ दिया गया । सोफोक्लीज ने एक और अभिनेता जोड़ दिया, यूरिपिडीज़ ने एक चौथा अभिनेता जोड़ा और उसके बाद समवेत गान लुप्त ही हो गया । अभिनेताओं ने, जो सबके सब पुरुष होते थे, अपनी एक शक्तिशाली श्रेणी (गिल्ड) का संगठन कर लिया । ये लोग अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनकर्ता थे, इसलिए इन्हें युद्ध की पंक्तियों में से भी सकुशल पार गुज़र जाने दिया जाता था ।

अन्तर्राष्ट्रीय संघों का एक अन्य समूह अखिल यूनानी खेलों का था,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जिनमें डैल्फी में होने वाले 'पाइथियन' खेल, कोरिन्थ में होने वाले 'इस्थमियन' खेल और ऐलिस में होने वाले 'ओलिम्पिक' खेल सम्मिलित थे। इन संघों द्वारा वही कृत्य सम्पन्न होता था, जो बाद में ईसाइयत और इस्लाम में तीर्थ यात्राओं द्वारा होने लगा, और वह था—अनेक अलग-अलग राज्यों से बहुत बड़ी संख्या में लोगों को शान्तिपूर्वक एक सामान्य प्रयोजन के लिए एक जगह एकत्रित करना। रोमन लोगों ने, जिन्होंने खेलों का उपयोग एक और प्रयोजन के लिए किया था, 'हिप्पोड्रोम' और 'सर्कस' में अपने इन प्रदर्शनों को बिलकुल चरम सीमा, नर-बलि, तक पहुँचा दिया। इन रक्तपातपूर्ण प्रदर्शनों से उस बहुत बड़ी नागरिक जनसंख्या का ध्यान एक ओर बँटा रहता था, जिसके पास करने के लिए कुछ काम नहीं था। उस समय, जबकि सारे संसार में शान्ति थी और अधिकाँश काम दासों द्वारा करवाया जाता था, साँडों के साथ मनुष्यों की लड़ाइयों और घुड़दौड़ों से प्राप्त होने वाला उत्तेजनात्मक आनन्द सम्राटों के लिए कम से कम उतना उपयोगी तो था ही, जितना कि उस पर व्यय होता था। बाइजैण्टियम में, जब एक बार ईसाइयत राजधर्म बन गई, तब सारा ज़ोर केवल घुड़दौड़ों पर दिया जाने लगा। सारा शहर दो पक्षों में बंटा होता था, जो 'हरा पक्ष' और 'नीला पक्ष' कहलाते थे। वे उतने ही उत्साह से अपने पक्ष का समर्थन करते थे, जितना कि आजकल अमेरिका के 'डौजर्स' और 'जायण्टस' के प्रशंसक करते हैं। पूर्वी साम्राज्य की बन्द दुनिया में इन सन्तुलित प्रतिद्वन्द्वियों की पारस्परिक क्रीड़ा नागरिकों के ध्यान को अन्दर की ओर केन्द्रित करने में सहायक होती थी। यह उनकी अपनी सामाजिक संरचना को तो सुदृढ़ बनाती थी, किन्तु यह पूर्व की ओर से उठने वाले तूफानी बादलों और शीघ्र ही होने वाले उनके स्वामियों के परिवर्तन की ओर से उनकी आँखें मूँद देती थी।

शिक्षा संस्थाओं का आविर्भाव और उन्नति

लौह युग में शिक्षा संस्थाओं में भी बहुत अधिक उन्नति हुई। वस्तुतः इस प्रकार की संस्था के प्रस्फुटन के फलस्वरूप ही इस युग का अन्त हुआ। कला-कौशलों (मिस्ट्रीज) की भाँति शिक्षा संस्थाओं का मूल भी मनुष्य के सुदूर अतीत के उस शिकारी जीवन में था, जब कि कई गिरोहों के वृद्ध पुरुष मिल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर एक ग्रायु-श्रेणी के भय-त्रस्त बालकों को एक जगह लाकर उन्हें जीवन संघर्ष में विजयी होने के रहस्यों की तथा विभिन्न लिंगों तथा ग्रायु वाले व्यक्तियों के प्रति व्यवहार के प्राचीन नियमों की शिक्षा दिया करते थे। काँस्य युग का ग्रारम्भ होने के समय तक मिश्रवासियों ने श्रेष्ठ शासक वर्ग को प्रशिक्षण देने के लिए राजदरबार में विद्यालय स्थापित कर लिए थे, जिनके पाठ्यक्रम में विभिन्न सामाजिक स्तर के लोगों के प्रति व्यवहार के नियम भी जोड़ दिये गए थे। सुमेरिया में स्वतन्त्र रूप में विद्यालय खोले गए थे, जिनमें जनता के सभी लोग प्रवेश पा सकते थे।

यूनानी लोगों ने, जो मिश्रवासियों से कागज खरीदते थे ग्रौर जिन्होंने फीनीशियन लोगों की वर्णमाला को ग्रपना लिया था, शिक्षा को राजनीतिक ग्रौर धार्मिक संस्थाग्रों से ग्रौर भी ग्रधिक मुक्त कर दिया। पेशेवर ग्रध्यापक एक गुरू वाले विद्यालय चलाते थे, जिनमें लड़कों को छह वर्ष की ग्रायु में पढ़ने के लिए भेजा जाता था। उस समय वहाँ ग्राश्रम-विद्यालय (जहाँ छात्र छात्रावास में रहकर पढ़ते हों) नहीं थे। प्रतिदिन एक विशेष दास, जिसे 'पैडेगौग' (लड़कों का ग्रग्रणी) कहा जाता था, लड़के को विद्यालय ले जाता ग्रौर विद्यालय से वापस घर लाता था। ग्रावश्यकता होने पर बालक को दण्ड भी वही देता था। एक ही ग्रध्यापक सब विषयों को पढ़ाता था, जिन्हें उसने तीन शाखाग्रों में बाँटा हुग्रा होता था : लेखन, संगीत ग्रौर व्यायाम। लेखन की परिधि में पढ़ाई ग्रौर ग्रंकगणित भी ग्रा जाती थी; संगीत में कविता करना ग्रौर वीणा बजाना भी सम्मिलित था। कोई विदेशी भाषा नहीं सिखाई जाती थी। इस विद्यालय में बालक चौदह से लेकर सोलह वर्ष की ग्रायु तक व्यस्त रहते थे।

चौथी शताब्दी में तरुण लोग स्नातकोतर छात्र के रूप में सुकरात जैसे निजी शिक्षकों के पास जब तक चाहें, तब तक शिक्षा पाते रह सकते थे; किन्तु 336 ईस्वी पूर्व के बाद एक क़ानून बनाया गया, जिसके ग्रनुसार सब युवकों को 18 वर्ष की ग्रायु से 21 वर्ष की ग्रायु तक सैनिक सेवा करने के लिए बाध्य कर दिया गया। 383 ई० पू० में प्लेटो ने ग्रपना स्थिर दान से चलने वाला उच्चतर शिक्षा का विद्यालय 'ग्रकादमी' ऐथन्स से बाहर कोई एक मील दूर जैतून के निकुंज में खोला। इस स्थल का, जिसमें बगीचे ग्रौर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

फव्वारे भी थे, आरम्भ 'म्यूजो' (कलाओं की देवियों) की पूजा के व्रती एक धार्मिक संघ के समारोह-स्थान के रूप में हुआ था। यहाँ अध्यापन नियमतः निःशुल्क होता था। यदि बालकों के माता-पिता धनी हों, तो वे भेंट दे देते थे और सीराकौज़ के डायोनीसियस द्वितीय ने इस अकादेमी को अस्सी टेलेण्टों (सिक्कों) की भेंट दी थी, जो पाँच लाख डालर अथवा लगभग 24 लाख रुपयों के बराबर थी। छात्र टोपियाँ और चोगे पहनते थे और हाथ में छड़ी रखते थे। गणित इस अकादेमी में प्रवेश की शर्त थी। प्लेटो स्वयं उन्नत ज्यामिती, ज्योतिष, संगीत, साहित्य, इतिहास, विधान, राजनीति, और नीतिशास्त्र (एथिक्स) पढ़ाता था। यदि उसके यहाँ कोई अध्यापक थे भी, तो वे उसकी सामान्य रूप से सहायता करते थे; अध्यापकों में विषयों के अनुसार श्रम का कोई विभाजन नहीं था। अरस्तू ने 20 वर्ष तक प्लेटो से शिक्षा पाई थी; उसके बाद चार साल तक उसने सिकन्दर को पढ़ाया और फिर 334 ई० पू० में वह ऐथन्स चला गया और वहाँ उसने अपना विद्यालय 'लाइसियम' खोला। इस विद्यालय में एक चिड़िया घर भी था: अरस्तू की रुचि मुख्यतया विज्ञान में थी, जब कि प्लेटो की रुचि गणित में थी। आइसोक्रैटीज का, जिसने प्लेटो से भी पहले एक विद्यालय स्थापित किया था, ध्यान व्याकरण और वक्तृत्व कला पर अधिक था। 323 में टौलेमी प्रथम ने सिकन्दरिया में पुस्तकालय के साथ-साथ एक विद्यालय की भी स्थापना की थी, जिसका नाम उसने 'म्यूजियम' रखा था; 'म्यूजियम' शब्द का अभिप्राय केवल इतना था कि वह विद्यालय म्यूजों (कलाओं की देवियों) को समर्पित था। इसमें संग्रहालयोचित कोई संग्रह नहीं था।

रोम में यूनानी शैली के विद्यालय खोले गए, जिनमें बाहर के देशों से बुलाये गए प्राध्यापक पढ़ाते थे, किन्तु 161 ई० पू० में जब सीनेट ने दर्शन का जिसका अर्थ भौतिकी, अधिविद्या, राजनीति और इतिहास था—अध्यापन इस आधार पर निषिद्ध कर दिया कि इन विषयों का अध्यापन किसी न किसी रूप में राज्योच्छेदक है, तब पाठ्यक्रम काटकर छोटा कर दिया गया। बाइज़ैण्टाइन लोगों ने, जिनकी परम्परा रोम की कम और यूनान की अधिक थी, इन विषयों का अध्यापन जारी रहने दिया और उन्होंने ऐथन्स तथा सिकन्दरिया के विद्यालयों के मुकाबले कुस्तुन्तुनिया (कौंस्टैंटिनोपल) में एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और विद्यालय स्थापित किया। इस बीच में बेरुत में एक क़ानून का विद्यालय खुला। एक वैधानिक समादेश (डिक्री) के द्वारा इस विद्यालय के प्राध्यापकों का भरण-पोषण राज्य की ओर से किया जाता था।

ऐथन्स में 'अकादेमी' ईस्वी सन् 529 तक चलती रही; उस वर्ष इसे महन्ताऊ ऐतराज़ों के फलस्वरूप बन्द कर दिया गया। उस समय तक 'अकादेमी' विद्या का सर्वाधिक लोकप्रिय केन्द्र बनी रही थी। एक दार्शनिक का वेतन राज्य देता था और दो दार्शनिकों और एक वैयाकरण का वेतन 'अकादेमी' की स्थिर निधि का उपयोग करते हुए नगर देता था। छात्र लोग, जो सब कहीं से आये होते थे, केवल एक प्राध्यापक की ही कक्षाओं में जाते थे। प्राध्यापक एक दूसरे के घोर प्रतिद्वन्द्वी होते थे। नवागन्तुक छात्रों को विद्यार्थियों के प्रतिद्वन्द्वी दल बन्दरगाह पर ही पकड़ लेते थे और फिर उनमें से जिस प्राध्यापक के विद्यार्थियों का दल जीत जाता था, उसके पास ही भर्ती होने के लिए नवागन्तुक छात्रों को विवश किया जाता था। प्रत्येक नए छात्र को स्नानकुँडों में बलपूर्वक डुबकियाँ दी जाती थीं और उससे अन्य लोगों को प्रीतिभोज दिलवाया जाता था। अब तक भी एक ही प्राध्यापक प्लेटो, अरस्तू तथा अन्य अनेक लोगों द्वारा लिखे गए मूल ग्रन्थों की सहायता से, जिनके साथ बड़ी विशद टीकाएँ भी जोड़ दी गई थीं, सब विषय पढ़ाता था। परन्तु इन टीकाओं में नई वस्तु कुछ भी नहीं होती थी और यदि कभी हुई भी, तो बहुत कम होती थी। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया और ईसाइयत अधिकाधिक महन्ताऊ (मौनैस्टिक) होती गई, त्यों-त्यों भौतिक विज्ञानों के अध्ययन का 'सृष्टि' ('जैनैसिस') के विवरणों से विरोध पड़ने लगा और अस्थायी रूप से मठाधीशों की जीत हुई। यद्यपि ऐथन्स की अकादेमी ईस्वी सन् 529 में बन्द हो गई थी, फिर भी दर्शन सिकन्दरिया में सन् 640 तक भी, जब अरबों ने मिश्र को जीता, पढ़ाया जा रहा था। यह मानने के लिए कोई कारण नहीं है कि सिकन्दरिया में दर्शन का यूनायी भाषा में अध्यापन सन् 972 से पहले बन्द हो गया हो, जब कि काहिरा में अल-अजहर विश्वविद्यालय खुला और यूनानी विद्याओं की शिक्षा अरबी भाषा में दी जाने लगी। इससे लगभग सौ वर्ष पहले एक बाइज़ैण्टाइन सम्राट् ने यूनानी पुस्तकों का एक संग्रह बगदाद के खलीफ़ा को भेजा था और उस खलीफ़ा ने उन पुस्तकों का अनुवाद सीरियाई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ईसाइयों द्वारा अरबी भाषा में करवाया था ।

स्पेन में कोर्दोवा का विश्वविद्यालय अल-अज़हर विश्वविद्यालय से 22 वर्ष पहले खुला । बोलोना सन् 1000 में क़ानून के विद्यालय के रूप में खुला था । और शीघ्र ही विश्वविद्यालय बन गया । फैज़, पारी (पैरिस), ऑक्सफोर्ड, और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय इसके बाद खुले । दसवीं, ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी के ये विश्वविद्यालय बाइज़ैण्टाइन काल के विश्वविद्यालयों से एक महत्त्वपूर्ण दृष्टि से भिन्न थे । अन्ततोगत्वा लोगों ने यह स्वीकार कर लिया कि मानवीय ज्ञान का क्षेत्र इतना अधिक विस्तृत है कि वह सारा एक ही मस्तिष्क में नहीं समा सकता । अब प्राध्यापकों के मध्य श्रम का विभाजन हो गया । कोई छात्र एक व्यक्ति से भूगोल पढ़ता, किसी दूसरे व्यक्ति से क़ानून; और गणित के लिए वह किसी तीसरे व्यक्ति की कक्षा में पढ़ने जा सकता था । अब वास्तविक विश्वविद्यालय बने । इसके लिए, यदि मैं भूल नहीं करता तो, हमें उन अरब लोगों को धन्यवाद करना चाहिए, जो श्रम विभाजन के प्रति अत्यधिक जागरूक थे । मेरी सम्मत्ति में यह वस्तु, एकेश्वरवाद के अलावा जिसका कि शिक्षा से कोई असली विरोध नहीं है, क्योंकि सारी विद्या अन्त में एक ही सिद्धान्त तक पहुँचाती है, मानवीय उन्नति में लौह युग की एक वास्तविक महान् देन थी ।

इतिहास में जब-जब भी कोई नया श्रम विभाजन उपस्थित होता है, तब-तब मनुष्य तदनुसार अपेक्षाकृत अधिक कार्यक्षम प्राणी बन जाता है, और पृथ्वी की ऊर्जा का अधिकाधिक बढ़ती हुई मात्राओं में उपयोग करने में और द्रुततर वेग से इतिहास की चौथी प्रावस्था की देहरी की ओर बढ़ने में समर्थ होता है । इस प्रकार के प्रत्येक समय में, ज्यों-ज्यों अलग-अलग मनुष्यों, श्रेणियों और राष्ट्रों की परस्पराश्रितता का जाला अधिक बड़ा और जटिल होता जाता है, त्यों-त्यों, नए प्रकार की संस्थाएँ जन्म लेती हैं ।

9

बारूद[1]

अब से पाँच सौ वर्ष पहले एक नया युग शुरू हुआ। पूर्व में बाइज़ैण्टाइन साम्राज्य की शक्ति को तुर्क लोगों ने छिन्न-भिन्न कर दिया था, इसलिए इतिहास की तीसरी प्रावस्था के इस नए काल में नेतृत्व का भार पश्चिमी, यूरोपवासियों के सिर पड़ा। इटलीवासी, स्पेनवासी, पुर्तगाली, अंग्रेज, फ्राँसीसी, हालेंडवासी और जर्मनीवासी लोगों ने परिवहन, संचार (संदेश प्रेषण) और सम्पति के विनिमय में हुए तीन आधारभूत सुधारों का उपयोग करना शुरू किया; ये सुधार उतने ही क्रान्तिकारी थे, जितने कि सवारी का घोड़ा, वर्णमाला और मुद्रा लौह युग के आरम्भ काल में रहे थे। ये सुधार थे—समुद्र पार जाने वाले जहाज, मुद्रण और महाजनी (बैंकिग)। इन आविष्कारों के फलस्वरूप पश्चिमी यूरोपवासी सारे संसार में पहुँच गए और उन सब पुरानी सभ्यताओं को, जो स्वतन्त्र रूप से विकसित हुई थीं, या एक-दूसरे के विषय में मामूली-सी जानकारी रखते हुए विकसित हुई थीं, एक ही साँस्कृतिक परिधि में ले आए।

---

[1] इस अध्याय और इससे अलग अध्याय में मैंने दो उत्तम पुस्तकों से बहुत अधिक सहायता ली हैं: बोइस पैनरोज़ की पुस्तक 'ट्रैवल एण्ड डिस्कवरी इन दि रैनेसांस' प्रकाशक हैं हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट्स, 1952: और आर० जे० फौर्बेस की पुस्तक 'मैन दि मेकर', प्रकाशक हैं हैनरी शुमैन, न्यूयार्क, 1950। सामान्य पाठक के लिए मेरी सिफारिश है कि वह इन पुस्तकों को अवश्य पढ़ें।

भट्ठियों में हुए सुधारों द्वारा, जल शक्ति और पवन शक्ति के उपयोग द्वारा और बारूद की विस्फोटक शक्ति के आविष्कार द्वारा ऊर्जा के व्यय में हुई वृद्धि के कारण ये आविष्कार सम्भव हुए। घटनाओं की इस शृंखला का आरम्भ श्रम के एक नए विभाजन के आविर्भाव से हुआ। लिंग और आयु के आधार पर व्यवसायों की विभिन्नता सरल शिकारियों के लिए पर्याप्त रही थी। परवर्ती शिकारियों में चिकित्सक और ऋतु-सम्बन्धी शामन विशेषज्ञों के रूप में आ गए थे। नव-पाषाणिक और काँस्य युगों में शिल्पी, व्यापारी, सैनिक और पुरोहित लोगों का आविर्भाव हो गया था; लौह युग में स्वतन्त्र शिक्षा-संस्थाएँ और राजनीतिक दफ्तरशाहियाँ बनी थीं। बारूद के युग का आरम्भ होने से थोड़ा-सा पहले उन प्राध्यापकों में, जो विज्ञान की विभिन्न शाखाओं का अध्यापन करते थे, एक और प्रकार का श्रम विभाजन हुआ था। मध्य युग में स्थापित हुए विश्वविद्यालयों में विद्वान लोग सम्पूर्ण ज्ञान को व्यक्तिशः ग्रहण कर पाने में समर्थ नहीं रहे थे, इसलिए वे अलग शाखाओं में विशेषता प्राप्त करने लगे थे। अब उन्हें परीक्षण करने के लिए समय मिलने लगा और इसका परिणाम बहुत अच्छा हुआ। इतिहास में पहली बार विशुद्ध वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक अनुसन्धान द्वारा ऊर्जा के एक नए स्रोत का पता चलाया गया, और उसके बाद जितने भी स्रोतों का पता चला है, उन सबका इसी प्रकार पता चला है।

सन् 1241 में ऑक्सफोर्ड के रोजर बेकन ने बारूद बनाने का बिलकुल सही गुर (फार्मूला) प्रकाशित किया और उसने बताया कि इस बारूद का वस्तुतः विस्फोट होगा और यह मध्यकालीन चीनी अग्नि बाणों (रॉकेट) और पटाखों की तरह फिसा-फिसा कर नहीं रह जायेगी। इसका कारण यह था कि उसने गन्धक और लकड़ी के कोयले में 'विशुद्ध' शोरा बिलकुल सही अनुपात में मिलाया था। सन् 1450 तक राइनलैंड के निर्माताओं द्वारा विकसित किये गए इस नए रासायनिक पदार्थ का उपयोग इस सीमा तक पहुँच गया कि चार फ्रांसीसियों ने नौर्मण्ड में केन के निकट फार्मिग्नी नामक स्थान पर सात हज़ार अंग्रेजों को बुरी तरह परास्त कर दिया। जब अंग्रेजों ने अपनी व्यूह रचना कर ली, जिसमें कि घुड़सवार सैनिक बीच में थे धनुर्धारी सैनिक दोनों किनारों पर, तब फ्रांसीसियों ने दोनों सिरों पर दो कल्वैरिनें (पुराने ढंग की तोपें) लाकर

खड़ी कर दीं और लम्बाक्ष (सेना की पंक्ति को नष्ट करने वाली) गोलाबारी द्वारा अंग्रेज सिपाहियों को भून कर रख दिया। 5600 अंग्रेज सिपाहियों के मुकाबले में केवल 12 फ्राँसीसी खेत रहे। तोप की धाक जम गई।

इसके दो साल बाद तुर्क लोगों ने ऐसी तोपों का प्रयोग करके, जो एक टन (लगभग 28 मन) भारी पत्थर फेंक सकती थीं, कुस्तुन्तुनिया (कौंस्टैंटीनोपल) पर अधिकार कर लिया और इस प्रकार यूरोप से भारत और सुदूर पूर्व के साथ व्यापार के मार्गों को प्रभावी रूप से रुद्ध कर दिया। अब इटली, स्पेन और पुर्तगाल के राजाओं और व्यापारियों ने नए मार्गों की खोज के लिए खुले अतलांतक पर अपनी दृष्टि डाली। उनके जहाज़रानी के वास्तुविदों ने शीघ्र ही जहाज़ों के नौतल के ऐसे सुधरे हुए अभिकल्प (डिज़ाइन) तैयार किए कि जिससे वे न केवल अतलांतक के तूफानों के थपेड़ों को ही सह सकें, अपितु उनके डेकों पर पार्श्वाभिमुख लगी हुई तोपों के छूटने के ज़ोरदार धक्के के बाद वे फिर 'झूलकर अपनी पहली स्थिति में आ जाएँ'। समुद्र यात्रा के प्रसिद्ध प्रोत्साहक प्रिन्स हेनरी के आमन्त्रण पर विद्वानों का एक दल पुर्तगाल में सैण्ट विंसैण्ट अन्तरीप के निकट साग्रेस में इस प्रयोजन में एकत्रित हुआ कि उस समय तक जहाज़रानी के विज्ञान की जितनी भी जानकारी उपलब्ध थी, उस सब को तालिकाबद्ध और समन्वित कर दिया जाय। इसके कुछ ही समय बाद वास्को डि गामा आशा (गुडहोप) अन्तरीप का चक्कर काट कर भारत पहुँचा, कोलम्बस ने अमेरिका की खोज की और मैगेलन ने अपने जहाज़ द्वारा सारी दुनिया की परिक्रमा की।

जिस प्रकार बारूद ने समुद्री परिवहन में नई सफलताओं को प्रेरणा दी, उसी प्रकार मुद्रण ने संचार, संदेश प्रेषण की उन्नति में लेखन के आविष्कार के बाद सबसे अधिक योग दिया। सन् 1454 के आस-पास गुटेनबर्ग और कौस्टर दोनों मुद्रणालय चला रहे थे। पाँडुलिपियों की हाथ से नकल करने का थका देने वाला काम अब समाप्त हो गया था; और यह इटली में फ्लोरैन्स के एक भद्र पुरुष द्वारा आँखों पर पड़ने वाले दबाव को हटाने के लिए बनाये गए चश्मों के आविष्कार के कुछ ही वर्ष बाद होगया था। चल टाइपों द्वारा छपाई के आविष्कार का और चश्मे के आविष्कार का महत्त्व बहुत कम रहा होता, यदि इस बीच में अरब लोग कागज़ बनाने का कौशल चीन से समरकन्द और

बगदाद के रास्ते यूरोप तक न ले आये होते। कागज़ भेड़ की खालों के बने हुए मंहगे चर्म-पत्र का एक सस्ता और प्रचुर मात्रा में उपलब्ध स्थानापन्न बन गया। नई किताबें हज़ारों की संख्या में छपने लगीं और उनकी क़ीमत कम हो गई और अध्ययन केवल धनी लोगों और धार्मिक पुरोहितों का ही विशेषाधिकार नहीं रहा। श्रेणी (गिल्ड) वाले नगरों में मामूली व्यापारी और कारीगर पढ़ना-लिखना सीखने लगे। लेखकों को इस बात के लिए प्रोत्साहन मिला कि वे विविध प्रकार के विषयों पर लेटिन के साथ-साथ पश्चिमी यूरोप की दैनिक उपयोग की भाषाओं में भी पुस्तकें लिखें। कार्यपालक लोग अब अपने सदस्यों, ग्राहकों और कर्मचारियों के साथ सूचनाओं, पुस्तिकाओं और पुस्तकों के बड़े-बड़े संस्करण जारी करके सम्पर्क स्थापित कर सकते थे, क्योंकि अब अनेक प्रकार की संस्थाओं में ऐसे लाखों व्यक्ति सम्मिलित थे, जिन्होंने कभी भी एक-दूसरे की शक्ल तक नहीं देखी थी।

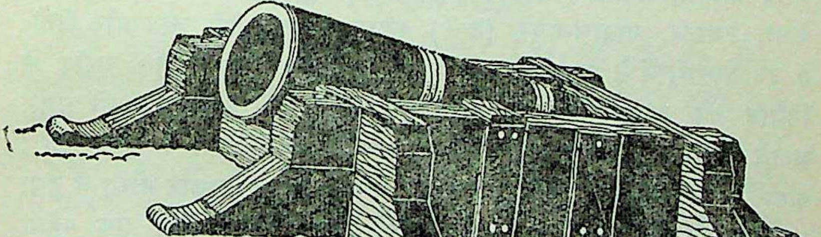

आरम्भिक काल की तोप

लौह युग में परिवहन और संचार (संदेश प्रेषण) की सुविधाएँ इतनी सीमित रही थीं कि उन-पर राज्य और चर्च का, जो व्यवस्था और सामाजिक समतुलन को बनाये रखने के लिए आवश्यक दो संस्थाएँ थीं, लगभग एकाधिकार बना रहा था। अब क्योंकि ये सुविधाएँ आर्थिक संस्थाओं और वाणिज्यिक संघों (असोसियेशन) को भी उपलब्ध हो गई थीं, इसलिए जो युरोपवासी अतलान्तक महासागर के तट पर रहते थे, वे तोपें और बाइबिलें

लेकर अपने जहाज़ों में बैठकर संसार भर के समुद्री बन्दरगाहों में गए। उन्होंने भारत और चीन जैसे देशों में, जिनमें जनसंख्या तो बहुत घनी थी, किन्तु जिनके पास शस्त्र अच्छे नहीं थे, अपने व्यापारिक केन्द्र स्थापित किये और ऐसे अलग-थलग पड़े हुए देशों में, जिनमें समृद्धि की सम्भावनाएँ बहुत अधिक थीं और जिनमें उस समय तक केवल शिकार-युग के बचे हुए लोग और 'छीला और जलाया' विधि से खेती करने वाले किसान रहते थे, अपने उपनिवेश बसाये। एक अर्थ में पहली बार सारा संसार एक बन गया।

इन नए प्रदेशों में से कुछ से, जैसे कि मैक्सिको और पेरू से, पश्चिमी लोगों ने सोने-चाँदी के अपार कोष लूटे; अन्य प्रदेशों से, जैसे कि भारत और चीन से, उन्होंने व्यापार द्वारा धन कमाया। धन तो चंचल था, किन्तु इन नए पाये गए देशों में जो नए पौधे और पशु बड़े यत्न से पाले-पोसे गए थे, उन्होंने यूरोप को बहुत समृद्ध बना दिया। आलू, मक्का, तम्बाकू, सेम, लोबिया आदि फलियाँ, सीताफल, चावल, खट्टे फल (नीबू सन्तरे आदि), चाकलेट, केला, टमाटर, पाताल-मयूर (टर्की), कपास, रेशम, कॉफी, चाय और चीनी, ये उन वस्तुओं में से केवल कुछ अत्यधिक सुपरिचित वस्तुएँ हैं। यूरोप से निर्यात की जाने वाली प्रधान वस्तुएँ धातु से बनी वस्तुएँ थीं, जो पात्रों, काटने के औज़ारों (चाकू इत्यादि) और बारूदी शस्त्रों के रूप में होती थीं। कमानी का इस्पात बनाने की कला, जिसका कि आविष्कार भारत में हुआ था, अरब लोगों के हाथों में से गुज़रती हुई दश्मिक और टोलैडो तक पहुँची थी और वहाँ से इंग्लैंड पहुँच गई थी। अब इस प्रकार का इस्पात उल्टा भारत भेजा जाने लगा था और उसके बदले में कश्मीरी दुशाले खरीदे जाते थे।

इस सारी गतिविधि से, जैसी कि इससे पहले कभी दिखाई नहीं पड़ी थी, नई संस्थाओं का विकास हुआ। व्यापारियों और निर्माताओं को पूँजी की आवश्यकता थी और उनका काम चलाने के लिए बैंक बनाये गए। राजाओं ने 'ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी' जैसे सुविशाल निगमों को आदेश पत्र (चार्टर) प्रदान किए; इन नियमों ने अन्त में कुछ देशों में तो राजनीतिक विजयें प्राप्त कीं और अन्य देशों में व्यापारिक एकाधिकार स्थापित कर लिया। नई दुनिया (अमेरिका) में स्पेन, पुर्तगाल, फ्रांस और इंग्लैंड ने औपनिवेशिक सरकारें

स्थापित कर लीं, जिनका उद्देश्य अपने स्वदेशों को समृद्ध करना था। नई आवश्यकताओं के साथ-साथ, इनमें से कुछ सरकारों ने ऐसे संगठनों का रूप ले लिया, जो संसार में नए थे। यद्यपि इन समुद्र पार के उद्यमों के फलस्वरूप यूरोप के देशों के रहन-सहन के स्तर और ज्ञान में वृद्धि हुई, किन्तु इन गतिविधियों से राष्ट्रों को एक-दूसरे के निकट लाने में कोई सहायता न मिली। इनके विपरीत उनकी समुद्र पार की प्रतिद्वन्द्विताओं ने उनके स्वदेशों में भी मतभेदों को तीव्र कर दिया, जिसके फलस्वरूप उन्होंने उन राज्यों में चल रहे पुराने मतभेदों को उस अपेक्षाकृत छोटे प्रायद्वीप, यूनान, में उस समय फिर से दुहराना शुरू कर दिया, जब भूमध्य-सागर और कृष्णसागर संसार के जलमार्ग बने हुए थे। ठीक इन्हीं प्रतिद्ववन्द्विताओं के कारण संसार के एक और भी समृद्धतर प्रदेश उत्तरी अमेरिका में लगभग चुपचाप ही अंग्रेजों के उपनिवेशों का बन पाना सम्भव हो सका।

पवन, जल और इस्पात

जिस वस्तु के कारण ये बड़ी-बड़ी प्रगतियाँ सम्भव हो सकीं, वह थी—पवन और जल की शक्ति को उपयोग में लाने की नई पद्धतियों का आनुक्रमिक विकास और उसके साथ घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित धात्विकी—तकनीकों में हुए सुधार। ई० सन् 400 के आस-पास धार्मिक बौद्ध तीर्थयात्री ऊर्ध्वाधर दंड वाले प्रार्थना चक्रों को घुमाने लगे थे और इसके बाद तीन शताब्दी के अन्दर ही ईरानी लोग इसी प्रकार सज्जित पवनचक्कियों में अनाज पीसने लगे थे। ये चक्कियाँ केवल उन बंजर प्रदेशों में ही काम आ सकती थीं, जहाँ पवन सदा एक ही दिशा से बहती थी। इन पवन-चक्कियों को और अधिक सामान्य रूप से उपयोगी बनाने के लिए किसी ने, या तो उन क्रूसेडर लोगों ने, जो उन्हें यूरोप लाए थे, या उन अरब लोगों ने, जिनसे उन्होंने इन पवनचक्कियों को ग्रहण किया होगा, क्षैतिज दण्ड वाली पवन चक्कियों का आविष्कार किया, जिनमें त्रिकोणाकृति पंख लगे होते थे। क्योंकि इस प्रकार की पवनचक्की के कार्यकारी शिरोभाग को, या समूची संरचना को ही घुमाकर उस दिशा में मोड़ा जा सकता था, जिस ओर से पवन बह रही हो, इसलिए यह तेज़ हवा वाले समुद्र तटों पर और मरूस्थलों में भी उपयोगी रहती थी। इसी प्रकार की

पवनचक्कियाँ वे थीं, जिन पर डॉन क्विग्ज़ोट ने अपने बर्छे से आक्रमण किया था और इस प्रकार की पवनचक्कियाँ आजकल भी ऐज़ोर्स द्वीपसमूह के फयाल द्वीप में अतलान्तक की पवनों की सहायता से अनाज को पीसकर आटा बनाती हुई देखी जा सकती हैं। इस प्रकार की पवनचक्कियों का उपयोग पम्प द्वारा पानी को उठाने के लिए हालैंडवासियों ने किया था और उन्होंने समुद्रतल से नीचे के प्रदेश में से पानी निकालकर बाहर फैंक दिया और उस पर अब वे खेती करते हैं। इन पवनचक्कियों के उपयोग का सबसे प्राचीन अभिलेख नौर्मण्डी में ई० सन् 1180 का प्राप्त होता है।

रोमन लोगों की बहते पानी के नीचे चलने वाले चक्के वाली (अधस्तल) पनचक्की को अरब लोगों ने अपना लिया और इसका उपयोग वे तिगरिस नदी में लंगर डालकर खड़े हुए या किनारे से बँधे हुए बजरों पर आटा पीसने के लिए और कागज़ बनाने के लिए किया करते थे; उन्हें इस बात की परवाह नहीं रहती थी कि नदी के पानी का स्तर ऊँचा है या नीचा। इन पनचक्कियों में लकड़ी के बने उसी प्रकार के दंतीले पहिए लगे होते थे, जैसे कि इससे पहले की पानी से ऊपर रहने वाले चक्के वाली (उपरितल) उन पनचक्कियों में होते थे, जो ग्याहरवीं और बारहवीं शताब्दी के आस-पास यूरोप में बनाई गई थीं। तेरहवीं शताब्दी में जल शक्ति का उपयोग यूरोप में सूती वस्त्र उद्योग के यान्त्रिकीकरण के लिए किया जाने लगा था। खारेन की प्रक्रिया (वह प्रक्रिया, जिसके द्वारा ऊनी कपड़े पर से तेल को साफ किया जाता था, उस कपड़े को सिकोड़ा और कसा जाता था और उसके तन्तुओं को इकट्ठा मिला कर नमदा बनाया जाता था, जैसा कि वर्स्टेड, फलालेन और हैरिस ट्वीडों में होता है) एक बहुत ही थकाने वाली और गन्दी प्रक्रिया थी। खारक (खारने का काम करने वाला) उन कपड़ों को, जो उसे दिए जाते थे, शहर से बाहर एक बदबूदार गड्ढे में भेड़ों के मूत्र और मिट्टी के मिश्रण में डालकर पैरों से कुचलता और कूटता था। यान्त्रिकीकरण में पहला क़दम यह था कि चूल के ऊपर टिके हुए कूटने के हथौड़े बनाये गए, जो पैर से चलाए जाते थे। दूसरा क़दम यह था कि इन हथौड़ों को उन दाँतों के द्वारा उठाया और गिराया जाता था, जो पनचक्की के एक दंड (शाफ्ट) पर लगे होते थे। जलधारा इस काम के लिए जल और शक्ति, दोनों ही प्रदान कर सकती थी। इस प्रकार की

चक्कियाँ, जो तेरहवीं शताब्दी में यूरोप में बिलकुल आम थीं, अलबानिया के पर्वतीय प्रदेशों में अब भी प्रयोग में आती हैं। तेरहवीं शताब्दी में यूरोपवासियों ने अर्ध-स्वचल चर्खे बनाने शुरू कर दिए। ये हाथ से चलाए जाते थे; इनमें लपेटने की प्रक्रिया यान्त्रिक रूप से होती थी और ऐंठने का काम उस समय तक भी हाथ द्वारा किया जाता था। सोलहवीं शताब्दी में इन चर्खों को हाथ के बजाय पैर से चलने वाले एक पैडल द्वारा चलाया जाने लगा।

इन सब मशीनों के लिए जिनमें लकड़ी का काम करने के लिए आवश्यक औज़ार भी सम्मिलित हैं, लोहे के उत्पादन में वृद्धि की, और दाँतेदार पहिये तथा मशीनों के अन्य पुर्जे बनाने के साधन के रूप में गढ़ाई के स्थान पर लोहे की ढलाई की पद्धति अपेक्षित थी। जिन पनचक्कियों से अनाज पीसा जाता था और कपड़े को खारा जाता था, उन्हीं से इस समस्या का समाधान प्राप्त हुआ। ईस्वी सन् 1300 के आसपास राइन नदी के किनारे के लोहा पिघलाने वाले लोग जलशक्ति का प्रयोग बड़ी-बड़ी धौंकनियों को चलाने के लिए कर रहे थे और इस प्रकार वे अपनी धमन-भट्ठियों में इतना ऊँचा तापमान उत्पन्न कर पाते थे कि उस पर भट्ठियों की तली में पड़ा हुआ लोहा पिघलकर बहने लगता था और उसे साँचों में भर दिया जाता था। उसी समय और उसी स्थान पर जल-शक्ति से उठने और गिरने वाले हथौड़ों का, जो खारने की मशीन के सिद्धान्त पर ही आधारित थे, प्रयोग पिटे लोहे और इस्पात की गढ़ाई के लिए किया जाने लगा था। इस बीच में स्वयं इस्पात बनाने की कला में भी सुधार हुआ था।

लौह युग में इस्पात उस समय संयोगवश ही तैयार हो गया था, जबकि लोहा पिघलाने वाले लोगों को मैंगेनीज से युक्त ऐसी कच्ची धातु मिल गई, जो फास्फोरस, संखिया और गन्धक से रहित थी। यदि इस प्रकार की कच्ची धातु के पृष्ट निक्षेप (ब्लूम) में से कार्बन के क्षय को रोकने के लिए उसे तुरन्त ठंडे पानी में बुझा दिया जाय, तो वह ईस्पात बन जाएगा। नोरिकम के, जो रोमन साम्राज्य का बहुत कुछ वह प्रान्त था, जहाँ आजकल निचला आस्ट्रेलिया है, कैल्टिक लुहार 500 ई० पू० जितना पहले भी अच्छा इस्पात तैयार करते और उसका इटली से व्यापार करते थे। अन्य कई राष्ट्रों के लोग भी लौह युग में इस प्रकार इस्पात तैयार करते थे कि वे पिटे हुए लोहे को भट्ठी में लकड़ी

के कोयलों पर तब तक रखते थे, जब तक कि वह तपकर सफ़ेद नहीं हो जाता था और उसके बाद वे उसे तुरन्त पानी में बुझा देते थे। किन्तु यह इस्पात केल्टिक लोगों द्वारा तैयार किये गए इस्पात जैसा बढ़िया नहीं होता था और ये दोनों ही तथाकथित दमिश्क-इस्पात की बराबरी नहीं कर सकते थे; यह दश्मिक-इस्पात ही बारूद के युग से पहले ज्ञात एकमात्र सच्चा कमानी-इस्पात था।

दश्मिक में यह इस्पात तैयार नहीं होता था, अपितु यहाँ तो इसे केवल उपयोग-योग्य बनाया जाता था और यहाँ से इसका वितरण भी किया जाता था। इस इस्पात का निर्माण भारत के हैदराबाद (सिन्ध) जिले में पाँचवीं और छठी शताब्दी ईस्वी पूर्व जितना पहले एक संगलन की प्रक्रिया द्वारा किया जाता था; इस प्रक्रिया को 'वूट्ज' प्रक्रिया कहा जाता है। इसमें लुहार काली मैग्नैटाइट कच्ची धातु को, बाँस के कोयले को और कुछ खास पौधों की पत्तियों को लेकर एक मिट्टी की घड़िया में सब ओर से बन्द कर देता है। फिर धौंकनी की आग में रखकर इस मिश्रण को पिघाला जाता है, जो पिघल कर धातु की एक ज़रा-सी डली बन जाता है। इस प्रकार की डलियों को चार या पाँच बार बारी-बारी से पिघाला और ठंडा किया जाता है और उसके बाद उसको एक जगह मिलाकर उनकी टिकियाएँ बना ली जाती हैं, जिनका व्यास 5 इंच, मोटाई आधा इंच और भार लगभग दो पौंड होता है। रोमन काल में इस प्रकार की इस्पात की टिकियाओं का निर्यात अदूलिस को, जो अफ्रीका में इरीट्रिया के समुद्र तट पर एक बन्दरगाह है, किया जाता था। रोम को माल भेजने वाले व्यापारी लोग इन्हें खरीद लेते थे, किन्तु उन्हें यह पता नहीं होता था कि वे आती कहाँ से हैं। जब अरब लोगों ने भारत को जीत लिया, तब वे इन इस्पात की टिकियाओं को दश्मिक ले जाने लगे, जहाँ इस अनोखी सामग्री से शस्त्र और कवच बनाने का अच्छा खासा उद्योग पनप गया। वे ही अरब इस इस्पात को स्पेन में स्थित टोलैडो नगर में भी इसी प्रयोजन के लिए ले गए।

अरबों में रोमनों से यह अन्तर रहा कि वे भारत में इस प्रकार का इस्पात तैयार करने वाले कारखानों में गए और उन्होंने यह पता किया कि

वूट्ज इस्पात किस प्रकार बनाया जाता है। वे अपने इस ज्ञान को पश्चिम में टोलैडो तक ले गए और वहाँ से यह बाद में उत्तर की ओर फ़ैल गया। परन्तु छोटी-छोटी घड़ियाओं में दो पौंड इस्पात पिघालने से औद्योगिक पैमाने पर उसे ढालने का काम एक इतनी बड़ी तकनीकी प्रगति थी, जिसे कर पाने के लिए मध्यकालीन धात्विकी विशेषज्ञ उद्यत नहीं थे। जब अन्त में सन् 1722 में ढला हुआ इस्पात संसार के सामने आया, तब उसने एक और नये युग का सूत्रपात किया। इस बीच में हाथ द्वारा तैयार किये गए कमानी-इस्पात के कारण काटने के शस्त्रों और कवचों में बहुत से सुधार कर पाना सम्भव हुआ और कलदार धनुष (क्रौस बो) का आविष्कार सम्भव हुआ, जिसके कारण अधिकाँश कवच बेकार हो गए। बहुत थोड़ी मात्रा में इस्पात का प्रयोग दिक्सूचक यन्त्रों की सुइयाँ बनाने के लिए किया जाने लगा। ये सुइयाँ अनिवार्यत: इस्पात की बनानी होती थीं, क्योंकि लोहे का चुम्बकत्व बहुत शीघ्र जाता रहता है और नूरेम्बर्ग के हीनलीन ने सन् 1500 में या उसके आस-पास कमानी से चलने वाली सबसे पहली घड़ी तैयार की। परन्तु सम्भाव्यत: परिष्कृत इस्पात का सबसे बड़ा तात्कालिक उपयोग औज़ार बनाने के लिए हुआ, जो सब धात्विकी प्रगतियों की कुंजी थी।

अपेक्षाकृत अच्छे औज़ारों ने, बिलकुल शाब्दिक अर्थों में, ऊर्जा के एक अन्य स्रोत को जुए में जोतने में सहायता दी, जिसका कि इससे पहले अपर्याप्त रूप से प्रयोग किया जाता था और वह स्रोत था—घोड़ा। इस समय धातु की बनी घोड़ों की नालें और रकाबें तैयार हुईं। इसी समय घोड़े का पट्टा भी बना, जिसके फलस्वरूप खींचने के लिए घोड़े की शक्ति का उससे अधिक उपयोग कर पाना सम्भव हो गया, जितना कि पुरानी जुए और पट्टी की प्रणाली द्वारा हो पाता था। वह पद्धति बैलों के लिए तो उपयुक्त थी, किन्तु उससे घोड़ों का दम घुटने लगता था, क्योंकि घोड़ों की गर्दनें शरीर-रचना की दृष्टि से बैलों और भैंसों की गर्दनों से भिन्न होती हैं। अब घोड़ों का उपयोग हल चलाने के लिए किया जा सकता था, जिसे कि वे बैलों की अपेक्षा कहीं अधिक तेज़ी से चला सकते हैं और खेतों पर काम आने वाली गाड़ियाँ खींचने के लिए भी उनका उपयोग किया जा सकता था। उत्तर-पश्चिमी यूरोप में खेती में बहुत अधिक सुधार हुआ, विशेषरूप से उसके बाद जब कि 'नई दुनिया' की आलू

और मक्का जैसी फसलों का बोना वहाँ प्रारम्भ कर दिया गया। उसी समय घोड़ा गाड़ियों की सवारी भी शुरू हुई, हालांकि इस प्रकार की यात्रा तब तक आनन्ददायक नहीं हो पाई, जब तक कि सड़कें या घोड़ा गाड़ियों में लगी कमानियाँ पर्याप्त अच्छी न बन गईं। घोड़े युद्ध-क्षेत्रों में तोपों और गोला-बारूद की गाड़ियों को भी खींचकर ले जाने लगे।

तोप और बाइबल के साथ सातों समुद्रों की यात्रा

और तोपों का प्रयोग केवल लोहे की ढलाई के आविष्कार के फलस्वरूप ही सम्भव हो सका, जिसके कारण तोपों के गोलों और तोपों का उपयोगी पैमाने पर निर्माण कर पाना सम्भव हुआ। ढले हुए लोहे से बनाये गए पहले आग्नेय शस्त्र मौर्टर थे, जिनका उपयोग सन् 1340 में इटली में किया गया था। मौर्टरों का आविष्कार औग्सबर्ग के मर्कलिन गास्ट ने किया था। उसीने सर्वप्रथम सफल तोड़दार बन्दूक का भी आविष्कार किया था। सन् 1540 में बन्दूक में पेंचदार नली लगाने के सिद्धान्त का आविष्कार हुआ, जिससे कन्धे पर टिका कर चलाई जाने वाली बन्दूक एक वस्तुतः परिशुद्ध शस्त्र बन गई। गत शताब्दी के मध्य तक भी अधिकाँश आग्नेय अस्त्र गज से बारूद भर कर चलाये जाते थे। तोपों में बारूद भरने और उन्हें छोड़ने के लिए एक विशेषज्ञ टुकड़ी होती थी, जिन्हें तोपची (बम्बार्डियर) कहते थे; उन्हें अपने अस्त्रों की नलियों में तोपों के गोलों को ठीक फिट बिठाने में समर्थ होना होता था। इस काम को करने के लिए यह आवश्यक था कि तोपें और उनके गोले मानक आकारों के, जैसे कि बीस पौंड के गोले या दस पौंड के गोले के, आकारों के बनाये जाएँ; और यही बात राइफल की गोलियों पर भी लागू होती थी। इस प्रकार आग्नेय अस्त्रों में ठीक फिट बैठने की परिशुद्धता की आवश्यकता के कारण निर्माण में मानकीकरण की एक धारणा उत्पन्न हुई, जो उसके बाद होने वाले समूचे औद्योगिक विकास के लिए अपने समय में ठीक उतना ही महत्त्वपूर्ण क़दम थी जितना कि आरम्भिक लौह युग में मुद्रा का मानकीकरण रहा था।

स्थल भाग पर होने वाली लड़ाइयों में प्रयोग में आने वाले शस्त्रों के निर्माण में तो जर्मनीवासी अग्रणी रहे, किन्तु वेनिसवासी, जिनोआवासी,

स्पेनवासी और पुर्तगालवासी लोगों की रुचि इस बात में रही कि उन शस्त्रों को समुद्री लड़ाइयों के अनुकूल बना लिया जाय। तोप को जहाज़ पर किस प्रकार जमाया जाय, यह एक ऐसी समस्या थी, जिसने पन्द्रहवीं शताब्दी के सर्वोत्तम वैज्ञानिक मस्तिष्कों को परेशानी में डाला हुआ था। इन जहाज़ों को पालों पर निर्भर रहना होता था, क्योंकि तोप का एक ही गोला गिर कर चप्पुओं की पूरी की पूरी कतार को ध्वस्त कर सकता था। तोप को या तोप की बंधनी (ब्रेस) को गलही (फोरकैसल) डैक पर लगाने से काम नहीं चल सकता था, क्योंकि उन तोपों को उस समय छोड़ना पड़ता, जब कि आक्रान्ता जहाज़ ठीक अपने लक्ष्य के पास होता और पन्द्रहवीं शताब्दी का कोई भी जहाज़ इतना तीव्रगामी नहीं था कि वह खासी तेज पवन में गोला छोड़ने के बाद अपने लक्ष्य से टकरा जाने से बचने के लिए मुड़ सके, विशेष रूप से, तब

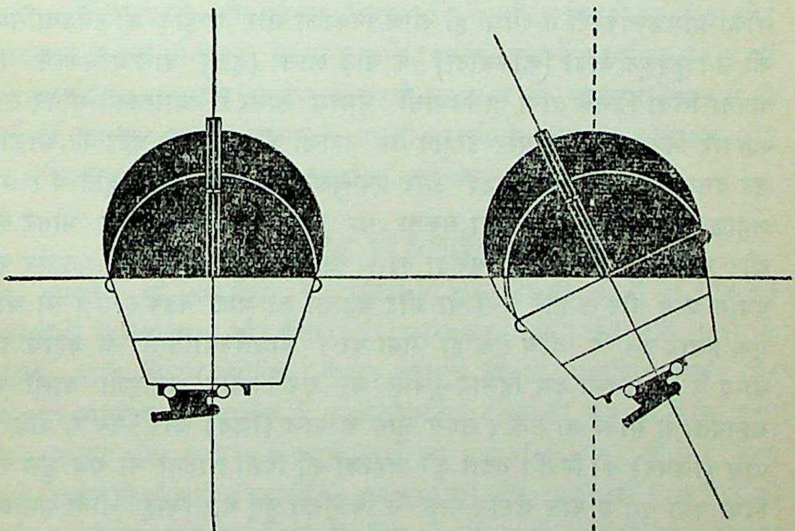

भीतरी झुकाव का सिद्धान्त

जब कि उसमें चप्पू भी न हों। यदि पवन मन्द हो, तो हो सकता था कि तोप के धक्के से पाल ज़ोर से पवन की ओर झटका खा जाय और उससे जहाज

बहुत ही नाज़ुक समय में बेकाबू हो जाय।

इसका हल यह था कि तोपों को जहाज़ के बीच में, दोनों पार्श्वों पर कतारों में लगाया जाय और उनसे पार्श्वों के रुख गोले दागे जाएँ। इस क्रिया-विधि के कई लाभ थे: एक तो गोलाबारी की शक्ति बढ़ जाती; नौ-परिचालन में कम बाधा पड़ती; शिकार जहाज़ को इतनी देर तक लक्ष्य पर रखा जा सकता कि तोपों में दूसरी बार गोले भर कर दागे जा सकें; उस समय, जब कि जहाज़ लहर के उभार पर हो, न कि गिराव पर, गोला दाग़ने के लिए आदेश कहीं अधिक ठीक समय पर दिया जा सकता था; और अपने जहाज़ को क्षति पहुँचाये बिना साफ़ बच निकलने या हाथापाई करके दूसरे जहाज़ पर चढ़ जाने के विकल्पों में से किसी एक को चुनने का अवसर रहता था। परन्तु पार्श्वों के रुख गोले छोड़ने में केवल एक ही ऐतराज़ था कि इससे जहाज़ उलट जा सकता था। इस समस्या का हल भी इटली में तथा अन्यत्र सुशिक्षित नौका-अभिकल्पकारों ने शीघ्र ही खोज निकाला और उन्होंने फ्रीज़लैंडवासियों की उन कुक्कुट नावों (कौकबोटों) के चौड़े खोल (हल) वाले अभिकल्प को अपना लिया जिनके द्वारा हालैंडवासी भूमध्य सागर से बाल्टिक सागर तक व्यापार किया करते थे और उन्होंने उन जहाज़ों की तली को घंटी की आकृति का बनाया, जिसके कि पार्श्व ऊपर एक-दूसरे की ओर झुके होते थे। अब जहाज़ पार्श्व की ओर डगमगा सकता था और उसके बाद फिर 'भीतर की ओर झुक कर सीधा' हो सकता था। इस बीच में, कब्ज़ेदार पतवार का प्रयोग आम तौर से होने लगा था और जहाज़ों का भार बढ़कर पाँच सौ और एक हज़ार टन के बीच तक हो गया था। फ्रीज़लैंडवासियों के जहाज़ इस योग्य थे कि उनका रुख हिलाये-डुलाये जा सकने योग्य वर्गाकृति पालों की सहायता से मोड़ा जा सके। सबसे आगे के पाल (जिब) और सब से पीछे के पाल (जिगर) की स्थिति बदल कर जहाज़ों की दिशा मोड़ना भी अब शुरू कर दिया गया था; ये पाल लैटीन पाल से विकसित हुए थे, जिन्हें नौवीं शताब्दी जितना पहले भारत महासागर से भूमध्य सागर में लाया गया था। भले ही हमें 'सांटा मारिया', 'पिंटा' और 'नीना' बहुत ही कमज़ोर और अपरिष्कृत प्रतीत हों, किन्तु वे प्रशान्त महासागर में चलने वाले उन पोलीनेशियाई दो नावों (कटमरन) को छोड़कर, जिन्होंने कुल चार शताब्दी पहले अपनी लम्बी

यात्राएँ की थीं और जिनकी अपेक्षाकृत छोटी प्रतिमूर्तियों से स्पेन-वासियों और पुर्तगालियों का शीघ्र ही सामना होना था, अपने से पहले के सब जहाज़ों से कहीं अधिक अच्छे थे।

परन्तु पश्चिमी यूरोप से सुदूर पूर्व तक जहाज द्वारा यात्रा करने के लिए बड़े जहाज़ों, तोप, और समंजित किए जा सकने योग्य पालों के अलावा भी कुछ अधिक वस्तु की आवश्यकता थी। इसके लिए समुद्र तट के साथ-साथ जहाज़ ले जाने से आगे बढ़कर और बीच-बीच में पड़ाव के लिए स्थल भागों की खोज करने से, जैसा कि इसके पहले होता रहा था, आगे बढ़कर नौचालन की कला का ज्ञान अपेक्षित था। नौचालकों को चार्टों, तालिकाओं और नियम-पुस्तिकाओं की आवश्यकता थी। इन सबको पर्याप्त मात्रा में तैयार करने के लिए कागज़ और छपाई की आवश्यकता थी और ये दोनों वस्तुएँ शीघ्र ही उपलब्ध हो गईं। 1454 के बाद मुद्रक लोगों ने न केवल बाइबिलें छापना शुरू किया, अपितु कीमियागरी और औषध विज्ञान जैसे वैज्ञानिक विषयों पर ग्रन्थ और तोपखाने और नौचालन के सम्बन्ध में तकनीकी पुस्तकें प्रकाशित करना भी शुरू कर दिया। यद्यपि सागरेस में समुद्री वेधशाला की स्थापना 1419 में हो गई थी, परन्तु छपाई के अभाव में इसकी खोजों के परिणाम कोलम्बस और वास्को डा गामा के समय तक प्रसारित नहीं किए जा सके थे।

सागरेस की अकादेमी

सागरेस की अकादेमी का अध्यक्ष माजोर्का का एक यहूदी था और इस अकादेमी में मुसलमान और ईसाई भी काम करते थे। इन तीन धर्मों के मानने वाले विद्वान ज्योतिष, खगोल, औषध विज्ञान, मानचित्र लेखन और जहाज़ी वास्तुकला के सम्बन्ध में एक सम्मिलित टोली के रूप में काम करते थे। हर नई खोज के बाद वे अपने नक्शों को अद्यावधिक बना लेते थे। स्वयं इस अकादेमी में ही जहाज़ों के उन कप्तानों और कर्णधरों (पाइलट) को प्रशिक्षण दिया जाता था, जिन्हें कि प्रिंस हैनरी अपने जहाज़ों का अध्यक्ष बनाता था। सागरेस में जिन कारावेलों (स्पेन और पुर्तगाल के द्रुतगामी छोटे जहाज़ों) का अभिकल्प तैयार किया गया था, वे समुद्र में जाने वाले सर्वोत्तम जहाज़ माने गए थे। उन्हें लेकर गहरे समुद्रों में यात्रा करते समय जहाज़ के

चालक को तीन बातों का पता रखना होता था : उसकी दिशा, उसकी अपनी स्थिति और मार्ग में पड़ने वाले स्थल भागों की पहचान। दिशा का निर्धारण चुम्बकीय दिक्सूचक यन्त्र द्वारा किया जाता था, जिसका आविष्कार इटली में अमाल्फी में सन् 1268 से पहले किया जा चुका था। परन्तु सच्चे ध्रुव से चुम्बकीय ध्रुव की ओर दिक्सूचक यन्त्र की सूई का विचलन एक ऐसी कठिनाई थी, जिसका हल सन् 1490 तक नहीं किया जा सका। इस वर्ष में या तो कोलम्बस ने, या कैबट ने पहले-पहल यह खोज निकाला कि ध्रुव तारे को देख कर दिशा की गणना किस प्रकार की जानी चाहिए।

अक्षाँश का निर्धारण अरब लोगों के ऐस्ट्रोलेब यन्त्र के आधार पर बनाए गए उपकरणों द्वारा मध्याह्न के समय सूर्य की स्थिति को नाप कर किया जाता था। देशान्तर रेखाओं का निर्धारण करना एक विकट समस्या थी। पुर्तगाली लोग इसका अन्दाज़ एक विवरण-पंजी रखकर लगाते रहते थे, जिसमें वे जहाज़ के वेग की गणना करके दिक्सूचक द्वारा दिखाई गई दिशा में उतनी दूरी जोड़ देते थे। अपनी इस गणना को केवल अन्दाज़ न रखकर कुछ अधिक सही बनाने के लिए वे लम्बी डोरी में बँधा हुआ एक लट्ठा जहाज़ से पानी में फैंक देते थे और जितने समय बाद उस डोरी पर खिचाव पड़ना शुरू होता था, उसे नाप लेते थे। इतना अवश्य है कि यदि उस समय पानी में धारा की कोई गति होती थी, तो वह इन गणनाओं में छूट जाती थी। यद्यपि घड़ियों का आविष्कार सन् 1500 में हो गया था, फिर भी ग्रीनविच में स्थापित किये गए कालमापक (घड़ी, क्रोनोमाटर) का उपयोग सन् 1735 तक देशान्तर रेखाओं के निर्धारण के लिए नहीं किया गया था।

उस समय पुर्तगाली नाविकों को देशान्तर रेखा के प्रश्न की उतनी चिन्ता भी नहीं थीं, क्योंकि उनका तात्कालिक लक्ष्य पश्चिम की ओर अतलान्तक के पार जाना नहीं, अपितु भारत पहुँचने के लिए अफ्रीका का चक्कर लगाना था, कोलम्बस की प्रथम अमेरिका यात्रा से पहले की आधी शताब्दी में पुर्तगाली लोग पश्चिमी अफ्रीका के तट के साथ-साथ दूर और दूर दक्षिण की ओर जाते रहे थे और स्वयं कोलम्बस ने भी अपना प्रारम्भिक प्रशिक्षण इन्हीं समुद्र-यात्राओं में प्राप्त किया था। जब उसने गहरे नीले समुद्र पर अपनी पश्चिम की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ओर यात्रा करने का साहस किया, उससे पहले वह एक मंजा हुआ अफ्रीका-यात्री था।

पुर्तगालियों की जहाज़ों द्वारा अफ्रीका और भारत की यात्रा

सन् 1470 में पुर्तगाली लोग गिनी के समुद्र तट पर पहुँच गए थे और वहाँ उन्होंने काली मिर्च, हाथी-दाँत, स्वर्ण और दासों का लाभदायक व्यापार शुरू कर दिया था, जिससे उन्हें खूब धन मिला और वे और भी दूर-दूर की खोज-यात्राओं पर धन व्यय कर पाने में समर्थ हो गए। वे अपने साथ जो काटने के औज़ार, आग्नेय अस्त्र और बारूद लाए थे, उसके द्वारा पश्चिमी अफ्रीका के देशी राजा अपने राज्य क्षेत्रों का विस्तार करने, मज़बूत केन्द्रीय सरकारें बनाने और एक-दूसरे के साथ लड़ाई छेड़ पाने में समर्थ हुए। इन राजाओं की औपचारिक और अत्यधिक समारोहपूर्ण राजसभाओं के आस-पास कुशल कारीगरों की वैसी ही टोलियाँ बन गईं, जैसी इससे चार हज़ार वर्ष पहले मिश्र के राजाओं की राजसभाओं के आस-पास होती थीं। आयात किये गए काँसे और पीतल पर, देशज लकड़ियों, हाथी-दाँत और चीनी मिट्टी के वर्तनों पर कारीगरी करके इन कारीगरों ने उच्च कोटि की विशिष्ट शैलीयुक्त अत्यन्त सुन्दर कलाकृतियाँ तैयार कीं।

ये राजा व्यापार के लिए दास जंगली प्रदेश के गाँवों पर आक्रमण करके और युद्धों में एक-दूसरे के लोगों को बन्दी बनाकर प्राप्त करते थे और वे अपने ही उन हज़ारों प्रजाजनों को भी दास के रूप में बेच देते थे, जिन्होंने किसी क़ानून का उल्लंघन किया होता था, या किसी वर्जन (टैबू) का भंग किया होता था, या जो ऋणग्रस्त हो गए होते थे। जिस समूह में से यह मानवीय पण्य प्राप्त किया जाता था, वह बहुविध था। अमेरिकी नीग्रो लोगों के पूर्वज अनेक जलवायु वाले प्रदेशों से, अनेक साँस्कृतिक स्तरों से और अनेक सामाजिक वर्गों में से आए थे। उनमें से कुछ तो राजकुमार और राजकुमारियाँ थीं।

कोलम्बस की यात्रा के बाद अमेरिका से खेती किये जाने वाले पौधों की ऐसी नई स्पीशिजें पश्चिमी अफ्रीका में लाई गई, जो उष्ण कटिबन्ध के बनों और घास के मैदानों में उगाये जाने के लिए उपयुक्त थीं; इन पौधों में शकरकन्द,

मंडशिफ (सेमुल आलू, मैंनीयोक) मक्का, मटर और अन्य कई प्रकार की फलियाँ थीं। इन नई और आसानी से उगाये जा सकने वाली खाद्य सामग्रियों के फलस्वरूप जनसंख्या में वृद्धि हुई, जिससे दासों के निर्यात से हुई कमी पूरी हो गई।

सन् 1487 में बार्टोलोम्यू डियास ने आशा अन्तरीप का चक्कर लगाया और पैरो डा कोविलहन अरबों के देश में छिपकर यात्रा करता हुआ भारत के मालाबार तट पर स्थित कालीकट नगर में पहुँचा और वहाँ से वापस पूर्वी अफ्रीका और काहिरा लौटा। डा कोविलहन ने अपनी जो रिपोर्ट लिस्बन में प्रस्तुत की, उसमें उसने उस समय के भारत के सबसे बड़े नगर कालीकट का वर्णन करते हुए उसे अरब व्यापारियों से भरा हुआ बताया। ये अरब लोग मसालों के व्यापार पर इसलिए एकाधिकार स्थापित कर पाने में समर्थ हुए थे, क्योंकि उन्होंने अरब और भारत के बीच के समुद्र तटों को जीत लिया था और क्योंकि उन्हें यह पता था कि वे अपने जहाज़ों को बीच में स्थल भागों पर रोके बिना भारत महासागर की चाप के साथ-साथ मानसून पवनों के मार्ग में किस प्रकार खेकर ले जा सकते हैं।

इन अरब लोगों ने चीन में भी बहुत-से लोगों को अपने धर्म में दीक्षित कर लिया था; इब्न बतूता ने, जो टेंजियर का निवासी था और जिसकी कृतियाँ स्पेन और पुर्तगाल में अवश्य ही ज्ञात रही होंगी, चौदहवीं शताब्दी के द्वितीय चरण में चीन की यात्रा की थी। एमौय में उसे एक पूरा का पूरा अरब नगर मिला था, जिनमें मस्जिदें, मीनारें और सक़ (बाज़ार) भी थे और जो उतना ही पूर्ण रूप से अरब नगर प्रतीत होता था, जितना कि आजकल के कासाब्लाँका नगर का फ्राँसीसी भाग यूरोपीय दिखाई पड़ता है। भारत में अरबों और ईरानियों ने सिन्धु घाटी के, जो अब पश्चिमी पाकिस्तान है, अधिकाँश लोगों को और पूर्वी बंगाल के, जो अब पूर्वी पाकिस्तान है, अधिकाँश लोगों को धर्म परिवर्तन करके मुसलमान बना लिया था। मलायावासी, और जावावासी और अनेक सुमात्रावासी यूरोपीय लोगों के आगमन से पहले ही मुसलमान बन चुके थे, यही हाल फिलीपाइन्स में मिडानाओं के 'मोरो' लोगों का हुआ था। दक्षिणी एशिया और सुदूर पूर्व में यूरोपीय लोगों से पहले पहुँच जाने के

कारण अरब लोगों ने एशियावासियों की बहुत बड़ी संख्या को ईसाई बनने से रोक दिया।

इस ज्ञान का, कि अरब लोग बिनास्थल भागों पर पड़ाव डाले महासागरों के आर-पार यात्रा कर सकते हैं, कोलम्बस के, जो सन् 1492 में कैनेरी द्वीप समूह के गोमरा द्वीप से बहामा द्वीप समूह के वाटलिंग के द्वीप तक 2600 मील पाँच सप्ताह में गया था, और वास्को डि गामा ने निश्चयों पर अवश्य ही कुछ असर पड़ा होगा, जिसने 1497 में अफ्रिका के सारे पश्चिमी तट को एक ओर छोड़कर वर्डे अन्तरीप द्वीपसमूह से आशा अन्तरीप तक सीधी यात्रा की थी; यह दूरी 3800 मील की है और इसे तय करने में उसे तीन मास लगे थे। अफ्रीका के पूर्वी समुद तट के साथ-साथ ऊपर की ओर यात्रा करते हुए वह मालिन्दी, जो केन्या का एक बन्दरगाह है, पहुँच गया। वहाँ के निवासी अरबों और हिन्दुओं ने एक मार्गदर्शक उसके साथ कर दिया, जो उसके जहाज़ों को मार्ग दिखाता हुआ सीधा भारत महासागर के पार ले आया।

जिस प्रकार पश्चिमी अफ्रीका में शक्तिशाली राज्यों का उदय पुर्तगाली लोगों के कारण हुआ, उसी प्रकार भारत और इण्डोनेशिया के साथ आरम्भिक मानसून-व्यापार का पूर्वी अफ्रीका के लोगों पर गहरा प्रभाव पड़ा। किसी अज्ञात समय में पूर्वी भारत के पौधे, जिनमें कचालू और केला सम्मिलित थे, अफ्रीका के वनों में लाये गए थे, जहाँ नीग्रो किसान खुले इलाकों में उनकी खेती करते थे और लोहे की गढ़ाई का कौशल भारत से पूर्वी अफ्रीका में ईसा के जन्म के बाद 500 वर्ष के अन्दर ही पहुँच गया था। क्योंकि ये नए खाद्यों के पौधे आर्द्र उष्ण कटिबन्धों में खेती के लिए उपयुक्त थे और पिघालने और गढ़ाई की नई तकनीकों के कारण देशी लुहारों के लिए लोहे के अत्यन्त समृद्ध स्थानीय स्रोतों से लाभ उठा पाना सम्भव हो गया था, इसलिए मध्य अफ्रीका की जनसंख्या तेजी से बढ़ी और उसका दबाव सब दिशाओं में पड़ने लगा। सन् 1537 में, वास्को डा गामा की पहली यात्रा के लगभग चालीस वर्ष बाद भाला चलाने वाले पशु-पालक 'गल्ला' लोगों के विशाल दल ने इथियोपिया पर हल्ला बोल दिया और उसके आधे प्रदेश को जीत लिया। इस बीच 'बान्तू' लोग पूर्वी अफ्रीका की घासवाली अधित्यकाओं के साथ-साथ दक्षिण की ओर बढ़ते गए और उन्होंने बुशमैनों के पूरे कद वाले सम्बन्धियों

को अपने में खपा लिया और 'ज़ुलू' और 'किकुयू' जैसी रणप्रिय जातियों को जन्म दिया । यदि कई शताब्दियों पहल अज्ञात नाविकों का कोई दल भारत महासागर के पार से कचालू औ लोहारगिरी की कला वहाँ न लाया होता, तो या दक्षिणी अफ्रीका में नीग्रो लोग होते ही नहीं, और यदि होते, भी, तो बहुत थोड़े और वहाँ कोई जाति-समस्या न होती ।

जिस समय पुर्तगाली लोग अफ्रीका की नोक का चक्कर काटकर भारत के समुद्र तट पर पहुँचे थे, उस समय तक यह उपमहाद्वीप, जो आकार में संयुक्त राज्य अमेरिका का आधा है, लोगों और संस्कृतियों का जीता जागता संग्रहालय बन चुका था । इसकी व्याख्या भौगोलिक परिस्थितियों द्वारा आसानी से हो सकती है । उत्तर और उत्तर-पूर्व की ओर पर्वतों की एक दीवार खड़ी है; ये पर्वत संसार के सबसे ऊँचे पर्वत हैं और संसार के सबसे सीधे खड़े पर्वतों में से हैं; इनके कारण एक ऐसी रोक बनी हुई है, जिसे पार कर पाना लगभग असम्भव है । दक्षिण-पूर्व की ओर से समुद्र तट के निकट का प्रवेश-मार्ग संकरा और घने वनों से भरा है । केवल पश्चिम और उत्तर-पश्चिम की ओर प्राकृतिक प्रवेश द्वार हैं और ये भी केवल तुलनात्मक दृष्टि से ही सुगम हैं । खैबर दर्रे से होकर कि गयेए एक के बाद एक आक्रमणों में नए लोग नई तकनीकों और नए विचारों को लेकर भारत में आए । किन्तु ये तकनीकें और विचार पुरानी तकनीकों और विचारों के स्थानापन्न नहीं, अपितु उनके पूरक होते थे । पश्चिमी और उत्तरी किसान और पशुचारक, दोनों ही भारत के उत्तर-पश्चिमी भागों में अपने आप को बहुत कुछ घर पर सा ही अनुभव करते थे । इन उत्तर पश्चिमी भागों में वर्षा सर्दियों में होती है और ग्रीष्मकाल की गर्मी सूखी होने के कारण सह्य होती है । किन्तु थार मरूस्थल के पूर्व की ओर सर्दियों में वर्षा नहीं होती; तापमान अक्षाँश और तुँगता के अनुसार शीतल से गर्म तक, सब प्रकार का पाया जाता है, किन्तु लगभग सभी जगह ग्रीष्म ऋतु आर्द्र और गर्म होती है । दक्षिण-पश्चिमी मानसून पवनों द्वारा समुद्र से लाई गई वर्षा वनस्पतियों का एक ऐसा चक्र बनाती है, जो उससे बिलकुल भिन्न होता है, जिस पर कि पश्चिम की कृषि आधारित है। जब तक दक्षिण-पूर्व एशिया के खाद्यान्नों के पौधे, जिनमें कचालू और चावल भी सम्मिलित हैं, इण्डोचीन और स्याम से भारत में नहीं लाये गए थे, तब तक अधिकांश भारत, जिसमें गंगा की घाटी

और प्रायद्वीप सम्मिलित हैं, सघन खेती के लिए तैयार नहीं हुआ था।

स्वयं जलवायु के कारण भी विजय और आत्मसात् करण की प्रक्रिया को मन्द करने के लिए बाधाओं की एक शृंखला सी बनी हुई थी। ठण्डे तरुहीन मैदानों से आने वाला हर कोई विशालकाय उत्तरी व्यक्ति, या यहाँ तक कि पतला दुबला मरुस्थल का यायावर (खानाबदोश), जो शुष्क गर्मी को सहने का अभ्यस्त होता था। ग्रीष्म काल के मानसून की होश बिगाड़ देने वाली आर्द्र गर्मी को नहीं सह सकता था। जो लोग शरीर-रचना की दृष्टि से पहले ही इस विकटतम जलवायु के लिए अनुकूलित हो चुके थे, उन्हें लगभग किसी भी जगह से आने वाले नवागन्तुकों की अपेक्षा एक अधिक प्राकृतिक सुविधा प्राप्त थी। प्रत्येक आक्रमण के बाद नए विजेता सारी ग्रीष्मऋतु में हाँफते हुए और पसीने से तर लेटे रहते थे और उनमें केवल पंखा झलने या शीतल पेय (शर्बत) लाने का आदेश देने से कुछ अधिक परिश्रम करने का दम नहीं रहता था। गंगा की घाटी और प्रायद्वीप के विजित लोगों को केवल चुपचाप रहकर प्रतीक्षा भर करनी पड़ती थी और वे रक्तपात के बिना ही उन स्वामियों पर विजय प्राप्त कर लेते थे, जो स्वयं अपनी भी देख-रेख कर पाने में असमर्थ थे।

दक्षिण की ऊबड़-खाबड़ पहाड़ियों के छायादार वनों में घुंघराले बालों वाले आहार संचयक लोगों के छोटे-छोटे गिरोह पेड़ों के नीचे घूमा फिरा करते थे; ये शर्मीले और छोटे कद के लोग थे, जो कौपीन पहनते थे और जिनके शस्त्र धनुष और खुदाई करने की छड़ियाँ होती थीं। वहाँ पेड़ों के तले वे कन्द मूल इकट्ठे करते थे, फल चुनते थे और छोटे-मोटे शिकार मार लेते थे। उनके संवत्सर का चरमोत्कर्ष का समय वह मधु संचय का काल होता था, जब जंगली मधुमक्खियाँ अपना मौसम का काम पूरा कर चुकी होती थीं। उस समय ये 'पर्णांक' लोग (पीपल ऑफ दी लीव्ज़) सहभोज करते और उत्सव मनाते थे। इस प्रायद्वीप के उत्तर-पूर्वी भाग की पहाड़ियों में कई लाख 'मुंडा' लोग रहते थे। वे अपने छोटे-छोटे बगीचों जैसे भूमि-खंडों पर, जो पोलीनेशियाई लोगों के बगीचों जैसे होते थे, कचालू की खेती करते थे। उधर नीलगिरि पर्वतों के ठंडे पश्चिमी पठार पर, जो तीन हज़ार से पाँच हज़ार फीट तक ऊँचा है, टोडा' कहलाने वाले दूधियों की एक विशेष जाति अपनी भैंसे चराती थीं। ये लोग उन भैंसों को दुहते थे और अपने पड़ौसी किसानों को घी देते थे, जो

उबाले गए मक्खन का एक गन्धयुक्त, किन्तु देर तक न बिगड़ने वाला रूप है। इस प्रायद्वीप के अधिकांश लोग गंगा घाटी के लोगों की भाँति किसान थे, जो चावल पर निर्भर थे। चावल एक ऐसी फसल है, जो प्रति एकड़ इतना अधिक अन्न उत्पन्न करती है कि इसके द्वारा, आधुनिक उद्योगों को छोड़कर, प्रति वर्गमील सबसे अधिक लोगों का निर्वाह होता है।

भारत का सांस्कृतिक इतिहास

पुर्तगाली लोगों के आगमन के समय भारत के लोगों की आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थिति आजकल भारत और पाकिस्तान कहे जाने वाले प्रदेश के वर्तमान निवासियों की भाँति, केवल इस उपमहाद्वीप के साँस्कृतिक इतिहास को दृष्टि में रखते हुए ही, अर्थात् नव-पाषाणिक, काँस्य और लौह युगों के सम्पूर्ण काल पर दृष्टिपात करके ही ठीक-ठीक समझी जा सकती है।

भारत का इतिहास आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र लोगों के छोटे-छोटे स्थानीय समूहों के क्रमशः परस्पराश्रित इकाइयों की एक समूची व्यवस्था में समंजित होते जाने का इतिहास रहा है। इनमें से कुछ समूह आदिवासी शिकारी कबीले थे, कुछ अन्य समूह नवपाषाणिक और धातु युग के ग्राम-समाज थे, और कुछ अन्य आक्रान्ताओं के कबीले थे। जब इनमें से कोई भी भारतीय सभ्यता की परिधि में आया, तब उसने कोई विशेष कार्य अपना लिया, जो अंशतः उसके अपने ऐतिहासिक व्यवसायों पर आधारित होता था और अंशतः नई आवश्यकताओं को प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न हुआ होता था। वे आर्य लोग, जिन्होंने 1700 ईस्वी पूर्व के आस-पास आक्रमण करके सिन्धु घाटी की काँस्ययुगीन सभ्यता के नगरों को नष्ट कर दिया था, अपने साथ चार वर्णों वाली व्यवस्था लेकर आए थे, जो अन्य भारोपीय-भाषा-भाषी लोगों की, जिनमें कि आयरलैंडवासी भी सम्मिलित हैं, वर्ग व्यवस्था जैसी ही थी। अपने इस अपेक्षाकृत सरल क्षत्रियों, पुरोहितों (ब्राह्मणों), कारीगरों और आश्रित किसानों (शूद्रों) के ढाँचे में उन्होंने मनुष्यों की अन्य अनेक श्रेणियों को भी जोड़ लिया था, जो अलग-अलग प्रदेशों में भिन्न-भिन्न होती थीं। इन चारों वर्णों के अपने-अपने पेशे, अपने विशेष कर्त्तव्य, विशेष अधिकार. और वर्जन होते थे और

अनेक सोपानों वाली सामाजिक सीढ़ी में उसका एक बहुत ही सूक्ष्मतापूर्वक नामित स्तर होता था।

इस प्रकार जो भारतीय वर्ण-व्यवस्था विकसित हुई, वह इतिहास और जलवायु की परस्पर क्रिया का परिणाम थी। जो लोग भारत में सबसे अधिक समय से रह रहे थे, वे उन कार्यों को करने में सबसे अधिक सक्षम थे, जिनमें दीर्घ काल तक ऊर्जा के व्यय की अपेक्षा होती है और इसके साथ ही उनकी साँस्कृतिक पृष्ठभूमि भी सरलतम थी। उनके जिम्मे अपेक्षाकृत अधिक निम्नकोटि के व्यवसाय पड़े। जो लोग शरीर रचना की दृष्टि से सबसे कम समर्थ थे, उनके हाथ में उद्योग विद्या के सबसे बढ़िया साधनों का नियन्त्रण था और उन्होंने अपने लिए अपेक्षाकृत हल्के काम चुन लिए। इस प्रकार जो श्रम का विभाजन हुआ, वह औद्योगिक क्रान्ति से पहले संसार में कहीं भी हुए श्रम-विभाजनों में सबसे अधिक जटिल था। लोग अपनी जातियों में इसलिए पक्के तौर पर स्थित नहीं हो गए कि उनकी संस्कृति जड़ हो गई थी जैसा कि सामान्यतया समझा जाता है क्योंकि संस्कृति तो चाहे धीमे-धीमे ही सही, किन्तु निरन्तर बदल रही थी, अपितु इसलिए क्योंकि श्रम-विभाजन शारीरिक आधार पर आधारित था। इसी कारण यह प्राकृतिक क्षेत्र में पशुओं की स्पीशिज़ों में पाए जाने वाले परिस्थिति-विज्ञान पर आधारित श्रम-विभाजन की सीमा तक पहुँच गया था।

इस श्रम-विभाजन के कारण कुछ भारतीय लोग अपना जीवन विद्या की साधना में और विशेष रूप से दार्शनिक चिन्तन में लगा पाते थे। ईसा या डाक्टर आइन्स्टीन से भी पहले उन्होंने सम्पूर्ण अस्तित्व की एकता और उसकी सापेक्षता की धारणा बना ली थी। गणित के सम्बन्ध में विचार करते हुए उन्होंने शून्य की धारणा बनाई और अंकों की स्थान-प्रणाली का आविष्कार किया, जिसका सीधा सादा अर्थ हमारी वह वर्तमान प्रणाली है, जिसमें अरबी अंकों का प्रयोग इस प्रकार मिलाकर किया जाता है कि दायीं ओर का अंक इकाई का सूचक, उससे अगला बायीं ओर का अंक दहाई का सूचक और इसी प्रकार आगे सैंकड़ा, हज़ार और लाख इत्यादि का सूचक होता जाता है। स्पष्ट चिन्तन के लिए और केवल दीर्घायुष्य के लिए भी शरीर-क्रिया विज्ञान के महत्त्व को अनुभव करके उन्होंने मानव-शरीर की स्वत:चालित प्रक्रियाओं के सम्बन्ध में और विशेष रूप से प्राणायाम के सम्बन्ध में परीक्षण किये। इससे योग का

जन्म हुआ।

ईरानी और अरब लोग इन प्राणायामों के ज्ञान को ईरान और ईराक ले गए, जहाँ रहस्यवादी सन्तों के समूचे के समूचे सम्प्रदाय बन गए। ये सम्प्रदाय प्राणायामों द्वारा ब्रह्म के साथ या एक-दूसरे के साथ मानसिक सम्बन्ध स्थापित कर सकते थे, जो आत्म-सन्तुष्टि का शराब या अफ़ीम की अपेक्षा कहीं सस्ता साधन था और सम्भाव्यत: शरीर-रचना के लिए कम हानिकारक भी था, हालाँकि यह बात विवादग्रस्त है। इस तकनीक के आधार पर विकसित हुए सम्प्रदाय स्पेन और मोरक्को जितनी दूर-दूर तक फैल गए। इन सम्प्रदायों ने इस्लाम की दुनिया में ऐसे संघों (असोसियेशनों) की प्रणाली प्रस्तुत की जिनके पदक्रम एक-दूसरे से ऊँचे या नीचे थे और यह प्रणाली अन्यथा पदक्रमहीन (एक समान) समाज में विन्यास लाने के लिए आवश्यक थी। ये सम्प्रदाय अब तक भी चले आ रहे हैं, जैसे उदाहरण के लिए मिश्र का 'इखवान अल मुसल्मीन' और ईरान का 'फिदायान इस्लाम'। मध्य पूर्व को भारत की इस देन के महत्त्व का मूल्य बहुधा कम आँक लिया जाता है।

ईस्वी सन् 1500 तक भारत की सभ्यता अनेक क्षेत्रों में उच्च शिखरों तक पहुँच चुकी थी। इससे पहले वह नव-पाषाणिक, काँस्ययुग और लौह युग की संस्कृतियों के वैसे ही अनुक्रम में से गुज़री थी। परन्तु इस इतिहास की पुन: कल्पना करना इसलिए कठिन है, क्योंकि वह लिखाई, जो आजकल पढ़ी जा सकती है, छठी शताब्दी ईस्वी पूर्व से पहले तक शुरू नहीं हुई थी जब हिन्दु धर्म के पवित्र काव्यों को लिखने के लिए वर्णमालात्मक लिपि का प्रयोग शुरू किया गया था। यह लिपि दो प्रकार की थी, ब्राह्मी, जो उससे पहले की किसी सामी (सैमीटिक) वर्णमाला से, सम्भवत: दक्षिणी अरब की सैबियन वर्णमाला से निकली थी; और खरोष्ठी, जो 'आरामेक' लिपि को अपने अनुकूल बना कर तैयार की गई थी; इसे भारतीय लोगों ने देरियस के समय, जब पश्चिमी भारत अचीमेनियम साम्राज्य का अंश बन गया था, ईरानियों के साथ काम करने वाले लिपिकों से सीखा था। ये दोनों लिपियाँ अब तक भी प्रयोग में आती हैं। यही हाल अरबी वर्णमाला का, जो आठवीं शताब्दी में प्रयुक्त होने लगी थी और लैटिन वर्णमाला का है, जो मुख्यतया अंग्रेजी के लिए प्रयुक्त की जाती है। भारत में सड़कों पर ऐसे नाम-पट्ट दिखाई पड़ना कोई असाधारण

बात नहीं है, जिन पर ये तीनों वर्णमालाएँ लिखी दिखाई पड़ती हैं।

किन्तु लेखन का एक रूप बहुत पहले समाप्त हो गया था। यह रूप अंशतः चित्रलिपि का था, जिनका उपयोग सिन्धु घाटी के काँस्य-युगीन लोग किया करते थे; इन लोगों की सभ्यता ईस्वी पूर्व तीसरी सहस्राब्दी के उत्तरार्द्ध के ईराक और मिश्र की सभ्यताओं के समकक्ष थी। इस प्राचीन संस्कृति के अस्तित्व का पता 1856 में तब चला, जब जौन ब्रंटन नामक एक इंजीनियर ने कराची और लाहौर के मध्य ईस्ट इण्डियन रेलवे के दक्षिणी अनुभाग को बनाते हुए हड़प्पा के प्राचीन नगर में से सैकड़ों गाड़ियाँ भर कर पक्की इटें रेल की पटड़ी पर रोड़ी डालने के लिए निकलवाईं। उसके बाद से इस स्थान तथा अन्य स्थानों पर कई अँग्रेज और भारतीय अन्वेषकों ने विधिपूर्वक खोज का काम किया हैं। हमें यह पता है कि सिन्धु घाटी के प्राचीन निवासी उन्नत कृषक थे। जो खेती के लिए सिंचाई का उपयोग करते थे। वे बढ़िया कुम्हार थे, जो चाक का इस्तेमाल करते थे; और वे काँसा ढालने में और पत्थर पर नक्काशी करने में कुशल थे। ईंट और पत्थर पर किया गया उनका वास्तु-कार्य बहुत ही बढ़िया था; उनकी मल-निकास प्रणाली (शहर की नालियाँ) सारे संसार में सबसे अधिक उन्नत थी और उनका नगर-आयोजन भी विलक्षण था, क्योंकि उन्होंने अपने नगरों को वस्तुतः वर्गाकार खंडों में बसाया था और उन्हें एक केन्द्रीय राजमहल तथा मन्दिर के अहाते के चारों ओर यों ही नहीं बस जाने दिया था। सुमेरिया के साथ उनके व्यापारिक सम्बन्ध थे; इस बात का हमें इसलिए पता है क्योंकि इन दोनों पर मुहरों का परस्पर विनिमय हुआ दिखाई पड़ता है। परन्तु अभी तक कोई ऐसा 'चम्पोलियन' उत्पन्न नहीं हुआ, जो उनकी लिखावट को पढ़ सके; और हिन्दुओं के, जिनके पूर्वजों ने उनके नगरों को नष्ट किया था, आरम्भिक धार्मिक ग्रन्थों में उनका उल्लेख इतना अस्पष्ट है कि वह उपयोगी नहीं है।

उन बस्तियों के स्थानों की, जिन्हें आर्यों ने स्वयं गंगा की घाटी में बसाया था, अभी तक खुदाई नहीं हुई है। जब ठीक ढंग से काम किया जायेगा, तब भी हमें पत्थर, धातु और मिट्टी के बर्तनों से बढ़कर किसी कारीगरी की वस्तु के मिलने की आशा कम ही है, क्योंकि यहाँ मिट्टी इतनी सीली है कि इसमें अधिक नश्वर वस्तुएँ देर तक परिरक्षित नहीं रह सकतीं। यूनानियों के

साक्ष्य के आधार पर हमें पता है कि यहाँ 300 ईस्वी पूर्व में नगर बनाये जा चुके थे। वे उससे कितना पहले बने थे, इस विषय में हम निश्चय से कुछ नहीं कह सकते। इस काल में, जो कि पूरी तरह लौह युग था, भारतीय जीवन के हमारे विवरण यूनानी वर्णनों और भारतीय धार्मिक साहित्य के विश्लेषण के सम्मिश्रण के आधार पर तैयार किये गए हैं। उसके बाद के काल के लिए हमारे पास रोमन और चीनी और अन्ततः अरब अभिलेख हैं। यूनानियों के काल तक भारतीय सभ्यता सारतः वह रूप धारण कर चुकी थी, जिस रूप में यह बाद में पहचानी जाती रही है। यद्यपि आर्य लोगों ने सिन्धु घाटी के नगरों को ध्वस्त कर दिया था, किन्तु वे उनकी सभ्यता को उखाड़ नहीं सके थे, क्योंकि प्राचीनतर लोगों के कौशल और रूझान बिलकुल स्पष्ट रूप से बचे रहे हैं। भारत के परवर्ती इतिहास को देखते हुए यह प्रत्याशित ही था। कोइ भी वस्तु कभी भी नष्ट नहीं होती; केवल कुछ लोग और कुछ प्रवृत्तियाँ उसमें जुड़ जाती हैं।

इस मिश्रित संस्कृति में से हाथ के उद्योगों में, विशेषरूप से धात्विकी, कारुकार्य (कारचोबी) और सूती वस्त्रों के निर्माण के कई बढ़िया कौशल उत्पन्न हुए। इसमें से ही हिन्दू धर्म भी निकला, जिस में भ्रान्ति के प्रत्येक स्तर पर विद्यमान हर एक व्यक्ति के लिए एक आस्था (धर्म) थी और जिसमें देवताओं के उतने ही समूह थे, जितनी कि जातियाँ और व्यवसाय थे। इससे धार्मिक काव्य के लिए और नाटकों के लिए, जो यूनानी नाटकों जितने ही प्राचीन हैं, विषयवस्तु प्राप्त हुई। हिन्दू मूर्तिकारों ने अलग-अलग कलाकृतियों और विशाल तथा अत्यधिक सज्जात्मक ढंग के पत्थर के वास्तु-कार्य, जो अपनी अलंकार-पूर्णता के लिए विख्यात हैं, दोनों के लिए हीं पहले यूनानी परम्परा की नकल की और बाद में उसे अपने अनुकूल ढाल लिया। इन कौशलों को भारतीय लोग इण्डोचीन ले गए, जहाँ पर अंगकोर-वात का विशाल ध्वंसावशेष अब भी एक जंगल के बीच में खड़ा है, और वहाँ से वे उसे जावा ले गए, जहाँ बोर-बोदुर (वड़ बहादुर) में एक ऐसा ही स्थान बचा हुआ है। इस्लाम के अनुयायी होते हुए भी जावावासी अब भी हिन्दुओं के कठपुतली के नाच करते हैं। बालीवासी, जो खुल्लमखुल्ला हिन्दू धर्म को मानते हैं, हिन्दू नाटक के प्राचीन रूपों को जीवित रखे हुए हैं, जैसा कि सन् 1952 और 1953 में हज़ारों

अमेरिकावासियों को तब देखने का अवसर मिला था, जब बालीवासियों की एक नाट्य-मंडली ने अमेरिका का दौरा किया था।

हिन्दू धर्म में से बौद्ध धर्म निकला, जो अफ़गानिस्तान, श्रीलंका, बर्मा, इंडोनेशिया, तिब्बत, मंगोलिया और जापान तक फैल गया। स्वयं भारत में बौद्ध धर्म लुप्त हो गया, सम्भवत: इसलिए कि उसमें जात-पात को स्थान न था; यह सबसे ज़ोरदार रूप में उन देशों में बचा हुआ है, जिनमें एशिया की अल्ताई पर्वत शृंखला की धुरी के पूर्व की ओर मंगोलजातीय लोग बसते हैं। ईसाइयत का प्रवेश भारत में ईसा की चौथी शताब्दी में, यदि उससे पहले न हुआ हो तो, सीरियाई लोगों द्वारा हुआ, जिन का यह दावा है कि सन्त थामस उनका सब से पहला धर्म प्रचारक था। अपने समानता के सिद्धान्त के कारण ईसाइयत भारत में विद्यमान सामाजिक स्थिति के लिए अनुपयुक्त रही और पुर्तगालियों के आगमन के काल तक यह बम्बई प्रदेश में एक छोटी-सी और अज्ञात-सी बस्ती का धर्म बनी रही। उसके बाद वे पारसी लोग, जो अरब आक्रमणों के समय ईरान को छोड़ आए थे, जरथुश्त्र के धर्म को यहाँ लाये। ये लोग अब व्यापारियों, विद्वानों और शिक्षकों का एक सम्पन्न वर्ग हैं, जो बम्बई में केन्द्रित है। ईसाइयत के बाद इस्लाम आया; यह सैद्धान्तिक दृष्टि से ईसाइयत की ही भाँति जात-पात से रहित है; इस धर्म को विजेताओं के एक समूह ने लोगों पर ज़बरदस्ती थोप दिया। फिर भी यह उत्तर-पश्चिम के मरुस्थलों और पहाड़ों के इलाके का ही एक प्रादेशिक धर्म बन सका। अधिकांशत: मुसलमान भी केवल एक जाति मात्र बनकर रह गए। मुसलमान भारतीयों ने ईरानी वास्तुकला की उतने ही विशुद्ध रूप से नकल की, जितनी कि हिन्दू वास्तुकला मिश्रित रही है, और उन्होंने ताजमहल जैसी लोकविश्रुत श्रेष्ठ कलाकृतियों का निर्माण किया। हिन्दू धर्म और इस्लाम के मध्य समझौते के रूप में सिक्खों के एक नये धर्म का आविर्भाव ठीक उस समय हुआ, जब कि पुर्तगाली लोग भारत महासागर में अरबों और ईरानियों की शक्ति को नष्ट कर रहे थे।

जैसा कि इसके धर्मों की बहुविधता से सूचित होता है, उस समय भारत ईरानी या रोमन साम्राज्यों की भाँति एक इकाई नहीं था। यह एक सामाजिक 'रैसैन्क्रीस' (जाति-समुदाय) थी, जो पूरे महाद्वीप में फैली हुई थी और

जिसमें एक स्थानीय संस्कृति टिटमाइस की एक जाति की भाँति अपनी पड़ौसी संस्कृति के ऊपर तक पहुँची होती थी। राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक संस्थाएँ तथा संघ (असोसियेशन) काफ़ी कुछ जटिल थे। यद्यपि किसी अधिसंस्था ने उन सब को किसी एक ही ढाँचे में नहीं गढ़ा था, फिर भी श्रम का एक पेचीदा जातीय विभाजन ही ऊर्जा के अधिकाँश स्थानीय स्रोत—मानवीय माँसपेशियाँ, पशुओं की माँस-पेशियाँ, सरल भट्ठियाँ और सीधी पवन तथा जल-शक्ति—प्रस्तुत करता था। परवर्ती काल में रेल की लाइनों, मोटरों, विमानों, मुद्रण मशीनों, रेडियो-केन्द्रों, चलचित्र नाट्य गृहों और कारखानों का आरम्भ हो जाने से एकता की दिशा में द्रुतगति से परिवर्तन हुआ है।

चीनी सभ्यता

सन् 1551 में अल्फोंजो डि अल्बुकर्क ने भारत के राज्यपाल की पुर्तगाली उपाधि धारण करके मलक्का पर, जो आधुनिक सिंगापुर के निकट है, अधिकार कर लिया और इस प्रकार चीन को जाने वाले समुद्री मार्ग पर प्रभुत्व जमा लिया। मलक्का में पुर्तगालियों ने चीनी व्यापारियों को विचित्र वस्त्र पहने हुए देखा और बन्दरगाह में एक नये प्रकार के जहाज़ का निरीक्षण कर पाने में सफल हुए। यह जहाज़ चीनी 'जंक' था, जिसे देखकर वे पहले तो हँसे, क्योंकि उन्हें वह बहुत ही भौंडा मालूम हुआ, परन्तु बाद में जाकर उन्हें यह पता चला कि ये जहाज़ समुद्र यात्रा के लिए कितने अधिक उपयुक्त थे। चीन के विषय में उन्हें मार्को पोलो और उसके भाइयों द्वारा भेजे गए विवरणों द्वारा और धर्म प्रचारक कार्पिनी और रुब्रक के विवरणों द्वारा जानकारी थी; ये सबके सब लगभग दो शताब्दी पहले मंगोल साम्राज्य के आरम्भिक दिनों में स्थल मार्ग से एशिया को पार करके वहाँ पहुँचे थे। यह सम्भव है कि उन पुर्तगालियों ने इब्न बतूता की चीन यात्राओं के अरबी भाषा में लिखे हुए विस्तृत विवरणों को भी पढ़ा हो। अपेक्षाकृत ताज़ा जानकारी मलक्का के उन चीनी व्यापारियों से प्राप्त हुई होगी, जिन्हें उन्होंने व्यापार करते रहने दिया था।

अपने देश में रहने वाले चीनी लोग सभी यूरोपवासियों को सन्देह की दृष्टि से देखते थे और चीनी बन्दरगाहों में अरब व्यापारियों ने उन्हें यह बताया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

था कि पुर्तगाली लोग रक्त-पिपासु और बर्बर लोग हैं और चीनियों ने उनकी इस बात पर विश्वास कर लिया था। चीनी लोग शेष दुनिया से इतने विच्छिन्न रहे थे कि वे अपने आप को सब विदेशियों की अपेक्षा ऊँचा मानने लगे थे और विदेशियों को वे अविश्वास और घृणा की दृष्टि से देखते थे। चीन में जातीय पक्षपात (पूर्वाग्रह) अपने चरम शिखर पर पहुँच गया था। गहरी आँखें, लाल चेहरे, पिंगल दाढ़ियाँ और लम्बी नाकें चीनियों को देखने में उतनी ही गन्दी मालूम होती थीं, जितनी कि यूरोपवासियों के शरीर की गन्ध उनकी नाकों को बुरी लगती थी। चीनियों को सब यूरोपवासी एक से दिखाई पड़ते थे और उन्हें उन सब में से बदबू आती थी।

एक आरम्भिक असफलता के बाद सन् 1557 में पुर्तगालियों को कैन्टन नदी के दक्षिणी किनारे पर एक प्रायद्वीप में मकाओं में एक व्यापारिक केन्द्र स्थापित करने की अनुमति मिल गई। इस केन्द्र में पैर जमाकर वे मिंग राजवंश के एक विशाल, सुव्यवस्थित और शक्तिशाली साम्राज्य से लेन-देन करने लगे। सन् 1368 में चीनियों ने मंगोल लोगों को 'विशाल दीवार' के परे खदेड़ दिया था और अपने इस कार्य द्वारा उन्होंने यूरोप के साथ स्थल मार्ग द्वारा अपने व्यापारिक सम्बन्धों को तोड़ लिया था। इस नये राजवंश ने विशुद्ध चीनी होने के कारण अपना ध्यान आन्तरिक मामलों पर केन्द्रित किया। इसके सम्राटों ने प्रशासन सेवा के लिए प्रतियोगितात्मक परीक्षाएँ लेने की प्रणाली को फिर चालू किया और कर्मचारियों को उनके घरों से दूर स्थित प्रान्तों में भेजा। कागज़ी मुद्रा को इस आवश्यकता के द्वारा, कि कम से कम 70 प्रतिशत कर कागज़ी मुद्रा में ही चुकाये जाने चाहिएँ, दूसरी मुद्रा के साथ समान मूल्य पर रखा जाता था। प्रान्तों से कर के रूप में मिले चावल को ढोकर राजधानी तक लाने के लिए सैनिकों से काम लिया जाता था, जिससे खर्चा आधा रह जाता था। नए नियुक्त किये गए कमिश्नर जल-मार्गों का निरीक्षण करते थे। जल-मार्गों में से मिट्टी निकाली जाती थी, बाढ़ की रोकथाम के लिए लकड़ी के बाँध बनाये जाते थे और स्थल मार्ग पर परिवहन और संचार की सारी व्यवस्था में सुधार किया गया। न केवल प्रान्तों के मध्य ही व्यापार में वृद्धि हुई, अपितु चीनी जहाज़ों के कप्तान जावा, सुमात्रा, मलक्का, फिलिपाइन्स, इंडोचीन और जापान तक जाते थे। वास्तु कला खूब पनपी और चित्र-

कला तथा कांसे और पोर्सिलेन के सामान तैयार करने में बहुत निपुणता प्राप्त की गई। चीनियों के पास, कम से कम उस समय, देने के लिए तो बहुत कुछ था, किन्तु उसके बदले पुर्तगाली लोग जो कुछ दे सकते थे, उसकी उन्हें आवश्यकता नहीं के बराबर थी। शार्क मछली के पंख, स्विफ्ट (एक प्रकार की अबाबील) के घोंसले (चिड़िया के घोंसले का रसा (शोखा) बनाने के लिए), बन्दरों की पित्त-पथरियाँ, गैंडे के सींग और ईरान की खाड़ी और ईस्ट इंडीज से आने वाले इस प्रकार के अन्य सामान चीनी लोग स्वयं ही अरब लोगों की सहायता से प्राप्त कर सकते थे। जब यूरोपियन लोगों ने इस व्यापार पर नियन्त्रण कर लिया, तब स्थिति बदल गई।

अधिकाँश अमेरिकी लोग चीनी सभ्यता को स्थायी रूप से एक जगह स्थिर वस्तु समझते हैं। जब वे टेलीविज़न के 'व्हाट इन दि वर्ल्ड' (संसार का हाल) नामक कार्यक्रम में हमारे अतिथियों को एक सुन्दर फूलदान उठाकर और उसे चाव के साथ रगड़ कर आनन्द से 'मिंग !' कहते हुए और किसी अन्य, राजदरबार के हिजड़े की चिकनी मूर्ति के चमकीले सिर को टकोर का एकाक्षरी 'हान !' कहते सुनते हैं, तो उनके लिए यह धारणा बना लेना आसान होता है कि चीन सदा से एक ऐसा साम्राज्य रहा है, जिसमें विभिन्न नामों से सुन्दर वस्तुएँ तैयार की जाती रही हैं। परन्तु वस्तुतः बात ऐसी नहीं है। चीन का विश्वसनीय लिखित इतिहास ईस्वी पूर्व 841 से शुरू होता है, हालांकि उसका जो अधिकृत संकलन इस समय प्रयोग में आ रहा है, वह 100 ईस्वी पूर्व तक नहीं लिखा गया था। 841 ईस्वी पूर्व से पहले का अभिलेख कुछ काल्पनिक सा हो जाता है। इस बिन्दु पर पहुँचकर इतिहास का स्थान पुरातत्व ले लेता है। पुरातत्व और इतिहास के मिले-जुले अभिलेख से, जो 2000 ईस्वी पूर्व से कुछ पहले से लेकर उसके बाद की अवधि का है, संसार के अन्य भागों की भांति चीन में भी एक अविराम उन्नति हुई दिखाई पड़ती है; यह एक ऐसी उन्नति है, जो केवल तभी समझ में आ सकती है, जबकि उसे समूचे रूप में देखा जाय।

नव पाषाणिक काल में[1] एक कृषि करने वाले लोग, जो मांस के लिए

---

[1] ऐच० जी० क्रील, 'दि बर्थ ऑफ चाइना' प्रकाशक, जौन डे कम्पनी, न्यूयार्क।

कुत्ते और स्क्रोफा किस्म के सूअर, दोनों को पालते थे और जो धूसर रंग के मिट्टी के बर्तन बनाते थे, उत्तर-पूर्वी चीन में रहते थे और उसी समय या उसके कुछ थोड़ा-सा बाद वे लोग, जो भेड़ और बकरियाँ भी पालते थे और मिट्टी के चित्रित बर्तन बनाते थे, पश्चिमी चीन के कान्सू प्रान्त में रहते थे। इन दोनों के बाद नव पाषाणिक काल के पिछले भाग में एक ऐसे लोग आये, जिनके पास घोड़े और ढोर दोनों थे और जो चमकीले काले मिट्टी के बर्तन बनाते थे और जिन्होंने एक शहर बनाया था, जिसके चारों ओर कुटी हुई मिट्टी की एक दीवार थी जिसकी परिधि एक मील थी। यह शहर उत्तर-पूर्वी चीन शतुंग में 'चेंग त्सू याई' नामक स्थान पर बसा था। यद्यपि इस सामग्री का काल-निर्धारण कर पाना असम्भव है, फिर भी यह माना जाता है कि यह उस समय से पहले का नहीं हो सकता, जब कि मिश्र, सुमेरिया और भारत में घोड़ा निश्चित रूप से पहले-पहल पहुँच चुका था और इस प्रकार इसका समय लगभग 1700 ईस्वी पूर्व बैठता है।

इन नव-पाषाणिक काल के पिछले लोगों की एक प्रथा यह भी थी कि वे पशुओं की स्कन्धास्थियों (कन्धे की हड्डियों) के द्वारा भविष्य बतलाया करते थे। यह प्रथा संसार में काफी सामान्य रूप से प्रचलित है और मैंने स्वयं भी इसे अल्बानिया में देखा था। इस हड्डी का प्रत्येक अंश एक विशेष अर्थ का सूचक होता है। इस प्रकार, जोड़ के उलूखल का अर्थ मकान होता है और उसकी गहराई या उथलेपन से यह सूचित होता है कि वह मकान खाली रहेगा या धन से भरा रहेगा। इस हड्डी के फलक पर बने हुए छोटे-छोटे गड्ढे पालनों के सूचक होते हैं और भविष्यवक्ता उलूखल से उनकी दूरी के आधार पर यह बता सकता है कि अगले बालक का जन्म घर से कितनी दूर होगा। अपारदर्शक सफेद धब्बे मृत्यु के द्योतक होते हैं और उनकी स्थिति से फिर यह पता चल सकता है कि प्रश्न पूछने वाले की मृत्यु अपने घर में होगी या घर से बाहर।

परन्तु अल्बानिया में इस प्रकार की भविष्यवाणी भुनी हुई भेड़ में से ली

1937, और सी० डब्ल्यू० विशप, 'दि नियोलिथिक एज इन नॉर्थ चाइना' ऐंटीक्विटी खंड 7, 1933 पृष्ठ 383—404।

गई स्कन्धास्थि द्वारा की जाती है। चीनी प्रथा अनेक, अमेरिकी आदिवासियों की भाँति, यह थी कि अस्थिफलक को गर्म किया जावे और उससे जो तरेरें उसमें पड़ जायें, उनके आधार पर भविष्यवाणी की जाय। उत्तरी चीन में होनान प्रान्त के उत्तरी भाग में 'आन याँग' नामक स्थान पर उन्नीसवीं शताब्दी में, यदि उससे भी पहले न मिली हों तो, किसानों को अपने खेत जोतते हुए पीली पड़ी हुई पुरानी हड्डी के सैंकड़ों टुकड़े मिट्टी में मिले थे। उनमें से कुछ किसान इन पुरानी-सी दीखने वाली हड्डियों को शहरों में ले गए और वहाँ उन्होंने उन हड्डियों को सर्पदैत्य (ड्रेगन) की हड्डियाँ बता कर बेच दिया। सर्पदैत्य की हड्डियाँ दवाई के काम आती थीं। इनमें से कई हड्डियों पर, लगभग हर दस हड्डियों में से एक पर, कुछ अक्षर खुदे हुए थे; इन सबको आग पर तपाया गया था। शहरों में औषध-निर्माताओं ने इस लिखाई को यत्नपूर्वक खुरच दिया क्योंकि वे समझते थे कि सर्पदैत्य पढ़े-लिखे नहीं रहे होंगे। सन् 1899 में इस प्रकार की बिना खुरची हड्डियों के नमूनों की पहली किस्त चीनी विद्वानों के सामने आई और उन्होंने देखा कि ये उत्कीर्ण लेख न केवल चीनी लिखाई का एक अत्यन्त प्राचीन रूप हैं, अपितु 'शांग' राजवंश के काल के जीवन का अमूल्य अभिलेख भी हैं। इस काल को अब तक पौराणिक काल माना जाता था और यह समझा जाता था कि यह काल 1765 ईस्वी पूर्व से 1123 ईस्वी पूर्व तक रहा था। सन् 1899 के बाद से अब तक इस प्रकार के एक लाख से अधिक उत्कीर्ण लेख प्राप्त हो चुके हैं और सन् 1945 तक इनमें से लगभग पंद्रह हज़ार प्रकाशित किए जा चुके थे। ये लेख ऐसे प्रश्नों के रूप में हैं, जिन्हें किसी राजा या सामान्य नागरिक ने किसी देवता से पूछा है। कोई भविष्यवक्ता पुजारी इन हड्डियों को आग पर तपाने के बाद बनने वाली ततेरों को पढ़कर उत्तर सुना देता था। इन उत्तरों में दी गई जानकारी में मध्यपूर्व के स्मारकों पर उत्कीर्ण कांस्य युग और लौह युग के राजाओं के दम्भयुक्त लेखों से यह अन्तर है कि यह अतिशयोक्ति के बिना और ईमानदारी के साथ दी गई होगी। कोई भी मनुष्य अपने देवता से सलाह माँगते हुए अतिशयोक्ति नहीं कर सकता।

इसी 'आन याँग' के प्रदेश से कब्रों को लूटने वाले लोग बहुत समय तक खुदाई में अनेक प्रकार के काँसे के बर्तन निकालते रहे थे। इनमें से कुछ बर्तनों में

लम्बे-लम्बे तीन पाए थे और दुहरी खुली हुई टोंटियाँ लगी हुई थीं; कुछ अन्य पात्र लम्बे, पतले फूलदानों की आकृति के थे। इन पात्रों का संग्रहकर्ता लोग, विशेष रूप से विदेशी लोग बड़ी उत्सुकता के साथ खरीद लेते थे। कला और धात्विकी विज्ञान, दोनों के ही विशेषज्ञ इन पात्रों को सारे संसार में किसी भी स्थान पर और किसी भी काल में की गई काँसे की ढलाई का सर्वोत्तम नमूना समझते हैं। इनमें से कुछ पात्र तो ऐसे हैं, जिनमें से एक-एक साठ-साठ हज़ार डालर में बिका है। इस प्रकार हार्वर्ड में प्रशिक्षित डाक्टर लि० चि० ने सन् 1928 में चीनी सरकार की ओर से आन याँग के स्थल की खुदाई शुरू की, तो उसे अत्यन्त शक्तिशाली रूप से संगठित, कब्रें लूटने वाले व्यवसायियों के प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। ये लोग अपने एकाधिकार की रक्षा करने के लिए बन्दूकों और पिस्तौलों का प्रयोग करने से भी नहीं हिचके। परन्तु लि० चि० इस स्थान के एक अंश की खुदाई करने में सफल हुआ और उसके बाद वहाँ अब फिर काम शुरू हो गया है।

आन याँग 'शाँग' राज्य की राजधानी था, जिसका काल 1400 ईस्वी पूर्व निर्धारित किया गया है। लि० चि० को एक नगर के मध्य में, जिसकी कि बाहर दीवारों का ठीक-ठीक पता वह नहीं चला सका, कुटी हुई मिट्टी के एक चबूतरे के ऊपर बना हुआ 92 फुट लम्बा महल प्राप्त हुआ। राजमहल के साथ ही लगे हुए उसी प्रकार के राजकीय कारखाने थे, जैसे कि काँस्य युग में मिश्र और सुमेरिया में थे। इन कारखानों में काँसे का काम करने वाले पत्थर का काम करने वाले और हड्डियों से बाण बनाने वाले कारीगर काम करते थे। राजकीय मकबरों में से काँसे के शस्त्र और रथों का साज सामान प्रभूत मात्रा में मिला है। साम्यवादी सरकार की ओर से की गई खुदाइयों में ग्यारह रथ निकले हैं, जिनमें लकड़ी के बने हुए अंशों की बिलकुल ठीक-ठीक बनावट ज्यों की त्यों देखी जा सकती है। ये रथ चिकनी मिट्टी में गड़ रहे थे। ज्यों-ज्यों लकड़ी गलती गई, त्यों-त्यों एक अन्य प्रकार की मिट्टी रिस-रिस कर उसकी जगह भरती गई, यहाँ तक कि अन्त में उसने सारी लकड़ी का स्थान बिलकुल यथावत् ले लिया।

वह काँसा, जिससे ये बर्तन, शस्त्र और रथों का साज सामान बनाये गए थे, उसी स्थान पर पिघलाया जाता था। कच्ची मैलाचाइट धातु और धातु का मैल भी वहाँ पाया गया है। यह कच्ची धातु उन्हें कहाँ से प्राप्त होती थी,

यह हमें पता नहीं और न हमें यही पता है कि वे वंग (रांगा) कहाँ से लाते थे, जो इस मिश्रण में 17 प्रतिशत है। वंग के निकटतम ज्ञात स्रोत युन्नान और मलाया हैं। अधिकाँश काटने के औज़ार पत्थर के बने थे, जैसे कि वे नव-पाषाणिक काल में होते थे। इनमें से एक विशेष प्रकार का चाकू के ढंग का औज़ार एक अर्धचन्द्रकार काठी-निर्माता का चाकू है, जो ऐस्किमो लोगों के 'ऊलू' जैसा है। इस प्रकार का औज़ार यूरोप या पश्चिमी एशिया के स्थलों में प्राप्त नहीं हुआ। यहाँ खेती के कोई औज़ार नहीं मिले, जिससे यह विश्वास करना पड़ता है कि मिश्र की भाँति चीन में भी ये औज़ार लकड़ी के बने होते थे।

आन यांग में जो पशुओं की हड्डियाँ मिली हैं, उनमें बैल, जल-महिष, घोड़े, दो प्रकार के सूअरों, हाथी, ह्वेल मछली, बन्दर, भेड़, और या बकरी, कुत्ते और पालतू मुर्गी की हड्डियाँ सम्मिलित हैं। इन पशुओं के विषय में और भी प्रमाण स्वयं उत्कीर्ण लेखों से प्राप्त होता है, जिनमें इन पशुओं के सूचक अक्षर आलेख्य का सा रूप धारण कर लेते हैं। हाथी को इस रूप में दिखाया गया है कि एक मनुष्य का हाथ उसकी सूँड पर रखा हुआ है, जो सम्भवतः इस बात का द्योतक है कि हाथी को पालतू बना लिया गया था। जन्तुओं की इस तालिका से यह पता चलता है कि पशु वहाँ दो दिशाओं से पहुँचे थे। घोड़े, बैल, भेड़, बकरी और सूअर की एक जाति सुस स्क्रौफा पश्चिम की ओर से आई प्रतीत होती है, जबकि जल-महिष, मुर्गी और दूसरे प्रकार का सूअर सुस विक्टेटस दक्षिण-पूर्व की ओर से आए प्रतीत होते हैं। यदि बैल ककुद वाला था, तो वह भी दक्षिण-पूर्वी था। यदि हाथी पालतू था, तो वह भी दक्षिण-पूर्व की ओर से ही आया था। परन्तु इस बात का कुछ प्रमाण मिलता है कि उस समय उत्तरी चीन में जलवायु अब की अपेक्षा कुछ अधिक गर्म था और हाथी जंगली जीव-जन्तुओं का एक ही एक अंश थे। इस भूभाग का वर्तमान वनस्पति-विहीन रूप अवश्य ही इसके पहले समय के पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं का बहुत कम संकेत करता है। उस समय वहाँ वनपर्याप्त रहे होंगे, क्योंकि इमारतें लकड़ी की बनी थीं और उनमें बड़े-बड़े खम्भों और कड़ियों का प्रयोग किया गया था। इसमें से कुछ लकड़ी अब भी इतनी अच्छी दिशा में है कि उसका कार्बन-14 द्वारा विश्लेषण किया जा

सकता है और हमें आशा है कि यदि कभी संसार की स्थिति अनुकूल हुई, तो यह विश्लेषण किया भी जायगा।

आन यॉंग के लोगों का प्रधान खाद्यान्न ज्वार (मिलैट) था, जो दो प्रकार की होती थी। इससे वे बीयर शराब बनाते थे, जो धार्मिक समारोहों में बहुत महत्त्वपूर्ण समझी जाती थी। वे गेहूँ की भी खेती करते थे। चावल के विषय में हमें पक्का निश्चय नहीं है, जिसे एक भविष्यवक्ता की हड्डी पर एक अक्षर द्वारा संदिग्ध रूप से सूचित किया गया है। रेशम सम्भाव्यत: उनके पास था, किन्तु इस विषय में हमें पक्का निश्चय नहीं है। सन एक अपरिष्कृत वस्त्र सामग्री के रूप में काम आता था। वे लोग दूर-दूर तक व्यापार करते थे, जिसका पता वहाँ पाई गई ह्वेल मछली की हड्डी से और उनके द्वारा कौड़ियों की मालाओं का मुद्रा के रूप में उपयोग से चलता है। कौड़ी एक प्रकार का घोंघा है, जो केवल गर्म पानी में ही रहता है। कुछ शंख वैज्ञानिकों का कथन है कि शांग काल की कौड़ियाँ यॉंग्त्सी के दक्षिण की ओर स्थित चीनी समुद्र तट से लाई गई थीं और कुछ अन्य शंख-वैज्ञानिकों का कथन है कि उनको सिंगापुर के पश्चिम की ओर भारत महासागर के किसी भाग से लाना पड़ा होगा। इन दोनों ही दशाओं में, इन कौड़ियों की विद्यमानता इस बात की सूचक है कि शाँग लोग ठीक उसी प्रदेश से सम्पर्क बनाये हुए थे, जिसमें कि जल-महिष, विट्टेटस सूअर और सामान्य मुर्गी को पालतू बनाया गया था।

शाँग लोगों की एक प्रथा यह भी थी, जो अन्यत्र भी बिलकुल अज्ञात नहीं थी, कि वे राजकीय अंत्येष्टि के अवसर पर बहुत बड़ी संख्या में मनुष्यों की बलि दिया करते थे। आन यॉंग में वैध और अवैध, दोनों प्रकार के खुदाई करने वाले लोगों ने जो बहुत बड़ी संख्या में अस्थि-कंकाल खोद कर निकाले हैं, वे इस प्रथा और जीवन-मरण के सामान्य क्रम के परिणाम थे। 1939 के मध्य तक वैध खुदाई करने वालों ने शाँग काल के 1100 से अधिक अस्थि-कंकाल प्राप्त किए थे; इनमें वे राजाओं के कंकाल सम्मिलित नहीं है, जिन्हें कब्र लूटने वालों ने नष्ट कर दिया था।

लि० चि० ने आन यॉंग में प्राप्त हुई खोपड़ियों को ब्रिटेन में शिक्षा प्राप्त एक शरीर-रचना शास्त्री डाक्टर टी० ऐल० वू को सौंप दिया था। वू ने इस संग्रह पर दस वर्ष से भी अधिक समय तक कार्य किया, किन्तु अपने परिणाम

प्रकाशित नहीं किए। उसके बाद जब जापानियों ने उत्तरी चीन पर क़ब्ज़ा कर लिया, तब लि० चि० अपनी उन खोपड़ियों को और बहुमूल्य काँस्य-निर्मित सामग्री को एक अस्थायी राजधानी से दूसरी अस्थायी राजधानी तक ले जाता रहा और यहाँ तक कि वे अन्त में ताईपेई (ताइवान की राजधानी) पहुँच गए।

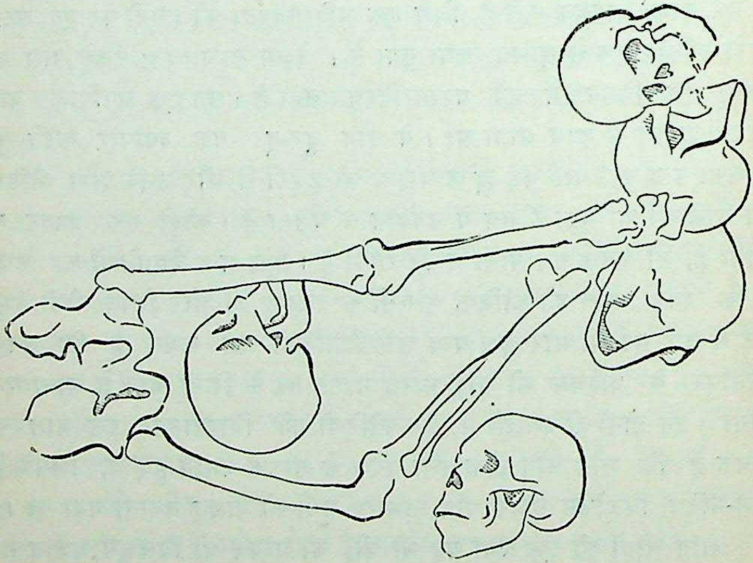

आन याँग में एक क़ब्र में पड़े अस्थि-कंकाल

जिन सन्दूकों में वे खोपड़ियाँ रखी हुई थीं, उनमें से एक को खोलने पर सन् 1953 में लि० चि० को वू के हस्तलेख में लिखी हुई एक कापी मिली, जिसमें 161 खोपड़ियों के सात ढंग से लिए गए मापों की संख्याएँ लिखी हुई थीं। सन् 1956 में लि० चि० ने मुझे ये खोपड़ियाँ दिखाईं और मैंने उनमें से 9 का पूरी तरह माप किया।

ये बलिदानों के शिकार हुए मनुष्य जाति की दृष्टि से एक नहीं थे। जहाँ उनमें से अधिकाँश लोगों के सिर की बनावट उत्तरी चीन में इस समय रहने वाले लोगों की सी कुछ लंबोतरी-सी थी, वहाँ उनमें से 26 प्रतिशत लोग गोल सिर वाले और बहुत चपटे चेहरे वाले थे, जो आजकल के कुछ साइबेरियाई

कबीलों से मिलते-जुलते थे। एक पुरुष और एक स्त्री की खोपड़ी काकेशियाई जाति की प्रतीत होती थी। साम्यवादी चीन की एक पत्रिका में छपे एक चित्र में हड्डियाँ और खोपड़ियाँ, दोनों ही लम्बोतरी दिखाई गई हैं और ये हड्डियाँ आजकल के उत्तरी चीन के लोगों की हड्डियों की भाँति पतली हैं।

अनेक चीनी, विशेष रूप से वे, जिनके हाथ में इस समय चीन की शासन सत्ता है, इस बात में गर्व अनुभव करते हैं कि वे स्वयं और उनकी संस्कृति, दोनों ही स्वदेशज हैं। यदि यह बात सत्य हो, तो वे लोग संसार में बिलकुल अनोखे हैं। संसार के सभी जनन-सम्बन्धी मिश्रण और वरण के परिणाम-स्वरूप बने हैं। सब संस्कृतियाँ आविष्कार और आदान के मिश्रण का फल है। परन्तु चीन भौगोलिक दृष्टि से 'पुरानी दुनिया' के अधिकाँश बड़े-बड़े प्रान्तों की अपेक्षा अधिक विच्छिन्न रहा है। तिब्बत के पर्वतीय प्रदेश उसे दक्षिण-पश्चिम की ओर से शेष संसार प्रभावी रूप से अलग किये हुए है और अल्ताई पर्वतमाला का मेरूदंड उत्तर की ओर अपेक्षाकृत कम सूक्षम रूप से इस रोक को बनाये हुए है। समय-समय पर अक्रान्ता लोग इस रोक को पार करके दोनों दिशाओं में जाते रहे हैं। हूणों और मंगोलों ने इसे पार करके पश्चिम की ओर यात्राएँ की थीं और वे यूरोप तक जा पहुँचे थे। फिर यह मानने का कोई कारण नहीं कि उस से पहले के काल में घुड़सवार लोग इस रोक को पार करके दूसरी दिशा में, अर्थात् अन्य देशों से चीन में क्यों न जा सके होंगे, जैसा कि बिलकुल शुरू-शुरू के नव-पाषाणिक काल के लोगों ने किया था।

परन्तु विट्टेटस सूअर, जल-महिष, पालतू मुर्गी और हाथी, ये सबके सब दक्षिण-पूर्व की दिशा में संकेत करते हैं और उन पौधों में से भी, जिनकी चीनी लोग ऐतिहासिक अभिलेख का आरम्भ होने के समय खेती करते थे, अनेक इसी दिशा में संकेत करते हैं। वनस्पति वैज्ञानिक इस विषय पर एकमत हैं, जैसा कि बहुत ही कम होगा है, कि शुष्क और आर्द्र, दोनों प्रकार के चावल की खेती पहले-पहल हिन्द चीन, बर्मा, स्याम या पूर्वी भारत में कहीं उष्ण

---

1. पेकिंग की 'चाइना रिकन्स्ट्रक्टस' नामक पत्रिका के जुलाई-अगस्त, 1952 के अंक 4 में पृष्ट 13-18 पर हूसिया नाइ का लेख 'न्यू आर्कियोलोजिकल डिस्कवरीज।

कटिबन्धीय मानसून के जंगलों में हुई थी। यही स्थान इन विचाराधीन पशुओं का निवासस्थान भी है। उष्ण कटिबन्धीय वनों की दशाएँ कैन्टन नदी तक चीन के दक्षिणी समुद्र तट के साथ-साथ चलती-चली जाती हैं, या किसी समय चलती चली जाती थीं। इसमें बहुत सन्देह नहीं है कि दक्षिण-पूर्वी चीन ने उस नव-पाषाणिक संस्कृति में भाग लिया था, जिसने केले, विलायती फणस (ब्रैड फूट), केवड़ा (पैण्डेनस), कचालू, शहतूत और उन अन्य पौधों को उत्पन्न किया था, जो किसी अज्ञात काल में समुद्र पार करके पोलिनेशिया ले जाये गए थे।

शाँग काल के बाद के चीनी इतिहास में एक के बाद एक राज्य काल आते हैं, जिनका आरम्भ चाउ लोगों से होता है, जिन्होंने शाँग राजधानी आन याँग को नष्ट कर दिया था। इसमें सन्देह नहीं कि जिसे आजकल चीन कहा जाता है, उसमें उस समय एक साथ अनेक राज्य विद्यमान थे। ज्यों-ज्यों विशुद्ध चीनी लोग फैलते गए, त्यों-त्यों अनेक जातियों में से कुछ को चीन से बाहर धकेल दिया गया। थाइ लोगों के साथ यही बात हुई, जो नीचे स्याम की ओर चले गए और वहाँ वे अब तक भी हैं। अन्य लोग, जैसे 'मियाओ' 'याओ' और 'लि' लोग अब तक भी दक्षिणी प्रान्तों में चीनी लोगों के अधीन ग्रामीण आबादियों के रूप में जहाँ-तहाँ बिखरे हुए हैं और हैनान द्वीप पर भी हैं। ये लोग अब तक भी चीनी भाषा से भिन्न अपनी पुरानी भाषाओं को बोलते हैं। याँग्त्सी नदी के दक्षिण की ओर समुद्र तट के साथ-साथ ईस्वी पूर्व की पहली सहस्राब्दी में एक 'वू' नामक जाति के लोग रहते थे, जो चीनियों को विशेष रूप से नापसन्द थे। ये लोग बड़ी-बड़ी नौकाओं में बैठकर समुद्र में जाते थे और पंखों के बने हुए कलापूर्ण शिरोवस्त्र धारण करते थे और अपने शत्रुओं के सिर काट कर उनका संग्रह किया करते थे।[1] उनकी भाषा अनेकाक्षरी बताई जाती है, जो उस भाषा-परिवार की सब भाषाओं से भिन्न

---

[1] देखिये रौबर्ट हाइन-गैल्डर्न, Bedeutung und Herkunft der Alesten Hinterindischen Metaltrommeln, एशिया मेजर, खंड 8; 1932—33, पृष्ठ 519-37; और वर्न हाई कार्ल ग्रैन, 'दि डेट ऑफ अर्ली दोंग-सोन कल्चर', म्यूजियम ऑफ फार ईस्टर्न ऐंटिक्विटीज, स्टाकहोम; बुलेटिन 14, 1942 पृष्ठ 1-28

है, जिसमें कि चीनी भाषा आती है। इस विषय में प्रमाण काफी अच्छे हैं, हालाँकि वे केवल पारिस्थितिक प्रमाण हैं, कि इन 'वू' लोगों का, या उनसे मिलते-जुलते अन्य लोगों का उस द्वीप समूह में इंडोनेशियाई लोगों के प्रसार से कुछ न कुछ सम्बन्ध था, जिनमें कि इण्डोनेशियाई लोग अब रहते हैं और पोलीनेशियाई और माइक्रोनेशियाई लोगों के उद्‌गम से भी उनका कुछ सम्बन्ध था।

पश्चिम की भाँति चीन में साम्राज्य का आरम्भ लौह धात्विक, घुड़सवार सेना और ऊँटों के आरम्भ से पहले नहीं हुआ था। उत्तर-पश्चिमी चीन में रहने वाले 'चिन' नामक लोग इन तीनों का प्रयोग करते थे। लोहे की तकनीकें या तो पश्चिम से, या भारत से, या इन दोनों से ही आई हो सकती हैं। घुड़सवारी निश्चित रूप से पश्चिम से आई थी। दो ककुद वाला ऊँट, जहाँ तक चीन का सम्बन्ध है, उतना ही बड़ा रहस्य है, जितना पश्चिम में लौह युग के आरम्भ में एक ककुद वाले ऊँट का आगमन। बैक्टि्यन (दो ककुद वाले) ऊँट के सबसे पुराने ज्ञात चित्र वे हैं, जो ईरान में अचीमेनियन काल के स्मारकों पर बने हुए हैं और इस प्रकार जिनका काल पाँचवीं शताब्दी ईस्वी पूर्व ठहरता है। इसके एक सौ वर्ष बाद हैरोडोटस ने, जिसे निकट पूर्व के एक ककुद वाले ऊँटों का तो भली भाँति ज्ञान था, काले सागर के उत्तर की ओर मैदानों में रहने वाले सीथियाई और सरमातियाई लोगों के वर्णन में

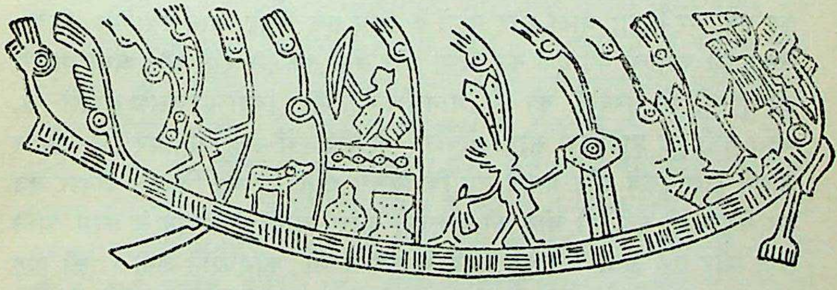

'वू' लोगों का जहाज; काँस्य निर्मित एक बरसाती ढोल से लिया गया चित्र।
[रेखाँकन रौबर्ट हाइन-गैल्डर्न द्वारा।

ऊँटों का उल्लेख बिलकुल ही नहीं किया। क्योंकि इन लोगों की संस्कृति चीन की सीमाओं तक फैले हुए सब भारोपीय-भाषा-भाषी यायावरों की संस्कृति से मिली हुई थी, इसलिए हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि इनमें से किन्हीं भी लोगों के पास ऊँट नहीं थे, अन्यथा वे बहुत उपयोगी होने के कारण सब जगह फैले गए होते। जब चीनियों ने ईस्वी पूर्व की तीसरी शताब्दी में ऊँटों को प्राप्त कर लिया, तब उन्होंने पश्चिमी एशिया के मरुस्थलों को पार करके पश्चिम की ओर रेशम का व्यापार करके बहुत लाभ उठाया।

घुड़सवार सेना द्वारा चिन लोगों ने अपने पड़ोसियों को जीत लिया और लोहे के औज़ारों से उन्होंने दूर-दूर तक नहरें खोद डालीं। 222 ईस्वी पूर्व में चिन राज्य के अध्यक्ष चेंग ने पहली बार चीन को मिलाकर एक किया। उनके देश को 41 प्रान्तों में बाँट कर एक मिश्रित सोपानतन्त्र स्थापित किया; प्रत्येक प्रान्त में अध्यक्ष एक असैनिक राज्यपाल और एक सेनाध्यक्ष होता था, और साथ ही एक निरीक्षक भी होता था। उसने प्रादेशिक क़ानूनों को मिला कर एक कर दिया; बाटों और नापों के लिए एक स्थिर मान स्थापित किया; लेखन की प्रणाली को एक कर दिया और यहाँ तक कि रथों और अन्य वाहनों की धुरियों की लम्बाई का भी मानकीकरण कर दिया। उसके आदेश से, पहले बनी हुई प्रादेशिक सीमा-दीवारों के बीच में उन्हें परस्पर इस प्रकार जोड़ने वाले टुकड़े और बनाये गए कि जिनसे चीन की वह विशाल दीवार बन कर तैयार हो गई, जो चीन को पश्चिमी बर्बर लोगों से बचाने के काम आने लगी और एक ऊँची उठी हुई सड़क के रूप में भी काम आने लगी। जो हूण लोग इस दीवार के आश्रय में रह रहे थे, उनको उसने निकाल बाहर किया; और उन्होंने पहले मध्य एशिया पर फिर यूरोप पर आक्रमण किया और निरन्तर तब तक पश्चिम की ओर बढ़ते चले गए, जब तक कि सन् 551 में फ्राँस में कातालौनियन मैदानों की लड़ाइयों में अत्तिला की पराजय न हो गई।

सर्वप्रथम सम्राट् (शिह हुआँग ती), जैसा कि अब चेंग को कहा जाने लगा था, उन्नत परिवहन और संचार साधनों द्वारा अपनी सता को बनाए रखने में समर्थ था। उसने पीली नदी को गहरा करवाया और उसके किनारे के साथ-साथ एक ऊँची सड़क बनवाई, जो उन दुर्गों की श्रृंखला को परस्पर जोड़ती था, जिन्हें उसने बनवाया था। उसने डाक की सड़कों का भी एक जाल-सा

तैयार करवा लिया; ये सड़कें पचास क़दम चौड़ी थीं और इनके किनारे वृक्ष लगे हुए थे; ये देश के प्रमुख भागों को एक-दूसरे से जोड़ती थीं। चेंग ने इन सड़कों पर डाक भिजवाने की व्यवस्था चालू की। उसने एक बीस मील लम्बी नहर खुदवाई, जो याँग्त्सी नदी का सम्बन्ध उतर के अन्तर्देशीय जलमार्गों से जोड़ती थी। यद्यपि उसका राजवंश उसके अपने निकम्मे पुत्र के साथ ही समाप्त हो गया और उसके बाद भी ऐसे समय आए, जब चीन की एकता समाप्त हो गई, फिर भी साम्राज्य बना रहा और तब से लेकर अब तक चीन सदा एक राजनीतिक और सांस्कृतिक इकाई बना रहा है। भारत से चीन में यह अन्तर है कि वहाँ लोगों का कोई सजीव स्तरीकरण नहीं है। वहाँ के जलवायु में ऐसी कोई बात नहीं है, जिससे किसी एक जाति को किसी अन्य जाति की अपेक्षा अधिक सुविधा रहे और न यह जलवायु उन दूरस्थ पहाड़ियों में, जिनमें कि गैर चीनी लोग अब तक भी बचे हुए हैं, इतना गर्म ही है कि वे वहाँ शेष चीन से पृथक् रहकर एक आदिमकालीन आहार-संचयक संस्कृति को बनाए रख सकें। चीन के 'आदिवासी' जाति और उद्योग विद्या दोनों की दृष्टि से चीनियों से घनिष्ठ रूप से मिलते-जुलते हैं। जलवायु के कारण जहाँ भारत में उप जातियों (जात-पाँत) के बनने में सहायता मिली, वहाँ चीन में उससे एकरूपता बढ़ी। इस बीच में जलमार्गों के विस्तार के कारण नौका द्वारा यात्रा में वृद्धि हुई और वाहनों द्वारा होने वाला यातायात पनप नहीं सका; और वहाँ धान की खेती के प्रसार के कारण न केवल किसी एक अकेली सरकार के नीचे संगठित संसार की सबसे बड़ी जनसंख्या तैयार हो गई, अपितु उससे वहाँ पालतू पशुओं का प्रयोग न करके हाथ की मेहनत से खेती की पद्धति पनपी; विशेष रूप से घोड़े की उपेक्षा हो गई और उसका महत्त्व घट गया।

ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों चीनी लोग अधिकाधिक संख्या में उपकरणों, पौधों तथा अन्य सुविधाओं का अविष्कार या खोज करते गए। इस विषय में युक्ति-प्रत्युक्तियाँ बहुत लम्बी और आवेशापूर्ण हैं कि इन साधनों का उपयोग पहले चीन में शुरू हुआ या पश्चिमी देशों में। चीन के पक्षपोषकों का विश्वास है कि मुद्रण, बारूद और दिक्सूचक यन्त्र यूरोपवासियों ने चीन से

ग्रहण किए थे।[1] और उद्योग विद्या के इतिहास के सबसे प्रमाणिक अध्येताओं का कथन है कि इन वस्तुओं का आविष्कार यूरोप में स्वतन्त्र रूप से हुआ।[2] मेरी दृष्टि में यह विवाद निरर्थक है, क्योंकि यह उसी प्रकार गौरव प्राप्त करने की इच्छा पर आधारित है, जैसे कि हाल ही में सोवियत रूस द्वारा विमान, पनडुब्बी और दूरभाष (टेलीफोन) जैसी वस्तुओं का सबसे पहले आविष्कार करने के दावे हैं। यह बात बार-बार प्रमाणित हो चुकी है कि कोई एक ही आविष्कार, यदि परिस्थितियाँ एक जैसी हों तो, विभिन्न स्थानों में स्वतन्त्र रूप से हो सकता है। यह भी प्रमाणित हो गया है कि यह हो सकता है कि कोई व्यक्ति किसी वस्तु के किसी अन्य स्थान में प्रयोग किए जाने के विषय में कुछ सुने और उसे उससे मिलती-जुलती वस्तु तैयार करने की प्रेरणा मिले। उदाहरण के लिए सैकोया ने, जो एक अनपढ़ दोगला व्यक्ति था, यह सुना तो था कि श्वेतजातीय लोग लिखते हैं, किन्तु उसने लिखना सीखा नहीं था, फिर भी उसने चैरोकी मूलवासियों के लिए एक वर्णमाला का आविष्कार कर डाला था।

मुद्रण के कारण चीनी संस्कृति में कोई क्रान्ति नहीं हुई, क्योंकि चीनी लोग अपनी लिखाई में हज़ारों विभिन्न ध्वनि-अक्षरों का प्रयोग करते हैं और उनके लिए अक्षरों का फौंट (टाइपों का पूरा समूह) तैयार कर पाना कठिन था। यूरोप की भाषाओं में, जो वर्णमाला के आधार पर लिखी जाती हैं, केवल 26 (कुछ कम या अधिक) अक्षरों का प्रयोग होता है। यूरोप में कागज बनाने के आरम्भ के साथ-साथ मुद्रण के आविष्कार के कारण पुस्तकों को बहुत बड़े पैमाने पर तैयार कर पाना सम्भव हो गया और पुस्तकों की सहायता से सब सामाजिक वर्गों के लोगों ने पढ़ना शुरू कर दिया। धार्मिक साहित्य के प्रसार के कारण प्रोटैस्टैण्ट क्रान्ति और कैथोलिक प्रति-धर्म-सुधार सम्भव हो सका।

---

1. देखिए र्क बौड, 'चाइनाज़ गिफ्ट्स टू दि वैस्ट' एशियाटिक स्टडीज इन अमेरिकन ऐजुकेशन, अमेरिकन कौन्सिल ऑन ऐजुकेशन, वाशिंगटन, डी० सी०, 1942।
2. देखिए आर० जे० फौर्बेस की पुस्तक, 'मैन दि मेकर', प्रकाशक हैं हैनरी शुमैन, न्यूयार्क, 1950।

बारूद के विषय में चीनियों और यूरोपवासियों की मनोवृत्तियाँ विशिष्ट रूप से भिन्न थीं। यूरोपवासी ऐसे राष्ट्रों की एक शृंखला में विभक्त थे, जो एक-दूसरे से घोर प्रतियोगिता कर रहे थे और यहाँ तक कि एक-दूसरे से युद्ध भी करते रहते थे, इसलिए वे ऐसा कोई उपाय ढूंढना चाहते थे, जिससे वे एक दूसरे को उड़ा दे सकें; किन्तु चीन अपने आप में एक पूर्ण इकाई था, जिसमें बारूद का उपयोग कहीं अधिक भले रूप में समारोहों में आतिशबाजी की चर्खियाँ चलाने और पटाखे छोड़ने के लिए किया जा सकता था। दिक्सूचक यन्त्र चीनियों की अपेक्षा यूरोपवासियों के लिए अधिक उपयोगी था, क्योंकि जो चीनी नाविक अन्तर्देशीय जलमार्गों के जाल से बाहर जाते भी थे, उन्हें अगले बन्दरगाह तक पहुँचने के लिए समुद्र तट के साथ ही साथ जहाज़ को ले जाना पड़ता था। धुन्ध वाले दिनों को छोड़कर बाकी दिनों में स्थल के निशान काफी अच्छे दिखाई पड़ते रहते थे। किन्तु पुर्तगाली लोगों के लिए दिक्सूचक यन्त्र एक बहुत ही आवश्यक वस्तु था, क्योंकि उन्हें अपने लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए अतलान्तक और भारत महासागर में काफी दूर तक खुले समुद्र में यात्रा करनी पड़ती थी।

पूर्व में और पश्चिम में हुए इन आविष्कारों की समूची कहानी को खोज कर तैयार करना और यह निश्चय करना कि उनमें से प्रत्येक का कितना अंश दूसरी जगह से ज्ञान के प्रसार द्वारा, कितना अंश स्वतन्त्र आविष्कार द्वारा और कितना अंश विदेश से आई हुई किसी अफवाह से प्रेरणा पाकर बना, इतने अधिक प्रलेखात्मक परिश्रम का काम है कि इसे करने का कोई लाभ प्रतीत नहीं होता। मुझे महत्त्वपूर्ण वस्तु यह नहीं लगती कि अमुक वस्तु को सबसे पहले किन लोगों ने सोच निकाला, अपितु यह लगती है कि विभिन्न लोगों ने उसका उपयोग क्या किया। जीव-विज्ञान का इतिहास ऐसे अपरिपक्व नवोन्मेषों से भरा पड़ा है, जो इसलिए बचे रहने में असमर्थ रहे, क्योंकि उनके लिए उचित पृष्ठभूमि तैयार नहीं थी और यही हाल संस्कृति के इतिहास का भी है।

जापान ने अपने बन्दरगाह खोले और फिर बन्द कर दिए

एक और सभ्यता ऐसी थी, जो चीन के निकट ही अंशतः शेष दुनिया से

विच्छिन्न दशा में चुपचाप पनप रही थी। वह थी जापान की सभ्यता। जापानी पुरातत्ववेताओं ने बहुत-से स्थलों की सावधानी के साथ खुदाई करके यह पता चलाया है कि नव-पाषाणिक संस्कृति ने उनके द्वीप में दो दिशाओं से प्रवेश किया था; एक तो कोरिया होकर उत्तरी चीन से और दूसरे इण्डोनेशिया से। इन आगमनों के ठीक-ठीक काल का निर्धारण नहीं किया गया है। जापान में काँस्य युग का नितान्त अभाव रहा। कोरिया के रास्ते होकर आने वाले आक्रान्ताओं का एक दल अपने साथ लोहा और घोड़े, दोनों ही वस्तुए लाया था। ये लोग घोड़ों पर सवारी करते थे, रथ हाँकते थे। वस्तुतः इस बात से ही उनका काल ईस्वी पूर्व की पहली सहस्राब्दी के उत्तरार्ध का ठहरता है और इसका मेल परम्परा से मानी जाने वाली सर्वप्रथम सम्राट् जिम्मू तेन्नो की तिथि के साथ लगभग ठीक बैठ जाता है, जो 660 ईस्वी पूर्व मानी जाती है। लेखन का आरम्भ लगभग ईस्वी सन् 500 में हुआ, जिसके बाद की सब तिथियाँ विश्वसनीय मानी जाती हैं। इससे पहले के काल में चौबीस राज्य काल हुए माने जाते हैं; और यदि हम हर राज्य काल के लिए औसत रूप से एक चौथाई शताब्दी का काल मान लें, तो हम 100 ईस्वी पूर्व के और निकट आ पहुँचते हैं। जिन घुड़सवारों ने जापानी साम्राज्य की नींव डाली थी, वे कोरिया से चीनी इतिहास के चाउ राजवंश के पिछले भाग में चले होंगे।

उद्योग विद्या की दृष्टि से जापान का इतिहास एक ऐसा इतिहास है, जिसमें जापान के लोग चीन की मुख्य भूमि के लोगों से एक के बाद एक अनेक विशेषताएँ उधार लेते रहे और शनैः-शनैः उन्हें अपनी स्थानीय संस्कृति के रूप में बदलते रहे हैं। उदाहरण के लिए, यद्यपि जापानियों ने ईसा की पाँचवीं शताब्दी में चीनियों से चित्राक्षर सीखे थे, किन्तु उन्होंने यह अनुभव किया कि ये चित्राक्षर उनकी अनेकाक्षरी और रूपान्तरित होने वाली (विभक्ति प्रत्यय वाली) ,भाषा के लिए नितान्त अनुपयुक्त हैं। नौवीं शताब्दी में उन्होंने उन चित्राक्षरों के आधार पर एक विशेष लिपि तैयार की, जिसमें 48 अक्षरों की ध्वनि माला थी और उसमें 23 रूपान्तर होते थे। ऐसा कर पाना इसलिए सम्भव हुआ, क्योंकि जापानी भाषा में केवल 69 ही सम्भावित ध्वनियाँ हैं (दो ध्वनियों में से प्रत्येक दो अक्षरों द्वारा सूचित की जा सकती है)। जब छपाई का आरम्भ हुआ, तब जापानी लोग साक्षरता का यूरोपवासियों जितना

ही व्यापक प्रसार कर सकते थे। किन्तु वे ऐसा इसलिए नहीं कर सके, क्योंकि सन् 1868 में हुई मेईजी क्रान्ति तक साक्षरता केवल उच्च श्रेणी के लोगों का विशिष्ट अधिकार समझी जाती थी। इस बीच में चित्राक्षरों का ही सामान्यता प्रयोग किया जाता था और केवल कठिन पाठों के लिए उनमें ध्वनि-माला जोड़ दी जाती थी।

जापान में चित्रकला, मूर्तिकला और वास्तुकला, ये सभी चीन से आईं, परन्तु कोई भी कला-विशेषज्ञ चीनी कलाकृति को भूल से जापानी नहीं समझ सकता। यद्यपि दोनों ही देशों की कलाकृतियाँ समान रूप से अच्छी होती हैं, फिर भी जापानियों ने अपनी एक अलग ही शैली विकसित कर ली है। इसी प्रकार बाट तथा माप और सोने, चाँदी तथा ताँबे के सिक्कों का प्रयोग भी चीन से ही जापान में आया। सातवीं शताब्दी में जापानियों ने अपनी सरकार का 'ताँग' राजवंश की शैली पर पुनर्गठन किया, और स्थानीय कुलों के सामन्तों के स्थान पर राजकीय राज्यपाल नियुक्त किए। उन्होंने सरकारी पदों के लिए प्रशासन-सेवा परीक्षाएँ लेने की चीनी पद्धति को भी अपनाया, किन्तु वे इन परीक्षाओं में केवल कुलीन लोगों को ही बैठने देते थे। चीन में ऐसा कोई भी ग़रीब बालक, जिसके सम्बन्धी उसकी शिक्षा के लिए पर्याप्त पैसा जुटा सकें, इन परीक्षाओं में बैठ सकता था। बौद्ध धर्म को भी, जो भारत से चीन के रास्ते जापान पहुँचा था, स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप ढाल लिया गया था और वह चीनी महाद्वीप में पाए जाने वाले अपने आदि-रूप से उतना ही भिन्न हो गया था, जितना कि प्रोटैस्टैण्ट सम्प्रदाय रोम के कैथोलिक सम्प्रदाय से भिन्न था।

जिन सर्वप्रथम यूरोपवासियों के जापान पहुँचने का हमें पता है, वे तीन पुर्तगाली नाविक, ऐण्टोनियो डा मोटा, फ्रांसिसको जाईमोटो और ऐण्टोनियो पाइग्ज़ोटो थे। ये लोग 1542 में स्याम से एक जहाज़ पर माल लाद कर चीन के लिए चले थे। एक तूफान के कारण वे अपने रास्ते से हट गए और उनकी नौका जापान जा पहुँची। वहाँ लोगों ने उनका मित्रतापूर्ण रीति से स्वागत किया और उनसे फिर आने का अनुरोध किया। शीघ्र ही एक ज़ोरदार व्यापार शुरू हो गया, क्योंकि जापानी लोग यूरोप में आग्न्यस्त्रों (बन्दूक, पिस्तौल आदि) को लेने के लिए विशेष रूप से उत्सुक थे। सन् 1549 में सन्त

फ्राँसिस ग्जेवियर, जो 'सोसायटी ऑफ जीसस' के सर्वप्रथम सदस्यों में से एक था, जापान गया; वह वहाँ दो साल रहा और उसने सैकड़ों लोगों को ईसाई बनाया। उसके बाद और भी जैसूट (सोसायटी ऑफ ज़ीसस के सदस्य) जापान गए और सन् 1600 तक एक लाख से अधिक जापानी ईसाई बन चुके थे, जिनमें कुलीन सामन्त और जन साधारण, दोनों प्रकार के लोग सम्मिलित थे। सन् 1600 में एक अंग्रेज, विल ऐडम्स को जापानी सरकार का अधिकृत जहाज़-निर्माता बना दिया गया। इससे पहले सन् 1582 में चार जापानी लिस्बन, मैड्रिड और रोम की यात्रा करने गए थे और वापस लौट कर उन्होंने अपने देशवासियों को अपनी यात्रा के विवरण सुनाए, जो उन्हें उतने ही रोचक लगे जितने कि मार्कोपोलो के विवरण यूरोपवासियों को लगे थे।

परन्तु सन् 1615 में तोकुगावा शोगुन ने, जो इयेयासू अर्थात् शासक सम्राट् का मन्त्री था, एकाएक जापान के दरवाज़े विदेशियों के लिए बन्द कर दिये। उसने केवल हालैंडवासियों को व्यापार करते रहने की अनुमति दी और वह भी एक छोटे-से द्वीप में, केवल नागासाकी बन्दरगाह में। इस कार्यवाही का सम्भाव्यत: कोई बहुत मिश्रित कारण रहा होगा, जिनमें मूल प्रेरक वस्तु उस सांस्कृतिक परिवर्तन के विरुद्ध प्रतिक्रिया रही होगी, जो इतना अधिक द्रुत था कि जिसे आसानी से पचाया नहीं जा सकता था। परन्तु इसकी एक ऊपरी व्याख्या, जो कि इतिहासकार बताते है, यह है कि जापान में स्पेनवासी ने यह कहा था कि जब उसका देश किसी अन्य प्रदेश को जीतना चाहता है, तो उसका राजा लोगों के विरोध को कम करने के लिए पहले धर्मप्रचारक भेजता है और फिर उनके पीछे अपने सैनिक भेज देता है। उसी समय स्पेन में इंक्विजिशन (धार्मिक न्यायालय) भी चल रहे थे और जब जापानियों ने उनके विषय में सुना, तो उनके शासकों को यह डर लगा कि यदि जैसूट लोगों की रोकथाम न की गई, तो ये धार्मिक न्यायालय उनके अपने द्वीप में भी आ पहुँचेगे। सन् 1637 में तेंतीस हजार ईसाइयों ने विद्रोह किया और एक भीषण हत्याकांड के बाद वे परास्त कर दिये गए। ईसाइयत वहाँ लुक-छिप कर ही रहने लगी। सन् 1853 में कमोडोर पैरी के जापान पहुँचने तक यह देश शेष संसार से विच्छिन्न-सा ही रहा।

उसके बाद से जापानियों ने पश्चिमी संस्कृति को अपना लिया है और

उन्होंने इसे अपनी आवश्यकताओं के अनुसार उतनी ही कुशलतापूर्वक ढाल लिया है, जितना कि पहले उन्होंने चीनी सभ्यता के अनेक तत्वों को अपने अनुकूल ढाला था। पश्चिम में यह एक उक्ति बन गई है कि जापानियों में आविष्कार की क्षमता नहीं होती; परन्तु यह सत्य नहीं है। उनकी जिस अनुकरण वृति को हमने देखा हैं, वह बहुत समय तक विच्छिन्न रहने के बाद बलात् पश्चिमीकरण का परिणाम है। वस्तुतः जापानियों ने कलाओं के क्षेत्र में बहुत कुछ आविष्कार, जिनमें अमूर्तिकरण की पद्धति भी सम्मिलित है, किये हैं और बौद्ध धर्म को नए रूप में बदल दिया है। उनके वैज्ञानिक ने बहुत कुछ नया सृजनात्मक कार्य किया है और वह भी विशेषरूप से जीव-विज्ञान और दृष्टि-विज्ञान के क्षेत्र में।

औद्योगिक क्रान्ति का आरम्भ होने से पहले तक अंग्रेज़ोंपर भी मौलिकता के अभाव का आरोप लगाया जा सकता था। मार्गेरेट टी हौडजन ने एक बड़े श्रमसाध्य ऐतिहासिक अध्ययन के बाद, जिसमें यथेष्ठ आँकड़े दिये गए हैं, यह दिखाया है कि 'विलियम दि कौंकरर' के काल से लेकर इंग्लैंड में जितना भी उद्योग विद्या-सम्बन्धी परिवर्तन हुआ, उसका सम्बन्ध यूरोप के महाद्वीप से कुशल कारीगरों के आव्रजन के साथ जुड़ा हुआ था।[1] अन्य कई बातों की भाँति इस बात में भी जापानियों को जो 'सुदूरपूर्व के अंग्रेज' कहा जाता है, वे उस नाम के पात्र हैं। अंग्रेजों की ही भाँति जापानी अपनी विभिन्न स्तरों वाली सामाजिक व्यवस्था को बनाये हुए हैं; वे शासक का बहुत आदर करते हैं और कुलीन सामन्तों के ओहदे को भी बनाये हुए हैं।

भारत, चीन और जापान की वे सभ्यताएँ, जिनके साथ पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में पुर्तगालियों तथा अन्य यूरोपवासियों का सम्पर्क हुआ, कला, शिष्टाचार, दर्शन, सुविधाजनक जीवन और हाथ के कौशल वाली अधिकाँश तकनीकी प्रक्रियाओं की दृष्टि से ठीक उतनी ही 'उच्च' थीं, जितनी कि यूरोप की सभ्यताएँ थीं। कुछ एशिया-पक्षपाती उत्साही पश्चिमी लोगों का यह विश्वास है कि वे सभ्यताएँ यूरोप की सभ्यताओं से 'उच्चतर' थीं।

---

[1] मार्गेरेट टी० हौडजन, 'चेंज एण्ड हिस्ट्री' वाइकिंग फंड पब्लिकेशन्स इन हिस्ट्री, संख्या 18, न्यूयार्क, 1952।

जब तक इन सम्पर्कों को स्थापित करने वाले समुद्रयात्रियों ने पूर्व और पश्चिम के बीच की रोकों को छिन्न-भिन्न नहीं कर दिया था, तब तक एशियायी लोगों की संस्थाएँ उतनी ही जटिल थी, जितनी कि यूरोपवासियों की संस्थाएँ थीं। फिर ऐसी क्या बात थी कि जिससे यूरोपवासियों को भारतीयों, चीनियों और जापानियों की अपेक्षा ऐसी सुविधा रही, जिसके कारण बाद में सारी दुनिया पश्चिमी संस्कृति के रंग में रंग गई, जो बहुत कुछ वैसी ही घटना थी, जैसी कि प्लीस्टोसीन काल के पिछले भाग में पश्चिमी मनुष्यों का भौतिक रूप से प्रसार था।

इस प्रश्न का उत्तर ऊर्जा के क्षेत्र में निहित है। एशियाई लोगों ने अपनी अर्थ-व्यवस्थाओं को अन्नों और दालों की सघन खेती पर आधारित किया था, जिससे प्रति एकड़ बहुत अधिक उपज होती है और जिससे घनी जनसंख्याओं का भरण-भोषण हो सकता है। इन पौधों की, विशेष रूप से चावल की, खेती के लिए हाथ की सघन मेहनत की आवश्यकता होती है और पशु शक्ति का प्रयोग न्यूनतम होता है और वायु या जल शक्ति से चलने वाली मशीनों का प्रयोग नहीं के बराबर होता है। यहाँ उस पशु, घोड़े, की कोई विशेष आवश्यकता नहीं थी, जो यूरोप में स्थल भाग में परिवहन के और खेतों में हल और गाड़ियों को चलाने के काम आता था। एशिया में नौवहन मुख्यतया अन्तर्देशीय जलमार्गों में उपयोग के लिए विकसित हुआ, जबकि यूरोप का व्यापार खुले समुद्रों के पार होता था।

इन एशियाई देशों में से प्रत्येक में विविध प्रकार का जलवायु उपलब्ध था, जो ऊष्ण कटिबन्धीय या अव-उष्ण कटिबन्धीय जलवायु से लेकर नातिशीतोष्ण और शीतल तक, सब प्रकार का था और इन देशों में बहुत ही विविध प्रकार के प्राकृतिक साधन भी थे। उनके लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार उतना महत्त्वपूर्ण नहीं था जितना कि वह यूरोपवासियों के लिए था और न उन्हें लड़ाई-भिड़ाई से लाभ की वैसी आशा थी, जैसी की यूरोपवासियों को थी। ये लोग एक ऐसे साँस्कृतिक सन्तुलन की दशा में पहुँच गए थे, जो उतना ही स्थिर था, जितना कि आस्ट्रेलिया के शिकारी कबीलों का जीवन है। जब एक बार उन्होंने अपने पारिस्थितिक अवकाश को अपनी लौह युग की भौतिक संस्कृति के प्राकृतिक प्रतिबन्धों के अधीन रहते हुए उसकी सम्भावित परिसीमाओं

तक भर दिया, तब उनका सारा ज़ोर विशद धार्मिक समारोहों और विनम्रता द्वारा, जिनसे कि पारस्परिक संघर्ष न्यूनतम होता है, मानवीय सम्बन्धों के परिष्कार पर दिया जाने लगा। खोज, व्यापार और विजय में बहुत कम रुचि थी। यह आश्चर्य की बात नहीं कि बाइबिलें और तोपें लेकर अपने जहाज़ों से समुद्र तटों पर उतरने वाले आक्रान्ता पुर्तगाली लोग इन (पुर्तगालियों की दृष्टि में) निःसत्व एशियाई लोगों को झगड़ालू और असभ्य प्रतीत होते थे।

इस काल के एशियाई लोगों को पश्चिम के साथ सम्पर्क से कष्ट के सिवाय और कुछ प्राप्त नहीं हुआ, परन्तु इस सम्पर्क से यूरोपवासियों को बढ़िया सूती वस्त्र, रेशम, चीनी मिट्टी के बर्तन, चाय, रत्न, और साथ ही और अधिक विलास की लालसा प्राप्त हुई। इस सम्पर्क से पूर्व की ओर ले जाने के लिए व्यापारिक वस्तुओं के उत्पादन को प्रेरणा मिली और इस प्रकार अन्ततः इस सम्पर्क से आधुनिक युग के दो मूल उद्योगों, सूती वस्त्र निर्माण को बढ़ावा मिला। परन्तु हम अपनी कहानी से आगे बढ़े जा रहे हैं। हमें अपने सुपरिचित सन् 1492 के काल की ओर लौट आना चाहिए।

10

नई दुनिया

अमेरिका की खोज

यद्यपि पुर्तगालियों ने बारूद युग का सूत्रपात किया था, परन्तु उन्हें देर तक उसके लाभों पर एकाधिकार नहीं रखने दिया गया। उनके अधिक संख्यक पड़ौसी स्पेनवासी, जो इबेरियाई प्रायद्वीप में उनके साझीदार थे, शीघ्र ही इस रोमाँचकारी और लाभदायक व्यवसाय में घुस आए। जहाँ पुर्तगालियों ने अपना ध्यान अफ्रीका, भारत और चीन पर केन्द्रित किया, वहाँ स्पेनवासियों ने 'नई दुनिया' की विजय का काम अपने हाथ में लिया। यह अध्याय, जिसमें कि उसी काल की पश्चिमी गोलार्ध की घटनाएँ दी गई हैं, जिसकी कि नौवें अध्याय में दी गई हैं, पुर्तगाली नौवहन, व्यापार और विजयों की कहानी का परिणाम नहीं, अपितु उसका पूरक है।

1492 तक स्पेनवासी मूर लोगों को अपने देश से निकालने में व्यस्त रहे, इसलिए उनके पास इतनी फुरसत ही नहीं थी कि वे स्थानीय धावे करने के सिवाय नौवहन की ओर कुछ अधिक ध्यान दे सकते और उन्होंने अनुसन्धान तथा परीक्षणों का काम प्रिंस हेनरी के लिए छोड़ दिया था। यह केवल संयोग की ही बात नहीं थी कि जिस वर्ष उन्होंने मूर लोगों को इबेरियाई भूमि से अन्तिम रूप से खदेड़ दिया था, ठीक वही वह उल्लेखनीय वर्ष था, जिसमें क्रिस्टोफर कोलम्बस ने अमेरिका की खोज की थी। कोलम्बस जिनोआ का निवासी एक कप्तान था, जिसने पुर्तगालियों की नौकरी में रहते हुए अफ्रीका

के आस-पास समुद्रों में, जिन के कि तब तक नक्शे बने थे, यात्रा करके बहुत-सा क्रियात्मक अनुभव प्राप्त कर लिया था।

यद्यपि परम्परा में इससे उल्टी ही बात प्रचलित है, किन्तु कोलम्बस ही अपने समय का एकमात्र ऐसा व्यक्ति नहीं था, जो यह मानता हो कि पृथ्वी गोल है। खगोलवेत्ताओं और नाविकों को यह बात सामान्यतः ज्ञात थी। हाँ, वह अपने समय का ऐसा एकमात्र व्यक्ति अवश्य था, जो इस ज्ञान से सम्पन्न होने के साथ-साथ अतलान्तक को पार करके इण्डीज़ तक की यात्रा करना चाहता भी था और उसके लिए आवश्यक धनराशि जुटा पाने में भी समर्थ हुआ था। परन्तु, यदि उसे भूमि के सही आकार का ज्ञान होता, तो शायद उसने अपनी इस यात्रा को करने का प्रयत्न न ही किया होता। लगभग

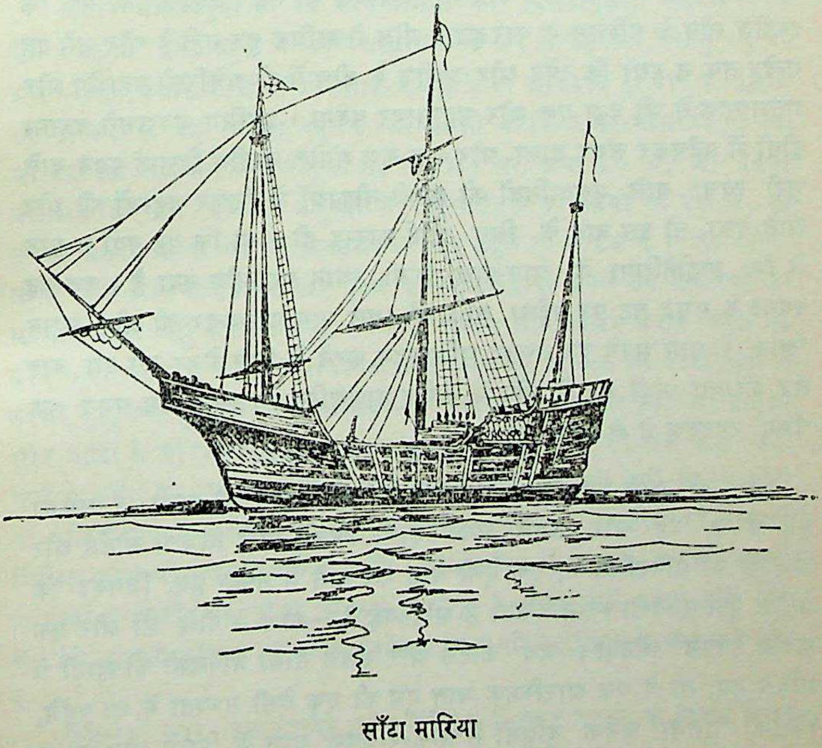

साँटा मारिया

200 ईस्वी पूर्व में इरैटोस्थनीज ने गणना करके पृथ्वी की परिधि ठीक-ठीक बता दी थी। परन्तु बाद में उसकी 25,000 मील की संख्या का खंडन कर दिया गया था और उसके स्थान पर पोसीडोनियस (130-150 ईस्वी पूर्व) की संख्या प्रमाणिक मानी जाने लगी, जिसने पृथ्वी की परिधि 18000 मील मानी थी। कोलम्बस ने अपने सारे हिसाब इन पिछली संख्या के आधार पर ही लगाए थे।

परन्तु, पृथ्वी की परिधि को कुछ हज़ार मील कम मान लेना ही उसकी एक मात्र भूल नहीं थी। उस समय विद्यमान चार्टों में, जो स्थल मार्ग पर यात्रा करने वाले लोगों के विवरणों के आधार पर और नाविकों द्वारा दी गई सूचना के आधार पर संकलित किये गए थे, चीन का समुद्र तट ऐनिवैटौक के आस-पास कहीं बताया गया था। इसलिए कोलम्बस का यह विश्वास न था कि इण्डीज स्पेन के पश्चिम में चार हज़ार मील से अधिक दूर नहीं है और उसे यह सन्देह तक न हुआ कि स्पेन और इण्डीज के बीच में दो अमेरिकी महाद्वीप और अतलान्तक से भी बड़ा एक और महासागर पड़ेगा। इसलिए जब उससे बहामा द्वीपों में पहुँचकर लंगर डाला और कुछ-कुछ मंगोल-जातीय दिखाई पड़ने वाले भूरी त्वचा वाले मूलवासियों को अपनी नौकाओं में बैठकर जहाज़ों की ओर आते देखा, तो इस बात के लिए कोई कारण ही न था कि वह क्यों न मान ले कि इण्डोनेशिया के आस-पास किसी स्थान पर पहुँच गया है। जब वह क्यूबा के समुद्र तट पर पहुँचा, तो उसने स्थल भाग पर अन्दर की ओर महान् 'खान' के पास अपने दूत उसका अभिवादन करने के लिए भेजे; उसे इस बात तक का पता नहीं था कि चीन में मंगोल राजशक्ति का स्थान उस समय तक 'मिंग' राजवंश ने ले लिया था।

भले ही उसने अपने इस आविष्कार के सही महत्त्व को कभी न समझा हो, परन्तु वह और उसके अनेक साथी, जिनमें स्पेनी विजेता कोर्टेस और पिज़ारो भी सम्मिलित थे, एक ऐसी बात कर पाने में सफल हुए, जिसका कि प्रत्येक पुरातत्ववेत्ता स्वप्न देखता है और वह है—काल में पीछे की ओर एक क़दम वापस लौटना। जब कोर्टेस और उसके साथी मैक्सिको की खाड़ी में प्रविष्ट हुए, तो वे एक आरम्भिक धातु युग की एक ऐसी सभ्यता में जा पहुँचे, जिसकी तुलना अनेक दृष्टियों से प्राक्-राजवंश काल के पिछले भाग के, या

राजवंश काल के आरम्भिक भाग के मिश्र से, या बिलकुल आरम्भिक काल के सुमेरिया से की जा सकती थी। यह ठीक ऐसा था, जैसे मानों जब सर लियोनार्ड वूले ने 'उर' में राजकीय मकबरों तक आने-जाने वाले ढलान की खुदाई की थी, तब राजा और रानियाँ, सैनिक और कुमारियाँ, सब सजीव हो उठे हों और उसे चाय का एक प्याला पीने के लिए प्रस्तुत कर रहे हों। इतिहास में ऐसी थोड़ी ही घटनाएँ होंगी, जिनमें उतनी नाटकीयता रही हो, जितनी कि कोर्टेस और उसके साथियों के तैनोक्तितलान नगर के राजमहलों, मन्दिरों और बाज़ारों में प्रवेश में थी; यह नगर महान् राजा मौक्तेज्यूमा की राजधानी था और उस स्थान पर बसा हुआ था, जहाँ आजकल मैक्सिको नगर बसा हुआ है।

यद्यपि मौक्तेज्यूमा ने इन स्पेनवासियों का मित्रतापूर्वक स्वागत किया और उनको एक महल में अपने अतिथियों के रूप में ठहराया, किन्तु इन दो अलग-अलग प्रकार के लोगों में लड़ाई-झगड़ा होना अनिवार्य ही था। ईसाई स्पेनवासियों से यह आशा नहीं की जा सकती थी कि वे नर-माँस-भक्षण को, जो वहाँ की राजकीय भोजन-सूची का एक अंग था, क्षमा कर दें, या बिना प्रतिवाद किए उन सैंकड़ों मनुष्यों के रक्तपातपूर्ण बलिदानों को देख लें, जो उनकी आँखों, कानों और नासिकाओं के लिए बहुत ही अप्रिय थे। 'आज़तेक' लोगों जैसे अभिमानी और वीर पुरुष आगन्तुकों द्वारा अपने उन देवताओं का अपमान सहन नहीं कर सकते थे, जो उन्हें भोजन और विजय प्रदान करते थे; और उन्हें प्रतिशोध लेने की आवश्यकता अनुभव हुई। जब इन दोनों पक्षों में टक्कर हुई, तब घुड़सवार स्पेनवासियों की एक छोटी-सी सेना का, जो बन्दूकों और भालों से सज्जित थी, मुकाबला वहाँ के आदिवासियों की एक कहीं बड़ी सेना से हुआ, जो उन तलवारों से सज्जित थी, जो शीशे की बनी मालूम होती थीं, और जिसने बचाव के लिए रज़ाइयाँ ओढ़ी हुई थीं। ये शीशे की तलवारें मिश्रित शस्त्र थीं, जिनमें आग्नेय काँच (औबसिडियन) के बने फलक लकड़ी के हत्थों के सिरों पर खाँचों में लगे हुए थे; ये ठीक उसी प्रकार लगे होते थे, जैसे 'पुरानी दुनिया' में नव-पाषाणिक काल की दराँतियों के फल लगे होते थे।

मैक्सिको नगर इस आग्नेय काँच की एक विशाल खदान के निकट स्थित

था और स्थित है; इस खदान में से 'आज़तेक' खुदाई करने वाले लोग इन तलवारों के फलकों तथा अन्य कटाई करने के औज़ारों के लिए सामग्री निकालते थे; इन कटाई के औज़ारों में वे अनगिनत हज़ारों औज़ार भी थे, जिनका कि वे उत्तर की ओर पठारों पर रहने वाले लोगों के साथ और दक्षिण की ओर कटिबन्धीय मैदान के निवासियों के साथ व्यापार करते थे। इन फलकों को, जिनका परिणाम और भार की प्रति इकाई की दृष्टि से बहुत अधिक मूल्य था, वे बाँध कर अपनी पीठ पर लादकर घाटी से बाहर ले जाते थे, क्योंकि उनके पास भार ढोने वाले पशुओं का अभाव था। परन्तु बिलकुल निकट, थोड़ी दूर तक के स्थानों तक सामान ले जाने के लिए वे अपनी नौकाओं को लग्गी और चप्पुओं से चलाकर ले जाते थे; इन नौकाओं में खाद्य सामग्री तथा अन्य पण्य सामग्री लदी होती थी और इन नौकाओं को वे उन झीलों के जलमार्गों में, जिनके किनारे यह नगर बसा था, और उसकी अनेक नहरों में खे कर ले जाते थे। इस नगर की जनसंख्या, जो लगभग 3 लाख थी, निश्चित रूप से आरम्भिक राजवंशीय काल के मैम्फिस नगर जितनी थी और सम्भाव्यतः बैबीलोनियाई काल से पहले के सुमेरिया के किसी भी नगर की अपेक्षा अधिक थी। जलमार्ग द्वारा सरलता से आने-जाने की सुविधा के अभाव में इतनी अधिक संख्या में लोगों को इकट्ठा रह पाना सम्भव न हो सकता।

यह नगर जिन खंडों (वार्ड) में बंटा था, उनमें से प्रत्येक में एक-दूसरे से सम्बन्धित कारीगरों या व्यापारियों का समूह और उनके परिवार रहते थे। आग्नेय काँच की खुदाई करने वाले लोग बहुत बड़ी संख्या में थे और यही हाल संग यशव (जेड) का काम करने वालों का था। सुनार लोग सोने की कच्ची धातु को, जो उनके पास नलकियों में भर कर लाई जाती थी, लकड़ी के कोयले की आग पर पिघलाते थे। इस आग के चारों ओर मानवीय धौंकनियों के समूह बैठे होते थे, जो फुकनाल में फूंक मार-मार कर आग को धधकाते रहते थे; यह ठीक वैसा ही था, जैसा कि आरम्भिक काल के मिश्र में होता था। सोने को सीधे-सादे साँचों में ढालकर और इस समय नष्ट हो चुके मोम के ढाँचों में ढालकर और उसे खुरचकर और उस पर नक्काशी करके उन्होंने वे आभूषण तैयार किए थे, जिन्हें स्वर्गीय जौर्ज वैलैण्ट ने, जो हमारे (अमेरिका के) सबसे महान् पुरातत्ववेताओं में से एक और आदिम अमेरिकी कला का पारखी था,

'नई दुनिया' में निर्मित सर्वोत्तम ग्राभूषण माना था। हमारे दुर्भाग्य से उन ग्राभूषणों का ग्रधिकांश भाग स्पेन के सोना पिघलाने के पात्रों में पहुँच गया ग्रौर उसके बाद सोने की छड़ों के रूप में ग्रौर ग्रन्त में सोने के सिक्कों के रूप में परिवर्तित हो गया। परन्तु हाल में ही कुछ थोड़े से ग्रवशेष प्राप्त हुए हैं, जिनमें से, जैसे कि सन् 1923 में मौण्टे ग्रल्बान में ग्रलफोन्ज़ो कासो द्वारा खोदे गए एक ग्रनलुटे मकबरे में से, कुछ मौलिक कलाकृतियाँ प्राप्त हुई हैं। ग्रनेक संग्रहालयों में, जिनमें फिलाडल्फिया का यूनिवर्सिटी म्यूज़ियम, मैक्सिको नगर का नेशनल म्यूज़ियम ग्रौर ग्रोग्राक्साका में मौन्टे ग्रल्बान म्यूज़ियम सम्मिलित है, इन कलाकृतियों को प्रदर्शन के लिए रखा गया है।

मैक्सिको के कारीगर ताँबे को भी पिघालते ग्रौर ग्रधिकाँशतः घंटियों के रूप में ढालते थे। ग्रौज़ारों के रूप में, विशेष रूप से काठी बनाने वाले चमार के चाकू के रूप में, उपयोग करने के लिए ताँबे को ठंडा ही कूटा जाता था। कोर्टेस के समय तक इस ताँबे ने ग्राग्नेय काँच ग्रौर परिष्कृत पत्थर का स्थान लेना शुरू नहीं किया था। वेलैण्ट तथा ग्रन्य लोगों द्वारा मैक्सिको के प्रागितिहास की पुनः कल्पना के ग्राधार पर यह निश्शंक होकर कहा जा सकता है कि मैक्सिको की घाटी में धातु का कार्य उस समय तीन सौ साल से ग्रधिक पुराना नहीं था। इस बात का ज्ञान मिश्र ग्रौर ईराक में काम करने वाले पुरातत्ववेताग्रों के लिए प्राक्-राजवंश की ग्रवधियों की सम्भावित दीर्घता की गणना के लिए एक ग्राधार के रूप में उपयोगी है।

मिश्र की भाँति मैक्सिको में भी पत्थर की विशालकाय शिलाएँ खानों में से निकाली जाती थी, उन्हें गढ़ा जाता था ग्रौर उन्हें मिश्र की ग्रपेक्षा भी ग्रधिक विशाल स्मारकों में लगाया जाता था। मैक्सिको की घाटी का पिरामिड कोई मकबरा नहीं है, ग्रपितु सुमेरिया ज़िगुरात की भाँति रंगशाला का विलोम है। इसके शिखर भाग में एक वेदी ग्रौर देवताग्रों की मूर्तियाँ हैं इस ऊँचे स्थान पर खड़े होकर पुरोहित लोग नर-बलियाँ दिया करते थे, जो उतनी ही नाटकीय ग्रौर संख्या में ग्रधिक होती थीं, जितनी कि संसार में ग्रन्य कहीं ग्रभिलिखित मिलती हैं; वे पुरोहित बड़ी निपुणता से बलि दिये जाने वाले लोगों की छाती ग्राग्नेय काँच के चाकुग्रों से चीर देते थे ग्रौर फुर्ती से उनके धधकते हुए हृदय को निकालकर खड़ी हुई विशाल भीड़ को दिखाया करते थे।

ये पिरामिड और मूर्तियाँ पत्थर के ऊपर से ही खुदाई करके बनाई जाती थीं; इनमें धातु के औज़ारों का प्रयोग यदि होता भी था, तो बहुत कम होता था। यही बात आरम्भिक काल के मिश्र के विषय में भी इतनी ही सत्य थी। ग्वाटेमाला में युकातान, और होंडुरास के जंगलों में रहने वाले 'मय' लोगों के पास, जिनकी सभ्यता स्पेनवासियों के आगमन के समय नष्टप्राय: थी, कुछ थोड़े स्वर्ण और ताम्र के आभूषणों के सिवाय और कोई धातु नहीं थी। उन्होंने जो परिष्कृत मन्दिर और पिरामिड बनाये थे और वे ऊँचे खम्भे जिन पर चित्राक्षर और अध्युच्चित्र खुदे हुए हैं, पत्थर के औज़ारों से ही बनाये गए थे।

'आज़तेक' और 'मय' दोनों ही तथा मैक्सिको के कुछ अन्य आदिवासी भी हिरन की खालों की पोथिया बनाते थे, जिन पर वे लिखते थे। मौक्तेज्यूमा के यहाँ एक पूरा मकान इन पुस्तकों से भरा हुआ था, जिनमें केवल उसके रसोई घर का हिसाब लिखा हुआ था। मिश्र के चित्राक्षरों की भाँति इनकी लिखाई थी चित्रलिपि के रूप में होती थी। मिश्रवासियों की लिपि से इसमें यह अन्तर था कि इसमें अकेले व्यंजनों के संकेत नहीं होते थे। सुमेरियाई लिपि की भाँति यह चित्र लिपि (रीबस) थी, जिसमें एक जैसी सुनाई पड़ने वाली ध्वनियाँ एक-दूसरे के स्थान पर लिखी जा सकती थीं। मैक्सिको की अंक प्रणाली संसार की अन्य किसी भी अंक-प्रणाली से भिन्न थी, क्योंकि यह दशकों या दर्जनों में न चलकर कोड़ियाँ (बीस के हिसाब से) में चलती थी, इसका एक अपवाद यह था कि दूसरी पंक्ति में इकाई अठारह होती थी। इस संशोधन के फलस्वरूप उन्हें 360 की संख्या प्राप्त हो जाती थी जो पंचाँग के लिए गणना का आधार है। अंकों के स्थान की प्रणाली और शून्य, दोनों का ही, जो पश्चिम में लोगों को ज्ञात नहीं थे, जब तक कि अरब लोग इन्हें भारत से नहीं लाये, मैक्सिको के ये लोग बहुत समय से प्रयोग करते रहे थे और उन्होंने ऐसे पंचाँग बना लिए थे, जो संसार के अन्य किसी भी भाग में बनाये गए पंचांगों जितने उन्नत थे।

मैक्सिको में जीवन का आधार, मध्य अमेरिका के स्थानों की भाँति और शेष उत्तरी अमेरिका के आधे से भी अधिक भाग की भाँति, कृषि था। प्रधान खाद्य तीन थे—मक्का, लोबिया आदि फलियाँ और कद्दू, जिनसे सन्तुलित भोजन के लिए आवश्यक कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन प्राप्त होते थे। ये सब

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बागीचों में उगाये जाने वाले पौधे थे, जो पहाड़ों में इस ढंग से बोये जाते थे कि वे एक-दूसरे को छाया और सहारा दे सकते थे, विशेषरूप से तब, जब ये ऐवोकैडो जैसे बारहमासी वृक्षों के साथ मिलाकर उगाये जाते थे। बागवानी का काम बहुत सघन काम था और उनका प्रधान औज़ार कुदाल था। सिंचाई और सीढ़ीनुमा क्यारियों के कारण पहाड़ियों के ढलानों का उपयोग कर पाना भी सम्भव हो गया था।

'नई दुनिया' की खेती 'पुरानी दुनिया' की खेती से दो बातों की दृष्टि से भिन्न थी। 'नई दुनिया' के पौधों में से ऐसा कोई भी न था, जो बखेर कर बुआई करने, कटाई करने और गहराई करने जैसे बड़े पैमाने के कार्यों के लिए विशेष रूप से उपयुक्त हो। पनामा के उत्तर में रहने वाले 'नई दुनिया' के किसानों के पास हल चलाने, बोझा ढोने और दूध, खाद, ऊन तथा माँस देने वाले पालतू पशु नहीं थे। क्योंकि पहिये का उनके यहाँ कोई विशेष उपयोग नहीं था, इसलिए अमेरिका आदिवासी उसका आर्थिक प्रयोजन के लिए विकास नहीं कर सके, हालाँकि वे बच्चों के लिए खिलौनों के तौर पर पहिये वाली गाड़ियाँ बनाते थे। इस कारण वे कभी भी बड़े पैमाने पर मिट्टी के बर्तन तैयार नहीं कर सके और न पवन और जल धाराओं का उपयोग ही शक्ति प्राप्त करने के लिए कर सके। वे कभी भी लौह धात्विकी की देहरी तक नहीं पहुँचे।

किन्तु पेरू में, जब पिज़ारो पहले पहल वहाँ पहुँचा, उस समय, पूर्ण कांस्य युग विद्यमान था। 'इन्का' कारीगर ताम्र और वंग के एक बढ़िया मिश्रण से चाकू, कुल्हाड़ियाँ और छेनियाँ बनाते थे। अपने विशेष पठारी परिवेश में उन्होंने आलू जैसे पौधों और 'किनोआ' नामक एक अनाज की खेती करना शुरू किया था; ये दोनों ही वस्तुएँ उत्तरी अमेरिका में अज्ञात थीं। उन्होंने उष्ट्र परिवार के दो छोटे-छोटे सदस्यों, 'लामा' और 'अल्पका' को पालतू बना लिया था, जो बोझा ढोने का काम भी करते थे और बढ़िया ऊन, खाद और मांस भी प्रदान करते थे, उन्होंने गिनी पिग को भी पालतू बना लिया था। जहाँ तक पठार फैला हुआ था, उस सारे में और समुद्र तट के साथ-साथ उन्होंने सड़कों का जाल बना डाला था, जो उतनी ही अच्छी थीं, जितनी कि रोमन लोगों की सड़कें थीं। ये सड़कें पहाड़ों में संकरी थीं और पत्थर की बनी थीं।

समुद्र तटके साथ वाली सड़क 30 फुट चौड़ी थी और उसके दोनों ओर ऊँची मिट्टी की दीवारें बनी थीं, जिससे रेत सड़क के ऊपर न आने पाये। गहरी खाइयों के ऊपर उन्होंने रस्सी के झूले वाले पुल बनाये थे। इन सड़कों पर 'इन्का' साम्राज्य के कर्मचारी देश में व्यवस्था बनाये रखने के लिए, कर उगाहने के लिए और यह देखने के लिए यात्रा किया करते थे कि वस्तुओं का स्थानान्तरण और विनिमय ठीक-ठीक ढंग से हो रहा है या नहीं। समुद्र तट पर स्थित नगरों में, जिनमें से कुछ को खोजा जाना अभी शेष है, अमेरिका के मूलवासी करघों की कतारों पर काम किया करते थे, जिससे यह संकेत मिलता है कि पेरूवासी सूती वस्त्रों का बड़े पैमाने पर उत्पादन करते थे। जलहीन समुद्र तट के मैदान में हजारों कब्रों में जो ऊनी और सूती वस्त्र मिले हैं, वे संसार में कभी भी और कहीं भी बुने गए सर्वोत्तम वस्त्रों में से हैं।

राजनीतिक दृष्टि से 'आज़तेक' लोग पुरानी दुनिया के आरम्भिक काँस्य युग की दशा में थे। जब कोई शक्तिशाली नगर राज्य, जैसा कि तैनोक्तितलान (मैक्सिको नगर) था, फैलना शुरू होता था और अपने पड़ौसी किसी नगर राज्य को जीत लेता था, तो वह उसके निवासियों की हत्या कर डालता था, या उन्हें दास बना लेता था। इन बन्दियों में से अनेक को उन विशाल समारोहों में बलि दे दिया जाता था, जो तैनोक्तितलान के तीन लाख निवासियों को उसी प्रकार व्यस्त रखते थे, जैसे खेल और सर्कस रोमनवासियों को व्यस्त रखा करते थे। परन्तु 'इन्का' लोग साइरस के काल के ईरानियों की भांति साम्राज्य की दशा तक पहुँच चुके थे। अच्छी सड़कों और राजकीय सन्देश प्रेषण व्यवस्था द्वारा और सेना द्वारा वे विभिन्न उद्गमों के, विभिन्न भाषा-भाषी ऐसे अनेक जातियों के लोगों पर शासन करते थे, जो यदि अलग-अलग देवताओं की पूजा नहीं भी करते थे, तो भी कम से कम सूर्य देवता के विभिन्न रूपों (पहलुओं) की पूजा करते थे; सम्राट् को सूर्य देवता का ही रूप माना जाता था।

यह इस बात का बढ़िया प्रमाण है कि साम्राज्य की स्थापना के लिए लोहे या घोड़ों जैसी किन्हीं विशिष्ट वस्तुओं की आवश्यकता नहीं होती, अपितु परिवहन और संचार (संदेश प्रेषण) के किन्हीं भी सुचारु साधनों की आवश्यकता होती है। 'इन्का' लोगों का भौगोलिक राज्य क्षेत्र विच्छिन्न होने के कारण सुरक्षित था।

पूर्व की ओर भाप से भरे जंगलों में रहने वाले मूलनिवासी अपनी अपेक्षा कहीं अधिक संख्या वाले ठंडे और खुले पर्वतीय प्रदेशों के निवासियोंको छेड़ने की हिम्मत नहीं कर सकते थे। 'इन्का' लोगों की खाद्य सामग्री प्राप्त करने की पद्धति प्रति एकड़ भूमि पर पल सकने वाले लोगों की संख्या की दृष्टि से एशिया के चावल वाले प्रदेशों को छोड़कर संसार के अन्य किसी भी भाग की अपेक्षा अधिक अच्छी थी। और भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि, जैसा कि हाल की परखों से पता चला है, ऊँचे ऐंडीज़ पर्वतों में रहने वाले मूलनिवासी ऊँची तुंगता वाले जलवायु में रहने के अभ्यस्त हो गए हैं। वे 17 हज़ार फुट की ऊँचाई पर स्थित चाइल की वंग की खानों में पूरी शक्ति से काम कर सकते हैं; इतनी ऊँचाई पर काफ़ी समय तक केवल रह पाना भी बहुत कम श्वेतजातीय मनुष्यों के बस का है। समुद्र तट की पट्टी इतनी संकरी और इतनी शुष्क थी कि स्थानीय नगर राज्य पर्वतीय लोगों की अवहेलना नहीं कर सकते थे; और जब एक बार पर्वतीय लोग पूरी तरह संगठित हो गए, तो समुद्र तट की पट्टी के स्थानीय नगर राज्य स्वतन्त्र नहीं रह सकते थे। इसके अतिरिक्त पर्वतीय प्रदेशों और समुद्र के प्रदेशों के मध्य वस्तुओं का विनिमय इन दोनों ही प्रदेशों की अर्थ-व्यवस्था के लिए अत्यावश्यक था। उनकी सीमाओं से बाहर 'इन्का' राज्य के शत्रु बहुत कम थे और उस राज्य को अपनी सेना बाहरी शत्रुओं से रक्षा करने या विदेशी लड़ाइयाँ लड़ने के लिए उतनी नहीं रखनी पड़ती थी, जितनी कि देश के अन्दर शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने के लिए। स्पेनवासियों के लिए पेरू और बोलीविया को लेना मैक्सिको को लेने की अपेक्षा अधिक आसान था। परन्तु आज चार शताब्दी बाद इन दोनों में से मैक्सिको कहीं अधिक स्पेनी है और ऐंडीज के ये दो देश (पेरू और बोलीविया) कहीं अधिक मूलवासी-प्रधान हैं। इसका श्रेय या दोष हम तुंगता के अन्तर को दे सकते हैं।

मैक्सिको और ऐंडीज उन अनेक प्रदेशों में से केवल दो हैं, जिन्हें स्पेनवासियों ने उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका में जीता था और 'आजतेक' और 'इन्का' उन कृषिप्रधान आरम्भिक धातु युग की सभ्यताओं में से केवल दो हैं जिनसे कि उनका मुकाबला हुआ था। पोप की एक राजाज्ञा द्वारा पुर्तगालियों को 'नई दुनिया' के उन प्रदेशों में औपनिवेशिक अधिकार मिल गए थे, जो 46 डिग्री पश्चिमी देशान्तर रेखा के पूर्व में थे; इन प्रदेशों में ब्राजील का, मोटे तौर पर

बैलेम से रियो डि जैनीरो तक का पूर्वी उभार भी सम्मिलित है। नेटाल और वर्दे अन्तरीप द्वीपों के मध्य दूरी कम होने के कारण और दक्षिणी अतलान्तक में चलने वाली पवनों की दिशा के कारण अनेक पुर्तगाली कप्तान आशा अन्तरीप और भारत जाते हुए रास्ते में ब्राजील में भी रुका करते थे। इस विशाल नए देश में, जैसा कि उन्होंने अफ्रीका और पूर्वी इंडीज़ में किया था, वे उष्ण कटिबन्धीय जंगलों के एक क्षेत्र के खुले पर्वतीय प्रदेशों और पठारों की अपेक्षा कहीं अधिक कठिन था। जिन मूलवासियों से उनका मुकाबला हुआ जैसे अमेजन के और समुद्र तट के निटक वाले जलमार्गों के तूपीनंवा तथा अन्य कई कबीले थे, वे धातु युग में थे ही नहीं, अपितु उस समय तक भी पूर्णतया नव-पाषाणिक थे। क्योंकि इस उष्ण कटिबन्धीय वर्षायुक्त जंगल में चकमक या अग्नेय काँच है ही नहीं, इसलिए उनके कटाई के औज़ार मछली के दांतों, बाँस की खपच्चियों और कठोर रेशेवाली ताड़ की लकड़ियों के और परिष्कृत पत्थर के बने थे। उनमें से कुछ लोग मिट्टी के बड़े-बड़े पात्र बनाते थे, जिन्हें वे एक वानस्पतिक चमकदार लेप द्वारा सजाते थे। अमेजन नदी के मुहाने में मराजो द्वीप इस प्रकार की मिट्टी के बर्तनों के निर्माण का केन्द्र था; ये पात्र आज अनेक संग्रहालयों की बहुमूल्य निधि हैं। इन वनों के, ऊष्ण कटिबन्ध में पाये जाने वाले पक्षियों से उन्हें बड़े-बड़े चमकीले रंगों वाले पंख प्राप्त होते थे, जिनसे वे अपनी शिरोभूषा तथा अन्य आभूषण बनाते थे। कुछ अवसरों पर वे इन पंखों को अपने शरीरों पर गोंद से चिपका लेते थे। कुछ कबीलों के लोग अपने शरीर पर बेर जैसे कुछ फलों का रस पोत लेते थे, जिसके कारण उनका रंग चमकीला लाल हो जाता था। इस प्रकार के मूलनिवासी 'कोलोरेड' (रंगीन) कहलाते थे। जो लोग मुकुट जैसी शिरोभूषाएँ धारण करते थे, उनका नाम 'कोरोनेडो' (मुकुटधारी) पड़ गया था। और जो लोग कान-प्लग (ईय रप्लग) धारण करते थे, वे 'ओरेजोन' कहलाते थे।

पर्वतीय प्रदेशों में होने वाली मक्का, और लोबिया आदि फलियों में इन जंगलों में रहने वाले मूलवासियों ने एक कन्दमूल जैसा प्रधान खाद्य और जोड़ लिया था, जिसे वे मैनियोक कहते हैं; यह दो प्रकार का होता था; एक ज़हरीला और एक मीठा। वे इन दोनों को खाते थे। ज़हरीली जाति के मैनियोक के गूदे को कतर लेने के बाद वे उसे इस प्रकार की नलियों में भर

देते थे, जो अन्दर से आरपार टोकरी की तरह बुनी होती थी; यह नली किसी पेड़ की शाखा से लटका दी जाती थी। इस यन्त्र के नीचे की ओर एक लट्ठा लगा रहता था। जब मूलवासी उस लट्ठे पर बैठ जाते थे, तो उस नली की जालियाँ भिचने लगती थीं और जहरीला रस निचुड़कर बाहर आ जाता था। इस मैनियोक की रोटियाँ बना ली जाती थीं, जिन्हें 'कसावा' कहा जाता था। मकई की भाँति मैनियोक में भी खमीर नहीं उठाया जा सकता।

जो आधुनिक खोज करने वाले लोग उष्ण कटिबन्धीय वनों में जाते हैं, उन्हें स्थल भाग पर यात्रा करने में कठिनाई होती है और वे नाव द्वारा यात्रा करते हैं। इन मूलवासियों पर भी यह बात लागू होती थी। वे नदी के किनारे रहने वाले लोग थे, जो नदियों के किनारे टीलों पर बने लम्बे-लम्बे सामूहिक मकानों में रहते थे। ये मकान ऐसे थे कि उनमें से एक से दूसरे तक नौका द्वारा पहुँचा जा सकता था। जैसी कि कोई भी व्यक्ति आशा कर सकता है, ऐसी प्रत्येक बस्ती स्वतन्त्र होती थी। यद्यपि कुल मिलाकर देश में जनसंख्या की घनता अधिक नहीं थी, किन्तु नदी-किनारे के उस क्षेत्र के लिए प्रतियोगिता के लिए कारण था, जिस पर वे मूलवासी लोग अपने 'चीरा और 'जलाया' के अपव्ययपूर्ण ढंग से खेती किया करते। रेवड के पशुओं से रहित अन्य नव-पाषाणिक किसानों के समान इन लोगों में भी पुरुषों के पास करने के लिए काम बहुत कम होता था और इसलिए वे प्रतिवर्ष शिकार यात्राओं पर जाया करते थे और अपने पड़ौसियों पर धावे बोला करते थे। जो इन धावों में सफल रहते, वे अपने साथ कैदियों को लेकर लौटा करते थे, जिन्हें वे कुछ दिन तक तो गाँवों के आस-पास रखा करते थे और अन्त में बड़े धूमधाम युक्त समारोहों में उनकी हत्या कर देते थे, जहाँ आधुनिक रियो डि जेनीरो बसा है, उस स्थान पर जो मूलवासी रहते थे, वे अपने शिकार हुए कैदियों को लम्बी-लम्बी रस्सियों के सिरों से बाँध देते थे, और उन्हें अपने (विजेताओं के) साथ गदाओं से लड़ने को कहते थे।

समुद्र से दूर नदियों के बेसिनों में, जहाँ कि भाप भरी रहती और खटास की-सी बदबू उठा करती थी, जंगल में घात लगाकर किये गए आक्रमणों, जंगली पशुओं और रोगों का राज्य रहता था; इन स्थानों पर मानव-वैज्ञानिक अब भी मूलवासियों को लगभग ठीक उसी ढंग से रहते देख सकते हैं, जैसे वे तब

रहते थे जब पुर्तगाली लोग वहाँ पहले पहल पहुँचे थे। रियो डि जेनीरो तथा साओ पोलो के आस-पास के अपेक्षाकृत सुगम्य और स्वास्थ्यप्रद प्रदेश में इन विजेताओं ने अपनी सभ्यता का एक औपनिवेशिक रूप स्थापित किया, जिसमें उसी प्रकार की धार्मिकता, शानदार वास्तु कला और जातीय सहिष्णुता स्पष्ट दिखाई पड़ती थी, जैसी कि उन्होंने अन्यत्र सभी जगह दिखाई थी।

इस 'नई दुनिया' से कोलम्बस द्वारा तथा उसके बाद स्पेन तथा पुर्तगाल से वहाँ पहुँचे लोगों द्वारा भेजी गई रिपोर्टों से पश्चिमी लोग चकित रह गए। फिर भी इस 'नई दुनिया' में पहुँचने वाले लोग सर्वप्रथम नहीं थे। जैसा कि अब हर कोई जानता है, ग्रीनलैंड में नौर्स बस्ती के संस्थापक ऐरिक दि रैड के पुत्र लीफऐरिकसन ने सन् 1001 में समुद्र तट के एक अनपहचाने भाग तक समुद्र यात्रा की थी; इस स्थान का नाम उसने 'विनलैंड' रखा था और यह न्यू जर्सी तथा लैब्रैडोर के बीच में किसी जगह था। इसके बाद थौरफिन कार्लसेफन ने अपनी समुद्र यात्राएँ कीं और वह एक बन्दरगाह में दो वर्ष तक उपनिवेश बना कर रहा भी। फिर भी घटनाओं की यह शृंखला जहाँ तक हमें मालूम है न केवल सागरेस स्थित अकादेमी के विशेषज्ञों को पता नहीं चली, अपितु यह उन अमरीकी मूलनिवासियों पर भी कोई प्रभाव न डाल सकी, जिनसे कि नौर्समैनों की भेंट हुई थी और जिन्होंने उन्हें खदेड़कर बाहर निकाल दिया था। इससे हम यह मान सकते है कि फीनीशियनों के काल के बाद से जो भी अन्य समुद्र यात्री वापस नहीं लौटे थे, वे भी इसी प्रकार कहीं स्थल भागों तक पहुँच गए होंगे; यह आवश्यक नहीं कि वे उन मूलवासियों पर उससे अधिक प्रभाव डाल पाये हों, जितना कि वाइकिंग लोग डाल पाये थे।

इसी बात का एक और उदाहरण सन् 1539-43 में की गई डि सोटो की साहसिक यात्रा है। यह वीर सेनाध्यक्ष मैम्फिस के निकट मिस्सीसिपी नदी के किनारों पर स्थित मूलवासियों के अनेक कस्बों में गया था। उसकी मृत्यु के बाद और भी दक्षिण की ओर उनके सैनिकों पर 'नाचीज़' मूलवासियों ने आक्रमण किया था। ये लोग बड़े-बड़े स्तूप बनाते थे और उनका राजा, जो सूर्य देवता का प्रतिनिधि होता था, इन इमारतों के ऊपर रहा करता था; वह इन स्तूपों से विशेष समारोहों के अवसर पर नीचे उतरता था; -वह उन जलूसों में आकर्षण का केन्द्र होता था, जिनमें कि उसे मिश्र के फरुनों की

भाँति एक पालकी में बिठाकर ले जाया जाता था।

डि सीटो और उसके आदमी आये और चले गए। उसके दो शताब्दी बाद जब फ्रांसीसियों ने मिस्सीसिपी नदी की निचली घाटी की खोज की और उसे बसाया, तब उन्हें वहाँ पर 'नाचीज' मूलनिवासियों का एक ऐसा ही कबीला मिला, जो राजवंश-पूर्व के उसी प्रकार के साज-सज्जा-पूर्ण ढंग से जीवन-यापन कर रहे थे; परन्तु वे बेचारे डि सोटो के विषय में सब कुछ भूल चुके थे। केवल पीतल की दो पट्टियाँ, जिन पर 'ए० ई०' (A. E.) अंकित था और जिन्हें उनके पड़ोसी तुकाबाची के क्रीक लोगों ने अपने पवित्रतम मंदिर में बड़ी सावधानी से सुरक्षित रखा था, इस बात का एकमात्र प्रमाण थी कि कभी स्पेनवासी वहाँ पर आये थे; इसके अलावा डि सोटो के यात्री दल के सदस्यों द्वारा लिखे गए साहित्यिक विवरण और थे; इन सदस्यों में से एक ने अपना नाम 'ए जैन्टिलमैन फ्रॉम ऐल्वास' (ऐल्वास का भद्र पुरुष) रखा हुआ था।

जो बात मैं कहना चाहता हूँ, वह यह है कि इस प्रकार की केवल एक बार की गई यात्राओं और बहुत थोड़ी देर तक रही बस्तियों का अमेरिका के मूलवासियों पर इसके सिवाय कोई स्थायी प्रभाव नहीं हुआ कि उन्हें नए-नए रोग लग गए। यह सिद्ध करने के लिए कि अमेरिका के मूलवासी इजराइल के लुप्त हो चुके कबीलों के या उन वेल्सवासियों के, जिनके कि जहाज़ समुद्र में टूट गए थे, वंशज हैं या यह कि युकातान की 'मय' सभ्यता अफ्रीका से अतलान्तक को नौकाओं द्वारा पार करके मान्दिगो नीग्रो लोगों द्वारा अमेरिका में लाई गई थी, सैंकड़ों पुस्तकें लिखी गई हैं। ऐटलान्टिस, दि लौस्ट कौण्टिनैण्ट ऑफ मू (लुप्त महाद्वीप), और अतलान्तक तथा प्रशान्त महासागर में डूबे हुए अन्य काल्पनिक प्रदेशों की कहानी अमेरिकी मूलवासियों की सभ्यता की व्याख्या करने के लिए गढ़ी गई है; परन्तु इसके लिए किसी दैवीय साहाय्य की कल्पना करने की आवश्यकता नहीं है। 'नई दुनिया' की संस्कृति में पाये जाने वाले लगभग प्रत्येक तत्व की व्याख्या विशुद्ध रूप से स्थानीय विकास के आधार पर की जा सकती है। जिन मानव-वैज्ञानिकों ने बड़े धैर्यपूर्ण ऐसे प्रमाणों को खोज निकाला है, जिनके कारण उनमें से अधिकाँश लोग साँस्कृतिक विच्छिन्नतावादी बन गए है, वे तब बहुत अधीर हो उठते हैं, जब अव्यवसायी प्रसारवादी लोग निरन्तर बेसिर पैर की व्याख्याएँ प्रस्तुत करते चले जाते हैं। हो सकता है कि

इसी कारण मानव-वैज्ञानिक भी उनमें से कुछ प्रमाणों के प्रति कुछ अधिक असहिष्णु हो उठे हों।

अब हमें यह पता चला है कि मनुष्य चतुर्थ हिमाच्छादन काल में या उसके तुरन्त बाद एशिया से अमेरिका में पहुँचा था। इस समय उपलब्ध प्रमाणों की मेरी व्याख्या यह है कि मनुष्यों ने उस समय, जब संसार के जल का अधिकाँश भाग हिमनदों में जम कर स्थिर हो जाने के कारण समुद्र का स्तर बहुत नीचा हो गया था, बेरिंग जलडमरूमध्य (जल सन्धि) को सूखे पैरों पार किया था उस समय यूकोन घाटी में बर्फ नहीं जमी थी। बर्फ पिघलने के बाद जलडमरू में पानी भर गया और तभी प्रशान्त समुद्र-तट के साथ-साथ और रौकीज के पूर्वी ढलानों के साथ-साथ दक्षिण की ओर प्रवेश द्वार खुल गए थे। इस समय हमारे सामने हिमाच्छादनोत्तर काल के, व्यौमिंग से लेकर मैक्सिको तक अनेक स्थल हैं, जिनके द्वारा यह बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि अमेरिकी मूलवासी आठ हज़ार ईस्वी पूर्व तक में मैदानों के पूर्वी भाग में और पठारों पर शिकार कर रहे थे। दक्षिणी अमेरिका में जूनियस बर्ड के कार्य के परिणामस्वरूप यह सम्भाव्य प्रतीत होता है कि उस महाद्वीप के अन्तिम सिरे पर मनुष्य इसके कोई तीन हज़ार वर्ष बाद पहुँचा था।

प्रशान्त पार की समस्या

पाँच हज़ार ईस्वी पूर्व तक ऐस्किमो प्रदेश के सिवाय 'नई दुनिया' का सारा भाग साइबेरिया से आने वाले किसी एक मनुष्य-समूह या मनुष्यों के कई छोटे समूहों के वंशजों के क़ब्जे में आ गया था; उन लोगों ने यह देखा था कि यहाँ के विशाल जंगल और प्रशाद्वल (वृक्ष रहित मैदान) शिकार के पशुओं से भरे थे, झीलें और नदियाँ मछलियों से भरी थीं और मकड़ी बन्दर (स्पाइडर मंकी) से बड़ा कोई अन्य वानर (प्राइमेट) उनका प्रतिद्वन्द्वी न था। अमेरिकी मूलवासियों की विभिन्न प्रादेशिक जनसंख्याओं के आकार, आकृति और त्वचा के रंग में पाये जाने वाले शारीरिक अन्तरों की व्याख्या छठे अध्याय में दिये गए नियमों के अनुसार परिवेश के दवाव में अत्यधिक अन्तरों के प्रति शरीर-क्रियात्मक प्रतिभावन (रिस्पौंस) के आधार पर की जा सकती है। इसलिए अमेरिकी मूलवासियों की व्याख्या करने के लिए हमें

किसी जनन-सम्बन्धी दैवयोग की कल्पना करने की आवश्यकता नहीं है। इसके लिए साइबेरिया से एक ही बार हुआ, और फिर न दुहराया गया, आव्रजन ही पर्याप्त है। यदि कोलम्बस से पहले नौर्स लोगों के अलावा अन्य कोई लोग भी अमेरिका आये थे, जैसा कि वे अवश्य आये हो सकते हैं, तो उनका इन महाद्वीपों के निवासियों की जातीय बनावट पर कोई दृश्य प्रभाव नहीं पड़ा। रुधिर-समूहों के साक्ष्य से इस बात की सम्भावना, कि अमेरिका से बाहर के लोगों के साथ बड़े पैमाने पर कोई मिश्रण हुआ हो, असम्भाव्य हो गई है। लगभग सभी अमेरिकी मूलवासी अप्रबल 'ओ' रुधिर समूह के हैं; इसका कारण यह हो सकता है कि वे एशिया से उस समय से पहले ही चल चुके थे, जबकि वहाँ 'ए' और 'बी' समूहों का आविर्भाव हुआ, या फिर यह कि किसी प्रजनन-सम्बन्धी यन्त्रजात ने, जो कि अभी तक ज्ञात नहीं है, वहाँ पहुँचने के बाद इन दो अन्य रुधिर समूहों को समाप्त कर दिया हो। कुछ कबीलों में थोड़ा-सा 'ए' रुधिर समूह और कुछ बहुत ही थोड़े कबीलों में 'बी' रुधिर समूह दिखाई अवश्य पड़ता है, किन्तु इन असामान्य कबीलों का भौगोलिक वितरण किसी खास नमूने पर नहीं है, जैसा कि उसे उस दशा में होना चाहिए था जबकि ये सब एशिया, अफ्रीका या यूरोप से समुद्र मार्ग द्वारा यहाँ पहुँचे होते।

इस प्रकार हम एक दुविधा में पड़ जाते हैं : यदि कोई लोग अन्यत्र कहीं से अमेरिका आये थे, तो वे चलते-फिरते लोग थे और चलते-फिरते लोगों का स्थानीय संस्कृतियों पर प्रभाव नहीं के बराबर होता है। फिर भी हमें यह पता है कि किसी समय सम्भवतः प्रशान्त महासागर के पार से साँस्कृतिक स्थानान्तरण अवश्य ही हुए होंगे। इस विषय में प्रमाण वानस्पतिक हैं। इस बीच में हम 'पुरानी दुनिया' में सभ्यता का इतना काफी विकास देख चुके हैं कि हम उन संस्कृतियों में, जो क्रमशः एक-एक सोपान करके विकसित हुई हैं और उनमें, जो बाहरी प्रभावों के कारण एकाएक उग्रतापूर्वक बदल दी गई हैं, अन्तर को पहचान सकें। अमेरिकी सभ्यताएँ इनमें से पहले प्रकार की हैं।

मैक्सिको की घाटी में सावधानी से की गई खुदाइयों से यह पता चलता है कि कोर्टेस ने जिन साक्षर नगर राज्यों को खोज निकाला था, उनके बनने से पहले सरल नव-पाषाणिक कृषि की एक बहुत लम्बी अवधि व्यतीत हुई होगी न्यूमैक्सिको में स्थित बैट गुफा (बैट केव) से, जो नव-पाषाणिक संस्कृति के

छोर पर स्थित है, कार्बन-14 द्वारा निर्धारित तिथियों के अनुक्रम से ऐसा संकेत मिलता है कि अमेरिकी मूलनिवासी 4 हज़ार ईस्वी पूर्व में मक्का बोया करते थे। जहाँ तक हमें पता है, कृषि 'नई दुनिया' में भी उतनी ही प्राचीन है, जितनी कि 'पुरानी दुनिया' में; किन्तु अभी हमें बहुत कुछ जानना बाकी है। दक्षिणी अमेरिका के समुद्र तट के निकट के स्थलों में, जिनमें कि वानस्पतिक सामग्री शुष्क जलवायु के कारण परिरक्षित रही है, इस सम्बन्ध में बहुमूल्य प्रमाण उपलब्ध हुए हैं। जूनियस बर्ड ने सन् 1946 में पेरू के समुद्र तट पर चिकामा नदी के मुहाने पर एक स्तूप, हुआ का प्रियेता, की खुदाई करते हुए इस बात के प्रमाण प्राप्त किये कि इस स्थल पर 2500 ईस्वी पूर्व से 1200 ईस्वी पूर्व तक निरन्तर मछियारों और किसानों का एक समूह बसता रहा था। वे कद्दू, लौकी, काली मिर्च और कपास की खेती करते थे। कपास को अंगुलियों से बुनकर ये बहुत बड़ी मात्रा में कपड़ा तैयार करते थे, जिनके कि वहाँ हज़ारों खंड प्राप्त हुए हैं। इस स्थल पर उनका कब्जा तब समाप्त हुआ, जब एक अन्य नए लोगों ने इस स्थल पर आक्रमण किया; ये नए लोग अपने साथ मिट्टी के बर्तन, मक्का और असली बुनाई लेकर आये थे। ये नये लोग पर्वतीय प्रदेशों से या समुद्र तट के निकट किसी अन्य स्थान से आये हो सकते हैं।

अमेरिका की प्राचीन अभेद्यता के विरुद्ध प्रस्तुत किया जाने वाला वानस्पतिक प्रमाण संक्षेप में चार प्रधान पौधों तक रह जाता है लौकी (घीया) कपास, शकरकन्द और मक्का (इंडियन कौर्न)। लौकी, लैजिनेरिया, सिसरेरिया दोनों ही गोलार्द्धों में बहुत लम्बे समय से बोई जाती रही है। प्राचीन मिश्रवासियों को इसका ज्ञान था और रोमन लोग इसके कच्चे फल को खाते थे। भारत और दक्षिण-पूर्वी एशिया में इसका उपयोग बोतल या थाली के रूप में किया जाता था और ऐसा ही मध्य तथा दक्षिणी अमेरिका में भी किया जाता था। जूनियस बर्ड को हुआका प्रियेता में बिलकुल आदितम स्तरों में लौकियाँ मिली हैं। वनस्पति वेत्ताओं का विश्वास है कि लौकी को बोना पहले-पहल अफ्रीका या भारत में शुरू किया गया था और इनमें भी सम्भाव्यतः पिछले अर्थात् भारत में, और यह कि यह पश्चिमी गोलार्द्ध की स्वदेशज वस्तु नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि लौकी दो हज़ार ईस्वी पूर्व से भी पहले

CC-0. Agamnigam Digital Preseyation Foundation, Chandigarh

पुरानी और नई दुनिया, दोनों में बोई जाती थी। यह एक गोलार्ध से दूसरे गोलार्द्ध में कैसे पहुँची ?

दो रास्ते समझ में आते हैं : एक तो दक्षिणी अतलान्तक की संकरी कटि को पार करके काले अफ्रीका से ब्राजील तक, और दूसरा प्रशान्त महासागर को पार करके। इन दोनों में से किसी भी मार्ग में दो साधन सम्भव हैं : एक तो समुद्र की धाराओं में बहते जाकर या फिर किसी मनुष्य द्वारा ले जाये जाकर। एक वनस्पतिवेत्ता ने परीक्षण के तौर पर कुछ लौकियों को यह देखने के लिए खारे पानी में भिगोये रखा कि उनके बीज महासागर की परिस्थितियों में कितने समय तक रहने के बाद भी फिर उग सकेंगे। उसे यह पता चला कि लौकी के बीज उतनी देर तक खारे पानी में डूबे रहने के बाद भी अंकुरित होने में समर्थ हैं, जितनी कि उन्हें इन दोनों में से किसी भी महासागर को उसमें बहने वाली जलधाराओं द्वारा पार करके अमेरिका तक पहुँचने में लगेगी; इस समय का अन्दाज़ उसने बोतलों द्वारा भेजे जाने वाले सन्देशों में लगने वाले समय के आधार पर लगाया। इस प्रकार वे लौकियाँ इन दोनों में से किसी भी मार्ग द्वारा वहाँ पहुँच सकी होंगी, किन्तु शर्त यह है कि हम यह मान लें कि समुद्र तट पर किसी व्यक्ति ने इस प्रकार पहुँची हुई लौकी को उठा लिया होगा, उसे फोड़ा होगा और उसके बीजों को बो दिया होगा, क्योंकि यदि लौकी को फोड़ा न जाय और खारी पानी से दूर न बोया जाय, तो उसके बीज उग नहीं सकते।

यह सम्भव है कि अफ्रीका से किसी नौका में बैठकर समुद्र में भटकता हुआ कोई अज्ञात नाविक लौकियों को ब्राजील लाया हो। किन्तु इसकी सम्भावना कम है। यद्यपि हमें पश्चिमी अफ्रीका के प्रागितिहास के विषय में बहुत कम जानकारी है, फिर भी हमें इस बात का काफी कुछ निश्चय है कि वहाँ कृषि का विकास इतनी देर में शुरू हुआ था कि जिससे मिश्र के पुरातन राजत्व काल जितने प्राचीन समय में इस प्रकार लौकी का स्थानान्तरण नही हो सका होगा। यदि लौकी मनुष्यों द्वारा प्रशान्त महासागर को पार करके अमेरिका ले जाई गई हो, तो ऐसा इन द्वीपों के पोलिनेशियाई लोगों द्वारा बसने के सम्भाव्य काल से पहले ही हुआ होगा। इन चारों सम्भव बातों में से किसी के भी सही होने की सम्भावना नहीं है।

कपास की, जो गौसीपियम नाम से ज्ञात एक प्रजाति (जीनस) है, खेती 2500 ईस्वी पूर्व जितना पहले पेरू और सिन्धु घाटी के प्रदेश, इन दोनों में की जाती थी। पुरातत्वीय प्रमाणों से, जिनमें जूनियस बर्ड द्वारा हुआका प्रियेता में की गई नई खोजें भी सम्मिलित हैं, यह बात सुनिश्चित हो गई है। परन्तु लौकी से कपास में यह अन्तर है कि यह सबकी सब ही स्पीशिज़ नहीं है। भारतीय जंगली कपास, गौसीपियम आबोरियम, में तेरह छोटे क्रोमोसोम होते हैं। अमेरिकी जंगली कपास में, जिसमें गौसीपियम रेंमडियाई भी सम्मिलित है और जिससे अनेक वनस्पतिवेत्ता अंशतः कृषि की जाने वाली कपासों को निकला हुआ मानते हैं, तेरह बड़े क्रोमोसोम होते हैं। पूर्वी भारत की खेती की जाने वाली कपास वहाँ की स्थानीय जंगली स्पीशिज का एक सुधरा हुआ रूप मात्र है, जिसमें क्रोमोसोमों की संख्या उतनी ही है। इसलिए इसके स्थानीय उद्गम के सम्बन्ध में प्रमाण अकाट्य हैं। पेरू की अपेक्षाकृत पिछले स्तरों की बोई गई अमेरिकी कपास, गौसीपियम बार्बाडेन्स में छब्बीस क्रोमोसोम होते हैं, जिनमें तेरह बड़े और तेरह छोटे होते हैं। वाणिज्यिक कपास की किस्में तैयार करने वाले विशेषज्ञ यह मानते हैं कि बार्बाडेन्स कपास जंगली अमेरिकी कपास और खेती की जाने वाली पूर्वी भारत की कपासों का संकर है। यदि ऐसी बात हैं, तो कोई न कोई व्यक्ति 2500 ईस्वी पूर्व से पहले प्रशान्त महासागर को पार करके जहाज़ पर कपास को लाया होगा, क्योंकि हुआका प्रियेता में सबसे निचले स्तरों पर पाई गई कपास रंग तथा अन्य विशेषताओं की दृष्टि से ठीक वही है, जो ऊपर के स्तरों पर पाई गई है। दूसरी वैकल्पिक कल्पना भी, कि कोई व्यक्ति इसे अतलान्तक के पार से लाया था, ऐसी है कि जिसका समर्थन कर पाना उतना ही कठिन है, जितना कि प्रशान्त पार वाली का। यह सिद्धान्त, कि कपास समुद्र में वहकर आ गई होगी, विचारणीय भी नहीं है, क्योंकि कपास का बीज खारे पानी में डुबोये रखने के बाद अंकुरित होने योग्य नहीं बचता।

तीसरी निर्णायक स्पीशिज़ भारतीय अनाज (इण्डियन कौर्न), 'ज़ी मेज़' अर्थात् मक्का है। यह पानी पसन्द करने वाली एक घास है, जो ज्वार और बाजरे से सम्बन्धित है। जैसा अन्य घासों में होता है कि प्रत्येक बीज को आवृत करने के लिए उनमें तुषों का एक पृथक् आवरण रहता है, वैसा इस

घास, मक्का, में नहीं रहता, अपितु पूरा का पूरा भुट्टा तुषों से आवृत रहता है। क्योंकि ये तुष फल के पक जाने पर अपने आप नहीं खुलते, इसलिए मनुष्य के हाथ की सहायता प्राप्त न होने पर मक्का मरकर समाप्त हो जायगी। यह तुष चार पतियों से बने आवरणों का संयोग होता है। यह कल्पना की जा सकती है कि मक्का के जंगली पूर्वज में यह आत्मघाती विशेष लक्षण नहीं रहा होगा।

मेंगलसडौर्फ को पैरेगुए और पूर्वी बोलीविया में खेती की जाने वाली मक्का की एक किस्म मिली थी, जिसे 'पौड कौर्न' कहा जाता है। यह एक फुटेहरा (पौप कौर्न) है, जिसमें चार पत्तियों वाला तुष-आवरण आधार के चारों ओर एक प्रकार का घोंसला-सा तो बना लेता है, किन्तु भुट्टे को पूरी तरह बन्द नहीं कर लेता। न्यू मैक्सिको में बैट गुफा (बैट केव) से जो सबसे पुराना इस प्रकार का अन्न (मक्का) प्राप्त हुआ है और जिसका काल कार्बन-14 द्वारा लगभग 4000 ईस्वी पूर्व निर्धारित किया गया है, उसमें भी ठीक यही विशेषता पाई गई है। क्योंकि बैट गुफा में प्राप्त और उसके समकालीन पौड कौर्न की किस्में सारतः एक ही हैं, इसलिए मैंगलसडौर्फ का विचार है कि इस समय जहाँ तक निर्धारित किया जा सकता है, उसके अनुसार अमेरिका में उगाई जाने वाली मक्का का सबसे आदिम रूप यही था। बैट गुफा की परत संख्या चार में, जिसका काल लगभग ईसा के पास का है, एक नये प्रकार की मक्का प्राप्त होती है। इसमें इससे पहले काल के नमूनों की अपेक्षा कुछ बड़ी गुल्लियाँ और गिरियाँ हैं और उसका तुष आधुनिक प्रकार का है। मैंगलसडौर्फ यह मानता है कि इनमें से पहला प्रकार जंगली पौड कौर्न पूर्वज का वंशज रहा हो सकता है, जबकि बाद वाली किस्म का तियोसैन्तली से संकर हुआ प्रतीत होता है; यह तियोसैन्तली एक जंगली घास है, जो मैक्सिको में पाई जाती है और अपने आप में सम्भाव्यतः मक्का और एक अन्य जंगली घास, त्रिप्सैकम, का संकर है।

मैंगलसडौर्फ की पुनः कल्पना बहुत सावधानी से किये गए कार्य पर आधारित तो है, किन्तु वह यह दावा नहीं करता कि उसने मक्का के जंगली पूर्वज का पता चला लिया है, और न पेरू के समुद्र तटवर्ती स्थलों में प्राचीनतम कृषि वाले स्तरों में किसी प्रकार की मक्का ही पाई जाती है। ऐडगर

एेंडरसन ने आसाम की नागा पर्वतमालाओं में नर-मुंडों के शिकारी कबीलों द्वारा उगाई जाने वाली छोटे भुट्टों वाली किस्मों का और कुछ चीनी ऐतिहासिक अभिलेखों का अध्ययन करने के बाद यह माना है कि मक्का दक्षिण-पूर्वी एशिया के पर्वतीय प्रदेशों में, मैगैलन द्वारा दुनिया भर की यात्रा

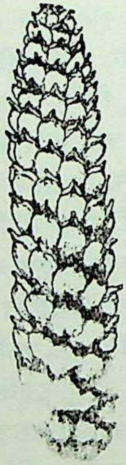

पौड कौर्न, मैंगल्सडौर्फ के अनुसार

के बाद कुछ दशाब्दियों के अन्दर उगाई गई थी। इस आधार पर, और साथ ही स्वयं मक्का के तकनीकी पहलुओं के आधार पर उसका दावा है कि मक्का 'पुरानी दुनिया' में कोलम्वस से पहले अवश्य उगाई गई। मैंगलसडौर्फ तकनीकी और ऐतिहासिक, दोनों ही कारणों से इस दावे का खंडन करता है। इस प्रकार एक वनस्पति-वैज्ञानिक युद्ध छिड़ गया है।

इस निर्णायक सूची में चौथे नम्बर की स्पीशिज़ शकरकन्द, इपोमिया बटाटास, है, जो कलदाना (मौर्निंग ग्लोरी) परिवार की वनस्पति है। यह दक्षिणी अमेरिका के उष्ण कटिवन्धीय वनों की देशज वनस्पति है और 16वीं शताब्दी से पहले यूरोपवासियों को इसका पता नहीं था; किन्तु मक्का और मिट्टी के पात्रों के आगमन के बाद जो काल शुरू हुआ, उसमें यह समुद्र तट के निकट बोई जाती थी। जब सर्वप्रथम यूरोपीय नाविक पोलीनेशिया पहुँचे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

थे, तब उन्होंने वहाँ, विशेषरूप से हवाई, ईस्टर द्वीप और इस द्वीप समूह के सबसे दूर स्थित द्वीप न्यूज़ीलैंड में इसकी खेती होते देखी थी। पोलीनेशियाई लोग इसका नाम 'कुमर' बताते थे, जो इसके दक्षिण अमेरिका में मूलवासियों द्वारा प्रयुक्त किये जाने वाले नामों में से एक है। मेरे वयोवृद्ध अध्यापक रौलेंड बी० डिक्सन तक, जिनसे अधिक पुराणपन्थी मानव-वैज्ञानिक कभी कोई नहीं हुआ होगा, यह मानते थे कि कोलम्बस के काल से कई शताब्दी पहले कोई न कोई व्यक्ति अवश्य ही शकरकन्द को पूर्व की ओर से इन द्वीपों में लाया होगा। इसका पौधा इतना नाज़ुक होता है कि इसे बहुत ही सुकुमारता और प्रेमपूर्ण सतर्कता के साथ, शायद जैसा कि पोलीनेशियाई लोग कहते थे, उनकी स्त्रियों को अपनी छाती से लगाये-लगाये लाना पड़ा होगा।

शकरकन्द का मामला कोई विशेष रूप से रहस्यमय नहीं है। थोर हेयरडाहल ने अपनी द्वितीय और अपेक्षाकृत अधिक तकनीकी पुस्तक में[1] यह प्रतिपादित किया है कि यह हो सकता है कि पेरू के समुद्र तट से कुछ अमेरिकी मूलवासी नाविक किन्हीं पोलीनेशियाई द्वीपों में इन लोगों के प्रधान पूर्वजों के वहाँ आगमन से पहले या उसके तुरन्त बाद पहुँचे हों। उस समय कन्दों को स्थानान्तरित किया जा सका होगा। उसने अपनी प्रसिद्ध और फलदायिनी समुद्र यात्रा यह सिद्ध करने के लिए की थी कि पेरूवासी अपने समुद्र-तट के व्यापार के लिए जिस प्रकार की नौकाओं का प्रयोग करते हैं, उस प्रकार की नौकाओं में बैठकर साहसी लोग इन द्वीपों तक पहुँच सके होंगे। उसने यह सिद्ध कर दिखाया कि ऐसा किया जा सकता था। इसका एकमात्र अन्य विकल्प यह है कि कुछ पोलीनेशियाई लोग पेरू के समुद्र तट पर पहुँचे और वहाँ से शकरकन्द लेकर फिर वापस लौट गए हों। मैं काम चलाऊ मान्यता के तौर पर हेयरडाहल के विकल्प को पसन्द करता हूँ, क्योंकि 1953 में उसने गालापागोस द्वीप समूह के एक द्वीप में कोलम्बस से पहले के काल के पेरू के ढँग के मिट्टी के पात्र प्राप्त किए थे; और 1960 में उसने इस प्रकार के पात्र ईस्टर द्वीप में प्राप्त किए, जहाँ वे पोलीनेशियाई काल से भी पहले के थे।

---

[1] थोरे हेयरडाहल की पुस्तक, 'अमेरिकन इनदि इंडियन्स पैसीफ़िक'; प्रकाशक हैं, जोर्ज ऐलन ऐंड अनविन, लन्दन, 1952।

यह ठीक है कि शकरकन्द की समस्या वैसी विकट नहीं है, किन्तु शेष तीन की व्याख्या करना इतना सरल नहीं है । यह सोचा तो जा सकता है कि लौकी 2500 ईस्वी पूर्व से पहले बहती हुई अतलान्तक के पार आ गई होगी, किन्तु इसकी सम्भावना बहुत कम ही है । यद्यपि 'पुरानी दुनिया' में कोलम्बस से पहले मक्का की उपस्थिति सिद्ध नहीं हुई, किन्तु इसका जंगली आदि रूप भी 'नई दुनिया' में प्राप्त नहीं हुआ है । सबसे कठिन समस्या कपास की है । यदि, जैसा कि अनेक वनस्पतिवेत्ता मानते हैं, पेरू में कृषि किये जाने वाले कपास के पौधे के तेरह छोटे क्रोमोसोम अवश्य ही भारत से लाये गए हों, तो वे भारत से अवश्य 2500 ईस्वी पूर्व से पहले, अर्थात् लौकी वाले समय ही चले होंगे ।

यह बतला पाना कठिन है कि इतने पुराने समय में कपास और लौकी प्रशान्त महासागर के पार सीधे किस प्रकार ले जाये जा सके होंगे, क्योंकि हमारे वर्तमान ज्ञान से ऐसा संकेत मिलता है कि पोलीनेशियाई द्वीपों में उसके तीन हज़ार वर्ष बाद तक भी लोग वैसे नहीं थे । इस बात की सम्भावना बहुत ही कम है कि ये पौधे जहाज़ों पर उत्तरी प्रशान्त महासागर की चाप का चक्कर लगाते हुए, जापान, कामचातका, ऐल्यूशियन द्वीप समूह, और उत्तरी अमेरिका के समूचे पश्चिमी समुद्र तट के साथ होते हुए दक्षिणी अमेरिका पहुँचे हों, किन्तु इस बात को अप्रमाणित भी नहीं किया जा सकता । एक कनाडावासी मानव-वैज्ञानिक मेरियस बार्बो[1] को इस बात के प्रमाण मिले हैं कि जापानी नाविक उसके देश के उत्तर-पश्चिमी समुद्र तट तक अपने भग्न जहाज़ों में पहुँचे थे और कोलम्बस के काल से पहले तो नहीं, किन्तु श्वेतजातीय लोगों के प्रथम सम्पर्क के काल से पहले वहाँ के मूलवासियों के बीच में रहते रहे थे । जापानी लोग सन् 1600 में विल ऐडम्स के जापान पहुँचने से पहले समुद्र में जाने वाले बढ़िया जहाज़ नहीं बनाते थे । तेरहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मा-तुआन-लिन[2] नामक एक चीनी लेखक ने अपने देश की सीमाओं से बाहर संसार के

---

[1] मेरियस बार्बो, 'टोटम पोल्स', बुलेटिन संख्या 119, कनाडा का राष्ट्रीय संग्रहालय, ओटावा, 1950, खंड 2 पृष्ठ 831 ।

[2] मा-तुआन-लिन, 'ऐथ्नोग्राफी दे प्यूपिल ऐत्रांजियर आ ला शीन', खंड 1, ल मार्किस द हर्वे द सें डेनी, जैनैवा, 1873 ।

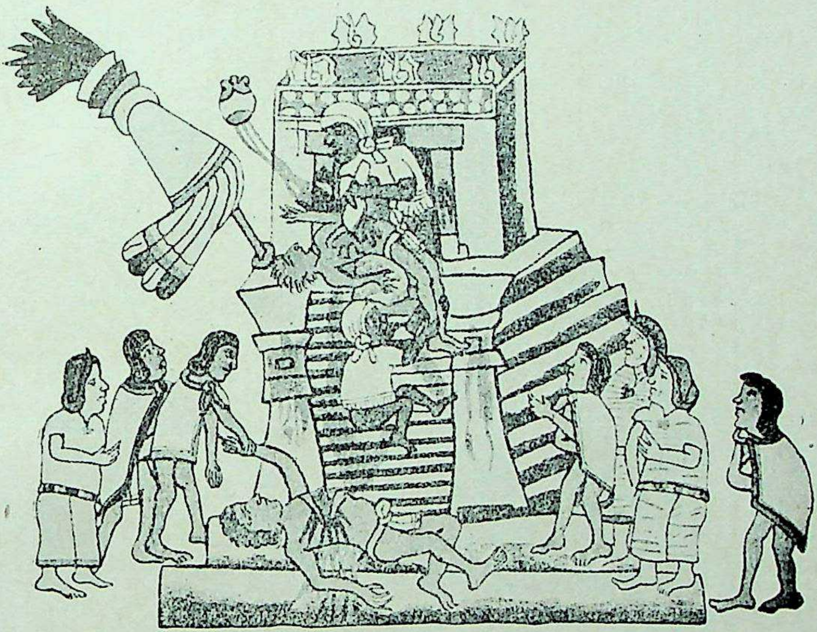

'आज़तेक' बलिदान का एक दृश्य। ज़ेलिया नुट्टल की पुस्तक 'बुक ऑफ़ दि लाइफ़ ऑफ़ दि ऐंशियेंट मैक्सिकन्स' से।

प्लेट 26

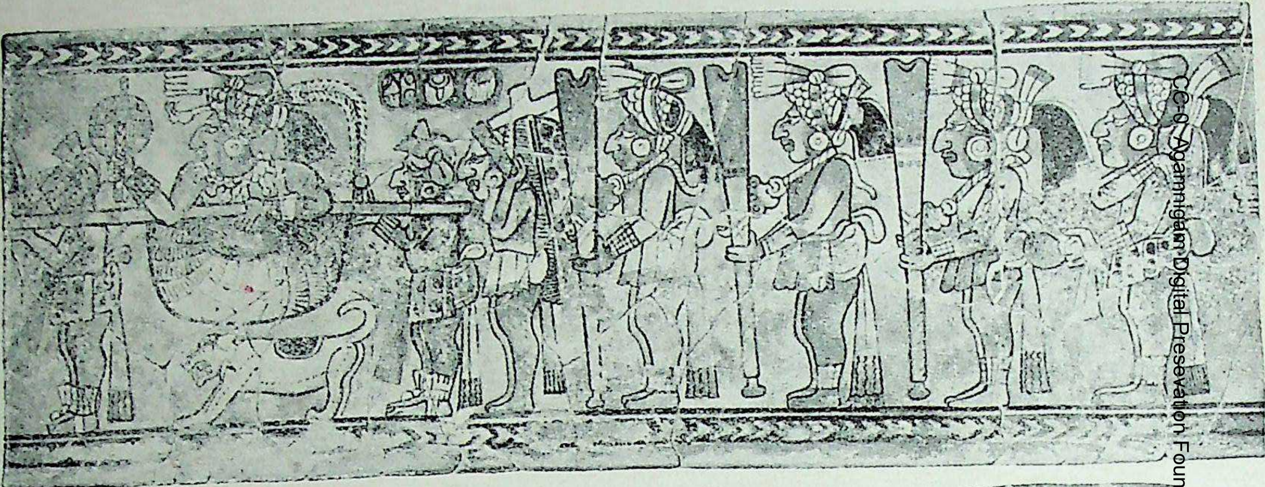

मय लोगों की एक पालकी। एक फूलदान से लिया गया चित्र। इस पट्टी में समूची परिधि दिखाई गई है। असली फूलदान दाईं ओर दिया गया है।

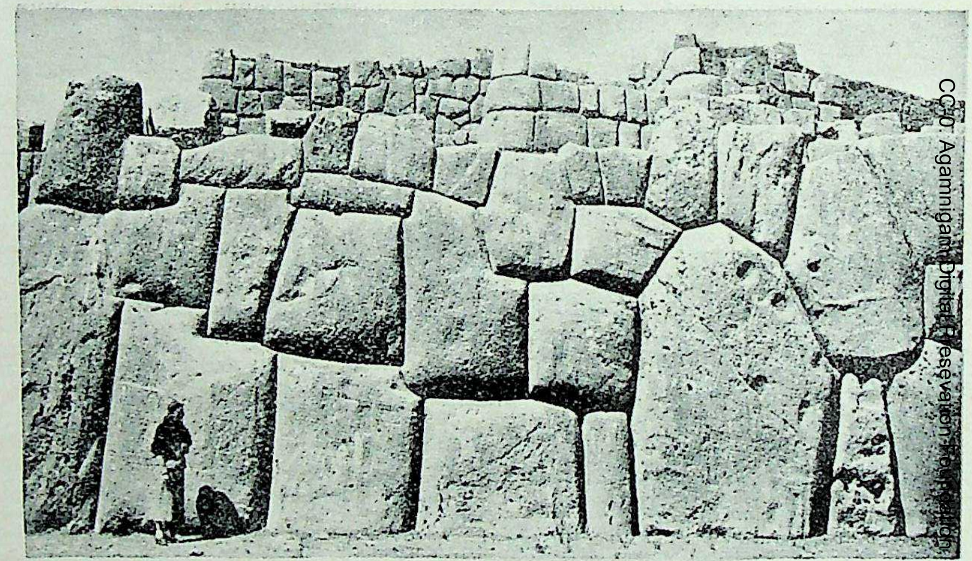

साक्साहुआमाकान का दुर्ग, जो 'इन्का' लोगों की राजधानी कुज्को की की रक्षा के लिए बनाया गया था। यह तीन तलों में से सबसे निचला तल है।

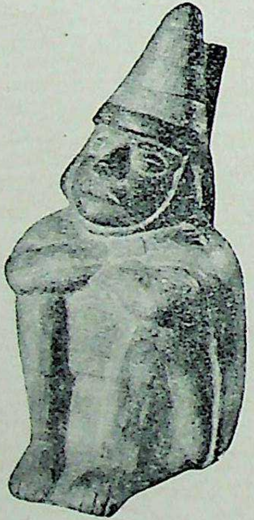

श्रान्त यात्री। पेरू समुद्र तट से प्राप्त एक मोचिका पात्र, जो ईसा के काल का है।

प्लेट 27

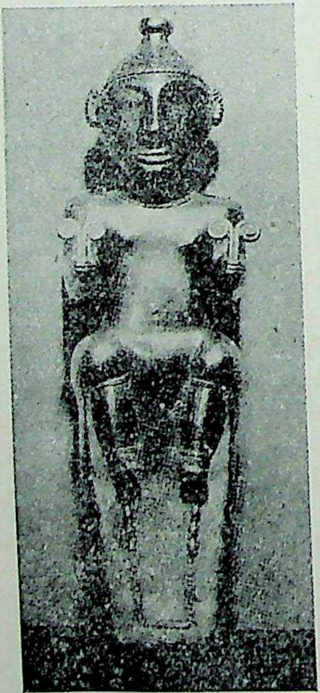

'इन्का' लोगों की निधियाँ। ईक्वेडोर (ऊपर) और कोलम्बिया से प्राप्त स्वर्ण की वस्तुओं को स्पेनी विजेताओं ने पिघला डाला था।

प्लेट 28

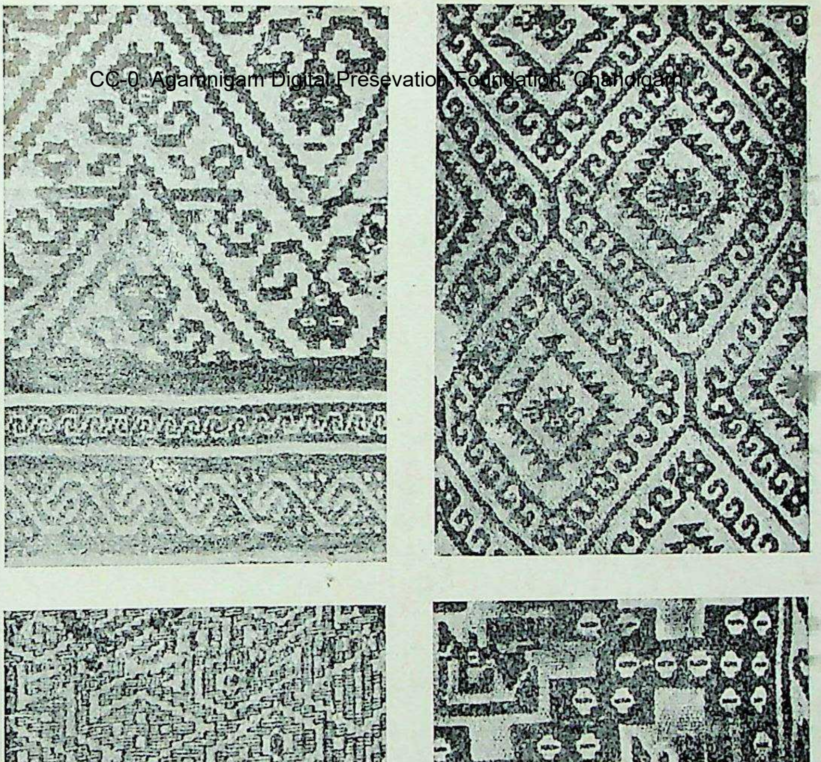

पेरू के चार वस्त्र । समुद्र तट के निकट वाले मैदान में मूलवासी लोग सूत, और लामा तथा अलपका से बढ़िया और कलापूर्ण वस्त्र बुना करते थे ।

प्लेट 29

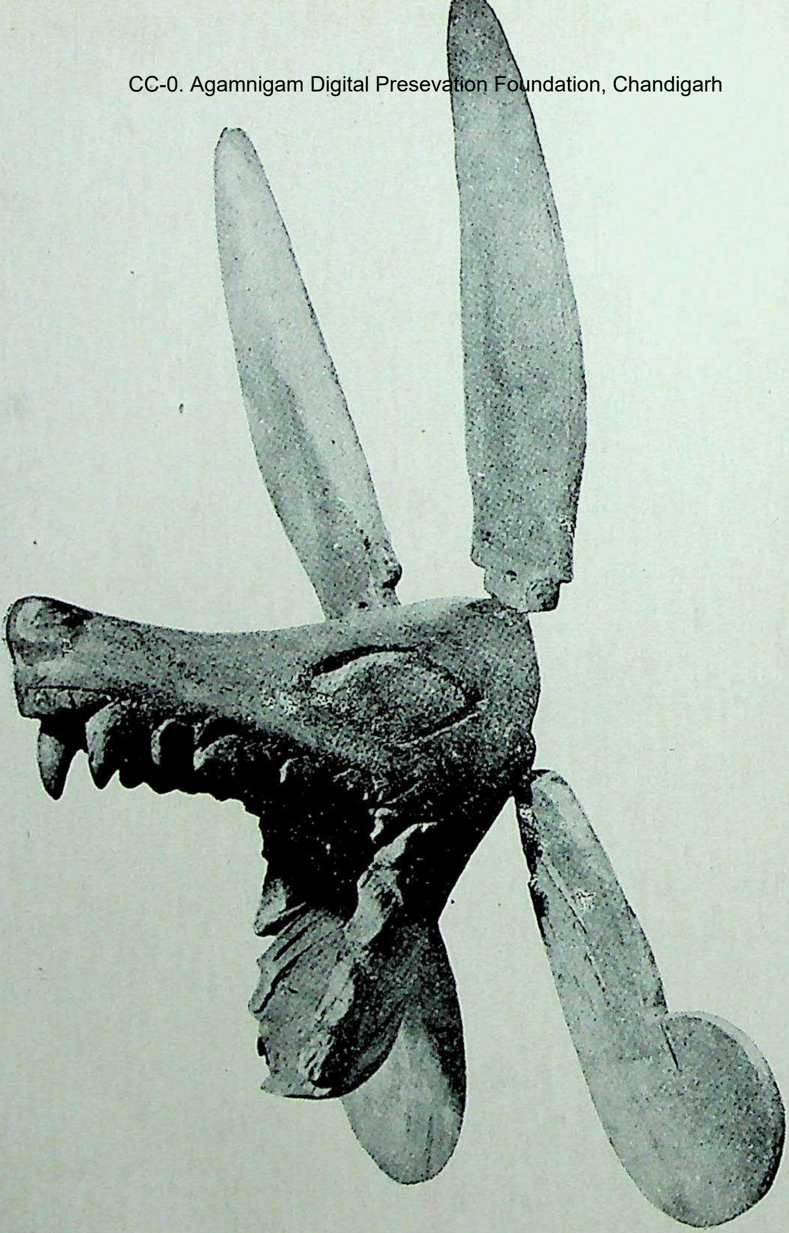

उत्तरी अमेरिका के मूलवासियों की कला।

एक भेड़िये का सिर जो फ्लोरिडा में 'की लार्गो' नामक स्थान पर पानी के तले पाया गया है। इसका काल बारहवीं शताब्दी का है।

प्लेट 30

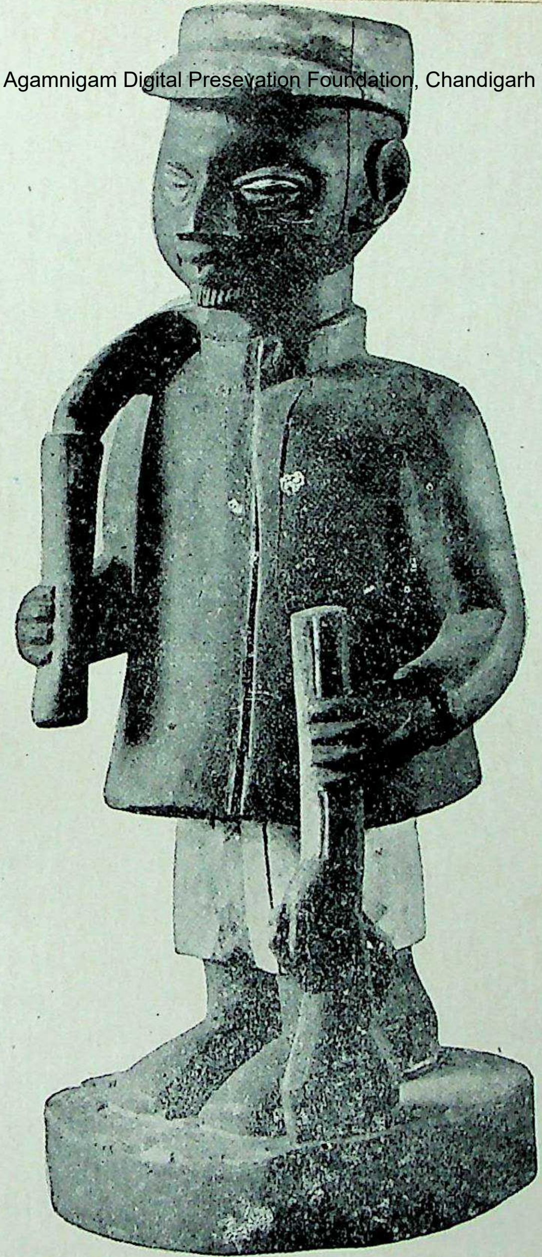

पश्चिमी अफ्रीकी लकड़ी की मूर्ति ।

कोड़ा तथा राइफल धारी फ्रांसीसी सिपाही की एक मूलवासी द्वारा प्रस्तुत धारणा ।

प्लेट 31

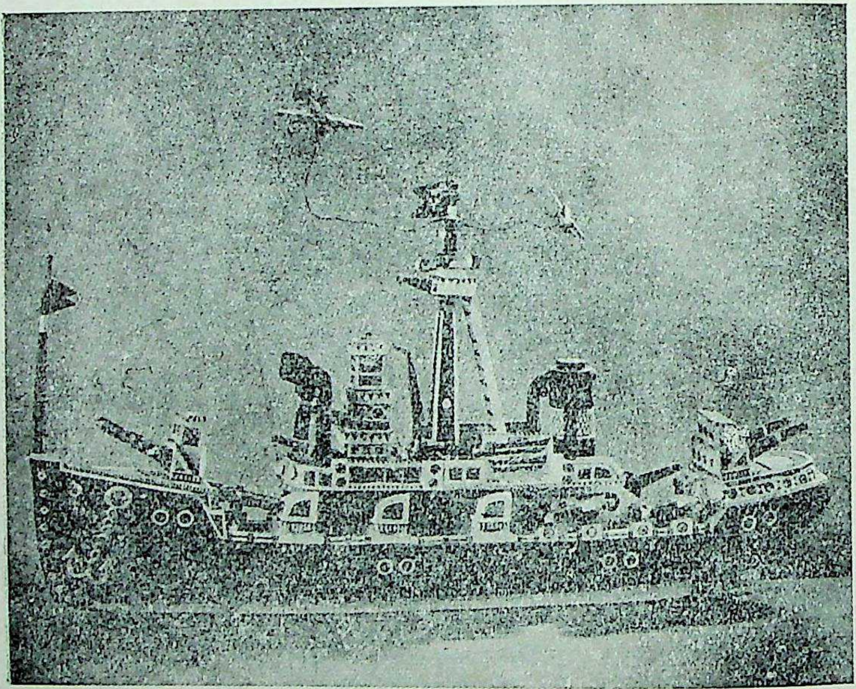

महाबली 'मो'। संयुक्त राज्य अमेरिका के जहाज़ 'मिसूरी' का एक मोरक्कोवासी कारीगर द्वारा बनाया गया नमूना। उस कारीगर का विश्वास था कि उसने जो जहाज़ देखा था, वह ठीक ऐसा था।

प्लेट 32

विभिन्न भागों में जाने वाले यात्रियों के अपने से पहले के विवरणों का एक विशाल संग्रह संकलित किया था। इन विवरणों में चीनी राजदरबार में सन् 499 फू साँग नामक देश से होइए-चिन नामक एक पुरोहित के आगमन की कहानी थी। उसने बताया था कि फू साँग पूर्व की ओर 30 हज़ार ली (12 हज़ार मील) दूर स्थित है और 10 हज़ार ली (4 हज़ार मील) तक पूर्व की ओर फैला हुआ है और वहाँ एक अन्य महा सागर दिखाई पड़ता है। इसका फू साँग नाम वहाँ के एक विशालकाय वृक्ष के कारण पड़ा है, जिसकी छाल का उपयोग वहाँ के मूलवासी सूती वस्त्र बनाने के लिए करते हैं। जिस सभ्यता का उसने वर्णन किया, वह ऐसे साक्षर नागरिक लोगों की सभ्यता थी, जो ताम्र, स्वर्ण और चाँदी का तो उपयोग करते थे, किन्तु लोहे का उपयोग नहीं करते थे।

उसने यह भी बताया कि उनके पास घोड़े थे; वे रेनडियर को दुहते थे और उनके पास ऐसे रेशम के कीड़े की एक नस्ल थी, जो सात फुट लम्बा होता था। चीनी सम्राट् के लिए वह जो उपहार लाया, कहा जाता है, उसमें किसी विचित्र वस्तु से बना हुआ एक दर्पण था और उस विशालकाय रेशमी कीड़े के कुछ रेशमी धागे थे, जो असाधारण रूप से मजबूत थे। चीनी साहित्य में फू साँग के विषय में अन्य कई कहानियाँ हैं, जिनमें से कुछ जान-बूझकर अतिरंजित कर दी गई हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि होएइ-चिन बौद्ध भिक्षु था, या अन्य किसी धर्म का परिव्राजक था, हालाँकि इस नाम से वह निश्चित रूप से बौद्ध प्रतीत होता है। यह बात भी बिलकुल ही निश्चित नहीं है कि फू साँग अमेरिका था। यदि फू साँग अमेरिका हो भी, तो भी होएइ-चिन की यात्रा इतने बाद के काल की है कि उसका उन वानस्पतिक समस्या से कोई सम्बन्ध नहीं रहा होगा जिनके कि चक्कर में हम यहाँ पड़े हुए हैं।

यदि कपास और लौकी दक्षिण-पूर्वी एशिया से 2500 ईस्वी पूर्व से पहले समुद्री मार्ग द्वारा अमेरिका लाइ गई थीं, तो जो लोग उन्हें लाये थे, वे अवश्य ही नव-पाषाणिक नाविक रहे होंगे, क्योंकि उस समय तक दक्षिण-पूर्वी एशिया में काँस्य युग का आरम्भ नहीं हुआ था। उनके आगमन के सम्बन्ध में दो मार्ग विचारणीय हैं। इनमें से एक तो जापान के समुद्र तट और ऐल्यूशियन द्वीप समूहों का चक्कर काटते हुए प्रशान्त महासागर की उत्तरी बाढ़ का मार्ग है, और दूसरा मार्ग भारत महासागर को पार करके, आशा अन्तरीप का चक्कर

काट कर, दक्षिणी अतलान्तक को पार करके अमेरिका पहुँचने का लम्बा मार्ग है। इसमें से दूसरा मार्ग उतना असम्भावित नहीं है, जितना कि यह पहली दृष्टि में प्रतीत होता है, क्योंकि इस रास्ते के अधिकाँश भाग में वहाँ चलने वाली पवनें और महासागर की जलधाराएँ अनुकूल रहती हैं। आजकल समुद्र यात्रा करने वाले जहाजों को भारत महासागर की मानसून पवनें भारत के छोर से मडागास्कर के दक्षिण की ओर एक बिन्दु तक पहुँचा देती हैं और आशा अन्तरीप को पार करने के बाद एक और पवन-समूह अफ्रीका के पश्चिमी समुद्र तट से बेनिन के समुद्री दाँते (बाइट ऑफ बेनिन) तक और उसके बाद पश्चिम की ओर स्थल भाग की तलहटी तक और अतलान्तक के पार ब्राज़ील तक बहता है।

ईस्वी पूर्व तीसरी सहस्राब्दी का पूर्वार्ध संसार के एक अन्य भाग में शान्त समुद्रों का काल और समुद्र यात्रा के लिए अनुकूलतम मौसम था। यह वही समय था, जबकि पूर्वी भूमध्य सागर के देशों के नाविकों ने जिब्राल्टर के जलडमरूमध्य में से बाहर निकलने और आयरिश चैनल के ऊपर की ओर बढ़ते हुए स्कॉटलैंड के ऊपरी सिरे तक जाने और उत्तरी समुद्र को पार करके स्कैंडिनेविया तक पहुँचने का साहस किया था, या कम से कम पुरातत्वीय प्रमाण इस बात का संकेत करते हैं। ये नाविक अपने साथ एक विशेष प्रकार के मिट्टी के बर्तन ले गए थे, जिनके ऊपर छोटी-छोटी नालियाँ जैसे कटावों की सजावट थी और वे अपने मृतकों को लम्बे मकबरों में गाड़ते थे, जो पत्थर की बड़ी-बड़ी शिलाओं से बने होते थे और ऊपर से मिट्टी से ढके होते थे, ये ही ब्रिटेन और स्कैंडिनेविया के पुरातत्व के महा-पाषाणिक (मैगालिथिक) मकबरे हैं, जिनका काल काँस्य युग से ठीक पहले का है। इनके जैसे साधनों वाले नव-पाषाणिक लोगों के लिए आशा अन्तरीप का चक्कर काट कर दक्षिणी अतलान्तक के संकरे कटि भाग को पार करना इस उत्तर की ओर की गई यात्रा की अपेक्षा अधिक कठिन नहीं रहा होगा।

यदि उन्होंने ऐसा किया हो, तो उनसे यह आशा करना स्वाभाविक है कि वे अफ्रीका के पश्चिमी तट पर भी उतरे होंगे। यदि वे उस तट पर उतरे होते तो उन्होंने अपने उष्ण- कटिबन्धीय खाद्यों के पौधों को अवश्य ही वहाँ भी लगाया होता। परन्तु प्रमाण इसके प्रतिकूल हैं। ईस्वी पूर्व 609 और ईस्वी

पूर्व 593 के बीच में किसी समय फीनीशियन नाविकों को फरून नेचों ने अफ्रीका के चारों ओर घड़ी की सुइयों के घूमने की दिशा में जहाज़ से यात्रा करने का काम सौंपा था। वे दो बार समुद्र तट पर शिविर डालकर इतने काफी समय तक रहे थे कि जिसमें वे अपनी फसलें बो सकें, उनके पकने की प्रतिक्षा करें और उन्हें काटकर फिर आगे बढ़ें। तीसरे वर्ष में जिब्राल्टर के जलडमरूमध्य में से होकर पूर्व की ओर बढ़े थे और वहाँ से अपने घर पहुँचे थे। यदि उन्हें रास्ते में यथेष्ट कृषि करने वाले लोग मिले होते, तो उन्हें अपने लिए खाद्य सामग्री स्वयं उगाने के लिए प्रतिक्षा न करनी पड़ती। इससे अगली दो शताब्दियों के अन्दर अन्य नाविक भी, जिनमें ईरान का 'सतस्पेस' और कार्थेज का 'हानो' भी सम्मिलित थे, अफ्रीका के पश्चिमी समुद्र तट पर गए थे। इन दोनों ने ही यह बताया था कि इस प्रदेश में केवल कहीं-कहीं बौने (पिग्मी) लोग बसे हुए हैं। उनके साक्ष्य से यह अतलान्तक-पार सम्पर्क का सिद्धान्त दुर्बल पड़ जाता है। मैं न तो इस प्रकार का कोई सिद्धान्त प्रस्तुत कर रहा हूँ और न मैं ऐसे सिद्धान्त को उसके प्रस्तुत किये जाने से पहले ही खंडित करने का यत्न कर रहा हूँ, अपितु मैं तो केवल यह बताने की कोशिश में हूँ, कि यदि इस विषय पर कोई सिद्धान्त बनाने आवश्यक ही हों, तो उसके लिए किसी एक ही मार्ग पर अपना ध्यान केन्द्रित करने की अपेक्षा भूमंडल के दोनों पार्श्वों की ओर देख लेना और अधिक अच्छा होगा।

इस प्रकार के सिद्धान्तों की आवश्यकता कुछ वनस्पति-आनुवंशिकी-विज्ञ लोगों के इस विश्वास के कारण उत्पन्न होती है कि इस प्रकार की किसी व्याख्या के बिना अमेरिका में 2500 ईस्वी पूर्व से पहले न तो लौकी और कृषि की जाने वाली कपास की ही खेती की जा सकती थी। मैंगल्सडौर्फ का, जो स्वयं एक असाधारण वनस्पति-आनुवंशिकी-विज्ञ है, डग्लस औलिवर के साथ मिलकर इस विषय पर यह मत है। "पुरानी और नई दुनिया में कपासों के वितरण की मनुष्यों के परदेश-गमन के आधार पर व्याख्या करने की उससे अधिक कोई आवश्यकता नहीं है, जितनी कि उन अन्य अनेक प्रजातियों की अभिसीमाओं का हिसाब रखने की है जो इसी प्रकार संसार के विभिन्न भागों में पाई जाती हैं। सच तो यह है कि यदि कपास की स्पीशिज़ों में इन अन्तरों की व्याख्या मनुष्य के आवागमन के आधार पर की जानी हो, तो ऐसी अन्य

अनेक प्रजातियाँ (जैनेरा) हैं, जिनकी खेती नहीं की जाती और जिनमें जाति-घटन की भी इसी प्रकार व्याख्या की जानी चाहिए : यह एक ऐसी क्रियाविधि है जिसके कारण यह प्रस्तावना शीघ्र ही एक बेहूदगी प्रतीत होने लगेगी।[1]

वनस्पति-विज्ञान की भाँति भौतिक मानव-विज्ञान में भी पिछली दो दशाब्दियों में जैविकी (प्राणि विज्ञान) और इतिहास के अन्य पहलुओं की उपेक्षा करके आनुवंशिकी विज्ञान पर अधिक बल दिया गया है। मुझे यह भरोसा नहीं है कि हमारा आनुवंशिकी विज्ञान का ज्ञान इतना काफी है कि उसके द्वारा मानवीय जातीयों में सब ऐतिहासिक सम्बन्धों की व्याख्या की जा सके और न मैं यह ही मान सकता हूँ कि यह सब वानस्पतिक सम्बन्धों की व्याख्या करने के लिए यथेष्ट है। एक और बात, जो बिना बहुत विचारे मान ली जाती है, यह है कि कार्बन-14 द्वारा निर्धारित तिथियाँ सदा सही होती हैं। पुरातत्ववेत्ता किसी एक ही स्थल पर एक के बाद एक स्तरों से प्राप्त हुई तिथियों की शृंखला को या एक-दूसरे के निकट स्थित कई स्थलों से प्राप्त तिथियों को एक-दूसरे की पड़ताल करने के लिए प्राप्त करना अधिक पसन्द करते हैं। किन्हीं अलग-थलग पड़े स्थानों से प्राप्त तिथियों को अन्तिम समझा जाता है। 1950-60 के वर्षों में रेडियो-कार्बन द्वारा काल-निर्धारण की तकनीकों में बहुत सुधार हुए हैं और इनके द्वारा नापा जा सकने वाला काल पहले की अपेक्षा दुगुना हो गया है। परन्तु जैसा कि रेडियो-कार्बन पर कार्य करने वाले भौतिकी वैज्ञानिक सबसे पहले कहना चाहेंगे, कार्बन-14 के सारे रहस्यों का समाधान अभी तक नहीं हो पाया है। हमें अभी इन सब विषयों के सम्बन्ध में, जो पुरातत्ववेत्ता के लिए उपकरण प्रदान करते हैं, चाहे वे भू विज्ञान, खगोलविज्ञान या और कुछ भी क्यों न हों, बहुत कुछ जानना शेष है।

इन उपकरणों में एक संघातक जीव, चूहे का इतिहास भी एक है। अब परोपजीवी (घरेलू चूहा उतना नहीं) चूहा जावा का देशज प्राणी है। जावा में पाई जाने वाली इसकी प्रजातियाँ मनुष्य को लूटकर जीने की आदी हो गई

---

[1] पी॰ सी॰ मैंगल्सडौर्फ और डी॰ एल॰ औलिवर, 'व्हैन्स केम मेज़ टू एशिया' बोटैनिकल म्यूजियम लीफ्लैट्स, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी, कैम्ब्रिज़, मैसाचुसैट्स, 13 अप्रैल, 1953, खंड 14, अंक 10।

हैं। इनमें से एक चीन के रास्ते यूरोप पहुँची थी और दूसरी दक्षिणी रास्ते से होकर वहाँ पहुँची। ये दोनों प्रजातियाँ कोलम्बस के बाद या उसके साथ अमेरिका पहुँची। मैं यह नहीं मान सकता कि यदि कोलम्बस के पहले के काल में 'पुरानी दुनिया' और 'नई दुनिया' के मध्य समुद्र मार्ग द्वारा बारम्बार या नियमित सम्पर्क रहा होता, तो चूहा पीछे छूट जाता। कपास के बीजों (बिनौलों) को ढोकर ले जाने के लिए यत्नपूर्वक योजना बनाने और उन्हें बोने की आवश्यकता होती है, किन्तु चूहा ऐसा धैर्यशील, छिपकर यात्रा करने वाला प्राणी है कि वह जहाज़ों में बहुत लम्बे समय तक छिपकर रहता रहा है और दूर-दूर तक यात्रा करता रहा है। यदि हम यह जान सकें कि वह ठीक कबसे इस प्रकार छिपकर यात्रा करता रहा है, तो इससे हमें इस प्रश्न का उत्तर पाने में सहायता मिल सकती है। हम अभी यह नहीं बता सकते कि उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका के लोगों ने 'पुरानी दुनिया' से आने वाले यात्रियों की सहायता के बिना अपनी स्वदेशी संस्कृतियों का कितनी सीमा तक विकास किया था, किन्तु हम यह कह सकते हैं कि 'नई दुनिया' की संस्कृतियों का 'पुरानी दुनिया' की संस्कृतियों पर, पोलीनेशिया से बाहर कोई दृश्य प्रभाव नहीं पड़ा।

प्रशान्त-पार की समस्या सैद्धान्तिक आधार के साथ-साथ ऐतिहासिक आधार पर भी रोचक है। इससे प्रसारवादियों और स्वतन्त्र आविष्कार के समर्थकों के मध्य चल रहा संघर्ष बहुत ही स्पष्ट हो जाता है। इनमें से पहले लोगों अर्थात् प्रसारवादियों का मत है कि भौगोलिक दृष्टि से एक-दूसरे से विच्छिन्न लोगों के मध्य प्रत्येक साँस्कृतिक समानता किसी एक ही स्रोत के साथ सम्पर्क और उससे आदान का परिणाम होनी चाहिए, जबकि दूसरे लोगों, अर्थात् स्वतन्त्र आविष्कारवादियों का मत है कि अनेक जातियों और देशों के लोग स्वतन्त्र रूप से सृजनात्मक कार्य करने में समर्थ हैं। यदि प्रसारवादियों की बात ठीक हो, तो मनुष्य सचमुच ही बहुत दयनीय प्राणी है। मैं तो आशावादी और मानवतावादी होने के कारण यह मानना पसन्द करता हूँ कि प्रतिभा मनुष्य की असीम आनुवंशिक विविधताओं के द्वारा किसी भी परिवेश में उत्पन्न हो सकती है और संसार के किसी भी देश में वहाँ के सब निवासी पालतू बनाये गए मानव प्राणी नहीं हैं।

नई दुनिया का पुरानी दुनिया पर प्रभाव

कोलम्बस की 1492 की प्रसिद्ध समुद्र यात्रा के बाद 'नई दुनिया' श्रौर 'पुरानी दुनिया' के बीच के सम्बन्ध अनुमान के क्षेत्र से निकल कर आधुनिक इतिहास के क्षेत्र में आ जाते हैं। नई दुनिया की उपजों को प्राप्त कर लेने से पुरानी दुनिया के, विशेष रूप से यूरोप के, लोगों को बहुत अधिक लाभ हुआ है। सोने, चाँदी और पन्ने (मरकत) के रूप में अथाह सम्पत्ति के अलावा नई दुनिया ने अनेक प्रकार की ऐसी वानस्पतिक स्पीशिज़ें प्रदान कीं, जिन्होंने पुरानी दुनिया के अनेक देशों में जीवन के आधार में आमूल परिवर्तन कर दिया। तम्बाकू और मक्का तुर्की साम्राज्य की और कपास मिश्र की प्रधान फसलें बन गईं। तम्बाकू और कपास दोनों नक़द पैसा देने वाली फसलें बन गईं, जिन्हें संसार भर के बाज़ार में निर्यात करने के लिए बोया जाता था और मक्का बाल्कन देशों में प्रधान खाद्य बन गई।

सफेद आलू दक्षिणी चाइल में चिलोइ द्वीप के मूलनिवासियों द्वारा उगाई जाने वाली एक स्पीशिज़ से लिया गया था। चिलोइ द्वीप में अक्षाँश, तापमान और आर्द्रता की दशाएँ ठीक वैसी हैं, जैसी कि उत्तर-पश्चिमी यूरोप में पाई जाती हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि सफेद आलू यूरोप का, विशेष रूप से आयरलैंड और जर्मनी का, प्रधान खाद्य बन गया। आयरलैंड के पश्चिम में, जहाँ आलू की खेती खूब पनपी, जनसंख्या बहुत तेज़ी से बढ़ी। जब 1840-50 के पिछले वर्षों में वहाँ आलू का अकाल पड़ गया, तब कई लाख आयरलैंडवासी वहाँ से उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका तथा अन्य स्थानों पर चले गए। इस प्रकार हम (अमेरिकावासी) अपनी अधिकाँश आयरिश जनसंख्या का श्रेय दक्षिणी चाइल के मूलवासियों को दे सकते हैं।

कोलम्बस से पहले के काल के यूरोप में फलियों के परिवार में केवल कुछ थोड़ी-सी बेकार की स्पीशिज़ें थीं, जो मनुष्यों के भोजन के लिए उतनी नहीं, जितनी कि पशुओं के चारे के लिए उपयुक्त थीं। नई दुनिया के अन्वेषक अपने साथ अनेक प्रकार की नई दालें, जैसे सेम, मोठ और लीमा फली लेकर लौटे, जिन्होंने न केवल यूरोप की पाक प्रणाली में नए प्रकार के स्वादों की वृद्धि की, अपितु जो प्रोटीनों का भी एक बढ़िया स्रोत सिद्ध हुईं। टमाटर से एक नई चटनी मिल गई और चाकलेट से एक नई मिठाई। ये अन्वेषक लोग अपने साथ

प्राणियों की जो एक स्पीशिज़ लेकर लौटे थे, वह पाताल मयूर (टर्की) था, जिसे तुर्की में बहुत ज़ोर-शोर से पाला जाने लगा। आजकल तले हुए आलुओं या सेम-लोबिये के बिना फ्राँसीसी पाक प्रणाली की, टमाटर के बिना इटली की पाक प्रणाली की, चाकलेट के बिना स्विटज़रलैंड की किसी मिठाई की दूकान की, सिगार के बिना किसी हालैंडवासी की या पाताल-मयूर के बिना आधुनिक अमेरिकी धन्यवाद-भोज की कल्पना कर पाना भी कठिन है। इन नए खाद्यों से पश्चिमी यूरोपवासियों को यह सुविधा हो गई कि वे मनुष्यों और ढोरों की बढ़ती हुई जनसंख्या का सस्ते में भरण-पोषण कर सकते थे और इस प्रकार उद्योगों की वृद्धि को सहारा दे सकते थे। केवल भोजन की ही दृष्टि से, अमेरिका की खोज के फलस्वरूप यूरोपवासियों को अपने स्वदेश में और अपने उपनिवेशों में शेष संसार की अपेक्षा कुछ अधिक सुविधा प्राप्त हो गई।

स्पेन का औपनिवेशिक साम्राज्य

मध्य तथा दक्षिणी अमेरिका की विजय के फलस्वरूप स्पेनवासियों को संसार का सर्वप्रथम समुद्र-पार का साम्राज्य प्राप्त हो गया, जो मानवीय इतिहास में इससे पहले तक बनी सब राजनीतिक संस्थाओं की अपेक्षा अधिक जटिल था। ईरानी साम्राज्य से लेकर बाइज़ैण्टाइन साम्राज्य तक अन्य सब साम्राज्य, जिनमें एशिया के साम्राज्य भी सम्मिलित हैं, इस प्रकार के देशों के समूहों से मिलकर बने थे, जो एक-दूसरे के साथ छूते थे या इंगलिश चैनल, बास्पोरस और जिब्राल्टर के जलडमरूमध्य जैसे संकरे जल भागों द्वारा एक-दूसरे से पृथक् थे। अतलान्तक को पार करने की आवश्यकता के कारण स्पेनवासियों के सामने एक नए प्रकार की राजनीतिक समस्याएँ सामने आईं, जिनके लिए एक नए प्रकार के संगठन का यन्त्रजात तैयार करने की आवश्यकता थी।

यह संगठन का यन्त्रजात शक्तिशाली होना अपेक्षित था, क्योंकि उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका के रूप में स्पेनवासियों को एक ऐसी वस्तु प्राप्त हो गई थी, जिसकी तुलना एक निजी सोने की खान से की जा सकती है। जिस प्रकार ऐथन्स के लोग लौरियम से प्राप्त होने वाली चाँदी से 'ओबोल' और 'द्राक्मा' ढाला करते थे, उसी प्रकार स्पेनवासी नई दुनिया में प्राप्त हुई स्वर्ण मूर्तियों और स्वर्ण के वक्षस्त्राणों को पिघालकर 'दौब्लून' सिक्के ढालने लगे। सोलहवीं

शताब्दी के मध्य में, जब स्पेनवासी गाड़ियाँ भर-भर कर सिक्के ढाल रहे थे, उनके पड़ौसी फ्राँसीसियों, हालैंडवासियों और अंग्रेज़ों को अपनी जीविका प्राप्त करने के लिए विवश होकर काम करना पड़ता था और इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि स्पेन के निकट के खुले समुद्रों में समुद्री डकैती शुरू हो गई और स्पेन की सरकार ने एक ऐसी सशक्त राजनीतिक और सैनिक व्यवस्था तैयार की, जिसके द्वारा वे इस अकस्मात् प्राप्त हुई समृद्धि को अपने ही हाथों में रख सके।

स्पेनवासियों के सौभाग्य से इससे पहले की आधी शताब्दी की घटनाओं ने एक सबल राजनीतिक संस्था के उदय के लिए मार्ग बना दिया था। आरागोन के फर्डीनैण्ड और कैस्टील की इसाबेला का सन् 1469 में विवाह होने से पहले 75 लाख स्पेनवासी कई पृथक्-पृथक् राजनीतिक संस्थाओं के प्रति निष्ठावान थे; इन राजनीतिक संस्थाओं के अध्यक्ष राजा, सामन्त और चर्च के लोग थे और उनमें से प्रत्येक की अपनी 'कोर्टेस' अर्थात् संसद् थी। अनेक नगर प्रभुतासम्पन्न राज्य थे। फर्डीनैण्ड और इसाबेला ने इन स्थानीय कोर्टेसों (संसदों) को भंग कर दिया और एक सशक्त केन्द्रीय सरकार की स्थापना की, जिसमें राजकीय न्यायालय से लेकर गाँव के 'ऐल्कैल्ड' के कार्यालय तक एक क्रमबद्ध प्रणाली बनाई गई। एक राजकीय अधिकारी को, जिसे कोरैजीडोर कहा जाता था, नगरों का अध्यक्ष बनाया गया और राजा ने चर्च में सब नियुक्तियाँ करने का अधिकार अपने हाथ में ले लिया। कोलम्बस द्वारा अमेरिका की खोज किये जाने से ठीक पहले इस सशक्त, केन्द्रीकृत ढंग की सरकार के बन जाने का एक बड़ा कारण था। मूर लोगों से लड़ने के लिए स्पेनवासियों को सुदृढ़ संगठन की आवश्यकता थी। जब मूर लोग स्पेन को छोड़कर चले भी गए, तब भी इसमें ढील देने की गुंजाइश नहीं थी, क्योंकि मुसलमान और यहूदी दोनों ही प्रकार के अनेक संदेहास्पद लोग पीछे रह गए थे, जो एक बनावटी ईसाइयत के आवरण में छिपकर रह रहे थे। वह प्रसिद्ध इंक्विज़िशन (धर्म न्यायालय), जिसने जापानियों को चौंका दिया था और आरम्भिक प्रोटैस्टैण्टों का दमन कर दिया था, वस्तुतः ईसाई धर्म के अन्दर घुसे हुए गैर ईसाई लोगों को सताने के लिए उतनी नहीं बनाई गई थी, जितनी कि स्पेन में पीछे रह गए मूरों और यहूदियों के वास्तविक या काल्पनिक पँचमाँगियों के उन्मूलन के लिए बनाई

गई थी।

सन् 1492 में स्पेनवासी सशक्त, धर्मनिष्ठ और संगठित थे।[1] फर्डीनैण्ड की नई केन्द्रीकृत सरकार की शक्ति के कारण उसे इतनी सम्पत्ति प्राप्त हो गई थी कि उससे वह नई सम्पत्तियों की खोज के लिए विनियोग के रूप में एक अनुसंधान दल के लिए धन प्रदान कर सकता था। इस प्रकार जब उसने कोलम्बस को अपनी हिस्सेदारी के लिए साधन प्रदान किये, तब उसने उस नाविक (कोलम्बस) को ऐडमिरल और महाकप्तान (कैप्टन जनरल) का राजकीय समादेश (कमीशन) दिया और उसे नए देशों को खोजने, उन्हें अपना उपनिवेश बनाने, और उनसे सारा धन छीन लेने और उसका दस प्रतिशत अपने पास रख लेने का आदेश दिया। कोलम्बस को यह भी अनुदेश दिया गया कि वह उन देशों के मूल निवासियों को ईसाई कैथोलिक धर्म में दीक्षित करे। इस राज्य क्षेत्र के, जो उस समय तक भी काल्पनिक था, प्रशासन के लिए उसे अपना कर्मचारी वर्ग स्वयं नियुक्त करने का अधिकार दिया गया।

जब एक बार नई दुनिया में स्पेनी उपनिवेशों को जीता जा चुका, तब इस प्रकार के व्यापक शास पत्रों (चार्टरों) को शीघ्र ही समाप्त कर दिया गया और पिज़ारो जैसे कुछ स्पेनी विजेताओं के अत्याचारों को समाप्त करके सुव्यवस्थित शासन स्थापित कर दिया गया। स्वयं स्पेन में पहले औपनिवेशिक मामलों को एक ही व्यक्ति, सेवील का आर्कडीकन जुआन डि फौन्सेका और उसके दो लिपिक संभालते थे। सन् 1503 तक कामकाज बहुत बढ़ जाने के कारण कर्मचारी वर्ग में वृद्धि करना आवश्यक हो गया। यह कर्मचारी वर्ग बढ़ते-बढ़ते एक बोर्ड के रूप में परिवर्तित हो गया, जिसका नाम 'कासा डि कौंट्रेटेशियन' था और जिसका काम वाणिज्य और आव्रजन का नियन्त्रण करना था। 1524 में इंडीज़ परिषद् (कौंसिल ऑफ़ दि इंडीज) नामक एक निकाय की स्थापना की गई, जिसके सदस्यों की नियुक्ति राजा करता था। ये लोग इस काम के लिए उपलब्ध सबसे अधिक सक्षम व्यक्ति थे; ये वे लोग थे,

---

[1] स्पेन की औपनिवेशिक सरकार के संगठन के बारे में मेरी जानकारी का मुख्य स्रोत डेविड आर॰ मूर की पुस्तक 'ए हिस्टी ऑफ़ लैटिन अमेरिका' है, जिसके प्रकाशक हैं प्रैन्टिस-हाल, न्यूयार्क, 1939।

जो अमेरिका में रह चुके थे और अमेरिका की समस्याओं को समझते थे। वे औपनिवेशिक सेवा के लिए प्रशासनिक कर्मचारियों की, जिनमें पुरोहित भी होते थे, जाँच पड़ताल और नियुक्ति करते थे; वे 'कासा डि कौंट्रेटेशियन' का नियन्त्रण करते थे; उपनिवेशों के लिए क़ानून बनाते थे और उपनिवेशों के न्यायालयों में हुए फैसलों की अपीलें सुनते थे।

नई दुनिया में चार वायसरायों के क्षेत्र अलग-अलग बना दिये गए थे; न्यू स्पेन, जिसमें मैक्सिको का मूल प्रदेश और पनामा तक सारा मध्य अमेरिका सम्मिलित था; न्यू ग्रैनेडा, जिसमें कोलम्बिया और वैनेज़ुला सम्मिलित थे; पेरू; और ला प्लाटा जो अर्जेण्टाइन था। प्रत्येक वायसराय अवश्य ही उच्च कुल का स्पेनवासी होता था; इसका एक अपवाद बाद में एक आयरलैंडवासी ऐम्ब्रोशियो ओ हिगिन्स हुआ, जो सन् 1788 से सन् 1796 तक चाइल का राज्यपाल रहा था और जो अपेक्षाकृत अधिक प्रसिद्ध स्वातन्त्र्य युद्ध के नेता बर्नार्डो ओ हिगिन्स का पिता था।

स्पेनी वायसराय बड़ी शान-शौकत के साथ शासन करता था। उसके आस-पास राजदरबार के सभासद उसी प्रकार रहते थे, जैसे कि राजा के पास रहते थे। यह समझा जाता था कि वह सेना, चर्च, राजकीय राजस्व का और मूलवासियों के, जिनका कि वह विशेष रक्षक था, कल्याण का नियामक है, उसके हाथ में कुछ कर्मचारियों को नियुक्त करने का और कुछ खास विषयों में इंडीज़ परिषद् (कौंसिल ऑफ़ दि इंडीज़) द्वारा कार्रवाई की प्रतीक्षा किये बिना मौके पर ही आज्ञप्ति (डिक्री) दे देने का अधिकार था। उसके नीचे 'गोबरनेडोरों', 'कोरेजीडोरों' और नगरों के 'ऐल्कैल्डों' का सोपानतंत्र था, जिनमें से प्रत्येक की अपनी परिषद् अर्थात् 'रेजीडोर' होती थी।

पुराने ईरानी साम्राज्य की भाँति यहाँ भी वायसराय पर निगाह रखी जाती थी और उन्हें केन्द्रीय सरकार के एजेण्टों की चुनौती के बिना शासन करते जाने की छूट नहीं थी। प्रत्येक वायसराय के प्रान्त में एक अपनी 'औडियैंशिया' (सर्वोच्च न्यायालय) होती थी, जो केवल इंडीज़ परिषद् (कौंसिल ऑफ़ इंडीज़) के प्रति उत्तरदायी होती थी। यह औडियैंशिया, जिसमें इसके अपने न्यायाधीश और अभियोजक वकील होते थे, समय-समय पर अपने निरीक्षकों को देश का दौरा करने के लिए भेजती रहती थी और हर तीन

वर्ष में एक बार, जब वायसराय को अपनी पुनः नियुक्ति की एक शर्त के रूप में परीक्षा के लिए खड़ा होना पड़ता था, इस औडियैंशिया को उस वायसराय के उस पद पर रह कर किये गए काम काज के विषय में बहुत कुछ कहने का अधिकार होता था ।

सन् 1680 में 'कासा डि कौण्ट्रैटेशियन' को स्थल भाग के अन्दर नदी के किनारे बने बन्दरगाह सैवील से हटाकर समुद्र के किनारे बने बन्दरगाह कैडिज़ में ले आया गया और उसके बाद से अतलान्तक-पार का सारा नौवहन इसी बन्दरगाह से किया जाने लगा । सब जहाज़ बड़े-बड़े बेड़ों में यात्रा पर चलते थे, जो गत दो विश्वयुद्धों में जाने वाले जहाज़ों के बेड़ों से मिलते-जुलते होते थे; ये जहाज समुद्री डाकुओं, और फ्राँसीसी, हालैंडवासी और अंग्रेज दस्यु पोतों से बचने के लिए एक-दूसरे के पास समूहबद्ध होकर चलते थे । नौसेना के जहाज़ उनकी रक्षा करते थे । एक बेड़ा वेराक्रुज़ पहुँचता था । वहाँ उतारे गए सामान में से कुछ तो मैक्सिको में उपयोग के लिए होता था और शेष सामान को खच्चरों पर लाद कर स्थल मार्ग से अकापुल्को ले जाया जाता था; वहाँ इसे फिर अन्य जहाज़ों पर फिलिपाइन्स भेजने के लिए लाद दिया जाता था । इन फिलिपाइन्स द्वीपों की खोज सन् 1521 में मैगेलन ने की थी । क्योंकि उस समय वह स्पेन की नौकरी में था, इसलिए मैगेलन ने इन द्वीपों पर स्पेन की ओर से अधिकार कर लिया । जब तक स्पेनवासी लोग प्रशान्त महासागर को वहाँ बहने वाली व्यापारिक पवनों के प्रतिकूल पश्चिम से पूर्व की ओर पार करने का कोई उपाय न खोज पाये, तब तक वे इन द्वीपों में अपना औपनिवेशिक राज्य स्थापित न कर सके, क्योंकि पुर्तगाली लोगों ने भारत होकर घर लौटने के उनके आसान रास्ते को रुद्ध किया हुआ था । सन् 1565 में एक स्पेनी नाविक आन्द्रे द उर्दानिता ने जापान के समुद्र तट के साथ-साथ और ऐल्यूशियन द्वीपों की श्रृंखला के ठीक दक्षिण की ओर वाले एक बड़े वृत्ताकृति मार्ग को खोज निकाला । उसे पहले पहल भूमि कैलिफोर्निया में मैंदौसिनो अन्तरीप पर मिली और उसके बाद वह समुद्र तट के साथ-साथ अकापुल्को पहुँचा । यद्यपि यह रास्ता लम्बा था, फिर भी यह आसान था, क्योंकि उसे सारे रास्ते अनुकूल पवन मिलती रही थी । इसके बाद स्पेनी लोग सीधा पश्चिम की ओर मनीला तक अपने जहाज़ ले आने में समर्थ हो गए और

उसके बाद उर्दानेता मार्ग पर (इस मार्ग का उन्होंने यही नाम रखा था) चलते हुए वे वापस लौट सकते थे। 1565 के बाद फिलिपाइन्स में तेज़ी से औपनिवेशिक राज्य स्थापित कर दिया गया।

एक दूसरा बेड़ा केडिज़ से पनामा में स्थित पोर्तोबैलो के लिए चलता था। यह पहले कोलम्बिया में कार्ताजैना में रुकता था, जिससे डाक के हरकारे स्थल मार्ग से लीमा पहुँचकर वायसराय को पहले सूचना दे सकें। पोर्तोबैलो में इस माल को उतारा जाता था और थल डमरूमध्य के पार ढोकर ले जाया जाता था, जहाँ इसे पेरू ले जाने के लिए एक और जहाज़ पर लादा जाता था। हालाँकि अर्जेन्टाइन भेजे जाने वाले सामान को जहाज़ से सीधा ब्यूनो एयर्स भेजना सरल होता, किन्तु रास्ते में पुर्तगाली लोग तथा कई अन्य संकट विद्यमान थे। इस प्रकार भेजी जाने वाली सब वस्तुओं को पनामा और पेरू होकर ले जाना पड़ता था।

वेराक्रुज़ या पोर्तोबैलो में हर बेड़े के पहुँचने के बाद चालीस दिन तक एक बड़ा मेला लगता था, जिसमें आयात की गई वस्तुओं का निर्यात की जाने वाली वस्तुओं से विनिमय किया जाता था। आयात की जाने वाली वस्तुएँ मुख्यतः तैयार माल होती थीं, जिनमें काटने के औज़ार, मशीनें, बढ़िया सूती वस्त्र, जूते, कपड़े, शानदार फर्नीचर और मदिरा तथा शराबें होती थीं। निर्यात की जाने वाली वस्तुएँ कच्चा और अंशतः तैयार माल होती थीं, जैसे लवण, खालें, सींग, ककाओ (कोको), कौफ़ी, तम्बाकू, मक्का, चीनी और रंग की लकड़ियाँ। तैयार माल का स्थानीय रूप से निर्माण करना निषिद्ध था, क्योंकि स्पेनवासी कच्ची सामग्रियों के बदले तैयार माल के विनिमय के उसी पुराने सिद्धान्त का पालन करते थे, जिसने इससे पहले के कालों में फीनीशियनों और ऐथन्सवासियों को भूमध्यसागर का स्वामी बना दिया था। उन्हीं के पद-चिह्नों पर चलते हुए स्पेनवासी शीघ्र ही अतलान्तक के स्वामी बन गए।

जिन देशों में स्पेनवासी सबसे अधिक सफलतापूर्वक औपनिवेशिक राज्य स्थापित कर पाने में सफल हुए, वे अपने सामान्य परिवेश की विशेषताओं की दृष्टि से स्वयं स्पेन से मिलते-जुलते थे; वहाँ भी तरुहीन पठार थे; वे अपेक्षाकृत बंजर थे और सिचाई करने पर अच्छी फसल देते थे। इन देशों में घोड़े,

खच्चर और गधे, जो ऐसे सवारी और सामान ढोने के पशु थे, जिनके कि स्पेनवासी अभ्यस्त थे, इन देशों में खूब पनपते थे और पुराने नव-पाषाणिक काल की गोष्ठ-चतुष्टयी (गौ, बकरी, भेड़ और सूअर) और मुर्गी भी यहाँ पर खूब पनपती थी। बाहर से आने वाले जहाजों में काफी पशु भी होते थे, जिनमें टैक्सास के लम्बे सींगों वाले पशु, 'मैदानों' में रहने वाले मूलवासियों के घोड़े और नेवाजो लोगों की भेड़ों के पूर्वज पशु भी थे।

मैक्सिको और पेरू, दोनों में स्पेनवासियों ने वहाँ के राजाओं और सम्राटों को तो हटा दिया था, किन्तु उन्होंने आम लोगों के सामान्य जीवन को विक्षुब्ध करने वाली और कोई बात नहीं की; ये लोग पहले ही काफ़ी बड़ी संख्या में थे और उन्होंने अपने आपको हाथ द्वारा की जाने वाली सघन कृषि के आधार पर अपने भू-दृश्य के अनुकूल ढाल लिया था। लोहे और इस्पात के कटाई के औज़ारों, पालतू ढोरों, हल और गाड़ी के आगमन से इन मूलवासियों को समृद्ध होने में और अपनी संख्या बढ़ाने में सहायता मिली, क्योंकि वे लोग एक ऐसी तकनीकी अवस्था तक पहले ही पहुँच चुके थे, जिसमें इन वस्तुओं को सरलता से अपनाया जा सकता था। मूलवासियों की बुनाई, पात्रों का निर्माण तथा अन्य घरेलू उद्योग लगभग अपरिवर्तित ही रहे और देशी ग्रामीणों के लिए जीवन के दैनिक और वार्षिक चक्र पहले ही चलते रहे।

देशी सरदारों के स्थान पर स्पेनवासी स्वयं जायदादों के मालिक बनकर बैठ गए। वे उन बड़ी-बड़ी सम्पदाओं का प्रबन्ध करते थे, जिन पर कि मूलवासी काम करते थे और इस प्रकार उन्होंने 'नई दुनिया' में अपनी स्थिति वैसी ही बना ली, जैसी कि स्पेन में कुलीन लोगों की थी और मूलवासियों की स्थिति किसानों की सी हो गई। ईसाई धर्म प्रचारकों ने नर-बलि को तथा ईसाइयों को स्पष्टतया अप्रिय लगने वाले स्थानीय कर्मकांडों को तो समाप्त कर दिया, किन्तु उन्होंने ईसाई धर्म में नए दीक्षित हुए लोगों को अपने स्थानीय देवताओं को सन्तों के रूप में बदल लेने की छूट दी और उनके पूजा स्थानों पर फूल और सुगन्धित धूप चढ़ाने की, और नटों द्वारा ऊँचे-ऊँचे बाँसों पर कलाबाजियों जैसे कलापूर्ण दृश्यों का अभिनय करने की अनुमति दे दी। मैक्सिको से लेकर पेरू तक लैटिन अमेरिका की सभ्यता मूलवासियों और स्पेनवासियों की तकनीकों, संस्थाओं और प्रतीकों का एक ऐसा सुन्दर मिश्रण

बन गई, जो उस काल और स्थान के लिए विशेष रूप से उपयुक्त था।

संस्थाओं के इतिहास की दृष्टि से इस औपनिवेशिक उद्यम के कारण राज्य का बहुत कुछ वैसा ही विस्तार हो गया, जैसा कि आरम्भिक साम्राज्य काल में रोम का था। जब लैटिन अमेरिका के गणतन्त्र अन्ततोगत्वा स्पेन के चक्कर से बाहर निकले, तब वे भी रोमन साम्राज्य के विखंडन के नमूने पर ही अलग हुए, क्योंकि इस साम्राज्य के भंग होने के कारण भी वही थे, जो रोमन साम्राज्य के भंग होने के थे। अधिकारियों द्वारा लगाये गए प्रतिबन्धों के होते हुए भी इन नये देशों के निवासियों ने बारूद युग के वैज्ञानिक स्तर पर अपना काम स्वयं चलाना सीख लिया। कर देते रहने की अपेक्षा आधारभूत औज़ारों का निर्माण कर लेना या उन्हें प्रतियोगितात्मक विश्व बाज़ार में से ख़रीद लेना अधिक आसान था। राजनीतिक शक्ति ने, जैसा कि यह समय आने पर आमतौर से करती है, न्यूनतम प्रयत्न के नियम के सामने घुटने टेक दिये थे, क्योंकि सम्मिलित देशों के किसी समूह में से प्रत्येक देश के लिए आत्म-निर्भर हो पाना अधिक सरल और आसान है और उनमें से कसी एक देश के लिए अन्य देशों को स्थानीय रूप से वस्तुओं का निर्माण करने से और बाहर के देशों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने से रोक पाना अधिक कठिन है, विशेष रूप से तब, जबकि उन देशों के बीच में एक महासागर का व्यवधान भी हो।

अंग्रेज़ों और हालैंडवासियों द्वारा निगमित व्यापारिक कम्पनियों की स्थापना

जिस समय पुर्तगाली और स्पेनवासी लोग एशिया, अफ्रीका और उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका के नए बाज़ारों और औपनिवेशिक प्रदेशों का आपस में बँटवारा कर रहे थे, उस समय उत्तर पश्चिमी यूरोप के लोग भी एक परिवर्तन के काल में से गुज़र रहे थे। धात्विकी विज्ञान में हुई उन्नतियों के कारण उनके लिए अधिकाधिक मशीनें बनाना और उनका उपयोग कर पाना सम्भव हो गया था और जलशक्ति की प्रचुरता के कारण वे अनेक प्रक्रियाओं का, विशेष रूप से सूती वस्त्र उद्योग की प्रक्रियाओं का यांत्रिकीकरण कर सके थे। उत्तरी फ्राँस, फ्लैंडर्स और हालैंड, डेनमार्क आदि नीचे बसे हुए देशों में विशेष रूप से लगभग ग्यारहवीं शताब्दी के बाद वस्त्र-निर्माताओं के बड़े-बड़े समुदाय

बन गए थे। वे बढ़िया ऊनी वस्त्रों और पश्मीने (वस्टँड) के निर्माण का काम विशेष रूप से करते थे, इसलिए उन्हें बहुत अधिक ऊन की आवश्यकता रहती थी। इस ऊन का एक प्रधान स्रोत इंग्लैंड था। इंग्लैंडवासियों को कुशल सूती वस्त्र-निर्माताओं को इंगलिश चैनल पार करके इंग्लैंड आने और कच्चे माल के प्राप्ति-स्थान के निकट ही अपने उद्योग शुरू करने के लिए मनाने में बहुत समय नहीं लगा। इंग्लैंड के पश्म के कपड़े की माँग अब भी सारी दुनिया में है। ये वस्त्र ईरान और जापान, दक्षिणी अफ्रीका और चाइल जैसे देशों में समृद्ध लोगों के शरीर पर देखे जा सकते हैं।

कुछ ही समय हुआ कि मैंने ए० वी० किडर को, जिसे कि अनेक व्यवसायी लोग अमेरिकी पुरातत्त्व का धुरन्धर विद्वान मानते हैं, एक नेवाजो ऊन का कम्बल दिखाया था, जो मुझे मेरी सास ने दिया था। इसमें चार रंगों के ऊनी धागे थे—काले, धूसर, नीले और लाल। डा० किडर ने बतलाया कि धूसर रंग का धागा नेवाजो लोगों द्वारा अपरिष्कृत बिना रंगी ऊन से काता गया था, जो उन भेड़ों पर से उतारी गई थी, जिन्हें उनके पूर्वजों ने स्पेनवासियों से प्राप्त किया था, और काले रंग का धागा देशी रंगों द्वारा तैयार किया गया था। नीला धागा नील से रंगा गया था, जो भारत में उगने वाला एक पौधा है। नेवाजो कम्बल के इस रंग का या तो सीधा पूर्वी इंडीज़ से आयात किया गया था, या इसे स्पेन के उपनिवेशों में, सम्भाव्यतः ग्वाटेमाला में, स्थानीय रूप से उगाया गया था। लाल रंग का धागा नेवाज़ो ऊन से कता ही नहीं था। यह अँग्रेज़ी ऊन का था, जो अंग्रेज़ी भेड़ों से उतारी गई थी, इंग्लैंड में रंगी गई थी और लंकाशायर में काती और बुनी गई थी। स्पेन की सरकार ने इसे अंग्रेज़ व्यापारियों से अपने सैनिकों के नीले लबादों के अस्तर बनाने के लिए खरीदा था। वे सैनिक इन लबादों को पहनकर अमेरिका पहुँचे। वहाँ पर अन्ततोगत्वा नेवाजो लोगों ने इन अस्तरों को प्राप्त कर लिया। उन्होंने सावधानी से उन अस्तरों को उधेड़ डाला और उन वस्तुतः अंग्रेज़ी धागों को अलग निकाल लिया। फिर उन्होंने उसे नये सिरे से काता और इस कम्बल में बुन दिया। बाद में अमेरिकन लोगों ने इस लाल वस्त्र को शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा—अर्थात् व्यापारियों द्वारा यहाँ पहुँचा दिया।

ज्यों-ज्यों उत्तर-पश्चिमी यूरोप में सूती वस्त्र उद्योग विश्व व्यापार की

माँगों के फलस्वरूप बढ़ने लगा, त्यों-त्यों अंग्रेज़ों, फ्लेमिश लोगों (फ्लैण्डर्स के निवासियों) और हालैंडवासियों को यह अनावश्यक जान पड़ा कि वे अपने तैयार माल को व्यापार के लिए पुर्तगालियों और स्पेनवासियों को बेचें। वे स्वयं ही व्यापार क्यों न करें ? इसका स्पष्ट कारण नौवहन और नौसैनिक शक्ति का अभाव था। किन्तु इस स्थिति को सुधारा जा सकता था। इस बीच में गुटेनबर्ग की बाइबिल की छपाई के बाद पाठ्य सामग्री का व्यापक प्रचार हो जाने के फलस्वरूप सामान्य मध्यम वर्ग नागरिकों में साक्षरता बढ़ गई थी। ये नागरिक लोग वस्त्र बनाने वाले उत्तरी नगरों में महत्त्वपूर्ण व्यक्ति बनते जा रहे थे। बाइबिल तक सीधी पहुँच हो जाने के कारण धर्म के सम्बन्ध में वे लोग अपने विचार अपने ढँग से बनाने लगे। चर्च की मध्यकालीन संरचना सामन्तों और योद्धाओं के और उनके खेतिहर सेवकों के समाज को केन्द्र मान कर बनी थी। इस नये नगरीय मध्यम वर्ग के अभ्युदय के कारण ऐसे नए प्रतीकों की आवश्यकता पड़ी, जो उस समय विद्यमान धार्मिक व्यवस्था में तुरन्त उपलब्ध नहीं थे।

चर्च तो इस आवश्यक समंजन को कर भी सकता था, किन्तु अन्य शक्तियों ने उसे ऐसा करने नहीं दिया। जब स्पेनवासियों ने हालैंड, डेनमार्क आदि नीचे बसे हुए देशों पर आक्रमण किया, तब वे अपने साथ वहाँ इक्विजिशन (धार्मिक न्यायालय) को भी ले आये, जिसके कारण इन देशों के निवासियों में उनके प्रति घृणा जाग उठी। इस प्रकार इन देशों के निवासी चर्च को अपने उन जानी दुश्मनों का साथी समझने लगे, जो न केवल उनके अनेक सम्बन्धियों को शहीद कर रहे थे, अपितु जो उनके वस्त्र को भी व्यापार के लिए इंडीज़ ले जा रहे थे। कुल मिलाकर, उत्तरी समुद्र के किनारे बसे देशों में भूमध्यसागर के पास वाले देशों से, और विशेष रूप से इबेरियाई प्रायद्वीप के देशों से बिलकुल भिन्न संस्कृति का विकास हुआ। पुनरुत्थान (रिफॉरमेशन) के कारण उन्हें इस दूसरी संस्कृति से स्वतन्त्र हो जाने का वह अवसर मिला, जिसकी उन्हें आवश्यकता थी। अब वे ‘नई दुनिया’ में स्पेनवासियों से लड़ाई छेड़ सकते थे और धार्मिक भर्त्सना की परवाह न करके भारत और चीन में पुर्तगालियों से व्यापार छीनने का प्रयत्न कर सकते थे। अब वे उन देशान्तर रेखाओं का, जिनके द्वारा पोपों ने संसार को स्पेन और पुर्तगाल में बाँट दिया था, पूरी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ईमानदारी के साथ और धार्मिक अनुमति के साथ उल्लंघन कर सकते थे।

संसार के महासागरों पर स्पेन और पुर्तगाल के साथ प्रतियोगिता करने के विचार को इंग्लैंड में उन पत्रों द्वारा प्रोत्साहन मिला, जो ब्रिस्टल के व्यापारियों के एक उपनिवेश के उन सदस्यों द्वारा लिखे गए थे, जो शराब का निर्यात करने के लिए सैवील में रहते थे, क्योंकि शराब इंग्लैंड में नहीं बनाई जा सकती थी। सन् 1530 के बाद से अंग्रेज़ कप्तान पश्चिमी अफ्रीका के साथ व्यापार कर रहे थे, जिसके सिलसिले में उनकी पुर्तगालियों के साथ बहुधा मुठभेड़ होती रहती थी, किन्तु इस अवधि में उन अंग्रेज़ कप्तानों में से कोई भी अफ्रीका या दक्षिणी अमेरिका का पूरा चक्कर लगा पाने में सफल नहीं हुआ था। कैरीबियन समुद्र में वे स्पेनी लोगों के उपनिवेशों और जहाज़रानी पर धावे करने जाते थे। इस बीच में उन्होंने दो सम्भावित मार्गों को अज़माया—साइबेरिया का चक्कर काट कर उत्तर-पूर्व की ओर जाने वाले मार्ग को, और उत्तरी अमेरिका का चक्कर काट कर उत्तर-पश्चिम की ओर जाने वाले मार्ग को। ये दोनों प्रयास अपने अभीष्ट प्रयोजनों को पूरा करने में असफल रहे, किन्तु ये दोनों ही एक अन्य अर्थ में सफल भी हो गए। उत्तर-पूर्व की ओर का मार्ग खोजने के प्रयत्न के फलस्वरूप श्वेत समुद्र के रास्ते रूस के साथ व्यापार शुरू हुआ, जो बहुत कुछ उसी रास्ते से होता था, जिससे होकर द्वितीय विश्वयुद्ध में हमारे जहाज़ी बेड़े आर्केंजल जाया करते थे, और ह्वेल मछलियों के शिकार का एक उद्योग पनप उठा, जिसमें अंग्रेज़ों और हालैंडवासियों ने स्पिट्सबर्गन के सामने वाले समुद्र में इन हज़ारों विशालकाय मछलियों को मारा। इस उद्यम को चलाने वाले लोगों ने सन् 1553 में एक संयुक्त पूँजी कम्पनी के रूप में अपने आपको संगठित कर लिया; इस कम्पनी का नाम 'मर्चेण्ट ऐडवैन्चरर्स' रखा गया। सन् 1557 में यह नाम बदल कर 'मस्कवी कम्पनी' कर दिया गया, जो इसके उद्देश्यों को अधिक सही रूप से व्यक्त करता था। सन् 1576 में 'कम्पनी ऑफ़ कैथे' नामक एक और कम्पनी बनाई गई, जिसका उद्देश्य उत्तर-पश्चिम वाले मार्ग की खोज के लिए धन लगाना था। जब यह खोज विफल रही, तब यह कम्पनी भी समाप्त हो गई। 'हडसन बे कम्पनी' का निर्माण सन् 1570 तक, 'मैसाचुसैट्स बे कम्पनी' द्वारा न्यू इंग्लैंड के बसाये जाने के काफी बाद तक नहीं हुआ था।

इन कम्पनियों के निर्माण से संसार में एक नये प्रकार की संस्थाओं का आविर्भाव हुआ, जिनमें सामान्य नागरिक एक ऐसे सामूहिक उद्यम में अपने धन का विनियोग करते थे, जिसमें उन्हें लाभ भी हो सकता था या घाटा भी हो सकता था और जिस के कार्य में वे व्यक्तिगत रूप से भाग ले भी सकते थे या नहीं भी ले सकते थे। इस संस्था द्वारा उन लोगों का अपनी सरकार में और उस निदेशक-वर्ग में विश्वास प्रकट होता था, जिसे कि वे चुनने के लिए स्वतन्त्र थे और साथ ही उन व्यक्तियों में भी विश्वास व्यक्त होता था, जिन्हें वे कम्पनी का काम करने के लिए देश से बाहर भेजते थे।

इंग्लैंड में इस प्रकार की कम्पनियाँ श्रेणी (गिल्ड) व्यवस्था के एक विकास के रूप में बनीं। ये श्रेणियाँ विशेष रूप से वस्त्र-निर्माताओं की श्रेणियाँ हैं। इस प्रकार की श्रेणियाँ कच्चा माल और मशीनें खरीदने के लिए अपने साधनों को परस्पर मिला लेने की और लाभ को आपस में बाँट लेने की अभ्यस्त हो चुकी थीं। इस प्रकार अंग्रेज लोगों द्वारा समुद्र-पार के व्यापार को चलाने की प्रणाली स्पेन और पुर्तगाल की उस प्रणाली से मूलतः भिन्न थी, जिसमें कि व्यापार पर सरकार का एकाधिकार होता था, जो नए खोजे गए देशों में राजनीतिक संस्था के विस्तार का केवल एक पहलू मात्र था। इस प्रकार की कम्पनियाँ हमारी आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था का आधार बनीं।

यदि इंग्लैंड इण्डीज़ की ओर जाने वाले उत्तरी मार्गों के लिए की गई अपनी खोज के फलों पर ही निर्भर रहने को विवश होता, तो यह व्यवस्था शायद कभी बन ही न पाती। 1588 में आर्मेडा (स्पेन के समुद्री बेड़े) की पराजय के बाद अंग्रेजी जहाज़ सफलता की उचित आशा रख कर दो दक्षिणी अन्तरीपों में से किसी भी एक का चक्कर काट कर आगे जा सकते थे। इस बीच में एक और कम्पनी, जिसका नाम 'लेवेंट कम्पनी' था, इस्तम्बूल और अलैप्पो के तुर्क लोगों से व्यापार करने के लिए बनाई गई थी। अलैप्पो से कुछ अंग्रेज स्थल भाग पर यात्रा करके ईरान की खाड़ी तक पहुँचे और वहाँ से उनकी एक टुकड़ी भारत जा पहुँची। 31 दिसम्बर, 1600 को लन्दन में 'ऑनरेबल ईस्ट इण्डिया कम्पनी' की स्थापना हुई और 1602 में हालैंडवासियों ने अपनी 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' स्थापित की। काफी संघर्ष के बाद अंग्रेजों ने अपना ध्यान भारत पर केन्द्रित किया और हालैंडवासियों ने इण्डो-

नेशिया पर, हालांकि इन दोनों ही प्रदेशों में इन दोनों में से एक ने भी दूसरे के सामने पूरी तरह हार नहीं मानी। इन दोनों ने ही कारखाने स्थापित किए और ये दोनों ही स्थानीय शासकों के साथ मिलकर राजनीतिक जोड़-तोड़ करते रहे। ये दोनों ही खूब सम्पन्न बन गए। अगली कुछ ही दशाब्दियों के अन्दर इन दोनों ने ही उत्तरी अमेरिका में अपने उपनिवेश स्थापित कर लिए, जैसे कि फ्राँसीसियों और स्वीडनवासियों ने कर लिए थे, और हालैंडवासी आशा अन्तरीप (केप ऑफ गुड होप) में बस गए, जो पूर्वी इण्डीज़ की ओर जाने वाले समुद्री मार्ग पर आवश्यक सामान प्राप्त करने का एक सुविधाजनक स्थान था।

बारूद युग ने मानवीय संगठन के केवल एक नए रूप, निगमित व्यापारिक कम्पनी, को ही जन्म नहीं दिया, अपितु और भी अनेक संगठन इसके साथ उत्पन्न हुए। समुद्र पार के व्यापार से होने वाले लाभ और उसके जोखिमों में हिस्सा बटाने के लिए व्यापारियों ने लन्दन के, 'लौयड्स' के नमूने पर बनी बीमा कम्पनियों में धन लगाना शुरू किया। 'लौयड्स कम्पनी' कॉफ़ी बेचने के लिए बनी एक दूकान से बढ़ते-बढ़ते विकसित हुई थी; यह कॉफ़ी एक नया पेय था, जो इथियोपिया से यमन और तुर्की होते हुए इंग्लैंड पहुँचा था। इंग्लैंड तथा उत्तरी यूरोप के अन्य देशों की परिवार प्रणाली भी इस नई व्यवस्था के लिए बहुत अनुकूल थी। रोमन क़ानून के अनुसार सम्पदाओं को सब पुरुष उत्तराधिकारियों में समान रूप से विभक्त कर देने के बजाय इंग्लैंड के क़ानून के अनुसार ज्येष्ठ उत्तराधिकारी को सारी की सारी या लगभग सारी सम्पदा प्राप्त होती थी। किन्तु उपरि वर्ग के परिवारों में आमतौर से सब पुत्र शिक्षा प्राप्त करते थे। मेधावी छोटे पुत्र, जिन्हें पब्लिक स्कूलों, और सम्भवतः विश्वविद्यालयों में शिक्षा मिली होती थी, 'नई दुनियाओं' में जाने और अपना भाग्य बनाने के लिए उत्सुक रहते थे।

वैज्ञानिक अध्ययन, जो विश्वविद्यालयों में श्रम-विभाजन के एक उपांग के रूप में शुरू हुआ था, शीघ्र ही अपेक्षाकृत अधिक विशेषित निकायों के हाथ में पहुँच गया; इन निकायों को विद्वत्-समितियाँ कहा जाता था। इस प्रकार की पहली समिति गैलीलियो के दिनों में इटली में स्थापित हुई थी; शीघ्र ही इसका अनुकरण इंग्लैंड में किया गया और वहाँ सन् 1662 में 'रॉयल

सोसायटी' की स्थापना हुई और उसके चार वर्ष बाद फ्रांस में 'अकादेमी दे सियेन्से' स्थापित की गई। लन्दन की 'रॉयल सोसाइटी' पेटेण्टों के लिए दिए जाने वाले उन आवेदनों के सम्बन्ध में निर्णय करने में सहायता देती थी, जो सत्रहवीं शताब्दी के पिछले भाग में अधिकाधिक संख्या में प्रस्तुत किए जा रहे थे। जब इन समितियों ने अपने बुलेटिन प्रकाशित करने शुरू किए, उससे पहले ही यूरोप के प्रमुख वैज्ञानिक एक-दूसरे से वहुधा पत्र-व्यवहार करते और अपने विचारों और खोजों का परस्पर विनिमय करते रहे थे। वे राष्ट्रीय सीमाओं द्वारा उससे अधिक नहीं बंधे हुए थे, जितना कि नाविक लोग थे, जिनके विषय में हम देख चुके हैं कि वे इटली से लेकर इंग्लैंड तक के सभी देशों से आते थे और एक-दूसरे की नौसेनाओं में और चार्टर प्राप्त कम्पनियों में सेवा करते थे। अन्वेषण और खोज उस समय से भी पहले से, जब फरून नैचो ने अफ्रीका की जहाज़ द्वारा परिक्रमा करने के लिए फीनीशियन लोगों को अपने यहाँ नियुक्त किया था, अन्तर्राष्ट्रीय कार्य रहे हैं।

इन विद्वत् समितियों के प्रयत्नों के प्रत्यक्ष फल के रूप में दूरबीन, सूक्ष्म-वीक्षण, तापमापी, वायु दबाव मापी, हवा पम्प, आधुनिक घड़ियों के यन्त्रजात और लघुगणक (लौगैरिद्म) और कलन (कैल्कुलस) जैसे गणितीय प्रतीकों का आविष्कार और उपयोग शुरू हुआ। इन वस्तुओं का उपयोग वह हर कोई व्यक्ति कर सकता था, जो उनका उपयोग कर पाने में समर्थ हो। इस समय, जब संसार पहली बार एक दृष्टि से एक बन गया था, धार्मिक लोगों ने इस अवसर का उपयोग ईसाई धर्म का प्रचार करने और सारी दुनिया को ईसाई बनाने के लिए किया। अफ्रीका में दास-व्यापार के बावजूद, जो कि इस समय शुरू हुआ था, किसी एक जाति की वरिष्ठता खुल्लमखुल्ला मानी जाती प्रतीत नहीं होती। पोकाहौंटा लोगों को इंग्लैंड में भली दृष्टि से देखा जाता था और अनेक यात्री एशिया और अफ्रीका से विभिन्न रंगों की पत्नियाँ लेकर घर लौटे थे। इस काल में चीनी लोग और ऊँची जातियों के हिन्दू लोग अपनी जाति का मिथ्या दंभ करते थे।

वर्जिनिया में तम्बाकू की खेती करना एक सम्भ्रान्त जनोचित और लाभदायक काम अवश्य था, किन्तु यह भारत में यात्रा करने, वहाँ के देशी राजाओं से, जो रेशमी वस्त्रों और हीरों से सज-धज कर रहते थे, भेंट करने

और हाथियों पर बैठ कर बाघों के शिकार के लिए जाने की अपेक्षा कहीं कम आनन्ददायक था। इन दोनों जीवन-पद्धतियों में से किसी की भी तुलना में न्यू इंग्लैंड में खेती करने या मछली पकड़ने की ठिठुराने वाली मेहनत बहुत ही नीरस और बोझल थी। उत्तरी उपनिवेशों को बसाने में कोई तुरन्त लाभ होता दिखाई नहीं पड़ता था। जर्सी की दलदलों में अपनी पुराने ढंग की बन्दूक से सैकड़ों जंगली बत्तखों का शिकार करने वाला कोई हालैंडवासी न्यूयार्क की उन आकाशचुम्बी इमारतों की कल्पना भी नहीं कर सकता था, जो अब जर्सी नगर की पहाड़ी के आर-पार दिखाई पड़ती हैं और न वह उस औद्योगिक दुर्गन्ध की ही कल्पना कर सकता था, जो अब यात्री को इस पक्षी-रहित हो गए शिकारस्थल को जल्दी से पार कर जाने के लिए प्रेरित करती है। अंग्रेज़, स्कॉटलैंडवासी, आयरलैंडवासी, हालैंडवासी, और स्वीडनवासी बहुत दृढ लोग थे और ये नए प्रदेश जलवायु और वनस्पतियों की दृष्टि से उनके अपने-अपने स्वदेश से मिलते-जुलते थे। उन्होंने जो फसल यहाँ बोयी, वह नील या तम्बाकू की भाँति कोई आसान फसल न थी, अपितु वे एक ऐसे राष्ट्र की जड़ें थीं, जो पृथ्वी पर अब तक हुए अन्य किसी भी राष्ट्र से अधिक महान् है।

इस बीच में इन्हीं अक्षांशों में कुछ ऊपर की ओर एक और अस्पष्ट-सा अभियान धीरे-धीरे प्रगति कर रहा था। रूसी लोग तातारों को हराने के बाद उसी प्रकार बिना रुके पूर्व की ओर फैलते गए, जैसे एक सहस्राब्दी से भी कुछ अधिक पहले गोथ लोग दक्षिण की ओर बढ़े थे। किज़िल कुम और हंगर वेस्ट (भूखे बंजर) के दक्षिण में तुर्किस्तान के शक्तिशाली मुस्लिम राष्ट्रों को एक ओर छोड़ते हुए वे साइबेरिया के वनों के दक्षिणी शोर के साथ-साथ सूर्योदय की दिशा में बढ़ते गए; रास्ते में दुर्ग और व्यापारिक चौकियाँ स्थापित करते हुए और अपने देश के तरुहीन मैदानों से मिलती-जुलती भूमि की संकरी पट्टी पर खेती करते हुए वे तब तक आगे बढ़ते गए, जब तक कि वे सन् 1639 में प्रशान्त महासागर तक न पहुँच गए। इस प्रसार के पश्चात् किन्हीं नई संस्थाओं का जन्म नहीं हुआ; यह प्रसार मुख्यतः सैनिक ढंग का था। इन लोगों को एक स्वतन्त्र सरकार प्रदान करने के लिए न्यू इंग्लैंड की नगर-सभा जैसी कोई सभा यहाँ नहीं हुई। साइबेरिया बहुत समय तक अवांछित लोगों

के निर्वासन का स्थान और साम्राज्य का एक ऐसा विस्तार बना रहा, जिसे रूसी लोगों ने बाइज़ैण्टाइन लोगों की पद्धति पर स्थापित किया था। इसके तीन शताब्दी से भी कुछ अधिक बाद अब अमेरिकी पूंछ यूरोपीय कुत्ते को हिला रही है, जबकि मस्कवी में कुत्ता अब भी अपनी साइबेरियाई पूँछ को हिलाता है। सन् 1638 में बहुत थोड़े समझदार लोग इस बात की कल्पना कर सके होंगे कि आज संसार की सबसे बड़ी शक्तियाँ संयुक्त राज्य अमेरिका और रूस होंगे।

11

कोक से परमाणुओं तक

विनाश की तलवार

हम मनुष्य के उस प्रथम अभियान से, जिसमें कि वह शिकारी की जीवन-पद्धति अपनाने के लिए पेड़ों से नीचे उतर आया था, बहुत दूर चलकर उस अन्तिम अभियान तक आ पहुँचे हैं, जो सम्भवतः उसका अन्तिम अभियान सिद्ध हो सकता है; जिसमें वह ब्रह्मांड की तिहाई पर स्वयं अपने विनाश की तलवार गढ़ कर तैयार कर रहा है। उन 50 हज़ार या इससे भी अधिक पीढ़ियों के अन्त तक, जिनमें वह भूमि पर अन्य पशुओं की तरह जीवन-यापन करता था, उसने पृथ्वी की सतह को वैसा ही रखा था, जैसा कि उसने उसे पहले पाया था। उस समय प्रकृति पहले की ही भाँति सन्तुलन में रही थी औद्योगिक युग (यह एक सामूहिक पारिभाषिक शब्द है, जिसमें कोक, मिट्टी का तेल, पनबिजली और परमाणु युग आ जाते हैं) के आरम्भ के बाद से उत्पन्न हुई दस पीढ़ियों में उसने पृथ्वी की सतह को नव-पाषाणिक युग में बिगाड़ना शुरू किया था, अब बिगाड़ते-बिगाड़ते एक संकट के बिन्दु तक पहुँचा दिया है, और उसने वायु और समुद्रों को दूषित कर दिया है।

इस बड़े पैमाने पर विनाश करते हुए मानव प्राणियों ने इतनी तकनीकी उन्नति कर ली है कि ऊर्जा और स्थान के दो आयामों का कोई विशेष महत्त्व नहीं रहा है। अब हम सूर्य की ऊष्मा के बराबर ऊष्मा उत्पन्न कर सकते हैं और पृथ्वी के घूमने की गति की चाल से इस प्रकार यात्रा कर सकते हैं कि लन्दन

से उड़ने वाला विमान-चालक न्यूयॉर्क में घड़ी के अनुसार ठीक उतने ही बजे पहुँच जायेगा जितने बजे वह लन्दन से रवाना हुआ था। हमारे चिकित्सा-शास्त्री भी ऐसी औषधों की खोज द्वारा, जिनके द्वारा मनुष्य अनन्तकाल तक जी सकेंगे, काल के आयाम को चूर-चूर करने के लिए घोर प्रयत्न कर रहे हैं।

इन्हीं उन्नतियों ने संसार को ऐसे दो प्रतिद्वन्द्वी कारखानों के रूप में बदल दिया है, जिनमें प्रभुतासम्पन्न राष्ट्र उतने ही परस्पराश्रित हैं, जितने कि किसी एक कारखाने के विभाग परस्पराश्रित होते हैं। वस्तुत: जो शक्ति इन कारखानों को एक-दूसरे के निकट खींच रही है, वह उन्हें एक-दूसरे से दूर रखने वाली शक्ति की अपेक्षा अधिक बलवती है। अब राष्ट्रीयता की पुरानी धारणाएँ विश्व-समाज में कार्यक्षमता में उतनी ही बाधक हैं, जितनी कि यदि अमेरिका के अलग-अलग राज्यों के बीच चुंगी की चौकियाँ बना दी जाएँ, तो वे होंगी। क्योंकि अब विमान में बैठकर सारी पृथ्वी की परिक्रमा करने में उससे भी कम समय लगता है, जितना कि राष्ट्रपति वाशिंगटन को वर्जिनिया में स्थित अपने घर फिलाडल्फिया में स्थित इण्डिपेंडैन्स हाल तक पहुँचने में लगा करता था और क्योंकि अब सारी दुनिया के लोग राष्ट्रपति कैनेडी के चेहरे और आवाज़ से उसकी अपेक्षा कहीं अधिक परिचित हैं, जितना उस समय के लोग राष्ट्रपति वाशिंगटन की मुखाकृति और आवाज़ से परिचित थे, इसलिए जो वस्तु सारे संसार के लोगों को ऊर्जा की बचत के नियम के अनुसार अपने प्रयत्नों को एक जगह समूहित करने से रोक रही है, वह स्थान की दूरी या समय, या उद्योग विद्या नहीं है।

यह है बीसवीं शताब्दी के परमाणु-युग के मनुष्यों द्वारा उस नव-पाषाणिक दृष्टिकोण को बनाए रखना, जो यह कहता है: तुम अपने गाँव में रहो और मैं अपने गाँव में रहूँगा। अगर तुम्हारी भेड़ें हमारी घास खाएँगी, तो हम तुम्हें मार डालेंगे,: या हम तुम्हें इसलिए भी मार सकते हैं कि जिससे हम सारी घास अपनी भेड़ों के लिए ले सकें। जो कोई हमें अपने तौर-तरीकों को बदलने के लिए प्रेरित करता है, वह जादूगर है और हम उसे मार डालेंगे। हमारे गाँव से बाहर निकल जाओ।

यह बात, कि कुछ लोग अब भी इस प्रकार तर्क करते हैं, सांस्कृतिक

व्यवधान का परिणाम है। जहाँ कुछ लोगों ने साँस्कृतिक दृष्टि से तेज़ी से प्रगति की है, वहाँ कुछ लोग इस दृष्टि से पिछड़े रह गए हैं और वे मध्य-पाषाणिक काल के बाद से हर पुरानी साँस्कृतिक अवस्था को परिरक्षित करके रखे हुए हैं। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों जीवित लोगों के मध्य साँस्कृतिक अन्तर अधिक और अधिक होते गए।

इस व्यवधान का उदाहरण इस समय प्रचलित भौतिकवादी मत है, जो उन्नीसवीं शताब्दी के विज्ञान की एक गौण उपज है, और जिसके कारण कुछ लोग यह कहने लगे हैं : विश्व के सम्बन्ध में जो भी कुछ जानने को है, वह सब हम जानते हैं। परमात्मा है ही नहीं; कोई सर्वोपरि प्रधान शक्ति नहीं है। मनुष्य एक याँत्रिक प्राणी है और हम उसका नियंत्रण कर सकते हैं।

भौतिकवाद का एक स्पष्ट हेत्वाभास यह है कि यदि मनुष्य सचमुच ही विशुद्ध रूप से एक याँत्रिक प्राणी हो, तो मानवीय तंत्रिका (नर्वस) प्रणाली के सम्पूर्ण कार्यजात को समझने के लिए एक अन्य ऐसी स्पीशिज की आवश्यकता होगी, जो मनुष्य की अपेक्षा उतनी ही अधिक प्रतिभाशाली हो, जितना कि मनुष्य कपि (एप) की अपेक्षा अधिक प्रतिभाशाली है। इस प्रकार के ज्ञान द्वारा हो सकता है कि यह पता चले कि मनुष्य के जीवन और प्रगति का नियंत्रण किसी भौतिक शक्ति के हाथ में नहीं, अपितु बाह्य अन्तरिक्ष से आने वाली किसी शक्ति के हाथ में है। सम्भवतः वह ब्रह्माँडीय विकिरण, जो जीवाणुओं के प्लाज्मा में परिवर्तन उत्पन्न करता है, उस शक्ति का एक प्रकट रूप है। किसे मालूम ?

सारे इतिहास में सदा कुल ऊर्जस्वी और असंवेदनशील लोग यह समझ कर उद्धत बनते रहे हैं कि जो कुछ भी जानने योग्य है, वह सब उन्हें ज्ञात है। हमारे पूर्वजों के अस्तित्व की आरम्भिक अवस्थाओं में इस विश्वास के कारण अनेक शिकारी भालुओं के पंजों के आघात से मृत्यु के शिकार होंगे। पहले के युगों में इस प्रकार का दम्भ एक ऐसी बेहूदगी थी, जो स्वतः सीमित हो सकती थी। आजकल दम्भ कहीं अधिक खतरनाक है, क्योंकि हमने जो शस्त्र तैयार कर लिए हैं, वे इतने शक्तिशाली हैं कि उन्हें अति-आत्मविश्वासी लोगों के हाथों में नहीं छोड़ा जा सकता। इस सम्बन्ध में क्या किया जाय, यही समस्या इस समय संसार के सर्वोत्तम राजनीतिक मस्तिष्कों के विचार का विषय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बनी हुई है ।

ज्यों-ज्यों हम इतिहास की चौथी प्रावस्था में आगे बढ़ रहे हैं, त्यों-त्यों उन विचार-विमर्शों में हम में से बहुत कम लोग भाग ले सकते हैं, जिनके द्वारा भविष्य की रूप रचना हो रही है। परन्तु हम में से सभी लोग पहले की भाँति अब भी यह अनुभव करके, कि विनम्र लोगों को वीर बनना आवश्यक है, मनुष्य के अभियान में सबसे अधिक रोमाँचकारी पार्ट अदा कर सकते हैं। हम में से प्रत्येक को यह स्मरण कराये जाने की आवश्यकता है कि प्रत्येक अन्य मनुष्य अनोखा है और उसका भी अन्य लोगों के समान ही महत्त्व है, और यह कि जितना अभी तक ज्ञात हो चुका है, उससे बहुत अधिक अभी ज्ञात होना शेष है; और यह कि हमें प्रकृति की उन शक्तियों का उचित सम्मान करना चाहिए, जिन्हें कि हमारे वैज्ञानिकों ने खोज निकाला है। अपने मन में इन विचारों को रखकर हम सब वर्तमान संकट में से सकुशल गुज़र पाने में अपने नेताओं की सहायता कर सकते हैं। हम इस स्थिति तक किस प्रकार पहुँचे, यही इस अध्याय का वर्ण्य विषय है।

कोक की कहानी[1]

जो घटनाएँ मनुष्य को बारूद के युग के अन्त से हमारी वर्तमान स्थिति तक ले आई हैं, उनके अनुक्रम की कुँजी कोक की कहानी में मिल सकती है, क्योंकि इस नई सामग्री के उपयोग के कारण उद्योगपतियों के लिए लगभग असीमित मात्रा में इस्पात का उत्पादन कर पाना सम्भव हो गया; इस्पात वह धातु है, जो मनुष्य के औज़ार बनाने की प्रधान सामग्री के रूप में चकमक, परिष्कृत पत्थर, काँसे और लोहे के बाद आई है। इस्पात चकमक जितना कठोर, काँसे जैसा सुघट्य और अपने प्रमुख घटक लोहे जितना प्रचुर है। इस्पात के द्वारा कारीगरों को पहली बार काम करने को एक ऐसी वस्तु मिली, जिसके

---

[1] यद्यपि इस अध्याय की उद्योग विद्या सम्बन्धी विस्तृत जानकारी अनेक स्रोतों से प्राप्त हुई है, फिर भी मेरा प्रधान स्रोत, विशेष रूप से कोक की कहानी में आर० जे० फौर्बेस की पुस्तक 'मेन दी मेकर' रही है। इसके प्रकाशक हैं, हेनरी शुमैन, न्यूयार्क, 1950।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

द्वारा वे बहुत बड़े पैमाने पर मशीनें तैयार कर सकते थे। अब वे किसी भी काम के लिए भारी ढाँचे (फ्रेम), दंड (शाफ्ट), गरारियाँ (गीयर), पहिये, पिस्टन और वाष्पित्र (बॉयलर) तैयार कर सकते थे। बारूद के युग में पश्चिमी यूरोप और नए खोजे गए तथा हाल ही में उपनिवेश बनाए गए देशों के मध्य व्यापार के कारण लोहे के सामान और सूती वस्त्रों की माँग बहुत बढ़ गई थी। अंग्रेज़ों और हालैंडवासियों ने अनेक देशों में स्पेनवासियों और पुर्तगालियों से व्यापार हथिया लिया था, क्योंकि भारी उद्योग स्पेन से हटकर इंग्लैंड और राइनलैंड में आ गया था। ये देश उस समय ज्ञात संसार में ईंधन और कच्ची धातु की दृष्टि से सबसे अधिक समृद्ध थे। अठाहरवीं शताब्दी के आरम्भ के दिनों में इंग्लैंड के द्वीपों में आर्मेडा का मुकाबला करने के लिए जहाज़ बनाने की लकड़ी के लिए बहुत-से पेड़ काटे गए थे। परन्तु उससे भी अधिक पेड़ तेज़ी से बढ़ते हुए इस्पात उद्योग के लिए लकड़ी के कोयले के वास्ते काटे गए थे। उस समय इतना अधिक इस्पात बनाया गया था, और उसका अधिकाँश भाग समुद्र-पार व्यापार के लिए था, कि लकड़ी के कोयले की कमी चिन्ताजनक हो गई थी। लोहा पिघालने के वे कारखाने, जो दक्षिणी इंग्लैंड में स्थित थे, जहाँ लन्दन के निकटतम जंगल और प्रधान समुद्री बन्दरगाह थे, उत्तर और पूर्व के उन पर्वतीय प्रदेशों की ओर ले जाये गए थे, जहाँ लकड़ी उस समय तक भी मिल सकती थी। इन कारखानों तक कच्ची धातु को कच्ची सड़कों पर बड़ी मेहनत से गाड़ियों में ढोकर ले जाना पड़ता था। भारी उद्योग की बारीकियों से परिचित हर कोई व्यक्ति जानता है कि कच्ची धातु हमेशा ईंधन का अनुसरण करती है, क्योंकि ईंधन कच्ची धातु की अपेक्षा कहीं अधिक भारी-भरकम होता है। यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि यूरोप के लोहा उत्पादन करने वाले देशों में, जैसे कि जर्मनी में, उस समय तक भी लकड़ी थी। लकड़ी की यह चिन्ताजनक कमी केवल इंग्लैंड में ही हुई थी। लकड़ी के कोयले के लिए कोई अन्य स्थानापन्न वस्तु ढूँढने की आवश्यकता केवल इंग्लैंड में ही अत्यन्त उग्र थी।

तेरहवीं शताब्दी जितने पुराने समय में अंग्रेज़ों ने नौर्थम्बरलैंड और डरहम में मिले कोयले के निक्षेपों का तापन के लिए ईंधन के रूप में लकड़ी के कोयले के स्थान पर प्रयोग करना शुरू कर दिया था। यह पत्थर का कोयला लोहा पिघालने के लिए बेकार था; तपाने पर इसमें से गन्धक निकलती थी और वह

लोहे को खराब कर देती थी। परन्तु मकानों को गर्म करने के लिए इसकी काफी माँग थी। सन् 1680 तक स्थिति यह हो गई थी कि प्रति वर्ष 2 लाख 80 हज़ार टन पत्थर का कोयला लन्दन भेजा जाता था। खानों में से इससे भी अधिक कोयला निकाला जा सकता था, किन्तु कठिनाई यह थी कि खानों में नीचे एकाएक पानी भर जाता था, जिससे जो खान-मज़दूर नीचे काम कर रहे होते थे, वे डूब जाते थे और अन्य मज़दूर नीचे नहीं जा सकते थे। इस समस्या की ओर बहुत से मेधावी लोगों का ध्यान गया और सन् 1705 में टामस न्यूकमन ने भाप से चलने वाला एक ऐसा पम्प बनाया, जिसमें पत्थर का कोयला जलता था और जो खानों में से पानी को इतने सुचारु रूप से बाहर खींच लेता था कि जिससे खानों में पानी भरने की समस्या हल हो गई। उसके बाद पत्थर के कोयले का उपयोग खूब बढ़ा।

इन आविष्कार से अंग्रेज लोगों को अपने घर गर्म करने में तो सहायता मिली और निर्यात के लिए सामग्री भी प्राप्त हो गई, किन्तु इसका भारी उद्योग पर, जिस पर कि अन्य सब आर्थिक गतिविधियाँ निर्भर थीं, कोई तात्कालिक प्रभाव न पड़ा। न्यूकमन का भाप से चलने वाला पम्प इतना अच्छा भी नहीं था कि शक्ति को रूपान्तरित करने के यन्त्र के तौर पर उसका सर्वत्र प्रयोग किया जा सके। परन्तु पत्थर के कोयले की प्रचुरता और किसी न किसी प्रकार के भाप के इंजिन की विद्यमानता ने अनेक लोगों को विचार के लिए प्रेरित किया। इन लोगों में से कोलब्रुकडेल का एक नागरिक, जिसका नाम अब्राहम डार्बी था, जिसकी मृत्यु सन् 1770 में हुई और उसका पुत्र अब्राहम जूनियर भी थे। इन दो व्यक्तियों को उस कठिनाई को हल करने का श्रेय दिया जा सकता है, जिसके कारण औद्योगिक युग का आरम्भ रुका हुआ है।

अब्राहम सीनियर ने इस बात की ओर ध्यान दिया था कि शराब बनाने वाले लोग माल्ट को सुखाने के लिए ईंधन के तौर पर लकड़ी के कोयले की जगह कोक का प्रयोग करने लगे थे। 'कोक' पत्थर के कोयले का वह अवशिष्ट अंश होता है, जिसमें से गन्धक तथा अन्य मलिनताएँ गैस के रूप में निकाल दी जाती हैं। यह निष्कर्ष निकालने के बाद, कि यदि कोक माल्ट को सुखाने के लिए पर्याप्त साफ है, तो वह लोहे को पिघलाने के लिए भी पर्याप्त शुद्ध होगा, उसने एक लम्बी परीक्षण-माला शुरू की, जो 1753 में जाकर उसके

पुत्र के हाथों सफलता तक पहुँची। उनको इस काम में जो इतनी देर लगी इस का प्रधान कारण यह था कि डार्बी पिता और पुत्र ऐसे कोक पर परीक्षण कर रहे थे, जो ऐसे पत्थर के कोयले से बनाया गया था, जो पिघलाने की भट्टी में ठीक तरह टिकता नहीं था। यह टूटकर चूर-चूर हो जाता है और फलतः धौंकनी की हवा के प्रवाह को रोक देता है। जब एक बार उन्होंने बिटूमिन वाले कोक से परीक्षण करके देखा, तो फिर वे सफलता के मार्ग पर चल निकले। आवश्यकता न केवल आविष्कार की, अपितु समूची औद्योगिक क्रान्ति की जननी बन गई। अब भी ऐपैलेशियन पर्वत माला से, पैन्सीलवेनिया से लेकर अलाबामा तक से, रूर से, यूराल पर्वतों से और मंचूरिया से प्राप्त होने वाला बिटूमिन-युक्त कोक ही प्रधान ईंधन है, जिसके आधार पर इस्पात उद्योग खड़ा हुआ है।

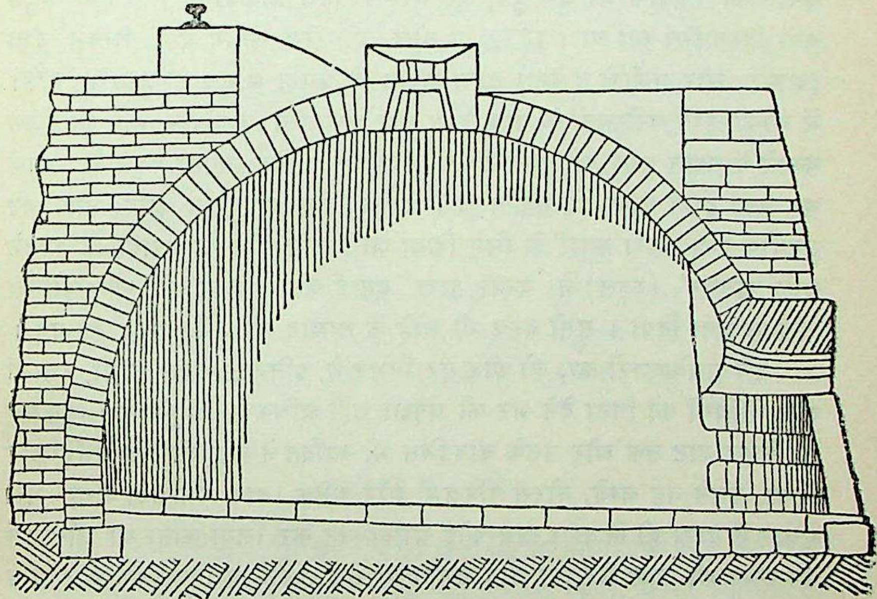

कोक बनाने की भट्ठी फौर्बेस के अनुसार

अब इंग्लैंड के लोहा पिघलाने के कारखाने कोयले की खानों के पास पहुँच

गए, जो शहरों से वनाच्छादित घाटियों की अपेक्षा कम दूर थीं। सन् 1760 में किसी व्यक्ति ने इस प्रकार की धोंकनियों का आविष्कार किया, जिसमें जल की शक्ति से दो पिस्टन चलते थे; और उसके द्वारा लोहा पिघलाने की भट्टियों की ऊष्मा और उनके आकार में वृद्धि हुई। उसी वर्ष घड़िया-इस्पात बनाने की तकनीक भी शुरू हुई, जो पुरानी वूट्ज प्रक्रिया का ही एक बहुत बड़ा विस्तारित रूप था। 1772 में बौल बीयरिंग बनाये गए, जिनसे दंडों (शाफ्ट) और जंजीरों (चेन) द्वारा शक्ति के प्रेषण में सुधार हुआ। 1781 में काफी लम्बे परीक्षणों के बाद जेम्स वाट एक ऐसा कार्यक्षम भाप का ईंजन बनाने में सफल हुआ, जो ऐसी किसी भी जगह शक्ति उत्पन्न करने में समर्थ था, जहाँ ईंधन प्राप्त हो सकता हो। इसके लगभग तुरन्त बाद भाप का उपयोग यन्त्रों द्वारा बुनाई के लिए किया जाने लगा और आर्कराइट के कातने वाले 'खच्चर' (म्यूल) ने यन्त्रों द्वारा बुनाई की प्रक्रिया को स्वतःचालित क्रिया बना दिया। सूती वस्त्र भी लोहे के सामान की भाँति प्रचुर हो गए।

इन आविष्कारों का, जो कोक पर निर्भर थे, इतिहास केवल नामों, स्थानों और तिथियों को गिना देने भर की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। न्यूकमन से लेकर वाट तक और उसके बाद जिस भी व्यक्ति ने कोई मौलिक आविष्कार किया, उसने वह लम्बे, नीरस परिश्रम और अनेक बार परीक्षण तथा भूल सुधार के द्वारा ही किया। जब कोई आविष्कार कर लिया जाता था और उस उपकरण को काम में लाया जाने लगता था, तब उसका आविष्कारक और अन्य लोग उसके बाद भी परीक्षण करते रहते थे, जिससे उस यन्त्र में नये-नये सुधार होते जाते थे। हमें चकमक के फलक की क्रोड के, तक्षणी (ब्यूरिन) के, ताँबे को पिघलाने के, काँस्य-धात्विकी के, लोहे की कारीगरी के या पहिये के आविष्कार के इतिहास का पता नहीं है, किन्तु इस सम्बन्ध में काफ़ी कुछ निश्चय के साथ यह कहा जा सकता है कि इनमें से प्रत्येक आविष्कार में उतना ही समय और परिश्रम लगा होगा, जितना इस्पात बनाने के लिए कोक का प्रयोग शुरू करने में और भाप का इंजिन बनाने में लगा है।

इन आविष्कारों के बारे में एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ये आविष्कार बहुत मामूली लोगों द्वारा किये गए थे। ये आविष्कारक निपुण कारीगर थे, जिन्हें विज्ञान की कोई औपचारिक (बाकायदा) शिक्षा प्राप्त नहीं

हुई थी। न्यूकमन, डार्बी पिता और पुत्र, और वाट तो अपने स्टूलों पर बैठकर परिश्रम में जुटे होते थे, किन्तु सुशिक्षित विद्वान अपने नकली बाल और फीते लगाये अव्यवत परिभाषाओं में भौतिकी और रसायन के विषय में वार्तालापों में व्यस्त रहते थे। इन दोनों वर्गों को परस्पर मिलने में अभी एक शताब्दी और लगनी थी। यह माना जा सकता है कि प्राचीन काल के आधारभूत आविष्कार भी उन मामूली लोगों द्वारा ही किये गए होंगे, जो अपने औज़ारों में सुधार करके अपनी मेहनत बचाना चाहते थे। प्लेटो और अरस्तू जैसे लोगों ने भी ऐथेन्स के बाज़ारों में और दुकानों में जो कुछ हो रहा था, उस की ओर ध्यान दिया। यहाँ तक कि पेच और दाँतेदार पहिये जैसे कुछ स्पष्टतया उपयोगी आविष्कारों को छोड़कर, हैलनी यूनानवासियों द्वारा किये गए आविष्कार भी व्यर्थ ही गए और वे पहले ही बताये जा चुके कारणों से प्राचीन काल में औद्योगिक क्रान्ति ला पाने में सफल नहीं हुए। नए यन्त्रों को अपनाने के लिए पहले एक खास अवस्था तक पहुँचने की आवश्यकता थी और बारूद युग के व्यापार के फलस्वरूप वह अवस्था आ पहुँची थी।

ऊर्जा के नए स्रोत

सन् 1800 के बाद अंग्रेजों, यूरोप महाद्वीप के निवासियों और अमेरिकावासियों ने जिन आविष्कारों और खोजों को न केवल किया, अपितु व्यावहारिक उपयोग में भी लाना शुरू कर दिया, उन की संख्या लाखों में है। एक बिलकुल मोटी रूपरेखा देने के सिवाय उनका यहाँ उल्लेख करना न तो आवश्यक है और न उपयोगी ही। क्योंकि ये सब आविष्कार ऊर्जा के उपयोग पर निर्भर थे, इसलिए हमें मनुष्य द्वारा उपयोग में लाये गए शक्ति के प्रधान स्रोतों की ओर अधिक ध्यान देना है। कोक युग से पहले ये स्रोत थे : लकड़ी, जो द्वितीय अन्तर हिमाच्छादन काल से जलाई जाती रही थी; पालतू पशुओं के लिए चारा, जो नव-पाषाणिक काल में शुरू हुआ था; नव-पाषाणिक काल के पिछले भाग से चला आ रहा जहाज़ों को चलाने के लिए पवन का उपयोग; लकड़ी का कोयला, जिसका उपयोग काँस्य युग के आरम्भिक काल में शुरू हुआ था; चक्की और पम्प चलाने के लिए शक्ति का उपयोग, जो मध्यकालीन लौह युग से चला आ रहा है;

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ह्वेल मछली के तेल को जलाकर प्रकाश प्राप्त करना, जो वाणिज्यिक रूप से दसवीं शताब्दी के आस-पास शुरू हुआ था; और पत्थर के कोयले द्वारा मकानों को गर्म करना, जो चौदहवीं शताब्दी में आर्थिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हो चला था।

सन् 1753 के बाद 1857 तक, जब कर्नल ड्रेक ने पश्चिमी पेन्सीलवेनिया में अपना मिट्टी के तेल का पहला कुआँ खोदा, पत्थर के कोयले, कोक और कोल गैस के सिवाय आर्थिक महत्त्व के किसी नए शक्ति के स्रोत का आविष्कार नहीं हुआ। परन्तु कर्नल ड्रेक के कुएँ में से निकलने वाले तेल का उपयोग पहले पहल लैम्प जलाने के लिए ह्वेल मछली के तेल के स्थान पर किया गया था और पैट्रोल जैसी उड़नशील गौण उपजों को फेंक दिया जाता था। सन्

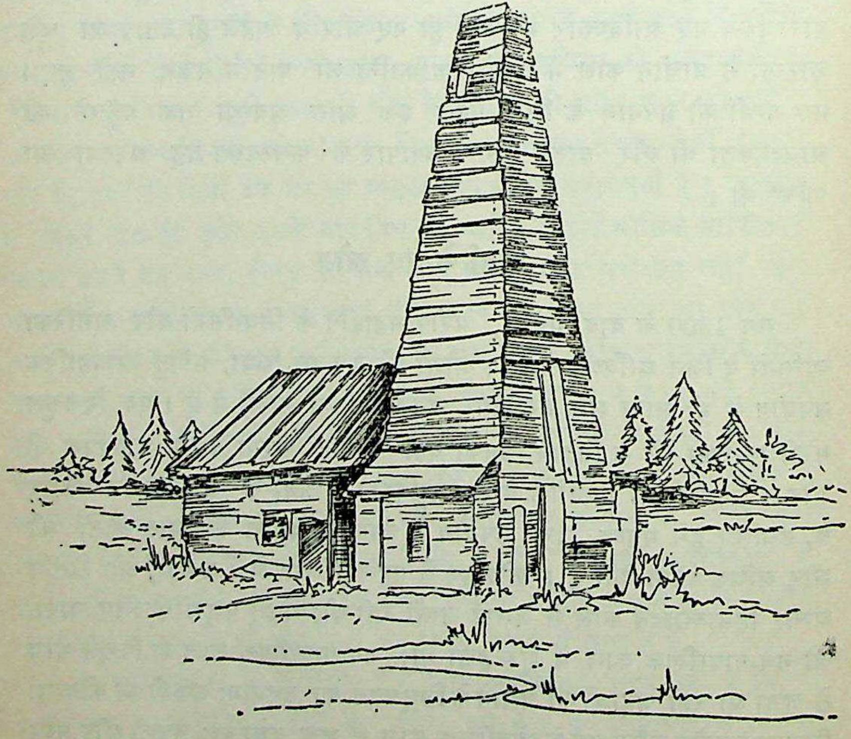

कर्नल ड्रेक का मिट्टी के तेल का कुआँ

1833 में जलशक्ति का महत्त्व फिर बढ़ गया, जब कि विस्कॉसिन में स्थित ऐप्लेटन नगर के निवासियों ने एक स्थानीय जलधारा को वश में करके उससे बिजली उत्पन्न करनी शुरू की। सन् 1886 में पैट्रोल को अश्वरहित गाड़ियों के लिए ईंधन के रूप में बेचा जाने लगा था। और 1898 में क्यूरी दम्पति ने रेडियम के ऊर्जा देने वाले गुण-धर्मों की खोज कर ली थी। सन् 1926 में जल शक्ति का एक और नया चक्र शुरू हुआ, जबकि महाद्वीपों की समूची नदी घाटियों के पानी को बाँधों के पीछे रोककर उससे बहुत बड़ी मात्रा में पनबिजली की शक्ति उत्पन्न की जाने लगी। टैनसी वैली अथॉरिटी, हूवर बाँध और ग्रॉँड कूली, एक के बाद एक तेजी से बनते गए, जिनके कारण ऐल्यूमीनियम का सस्ते ढंग से उत्पादन और परमाणु सामग्रियों का परिष्कार कर पाना सम्भव हुआ।

बिजली और परमाणु ऊर्जा

वैज्ञानिक लोगों को, जिनमें बैंजामिन फ्रैंकलिन भी था, जिस एक विषय ने परेशानी में डाला हुआ था, वह था—बिजली, जो ऊर्जा का कोई स्रोत नहीं है, अपितु उसे स्थानान्तरित करने का एक भौतिक—रासायनिक साधन है। सन् 1745 जितना पहले बिजली तेज़ाब में जस्त के रासायनिक विघटन द्वारा उत्पन्न की जाती थी। उससे अगली शताब्दी में इन बैटरियों में कुछ सुधार किये गए, परन्तु रासायनिक पद्धति से तैयार की गई बिजली इतनी मंहगी पड़ती थी कि अधिकाँश उद्योगों के लिए उसका उपयोग नहीं किया जा सकता था। उसका उपयोग केवल संचार (संवाद प्रेषण) के लिए करना उचित था और वह भी केवल ऐसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण साधनों के लिए जैसे कि दूरलेखन (तार) और समाचार-पत्रों के संवाद प्रेषण के लिए, जिनमें कि द्रुतवेग का महत्त्व बहुत अधिक था।

जब तक बिजली केवल बैटरियों से प्राप्त की जा सकती थी और जब तक बैटरियाँ अपनी शक्ति के लिए केवल रासायनिक क्रिया पर निर्भर थीं, तब तक भाप ही प्रणोदन (प्रोपल्शन) का एकमात्र ऐसा व्यावहारिक स्रोत थी, जिसे चलती हुई या एक जगह स्थिर, दोनों प्रकार की मशीनों के लिए किसी भी जगह प्रयुक्त किया जा सकता था। 1870 के आस-पास विद्युत् जनित्र (जैनेरेटर) के आविष्कार से यह बाधा समाप्त हो गई। विद्युत् जनित्र का सम्बन्ध भाप के इंजिन, भाप-चालित टर्बाइन या जल-चालित टर्बाइन से जोड़ा

जा सकता था और उससे बहुत बड़ी मात्रा में विद्युत् शक्ति उत्पन्न की जा सकती थी। इसके सोलह वर्ष बाद ट्राँसफॉर्मर के आविष्कार द्वारा विद्युत् शक्ति को बहुत दूर-दूर तक भेज पाना सम्भव हो गया और उसी वर्ष नियाग्रा प्रपात के जल से बिजली उत्पन्न की गई और बफ़ैलो नगर में बिजली लगा दी गई। उसके दो वर्ष बाद आधुनिक ग्रिड बैटरी के आविष्कार से एक चक्र पूरा हो गया। डायनमो से प्राप्त होने वाली भाप या जल की शक्ति को ट्राँसफॉर्मरों में इस ढँग से बदला जा सकता था कि उससे बैटरियाँ चार्ज की जा सकती थीं। जहाँ तक चिनगारी उत्पन्न करने का प्रश्न था, अब स्वयंचल मोटरगाड़ी बना पाना व्यवहार्य हो गया था।

जिन आविष्कारों के अनुक्रम के फलस्वरूप परमाणु ऊर्जा का उपयोग शुरु हुआ, उनका आरम्भ सन् 1895 में तब हुआ था, जब डब्ल्यू० के० रूँटजन ने यह पता चलाया कि बिजली की धारा किसी शून्य स्थान युक्त नली में से गुज़ारी जाय, तो उसके कारण आसपास की स्फुरदीप्त (फॉसफोरीसैण्ट) वस्तुएँ चमकने लगती हैं। इस खोज का शुरू-शुरू में प्रधान उपयोग यह किया गया कि चिकित्सा के प्रयोजनों के लिए ऐक्सरे चित्र लिए जाने लगे। इसके बाद तीन वर्ष के अन्दर ही क्यूरी दम्पति ने यह पता चलाया कि रेडियम विद्युतीय प्रेरणा के बिना ही किरणें छोड़ता रहता है और उन्होंने अल्फा, बीटा और गामा किरणों को अलग-अलग भी कर देखा। 1904 में अलबर्ट आइन्स्टीन ने पदार्थ (भौतिक तत्व) और ऊर्जा के मध्य सम्बन्ध के विषय में अपना सिद्धान्त प्रकाशित किया और उसके बाद अनेक मेधावी लोगों ने परमाणु-भौतिकी की ओर ध्यान दिया। सन् 1939 में इन वैज्ञानिकों में से एक वैज्ञानिक राइनहोल्ड रूडनबर्ग ने व्लाडीमीर ज्वोरीकिन के साथ प्रतियोगिता में इलैक्ट्रानीय सूक्ष्म-वीक्षण यन्त्र बनाकर तैयार किया, जिसमें उसे 15 वर्ष लगे और उसके इस उपकरण ने परमाणुओं की बनावट का अध्ययन करने में अन्य वैज्ञानिकों को बहुत सहायता दी। सन् 1945 में प्लूटोनियम का, जो रेडियम से भारी धातु है, दो जापानी नगरों के ऊपर विस्फोट किया गया। 1952 में प्रशान्त महासागर में एक मूंगे के द्वीप पर एक हाइड्रोजन बम का विस्फोट किया गया और 1957 में एक परमाणु संयन्त्र द्वारा पहली बार व्यावसायिक रूप से बिजली उत्पन्न की गई।

शक्ति के उपयोग के इस द्रुत अभिलेख में संसार के ऊर्जा के व्यय में हुई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अत्यधिक वृद्धि की अपेक्षा कुछ और भी बात निहित है। इसमें तीन नए ईंधनों का उपयोग हुआ है—मिट्टी का तेल, रेडियो-सक्रिय धातुएँ और हाइड्रोजन—और ईंधन या गुरुत्वाकर्षण को ऊर्जा के रूप में बदलने की पाँच ज्ञात पद्धतियों में से तीन का उपयोग हुआ है। इससे पहले सीधे सादे आक्सीकरण (आग)-और एक बन्द कोष्ठ में द्रुत आक्सीकरण (बारूद) का ही ज्ञान था। इस अभिलेख में केवल कारीगरों का परिश्रम ही नहीं, अपितु वैज्ञानिक लोगों द्वारा लिया गया भाग भी निहित है। बारूद का निर्माण एक वैज्ञानिक, रोजर बेकन के कार्य का परिणाम था। बारूद के बाद ऊर्जा उत्पन्न करने की जो भी आधारभूत तकनीकें आविष्कृत हुईं, वे सब भी विशुद्ध वैज्ञानिक अनुसन्धान का परिणाम थीं। वैज्ञानिक विशेषीकरण और विविक्त विचार (ऐब्स्ट्रैक्शन) का लाभ उठाये बिना केवल अग्नि उत्पन्न करने का ही आविष्कार किया जा सका होगा।

अब प्रश्न यह उठता है: कारीगरों ने केवल आधारभूत यान्त्रिक आविष्कार ही क्यों किये और वैज्ञानिकों ने केवल ऊर्जा के स्रोत ही क्यों ढूंढ निकाले? इस प्रश्न के पूर्वार्द्ध का उत्तर यह है कि जो कारीगर दिन प्रतिदिन एक ही प्रकार के औज़ारों का उपयोग करता है, उसे अपनी बेकार मेहनत को कम करने में स्वभावतः दिलचस्पी होती है और विशेष रूप से तब, जब वह स्वतन्त्र रूप से काम करने वाला कारीगर हो और अपने उत्पादन को बढ़ा कर अधिक धनोपार्जन कर सकता हो, और उसे यह आशा हो कि वह किसी निर्माता को अपना पेटेण्ट आविष्कार बेच सकेगा। वह ऊर्जा के नए स्रोतों की खोज इसलिए नहीं कर पाता, क्योंकि उसका काम एक-एक क़दम करके आगे बढ़ता है। विज्ञानवेत्ता ऊर्जा के स्रोतों की खोज इसलिए करता है, क्योंकि उसकी प्रेरणा का स्रोत स्वतन्त्र कल्पना और कुतूहल होता है और उसकी रुचि विश्व की व्यवस्था से सम्बन्धित सामान्य समस्याओं में होती है। यदि वह किसी वस्तु की, जो खोजी जा सकने योग्य प्रतीत होती हो, व्याख्या न कर पाये, तो उसे बहुत बेकली होती है। कारीगरी का लाभ प्राप्त करने का उद्देश्य और वैज्ञानिकों में स्वतन्त्र अनुसन्धान की प्रेरणा, दोनों वैसे स्वतन्त्र समाजों में ही सम्भव हैं, जिनमें से होकर मानवीय सभ्यता की मुख्य धारा सदा आगे बढ़ती रही है।

परिवहन ध्वनिरोध को पार कर गया

सन् 1700 तक अंग्रेज लोग, पश्चिमी यूरोप के अधिकांश निवासी और अमेरिकी उपनिवेशों में रहने वाले अंग्रेज समुद्र में परिवहन के लिए पाल से चलने वाले जहाज़ों पर और स्थल यात्रा के लिए घोड़े पर निर्भर थे। भारी उद्योग की उन्नति और उसके फलस्वरूप अनेक प्रकार की उपभोग्य वस्तुओं के उत्पादन में हुई वृद्धि के कारण परिवहन की आवश्यकता बहुत बढ़ गई। परन्तु पाल-चालित जहाज़ों का समय बीतने में अभी बहुत देर थी। निर्माण की नई तकनीकों द्वारा कहीं अधिक और कहीं बड़े जहाज़ बना पाना और पालों द्वारा उनकी दिशा मोड़ने में सुधार करना और नौचालन की कला में उन्नति करना सम्भव हो गया। घोड़े के साथ भी कुछ ऐसी ही बात हुई। अधिक और अच्छे इस्पात के कारण अच्छी कमानियाँ बनने लगीं और यात्रा के लिए सुखदायक गाड़ियाँ, कोचिंग सेवाएँ (कोचिंग सर्विसिज़), किसानों की बग्घियाँ और वे कौनेस्टोगा गाड़ियाँ, जिनमें बैठकर शुरू-शुरू में आने वाले लोग पूरे अमेरिका महाद्वीप को पार करके कैलीफोर्निया और ओरेगोन तक गए थे, बन सकीं।

जब एक जगह स्थिर रहने वाले भाप के इंजिन इस सीमा तक निर्दोष बनाए जा चुके कि वे उद्योगों के लिए सस्ती और कार्यक्षम शक्ति प्रदान कर सकें, तब उन्हें इतना हल्का और कार्यक्षम बनाने में कुछ समय लगा कि उनका उपयोग जहाज़ों और स्थल पर चलने वाले वाहनों को चलाने के लिए किया जा सके। सर्वप्रथम भाप से चलने वाले जहाज़ वस्तुतः पाल से चलने वाले जहाज़ थे, जिनमें भाप के इंजिन सहायक इंजिनों के रूप में लगे हुए थे और पहली रेलगाड़ियाँ छोटी-छोटी थीं और बहुत धीमे चलती थीं। इन्हें पालों से चलने वाले जहाज़ों और घोड़ों द्वारा खींची जाने वाली गाड़ियों का स्थान ले पाने में कई दशाब्दियाँ लगीं। इन क्रान्तिकारी आविष्कारों के विकास का इतिहास परीक्षण और भूल-सुधार द्वारा क्रमशः उन्नति का इतिहास है। मोटरगाड़ियों की प्रगति भी शुरू में बहुत धीमे-धीमे हुई। जब तक हैनरी फोर्ड ने मोटर के पुर्ज़ों का मानकीकरण न कर दिया और उन पुर्ज़ों को जोड़ने की एक ऐसी पद्धति न निकाल ली, जिसके द्वारा मोटरों का उत्पादन बड़े पैमाने पर हो सके, तब तक निजी, शक्तिचालित वाहन आम वस्तु नहीं बन सके। इसी प्रकार

यद्यपि राइट बन्धुओं ने पहली उड़ान 1903 में की थी, फिर भी जब तक सन् 1926 में सस्ती विद्युत् शक्ति के द्वारा ऐल्यूमीनियम का उत्पादन बड़े पैमाने पर शुरू नहीं हो गया, तब तक विमान व्यक्तियों और अत्यन्त आवश्यक डाक और सामान को ढोने का प्रधान साधन नहीं बन पाये।

वाहन तो परिवहन का केवल एक पहलू है। जहाज़ों के लिए गोदियाँ (डौक) चाहिएँ, और विमानों के उतरने के लिए उसी प्रकार हवाई अड्डे चाहिएँ, जिस प्रकार रेलगाड़ियों के लिए रेल की पटरियाँ होनी चाहिएँ। 1780-90 के वर्षों में, जब इंग्लैंड में धातु उद्योग तेज़ी से बढ़ा था और रेल की पटरियाँ बिछाये जाने से पहले, यह स्पष्ट हो गया था कि धातु को पिघलाने वाले और ढलाई करने वाले कारखानों तक और उन कारखानों से अन्य स्थानों तक, और सामान तैयार करने वाली मिलों और समुद्री बन्दरगाहों के मध्य वस्तुओं की ढुलाई के लिए सड़क परिवहन काफ़ी नहीं है। समुद्र के बन्दरगाह न केवल सुरक्षा की दृष्टि से, अपितु मध्यकालीन नगरों के निकट रहने के लिए भी नदियों में ऊपर की ओर को बनाये जाते थे। जब बड़े-बड़े जहाज़ बनने लगे, तब गहरे पानी वाले बन्दरगाहों की आवश्यकता हुई; इनमें से अधिकाँश बन्दरगाह समुद्र तट पर स्थित थे, इसलिए वहाँ से जहाज़ यात्रा में भी समय कम लगता था। इन सब कारणों से अंग्रेज लोगों पर नहरें खोदने का भूत सवार हो गया और सन् 1800 तक सारे देश में तरल महामार्गों (सड़कों) का जाल-सा बिछ गया। यही कुछ अमेरिकावासियों ने भी किया।

रेल लाइनों के साथ प्रतियोगिता के कारण गत शताब्दी के मध्य तक उथली, अन्तर्देशीय नहरों का खोदा जाना बन्द हो गया था, परन्तु समुद्रों को परस्पर जोड़ने वाली गहरी नहरें खोदी जाने लगीं। स्वेज़ और पनामा नहरों की खुदाई पर जितनी लागत आई थी, उससे कई गुना वे जहाज़ों से वसूल होने वाले शुल्कों के रूप में दे चुकी हैं और ये दोनों नहरें इंग्लैंड और अमेरिका के लिए अमूल्य रक्षा-पंक्तियों का भी काम देती रही हैं, जो दूर तक मार करने वाले बमवर्षक के आविष्कार से पहले अजेय थीं। इन नहरों की खुदाई की समस्या से मिट्टी खोदने की मशीनों के आविष्कार को प्रेरणा मिली; इन मशीनों में प्रणोदन की संगली पहियेदार (कैटरपिलर) पद्धति को अपनाया गया है, जिस का उपयोग प्रथम विश्व युद्ध में टैंकों में किया गया था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मिट्टी खोदने की मशीनों द्वारा हमारे इंजीनियर लोग महत्त्वपूर्ण सामग्रियों की विशाल मात्राओं को एक जगह भेजने के लिए एक और साधन बना पाने में समर्थ हुए। यह साधन है—पाइप लाइन, जैसी कि 'बिग इंच' और 'लिटिल इंच' लाइनें हैं। सन् 1953 में केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में 1 लाख 68 हज़ार मील लम्बी तेल की पाइप लाइनें थीं, जिनमें होकर अपरिष्कृत तेल (क्रूड आयल) 1 सेंट प्रति गैलन प्रति हज़ार मील के खर्च पर बहता था। परिवहन के इस सस्ते साधन के कारण ही हमारी मोटरें सड़कों पर चल पाती हैं। विदेशों में इन पाइप लाइनों के कारण अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। उदाहरण के लिए, विशाल 'टेप लाइन', जिसके द्वारा मिट्टी का तेल ईरान की खाड़ी से भूमध्यसागर तक 1100 मील दूर भेजा जाता है, चार प्रभुता-सम्पन्न राष्ट्रों—साऊदी अरब, जोर्डन, सीरिया और लेबनान—के राज्य क्षेत्रों में से होकर गुज़रती है। इस प्रकार की पाइप लाइन को बनाये रखने के लिए बहुत अधिक राजनय के प्रयोग की आवश्यकता होती है। इस उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक उद्योग विद्या ने संसार के राष्ट्रों को कितना परस्पराश्रित कर दिया है।

प्रकाश के से वेग से संचार (संदेश वाहन)

कोक युग का आरम्भ होने से बहुत पहले लोगों ने एक स्थान से दूसरे स्थान तक सन्देश भेजने की पद्धतियाँ खोज निकाली थीं। होमरकालीन यूनान जैसे निरक्षर देशों में भी सन्देशवाहक लोग एक विशेष चिह्न लिये एक राज्य से दूसरे राज्य तक सन्देश लेकर जाते थे और वहाँ से उत्तर लेकर वापस आते थे। आस्ट्रेलियाई आदिवासी लोग भी, जो कि पाषाण युग के शिकारी हैं, इसी प्रकार के सन्देशवाहक भेजा करते थे। परन्तु सर्वप्रथम औपचारिक सुसंगठित डाक व्यवस्था ईरानी सम्राटों ने चलाई थी; उनके बाद अनेक राष्ट्रों ने अपने देशों में आन्तरिक डाक-व्यवस्थाएँ स्थापित कीं। शुरू में ये व्यवस्थाएँ केवल सरकार के उपयोग के लिए थीं, परन्तु बाद में ज्यों-ज्यों साक्षरता फैली और गैर सरकारी संस्थाएँ बढ़ीं, त्यों-त्यों ये व्यवस्थाएँ सार्वजनिक होती गईं।

सन् 1784 में अंग्रेज़ों ने विशेष डाकगाड़ियों की व्यवस्था शुरू की। ये

डाकगाड़ियाँ बहुत तेज़ी से हाँकी जाती थीं और बीच-बीच में पड़ावों पर इनके घोड़े बदल दिये जाते थे और इन पर सशस्त्र रक्षक भी रहते थे, जिससे वे डाकुओं को खदेड़ सकें। पत्थर की रोड़ियों के आविष्कार के बाद इन रोड़ियों से बनी हुई नई सड़कों के कारण और बड़े पैमाने पर इस्पात की गढ़ाई की नई पद्धतियों द्वारा बनाई गई कमानियों पर झूलती हुई नई गाड़ियों के आविष्कार के कारण ही यह व्यवस्था सम्भव हो सकी। कारखानों से लन्दन तक और इन दोनों से समुद्री बन्दरगाहों तक, जहाँ डाक जहाज़ों पर पैकटों के साथ रखी जाती थी, तीव्र गति से संचार के कारण निर्माण की गति तीव्र करने में सुविधा हुई।

सन् 1840 में इंग्लैंड की डाक व्यवस्था में गोंद लगे हुए डाक टिकट का प्रयोग शुरू हुआ और सारे साम्राज्य के अन्दर किसी भी जगह पत्र भेजने के लिए इसकी दर एक पैंस रखी गई, जबकि इससे पहले केवल इंग्लैंड के अन्दर ही कहीं पत्र भेजने की न्यूनतम दर 1 शिलिंग थी। यह सम्भव है कि दर में यह कमी संचार की एक नई प्रणाली के साथ प्रतियोगिता की पहले से कल्पना करके की गई हो। इसके चार वर्ष बाद सेमुअल मोर्स ने 'नम्बर 23' (XXIII) से अपना प्रसिद्ध बाज़ार भाव, वाशिंगटन से बाल्टीमोर भेजा था। डाक की दरें नीचे गिरने से एक वर्ष पहले चार्ल्स गुड ईयर ने पहले पहल रबड़ को वल्कनाइज़ किया था और सन् 1847 में गटापार्चा बाज़ार में आ गया था। दूरलेखन के तारों को विसंवाहित किया जा सकता था। बैटरीचालित दूरलेखन प्रणाली शीघ्र ही उन सब देशों में चालू हो गई जो कोक युग की सभ्यता में भाग ले रहे थे और 1866 में अतलान्तक-पार की समुद्री तार द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका और इंग्लैंड के बीच सन्देश आने-जाने लगे, जिससे सन्देश भेजने में लगने वाला न्यूनतम समय दो सप्ताह से घटकर केवल कुछ मिनट रह गया। सन् 1876 में अलैग्जेंडर ग्राहम बैल ने दूरभाषा (टेलीफोन) पर अपना सर्वप्रथम संदेश भेजा और इसके 6 वर्ष के अन्दर बोस्टन और न्यूयार्क के बीच दूरभाष व्यवस्था चालू हो गई। उसके बाद जो कुछ हुआ है, वह सबको मालूम ही है।

दूरलेखन-दूरभाष का अनुक्रम तो विसंवाहित तार के उत्पादन पर निर्भर था, किन्तु बेतार संचार की तकनीकें एक नए सिद्धान्त की खोज पर आधारित

थीं; और वह खोज थी—अल्प शक्ति वाले विद्युतीय आवेगों का हर्ट्ज़ीय तरंगों द्वारा वायु में प्रेषण। इन तरंगों के अस्तित्व का पता हर्ट्ज़ नामक एक वैज्ञानिक ने सन् 1887 में चलाया था। 1895 में मार्कोनी ने इन तरंगों का प्रयोग अपने दूरलेखन यन्त्र के लिए कर लिया था और बिन्दु तथा रेखा वाले बेतार केन्द्र शीघ्र ही सब समुद्रगामी जहाज़ों के लिए आवश्यक मानक उपकरण बन गए। परन्तु रेडियो पर मनुष्य की आवाज़ को सफलतापूर्वक 1915 तक नहीं भेजा जा सका; उस वर्ष डी० फौरैस्ट ने एक दशाब्दी तक परिश्रम करने के बाद एक रेडियो नली (टयूब) तैयार की। सन् 1919 में रेडियो का, विमानों में भूमि से विमान तक, संदेश भेजने के लिए पहले पहल प्रयोग किया गया; यह प्रथम विश्वयुद्ध की दृष्टि से तो बहुत देर में हुआ था, किन्तु 1920 और 1940 के बीच के वर्षों में व्यावसायिक उड्डयन की दृष्टि से और द्वितीय विश्वयुद्ध की दृष्टि से ठीक समय पर था। सन् 1920 में संसार में पहला रेडियो केन्द्र, जहाँ से कि नियमित रूप से कार्यक्रम प्रसारित किये जाते थे, पिट्सबर्ग में बना और इस केन्द्र तथा इसी प्रकार के अन्य केन्द्रों से जो समाचार, प्रचार और मनोरंजन के कार्यक्रम प्रसारित किये जाते रहे हैं, उनका प्रभाव संसार की लगभग प्रत्येक संस्था पर पड़ा है।

दूरदर्शन (टेलीविज़न) का आविष्कार परमाणु-सम्बन्धी अनुसन्धान की एक गौण उपज के रूप में शुरू हुआ। इलैक्ट्रानीय सूक्ष्मवीक्षण यन्त्र के आविष्कारक व्लाडीमीर ज्वोरीकिन ने 1923 में एक इलैक्ट्रानीय कैमरा नली का आविष्कार किया। 1941 तक इस नली तथा दूरदर्शन (टेलीविज़न) में प्रयुक्त होने वाले इलैक्ट्रानीय साधनों में इतना सुधार हो चुका था कि सार्वजनिक प्रसारण शुरू कर दिये गए और 1954 में 5 करोड़ से भी अधिक व्यक्ति एक ही कार्यक्रम को होते हुए देखने लगे।

संचार की इन नई पद्धतियों पर आधारित आविष्कारों के एक अन्य समूह ने समय और श्रम की बहुत बचत कर दी है। यान्त्रिक और विद्युतीय टाइपराइटर (टंकण यन्त्र), डिक्टाफोन, टेप और वायर रिकार्डर, सूक्ष्म फिल्म वाले कैमरे, फोटो प्रति-लिपि करने वाले (फोटो स्टैट) कैमरे, संगणक, अस्सी स्तंभ वाले पंच कार्ड कटर, तालिका बनाने वाली और छंटाई करने वाली मशीनें और इलैक्ट्रानीय मस्तिष्क न केवल मनुष्य की माँस-पेशियों को परिश्रम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से मुक्ति देते हैं, अपितु उसके मस्तिष्क की थकान में भी कमी करते हैं। इन साधनों के कारण दस लाख से भी अधिक ग्राहकों वाली साप्ताहिक पत्र-पत्रिकाओं के लिए अपने ग्राहकों का ठीक-ठीक हिसाब रख पाना सम्भव होता है और सरकार एक ही समय में करोड़ों कोषागार हुँडियाँ (चैक) जारी कर पाती है। इन मशीनों के बिना हमारी जटिल सभ्यता संगठित नहीं रह सकती।

सभ्यता के निर्माण में संचार के महत्त्व को जितना अधिक आँका जाय, उतना ही कम है। वाणी की उत्कृष्टतर शक्ति के कारण मनुष्य अपने वानर बन्धुओं से अलग हो गया और इसी के कारण वह अपने बच्चों को पुरानी बातें (रीति-रिवाज) सिखाने में समर्थ हुआ। वाणी के कारण ही संस्कृति सम्भव हो सकी। संचार के क्षेत्र में प्रत्येक नये आविष्कार—लेखन, वर्णमाला, मुद्रण यन्त्र, दूरलेखन यन्त्र (तार) टंकण यन्त्र (टाइप राइटर), रेडियो और दूरदर्शन (टेलीविज़न)—से मनुष्य की आवाज़ की अभिसीमा तब तक बढ़ती गई, जब तक कि वह सारी पृथ्वी पर प्रतिध्वनित न होने लगी। ज्यों-ज्यों संस्थाएँ इस अभिसीमा की बाहरी सीमाओं की ओर बढ़ती जा रही हैं, त्यों-त्यों हम इतिहास की चौथी प्रावस्था और मनुष्य के महानतम अभियान की देहरी तक आ पहुँचे हैं।

जलवायु पर दूसरी बार विजय

चतुर्थ हिमाच्छादन काल में कुछ मनुष्य पुरानी दुनिया के गर्म प्रदेशों में स्थित अपने पिता-पितामहों के घरों को छोड़कर शीत को जीतने के लिए निकले थे। शीत पर यह विजय उन्होंने अग्नि, तक्षणी और सुइयों द्वारा प्राप्त की। कोक से लेकर परमाणु तक के युगों में कुछ अन्य मनुष्यों ने, जो शीतल जलवायु में रहने के आदी हो चुके थे, ऐसे उपाय खोज निकाले, जिनके द्वारा वे पृथ्वी के सभी प्रदेशों में स्वस्थ और सुखी रह सकते हैं। तक्षणियों और सुइयों के बजाय उन्होंने ऊर्जा के उन नए स्रोतों पर आधारित अनेक आविष्कारों का उपयोग किया, जिनकी कि उन्होंने खोज की थी। इन आविष्कारों में पास्तियर से लेकर पैनिसिलीन तक की अनेक चिकित्सा-सम्बन्धी प्रगतियाँ भी थीं, जिनके द्वारा करोड़ों जीवनों की रक्षा करना और अन्य करोड़ों जीवनों

के दीर्घायुष्य को बढ़ाना सम्भव हो गया और श्वेतजातीय मनुष्यों के लिए, जो संसार के अपरिचित भागों की बीमारियों के आसानी से शिकार हो जाते थे, हर किसी जगह की यात्रा निश्शंक होकर कर पाना सम्भव हो गया। इन आविष्कारों ने खाद्य सामग्री को अनिश्चित काल तक परिरक्षित करके रखने की प्रक्रियाएँ, जिनमें खाद्य सामग्री को डिब्बाबन्द करना और जमा देना सम्मिलित है, भी थीं और वातानुकूल द्वारा समूचे मकानों और बस्तियों को ठण्डा रखने की पद्धतियाँ भी थीं। इस समय ईरान की खाड़ी के उष्ण और आर्द्र समुद्र तट पर थेहरान में नाजुक अमेरिकावासियों का एक समूचा का समूचा शहर विद्यमान है और वहाँ पर बर्गमैन और ऐलन के पारिस्थितिक नियमों का उल्लंघन मैसर्स फ्लुओर ऐण्ड बर्ड्सआई द्वारा निर्मित वस्तुओं की सहायता से किया जा रहा है।

विज्ञान अन्तर्राष्ट्रीय है

संगणक मशीनें, इलैक्ट्रानीय मस्तिष्क और वातानुकूल के उपकरण तो मुख्यतया अमेरिकावासियों द्वारा आविष्कृत साधन हैं, किन्तु पिछली ढाई शताब्दियों में मनुष्यों ने जो तकनीकी उन्नति की है, वह किसी एक देश की उपज नहीं है और यह धृष्टता होगी कि कोई एक देश उन सबका दावा करे। बारूद युग में अरबवासियों, यहूदियों, इटलीवासियों और अंग्रेजों ने नौचालन की उन्नति के लिए पुर्तगाल और स्पेन की सेवा की थी। आधुनिक विज्ञान में जापानी लोग चिकित्सा और मत्स्य-विज्ञान (इक्थ्योलौजी) में सबसे बढ़कर रहे हैं। चीनी लोगों ने गणित में असाधारण उन्नति की है; और महान् अर्थशास्त्रीय वनस्पतिवेत्ता जौर्ज वाशिंगटन कार्वर एक अमेरिकी नीग्रो था। मैनहैटन परियोजना में नियुक्त परमाणु-भौतिकी शास्त्री अनेक देशों से आये हुए हैं। मानव-वैज्ञानिकों को एक-दूसरे से सम्पर्क स्थापित करने के लिए सब जगह कुछ-न-कुछ साधन मिल ही जाते हैं। आधुनिक विज्ञान उतना ही अन्तर्राष्ट्रीय है, जितना कि प्रिंस हैनरी का नौचालन था, क्योंकि सृजनात्मक कल्पना और वैज्ञानिक कुतूहल किन्हीं राष्ट्रों या जातियों की विशेषता नहीं, अपितु मानवता की विशेषता है। परन्तु सब राष्ट्रों की संस्थात्मक परिस्थितियाँ नए विचारों को ग्रहण करने की दृष्टि से एक जैसी नहीं हैं। कुछ देशों में

अतीत की भाँति आज भी विज्ञान के बीज ऊसर भूमि पर पड़ते हैं और विभिन्न देशों में तकनीकी आविष्कारों के फलस्वरूप जो संस्थात्मक परिवर्तन होते हैं, वे अलग-अलग ढंग के होते हैं।

संस्थाओं की संख्या में बेहिसाब वृद्धि और उनका चरम सीमा तक पहुँचना

पिछली ढाई शताब्दियों में आविष्कृत नए साधनों ने सारी दुनिया पर प्रभाव डाला है। इसका एक कारण भूमंडलीय संचार (संदेश प्रेषण) है। एक अन्य कारण यह है कि निर्माण के लिए जिन सामग्रियों की आवश्यकता पड़ती है, वे हर किसी जगह से लानी पड़ती हैं। कार्य की नई प्रक्रियाएँ स्वभावतः ऐसी थीं, जिनके लिए अधिकाधिक संख्या में लोगों द्वारा हिस्सा लिए जाने की आवश्यकता थी। इन साधनों और उनसे बनी वस्तुओं के उपयोग के लिए भी अधिकाधिक जगह की आवश्यकता थी। उदाहरण के लिए, नियाग्रा प्रपात को संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा के पारस्परिक समझौते के बिना उपयोग के लिए सज्जित नहीं किया जा सकता था। 'टैप लाइन' को पाँच देशों में, जिनमें संयुक्त राज्य अमेरिका भी सम्मिलित है, आपसी समझौते के बिना ईरान की खाड़ी से भूमध्यसागर तक नहीं ले जाया जा सकता था। अपेक्षाकृत कुछ अधिक स्थानीय पैमाने पर, फसल काटने वाली बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ (हार्वेस्टर कम्बाइन) डाकोटास के विस्तृत बाड़-रहित मैदानों में बहुत अच्छे ढंग से काम करती हैं, किन्तु वे इंग्लैंड की कच्छ भूमियों में, जो गेहूँ की दृष्टि से कहीं अधिक उपजाऊ प्रदेश हैं और जिन्हें प्रकृति ने और मनुष्य ने छोटे-छोटे टूकड़ों में विभक्त किया हुआ है, उपयोगी नहीं हैं।

बारूद युग में एशिया और उत्तरी दक्षिणी अमेरिका के साथ यूरोप के व्यापार के फलस्वरूप इंग्लैंड और नैदरलैंड्स में चार्टर प्राप्त कम्पनियाँ बनी थीं, जिनके सैकड़ों अंशधर (शेयर होल्डर) होते थे। कोक युग में इस्पात और सूती वस्त्र उद्योगों के कारण एक और नए प्रकार की संस्था, निगमित निर्माता कम्पनी, न केवल इंग्लैंड और नैदरलैंडस् में बनी, अपितु अन्य कई देशों में, विशेष रूप से जर्मनी, स्वीडन और संयुक्त राज्य अमेरिका में भी बनी। ये प्रोटैस्टैण्ट-प्रधान देश थे, जिनमें मध्यम वर्ग इससे पहले के युग के स्वतन्त्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

किसानों और स्वाधीन श्रेणियों (गिल्ड) के सदस्य कारीगरों का वंशज था और वह इन देशों की जनसंख्या में निर्णायक तत्व था।

निर्माता कम्पनी को अपने कारीगरों के लिए कच्चे माल और शक्ति की व्यवस्था करनी पड़ती है और अपने तैयार माल को बेचना पड़ता है। इस प्रकार माल तैयार करने से बिलकुल अलग तीन विभागों की आवश्यकता होती है, खरीद, इंजीनियरिंग और बिक्री विभाग। कच्चे माल को पाण्योपयोगी बनाने में कई प्रक्रियाएँ सर्वदा आवश्यक होती हैं और इस प्रकार की प्रत्येक प्रक्रिया के लिए विशेष श्रेणी के कारीगरों की आवश्यकता होती है, जो पृथक् विभाग के रूप में संगठित होते हैं। इन कामगरों में से ऐसे बहुत थोड़े होते हैं, जो उतने कुशल हों, जितने कि इससे पहले के युगों में कारीगर होते थे। क्योंकि बारीकी का अधिकाँश काम मशीनें करती हैं, इसलिए अब उतने लम्बे काल तक शिक्षुता की आवश्यकता नहीं रही। क्योंकि काम में आने वाली अधिकांश ऊर्जा मशीनों से प्राप्त होती है, इसलिए कामगरों को विशेष रूप से बलिष्ठ होने की भी आवश्यकता नहीं और अनेक कामों को तो स्त्रियाँ और बच्चे भी उतनी ही भली भाँति कर सकते हैं, जितना कि पुरुष करते हैं।

हस्त-शिल्पी अपना काम किसी बाहरी सहायता के बिना करता है। वह जब चाहे, अपने काम को रोक सकता है और जब चाहे, फिर शुरू कर सकता है। जब वह थक जाय, तब वह विश्राम कर सकता है; जब उसे भूख लगे, तब वह भोजन करने जा सकता है। कारखाने में मशीनें लगातार चलती रहती हैं और यदि कोई एक कारीगर खाना खाने जाय, तो उसके लिए एक करघे या कताई चौखटे को बन्द करना ईंधन की दृष्टि से महंगा पड़ता है। यदि कोई तागा टूट जाय, तो उसके टूटे हुए सिरों को तुरन्त जोड़ दिया जाना चाहिए; इसलिए कारीगर में सतर्कता और धीरता की ओर साथ ही संकट के समय चटपट काम करने वाली चुस्त अँगुलियों की आवश्यकता होती है। सामान्य शिक्षा अनावश्यक है।

हर एक दर्जन या इसके कुछ कम या ज्यादा कारीगरों के लिए एक अग्रणी (फोरमैन) होना चाहिए, जिसे विशेष रूप से प्रशिक्षण दिया गया हो। वह ऐसा होना चाहिए, जो अपने अनुभाग में घूम-फिर सके, हर किसी काम पर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ध्यान रखे; किसी की पीठ थपक कर और किसी को डाँट कर, हर किसी को यदि प्रसन्न नहीं, तो कम से कम कार्य में व्यस्त अवश्य रख सके। यन्त्र-चालित उद्योग के आरम्भिक दिनों में यदि कोई अच्छा कारीगर रात में अध्ययन करता और उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली होता, तो वह उन्नति करके अग्रणी (फोरमैन) बन सकता था। और वहाँ से भी उन्नति करके एक विभाग का पर्यवेक्षक (सुपरवाइज़र) बन सकता था। यदि वह कार्यक्षम होने के साथ-साथ आकर्षक भी होता, तो वह होमर काल के उन वीर नायकों की भाँति मिल-मालिक की सुन्दर कन्या से विवाह करने की आशा कर सकता था, जो राजकन्या से विवाह कर लेते थे और अन्त में राज्य का शासन अपने हाथ में ले लेते थे। इस प्रकार वह एक सामाजिक आरोही बन जाता, जिससे अपेक्षाकृत पहले से प्रतिष्ठित भद्र लोग ईर्ष्या और घृणा दोनों ही करते। कार्यालय में उसे विभिन्न विभागों की सब गतिविधियों का समन्वय करने में, शिकायतों को सुनने और कठोरतापूर्वक और सही निर्णय के साथ लोगों को काम पर नियुक्त करने और नौकरी से हटाने में समर्थ होना होता था। अब व्यवसाय के लिए ऐसे संचालकों की आवश्यकता थी, जो लोगों के साथ व्यवहार करने में राजाओं और सेनापतियों के समान सक्षम हों।

जो कारीगर इस ढंग से उन्नति करता था। वह उतना ही विरला होता था, जितना कि उन्नति करते-करते फील्ड मार्शल बन जाने वाला कोई साधारण सैनिक होता है। इंग्लैंड में कारखानों के केन्द्रों के आसपास ग़रीब मनुष्यों की विशाल जनसंख्या बढ़ती गई; ये लोग कम भोजन पाते थे, अशिक्षित थे और उनकी परिचिति का क्षेत्र उतना ही सीमित था, जितना कि अनेक निम्नकोटि के वानरों (प्राइमेट) का होता है और उनके क्रिया-कलाप उतने ही परिमित थे, जितने पालतू पशुओं के होते हैं। भौतिकी, रसायन और यांत्रिकी विज्ञान में जो द्रुत प्रगति हुई थी, उसके पूरक के रूप में मानवीय सम्बन्धों-विषयक कोई विज्ञान अभी नहीं निकला था। ऐसे पूंजीपति बहुत थोड़े थे, जो इस अमानवीय एकमार्गीकरण के विरुद्ध अपने कर्मचारियों की प्रतिक्रिया का पहले से अनुमान कर पायें हों। अत्यधिक भीड़ भाड़, गन्दे मकानों में और प्रति दिन बहुत अधिक समय तक काम करने के फलस्वरूप एक तो महामारियाँ फैलने लगीं और दूसरे हड़तालें होने लगीं। मेधावी, किन्तु ग़रीब

लोगों के नेतृत्व में कामगरों ने संगठन करके अपनी यूनियनें बना लीं।

यह एक और नए प्रकार की संस्था थी, एक बहुत विशाल संगठन, जिसमें एक ही प्रकार के काम को करने वाले व्यक्ति सम्मिलित होते थे, भले ही उनमें से प्रत्येक व्यक्ति किसी भी कारखाने में काम क्यों न कर रहा हो। ये यूनियनें अन्तर्राष्ट्रीय तक बन गईं। बहुत शोरगुल और मार-कुटाई के बाद भी उद्योगों के प्रबन्धक-वर्ग इन यूनियनों को दबाने में असमर्थ रहे और अन्ततः उन्हें इन यूनियनों के महत्त्व को एक विशेष कारण से, खास तौर से अमेरिका में, स्वीकार करना पड़ा। इंग्लैंड तथा पश्चिमी यूरोप के अन्य देशों में वस्तुओं का निर्माण मुख्य रूप से निर्यात के लिए किया जाता था। क़ीमतों को कम रखने के लिए मज़दूरों के वेतन भी कम रखने पड़ते थे। अमेरिका में ज्यों-ज्यों हमारे राष्ट्र के लोग पश्चिम की ओर फैलते गए, त्यों-त्यों एक विशाल स्वदेशी बाजार बनता गया; इन खरीदारों में स्वयं वे लोग भी सम्मिलित थे, जो इन कारखानों में काम करते थे। रहन-सहन के उच्चस्तर का अर्थ था अधिक बिक्री और अधिक लाभ। यूरोप के देशों में, जहाँ भूमि थोड़ी-थोड़ी है और जहाँ औद्योगिक समृद्धि से पहले ही शताब्दियों से जनसंख्या सघन रही है, वहाँ जन्म दर अधिक होने के कारण नए मज़दूरों की आवश्यकता पूरी होती रही और कभी मजदूरों की कमी नहीं पड़ी। अमेरिका में, जहाँ भूमि पहले व्यवहारतः बिलकुल खाली रही थी, जन्म दर ऊँची होते हुए भी मज़दूर मुश्किल से मिलते थे। यही कारण है कि पूरे के पूरे जन-समाज सिसली से मैसाचुसैट्स, आब्रुजी से पैन्सीलवेनिया, फ़िनलैंड से मिनैसोटा और जर्मनी से विस्कन्सिन पहुँच गए। जब मज़दूरों की कमी हो और वे लोग स्वयं अपनी तैयार की हुई वस्तुओं के ग्राहक भी हों, तब वेतन ऊँचे स्तर पर रखे जा सकते हैं।

इंग्लैंड, उत्तर-पश्चिमी यूरोप और अमेरिका में अनेक ऐसी व्यवस्थाएँ, जो वस्तुतः सार्वजनिक उपयोग की वस्तु थीं, तथा ढलाई घर और कारखाने गैर-सरकारी प्रबन्ध के अधीन आ गए। रेल की लाइनें, गैस बनाने की कम्पनियाँ जहाज़ चलाने वाली कम्पनियाँ, प्रकाश के लिए बिजलीघर, यहाँ तक कि दूरलेखन (तार) कम्पनियों पर भी गैर सरकारी लोगों का स्वामित्व था। समूचे नगरों को प्रकाश देने योग्य बड़े-बड़े बिजलीघरों के निर्माण के बाद,

जो 1879 में शुरू हुआ था, एकाधिकार का भूत उपस्थित हुआ, जो हमें तेल युग की देहरी तक ले आया है। अनेक अमेरिकावासियों की स्मृतियों में और रूसियों की प्रचार-कथाओं में तेल उद्योग के आविर्भाव का सम्बन्ध अपने वर्गाकृति टोप और रुपयों से भरी हुई जेबों समेत जौन डी, रॉकफैलर के नाम के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है।

रॉकफैलर के नाम का अर्थ 'निगम' (कॉर्पोरेशन) भी है; यह निगम एक नए प्रकार का उद्योग था, जो तेल युग के प्रभात में शुरू हुआ था। जैसा कि हर किसी को मालूम है, रॉकफैलर ने अपने प्रतिस्पर्धियों की अपेक्षा सस्ता माल बेचा और वह एक-एक करके उन सबको तब तक खरीदता गया, जब तक कि उसका एक समूचे आधारभूत उद्योग पर पूरा नियन्त्रण स्थापित न हो गया। यह एक ऐसा उद्योग था, जिसमें न केवल राष्ट्रीय, अपितु विश्वव्यापी उलझनें भी थीं। इस क्षेत्र में वह अकेला नहीं था; कारनेगी, फ्रिक, ड्यू पौण्ट और आर्मर जैसे अन्य नाम भी इतने ही महत्त्वपूर्ण हैं। यूरोप में आई० जी० फारबैन-इण्डस्ट्री ऐनीलाइन रंगों के व्यापार पर विश्वव्यापी एकाधिकार जमाती जा रही थी और स्वीडिश मैच ट्रस्ट इथियोपिया और अल्बानिया जैसे देशों तक से एकाधिकार खरीद रहा था। सन् 1929 में अल्बानिया में रहने वाले पहाड़ी लोग, जो एक पैन्स वाली दियासलाई की डिबिया के लिए 5 सेंट दे पाने में समर्थ नहीं थे, जब उन्हें मौका मिलता था, चकमक और लोहे की गैर-क़ानूनी विधियों का प्रयोग आग जलाने के लिए करते थे, या फिर वे एक-दूसरे से उसी प्रकार आग माँग लाते थे, जिस प्रकार अंडेमान द्वीपों में बौने (पिग्मी) लोग माँग लाते हैं।

जिन लोगों ने इस प्रकार के एकाधिकारों से विशाल धनराशियाँ कमाई थीं, उनमें से अधिकाँश लोग ऐसी संस्थाओं को चलाने के लिए न्यास बना गए हैं, जो सार्वजनिक हित के कार्यों में लगी हैं। परन्तु उसके शत्रु साम्यवादी लोग उनको इस श्रेष्ठ कार्य का भी श्रेय नहीं देना चाहते। सन् 1932 में मैंने लेनिनग्राद में विद्वानों की एक सभा में अमेरिका में मानव-बिज्ञान की प्रगति के सम्बन्ध में एक भाषण दिया था। प्रश्नोत्तर के समय एक रूसी वैज्ञानिक ने मुझ से पूछा—"रॉकफैलर फाउंडेशन से प्राप्त धनराशि के सहारे काम कराने का क्या लाभ है? रॉकफैलर हर एक पृष्ठ को पढ़ेगा और जो भी वाक्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उसकी पूँजीवादी विचाराधारा के प्रतिकूल होगा, उसे काट देगा।" मैं कितना ही यत्न करके भी उस व्यक्ति को या उस सभा में उपस्थित अन्य लोगों को

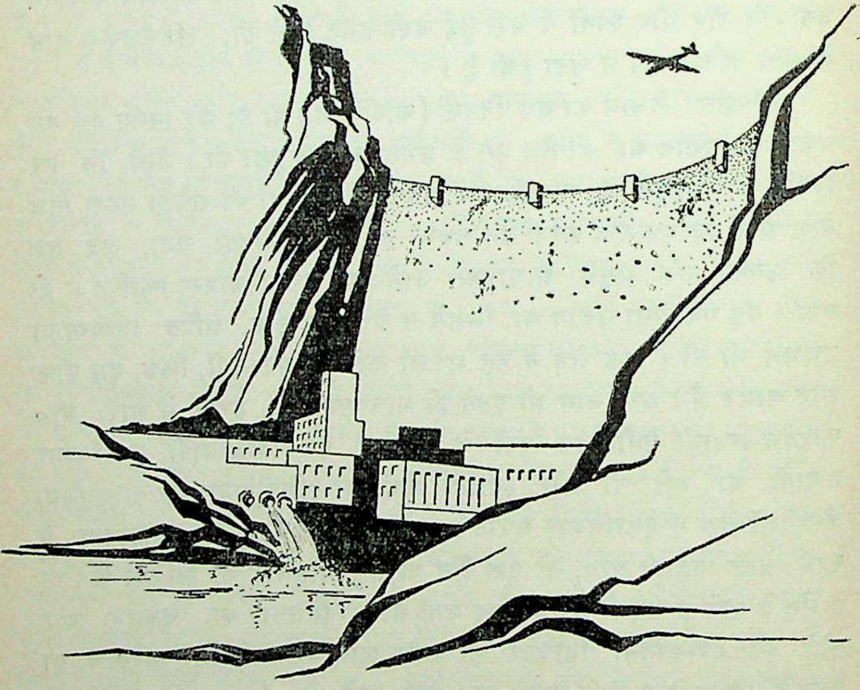

एक पनबिजली बाँध

यह नहीं समझा सका कि मेरी रिपोर्ट को पढ़ने की बात तो दूर, रॉकफैलर को इस बात की बिलकुल ही परवाह नहीं है कि मैंने अपनी रिपोर्ट में क्या लिखा है।

तेल युग में जो निगम बने थे, उन्हें न केवल बाज़ारों के लिए, अपितु कच्चे माल के लिए भी अपनी गतिविधियों को राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर फैलाना पड़ा। पृथ्वी की सतह के नीचे मिट्टी के तेल का विभाजन राजनीतिक आवश्यकताओं की रेखाओं के अनुसार नहीं होता। तेल की खोज में अमेरिकावासी मैक्सिको और वेनेजुला पहुँचे और अंग्रेज़ लोग ईरान। जब 1926 में

ऐल्यूमीनियम के बहुत बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए पनबिजली की शक्ति का उपयोग करने के साथ-साथ अगला युग शुरू हुआ, उस समय हमारे पास बिजली के स्रोतों के निकट दक्षिणी ऐपेलेशियन पर्वतों में बॉक्साइट की प्रचुर मात्रा विद्यमान थी। हमारे निगमों ने ऐल्यूमीनियम के उत्पादन पर सारा ज़ोर दिया, जबकि जर्मनवासियों ने मैग्नीशियम के उत्पादन में विशेषता प्राप्त की, जो ऐल्यूमीनियम से भी अधिक हल्की धातु है।

पनबिजली युग के कारण विमानों का बहुत बड़े पैमाने पर उत्पादन होने लगा और विमानों के कारण विश्व यात्रा एक साधारण बात बन गई। किन्तु इस बीच में आर्थिक संस्थाएँ सरकार के विशेषाधिकारों और उत्तरदायित्वों को हथियाये बिना जितनी दूर तक विकसित हो सकती थीं, उतनी वे विकसित हो चुकी थीं। वे सरकार के विशेषाधिकारों और उत्तरदायित्वों को हथियाने के इतने निकट तक पहुँच चुकी थीं कि अमेरिका में तथा अन्य देशों में सरकारों को इन एकाधिकारों को तोड़ने के लिए, स्वच्छन्द प्रतियोगिता को बनाये रखने के लिए और बड़ी-बड़ी कम्पनियों को उन नए आविष्कारों को, जिनके लिए नए सिरे से मंहगे उपकरण बनाने की आवश्यकता पड़ सकती थी, दबा देने से रोकने के लिए क़ानून बनाने पड़े।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भिक भाग में इंग्लैंड और नैदरलैंड्स में औद्योगिक उन्नति का तात्कालिक परिणाम यह हुआ कि भारत और इण्डोनेशिया में व्यापारिक कम्पनियों का स्थान राजनीतिक शक्ति ने ले लिया। अब प्रतिद्वन्द्वी राजा एक-दूसरे से युद्ध नहीं छेड़ सकते थे और न वे अपने राज्य-क्षेत्रों में रेल लाइनों का बिछाया जाना ही रोक सकते थे। परिवहन अच्छा होने के कारण कच्चे माल को समुद्री बन्दरगाहों तक पहुँचाया जा सकता था और इंग्लैंड में बना लोहे का सामान और सूती कपड़ा भारत में दूर अन्दर के नगरों तक और वहाँ से गाँवों तक भेजा जा सकता था। अपनी क्रान्ति और नैपोलियन के उत्थान के बाद फ्रांसीसियों ने अल्जीरिया पर अधिकार कर लिया और अपने अफ्रीकी साम्राज्य का विस्तार करना शुरू किया। अंग्रेजों, जर्मनीवासियों, इटलीवासियों और बेल्जियमवासियों ने इस काले महाद्वीप (अफ्रीका) के उन हिस्सों पर अधिकार कर लिया, जिन्हें पुर्तगालियों और स्पेनवासियों से छीना जा सका। जर्मनीवासी विश्व-व्यापार के इस

रंगमंच पर बहुत देर में आये; उनके पास यूरोप के सबसे प्रचुर प्राकृतिक साधन विद्यमान थे, फिर भी वे अफ्रीका का केवल एक ज़रा-सा अंश ले पाये और एशिया का कोई भी अंश न ले सके। उनके पास सान्त्वना के लिए न्यूगिनी का केवल थोड़ा-सा भाग, बिस्मार्क द्वीपसमूह और माइक्रोनेशिया के छोटे-छोटे द्वीप थे, जो भारत या जावा या फ़िलिपाइन्स की तुलना में बहुत ही नगण्य थे। उनका एकमात्र बाहर की ओर निकलने का दृश्य मार्ग पूर्व की ओर था, जिधर अल्प-विकसित स्लावी देश स्थित हैं और जहाँ तुर्की साम्राज्य के हट जाने के कारण एक रिक्तता-सी उत्पन्न हो गई थी। दूसरे विश्व युद्ध से पहले तैयार किये गए यूरोप के जातीय मानचित्र में जर्मन लोगों की बस्तियाँ बीच-बीच में दिखाई पड़ेंगी, जिनमें चिलम (पाइप) पीने वाले, जर्मन-भाषाभाषी किसान और व्यापारी रहते थे, जो अपने आस-पास रहने वाले मग्यारों रूमानियावासियों और स्लावों में घुल-मिल नहीं सके थे। ये अग्रगामी लोग अठारहवीं शताब्दी से ही अगले दस्ते के रूप में पूर्व की ओर बढ़ते रहे थे। यदि इनको परस्पर जोड़ा जा सकता; तो ये साम्राज्य के ढाँचे का काम दे सकते थे।

पूर्वी यूरोप के निवासियों द्वारा इस दबाव के विरुद्ध प्रतिरोध के कारण और विश्व व्यापार के लिए जर्मनी के पास कोई समुद्री मार्ग न होने के कारण पहला विश्व युद्ध छिड़ा। उसके कुछ ही समय बाद वुडरो विल्सन के नेतृत्व में, किन्तु उसके अपने देश की सरकार के समर्थन के बिना पहला अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक संगठन बना; यह 'लीग ऑफ नेशन्स' (राष्ट्र संघ) थी, जो अपने आप में एक राजनीतिक विश्व संस्था का एक अपरिपक्व आदि रूप थी और जो इतनी दुर्बल थी कि जर्मनीवासियों को दूसरा विश्व युद्ध छेड़ने से नहीं रोक सकी। दूसरे विश्व युद्ध में वायु शक्ति समुद्री शक्ति पर हावी होने लगी थी। इसका अर्थ यह था कि यदि अन्य सब बातें समान हों, तो जो देश सबसे अधिक ऐल्यूमीनियम तैयार कर सकेगा, उसी की विजय होगी। इस दृष्टि से दो देश समर्थ थे, अमेरिका और जर्मनी। विमानों के लिए धातु के अलावा तेल की भी आवश्यकता होती है और इस क्षेत्र में अमेरिका असंदिग्ध रूप से आगे था, विशेष रूप से तब जबकि अरब देशों के तेल क्षेत्र उसके लिए खुल गए थे; और सम्मिलित राष्ट्रों की जीत हुई।

सन् 1945 में संसार के अधिकाँश राष्ट्रों के प्रतिनिधि संयुक्त राष्ट्र के निर्माण के लिए सानफ्रांसिस्कों में एकत्र हुए। 'संयुक्त राष्ट्र' (युनाइटिड नेशन्स) 'राष्ट्र संघ' (लीग ऑफ नेशन्स) की अपेक्षा कुछ अधिक सशक्त है, किन्तु यह भी रूस के पास वीटो का अधिकार बना रहने के कारण बाधाग्रस्त है और कुछ हाल ही में नये स्वतन्त्र हुए राष्ट्रों के अनुभवशून्य प्रतिनिधियों की कलह और पुराने राष्ट्रों की जोड़-तोड़ के कारण अशक्त बना हुआ है। पुराने साम्राज्यों की समाप्ति हो जाने पर कुछ भूतपूर्व उपनिवेशों में कुछ अव्यवस्था उठ खड़ी हुई है। क्योंकि अब वे अंग्रेज़ और हालेंडवासी वहाँ नहीं हैं, जिनको गालियाँ दी जा सकती थीं और जिनकी आज्ञा का पालन करना पड़ता था, इसलिए भूतपूर्व उपनिवेशों के लोगों को अपनी सड़कों को डाकुओं से सुरक्षित रखना और रेलगाड़ियों को चालू रखना और राजनीतिक हत्याओं को रोकना कठिन हो गया है। मानव-वैज्ञानिक की दृष्टि से जो बात और भी बुरी है, वह यह है कि सीमान्तीय आदिवासी लोगों को पर्णक लोगों (पीपल ऑफ़ दी लीव्ज़) और जंगल में नरमुँडों का शिकार करने वाले लोगों को अब प्रदर्शन की श्रेष्ठ वस्तु नहीं समझा जाता, अपितु परेशान करने वाले ग़रीब सम्बन्धी समझा जाता है, जिन्हें छिपाकर रखा जाना चाहिए या बलपूर्वक बदल डालना चाहिए। सारे संसार के मुखड़े पर एक भद्दी एकरूपता छाती जा रही है।

सन् 1900 तक इंग्लैंड के नेतृत्व में यूरोप के राष्ट्र अपने चरम शिखर पर पहुँच गए थे। संसार ऐसे साम्राज्यों का एक समूह था, जिनमें से प्रत्येक का नाभिक पश्चिमी यूरोप के समुद्र तट के निकट वाले किसी छोटे-से भूभाग में था और उसका शरीर संसार के अन्य महाद्वीपों और द्वीप समूहों में उस नाभिक की अपेक्षा कहीं अधिक बड़े भूमि-खंडों के रूप में था। परन्तु शनैः-शनैः इन बड़े भूमि-खंडों में गौण नाभिक बन रहे थे। ज्यों-ज्यों सिख, पारसी और ब्राह्मण तथा लंकावासी और गोल्ड कोस्ट के मूलवासी अधिकाधिक संख्या में ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज जाने लगे, त्यों-त्यों पश्चिम में शिक्षा-प्राप्त लोगों के बड़े और बड़े समूह बम्बई और कलकत्ता तथा कोलम्बो और आक्रा में परस्पर मिलने-जुलने लगे। अन्य केन्द्रों की भांति इन केन्द्रों में भी उन्होंने अपने विश्वविद्यालय बनाये और दूकानें बनाईं और अपने देशवासियों को

वहीं पर शिक्षा देनी शुरू की। इस्पात की मिलें और बिजली घर बने। जापान में रेलगाड़ी के इंजिन और विद्युत्जनित्र (जैनैरेटर) एशिया में उपलब्ध होने वाली सामग्री से ही बनने लगे। जब ये नाभिक बड़े हो गए, तो कोशिकाओं का विभाजन शुरू हो गया। जिस प्रकार रोमन साम्राज्य विघटित हुआ था, ठीक उसी प्रकार अंग्रेजों का साम्राज्य और हालैंड का साम्राज्य भी ठीक उन्हीं कारणों से विघटित हो गया।

अमेरिका का उत्थान

इस बीच में अमेरिका चुपचाप और बिना किसी की दृष्टि में पड़े विश्व-नेतृत्व की अपनी वर्तमान स्थिति की देहरी तक आ पहुँचा। ज्यों-ज्यों अग्रगामी लोग मैदानों और पहाड़ों तथा प्रशान्त महासागर के समुद्र तट के प्रदेशों को बसाने के लिए पश्चिम की ओर बढ़े, त्यों-त्यों अमेरिका के मूलवासियों की संख्या कम और कम होती गई। खुले भूभागों में रहने वाले उन सभी लोगों की भांति, जिन्हें कभी नागरिक जीवन से वास्ता नहीं पड़ा, वे अमेरिकी मूलवासी 'काली प्लेग' से बचे हुए लोगों के वंशजों द्वारा लाई गई बीमारियों का मुकाबला नहीं कर सके। उन अग्रगामी लोगों ने, जिनके पूर्वज कई पीढ़ियों तक लन्दन और पारी (पैरिस) और मार्सेल्स और राइनलैंड के नगरों की गन्दगी में रहते रहे थे, इन मूलवासियों को चेचक और यक्ष्मा जैसी बीमारियाँ प्रदान कीं। इन बीमारियों ने लोगों का बन्दूकों की अपेक्षा भी कहीं जल्दी सफ़ाया कर दिया। श्वेतजातीय लोगों के शस्त्र श्वेतजातीय लोगों के सीमान्त से भी आगे मूलवासियों द्वारा एक-दूसरे को मारने के लिए बढ़िया शस्त्र बन गए, क्योंकि पश्चिम की ओर बढ़ते हुए लोगों के दबाव के कारण वे मूलवासी एक-दूसरे के शिकार के प्रदेशों में पहुँचने को विवश हो गए थे।

भौगोलिक दृष्टि से संयुक्त राज्य अमेरिका का राज्य क्षेत्र किसी महान् राष्ट्र के निर्माण के लिए बिलकुल आदर्श है। मिस्सीसिपी नदी की चौड़ी घाटी निर्बाध रूप से उत्तर से दक्षिण की ओर फैली हुई है, जो एक विशाल और समृद्ध अभ्यन्तर है। इस घाटी में अतुल कृषिज सम्पत्ति की सम्भावनाएँ भरी हैं और इसमें पर्याप्त मात्रा में लोहे और ताँबे की कच्ची धातु के साथ-साथ कोक बनाने के लिए उपयुक्त पत्थर के कोयले का संसार का सबसे बड़ा

भंडार है; और ये सब वस्तुएँ अन्तर्देशीय प्राकृतिक जलमार्गों के निकट स्थित हैं। सम्भाव्य जलशक्ति की दृष्टि से इसका स्थान केवल अफ्रीका से घट कर है और इसकी नदियाँ सारे साल बहती हैं, जिससे सब ऋतुओं में सुनिश्चित रूप से बिजली प्राप्त होती रह सकती है। पूर्वी समुद्र तट, जिस पर अनेक बन्दरगाह हैं, नौवहन और वस्तुओं के निर्माण के लिए आदर्श था। पश्चिमी समुद्र तट पर संसार भर में किसी भी एक देश के अन्दर पाया जाने वाला भूमध्यसागरीय जलवायु का सबसे बड़ा भूभाग है, जहाँ नींबू जातीय फल (सन्तरा मौसम्बी आदि) और बागीचों में होने वाली अन्य उपज बहुत बड़ी मात्रा में उत्पन्न की जा सकती है और इसका उत्तरी भाग सर्वोत्तम कोटि की विशालकाय इमारती लकड़ी के ऐसे जंगलों से भरा है, जो सम्भाव्यतः आधुनिक-काल में बचे हुए संसार के सर्वश्रेष्ठ जंगल हैं।

मज़दूरों की कमी के कारण मेहनत बचाने वाले उपकरणों का उपयोग आवश्यक हो गया। बस्तियाँ दूर-दूर होने के कारण यहाँ बसने वाले लोगों को यह प्रेरणा मिली कि वे अपने औज़ारों की मरम्मत स्वयं ही कर लें और इस प्रकार वे कूप-मंडूक बनने से बचे रहे। अत्यधिक विशेषज्ञता लाभदायक नहीं थी। क्योंकि अमेरिकी उद्योगों का प्रधान बाजार उनके अपने देश में ही था, इसलिए वे अपने रहन-सहन का स्तर ऊँचा कर सकते थे और क्योंकि स्वतःचालित मशीनें निरन्तर बढ़ती रहीं, इसलिए प्रतिदिन बहुत अधिक समय तक थकाने वाले काम करने की आवश्यकता कम हो गई। बच्चों के लिए कारखानों में काम करने की आवश्यकता न रही। उनके लिए विद्यालय में पढ़ने जाना कहीं अधिक अच्छा था। ज्यों-ज्यों नए राज्य इस संघ में सम्मिलित हुए, त्यों-त्यों छोटे-छोटे महाविद्यालय बनने लगे और शीघ्र ही बड़े-बड़े राजकीय विश्वविद्यालय स्थापित हुए। आज साक्षरता की दृष्टि से और विद्यालय तथा महाविद्यालय में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा बिताये गए वर्षों की औसत संख्या की दृष्टि से अमेरिकावासी संसार के सबसे अधिक शिक्षित लोग हैं। अमेरिका में कालेज की डिग्री प्राप्त किये हुए लोगों की प्रतिशत संख्या संसार के अन्य किसी भी राष्ट्र की अपेक्षा अधिक है।

संसार में अन्य किसी देश में इतने अधिक संघ (असोसियेशन) नहीं बने। अनेक भ्रातृभावयुक्त समुदाय, जैसे मेसन्स और ऐल्क्स, पंगु बच्चों के लिए

आश्रमों जैसी दान से चलने वाली संस्थाएँ, रैड क्रॉस, कम्युनिटी चैस्ट, माता-पिता-शिक्षक संघ जैसी शब्दशः हज़ारों संस्थाएँ लगभग हर एक अमेरिकावासी को एक ऐसे जाल में बाँधे रखती हैं, जो हमारी समाज-व्यवस्था को अन्य किसी भी राजनीतिक संगठन की अपेक्षा कहीं कम कष्टदायक रूप से संभाले रखता है। इन संस्थाओं में से कुछ स्थानीय हैं, कुछ राष्ट्रीय हैं और कुछ अन्य अन्तर्राष्ट्रीय, और यहाँ तक कि अन्तर्राष्ट्रीय रैड क्रास और बालचरों की भाँति विश्वव्यापी हैं। वे हमें परस्पर और शेष संसार के साथ भी बाँधे रखती हैं।

एक और तत्व जिससे हमें अन्तर्राष्ट्रीयता की अनुभूति होती है, अन्य देशों के लोगों के साथ हमारी वास्तविक रिश्तेदारी है। अनेक अमेरिकावासियों के सम्बन्धी आयरलैंड में, पुर्तगाल में, जर्मनी में, इटली में, लेबनान में और अन्य देशों में रहते हैं। एक राष्ट्र के रूप में हमारे लिए अपने में से कुछ व्यक्तियों की भावनाओं को चोट पहुँचाये बिना किसी अन्य राष्ट्र से अधिकृत रूप से रुष्ट हो पाना असम्भव है और अन्य राष्ट्रों के मध्य होने वाले विवादों में हममें से कुछ लोग सदैव भावना की दृष्टि से दोनों पक्षों से सम्बद्ध होते हैं। यह एक दायित्व भी है और साथ ही एक परिसम्पति भी। विश्व नेतृत्व के एक ऐसे काल में, जिसमें कि अमेरिकावासियों को न चाहते हुए भी आगे आना पड़ा है, इसका उपयोग एक परिसम्पति के रूप में किया जाना चाहिए।

20 वर्ष पहले एक औसत अमेरिकी कुटुम्ब में एक पिता, माता और तीन बच्चे होते थे; एक नौकरानी होती थी, जो अटारी में सोती थी और रसोईघर में काम करती थी। बहुधा दैनिक मजूरी पर रखा गया एक मनुष्य दूर्वास्तिर (लॉन) की घास काटता था और भट्ठी की देखभाल करता था। बाज़ार के सामान बेचने वाले लोग पिछवाड़े के दरवाज़े पर खाद्य सामग्री दे जाते थे; दूध वाले और बर्फ़ वाले भी अपना सामान वहीं दे जाते थे और अखबार वाला छोकरा सामने वाले दरवाज़े पर अखबार डाल जाता था। परिवार अब भी उतना ही है, किन्तु नौकरानी नहीं रही है और न कोई अटारी ही है। सामान दे जाने वाले लोग और वर्फ वाला, सब समाप्त हो गए हैं और अखबार डालने वाले छोकरे का उत्तराधिकारी 'डेली सैण्टीनल' (अख़बार) को एक तेज़ी से दौड़ती हुई मोटर में से कोठी के मोटर मार्ग की कीचड़ में फैंक जाता है। माता शाम का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भोजन एक बिजली की अंगीठी पर पकाती हैं; बर्फ़ में जमाये हुए मटरों की टिक्की कुछ मिनटों में ही गलकर तैयार हो जाती है और शतावर का साग दबावपाची (प्रेशर कुकर) में कुछ ही सैकिंडों में गलकर तैयार हो जाता है। भोजन कर चुकने के बाद बर्तन धोने की बिजली की मशीन रसोईघर के काम को आधे घण्टे से भी कम में समाप्त कर देती है। तब लड़की पड़ोसी के शिशु के पास बैठने के लिए चली जाती है और पिता पैट्रोल से चलने वाली घास कतरने की मशीन से मैदान की घास कतर कर टेलीविजन के पास बैठकर कुश्तियाँ देखता है।

इसका अमेरिकन परिवार पर क्या प्रभाव पड़ा है ? दिन में जिस समय पिता काम पर होता है, उस समय माता अपनी क्लबों में या अपनी सहेलियों से गपशप करने चली जाती है। लड़की कालेज जाती है और वहाँ से डिग्री प्राप्त कर लेती है। जब उसका विवाह हो जाता है, तब वह अपने पति को स्नातक विद्यालय (ग्रैजुएट स्कूल) की शिक्षा प्राप्त करने में सहायता देने के लिए कुछ समय तक काम कर सकती है और जब बच्चा हो जाता है, तब वह अपनी सन्तान को उसकी अपेक्षा कहीं अधिक उपयोगी ज्ञान दे सकती है, जितना कि उसकी दादी दे पाती थी। नौकरों के हट जाने से परिवार को अपेक्षाकृत अधिक एकान्त प्राप्त हो गया और उसके सदस्यों में घनिष्ठता बढ़ गई है। मेहनत बचाने वाली मशीनों के बन जाने के फलस्वरूप स्त्रियों को अपेक्षाकृत अधिक अच्छी माताएँ बनने का अवसर मिला है। जैव (प्राणीवैज्ञानिक) परिवार को क्षति नहीं पहुँची। दूसरी ओर, आधुनिक रहन-सहन भाई को भाई से और पिता को पुत्र से अलग कर देता है, जिससे बड़े परिवार का महत्त्व कम हो गया है। इससे व्यक्ति को पहले की अपेक्षा अधिक सामाजिक चलिष्णुता मिल जाती है, और वह अपने माता-पिता या भाई-बहनों के स्तर पर बंधा नहीं रहता। अधिक सामाजिक चलिष्णुता का अर्थ है—जनशक्ति की अधिक कार्यक्षमता।

हम अमेरिकावासी इस स्थिति तक पहुँच पाने में इसलिए समर्थ हुए हैं, क्योंकि हम अपने प्राकृतिक साधनों का और फलतः अपनी संस्कृति का विकास किसी सीमा तक विच्छिन्न रहकर कर पाये हैं। यूरोपीय राष्ट्रों से हममें यह अन्तर है कि हम व्यापार की आवश्यकताओं के कारण समुद्र-पार के देशों से बँधे नहीं रहे। जब हमने कुछ उपनिवेशों पर अधिकार किया भी, जैसा कि

हमने फिलिपाइन्स में किया था, तब भी हमने उन्हें स्वेच्छा से छोड़ दिया; इसका अंशतः कारण यह था कि हम यह नहीं चाहते थे कि वे शुल्क (ड्यूटी) न लगने वाली सामग्रियों के उत्पादन में हमारे अपने, उपोष्ण कटिबन्धीय (उष्ण कटिबन्ध से नीचे के) प्रदेशों के साथ प्रतियोगिता करें। अब स्थिति बदल गई है और हम मिट्टी के तेल और कच्ची धातुओं जैसी आधारभूत सामग्रियों के और विशेष रूप से यूरेनियम और इस्पात को कठोर करने के लिए आवश्यक कुछ दुर्लभ धातुओं का आयात करने लगे हैं।

न केवल एक आयातकर्ता के रूप में अपितु संसार की सबसे बड़ी शक्ति के रूप में और संसार के उस आधे भाग के नेता के रूप में, जिसमें से होकर सांस्कृतिक प्रगति की मुख्य धारा निरन्तर आगे बढ़ती रही है, इस समय हमारा ध्यान मुख्यतया कोई ऐसा उपाय खोज निकालने की ओर है, जिससे संसार के दूसरे आधे भाग में जो कुछ हो रहा है, उसे रोका जा सके। बारूद युग का आरम्भ होने से पहले यह सम्भव था कि संसार के विभिन्न भागों में साम्राज्य बन जाते और उन्हें एक-दूसरे के अस्तित्व का पता तक न चलता। उसके बाद ऐसी स्थिति आई कि वे सब साम्राज्य साथ-साथ बने रह सकते थे, हालाँकि वे समय-समय पर लड़ाइयाँ लड़ने के लिए दो पक्षों में संगठित हो जाते थे। परन्तु अब वे ऐसा नहीं कर सकते। पृथ्वी इतनी छोटी है कि इस पर दो प्रतिद्वन्द्वी व्यवस्थाओं का साथ-साथ अस्तित्व नहीं रह सकता, विशेष रूप से तब जबकि उनमें से एक का मुख्य उद्देश्य सारे संसार को विजय करना है। बिलकुल स्पष्ट रूप से हमारा पहला काम रूस को समझना है और इस काम के लिए सारे अमेरिका में अनुसन्धान-संस्थाओं को प्रचुर धनराशी दी जा रही है। यह काम आसान नहीं है, क्योंकि जापान के उद्घाटित होने के बाद से अब तक अन्य किसी देश ने अन्य देशों द्वारा समझे जाने के प्रति इतनी अरुचि नहीं दिखाई, जितनी कि रूस ने दिखाई है। परन्तु हमें कुछ आधारभूत तथ्यों का ज्ञान है, जो यद्यपि स्वतः स्पष्ट हैं, किन्तु जिनकी बहुधा मनोवैज्ञानिक वादों और अन्य रामबाण उपायों के मुकाबले में, उपेक्षा कर दी जाती है; ये वाद और रामबाण उपाय आये साल बदलते रहते हैं, जबकि तथ्य ज्यों के त्यों रहते हैं।

सोवियत रूस की सामाजिक संरचना

सोवियत रूस का राज्य क्षेत्र, जिसमें द्वितीय विश्व युद्ध में हथियाये बाल्टिक देश भी सम्मिलित हैं, 85 लाख वर्ग मील, अर्थात् दक्षिणी ध्रुव प्रदेश को छोड़कर सारी पृथ्वी के स्थल भाग का छठा अंश, अथवा समूचे दक्षिणी अमेरिका महाद्वीप जितना बड़ा तो है, किन्तु उसमें पाये जाने वाले जल-वायु का वितरण बहुत ही विषम है। उसका दस प्रतिशत भाग टुंड्रा में है; यह उत्तरी ध्रुव प्रदेश की पंकिल दलदली भूमि है, जिसे अलास्का और कनाडा में मस्केग' कहा जाता है। यह प्रदेश केवल परमाणु बमों के परीक्षणों के लिए ही उपयुक्त है। 35 प्रतिशत भूमि उत्तरी वनों की भूमि है, जो अक्षांशों की दृष्टि से बहुत उत्तर की ओर की है और जो झाऊ (स्प्रूस) और श्रीदारु (लार्च) से भरी है; यह प्रदेश इतना ठंडा है कि यहाँ खेती नहीं हो सकती और केवल जंगली लकड़ियाँ काटने, जानवरों को फंसाकर शिकार करने, रैनडियरों के रैवड़ पालने और खानें खोदने के लिए भला है। केवल 8 प्रतिशत प्रदेश, जिसका अधिकाँश भाग लेनिनग्राद और मास्को के बीच में और हाल ही में हस्तगत किये गए बाल्टिक राज्यों में स्थित है, मध्य अक्षांशों के वनों का प्रदेश है, जो जर्मनी, फ्राँस और इंग्लैंड के अधिकाँश भाग के भूदृश्य से मिलता-जुलता है और जो उस प्रकार का भूदृश्य है, जिस पर कि पश्चिमी यूरोप और अमेरिका में औद्योगिक सभ्यता का विकास हुआ था। संयुक्त राज्य अमेरिका का 42 प्रतिशत प्रदेश मध्य अक्षाँश वाला वन प्रदेश है, जो अनुपाततः और कुल मिलाकर भी रूस के इस प्रकार के प्रदेश की अपेक्षा अधिक है। आधुनिक यंत्र-युग के राष्ट्रों के लिए इस प्रकार की भूमि संसार की सर्वोत्तम भूमि है।

सोवियत रूस की 30 प्रतिशत भूमि घास के मैदानों, तरुहीन मैदानों (प्रेयरी स्टैप्पी) की भूमि है; अमेरिका में इस प्रकार की भूमि 23 प्रतिशत है। यह अन्न उत्पन्न करने वाला प्रदेश है, जहाँ अनेक नए उद्योग स्थित हैं। जहाँ कैलिफोर्निया में हमें भूमध्यसागर के जलवायु वाली 5 प्रतिशत भूमि प्राप्त है, वहाँ रूस में इस प्रकार की भूमि केवल 1 प्रतिशत है, जो क्रीमिया के दक्षिणी समुद्र तट पर स्थित है, जिसका केन्द्र याल्ता है। हमारे यहाँ फ्लोरिडा में जो 2 प्रतिशत उपोष्ण कटिबन्धीय भूमि है, उसके जोड़ की भूमि रूस में बिलकुल है ही नहीं। उनके

यहाँ 10 प्रतिशत पहाड़ हैं, जबकि हमारे यहाँ केवल 8 प्रतिशत हैं। वे दोनों ही देश खनिज सामग्रियों की दृष्टि से समृद्ध हैं। किन्तु जब हम कृषिज उपज पर और उद्योगों के लिए उपयुक्त भूमि पर विचार करते हैं, तो रूस की स्थिति अमेरिका की अपेक्षा घटिया ठहरती है। हमारे मुकाबले में परिष्कृत रहने की जगह के लिए रूस को जिस वस्तु की आवश्यकता है, वह है अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में मध्य अक्षाँश वाले वनों का प्रदेश और अपेक्षाकृत अधिक भूमध्यसागरीय जलवायु वाले और उष्ण कटिबन्धीय ऐसे प्रदेश, जो अंग्रेजों के उपनिवेशों की भाँति स्वदेश से समुद्र द्वारा पृथक् न हों, अपितु एक अविच्छिन्न स्थल भाग द्वारा उससे मिले हुए हों।

चैकोस्लोवाकिया, हंगरी, पूर्वी जर्मनी और पोलैण्ड पर अधिकार करके रूसियों ने मध्य अक्षाँश वाले प्रदेश प्राप्त कर लिए हैं, जिनकी उन्हें आवश्यकता थी। ईरान का कास्पियन समुद्र का तट उनके लिए भूमध्यसागरीय जलवायु का बहुत बढ़िया प्रदेश बन सकेगा, इस प्रदेश में सन्तरे, मौसम्बी जैसे खट्टे फल; चाय, तम्बाकू और स्थानीय रेशम उद्योग के लिए शहतूत की पत्तियों की खेती अब भी होती है। इस प्रदेश से उन्हें मिट्टी का तेल भी और अधिक मिल सकेगा और उस मछली के अचार (कैवियार) के प्रदेश पर भी नियन्त्रण प्राप्त हो जाएगा, जो उन्हें बहुत ही पसन्द है। चीन होकर उत्तरी वियतनाम और लाओस तक फैल जाने पर उनकी पहुँच उन उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों तक हो जाएगी, जिनमें मिट्टी का तेल; रबड़ और वंग (राँगा) प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। यदि वे इन प्रदेशों को आत्मसात् करने में सफल हो गए, तो वे सारतः चंगेज़खाँ के साम्राज्य वाली सीमाएँ फिर बना चुके होंगे।

सोवियत संघ सच्चे अर्थ में एक साम्राज्य है, क्योंकि इसमें अनेक विभिन्न जातियों के लोग रहते हैं। इसके 21 करोड़ निवासियों में आधे से भी कम बड़े रूसी (ग्रेट रशियन्स) हैं लगभग 14 प्रतिशत युक्रेनवासी हैं और तीन प्रतिशत बियैलो रूसी (श्वेत रूसी) हैं। ये दोनों अपनी स्लावी भाषाएँ बोलते हैं और अपनी ऐतिहासिक परम्पराओं में गर्व अनुभव करते हैं। यूराल पर्वतों के प्रदेश में जहाँ नए रूसी उद्योग स्थापित किये गए हैं, 65 लाख तातार और वहाँ के मूलवासी फिन्न लोग इस समय काफी महत्त्वपूर्ण अल्पसंख्यक वर्ग हैं; यह देश कुछ शताब्दी पहले अनन्य रूप से उनका अपना ही था। जार्जियावासी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और अज़रबेजानी तुर्क लोग, दोनों ही लगभग तीस-तीस लाख हैं, उजबेक और कज्जाक साठ-साठ लाख हैं और आर्मीनियावासी, तुर्कमानी, किरघिज़ और ताजिक लोग पन्द्रह-पन्द्रह लाख हैं।

यह स्मरण रखना चाहिए कि इनमें से प्रत्येक जातीय समूह अपने अलग प्रदेश में रहता है, जिसमें कि वह चिरकाल से रहता आ रहा है और यह, कि इनमें से 2 करोड़ 30 लाख मुसलमान हैं, जिन्हें अनीश्वरवाद पसन्द नहीं है; और कम से कम 1 करोड़ 60 लाख तुर्क लोग हैं, जिनके शक्तिशाली सम्बन्धी पर्वतों के पार निवास करते हैं। जब अमेरिकावासी पश्चिम की ओर फैले थे, तब सब प्रकार के लोग प्रत्येक प्रदेश में पहुँचे थे। जर्मनीवासियों ने यहाँ पहुँचकर खेती शुरू की, यहूदियों ने व्यापारिक केन्द्र बनाए, अंग्रेज प्रव्रजकों ने पशुपालन केन्द्र खोले और बास्क लोगों ने भेड़ों के रेवड़ पाले। परन्तु इनमें से कोई भी व्यवसाय ऐसा नहीं था, जिसमें केवल किसी एक ही जाति के लोग काम करते हों,, अपितु सब लोग परस्पर घुल-मिल गए थे। सब अमेरिकी बन गए थे और अब तक भी हैं। जब रूसी लोग पूर्व की ओर बढ़े, तब उत्तर की ओर के वनों और दक्षिण की ओर के मरूस्थलों के बीच की कृषि योग्य संकरी पट्टी में तो उन्हें प्रतिरोध करने वाला कोई न मिला, किन्तु तुर्किस्तान में और मध्य एशिया के मैदानों में उनका सामना उन सभ्य लोगों से हुआ, जो उस भूमि पर खूब घने बसे हुए थे, जिन्होंने सिंचाई की नहरें बनाई हुई थीं और व्यापार तथा हस्तनिर्मित वस्तुओं के आधार पर जिनके बड़े-बड़े नगरीय केन्द्र बने हुए थे। इन लोगों को केवल एक राजाज्ञा द्वारा रूसी नहीं बनाया जा सकता था।

ज़ार शासकों के दिनों में ईरानी काल से चली आ रही प्रत्येक सच्चे साम्राज्य की पुरानी साम्राज्य-नीति का पालन किया गया। प्रत्येक जाति के प्रजाजनों को तब तक अपने ढंग से रहने दिया जाता था, जब तक कि उसके सदस्य शान्ति बनाए रखें और कर देते रहें। सोवियत शासन प्रणाली के आरम्भिक दिनों में सरकार ने सोवियत संघ के स्थानीय लोगों को अपनी प्राचीन सभ्यताओं में गौरव की अनुभूति को प्रोत्साहन देने के लिए संस्थान स्थापित किये थे और शीघ्र ही दर्जनों ग्राम्य भाषाओं में उन ध्वनि-आधारित वर्णमालाओं में समाचारपत्र भी छपने लगे थे, जो इसी काम के लिए

आविष्कृत की गई थीं। लेनिनग्राद में उत्तरी लोगों के संस्थान में जहाँ मैं सन् 1932 में गया था, चुकची, तुंगुस और अन्य अनेक भाषाओं में दर्जनों बालपोथियाँ छापी गई थीं, जिनमें रेनडियर के शिकारियों को यह समझाया गया था कि वे ब्रूश से अपने दाँत किस प्रकार साफ करें और स्तालिन की स्तुति किस प्रकार करें।

इसके कुछ वर्ष बाद यह नीति बदल गई। अवश्य ही यह अनुभव किया गया होगा कि ये कबीले और राष्ट्र उतनी जल्दी अच्छे सोवियत नहीं बन रहे हैं, जितनी जल्दी बनने की आशा की गई थी और इसलिए उन स्थानीय संस्कृतियों को समाप्त करने के लिए यत्न किया गया, जिनका साम्यवादी आदर्शों से विरोध था। उसके बाद इन महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में, विशेष रूप से ईरान और अफगानिस्तान के सीमान्तों के साथ-साथ, बड़ी संख्या में रूसियों को लाकर बसाया गया। द्वितीय विश्वयुद्ध में जब जर्मनी की सेनाएँ काकेशस से वापस लौट गई थीं, तब समूचे के समूचे राष्ट्रों को, जिनमें वोल्गा जर्मन, काकेशस के चेचन और इंगुश, और क्रीमिया के तातार और कालमुख भी सम्मिलित थे, या तो मार डाला गया या निर्वासित कर दिया गया।

इस नीति-परिवर्तन का कारण, अवश्य ही, विरोधी समझे जाने वाले बाह्य जगत् के मुकाबले में एकता स्थापित करने की इच्छा थी; यह वही इच्छा थी, जिसके कारण बोल्शेविक क्रान्ति के दिनों में तथाकथित बूर्जुआ वर्ग को देश से बाहर निकाल दिया गया था। पीटर महान् तथा अन्य ज़ार शासकों के प्रयत्नों से दसियों हज़ार जर्मनीवासी, फ्राँसवासी, अंग्रेज, हंगरीवासी और पश्चिमी यूरोप के अन्य लोग व्यवसाय और कारखाने स्थापित करने के लिए रूस के शहरों में पहुँचे थे; यहाँ उन्होंने मध्यम वर्ग के लोगों के ठीक वे ही उद्यम स्थापित किये थे, जो उनके अपने देशों में बहुत सफल रहे थे। समूह के रूप में ये लोग कभी भी रूसियों के साथ घुल-मिलकर एक नहीं हो सके। रूसी क्रान्ति के समय जो भी रूसी उद्व्रजक (ऐमिग्रो) अपने देश से बाहर निकाले गए थे, उनमें से प्रत्येक आपको यह बतायेगा कि वह अंशतः स्वीडनवासी, अंशतः स्कॉटलैंड-वासी, अंशतः फ्राँसीसी या इसी प्रकार अंशतः कुछ अन्य है; उनमें मुश्किल से ही कोई ऐसा होगा, जो पूरी तरह रूसी हो। यद्यपि वह अपने आपको रूसी समझता था, किन्तु जिन कामगरों और विद्यार्थियों ने क्रान्ति शुरू की थी,

वे उसे विदेशी समझते थे। बूर्जुआ वर्ग से मुक्ति पाने की धारणा, जो मूलतः किसी जनसंख्या के अन्दर एक विशिष्ट वर्ग से मुक्ति पाने की मार्क्सवादी धारणा थी, एकता के लिए आवश्यक, विदेशी लोगों के प्रति घृणा की धारणा में बदल गई।

इसी प्रेरणा के कारण अनीश्वरवाद को अपनाया गया। दर्जनों अलग-अलग जातियों को जिनमें से प्रत्येक अपने रीति-रिवाजों, अपनी भाषा, अपनी लोकगाथाओं और धर्म के ढाँचे के अन्दर रह रही थी, साम्यवाद का औचित्य समझाया जाना था। उस समय, कम से कम शुरू में रूसी लोग इतने शक्तिशाली नहीं थे कि बल प्रयोग करके उन्हें वश में रख सकते। इसलिए उन्होंने उन लोगों को उनकी निजी वर्णमालाएँ और समाचार-पत्र देकर अपनी नई शासन व्यवस्था को उनके लिए आकर्षक बनाने का यत्न किया और उन लोगों को अपनी राष्ट्रीय क्रीड़ाओं, कलाओं और वेशभूषाओं को समृद्ध करने के लिए प्रोत्साहन दिया। किन्तु एकता में बड़ी बाधा यह प्रश्न नहीं था कि बकरी की खाल के बने बैग-पाइप अच्छे हैं या वायलिन, लहंगे अच्छे हैं या पायजामे, या यहाँ तक कि घेरे वाले टोप अच्छे हैं। या फैज़ टोपियाँ या पगड़ियाँ, जैसा कि तुर्की और ईरान में मुस्तफा कमाल और रज़ाशाह ने सोचा था, अपितु वह बाधा था—धर्म। विभिन्न लोगों के मध्य धार्मिक भेद-भाव को मिटाने के लिए कुछ न कुछ किया जाना आवश्यक था, क्योंकि धर्म न केवल उन्हें परस्पर विभक्त किये हुए थे, अपितु वे देश से बाहर की शक्तियों के साथ भी उनका सम्बन्ध जोड़ते थे।

जिस समय तकनीकी और वैज्ञानिक परिवर्तन तेज़ी से हो रहे होते हैं, उस समय धर्म को परास्त करना विशेष रूप से आसान होता है, क्योंकि धर्म की भाषा प्राचीन होती है और उसके प्रतीक आधुनिक आविष्कारों द्वारा एक ऊपरी और तात्कालिक अर्थ में अमान्य हो जाते हैं। यदि पृथ्वी गोल है, तो स्वर्ग किस जगह स्थित है? जिस समय आदिमकालीन और मध्यकालीन संस्कृतियों के स्तर पर जीवन-यापन करने वाले लोग बिजली की बत्तियों, रेडियो और मोटरगाड़ियों की नवीनताओं को पहले-पहल देखते हैं, उस समय धार्मिक विश्वास की स्थिति इतनी डाँवा-डोल होती है कि उसके ऊपर ऐसी ज़बरदस्त चोट की जा सकती है कि वह फिर उस प्रकार संभल नहीं सकता,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जैसे कि वह अब अमेरिका में फिर संभल गया है। इसीलिए महान् मानव-वैज्ञानिक बोगोरास ने, जिसने एक बार 'अमेरिकन म्यूज़ियम ऑफ नैचुरल हिस्ट्री' के लिए बेरिंग जलडमरूमध्य के चुकची नामक स्थान की यात्रा की थी, मास्को में एक अनीश्वरवादी संग्रहालय स्थापित किया, जिसमें उसने सोवियत संघ की सब जातियों की प्रतिमाओं और धार्मिक चित्रों का एक संग्रह इस ढंग से व्यवस्थित करके रखा कि देखते ही हास्यास्पद जान पड़े।

इन बदनाम कर दी गई धार्मिक व्यवस्थाओं के कारण उत्पन्न हुए रिक्त स्थान में उनकी जगह लेने के लिए यह आवश्यक था कि कुछ ठोस और एक-रूप प्रतीकों का समूह प्रस्तुत किया जाय। स्पष्टतः यह प्रतीक राज्य की पूजा थी और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, यह प्रतीक स्तालिन को देवता के रूप में प्रस्तुत करना बन गया; उसका मुस्कराता हुआ चेहरा, जिसके चेचक के दाग़ सफाई से मिटा दिये गए थे, हर दीवार पर और हर महत्त्वपूर्ण परेड में एक 40 फीट ऊँचे झंडे पर दिखाई पड़ता था। यह एक ऐसी वस्तु थी, जिसमें हर कोई विश्वास कर सकता था, ऐसी वस्तु, जो उन सबको संगठित करके एक बनाए रख सकती थी, फिर चाहे उन पर कितना ही अत्याचारपूर्ण शासन क्यों न किया जाता रहे और उनका रहन-सहन का स्तर चाहे कितना ही नीचे क्यों न गिर जाए।

परन्तु कोई भी चर्च-राज्य—साम्यवादियों ने जो वस्तु इस प्रकार बनाई थी वह चर्च-राज्य ही थी—केवल तभी तक बना रह सकता है, जब तक कि वह अन्य देशों के लोगों से बिलकुल विच्छिन्न (अलग-अलग) रहे। यह बात हम मिश्र और 'इन्का' लोगों के पेरू के विषय में देख चुके हैं; यह बात तिब्बत और यमन के बारे में भी उतनी ही सत्य थी। मिश्र का सम्बन्ध मरूस्थलों और दलदल भरे डेल्टा के कारण बाहर की दुनिया से कटा हुआ था; पेरू, तिब्बत और यमन का सम्बन्ध तुंगता (ऊँचाई) के कारण शेष संसार से विच्छिन्न था। इनमें से प्रत्येक मामले में जब भी एक बार बाहर के लोगों ने रोक को तोड़कर अन्दर प्रवेश किया, तभी राज्य या साम्राज्य समाप्त हो गया—मिश्र में इस प्रकार का प्रवेश हाइक्सौस, असीरियावासी, ईरानी और यूनानवासी लोगों ने किया था; तिब्बत में चीनी साम्यवादियों ने दलदली भूमि को बर्फ़ पर चलकर पार करके प्रवेश किया; और यमन में तुर्क लोगों ने

प्रवेश किया। क्योंकि सोवियत रूस भौगोलिक दृष्टि से शेष संसार से विच्छिन्न नहीं है, इसीलिए उसे एक मनुष्य-निर्मित पर्दा खड़ा करके ऐसी दशा उत्पन्न करनी पड़ी।

अमेरिका भी एक प्रकार की विच्छिन्नता की दशा में रहकर ही महान् बना है। किन्तु हमारा बाह्य जगत् के साथ सम्पर्क कभी भी पूरी तरह कटा नहीं। हमारे देश में आने वाले आव्रजक अपने पुराने देश में रहने वाले सम्बन्धियों से पत्र-व्यवहार करते रहे, जिनमें से अनेक को वे धन भी भेजा करते थे। हम अपने आपको भाग्यवान समझते थे और कोई कारण नहीं था कि हमारी सरकार बाहर के लोगों के साथ सम्पर्क को क्यों रोकती। जिस भी अमेरिकावासी को अमेरिका में रहना पसन्द न हो, उसे छूट थी कि वह फिर यूरोप लौट जाय और कुछ लोगों ने ऐसा किया भी। दूसरी ओर, विच्छिन्नता के लिए रूस के हठ ने उसके महान् बनने के प्रयत्न में बाधा डाली है, क्योंकि शुरू से ही वहाँ प्रशिक्षित कर्मचारियों का अभाव था; वहाँ एकता नहीं थी वहाँ सामुदायिक जीवन की वह ग्रामीण पद्धति विद्यमान थी, जो नव-पाषाणिक काल से चली आ रही थी। हमने तो अपने विशाल यन्त्रीकृत फार्म गैर सरकारी पूँजी से, खाली पड़े तरूहीन मैदानों में बनाए थे, किन्तु रूसियों ने यही कार्य किसानों को अपने गाँवों से निकालकर सामूहिक फार्मों में संगठित करके करना चाहा।

रूसी जीवन में ध्यान देने योग्य बात यह है कि वहाँ राज्य के अलावा अन्य किसी भी संस्था का विकास बहुत ही कम हुआ है। हमारे अनगिनत स्वेच्छा से संगठित क्लबों और असोसियेशनों के मुकाबले में रूस में बहुत थोड़े संगठन दिखाई पड़ते हैं और जो हैं, वे सब भी सरकार द्वारा प्रेरित हैं। सोवियत रूसियों ने न केवल चर्च (धर्म) पर चोट की, उन्होंने शीघ्र ही परिवार की संस्था पर भी एक घातक चोट की; उन्होंने बच्चों को राज्य द्वारा संचालित शिशु-शालाओं में भेजना शुरू कर दिया और उनकी माताएँ काम पर जाने लगीं; उन्होंने विवाह-विच्छेद को स्वतः प्रभावी बना दिया और गर्भपात निःशुल्क किये जाने लगे; और लोगों को इतने तंग निवास स्थान दिये गए कि उनमें किसी प्रकार का एकान्त नहीं रहा। यह व्यवस्था सफल नहीं हुई, किन्तु मकानों की कमी के कारण एकान्त का अभाव अब तक बना हुआ है। एक

विचक्षरण प्रेक्षक ने कहा है।[1] "ऐसा प्रतीत होता है कि साम्यवाद लोगों को अधिक स्वार्थी और केन्द्रित बना देता है। लोग अपने दिन का इतना अधिक भाग सर्वशक्तिमान और अधिकाधिक माँग करने वाले राज्य के लिए और 'सबके भले के लिए' काम करने में बिता देते हैं कि अपने निजी जीवन में अपने खाली समय में, अपने मूल्यवान छुट्टी के घंटों में वे बिलकुल स्वभावतः केवल अपने लिए जीते हैं और पुरानी पाशविक सहज वृत्तियों के अनुसार जान-बूझ कर अन्य हर किसी की उपेक्षा करते हैं।"

साम्यवादियों का आदर्श भौतिकवाद है, इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं कि यूरोप में रहने वाले रूसी सैनिकों को जब पश्चिमी नलकारी (प्लम्बिग) का उपयोग करना आ जाता है, तो वे अपनी नौकरी छोड़कर भाग जाते हैं। परन्तु जब हमारे पूर्वजों ने शिकारी के रूप में सुदूर इतिहास में किसी समय यह खोज की थी कि सब मनुष्यों को अवश्य कभी न कभी मरना है, तब से लेकर अब तक भौतिकवाद मानव मन को शान्ति देने के लिए सदैव अपर्याप्त रहा। भौतिकवाद उसी प्रकार दूषित विज्ञान की उपज है जिस प्रकार कट्टरता दूषित धर्म की उपज है। साम्यवादियों को भी एक जीवित मनुष्य के चेहरे के अति प्रफुल्ल चित्र या लाल चौक (रैड स्क्वेयर) में बनी एक संगमरमर की समाधि की अपेक्षा कुल अधिक प्रभावी आध्यात्मिक शामक उपाय की आवश्यकता है।

इतिहास की चौथी प्रावस्था का संकटमय प्रभात

यद्यपि हमारे लिए इस बात को अनुभव कर पाना कठिन है, फिर भी हम इस समय इतिहास की चौथी प्रावस्था के अरुणोदय के धुँधले प्रकाश में आगे बढ़ने का मार्ग खोज रहे हैं। यह अरुणोदय हो चुका है, यह बात हमें इसलिए मालूम है कि तीसरी प्रावस्था का रुझान, जो नव-पाषाणिक काल से परमाणु युग तक बिना कम हुए चला आ रहा था, अब बदल गया है। यह रुझान संसार की सभ्यताओं के मध्य अधिकाधिक विभेदन की ओर था। अब हम भूमंडलीय साँस्कृतिक एकता की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। इतिहास की

---

[1] राउड्स, फ्रैंक, जूनियर, 'ए विंडो ऑन रैड स्क्वेयर', बोस्टन, हौफटन मिफ़लिन, 1953, पृष्ठ 118-119। अनुमति से।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

दूसरी ग्रावस्था के प्रभात काल में, वूर्म हिमाच्छादन काल में, मनुष्य एक स्पीशिज बन गया था। चौथी ग्रावस्था के प्रभात काल में वह एक ही साँस्कृतिक समुदाय बनना शुरू कर रहा है, हालाँकि इस समय एकीकरण की प्रक्रिया दो केन्द्रों से हो रही है।

संक्रमण के सब कालों की भांति यह प्रभात काल भी संकटों से भरा है। इन संकटों में सबसे स्पष्ट दिखाई पड़ने वाला संकट संयुक्त राज्य अमेरिका और रूस के बीच चल रही परमाणु अस्त्रों की प्रतियोगिता है। इसकी अपेक्षा कम दर्शनीय और हटाने में लगभग इतना ही व्ययसाध्य संकट वह है, जो मानवीय परिश्रम के संचयी प्रभाव के फलस्वरूप भूमि की सतह और वायु-मंडल के लिए उत्पन्न हो गया है। अनेक युगों पहले बनों को काट डालने और भूक्षरण के कारण ईरान का अधिकांश भाग मरुस्थल बन गया था और चीन का बहुत बड़ा भाग ऐसा मैदान बन गया था, जिसमें बहुत बाढ़ें आती थीं। अमेरिका में कुछ ही पीढ़ियों की अवधि में पेड़ों की अत्यधिक कटाई के कारण, अत्यधिक बुआई के कारण और अत्यधिक चराई के कारण 'तमाखू सड़कें', और रेतीले स्थल बन गए हैं। वायु के दूषित हो जाने के कारण लॉस ऐंजल्स, न्यूयार्क, फिलाडल्फिया, लन्दन और यहाँ तक कि मैक्सिको नगर के नागरिकों के स्वास्थ्य के लिए भी संकट उपस्थित हो गया है।

क्योंकि ये संकट सुविदित हैं, इसलिए इन्हें दूर करने के लिए उपाय किए जा सकते हैं। इतना ही गम्भीर तीसरा संकट भी है भूमंडलीय आयोजकों की दृष्टि से इसलिए बच जा सकता है, क्योंकि यह खतरा अधिकाँश लोगों के अनुभव की सीमा से परे है। मानव-वैज्ञानिकों को उसका पता है, क्योंकि वह उनके क्षेत्र के अन्तर्गत है। यह संकट यह है कि विश्व-व्यवस्था के रूप में स्वतन्त्रता और समानता की स्थापना होने से पहले ही कहीं पश्चिमी राष्ट्रों और औपनिवेशिक शासन से हाल ही में मुक्त हुए राष्ट्रों के मध्य सुव्यवस्थित अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध टूट न जाएँ। इस संकट का मूल विभिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले लोगों की एक-दूसरे को समझ पाने में असफलता में निहित है।

पचास वर्ष पहले यह माना जाता था कि साँस्कृतिक अन्तर तो रहेंगे ही, और बुद्धिमान प्रशासक कूटनीतिज्ञ और व्यवसायी लोग उनकी गुंजाइश रख

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर काम करते थे। अरब लोगों से आशा की जाती थी कि वे लहराते हुए वस्त्र और पगड़ियाँ पहनेंगे और अपना काम छोड़कर दिन में कई बार नमाज पढ़ेंगे। हिन्दुओं से आशा की जाती थी कि वे चूड़ीदार पायजामे पहनेंगे और इस बात का बहुत ध्यान रखेंगे कि वे किसके साथ बैठकर खाना खा रहे हैं और सामान्य वार्तालाप के बीच में भी दार्शनिक बातें बघारेंगे। आजकल सारी दुनिया के लोगों का रुझान एक-जैसे वस्त्र पहनने, एक-जैसी मोटरों में सवारी करने और एक जैसे 'कोला' पेय पीने की ओर है। एकरूपता का यह बाहरी खोल, जिसे पश्चिमी पत्र-पत्रिकाओं ने अतिरंजित रूप में प्रस्तुत किया है, अनेक पश्चिमी प्रेक्षकों के मन में साँस्कृतिक एकता और इस प्रकार सुरक्षा की एक मिथ्या भावना भर रहा है।

अन्तर-साँस्कृतिक ग़लतफ़हमी का उदाहरण उस समय उपस्थित हुआ, जब इंग्लैंड और अमेरिका के समाचारपत्रों ने डाक्टर मुसादिक की इस आदत की खिल्ली उड़ाई कि वह भाषण देते-देते बीच में रोने लगता था। इंग्लैंड और अमेरिका में सार्वजनिक रूप से रोना अपुरुषोचित समझा जाता है। परन्तु ईरान में सामान्य लोग यह समझते हैं कि रोना गहरी सच्चाई और ईमानदारी का चिन्ह है। ईरानी ग्रामवासी धार्मिक समारोहों के अवसर पर सार्वजनिक रूप से रोते हैं—यह पैगम्बर मुहम्मद के दो पौत्रों, हसन और हुसैन के बलिदान पर शोक प्रकट करना शिया सम्प्रदाय का एक अत्यावश्यक अंग है। डा० मुसादिक के इन अभिनयों के कारण, जिनसे कि पश्चिमी लोग उनकी शक्ति का कम अन्दाजा करने लगे थे, वह अपने लोगों में बहुत लोकप्रिय हो गया और इसके फलस्वरूप उस पर अभियोग चलाने और उसे दंड देने का काम ईरान के शाह के लिए बहुत ही कठिन हो गया। उस समय ईरान पश्चिम के हाथ से निकल जाने के कितना अधिक निकट पहुँच चुका था, इसे हममें से अधिकाँश लोग जान नहीं पाये थे।

अन्तर-साँस्कृतिक मनोवृत्तियों का अन्तर मुझे सन् 1947 में एक दिन बहुत स्पष्ट रूप में तब समझ में आ गया, जब मोरक्को के स्पेनी अंचल का निवासी एक बूढ़ा पहाड़ी व्यक्ति टेंजियर में मेरे प्रिय होटल की खुली छत पर मुझे ढूंढता हुआ आया। वह मुझे जहाज़ का एक नमूना बेचना चाहता था, जो उसने हाल ही में बनाकर तैयार किया था। उसने बड़े गर्व के साथ यह कहा

कि यह नमूना अमेरिका के जहाज़ 'मिसूरी' की हूबहू प्रतिकृति है; यह 'मिसूरी' जहाज़ कुछ समय पहले वहीं बन्दरगाह में कई दिनों तक खड़ा रहा था। यदि वह मुझे न बताता, तो मैं कभी यह न समझ पाता कि यह नमूना 'मिसूरी' जहाज़ का है। उसका ढाँचा मामूली माल ढोने वाले जहाज़ के ढाँचे जैसा था। उसके अग्र भाग के दोनों ओर दो नकली हीरे चमक रहे थे, जो उसे नज़र लगने से बचाने के लिए थे, जैसे कि भूमध्य सागर में चलने वाले अधिकाँश जहाज़ों में होते हैं। जहाज़ के ब्रिज की जगह एक ऊँची चौकोर बुर्जी थी, जो मोरक्को की मीनारों की आकृति की थी और इस बुर्जी से दो विमान तारों के सहारे लटके हुए थे। मैंने उस वृद्ध पुरुष को बधाई दी और उसका जहाज़ खरीद लिया। यह नमूना फिलाडलफिया में यूनिवर्सिटी म्यूज़ियम में अमेरिका के जहाज़ 'मिसूरी' के एकपार्श्वीय नमूने के सामने रख दिया गया है। किसी पुस्तक में अनेक पृष्ठ लिखकर जितना स्पष्ट किया जा सकता है, उससे कहीं अधिक विशद रूप से यह नमूना इस बात को स्पष्ट कर देता है कि एक संस्कृति में पले व्यक्ति दूसरी संस्कृति के लोगों की हस्तशिल्प की कृतियों को किस दृष्टि से देखते हैं।

इस वृद्ध पुरुष के आने के कुछ दिन बाद साफ़-सुथरे वस्त्र पहने हुए एक मूर (मोरक्कोवासी) मेरे पास उसी होटल में उसी जगह आया। उसने मुझे अपने साथ बाहर चीड़ के पेड़ों के नीचे चलने को कहा, क्योंकि वह चाहता था कि हमारे वार्तालाप को कोई व्यक्ति छिपकर न सुन ले। जब हम बिलकुल एकान्त में पहुँच गए, तो उसने मुझे बताया कि गुफ़ाओं में काम करने वाले लोगों में इस रूप में मेरी बहुत ख्याति हो गई है कि मैं जिन्नों (दुष्टात्माओं) को निकाल सकता हूँ। वस्तुतः गुफ़ाओं की अन्दर की खोहों में काम करते समय मज़दूरों के मन को शान्त बनाये रखने के लिए मैंने कई अनुष्ठान किए थे। उस व्यक्ति ने मुझे बताया कि उसके बगीचे में बहुत गहराई पर सोने के सिक्कों से भरा एक सन्दूक गड़ा हुआ है। वह उस सन्दूक को खोदकर इसलिए नहीं निकाल सकता, क्योंकि एक भयानक जिन्न उस सन्दूक की रक्षा करता है। क्या मैं उसके साथ चलकर उस जिन्न को भगाने की कृपा करूँगा? उसके बाद वह उस खज़ाने में से मुझे भी हिस्सा देगा। मैंने इस दयालु और उदार व्यक्ति को हार्दिक धन्यवाद दिया और कहा—"जिन्नों को भगाना एक

बहुत ही श्रमसाध्य कार्य है और इसके लिए पहले बहुत तैयारी करनी पड़ती है। क्योंकि हम अगले ही दिन अमेरिका के लिए रवाना हो रहे हैं, इसलिए मैं यह काम न कर सकूँगा। काश, कि आप मेरे पास कुछ पहले आ गए होते!" वह उदास, किन्तु सन्तुष्ट होकर चला गया। उसके आत्म-सम्मान को चोट नहीं पहुँची थी।

मैं अपने आपको किसी भी प्रकार के व्यवहार के लिए आदर्श मानने का स्वप्न नहीं देखता, किन्तु मैंने यह कहानी एक विशेष कारण से सुनाई है। राष्ट्रों के मध्य व्यवहार व्यक्तियों के मध्य व्यवहार से भिन्न वस्तु नहीं है। अन्तर केवल इतना है कि वे अपेक्षाकृत बड़े और अधिक संवेदनशील पैमाने पर होते हैं। इस समय पश्चिमी और साम्यवादी शक्तियों के मध्य एशिया और अफ्रीका के भूतपूर्व औपनिवेशिक साम्राज्यों की विशाल जनसंख्याओं को अपने पक्ष में करने के लिए जो प्रतियोगिता चल रही है, उसमें विजय उस

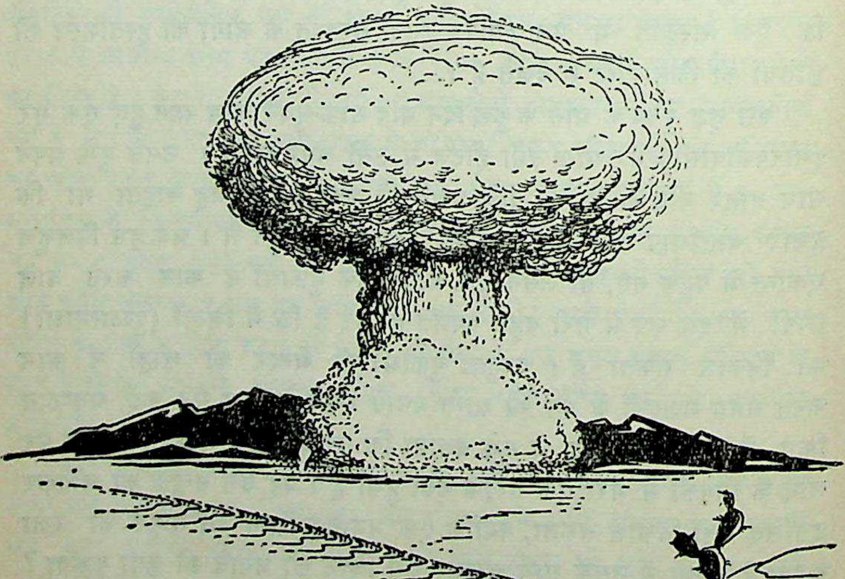

पक्ष की नहीं होगी, जो अधिक गेहूँ या इस्पात दे सकेगा; न उस पक्ष की होगी जो अधिक उदार और मानवीय ढंग की सरकार के अधीन उनके साथ प्रेम से रह सकेगा; अपितु विजय उस पक्ष की होगी, जो संसार के दुर्दशाग्रस्त लोगों को उनके अपने प्रयत्नों द्वारा, आत्म-गौरव या आत्म-सम्मान गंवाये बिना अपनी दशा सुधारने, या हमारे रहन-सहन के स्तर तक पहुँच पाने की छूट देगा और साथ ही अपने मित्रों और साथियों में भी व्यवस्था बनाये रखेगा। इतिहास की चौथी अवस्था के अरुणोदय में इस समय हमारे सामने उपस्थित तीन महान् संकटों में सबसे नाज़ुक और विषम संकट यही है।

संसार के लोगों ने अभी तक अन्तिम रूप से यह निश्चय नहीं किया है कि एकीकरण के इन दो केन्द्रों में से वे किसके पक्ष में जाना पसन्द करेंगे और हो सकता है कि उनके इस चुनाव से ही यह निश्चय हो जाय कि इस सुमहान् प्रतिद्वन्द्विता का क्या परिणाम निकलेगा।

12

स्वर्ग की कल्पना

इतिहास की मुख्य धारा

हम लोग, जो इस समय जीवित हैं, एक संक्रमण के काल में से गुज़र रहे हैं, जो लगभग 7000 ई० पू० में नव-पाषाणिक युग के शुरू होने के बाद पहला बड़ा सांस्कृतिक परिवर्तन है। हमारे आस-पास जो परिवर्तन हो रहे हैं, वे इतने द्रुत हैं कि हम एक ही जीवन काल में उससे कहीं कुछ अधिक देख लेते हैं, जितना कि हमारे पूर्वजों की अनेक पीढ़ियों ने कभी देखा होगा। इस काल में जीवित रहना सचमुच ही बहुत रोमांचकारी है।

परन्तु जो कुछ हो रहा है, उसे देखना भर ही काफी नहीं है। हमें अतीत की घटनाओं पर विचार करके भविष्य की घटनाओं के लिए तैयारी करनी चाहिए। इतिहास की मुख्य घटनाओं के सम्बन्ध में हमारा ज्ञान इतना काफी स्पष्ट है कि उससे एक सुव्यवस्थित साँचे की रूपरेखाएँ स्पष्ट हो उठती हैं, भले ही उसके कई सूक्ष्म विवरण अज्ञान के आवरण में ढके हैं। इस पुस्तक से यह स्पष्ट हो गया है कि जब मनुष्य ने उपल (पत्थर) तराशना शुरू किया था, तब से पृथ्वी तल की सामग्रियों पर, उसके अन्दर की और उसके ऊपर की सम्भाव्य ऊर्जा के स्रोतों पर उसके प्रभुत्व में सदा एक नियमित चाल से वृद्धि होती रही है। इसका अर्थ यह है कि मनुष्य की संख्या में, खाद्य सामग्री की मात्रा में, उसकी संस्थाओं की जटिलता में और अन्य किसी भी ऐसे परिवर्तन में, जिसे कि हम परिशुद्धि की आशा रखते हुए नाप सकते हैं, हुई वृद्धि

गणितीय अर्थों में संचयी रही प्रतीत होती है। इस मामले में यह देखा जा सकता है कि मनुष्य ने भी प्रकृति के नियमों का वैसे ही स्वतः पालन किया है, जैसे कि अजैव पदार्थ, पौधे और प्राणी करते रहे हैं।

इस प्रवर्धमान मापक्रम के विभिन्न अंशों को पुरा पाषाणिक, नव-पाषाणिक, काँस्य तथा लौह युग जैसे कालों का नाम देते हुए मैंने सुविधा के लिए परम्परागत पुरातत्वीय योजना का अनुसरण किया है। उससे आगे मैंने ऊर्जा के स्रोतों का संकेत करने के लिए नामों के एक अन्य समूह का उपयोग किया है, जो अंशतः मेरा मौलिक और अंशतः अन्य लोगों से लिया हुआ है। ये बारूद, कोक, तेल, पनबिजली, और परमाणु के युग हैं। ऐतिहासिक मापक्रम के इन खंडों को सूचित करने के लिए इन मनमाने नामों का प्रयोग यह ध्वनित करने के लिए नहीं किया गया कि काल क्रम में मानवीय प्रगति बीच-बीच में रुक-रुक कर होती रही है। जिन घटनाओं ने इन मनमाने रूप से रखे गए नामों वाले कालों का सूत्रपात किया था, वे कोई तकनीकी क्रान्तियाँ नहीं थीं, अपितु वे तो मनुष्य की अविराम प्रगति में महत्त्वपूर्ण घटनाएँ थीं। जैसा कि हमने अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैंड में हुए आविष्कारों के इतिहास में देखा है, घटनाएँ निरन्तर स्थिर भाव से आगे की ओर बढ़ती रहीं; वे कोई रुक-रुक कर और झटके खाकर नहीं बढ़ीं। यह ठीक है कि ऊर्जा के नए स्रोतों का आविष्कार कुछ ज्ञात मध्यान्तरों के बाद होता रहा, परन्तु ऐसे प्रत्येक आविष्कार के बाद लोगों को उन यांत्रिक साधनों को सुधारने और निर्दोष बनाने में काफी समय लगता था, जिनके द्वारा वे उसका नियन्त्रण और उपयोग कर सकते थे; और जब वे इस प्रकार की पूर्णता अर्थात् निर्दोषता के एक खास स्तर तक पहुँच जाते थे, तब वे लोग फिर नए आविष्कार को करने के लिए उद्यत होते थे और तब वे उसे कर डालते थे। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, त्यों-त्यों ऊर्जा के इन नए स्रोतों की खोज की, और उनका उपयोग करने के यांत्रिक आविष्कारों की प्रगति की चाल संचयी रूप से बढ़ती गई और यहाँ तक कि अब यह स्थिति आ गई है कि किसी एक व्यक्ति के लिए इन विषयों की पूरी जानकारी रख पाना लगभग असम्भव ही है।

ज्यों-ज्यों मानव प्राणी मानवीय शरीर से बाहर के स्रोतों से अधिकाधिक ऊर्जा का व्यय करते हैं, त्यों-त्यों उनकी संख्या बढ़ती जाती है और जिन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तकनीकी प्रक्रियाओं द्वारा वे इस ऊर्जा को उत्पन्न करते और प्रयोग में लाते हैं और वैसा करते हुए अपने आपको सुव्यवस्थित बनाए रखते हैं, उन प्रक्रियाओं के कारण श्रम का विभाजन और विशेषीकरण स्वतः बढ़ता जाता है। श्रम के विभाजन में से जन्मों की एक माला (सीरीज़) का आविर्भाव होता है। इनमें से प्रत्येक मामले में जो कुछ उत्पन्न होता है, वह एक नए प्रकार की संस्था होती है; जैसे उदाहरण के लिए, कोई सरल आर्थिक संस्था, धार्मिक संस्था, श्रेणी (गिल्ड), स्थिर निधि से चलने वाली शिक्षा संस्था, भूमंडलीय व्यापारिक कम्पनी और कोई आधुनिक कारखाना। इस प्रकार की संस्थाएँ शक्ति के उपयोग और आविष्कारों की भाँति शनैः-शनैः विकसित नहीं होतीं, अपितु उत्पन्न होती हैं, क्योंकि मानव-समूह भी उन्हीं प्राकृतिक नियमों का अनुसरण करते हैं, जिनका कि प्राणी-विज्ञान (जैविकी) में कोशाणु (सेल) करते हैं। प्रत्येक जन्म इस अर्थ में कुछ कष्टपूर्ण होता है कि मानवीय रचना को किसी नए मानव सम्बन्ध-समूह का आदी होने में कुछ समय लगता है।[1]

समाजों के अन्दर संस्थाओं की संख्या और जटिलता नियमित रूप से मानव जीवन में कारण और कार्य के नियम के एक अंश के रूप में, शक्ति के उपभोग में हुए परिवर्तनों के अनुसार रहती है; यह मानव-जीवन पृथ्वी पर जीवन के विकास का, स्वयं पृथ्वी के ब्रह्मांड के विकास का एक अंशमात्र है। तकनीकी ज्ञान इन परिवर्तनों का अनुगमन करता है और तकनीकी ज्ञान से विज्ञान का जन्म हुआ है। इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु वह था, जब एक मनुष्य, अरस्तु, अपने विद्यार्थियों की सुविधा के लिए उस समय विद्यमान सम्पूर्ण ज्ञान को एक जगह एकत्रित करके उसे आन्तरिक रूप से सम्बन्धित कर सकता था, परन्तु उस तक ने तत्कालीन ऐथन्स के कारखानों में कारीगरों द्वारा उपयोग में लाए जा रहे यान्त्रिक सिद्धान्तों की ओर ध्यान नहीं दिया। इतिहास का एक और महत्त्वपूर्ण बिन्दु वह समय था, जब अलग-अलग विषयों

---

1. चाइल्ड द्वारा प्रयुक्त 'क्रान्ति' (रिवोल्यूशन) शब्द का प्रयोग उद्योग विद्या की घटनाओं की अपेक्षा, जो स्वतः क्रमिक विकास के ढंग की होती हैं, इस प्रकार के जन्मों के लिए अधिक सही प्रकार किया जा सकता है, जो उन घटनाओं के जनक होते हैं। वी० गौर्डन चाइल्ड, 'मैन मेक्स हिमसैल्फ', सी० ए० वाट्स एण्ड कम्पनी, लन्दन, 1936।

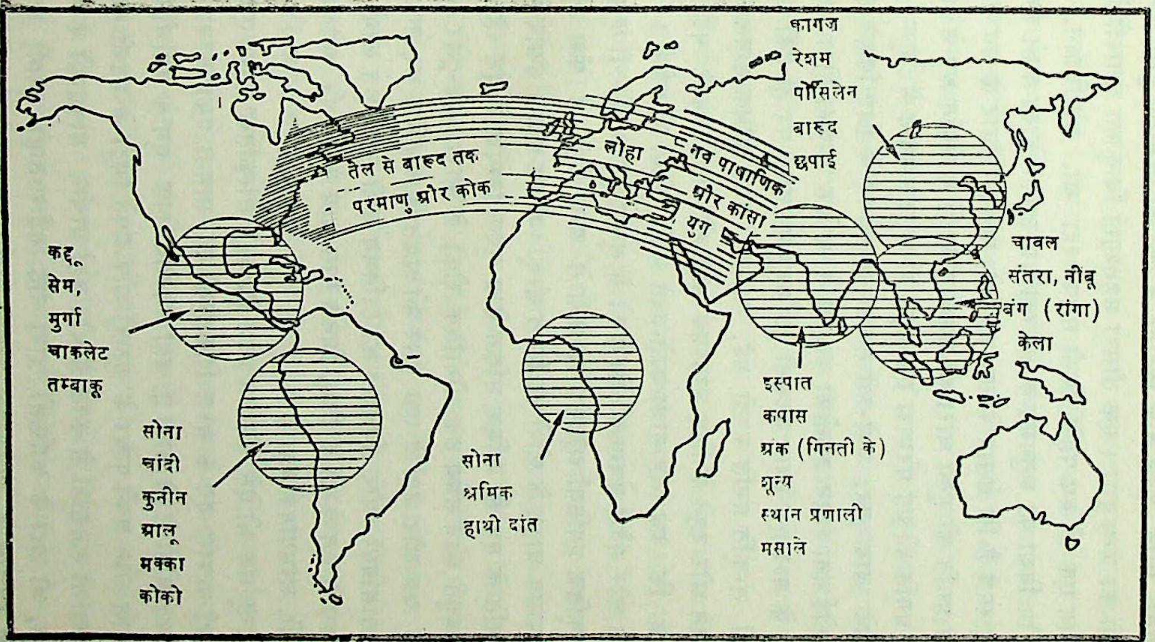
कद्दू
सेम,
मुर्गा
चाकलेट
तम्बाकू
सोना
चांदी
कुनीन
आलू
मक्का
कोको
तेल से बारूद तक
परमाणु और कोक
लोहा
नव पाषाणिक
और कांसा
युग
सोना
श्रमिक
हाथी दांत
कागज़
रेशम
पोर्सिलेन
बारूद
छपाई
इस्पात
कपास
अंक (गिनती के)
शून्य
स्थान प्रणाली
मसाले
चावल
संतरा, नींबू
वंग (रांगा)
केला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

में विशेषता प्राप्त करने वाले विद्वानों में श्रम का विभाजन हुआ और विश्वविद्यालयों का जन्म हुआ। एक तीसरा महत्त्वपूर्ण बिन्दु गत शताब्दी के मध्य में, लगभग एक सौ वर्ष पहले, किसी समय रहा था, जब विज्ञान, जो उस तक उद्योग विद्या का अनुगमन करता रहा था, उसका नेतृत्व करने लगा।

यह स्पष्ट है कि संसार के सब भागों ने, मानव-परिवार के सब सदस्यों ने मानवीय प्रगति की मुख्य धारा की प्रमुख घटनाओं में समान रूप से भाग नहीं लिया। प्रगति की यह परम्परा एक बहुत ही अनुकूल स्थान में शुरू हुई थी और उसके बाद यह, ज्यों-ज्यों सृजनात्मक जीवन के लिए पिछले स्थान की अपेक्षा कोई नया स्थान तकनीकी कारणों से अधिक उपयुक्त होता गया, त्यों-त्यों एक के बाद एक स्थान बदलती हुई अनुकूल स्थानों पर ही बनी रही है। ज्यों-ज्यों संस्कृति प्रगति करती गई, त्यों-त्यों सबसे अधिक उन्नत लोगों को काम करने और रहने के लिए आवश्यक भूमि की मात्रा बढ़ती गई है और यहाँ तक कि अब यह मात्रा बढ़ते-बढ़ते सारी दुनिया हो गई है। ज्यों-ज्यों परिवहन और संदेश प्रेषण की तकनीकों में सुधार हुआ, त्यों-त्यों कुछ देशों में हुई साँस्कृतिक प्रगतियाँ अधिकाधिक तेजी से अन्य देशों में फैल गईं और उनका प्रभाव बाहर के छोरों पर स्थित संस्कृतियों पर पड़ा। संसार में साँस्कृतिक प्रगति के एक से अधिक सक्रिय केन्द्र मुख्य परम्परा से दूर रहे हैं और ये केन्द्र बहुत लम्बे समय तक भौगोलिक रोकों के कारण एक-दूसरे से पृथक् रहे हैं। जब और जहाँ वे एक दूसरे को अंशतः आच्छादित कर गए हैं, वहाँ निर्मित सामग्रियों और विचारों का विनिमय सभी सम्बन्धित लोगों के लिए, विशेष रूप से उन केन्द्रों के लिए, जिनके पास अन्य केन्द्रों की अपेक्षा अधिक शक्ति थी, लाभदायक रहा है।

परन्तु अब भी ऐसे सीमान्त प्रदेश हैं, जहाँ साँस्कृतिक प्रसार एक-सा नहीं रहा; जहाँ पाषाण-युग के सरल शिकारियों का सामना एकाएक राइफलधारी अपरिचित लोगों से हो जाता है; जहाँ नव-पाषाणिक युग के बगीचों की खेती करने वाले लोग अपने पत्थर के कुठारों और अपने मिट्टी के मटकों का व्यापार तेल के खाली कनस्तरों से करते हैं और जहाँ प्राचीन साम्राज्यों के अभिमानी नागरिक, जो ऊँटों के काफिलों द्वारा लाई गई सप्ताहों पुरानी खबरों को सुनने के अभ्यस्त थे, सार्वजनिक रेडियो से प्रचार-सम्बन्धी वार्ताएँ सुनते हैं।

नीली और सफेद खपरैलों वाले शहर के चौक में श्रद्धालु भक्तों को नमाज़ के लिए बुलाने वाली मुअज्जिन की सुस्पष्ट पुकार का स्थान वह चीखती-सी पुकार ले लेती है, जो किसी दढ़ियल मनुष्य के होंठों से न निकलकर मीनार से लटके हुए एक चमकीली धातु के भोंपू से निकलती है। हवाई अड्डे पर हज को जाने वाले यात्री ऊँटों की पीठ पर से उत्तरकर सीधे डी० सी०-6 विमान की गद्दियों पर जा बैठते हैं। उद्योग विद्या में हुए इन परिवर्तनों के कारण अन्य स्थानों की भाँति इन स्थानों में भी नई संस्थाएँ जन्म लेती हैं; किन्तु इस प्रकार की प्रसव-वेदना के पश्चात् जो कुछ उत्पन्न होता है, वह बहुधा एक अटपटा-सा ही बच्चा होता है, जो न तो अपने पिछड़े हुए माता या पिता के अनुरूप होता है और न उन्नत माता या पिता के; और उसके साथ निर्वाह करना दोनों के लिए कठिन हो जाता है।

मैं व्यक्तियों के रूप में मनुष्यों की बात न कहकर समूह के रूप में मनुष्यों की बात कह रहा हूँ। मानव प्राणी, चाहे उसके माता-पिता कोई भी क्यों न रहे हों, एक सुघट्य प्राणी, होता है। यह अनेक बार प्रदर्शित किया जा चुका है कि यदि किसी भी देश के किसी भी सामान्य शिशु को उसके अपने लोगों से अलग ले जाकर किसी अन्य देश में पाला जाय, तो वह उस नये देश के अन्य किसी भी बालक की भाँति इस नये अपनाए हुए देश के साँस्कृतिक नमूने के अनुसार ही आचरण करेगा। कोई भी मानव प्राणी किसी भी संस्कृति में क्यों पाला-पोसा जा सकता है, इसका कारण यह है कि उसके अन्दर मानवीय मस्तिष्क होता है और उस मस्तिष्क का उपयोग करने की उसकी योग्यता उसे उत्तराधिकार में व्यवहार के पूर्वविरचित साँचों के रूप में न मिलकर व्यवहार की क्षमताओं के रूप में मिली होती है। परन्तु यदि कोई एक शिशु नहीं, अपितु एक समूचा परिवार या परिवारों का एक समूह किसी एक साँस्कृतिक क्षेत्र से किसी अन्य साँस्कृतिक क्षेत्र में स्थानान्तरित कर दिया जाय, तो परिणाम इसके भिन्न होगा। वे माता-पिता तो, जो एक ढंग से कामकाज करना सीख चुके हैं। अपना समंजन करने में कुछ कठिनाई अनुभव करेंगे ही, किन्तु उनके बच्चों की स्थिति उनसे भी होगी। जो कुछ वे घर पर सीखते हैं, वह उससे भिन्न होता है, जो उन्हें विद्यालय में यह क्रीड़ा-क्षेत्र में सिखाया जाता है। ज्यों-ज्यों परिवहन की तकनीकों में सुधार होता जा रहा है और लोग अधिकाधिक मात्रा में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

घूमने-फिरने लगे हैं, त्यों-त्यों इस प्रकार की कठिनाइयाँ बढ़नी ही हैं।

यदि हम साँस्कृतिक विकास की मुख्य परम्परा को इतिहास के उस बिन्दु से आगे से देखना शुरू करें, जहाँ पर हमारी जानकारी इतनी काफी स्पष्ट हो जाती है कि हम उसके आधार पर संस्थाओं की पुन: कल्पना कर सकते हैं, तो हम यह देखेंगे कि यह मुख्य परम्परा सदा उन संस्कृतियों के माध्यम से आगे बढ़ती रही है, जिनमें व्यक्तिगत उद्यम को महत्त्व दिया जाता रहा है और जिनमें राजनीतिक संस्था का अस्तित्व केवल अन्य संस्थाओं, जैसे आर्थिक, पारिवारिक, धार्मिक और साहचर्यात्मक संस्थाओं का रूप गढ़ने के निमित ही रहा है। सुमेर में (जिसके कि हम अधिक उत्तराधिकारी हैं और मिश्र के कम) व्यापारी लोग स्वतन्त्र मनुष्य थे और विद्यालय गैर सरकारी थे। फीनीशियन लोगों में सामान्यतया निजी (गैर सरकारी) उद्यम ही होता था और यही स्थिति यूनानियों के यहाँ भी थी, जिनके यहाँ दान की स्थिर निधि से निजी विद्यालय चलते थे। अरब लोगों ने, जो मुख्यतया व्यापारी थे, स्वतन्त्र विद्यालयों की यूनानी परम्परा को जारी रखा और वेनिस और जैनोआ के स्वतन्त्र कारीगरों और व्यापारियों ने इसे बनाये रखा। इटली, अरब-अधिकृत स्पेन, इंग्लैंड और फ्रांस में विश्वविद्यालय बने। यूरोप के उत्तर में वस्त्र-निर्माताओं की श्रेणियों (गिल्ड) ने एक नए प्रकार के पूंजीवाद की रचना की, जिसे समन्वेषण (ऐक्सप्लोरेशन) के दिनों में गैर सरकारी व्यापारिक कम्पनियों में स्थानान्तरित कर दिया गया और सन् 1750 में उद्योगों के आविर्भाव के निर्माता लोग भी पूंजीपति बन गए, जबकि मजदूरों की यूनियनों ने श्रमिक वर्ग के रहन-सहन के स्तर को बनाए रखा या गिरी हुई दशा से फिर उचित स्थिति तक पहुँचाया। इस प्रकार के देशों में सामाजिक चलिष्णुता सदा बहुत अधिक रही है।

त्वरित गति से हुए औद्योगिक आविष्कारों के युग में, जो कोक युग की विशेषता थी, हमें मालूम है क्योंकि इस काल के प्रलेख बहुत बढ़िया हैं—कि सब प्रकार के मनुष्य नए उपकरणों की खोज के लिए काम करते रहे, पुरानी सूझों के विषय में धैर्यपूर्वक परीक्षण करते रहे, और उन्होंने कुछ नई सूझें मौलिक रूप से भी प्रस्तुत कीं, और उन्होंने अपने यन्त्रों के दोषों को धीरे-धीरे तब दूर किया, जब तक कि वे यन्त्र ठीक ढंग से काम न करने लगे।

वे ऐसा इसलिए कर पाये, क्योंकि वे स्वतन्त्र मनुष्य थे और यदि वे सफल होते तो धनी बन सकते थे। वे धनी इसलिए बनना चाहते थे। जिससे वे अपने परिवार की दशा सुधार सकें और अपने को शिक्षा दिला सकें।

स्वतन्त्र उद्यम के प्रति ठीक ऐसा ही आदर उन स्वतन्त्र रूप से विकसमान संस्कृतियों की विशेषता रही है, जो तब तक अपने-अपने मार्गों पर चलती रही थी, जब तक कि बारूद युग की घटनाओं ने संसार भर के लोगों को एक-दूसरे के निकट नहीं ला दिया। विद्या-प्रेमी चीनी लोगों ने यह व्यवस्था की थी कि उनके यहाँ सरकारी पद किसी भी जाति या कुल के ऐसे किन्हीं भी नवयुवकों को मिल सकते थे, जो उनके लिए नियत परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो जाएँ, और उन्होंने निर्माण तथा व्यापार में स्वतन्त्र उद्यम को बढ़ावा दिया था। 'आज़तेक' लोगों में, जिन्हें कार्टेस ने देखा था, कारीगर लोग स्वतन्त्र मनुष्य होते थे, जो वैसी ही श्रेणियों (गिल्ड) में संगठित होते थे, जैसी कि अरब लोगों के यहाँ होती थीं और व्यापारी वे प्रमुख लोग होते थे, जो सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए अपनी जान को, बहुधा छद्म वेश बनाकर, विदेश यात्राओं के जोखिम में डालते थे। ये इतने से उदाहरण यह स्पष्ट करने के लिए काफी हैं कि निरन्तर प्रगति की क्षमता अनन्य रूप से किसी एक ही जाति की बपौती नहीं है।

जब हम इतिहास की निष्प्रवाह भंवरों की खोज करते हुए साँस्कृतिक स्थिति का अध्ययन करते हैं, जो परिवर्तन के मुख्य केन्द्रों से बाहर के प्रदेशों में अब भी विद्यमान है, तो हम देखते हैं कि यदि ये संस्कृतियाँ इतनी काफी उन्नत हैं कि उनमें श्रम का विभाजन है, तो उनमें कारीगरों और व्यापारियों को सम्मान प्राप्त नहीं होता और शासकों और पुरोहितों को सर्वाधिक प्रतिफल प्राप्त होता है। इन परिस्थितियों में उनको यह प्राप्त होना भी चाहिए, क्योंकि उनका काम न्यूनतम ऊर्जा के व्यय द्वारा समतुलन बनाए रखना होता है। इन शासकों और शासितों के बीच में बहुत बड़ा व्यवधान होता है और चलिष्णुता लगभग बिलकुल नहीं होती। इस प्रकार की संस्कृतियों की मर्यादाओं में रहने वाले लोग भयभीत से होकर बाहर से किसी ऐसे आघात के आने की प्रतीक्षा करते रहते हैं, जो उन्हें उनकी वर्तमान स्थिति से विचलित करे और जब वह आघात होता है, तब वे उसका उतनी ही दृढ़ता से प्रतिरोध

करते हैं, क्योंकि वह आघात उनकी उस सामाजिक संरचना को अस्त-व्यस्त कर देता है, जिससे वे जी-जान से चिपटे रहते हैं। इस कारण इस प्रकार की संस्कृतियों की एक विशेषता निष्प्रवाहता होती है। सब जातियों के लोग प्रगति और निष्प्रवाहता, दोनों के ही लिए समर्थ होते हैं और निष्प्रवाहता, रोगों की भाँति, संक्रामक होती है।

दूसरी ओर, यह भी हो सकता है कि साँस्कृतिक निष्प्रवाहता में जीवन-यापन कर रहे लोगों में से कोई व्यक्ति निकल कर किसी दूसरे देश में जाय और उस देश में हो रही उन्नति में भाग ले। ऐसा बहुत बार किया गया है। इसका विलोम भी हुआ है। साँस्कृतिक दृष्टि से गतिशील देशों में से कुछ व्यक्ति निकलकर उन स्थानों में गए हैं, जहाँ प्रगति की चाल मन्द थी और यदि वहाँ की स्थानीय परिस्थितियाँ परिवर्तन के लिए उपयुक्त थीं, तो उन्होंने अपने नए विचारों द्वारा प्रगति शुरू की। पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में आविष्कार और अन्वेषण के युग में हमने ऐसा होता देखा है और यह बात आज भी हो रही है। फिर भी इस बात को स्मरण रखना आवश्यक है कि व्यक्तिशः मनुष्य अपना जीवन अपने ही ढंग से बिताता है, जो आवश्यक नहीं कि उसके अपने समाज के अनुसार हो।

संचार, संस्थाएँ और विज्ञान

ज्यों-ज्यों साँस्कृतिक प्रगति की मुख्य परम्परा तुर्किस्तान और ईरानी पर्वतीय प्रदेशों में स्थित अपने नव-पाषाणिक केन्द्र से निकलकर भूमध्यसागर के देशों को पार करती हुई पश्चिम की ओर पश्चिमी यूरोप और अमेरिका तक बढ़ती गई, त्यों-त्यों इसके ऐसे कुछ पहलुओं में संचयी परिवर्तन होते गए, जिन्हें कि नापा जा सकता है। उदाहरण के लिए, ये पहलू हैं यान्त्रिक उद्यमों में व्यय होने वाली ऊर्जा की मात्रा, जो नील नदी में पुरातन राजत्व काल के मिश्रवासियों द्वारा चलाई जाने वाली ओबेलिस्क नावों की गतिमात्रा (मोमेंटम) से लेकर परमाणु बम की विस्फोटक शक्ति तक रही है; विभिन्न कालों में उत्पन्न किये गए अधिकतम तापमान, जो लकड़ी के कोयले की सहायता से पहले-पहल ताँबे को पिघालने के तापमान से लेकर अब हमारी वर्तमान सूर्य की ऊष्मा की अनुकृति तक हैं; और यात्रा का वेग, जो दौड़ते हुए मनुष्य की चाल

से बढ़कर अब ध्वनि के वेग से भी तीव्र विमानों की गति तक पहुँच गया है। इन सब आविष्कारों और ऊर्जा के रूपान्तरणों के फलस्वरूप अन्ततोगत्वा सन्देश-प्रेरण की तकनीकों में अधिकाअधिक परिवर्तन होते गए। संदेश-प्रेषण के अभिकरण के द्वारा ऊर्जा के उपभोग में हुई इन वृद्धियों के कारण, नई, अपेक्षाकृत बड़ी और अपेक्षाकृत अधिक जटिल संस्थाओं का विकास सम्भव हुआ, क्योंकि किसी भी संस्था का आकार मनुष्यों की परस्पर मिलकर काम कर सकने की क्षमता पर निर्भर होता है। यह केवल तभी सम्भव हो पाता है, जब वे एक-दूसरे के साथ सम्पर्क स्थापित कर सकें।

लेखन का आरम्भ लगभग 3000 ईस्वी पूर्व में हुआ; पहली डाक व्यवस्था 700 ईस्वी पूर्व के आस-पास, छपाई ईस्वी सन् 1450 के आस-पास, दूरलेखन (तार) 1835 में, दूरभाष (टेलीफोन) 1876 में, रेडियो का आम प्रयोग 1915 में, और दूरदर्शन (टेलीविज़न) का आम प्रयोग 1941 में शुरू हुआ। सम्भाव्यत: उद्योग विद्या के इतिहास में ये सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तिथियाँ हैं, क्योंकि भले ही ये ऊर्जा के उपभोग के ऐसे सोपानों की द्योतक नहीं हैं, जिन्हें कि चटपट एक चार्ट पर अंकित किया जा सकता हो, फिर भी इनमें से प्रत्येक ऊर्जा के अधिकाधिक बढ़ते हुए उपभोग के एक सामान्य नमूने की अन्तिम उपज है।

यह कहा जा सकता है कि इन तिथियों में से प्रत्येक एक नए प्रकार की संस्था के आरम्भ की द्योतक है। 3000 ईस्वी पूर्व में हमें ऐसे राज्य का सर्वप्रथम प्रमाण उपलब्ध होता है, जिनमें जटिल राजनीतिक और धार्मिक सोपान तन्त्र थे। 700 ईस्वी पूर्व के आस-पास पहला साम्राज्य बना। पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य में छपाई के आविष्कार के कुछ ही समय बाद संसार की ऐसी सर्वप्रथम समुद्र पार व्यापार करने वाली कम्पनियाँ बनीं, जिनके मालिक अंशधर (शेयर होल्डर) लोग थे और दूरलेखन (तार) के आविर्भाव के साथ जटिल, निर्माण करने वाले कारखाने बने। दूरभाष (टेलीफोन) के साथ कार्टेल (उत्पादक संघ) सामने आए, रेडियो के साथ प्रथम विश्वविद्यालय और राष्ट्र संघ (लीग ऑफ नेशन्स), और दूरदर्शन (टेलीविज़न) के साथ द्वितीय महायुद्ध और संयुक्त राष्ट्र सामने आए। ये आकस्मिक संयोग, मानवीय संस्थाओं की संरचना की भाँति स्वभावतः ही घटित हुए।

संचार (संदेश-प्रेषण) में हुए सुधारों और अधिकाधिक विशेषीकृत

संस्थाओं की उन्नति के कारण भी उन्नति सम्भव हुई, जिसका आरम्भ बहुत ही सामान्य रूप में हुआ था। जब से मनुष्य ने बातचीत करना शुरू किया, संभवतः तभी से वह इस विश्व की प्रकृति के सम्बन्ध में चकित होकर विचार करता रहा। अपने अज्ञान के कारण उसे बड़ी बेकली होती थी, विशेष रूप से तब, जब उसका कोई भाई बिजली गिरने से मर जाता था, या उसका कोई चाचा नदी को पैदल पार करते हुए गहरे पानी में डूब जाता था। केवल रोग द्वारा मृत्यु का तथ्य ही वैज्ञानिक कुतूहल का सम्बन्ध धर्म से जोड़ देने के लिए पर्याप्त था। जिस आरम्भिकतम विज्ञान का हमें पता है, उसका सम्बन्ध स्वयं इस विश्व से नहीं था,—(वह तो पुरोहितों का अधिकार-क्षेत्र था) अपितु दूरियों, भारों और समय को नापने से था। यूनानियों के काल से पहले विश्व की प्रकृति का अध्ययन अपने धार्मिक संदर्भ से पृथक् नहीं हो पाया था। उसके बाद से किसी-न-किसी जगह निर्भीक पुरुषों ने, बहुत बार तो स्वयं चर्च के अन्दर ही, विज्ञान को जीवित रखा और उसके क्षेत्र को तब तक बढ़ाया, जब तक कि विश्वविद्यालय और विद्वत्समितियाँ न बन गईं, जिनके कारण विज्ञान और धर्म दोनों एक-दूसरे से बिलकुल स्वतन्त्र हो गए और विज्ञान की उन्नति हुई। चौदहवीं शताब्दी में एक राजा ने नौवहन में सुधार करने के लिए वैज्ञानिकों को नियुक्त किया था और 1850 में निर्माता लोग स्वयं वैज्ञानिक बन गए थे। आज न केवल नौवहन और उद्योग विज्ञान पर निर्भर हैं, अपितु हमारे यहाँ सबसे बड़ी कमी वैज्ञानिक कर्मचारियों की है।

हमें केवल उन मनुष्यों की आवश्यकता नहीं है, जो बहुत पेचीदा यन्त्रों को संभाल सकते हों और उनके डायलों को पढ़ सकते हों, अपितु उन मनुष्यों को भी आवश्यकता है, जो विशाल दृष्टिकोण से सोच सकते हों। विद्या की शाखाएँ जितनी अधिक विशेषीकृत होती जाती हैं, उतना ही यह अधिक कठिन होता जाता है कि अलग-अलग व्यक्ति उन सब विद्याओं के प्रमुख अंशों को हृदयंगम कर सकें। किन्तु यह समस्या ऐसी नहीं है कि जिसका हल हो ही न सकता हो। इस आवश्यकता की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप काफी बड़ी संख्या में विज्ञान के लेखकों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है और 'साइन्स', 'नैचुरल हिस्ट्री' और नए 'साइन्टिफिक अमेरिकन' जैसे प्रकाशन तैयार होने लगे हैं। राज्यों के अध्यक्ष प्रत्यक्षतः बुद्धिमत्तापूर्वक अपनी आयोजनाएँ तैयार कर सकें, इसके

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लिए इस प्रकार के लेखक और प्रकाशन अत्यावश्यक हैं। अभी हाल तक भी यह दुनिया मानवीय सम्वन्धों के विषय में बिलकुल आधारभूत नियमों को छोड़ कर, जो कि धर्म के बिलकुल आधारभूत सिद्धान्तों के रूप में प्रकट हुए हैं, अपने आयोजनारहित ढंग से चलती रही है। परन्तु अब अधिक देर तक दैवयोग के भरोसे नहीं रहा जा सकता, क्योंकि चौथी प्रावस्था का प्रारम्भ होने के साथ-साथ इतिहास एक चरम अवस्था तक पहुँच चुका है।

ब्रह्मांड के इतिहास में मनुष्य एक चरम सीमा पर पहुँच गया है

यह चरम अवस्था केवल परमाणुओं का ही मामला नहीं है। यदि हम एक विस्फोट द्वारा अपने आपको उड़ाकर समाप्त कर दें, तो उसका अर्थ केवल यह होगा कि यह चरम अवस्था एक नवजीवन का द्वार न होकर एक विशाल उपसंहार मात्र है। हार्लो शेपले ने यह अनुमान लगाया है कि इस विश्व में एक लाख ग्रह ऐसे हैं, जिन पर जीवित प्राणी विद्यमान हो सकते हैं।[1] यह सम्भव है कि इस प्रकार का प्रत्येक ग्रह उस पर निवास करने वाले जीवित प्राणियों द्वारा पदार्थ (भौतिक तत्व) और ऊर्जा के सम्बन्ध में एक संकटमय अवस्था तक पहुँच जाने के बाद परमाणुओं के बादलों में रूपान्तरित होकर समाप्त हो जाता हो। यदि हमारी यही भवितव्यता है, तो हम भी लुप्त हो जा सकते हैं। किन्तु मनुष्य का सारा इतिहास यह सूचित करता है कि हममें अपने परिवेश को और अपने आपको बचा पाने की भी शक्ति है और नष्ट कर सकने की भी।

हम एक चरम अवस्था की देहरी तक एक अपेक्षाकृत स्पष्ट और कम आनुमानिक कारण से पहुँच गए हैं, और वह कारण यह है कि पृथ्वी का पिंड सीमित है। मनुष्य ने इस पृथ्वी के ऊर्जा-विभव की विशाल मात्राओं को अधिकाधिक वेग से नष्ट किया है और अब स्थिति यह आ गई है कि यदि कोई अन्य नए स्रोत न खोज निकाले गए, तो कनस्तर की तली दिखाई पड़ने लगी है। सम्भाव्यतः अन्ततोगत्वा हम सूर्य की ऊर्जा का उपयोग करने के उपाय

---

1. हार्लो शेपले, 'ऑन क्लाइमेट एण्ड लाइफ' हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, कैम्ब्रिज; मैसाचुसैट्स, 1953, पृष्ठ 2-8।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

खोज निकालेंगे; सूर्य की ऊर्जा अपने आपको स्वयं नया करती रहती है और हमारे प्रयोजन की दृष्टि से असीम है। जब सूर्य द्वारा उत्पन्न की गई ऊर्जा पत्थर के कोयले और मिट्टी के तेल का स्थान लेगी, तब हमारे वायु मंडल का खतरनाक रूप से दूषित होना भी समाप्त हो सकेगा और परमाणु-ऊर्जा के अनियन्त्रित प्रयोग द्वारा जीवन के उच्चतर रूपों के लिए संकट के विषय में, जो कि एक विवादग्रस्त विषय है, हमारी चिन्ता भी समाप्त हो जाएगी। जब तक सौर ऊर्जा घर-घर में प्रयोग की वस्तु न बन जाय, तब तक संसार को ऊर्जा के एक समन्वयकर्ता की आवश्यकता है, क्योंकि यह बहुत ही अपव्यय की बात है कि प्रतिद्वन्द्वी राष्ट्र ऊर्जा का अधिकाधिक व्यय करने में एक-दूसरे से होड़ करते रहें। अन्तर्राष्ट्रीय ऊर्जा-नियन्त्रण केवल तभी स्थापित किया जा सकता है, जब हम संसार के साँस्कृतिक एकीकरण के दो महान् केन्द्रों की इस समय चल रही प्रतिद्वन्द्विता को समाप्त कर सकें। इतिहास की चौथी प्रावस्था में हमारे पूर्ण संक्रमण के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा यह प्रतिद्वन्द्विता ही है।

शक्ति के उपभोग की हमारी आवश्यकताओं ने हमें उस बिन्दु तक ला पहुँचाया है, जहाँ मनुष्य जाति के लिए यह कहीं मितव्ययपूर्ण उपाय है कि वह ऐसे दो परस्पर युद्धरत अर्धांशों में, जिनमें से प्रत्येक में एक बड़ी शक्ति और उसके पिछलग्गू या मित्र देश हैं, बंटी रहने के बजाय मिलकर एक अकेली अधि-संस्था के रूप में संगठित हो जाय। इस बात की सम्भावना कम है कि मनुष्य आज तक इतनी सफलता प्राप्त करते रहने के बाद इतना मूर्ख बन जाएगा कि न्यूनतम प्रयास के उस नियम की अवहेलना करे; जो अब तक उसकी प्रगति का मार्गदर्शक रहा है और जो स्वयं मनुष्य की अपेक्षा कहीं अधिक शक्तिशाली है।

यौवन का देश

जब हम उन तेज़ी से होते हुए परिवर्तनों में से गुज़र चुकेंगे, जो इस समय हमारे इतिहास की तीसरी प्रावस्था से चौथी प्रावस्था में संक्रमण के द्योतक हैं, जो विविधीकरण के काल से एकीकरण के काल में हमारे संक्रमण के द्योतक हैं, तब हमारे सामने अनेक गंभीर समस्याएँ उपस्थित होंगी। ये समस्याएँ हैं: खाद्य सामग्री का संभरण, संरक्षण (कंज़र्वेशन), जनसंख्या का नियमन, दीर्घायुष्य,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

और शिक्षा और इन अन्य सबकी उपज-संगठन, निस्सन्देह, खाद्य उत्पादन की विधियों में सुधार के फलस्वरूप अस्थायी रूप से संसार के वनों के वर्तमान विनाश और भूक्षरण की क्षति पूर्ति हो जाएगी। परन्तु यदि हम कृत्रिम उपायों द्वारा समुद्र के पानी, सूर्य के प्रकाश, मिट्टी और हवा से खाद्य सामग्री तैयार करने में और उसका पृथ्वी के अरबों लोगों में वितरण करने में सफल हो भी जाएँ, तो भी यदि हम अन्य समस्याओं का हल न कर सके, तो हम फिर इतिहास की तीसरी प्रावस्था के आरम्भ की ओर, एक नए नव पाषाणिक युग की ओर लौट जाएँगे।

तब पृथ्वी की सतह, यदि कृषि द्वारा नहीं, तो निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए आवश्यक औज़ारों, वस्त्रों, मकानों, वाहनों और सड़कों के निर्माण के लिए हमारे प्रयत्नों के फलस्वरूप बहुत शीघ्र ही नष्ट हो जाएगी। अविशिष्ट जंगलों को काट डाला जाएगा, मरुस्थलों में बाढ़ें आने लगेंगी और जो कुछ थोड़े-से जंगली पशु मनुष्य द्वारा उनके रहने के प्रदेशों को हथियाने के बाद बचेंगे, वे भाग कर पर्वत-शिखरों पर चले जाएँगे, ज्यों-ज्यों कृत्रिम भोजन पर जीवित रहने वाले मनुष्य उतने ही भूभाग में भीड़-भाड़ बढ़ाते जाएँगे, जिस पर कि कुल आठ हज़ार वर्ष पहले केवल कुछ करोड़ शिकारी निवास करते थे, त्यों-त्यों सामाजिक संगठन की समस्याएँ इतनी जटिल होती जाएँगी कि उनको हल कर पाना उस स्वतन्त्रता को गंवाए बिना, जिसके लिए कि हम इस समय संघर्ष कर रहे हैं, सम्भव नहीं होगा।

हम कभी भी अस्तित्व की वर्तमान से पहले की किसी दशा की ओर पूरी तरह नहीं लौट सकते। हम कभी भी अपने उपरि पुरा-पाषाणिक और मध्य-पाषाणिक काल के पूर्वजों के जीवन की स्थिति को प्राप्त नहीं कर सकते, और न हम प्राप्त करना ही चाहेंगे, क्योंकि उस वैज्ञानिक ज्ञान को गवाँ देना हमें सहन नहीं होगा, जिसे इन बीच की शताब्दियों में हमने धीरे-धीरे संचित किया है। परन्तु यदि हम में से कुछ लोग शिकारी जीवन के पहलुओं को फिर अपना सकें, जिन्हें कि हम में से कुछ अन्य लोगों ने कभी गंवाया ही नहीं था, तो वह भला रहेगा। जो भी मानव-वैज्ञानिक आदिमकालीन (असंस्कृत) शिकारियों के साथ रहे हैं, उन सभी ने यह बताया है कि वे शिकारी लोग खिलाड़ी, भद्र और वार्तालाप में कुशल होते हैं। शिष्टाचार, सहयोग, और जिन वनस्पतियों तथा प्राणियों के बीच में वे रहते हैं और जिन से वे अपना भोजन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्राप्त करते हैं, उनके प्रति आदर शिकारियों के व्यवहार के आधारभूत नियम हैं।

दीन-हीनता की स्थिति इतिहास की तीसरी प्रावस्था के आरम्भ में उत्पन्न हुई थी। नवपाषाणिक काल से लेकर ज्यों-ज्यों गाँवों और गन्दी बस्तियों में क्षुद्र लोगों की भीड़ और संख्या बढ़ती गई, त्यों-त्यों यह दरिद्रता की दशा धनी और निर्धन के मध्य, कुलीन सामन्त और दास के मध्य बढ़ते हुए व्यवधान के परिणाम के रूप में एक नासूर की तरह बढ़ती ही गई है। भविष्य में किसी को भी वैसा दीन-हीन होने की आवश्यकता न होगी, जैसा कि आज एशिया का किराये पर भूमि लेकर खेती करने वाला किसान है। शिकारियों में जिस प्रकार की उन्नति के अवसर की समानता रहती है, उस प्रकार की समानता

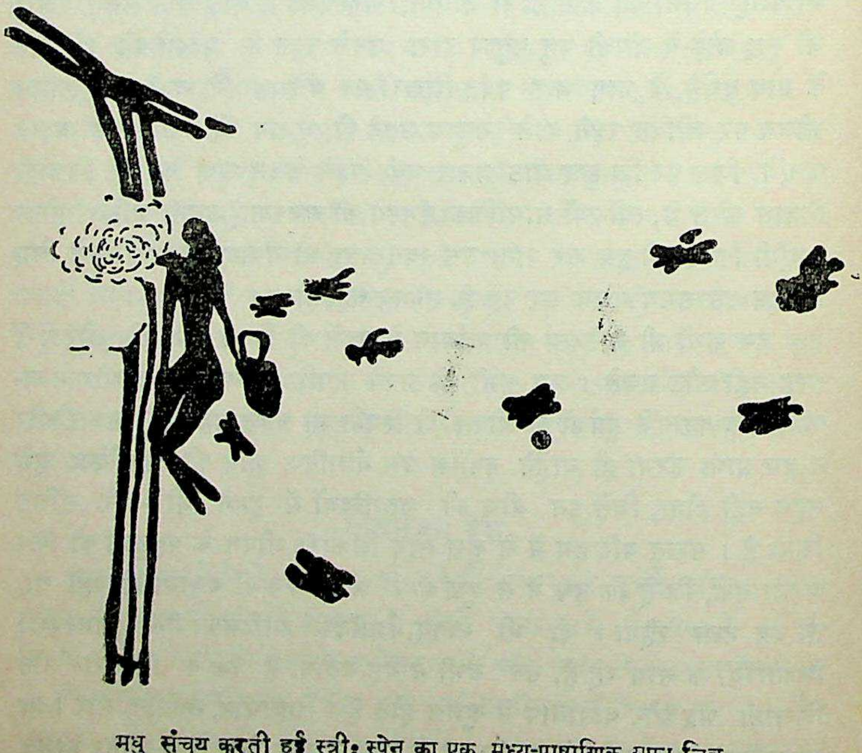

मधु संचय करती हुई स्त्री; स्पेन का एक मध्य-पाषाणिक गुफा चित्र

फिर स्थापित की जा सकती है, किन्तु उसका उपाय केवल यह है कि सब लोगों के स्तर को ऊँचा किया जाय । इसके लिए जन-संख्या को सीमित करने की आवश्यकता है, और वह संसार में शिक्षा के स्तर में सामान्य वृद्धि करके ही की जा सकती है ।

पृथ्वी पर जितने आदमी रह सकते हैं, उनकी अनुकूलतम संख्या का निर्धारण सामग्रियों और ऊर्जा के उपभोग की दृष्टि से नहीं, अपितु मानव प्रकृति की आवश्यकताओं की दृष्टि से किया जाना चाहिए । यद्यपि हम लोग अब फिर शिकारी नहीं बनेंगे, किन्तु हमारी जैव रचना उन शिकारियों जैसी ही है और हमारी जैव आवश्यकताओं का निर्धारण लाखों वर्षों में हुए नैसर्गिक वरण द्वारा हुआ है । हम तभी अधिकतम आनन्दपूर्वक और सुचारु रूप से जीवन-यापन और कार्य कर सकते हैं, जब हम अपने आधुनिक सुधारों द्वारा अपने पूर्वजों की सी रहन-सहन की दशाएँ फिर तैयार कर सकें । शिकारी को अपने घूमने-फिरने के लिए स्थान की आवश्यकता होती है; उसे वृक्षों की घास की, शिलाओं की और जलधाराओं की आवश्यकता होती है; उसे पक्षियों और पशुओं के सान्निध्य की और व्यायाम तथा मनोरंजन के अवसर की भी आवश्यकता होती है । वह ऐसा काम चाहता है । जो कभी-कभी जोखिम का भी हो और जो सदा उसकी सूझ-बूझ को तीक्ष्ण करता रहे । वह यह चाहता है कि वह अपने कुछ घनिष्ठ सम्बन्धियों और मित्रों के एक छोटे से समूह के साथ, जिनके साथ वह आमने-सामने रहकर व्यवहार करता है, एकान्त में रह सके और अपेक्षाकृत बड़े समूहों के साथ उसका अपेक्षाकृत औपचारिक व्यवहार उन सीमाओं के अन्दर रहे, जो व्यक्तिगत स्वभाव के अनुसार बदलती रहती हैं किन्तु आधुनिक रहन-सहन बहुधा जिनका अतिक्रमण कर जाता है । इन सबसे बढ़कर उसके लिए यह आवश्यक होता है कि वह अपने मामलों में स्वयं निश्चय कर सके और उसकी सम्मतियाँ रबड़ की मुहरों का ढेर मात्र न हों ।

यदि मनुष्यों को इस ढंग से जीवन-यापन करने में समर्थ बनना है, तो पृथ्वी की जनसंख्या को बहुत तेज़ी से सीमित करना होगा । जिन उपभोग्य वस्तुओं की हमें आवश्यकता है, उनका निर्माण करने के लिए ऐसी तकनीकी प्रक्रियाएँ निकाली जानी चाहिएँ, जिनसे पृथ्वी की सतह का और अधिक विनाश न हो, और यथाशीघ्र प्राणि-जगत् की फिर वही स्थिति वापस लाई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जानी चाहिए, जो लगभग 6000 ईस्वी पूर्व में हिमाच्छादनोत्तर अनुकूलतम काल में थी। इसका अर्थ है कि नए सिरे से जंगल लगाये जाएँ, जलधाराओं को साफ किया जाय और उनका संग्रह किया जाय और वायु के दूषण को बन्द किया जाय। नगरों का विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिए, उद्योगों को दूर-दूर बिखेरा जाना चाहिए, जिससे प्रत्येक व्यक्ति प्राकृतिक वातावरण में रह सके।

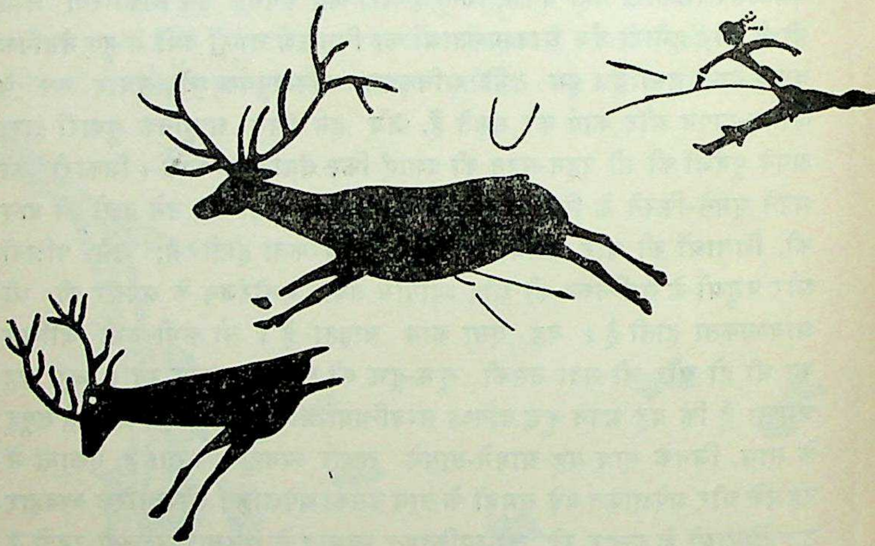

स्पेन का एक मध्य-पाषाणिक गुफा चित्र

जनसंख्या के नियम का एक अंश दीर्घायुष्य को बढ़ाने की चैकित्सिक समस्या भी है। जीवनांक सम्बन्धी आँकड़ों के अनुसार कनैक्टिकट में सन् 1900 में उत्पन्न हुए बच्चों का प्रत्याशित जीवनकाल 50·4 वर्ष था; 1950 में वह 70·6 वर्ष था। यदि चिकित्सक लोग हृदय-रोगों और नासूर (कैन्सर) को परास्त करने का कोई उपाय खोज निकालें, तो इस बात की सम्भावना बहुत काफी है कि हममें से कुछ लोग 'मैथ्यूसेला' बन सकते हैं। यदि चिकित्सा-सम्बन्धी अनुसंधान करने वाले लोग सब एण्डोक्रांइन ग्रन्थियों के रहस्यों का पता चला लें, तो हो सकता है कि हम न केवल अनन्त काल तक जीवित रह सकें,

अपितु अनन्त काल तक तरुण भी रह सकें। तब प्राचीन आयरलैंडवासियों का स्वर्ग, 'तीर-ना-नोग', यौवन का देश, सत्य बन सकता है।

यदि मनुष्य एक ऐसे अभाव-रहित संसार में जीवन-यापन कर सकें, जिसमें सबके लिए कार्य और स्थान हो, तो धनी और निर्धन का, बड़े और छोटे का, शिक्षित और अशिक्षित का उससे अधिक भेदभाव हो ही नहीं सकता, जितना कि अलग-अलग मनुष्यों की उत्तराधिकार में आनुवंशिक रूप से प्राप्त क्षमताओं में अन्तर के फलस्वरूप होना चाहिए। सृजनात्मक और प्रशासनात्मक ढंग की उत्कृष्टतर बुद्धि का महत्त्व सभी जगह अधिक आँका जाएगा। प्रत्येक देश में उच्चस्तर की बौद्धिक शक्ति की कमी के कारण यह आवश्यक हो जाएगा कि विश्व-समुदाय इस, सबसे अधिक मूल्यवान वस्तु को संरक्षित करके रखे और इस बात का ध्यान रखे कि प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम उस सीमा तक अवश्य शिक्षा दी जाय, जिस पर पहुँचकर उसकी बौद्धिक कार्य और नेतृत्व की क्षमताओं का वस्तुनिष्ठ दृष्टि से मूल्यांकन किया जा सके।

छोटे बच्चों को शिक्षा देने में उसकी अपेक्षा कम समय लगना चाहिए, जितना कि आजकल लगता है, क्योंकि विल्डर पैनफील्ड[1] ने यह स्पष्ट कर दिया है कि हम बच्चों को ठीक समयों पर ग़लत विषयों की शिक्षा देते हैं। उदाहरण के लिए, जब बच्चा बोलना शुरू कर रहा होता है, उस समय वह उतनी ही सरलता से चार भाषाएँ सीख सकता है, जितनी कि एक भाषा। चार से लेकर दस वर्ष की आयु तक भाषाएँ सिखाई जा सकती हैं, जो बाद में आवश्यकता पड़ने पर फिर उपस्थित हो जाएँगी। परन्तु यदि हम अपनी शिक्षण की प्रतिक्रिया को अब की अपेक्षा अधिक कार्यक्षम भी बना लें और अधिक वेतन देकर अपेक्षाकृत अधिक सक्षम लोगों को अध्यापक बनने के लिए तैयार कर लें, तो भी यह बिलकुल निश्चित नहीं है कि हम में से बहुत-से लोग एकीकृत विश्व में नेतृत्व कर पाने में समर्थ हो भी सकेंगे। हमारी मस्तिष्क शक्ति को भी एक जगह मिलाने की आवश्यकता है और संसार को एक बनाने

---

[1] विल्डर पैनफील्ड, 'ए कंसिडरेशन ऑफ दि न्यूरोफीजियोलौजिकल मैकेनिज्म्स ऑफ स्पीच ऐंड सम ऐजुकेशनल कौंसिक्वैंसिज'; अमेरिकन अकादेमी ऑफ साइन्स की कार्यवाही; खंड 82, अंक, 5 बोस्टन 1953।

का एक कारण यह खतरा भी है कि कहीं इस शक्ति की कमी न पड़ जाय।

अनेक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि मनुष्य जीवन के प्रत्येक पहलू का नियंत्रण नहीं कर सकता। हम अधिक-से-अधिक यह कर सकते हैं कि हम उन घटकों को, जो समूची संरचना के नियामक हैं, अन्य वस्तुओं से पृथक् कर लें और उनको ठीक ढंग से नियंत्रित करने के लिए कार्य करें। वे घटक मूलतः ये हैं : प्राकृतिक साधनों का संरक्षण; शक्ति उत्पादन; जनसंख्या नियमन; मस्तिष्क शक्ति का पूरा उपयोग और शिक्षा। सामाजिक संरचना की अन्य बारीकियाँ इन घटकों के अन्तिम परिणाम के रूप में स्वयं ही यथास्थान आ जाएँगी, जैसा कि वे सदा करती रही हैं।

हमारी सबसे आवश्यक समस्या भविष्य की सविस्तार योजना बनाना नहीं है, अपितु इन प्रधान समस्याओं को सुलझाना और उनमें से प्रत्येक का उसके स्वाभाविक निष्कर्ष तक अनुगमन करते जाना है। सम्भव है कि कुछ लोगों को प्रव्रजनशील पक्षियों की अन्तर्राष्ट्रीय संरक्षा का प्रश्न बहुत तुच्छ प्रतीत हो, किन्तु यह प्रगति की ओर एक क़दम है। यही बात शान्तिपूर्ण उपयोग के लिए परमाणु शक्ति के समूहीकरण (साझा करने) के विषय में है; यही हाल अन्तर्राष्ट्रीय संतति-नियमन आन्दोलन का है, जिसे जापान में सबसे अधिक सफलता मिल रही है; और यही स्थिति अन्तर्राष्ट्रीय छात्रवृत्तियों, विशेष रूप से प्राक्-विश्वविद्यालय स्तर की छात्रवृत्तियों की भी है।

कोई भी समझदार आदमी अपने देश की प्रभुता का त्याग करने के लिए उससे अधिक तैयार नहीं है, जितना कि वह अपने निजी स्वातन्त्रय को छोड़ने के लिए तैयार है; परन्तु जिस समय वे लक्ष्य, जिन्हें मैंने ऊपर बताया है, पूरे हो जाएंगे, उस समय सारे संसार में प्रभुता की रक्षा करना उतना ही अनावश्यक हो जाएगा, जितना कि इस समय संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा के सीमान्त पर किलेबन्दियाँ करना है। संसार का राजनीतिक एकीकरण पहला आवश्यक क़दम नहीं है। जिस समय तक उत्पात के बिना इसे कर पाना सम्भव होगा, उस समय तक यह अनावश्यक भी हो जाएगा।

जिस समय हम इन समस्याओं पर कार्य कर रहे हैं—और इनमें से कुछ इस समय हमारी आँखों के सामने हैं—उसी समय कुछ अन्य लोगों ने एक नया और साहसपूर्ण अभियान शुरू कर दिया है और वह है बाह्य अन्तरिक्ष की

विजय। यह एक भला लक्षण है, जो स्पष्ट रूप से इस बात का द्योतक है कि हममें से कुछ लोग अब भी वन्य मनुष्य हैं, जो अपने आपको किसी भी बन्धन में, यहाँ तक कि अपने ग्रह (पृथ्वी) की अन्तरिक्षीय सीमाओं के बन्धन में भी बाँधने के लिए तैयार नहीं हैं। हमारे पूर्वजों ने नव-पाषाणिक युग और उसके बाद के युगों में अनेक पौधों और प्राणियों पर विजय प्राप्त की थी, और इतिहास की तीसरी प्रावस्था में विभिन्न कालों में कुछ लोगों ने एक-दूसरे को दास बनाकर रखा, किन्तु मानवीय उत्साह स्थायी रूप से कभी भंग नहीं हुआ। यदि यह उत्साह भंग हो गया होता, तो वर्तमान और भविष्य के अभियानों की सफलता के बारे में हमारी आशा उससे कहीं कम होती, जितनी कि वह अब है।

जैसा कि राष्ट्रपति आइज़नहावर ने एक बार कहा था : "हम संकट के एक क्षण में नहीं, अपितु संकट के एक युग में जी रहे हैं।" संकट के इस युग के लिए ठीक उस तरह के बुद्धिमान, चतुर, और उतने ही वीर, उतने ही प्रतियोगिताशील और उतने ही सहयोगी मनुष्यों के नेतृत्व और आज्ञापालन की आवश्यकता है, जितने कि वे लोग थे, जिन्होंने पहले-पहल महाहस्ति (मैमथ) को मारा था।

पहाड़ों पर और मैदानों में, गर्मी और सर्दी में, उजाले में और अंधेरे में पशुओं को बुद्धिबल से परास्त करने के पाँच लाख वर्ष के अनुभव से हमारे पूर्वजों को वह वस्तु प्राप्त हो गई थी, जिसकी हमें अब भी, यदि हम इस समय पृथ्वी पर फिर रहे सर्पदैत्य (ड्रैगन) को मारना और बाह्य अन्तरिक्ष की राजकुमारी से विवाह करना और एक ऐसे संसार में, जिसमें हर कोई चिर तरूण और चिर सुन्दर होगा, हिरनों से भरी वनभूमियों में सदा सुख से रहना चाहते हों तो, अत्यधिक आवश्यकता है।

एक अन्तिम सन्देश हमारी इस स्वर्ग की कल्पना को मलिन किये हुए है। जिन शिकारियों ने महाहस्तियों (मैमथों) को मारा था और जिन्होंने अपने बुद्धिबल से पशुओं को परास्त किया था, वे तरूण लोग थे, जो अपने यौवन के पूर्ण शिखर पर थे। कम ही लोग पचास वर्ष की आयु तक जीते थे। जो लोग उस प्राचीन काल में इतनी आयु तक पहुँच जाते थे, वे अपने दिन अलाव के पास बैठकर बिताया करते थे और उनके भोजन के लिए माँस लाने का काम उनके

पुत्रों और पौत्रों का रहता था। उनका काम युवकों को उन प्राचीन रीतियों की अच्छाइयाँ समझाना होता था, जिन्हें उनके उन पूर्वजों ने, जो देवता बन गए थे, आविष्कृत किया था और जो सैकड़ों पीढ़ियों में परखी गई थीं और निर्दोष बनाई गई थीं। उन्हें नम्य (अनाग्रही) मन की आवश्यकता नहीं थी।

उनके वंशजों को इसकी आवश्यकता है। आजकल जो वृद्ध जन राष्ट्रों के परिषद-अलावों के चारों ओर बैठते हैं, उन्हें प्राचीन काल के लोगों की अपेक्षा अधिक समझदारी की आवश्यकता है। उन्हें अपने यौवन काल की विचार पद्धतियों को उतना ही शीघ्र त्याग सकने में समर्थ होना चाहिए, जितना शीघ्र कि कोई 'ओना' शर-संधान करते समय अपने वस्त्र को उतार फेंकता है। उनका पालन-पोषण उस पहले के काल में हुआ था, जब अमेरिका महासागरों के पार सुरक्षित रह सकता था, जब अंग्रेज लोग यह समझते थे कि जिब्राल्टर और स्वेज अजेय हैं, और मास्कोवासी अपने बंजर तरुहीन मैदानों के आश्रय में अपने आपको उतना ही सुरक्षित अनुभव करते थे, जितना कि कोई गिलहरी अपने आपको अपने घोंसले में सुरक्षित अनुभव करती है।

क्या ये वृद्ध लोग यह अनुभव नहीं कर सकते और अपने अनुयायियों और समर्थकों को यह नहीं समझा सकते कि एक नए जीवन का पारपत्र उन्हें माँगने भर से मिल सकता है; किन्तु केवल उसी दशा में, जब कि वे ऊँचे टोप वाले और छतरी वाले राजनीतिज्ञों की परम्परागत सतर्कता को त्याग दें और अपना मन उतना साहसी और अनाग्रही बनाएँ, जितना कि उस शिकारी का होता है, जो किसी भालू के पदचिह्न देखता हुआ उसका पीछा कर रहा होता है।

क्या वे इस बात को नहीं समझ सकते कि साँस्कृतिक परिवर्तन का दूसरा विकल्प यथापूर्व स्थिति का बने रहना नहीं, अपितु एक ब्रह्मांडीय परीक्षण की विफलता, मनुष्य की महान् साहस-यात्राओं की समाप्ति है? मुझे लगता है कि वे इस बात को समझ सकते हैं। मैं समझता हूँ कि मनुष्य के दीर्घायुष्य में वृद्ध हो जाने के बावजूद वह इस बाधा पर भी उसी प्रकार विजय पा लेगा, जिस प्रकार उसने अन्य अनेक बाधाओं पर पाई है और वह योजनानुसार आगे और आगे बढ़ता जाएगा।

शब्दावली

टिप्पणी : यह शब्दावली, उस समय तैयार करनी पड़ी, जिस समय मैं अफगानिस्तान में था। भूवैज्ञानिक तथा जलवायु सम्बन्धी शब्दों के बारे में मेरी अनुसन्धान यात्रा के साथी डाक्टर हैनरी काउल्टर ने जो सहायता दी है, उसके लिए मैं अत्यन्त आभारी हूँ । 1961 में परिशोधित ।

अंगकोर बात	कम्बोडिया में एक भग्न मन्दिर का स्थान ।
अकादेमी	दान की स्थिर निधि से चलने वाला प्लेटो का उच्चतर शिक्षा का विद्यालय ।
अक्कादियाई	काँस्य युग के मैसोपोटामिया के एक सामी भाषा-भाषी लोग, जिन्होंने सुमेरियाई संस्कृति को अपना लिया था ।
अगोरा	ऐथन्स का सभास्थल ।
अचीमेनियन	पहला ईरानी साम्राज्य, जो देरियस, साइरस और ग्ज़ैर्क्सस का था ।
अनुमस्तिष्क (सैरीबलम)	मस्तिष्क का एक विशेष भाग, जो मनुष्य में मस्तिष्क के गोलार्धों से ढका रहता है; यह अनुमस्तिष्क सन्तुलन बनाए रखता है ।
अन्तर हिमाच्छादन काल	प्लीस्टोसीन काल में एक के बाद एक हुए चार हिम-बढ़ावों में से किन्हीं दो के बीच का काल ।
अरि री	तारा का महाराजा, जो सारे आयरलैंड का राजा होता था ।
अर्गल	उत्तरी ईरान की एक जंगली भेड़ ।
अर्गोस्टैरोल	मनुष्य शरीर की त्वचा के नीचे की वसा के घटकों में से एक ।
अर्ध मस्तिष्क वाले मनुष्य	लुप्त हो चुके मनुष्य जैसे वानर (प्राइमेट), जिनके बारे में संस्कृति सिद्ध की जा सकती है या मानी जा

	सकती है। शरीर-रचना की दृष्टि से उनमें आधुनिक मनुष्य से मुख्यतया यह अन्तर था कि उनके मस्तिष्क का आकार सैपियन्स मानुष के मस्तिष्क से विकास का एक स्तर नीचे था। उत्तानमानुष।
अल अज़हर	काहिरा का मुस्लिम विश्वविद्यालय, जो ईस्वी सन् 972 में खुला था।
असीरियाई	उत्तरी मैसोपोटामिया के, काँस्य युग के, पिछले भाग और लौह युग के आरम्भिक भाग के, एक सामी भाषा-भाषी लोग।
आइनू	उत्तरी जापान के काकेशियाई आदिवासी।
आन्तरिक टैरीगोइड माँसपेशियाँ	ये दो माँसपेशियाँ तालु से लेकर निचले जबड़े के निचले पृष्ठ भाग के कोनों के अन्दर की ओर वाले पार्श्वों के जोड़ों तक फैली होती हैं। ये जबड़े को दायें-बायें हिलने में समर्थ बनाती हैं।
आमने-सामने रहनेवाले समूह	समाज का आधारभूत एकाँश—ऐसे लोगों का समूह, जो नियमित रूप से और घनिष्ठ रूप से एक-दूसरे से मिलते हैं, जैसे उदाहरण के लिए किसी परिवार के सदस्य। आमने-सामने रहने वाले लोगों का समूह सबसे सरल ढंग की संस्था है। जटिल संस्थाएँ आमने-सामने रहनेवाले लोगों के समूहों के जाल हैं।
आस्ट्रैलोपिथैसाइन	अफ्रीका, फिलस्तीन और जावा में पाये गए फासिल कपि मानवों का समूचा समूह।
इंडीज़ परिषद्	यह स्पेनी सरकार का एक विभाग था, जो सन् 1524 में औपनिवेशिक मामलों को संभालने के लिए बनाया गया था।
इख़वान अल मुसलमीन	आधुनिक मिश्र का एक राजनीतिक-धार्मिक सम्प्रदाय।
इपोमिया बटाटास	शकरकंद।
उंगूलेट	खुरों वाला स्तनपयी पशु।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उत्तान मानुष (होमो इरैक्टस)	मनुष्य की एक लुप्त हो चुकी स्पीशिज़ जिससे सैपियन्स मानुष का विकास हुआ है ।
उपरि पुरा पाषाणिक	उन शिकारी लोगों की संस्कृति, जो मनुष्य द्वारा हिम से जमे प्रदेशों पर पहले सफल धावे और वूर्म हिमाच्छादन की समाप्ति के बीच के काल में रहते रहे थे ।
उपल औज़ार	पानी से घिसकर गोल हुए पत्थर को तोड़कर या फाड़कर बनाया गया एक अपरिष्कृत औज़ार ।
उदर्निता का मार्ग	उत्तरी प्रशान्त महासागर का चक्कर काटकर जाने वाला पूर्व की ओर का बड़ा वृत्ताकार मार्ग, जिसके द्वारा स्पेनवासी लोग पवनों के सहारे फिलिपाइन्स से मैक्सिको जाया करते थे ।
ऊलू	अर्ध चन्द्राकृति चाकू के लिए प्रयुक्त होने वाला ऐस्किमो लोगों का शब्द । इस चाकू का प्रयोग स्त्रियाँ खालें कतरने के लिए करती हैं ।
एता	जापानी अछूतों का एक वर्ग ।
ऐंग्स्ट्रौम	एक सैंटीमीटर का दस करोड़वाँ भाग ।
ऐग्ज़ार्क	बाइज़ैण्टाइन सेना का प्रधान सेनापति ।
ऐमर	खेती किए जाने वाले गेहूँ का आरम्भिक काम ।
ऐलन का नियम	मरुस्थलों और बंजर घास के मैदानों में रहने वाले प्राणियों की टाँगे उसी स्पीशिज़ के या उससे मिलती-जुलती स्पीशिज़ के वनों में या पहाड़ों पर रहने वाले प्राणियों की टाँगों से लम्बी होती हैं ।
ऐल्कैल्ड	गाँव के मेयर (प्रधान) के लिए स्पेनी शब्द ।
ऐस्ट्रोलेब	ज्योतिष का एक यन्त्र, जिसे अरब लोगों ने बनाया था और जिसका उपयोग अक्षाँश रेखाओं के निर्धारण के लिए किया जाता था ।
ओनेगर	पश्चिमी एशिया का जंगली गधा ।

ओरियोपिथैकस	मीओसोन-प्लीओसीन काल का इटली से प्राप्त हुआ वानर(प्राइमेट), जिसे कुछ पुरा जीव-विकास वैज्ञानिक (पैलिओण्टोलौजिस्ट) मनुष्य का पूर्वज मानते हैं ।
ओल्डुवाई	टाँगान्यिका में एक चार सौ फुट का नद कंदर, जिसमें लेबिस लीकी को बालक ओल्डुवाई, ज़िंजानथ्रोपस, और एक आरम्भिक उत्तान मानुष की खोपड़ी मिली थी और जिसमें हाँस रैक को पहले एक मध्य-पाषाणिक कंकाल मिल चुका था ।
ओल्डुवाई बालक	एक आस्ट्रैलोपिथैसाइन के कंकाल के कुछ अंश, जो ज़िंजानथ्रोपस से नीचे मिले हैं और इसलिए यह माना जाता है कि वे उससे पुराने हैं ।
औडियेन्शिया	स्पेन के लोगों का औपनिवेशिक सर्वोच्च न्यायालय ।
औरिगनेसी	पश्चिमी यूरोप में पाई गई तीन उपरि-पुरापाषाणिक संस्कृतियों की, जो परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित थीं, एक श्रृंखला, जो प्रथम उष्ण दोलन और वूर्म हिमाच्छादन के दूसरी बार बढ़ाव के बीच के काल की थी ।
कपि मानव (एप मैन)	वे लुप्त हो चुके वानर (प्राइमेट), जिन्होंने उत्तान (सीधे खड़े होने की) स्थिति और मानवीय दन्त आकृति तो प्राप्त कर ली थी, किन्तु इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि उन्होंने वाणी अधिगत कर ली थी या उनके पास औज़ार या आग थी ।
कबाइली	मध्य अल्जीरिया के निवासी बर्बर ।
कर्तन औज़ार	गंडासे जैसा औज़ार, किन्तु जिसका अनुशोधन बारी-बारी से दोनों पार्श्वों पर चोट मार कर किया जाता था ।
कश्काई	ईरान में दक्षिणी ज़गरौस पर्वत मालाओं में रहने वाले तुर्की भाषा-भाषी यायावरों का एक कनफैडरेशन ।
कसाइत	एक भारोपीय भाषा-भाषी लोग, जिन्होंने 1700 ईस्वी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

	पूर्व के आस-पास मैसोपोटामिया पर धावा बोला था।
कांजेरा मानव	केन्या में पाये गए सैपियन्स मानुष के नमूने, जिन्हें प्लीस्टोसीन काल के ऊपरी भाग का बताया गया है।
काउँट ऑफ दि सैक्रिड लॉगँसिज़	बाइजैण्टाइन साम्राज्य का कोषाध्यक्ष।
काउँट ऑफ प्राइवेट ऐस्टेट्स	बाइजैण्टाइन सम्राटों द्वारा ज़ब्त की गई सम्पदाओं का प्रबन्धक।
काकेसायड	काकेशियाइ या श्वेत जाति।
कानालोआ	हवाई का एक देवता, जिसका सम्बन्ध पूर्वजों के सम्प्रदाय से और कावा-पान समारोह से था।
कामेहामेहा—1	सारे हवाई द्वीप समूह का, जो 1795 में एक जगह संगठित हुआ था, सबसे पहला राजा।
कावा	पोलिनेशिया का एक पेय, जो एक प्रकार की काली मिर्च की जड़ से तैयार किया जाता है।
कार्बन-14 द्वारा काल निर्धारण	प्राणियों के अंगों के किसी पुरातत्वीय नमूने या नमूनों के समूहों के काल निर्धारण की एक पद्धति, जिसमें उसके कार्बन-14 के परमाणुओं के विघटन की मात्रा को नाप कर उसका काल निर्धारण किया जाता है।
कार्यालय का अध्यक्ष (मास्टर ऑफ ऑफ़िसिज)	बाइजैण्टाइन साम्राज्य का प्रधान मन्त्री।
कासा डि कण्ट्रेटेशियन	स्पेन का व्यापार बोर्ड, जिसे अमेरिकी उपनिवेशों का प्रबन्ध करने के लिए सन् 1503 में बनाया गया था।
कीलाकार, कीलाक्षर	लेखन की एक पद्धति, जिसे सुमेरियाई लोगों ने शुरू किया था, जिसमें अक्षर मिट्टी की नरम पटियाओं पर या मुहरों पर फन्नी की आकृति की एक लोहे की क़लम से खोदे जाते हैं।
कुकुई की गिरी	हवाई द्वीप में बत्ती के रूप में जलाने के लिए प्रयोगों में आने वाली एक गिरी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कुठार (हाथ कुल्हाड़ी)	बादाम की आकृति का क्वार्टज़ाइट या चकमक के क्रोड से बना हुआ एक उपकरण, जो दोनों सिरों और दोनों पश्वों की ओर से सममित होता था और जिसे दोनों सिरों पर से पैनाया गया होता था।
कुमर	शकरकंद का एक नाम, जो दक्षिणी अमेरिका और पोलीनेशिया दोनों में प्रयुक्त होता है।
कुर्द	भारोपीय भाषा-भाषी पहाड़ी लोग, जो उस प्रदेश में रहते हैं, जहाँ ईरान, ईराक, तुर्की और सीरिया की सीमाएँ आपस में मिलती हैं।
कू	हवाई द्वीप का युद्ध का देवता।
केन	हवाई का सबसे बड़ा देवता—स्रष्टा।
कैनम मैण्डिबल	केन्या में पाया गया एक सैपियन्स जबड़े का एक टुकड़ा, जिसका काल प्लीस्टोसीन के आरम्भ का काल माना जाता है।
सीलाकैन्थ	एक बहुत ही आदिमकाल की मछली, जो हाल ही में अफ्रीका के निकट के समुद्रों में पाई गई है—यह एक जीवित फासिल है।
कोर्टेस	संसद् के लिए स्पेनी शब्द। यह मैक्सिको के विजेता का नाम भी था।
कोरैजीडोर	किसी नगर के महापौर के लिए स्पेनी शब्द।
क्रोड (चकमक)	चकमक की गाँठ का केन्द्रीय भाग या नाभिक, जो छिपटियाँ, छिपटी-फलक या फलक उतार कर बनाया जाता है।
क्रोमोसोम	कोशिका के नाभिक के अन्दर एक सूक्ष्मवीक्षण से देखा जा सकने योग्य अतिसूक्ष्म रेशेदार तत्व।
खरोष्ठी	एक भारतीय वर्णमाला, जो आरामेक (फिलस्तीन के उत्तर पूर्व की ओर के प्रदेश आरामिया की भाषा) से निकली है।
गलित मोम	धातु के बने सामान को ढालने की प्रक्रिया, जिसमें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

	पहले उस वस्तु का नमूना मोम से बनाया जाता है, फिर उस पर चिकनी मिट्टी लेप दी जाती है और अन्त में मोम को पिघालकर छेदों में से बाहर निकाल लिया जाता है, जिससे ढलाई के लिए साँचा तैयार हो जाता है।
गिबन	दक्षिण पूर्वी एशिया के कुछ भागों और इंडोनेशिया में रहने वाले छोटे कपियों की एक प्रजाति (जीनस)।
गुल्ली (टोगल)	एक यान्त्रिक उपकरण, जो जब तक तना रहता है, तब तक मज़बूती से जकड़ा रहता है, किन्तु ढीला होते ही छूटकर अलग हो जाता है।
गौसीपियम	कपास की एक प्रजाति, जो 2500 ईस्वी पूर्व तक में पेरू और भारत में बोई जाती थी। गौसीपियम आर्गोरियम कपास का भारतीय जंगली आदिरूप है गौसीपियम रेमंडियाई अमेरिकन आदिरूप। पेरू में खेती की जाने वाली कपास गौसीपियम बार्बाडेंस है, जिसे कुछ विशेषज्ञ लोग उपरोक्त दो कपासों का संकर मानते हैं।
गंडासा (चौपर)	चकमक या अन्य किसी पदार्थ की एक अपरिष्कृत क्रोड, जिसे एक ही ओर की धार का अनुशोधन करके पैना लिया जाता था।
ग्लोगर का नियम	आर्द्र वनों में रहने वाले पशुओं की खालों और बालों का रुझान काले या लाल रंग की ओर होता है। बंजर प्रदेशों में रहने वाले पशुओं का पाँडु या धूसर रंग की ओर।
घी	जलमहिष के दूध का गर्म किया हुआ मक्खन।
घोल (स्लिप)	मिट्टी के बर्तनों की ऊपरी तह की एक परत, जो उसे आग में तपाने से पहले बढ़िया चिकनी मिट्टी पोतकर तैयार की जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चकमक	एक कठोर पत्थर, जो मिथ्या स्फटिक युक्त सिलिका से बना होता है, जिसका उपयोग आदिम मनुष्य औज़ारों के लिए किया करते थे। साथ ही 'चैल्सीडोनी और बहुत ही बढ़िया दानेदार क्वार्टज़्ज़ से बनी चर्ट का एक भेद'—ऐल० वी० पिर्सन और ए० क्नौफ, 'रौक्स एण्ड मिनरल्स', जौन वाइले एण्ड संस, न्यूयार्क, 1948, पृष्ठ 274।
चक्की	आटा पीसने का पत्थर का एक सीधा सादा उपकरण। घूमती चक्की—एक चूलदार वृत्ताकार पत्थर की अनाज पीसने की चक्की, जिसे हाथ से घुमाया जाता है। काठ चक्की—एक चौकोर पत्थर की अनाज पीसने की चक्की, जिसमें ऊपर की सतह नतोदर (अवतल) होती है और जिसे ऊपर के पत्थर को आगे और पीछे की ओर हिलाकर अनाज पीसा जाता है।
चतुर्थ हिमाच्छादन का बढ़ाव	प्लीस्टोसीन काल के चार बड़े हिम के बढ़ावों में से अन्तिम बढ़ाव।
चरती मैदान	अरब के मरूस्थल का एक प्रदेश, जिसमें चकमक बहुत बिखरा पड़ा है।
चाउ	वे चीनी लोग, जिन्होंने शाँग राजधानी आनयाँग को नष्ट कर दिया था और काँस्य युग के एक अन्य राजवंश की स्थापना की थी।
चिन	चीन के लौह युग के लोग, जिन्होंने उस देश को पहले-पहल संगठित करके एक किया था। उनका राज्य काल 222 ईस्वी पूर्व से 206 ईस्वी पूर्व तक रहा।
चिर हिम (परमाफ्रौस्ट)	स्थायी रूप से जमी हुई भूमि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चुरिंगा	आस्ट्रेलियाई आदिवासियों द्वारा बनाई गई पत्थर या लकड़ी की एक वस्तु, जिसे वे पवित्र मानते हैं। कुछ चुरिंगों को तेज़ी से घुमाया जा सकता है, जिसके कारण ज़ोर की 'घूं घूं की आवाज़ होती है। ये समारोहों के अवसरों पर काम आते हैं।
चोंचदार औज़ार	चकमक की ग्रन्थि से या उपल से बना हुआ एक अपरिष्कृत औज़ार, जिसमें केवल एक सिरे को अनुशोधन करके चोंच की आकृति में गढ़ लिया जाता है।
छितराना	घासों और फलियों की एक प्रजनन सम्बन्धी क्षमता, जिसके द्वारा पकने के समय उनके तुश या डोडे स्वतः खुल जाते हैं, जिससे बीज़ बिखर जाते हैं और इससे वे स्वत: मिट्टी में बो दिए जाते हैं; जिस परिवर्तन के कारण यह क्षमता नष्ट हो जाती है, उसके कारण प्रजनन बन्द हो जाता है और फिर वह केवल मनुष्य की सहायता से ही हो सकता है और इसके फलस्वरूप फसल काटी जा सकती है।
जर्थुश्त्र का अनुयायी (पारसी)	ईरान के एक धार्मिक अग्निपूजक सम्प्रदाय का अनुयायी।
जाइगैण्टोपिथैक्स	दक्षिणी चीन से प्राप्त हुआ प्लीस्टोसीन काल का एक फासिल कपि।
जार्मो	ईराक का एक आरम्भिक नव-पाषाणिक स्थल, जिसकी खुदाई रौबर्ट ब्रेडवुड ने की थी।
जिन्न	यह भूत-प्रेत इत्यादि के लिए अरबी शब्द है।
ज़िंजानथ्रोपस	टाँगान्यिका में ओल्डुवाई कन्दरा से प्राप्त हुआ एक बड़ा आस्ट्रैलोपिथैसाइन।
ज़ीन	एक प्रोटीन का कण, जो क्रोमोसोम का एक अंश होता है, जिसके द्वारा, यह माना जाता है कि पैत्रिक स्वभाव सन्तान में आता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ज़ी मेज़	मक्का ।
जोमोन	जापान की एक मध्य-पाषाणिक और नव-पाषाणिक संस्कृति, जो अपने प्राचीन मृत्पात्रों के लिए प्रसिद्ध है ।
टट्टर और पलस्तर; टट्टर बाँधना	दीवार बनाने की एक तकनीक, जिसमें एक कतार में बाँस गाड़ कर उनके बीच में लचकीली खपचियाँ बुन दी जाती हैं और उनकी सतह पर गारे या मिट्टी का लेप कर दिया जाता है ।
टार्पन	पूर्वी यूरोप और पश्चिमी एशिया का जंगली घोड़ा ।
ट्राइडेकना	एक विशालकाय सीपी, जो प्रशान्त महासागर में पाई जाती थी और जिसके खोल का उपयोग माइक्रोनेशियाई और पोलीनेशियाई लोग औज़ार बनाने के लिए करते थे ।
टुंड्रा	उत्तरी ध्रुव का वह दलदली प्रदेश, जो स्थायी रूप से जमी हुई भूमि के ऊपर फैला हुआ है ।
डैन्यूबियन	मध्य यूरोप के एक नव-पाषाणिक लोग ।
ड्रूइड	गैर ईसाई कैल्टिक (आयरलैंडवासी) पुरोहित ।
डंकाली	इथियोपिया के पठार और लाल सागर, के बीच में मरूस्थल में रहने वाले हामी (हैमाइट) लोगों का एक समूह ।
तक्षणी	चकमक की बनी एक छेनी, जो किसी फलक के सिरे के एक पार्श्व से एक कतर हटाकर बनाई जाती थी ।
तप	पोलीनेशिया का वल्कल वस्त्र ।
तप लट्ठा	वह लट्ठा, जिस पर वल्कल को कूट-कूट कर 'तप' वस्त्र तैयार किया जाता है ।
तांग	एक चीनी राजवंश, जिसका शासन लगभग ईस्वी सन् 907 से लगभग 960 तक रहा ।
तापानुशीतन	बार-बार तपा कर और कूटकर काँबे को कठोर करने

(ऐनीलिंग)	की प्रक्रिया।
तियोसैन्तली	एक जंगली घास, जिसके विषय में यह माना जाता है कि उसका सम्बन्ध खेती की जाने वाली मक्का के कुछ रूपों के विकास से रहा है।
तीर ना नोग	यौवन का देश—प्राचीन आयरलैंड वालों की स्वर्ग की कल्पना।
तुआथ	प्राचीन आयरलैंड में भूमि का एक खंड; मूलतः इसका अर्थ था 'लोग'।
तुआरेग	सहारा में रहने वाले, उष्ट्रारोही बर्बर भाषा-भाषी यायावरों का एक समूह।
त्रिप्सैकम	एक जंगली घास, जिसके विषय में यह माना जाता है कि उसका सम्बन्ध खेती की जाने वाली मक्का के अनेक रूपों के विकास से रहा था।
त्वरण का नियम (लॉ ऑफ ऐक्सेलरेशन)	न्यूटन का नियम; यह वह सिद्धान्त है, जो गति करते हुए पदार्थों की क्रमशः गति बढ़ते जाने की चाल की संचयी वृद्धि पर लागू होता है।
त्से याँग मानव	दक्षिणी चीन से प्राप्त हुआ प्लीस्टोसीन के ऊपरी भाग के आरम्भिक काल का एक कंकाल।
दबाव द्वारा कतर उतारना	चकमक के औज़ारों को पैनाने की वह प्रक्रिया, जिसमें उन पर चोट न करके उनके एक किनारे को लकड़ी या हड्डी के टुकड़े से या दाँतों से दबाकर पैनाया जाता है।
दास वर्ग (बौंड क्लास)	प्राचीन आयरलैंड के दास और भूमिहीन, सम्पत्तिहीन स्वतन्त्र मनुष्य।
'दिन के साथ सम्मुख आने की पुस्तक' या 'मृतकों की पुस्तक'	प्राचीन मिश्रवासियों की एक धार्मिक पुस्तक, जिसमें मृतक की आत्मा को ओसिरिस के देश में पहुँचने के लिए मार्गदर्शन दिया गया है।
नौथोई	होमरकालीन यूनान में रखेलों से उत्पन्न बच्चे।
नोम	प्राचीन मिश्र का एक प्रान्त।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नोमार्क	प्राचीन मिश्र के किसी प्रान्त का राज्यपाल ।
धर्म पुस्तक में वर्णित लोग	ईसाइयों, यहूदियों और कभी-कभी ज़रथुश्त्र के अनुयायियों (पारसियों) के लिए मुसलमानों द्वारा प्रयुक्त किया जाने वाला शब्द ।
नियंडरथल मानव	फासिल मानव की एक उप स्पीशिज़, जिसकी विशेषता खोपड़ी की नीची मेहराब, लम्बा, थूथनी जैसा, ठोडीरहित चेहरा और भारी लम्बी हड्डियों वाली बनावट है ।
न्यूनतन प्रयास का नियम	तापगतिकी (थर्मोडाइनैमिक्स) का दूसरा नियम या ऊर्जा के संरक्षण का नियम; यह वह प्राकृतिक सिद्धान्त है, जिस पर व्यक्तियों और समूहों का परस्पर एक-दूसरे के साथ मिले रहना और समतुलन आधारित है ।
नव-पाषाण काल	नव-पाषाणिक युग ।
नव-पाषाणिक	रहन-सहन की एक पद्धति, जिसमें परिष्कृत पत्थर के औज़ारों का प्रयोग खेती और पशुपालन, या इन लक्षणों का कुछ मिश्रण पाया जाता था । संसार के किसी भी भाग में रहा ऐसा काल, जिसमें लोग इस ढंग से रहते थे या रहते हैं ।
नव-पाषाणिक गोष्ट चतुष्टयी	भेड़, बकरी, सुअर और गौ ।
नाइसियाई घोड़े	बड़े घुड़सवारी के घोड़े, जो लौहयुगीन ईरान में पाले जाते थे ।
परिष्कार करना	चकमक के औज़ारों को छोटी-छोटी कत्तरें उतारकर पैमाने की प्रक्रिया ।
परिष्कृत पाषाण कुठार	किसी कठोर सुदृढ़ पत्थर के तोड़ने, घिसने और चमकाने की प्रक्रिया द्वारा बनाया गया कुल्हाड़ी का फलक ।

पर्वतों और शिखरों का राजा (किंग ऑफ दि हिल्स ऐंड पीक्स)	आयरलैंड की किसी काउंटी का अध्यक्ष ।
पवनोढ़ मृत्तिका	बारीक, पवन द्वारा किसी जगह लाकर इकट्ठी की गई मिट्टी, जिसमें गाद जैसे छोटे-छोटे कण होते हैं ।
पारिस्थिति की विज्ञान (ईकोलोजी)	किसी भी परिवेश में प्राणियों और वानस्पतिक स्पीशिजों के कुल योग के मध्य विद्यमान प्रकृति के सन्तुलन का विज्ञान ।
पिथैकैन्थ्रोपस इरैक्टस	जावा में पाये गए फासिल अर्धमस्तिष्क वाले मनुष्यों की एक स्पीशिज़ ।
पिथैकैन्थ्रोपस रोबस्टस	पिथैकैन्थ्रोपस की एक स्पीशिज़, जिसे जावा से प्राप्त हुई एक विशाल और पाशविक-सी खोपड़ी के आधार पर पहचाना गया है ।
पुरा-ध्रुवीय जीव-जन्तु	उत्तरी गोलार्द्ध के शीततर प्रदेशों के प्राणियों का एक विशेषतासूचक समूह ।
पूरे मस्तिष्क वाले मनुष्य	वे होमीनिड वानर, जो मस्तिष्क के आकार की दृष्टि से आधुनिक मनुष्य के स्तर पर और सैपियन्स मानुष की लुप्त हो चुकी तथा जीवित जातियों के स्तर पर ही थे ।
पृष्ठ निक्षेप (ब्लूम)	लोहे का वह स्पंज जैसा अंश, जो पिघलाने पर कच्ची धातु में से रिस कर अलग हो जाता है ।
पृष्ठ निक्षेप भट्टी (ब्लूमरी)	लोहा पिघलाने की एक विशेष भट्टी ।
पैडैगोग	वह यूनानी दास, जो बालक को घर से विद्यालय लाया ले जाया करता था और आवश्यकता होने पर उसे दंड भी देता था ।
पौड कौर्न	मक्का का एक आदिमकालीन प्रकार, जिसमें प्रत्येक दाना अलग-अलग आवरण में बन्द रहता है ।
पौरोहित लेखन	मिश्र में लेखन का एक प्राचीन रूप, जो पैपाइरस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(हियैरेटिक)	पर एक बुरुश द्वारा लिखने के लिये प्रयोग में आता था।
प्रतीक	ऐसी कोई भी वस्तु, जो किसी अन्य वस्तु की द्योतक हो।
प्रसारवादी	वह व्यक्ति, जो यह मानता है कि कोई भी साँस्कृतिक विशेषता एक से अधिक बार आविष्कृत नहीं होती और यह कि, सब साँस्कृतिक समानताएँ पारस्परिक सम्पर्क का परिणाम हैं।
प्रहार मुख	किसी चकमक की क्रोड पर से चपटी पतरियाँ उतार कर बनाई गई समतल सतह, इस पर से बाद में चोट करके अन्य पतरियाँ, पतरी फलक या फलक उतारे जा सकते है।
प्रेयटरी प्रीफैक्ट	बाइज़ैण्टाइन साम्राज्य के चार प्रीफैक्टों में से किसी भी एक का राज्यपाल।
प्रोकौंसल	पूर्वी अफ्रीका का एक विलुप्त हो चुका वानर, जो कपियों, और आस्ट्रेलोपिथैसाइनों और मनुष्यों का पूर्वज रहा होगा।
प्रोक्रूस्टीज़	एक डाकू, जो लोगों को पकड़कर एक खाट पर लिटाता था और यदि उनकी टाँगें खाट से लम्बी हों तो उन्हें काटकर, और छोटी हों तो बलपूर्वक खींच कर खाट के बराबर कर देता था।
प्लीओसीन	सैनोज़ोइक काल के सात उपविभागों में से पाँचवाँ उप विभाग।
प्लीस्टोसीन	सैनोज़ोइक काल का छठा उप विभाग, जो लगभग दस लाख वर्ष से पूर्व से लेकर लगभग आठ हज़ार ईस्वी पूर्व तक रहा। कुछ भूवैज्ञानिकों का यह मत है कि हम अब भी प्लीस्टोसीन युग में हैं; या 'प्लीस्टोसीन सैनोज़ोइक काल के पिछले भाग का वह अंश है, जिसकी विशेषता जलवायु का बार-बार

	ठंडा होना है, जिसमें उच्च तथा मध्य अक्षांशों में बार-बार सुदृश्य हिमाच्छादन होते रहे हैं और जिनका सम्बन्ध समुद्र के स्तर में होने वाली विश्वव्यापी घटबढ़ से रहा है। इसकी विशेषता आधुनिक घोड़े, ढोर, मैंमथों, ऊँटों और मनुष्य का अविर्भाव और एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप तक प्रव्रजन भी रहा है।" रिचर्ड ऐफ फ्लिंट, 'ग्लेशियल जियोलौजी एण्ड दी प्लीस्टोसीन ईपक' जौन वाइले एण्ड संस, न्यूयार्क, 1947, पृष्ठ 208 ।
फलक (ब्लेड)	चकमक का समानान्तर पार्श्वों वाला एककोरा टुकड़ा जिसकी मोटाई लगभग एक समान होती है, और जिसे सामान्यतया एक नलिकाकृति क्रोड (कोर) से तोड़ कर बनाया जाता है।
फलक क्रोड	एक सावधानी से तैयार की गई चकमक की क्रोड, जिसमें एक प्रहार-मुख बना रहता है, और जो सामान्यतया नलिकाकृति होती है। इस क्रोड पर बड़ी कुशलता के साथ चोट करके फलक उतारे जाते हैं, सामान्यतया सीधे हथौड़े के साथ सम्पर्क न होने देने के लिए बीच में कोई लचकदार वस्तु रख दी जाती है।
फिदायान इस्लाम	आधुनिक ईरान का एक राजनीतिक-धार्मिक साम्प्रदाय।
फू साँग	एक अनपहचाना देश, जो ईस्वी सन् 499 के कहे जाने वाले एक विवरण में चीन से चार हज़ार मील पूर्व की ओर विद्यमान बतलाया गया है।
फोन्तेश्वाद	एक फ्राँसीसी गुफा में पाये गए तृतीय हिमाच्छादन काल के सैपियन्स मानुषों के दो नमूनों के अवशेष, जो स्तर की दृष्टि से उन नियंडरथल मनुष्यों के साँस्कृतिक अवशेषों से नीचे और पृथक् हैं, जिनसे कि वे स्पष्टतया पहले के थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बख्तियारी	मध्य जगरौस पर्वतमालाओं के ईरानी भाषा-भाषी खानाबदोश (यायावर) लोगों का एक संघ (फैडरेशन)।
बर्गमैन का नियम	किसी एक ही स्पीशिज के उष्ण रक्त वाले प्राणी ठंडे प्रदेशों में बड़े आकार के होते हैं और गर्म प्रदेशों में छोटे आकार के।
बर्छा क्षेपक	लकड़ी का बना हुआ एक उपकरण, जो भुजा की लम्बाई को बढ़ाने के लिए और इसके फलस्वरूप बर्छा फेंकने की उसकी शक्ति को बढ़ाने के लिए काम में लाया जाता था।
बर्बर	उत्तरी अफ्रीका के हामी भाषा-भाषी निवासी।
बल्ली	आयरलैंड का कोई कस्बा।
बान्तू	पूर्वी अफ्रीका के नीग्रो, जो एक ही परिवार की भाषाएँ बोलते हैं; इस भाषा परिवार का नाम भी बान्तू है।
बार्बेरी कपि	भूमि पर रहने वाले बन्दरों की एक स्पीशिज, जो उत्तरी अफ्रीका और जिब्राल्टर में चट्टानी प्रदेशों में रहती है।
बाहुगमन	वृक्षों पर चलने-फिरने की एक पद्धति, जिसका उपयोग कपि, क्रोशक बन्दर और मकड़ी बन्दर करते है, वे पेड़ों के ऊपर हाथों के बल झूलते हुए चलते हैं।
बाह्य टैरीगोइड माँसपेशियाँ	ये दो माँसपेशियाँ हैं, जो तालू से लेकर निचले जबड़े की हिलाने वाली मुंडियों (कौंडाइल्स) को ढकने वाले जोड़ों तक फैली हुई हैं। ये माँसपेशियाँ निचले जबड़े को आगे की ओर हिलाती हैं और मुँह को खुलने में सहायता देती हैं।
बुशमैन	दक्षिणी अफ्रीका के आदिवासी शिकारी।
बैक्ट्रियन ऊँट	मध्य एशिया का दो ककुद वाला ऊँट।
बैरक्टार	अल्बानिया का कुल प्रमुख।
बो एयर	पशुपालक प्रमुख, प्राचीन आयरलैंड का तृतीय श्रेणी का स्वतन्त्र किसान। वह मकानों और पशुओं का

	तो स्वामी होता था, किन्तु खेती करने के लिए भूमि सामन्तों से किराये पर लेता था।
बौस ब्रैचीसिरोस	नव-पाषाणिक पशुओं की एक छोटी-छोटी सींगों वाली नस्ल।
बौस प्रिमिजेनियस	जंगली बैल, जो सम्भाव्यतः आधुनिक पशुओं की अधिकाँश नस्लों का पूर्वज था।
ब्राह्मी	एक भारतीय वर्णमाला, जो उसके पहले की दक्षिणी अरब की एक वर्णमाला से निकली थी।
भीतरी झुकाव (टम्बल होम)	बारूद युग के पाल से चलने वाले जहाजों की घंटी की आकृति की नौतल की बनावट, जिसके कारण जहाज़ के पार्श्वों की ओर तोपें छोड़ी जा सकती थीं और फिर भी जहाज़ उलटता नहीं था।
भौंह उद्रेख	वे अस्थिमय उभार, जो मनुष्य में मस्तक से चेहरे की ओर संक्रमण के सूचक हैं।
मंगोल जातीय (मंगोलोइड)	तथाकथित पीली जाति।
मग्देली	पश्चिमी यूरोप की उपरि पुरा पाषाणिक काल की प्रामाणिक संस्कृतियों में से अन्तिम, जिसकी विशेषता रेनडियर का शिकार और अपरिष्कृत फलकों के साथ हड्डी और शृंगों के बने हुए औज़ार थे।
मदचक्र	मादा वानरों में सामयिक कामेच्छा का चक्र, जो डिम्बक्षरण के समय अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है।
मन्दगामी शिकार	कछुए, घोंघे, भू-गिलहरी (गोफर) और छछूँदर जैसे प्राणियों की एक श्रेणी, जिन्हें खाने के लिए पुरुषों के अलावा स्त्रियाँ या बच्चे भी पकड़कर ला सकते हैं। मनुष्य जैसे प्राणियों के इतिहास में मन्दगामी शिकारों का संग्रह आजीविका के साधन के रूप में शिकार से पहले होता रहा होगा।

मध्य-पाषाणिक	उन शिकारी लोगों की संस्कृतियाँ, जो वूर्म हिमाच्छादन के अन्त और कृषि तथा पशुपालन के आरम्भ के बीच के काल में रहते रहे थे।
मस्तिष्क वृन्त (ब्रेन स्टेम)	मस्तिष्क का वह निचला भाग, जो मैड्यूलरी विवर तक फैला होता है और जिससे अस्वच्छिक क्रियाओं का नियमन होता है।
महा-पाषाणिक मकबरे	बड़े-बड़े पत्थरों से बने हुए एक प्रकार के मकबरे; विशेष रूप से वे, जो उत्तर-पश्चिमी यूरोप में हैं और जिनका काल नव-पाषाणिक युग के पिछले भाग और काँस्ययुग के आरम्भिक भाग का माना जाता है।
महारन्ध्र (फोरामैन मैगनम)	कपाल के आधार में बना हुआ छिद्र, जिसमें से हो कर मस्तिष्क वृन्त गुज़रता है।
माकाहिकी	हवाई द्वीपों का एक पवित्र चिन्ह।
मातावैल	दक्षिणी अफ्रीका का एक बान्तू कबीला।
मा तुआन लिन	तेरहवीं शताब्दी का एक चीनी लेखक, जिसने यात्रियों की कहानियों के एक संग्रह का संकलन किया था।
मानव कपि	आस्ट्रैलोपिथैसाइन। 'कपि मानव' भी यही कहलाते हैं।
मानवमिति	मानव शरीरों को नापने की तकनीकी विद्या।
मानुष (होमो)	वह प्रजाति, जिसमें सब मनुष्य सम्मिलित हैं। इसकी दो स्पीशिज़ें हैं, उत्तानमानुष और सैपियन्स मानुष।
मापा मानव	दक्षिणी चीन में मिला मध्य प्लीस्टोसीन के पिछले भाग का एक कंकाल।
मिंग	एक चीनी राजवंश, जिनका शासन ईस्वी सन् 1368 से 1644 तक रहा।
मिनोअन	क्रीट की काँस्य-युगीन संस्कृति।
मिस्ट्री	एक प्राचीन यूनानी धार्मिक संघ (असोसियेशन) और उसके क्रिया कलाप।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मियाओ	दक्षिणी चीन के एक आदिवासी लोग ।
मीओसीन	सैनोज़ोइक काल के सात प्रभागों में से चौथा प्रभाग ।
मुखिका युक्त मंच	प्रहार-मुख, जैसा कि छोटी छिपटियाँ उतारकर बनाया जाता है ।
मुल्ला	मुसलमान धर्म पुरोहित ।
मू	प्रशान्त महासागर में लुप्त हो गया एक काल्पनिक महाद्वीप ।
मूस्तेरी	मध्य पुरा-पाषाणिक संस्कृतियों का एक समूह, जिसका कुछ क्षेत्रों में आरोप नियंडरथल मानव पर किया जा सकता है ।
मेदिस	प्राचीन ईरान के एक लोग, जिसकी राजधानी अकबताना, आधुनिक हमादान, थी ।
मैगान्थ्रौपस पैलियोजावानिकस	एक आस्ट्रैलोपिथैसाइन, जिसे जावा से प्राप्त हुए एक जबड़े के टुकड़ों के आधार पर पहचाना गया है ।
मैटिक	ऐथन्स में रहने वाला कोई भी स्वतन्त्र विदेशी व्यक्ति जिसे राजनीतिक वोट देने का अधिकार नहीं होता था ।
मैथ्युसेला	एक सन्त, जो कहा जाता है कि 969 वर्ष जिया था ।
मैनीज़	मिश्र के प्रथम राजवंश का पौराणिक संस्थापक ।
मैलानिन	मानवीय और पशुओं के ऊतकों में पाया जाने वाला एक दानेदार रंग ।
मैसीटर माँसपेशियाँ	ये दो माँसपेशियाँ हैं, जो गंडास्थि की मेहराबों और गंडस्थल (मैलर) से लेकर निचले जबड़े के निचले पृष्ठ भाग के कोनों तक फैली हुई हैं । इनके सिकुड़ने से शंख माँसपेशियों (टैम्पोरल) को निचले जबड़े को ऊपर खींचने में सहायता मिलती है ।
मोर तुआथ	आयरलैंड की कोई काउंटी ।
म्यूज़ियम	सिकन्दरिया में 323 ईस्वी पूर्व में टोलैमी प्रथम द्वारा स्थापित किया गया उच्चतर शिक्षा का स्थिर दान से

	चलने वाला विद्यालय।
याओ	दक्षिणी चीन के आदिवासी लोग।
यूरियस	सर्प की आकृति का एक मस्तक का आभूषण, जिसे प्राचीन मिश्र के राजा अपनी प्रभुता के प्रतीक के रूप में धारण किया करते थे।
राल	मध्य अमेरिका के आदिवासियों द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाला एक देशज सुगन्धित गोंद।
रिफ़ियन	उत्तरी मोरक्को के एक भाग में रहने वाले चौदह 'बर्बर' कबीलों के एक कन्फैडरेशन के सदस्य।
रीबस लेखन	यह चित्रलिपि का एक रूप है, जिसमें एक-सी ध्वनि वाले अक्षरों को एक-दूसरे की जगह लिखा जा सकता है।
रेजीडोर	स्पेन के औपनिवेशिक नगरों की परिषद् के सदस्य।
रैन्स्ख का बाल नियम	किसी एक ही स्पीशिज़ के ठंडे प्रदेश में रहने वाले प्राणियों के बाल उसी स्पीशिज़ के गर्म प्रदेशों में रहने वाले प्राणियों के बालों से लम्बे होते हैं।
रैन्स्ख का मरूस्थल वसा नियम	मरूस्थल में रहने वाले जो पशु अपने शरीर में वसा संचित करते हैं, वे उसे अपने शरीर में किसी एक ज़गह ढेरी के रूप में संचित करते हैं।
रैसैन्क्रीज़	किसी एक निरन्तर भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले प्राणी की किसी स्पीशिज़ की सब भौगोलिक जातियों को मिलाकर तैयार किया गया जाति समुदाय।
रोडेशियाई मानव	फासिल मानव की एक उप-स्पीशिज़, जो रोडेशिया और दक्षिणी अफ्रीका में पाई गई है, जिसकी विशेषता नीची मेहराब और बहुत ही बड़े-बड़े भौहों के उद्रेख हैं।
लाइसियम	अरस्तू का स्थिर दान से चलने वाला उच्चतर शिक्षा का विद्यालय।
ला फैरास्सी	अपेक्षाकृत उन्नत फ्राँसीसी नियंडरथल का कंकाल।

ला शापेल ओ सेंस	नियंडरथल का सबसे अधिक प्रसिद्ध और उदाहरण के रूप में सबसे अधिक सामान्यतया प्रस्तुत किया जाने वाला नमूना ।
लि	दक्षिणी चीन के एक आदिवासी लोग ।
लैंजीनैंरिया सिसरेरिया	सामान्य लौकी, घीया ।
लोंगो	हवाई द्वीप का कृषि का देवता ।
वसा शिला	एक चिकना चपटा पत्थर, जिसे आदिमकालीन आहार संचयक लोग पशुओं की चर्बी और बीजों को रखने के पात्र के रूप में प्रयोग में लाते थे ।
वात्सुई	उराँडा-उरुंडी में रहने वाले एक ऊँचे और पतले चेहरे वाले पशुचारक कुलीन लोगों के कबीले के सदस्य ।
वानर (प्राइमेट)	स्तनपयी प्राणियों की वह श्रेणी, जिसमें लीमर, तारसिमर, बन्दर, कपि (एप) और मनुष्य सम्मिलित हैं ।
विकार	बाइज़ैंटाइन साम्राज्य के किसी डायोसीज़ (उप प्रीफैक्चर) का राज्यपाल।
विश्वविद्यालय	उच्चतर शिक्षा की संस्था, जिसमें प्राध्यापकों के मध्य श्रम का विभाजन हुआ रहता है ।
वू	एक गैर चीनी लोग, जो याँग्त्सी नदी के दक्षिण की ओर वाले समुद्र तट पर ईस्वी पूर्व की पहली सहस्राब्दी में निवास करते थे ।
वूट्ज़	भारत में बनाया जाने वाला एक प्रकार का बढ़िया इस्पात, जो 500 ईस्वी पूर्व जितना पहले भी छोटी-छोटी टिकियाओं के रूप में बनाया जाता था ।
वूर्म	यूरोपीय समय मान में प्लीस्टोसीन काल का चौथा हिम बढ़ाव, जो अमेरिकी समय मान के हिसाब से विस्कंसियन काल के आस-पास का ठहरता है ।
वोलेडोर	टारास्कन के मूलवासी, जो एक दर्शनीय समारोह में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

	ऊँचे-ऊँचे बाँसों पर से रस्सियों पर कलाबाज़ी करते हैं।
शंख माँसपेशियाँ (टैम्पोरल मसल्स)	वे दो माँसपेशियाँ, जो कपाल की गंडस्थल की मेहराबों के नीचे वाले पार्श्वों से लेकर निचले जबड़े के कोरासोयड कण्टकों (प्रोसेस) तक फैली होती हैं। इनके सिकुड़ने से निचला जबड़ा ऊपरले जबड़े की ओर ऊपर उठ आता है।
शक्ल	मैसोपोटामिया की काँस्य युग की भार की एक इकाई, जिसमें सोना अपने से आठ गुने भार की चाँदी के बराबर होता था।
शाँग	काँस्य युग का एक चीनी राजवंश, जिसका शासन 1765 ईस्वी पूर्व से 1123 ईस्वी पूर्व तक माना जाता है।
शादुफ	मिश्रवासियों का ऊँचाई की ओर पानी उठाने का एक उपकरण।
शामन	शिकारियों तथा अन्य सरल संगठन वाले लोगों का सब प्रयोजनों को पूरा करने वाला एक धार्मिक विशेषज्ञ, जो उन लोगों में, जिनके मध्य वह रहता है, बीमारी, खराब मौसम या अन्य किसी दुर्दैव के कारण उत्पन्न विक्षोभ के बाद व्यक्तियों और समूहों में पुनः समतुलन स्थापित करता है।
शिल्प वस्तु (आर्टिफैक्ट)	उपयोग के लिए मनुष्य द्वारा बनाई गई कोई भी वस्तु।
शिवपिथैकस	उत्तरी भारत का एक विलुप्त हो चुका वानर, जिसके भेदन दाँत छोटे होते थे और जिसके ठोडी थी।
शिह हुआँग ती	चिन शासक चेंग की उपाधि, जिसका अर्थ है—प्रथम सम्राट्।
शोगुन	जापान का सैनिक सामन्त।
श्लुह	मोरक्को के ग्रांड ऐटलस और सुस घाटी के निवासी बर्बर।

संघ (असोसिएशन)	एक प्रकार की संस्था, जो अन्य संस्थाओं से लिए गए व्यक्तियों से मिलकर बनी होती है और वे व्यक्ति किसी एक साँझी गतिविधि या हित के कारण परस्पर संगठित हुए रहते हैं ।
संसर्गज जादू	यह एक प्रकार का जादू है, जो साहचर्य द्वारा अपराध में विश्वास पर, या किसी एक वस्तु या एक व्यक्ति से शारीरिक सम्पर्क द्वारा किसी अन्य वस्तु में गुणों और विशेषताओं को स्थानान्तरित कर पाने के विश्वास पर आधारित है ।
संस्कृति	यह उन क्रियाविधियों का कुल योग है, जिनके द्वारा मनुष्य जीवन-यापन करते हैं और जो पीढ़ी दर पीढ़ी चलती चली आती हैं । कोई सुनिर्दिष्ट संस्कृति उन क्रियाविधियों का समूह होती है, जिनका पालन कोई लोग किसी निश्चित समय में करते रहे हों । पुरातत्व ज्ञान की दृष्टि से कहा जाय, तो संस्कृति शब्द का प्रयोग कभी-कभी किसी सुनिर्दिष्ट काल और लोगों के औज़ार-समूह को सूचित करने के लिए भी किया जाता है ।
संस्था	लोगों का ऐसा समूह, जो किसी प्रयोजन के लिए संगठित हुआ हो, जिसमें किसी क्रियाविधि के नियमों का पालन किया जाता हो; इसकी बनावट कहीं कम और कहीं अधिक जटिल ढंग की होती है । एक व्यक्ति अनेक विभिन्न संस्थाओं का सदस्य हो सकता है ।
सक़	अरब देश की कोई मण्डी या बाज़ार ।
सत्रपी	प्राचीन ईरान का कोई प्रान्त ।
सवन्ना	निचले अक्षाँशों के पेड़ों से भरे हुए घास के मैदान ।
समर स्लैज	पशुओं द्वारा खींची जाने वाली एक बिना पहिये की गाड़ी, जो सूखी भूमि पर काम में लाई जाती थी ।

समविन्यासी दृष्टि (त्रिविमितीय दृष्टि)	उस प्रकार की दृष्टि, जैसी कि वन्दरों, कपियों और मनुष्यों में पाई जाती है, जिसमें एक दूसरे के ऊपर आ पड़ने वाली प्रतिमाओं के कारण नज़दीक से, उदाहरण के लिए कोई एक हाथ दूर से, वस्तु को उसके त्रि-आयामी रूप में देखा जा सकता है।
सलूकी	शिकारी कुत्ते के ढंग का एक कुत्ता, जो गन्ध से नहीं अपितु देखकर शिकार करता है; यह अफगानिस्तान से लेकर अरब तक के मरुस्थल के प्रदेशों में पाया जाता है।
सलडान्हा खाड़ी मानव	केप टाउन के निकट से प्राप्त हुआ एक कपाल-शिखर और जबड़े का टुकड़ा।
सहजीविता (सीम्बियौसिस)	जीवन की एक ऐसी पद्धति, जिसमें दो स्पीशिजों के प्राणी इस ढंग से रहते हैं कि दोनों को एक-दूसरे से लाभ होता है।
साब्रा	फिलस्तीन में बाहर से आकर बसे हुए माता-पिता से उत्पन्न यहूदी।
सामयिक पुरोहित (आवर (प्रीस्ट)	स्वेच्छा से काम करने वाले वे व्यवसायी पुरोहित, जो प्राचीन मिश्र के ग्रामीण मंदिरों में एक बार में एक महीने के लिए सेवा किया करते थे।
साम्राज्य	यह एक जटिल राजनीतिक संस्था है, जिसमें एक जाति के लोग अन्य अनेक लोगों पर, उन सबको अपनी भाषा, क़ानून और रीति-रिवाज बनाये रहने की छूट देकर, शासन करते हैं।
सिनान्थ्रोपस पेकिनेन्सिस	उत्तान मानुष की एक जाति, जिसके अवशेष पेकिंग के निकट चाउ काउ तियेन की गुफा में पाये गए थे।
सियामंग	गिबन से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित एक बड़ा कपि।
सुमेरियाई लोग	कांस्य युग के एक लोग, जिन्होंने मैसापोटामिया में धात्विकी और लेखन का आरम्भ किया था।
सुस स्क्रोफा	पुरा-ध्रुवीय जंगली सूअर।

सुस विट्टेटस	दक्षिण पूर्वी एशिया का एक जंगली सूअर ।
सेसरीक	आयरलैंड की एक जोत; आयरलैंड के 120 एकड़ ।
सैडना	ऐस्किमो लोगों की एक देवी ।
सैनोज़ोइक	भूवैज्ञानिक काल के गत सात करोड़ वर्ष ।
सैपियन्स मानुष	यह वह स्पीशिज़ है, जिसमें सब जीवित मनुष्य आते हैं ।
सैबियन	दक्षिणी अरब की एक लौहयुगीन संस्कृति और उसकी वर्णमाला ।
सोमाली	अफ्रीका का 'सींग' कहे जाने वाले प्रदेश में रहने वाले गर्मी के लिए अनुकूलित एक लोग, जो हामी भाषा बोलते हैं और इस्लाम धर्म के अनुयायी हैं ।
सोलो मानव	जावा में पाये गए फ़ासिल मानव की एक उपस्पीशिज़ जो प्लीस्टोसीन युग के ऊपरी भाग की है ।
सोल्यूत्री संस्कृति	उपरि पुरा-पाषाणिक युग की एक संस्कृति, जो फ्राँस और मध्य यूरोप में औरग्नेसी संस्कृति के बाद आई थी; इसकी विशेषता मैमथों का शिकार और लम्बे, दबाव द्वारा कत्तर उतारे गए, दो पार्श्वों वाले फलक औज़ार थे ।
स्टीनहीम	जर्मनी में प्राप्त हुआ एक सैपियन्स मानुष स्त्री का कपाल, जिसका काल द्वितीय अन्तरहिमाच्छादन काल माना जाता है ।
स्ट्रैटेगौस	बाइज़ैण्टाइन सेनापति ।
स्थान प्रणाली	अंकों को लिखने की वह प्रणाली, जिसमें किसी अंक की स्थिति उसके परिमाण क्रम को सूचित करती है ।
स्वैन्सीकौम्बी मानव	इंग्लैंड में पाया गया द्वितीय अन्तरहिमाच्छादन काल का सैपियन्स मानुष का एक खंडित कपाल ।
हड़प्पा	काँस्य युग की सिन्धु घाटी सभ्यता का एक नगर स्थल ।
हाइक्सौस	घोड़ों का प्रयोग करने वाले एक लोग, जिन्होंने 1700 ईस्वी पूर्व के आस-पास मिश्र पर आक्रमण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

	किया था ।
हाइडलबर्ग मानव	एक फासिल मानव, जिसे एक अकेले निचले जबड़े के आधार पर पहचाना गया है, जो जर्मनी में प्रथम अन्तर हिमाच्छादन काल की बजरी में मिला है ।
हान	एक चीनी राजवंश, जिसका शासन लगभग 202 ईस्वी पूर्व से लगभग ईस्वी सन् 220 तक रहा ।
हामी (हैमिटिक)	उत्तरी और पूर्वी अफ्रीका में बोली जाने वाली भाषाओं का एक परिवार ।
हिताइत	अनातोलिया के एक लोग सम्भवत; यही लोग लोहे के सर्व प्रथम कारीगर थे ।
हिम युग	प्लीस्टोसीन काल ।
हिम मानव	यति; यह सर्दी के लिए अनुकूलित, तुंगताओं के लिए अनुकूलित दो पैरों वाला (प्राइमेट) है, जो सम्भव है कि हिमालय में रहता हो, या शायद न भी रहता हो ।
हिमाच्छादन काल	इस प्रसंग में, यह काल की वह अवधि है, जो प्लीस्टोसीन के चार बड़े हिम बढ़ावों में से किसी भी एक की रही थी ।
हिमाच्छादनोत्तर अनुकूलत्तम काल	6000 ईस्वी पूर्व के आसपास का अपेक्षाकृत उष्ण काल ।
हुआका प्रियेता	पेरू के समुद्र तट पर एक स्थल, जिसकी खुदाई जूनियस बर्ड ने की थी ।
होएई चिन	फू साँग का एक पुरोहित ।
हौटेण्टाट	दक्षिणी अफ्रीका के एक पशु पालक लोग, जो जाति और भाषा की दृष्टि से बुशमैन लोगों के सम्बन्धी हैं ।

पुस्तक में प्रयुक्त हिन्दी शब्दों के अंग्रेजी रूपान्तर

अ

अंगी	Organism
अंशधर	Shareholder
अकदेमी दे सियेसे	Academie des Sciences
अकापुल्को	Acapulco
अक्षिदन्त	Eye Tooth
अक्षिद्वार	Eye Slit
अग्नि सह	Fire proof
अग्रणी	Foreman
अग्र-दण्ड	Fore shaft
अग्रभाग	Visor
अत्तिका	Attica
अधस्तल	Undershot
अधिविद्या	Metaphysics
अधि संस्था	Super Institution
अधीक्षक	Superintendent
अध्युच्चित्र	Bas relief
अनीकिनी	Corps
अनुकूलन	Adaptation
अनुदेश	Instruction
अनुदैर्घ्य	Longitudinal
अनुभावन	Suggestion
अनुमस्तिष्क	Cerebellum
अनुवात	Downwind

अनुशोधन	Retouching
अन्तर हिम काल	Interglacial
अन्तर हिमाच्छादन	Interglacial
अन्तर हिमानी	Interglacial
अन्तर्देशीय	Inland
अन्तर्नत	Inverted
अन्योन्यपोषकता	Symbiosis
अपघर्षी	Abrasive
अपचेय	Expendable
अपोपलक्षक	Aberrant
अभय स्थान	Sanctuary
अभिकल्प	Design
अभियोजक	Prosecutor
अभिसंस्कार	Processing
अभिसीमा	Range
अभ्यन्तर	Core
अरि री	Ari-Ri
अर्गल	Argal
अर्गोस्टैरोल	Ergosterol
अर्ध मस्तिष्क वाले	Half brained
अल्पका	Alpaca
अवतल	Concave
अव-मानवीय	Sub-human
अवर उच्च विद्यालय	Junior high school
अवरक्त	Infra red
असवन्नता	Prostration
अश्व-मानुष देवता	Satyr

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आ

आइनू	Inu
आइसिस	Isis
आकार	Size
आकृति	Shape
आकुँचित	Flexed
आक्सीकरण	Oxidation
आग्नेय काँच	Obsidian
आज्ञप्ति	Decree
अतिथेय	Host
आनुवंशिकी विज्ञ	Geneticist
आनुवंशिकी विज्ञान	Genetics
आन्तरगुही प्राणी	Coelenterate
आयतन	Volume
आरामेक	Aramaic
आर्कन	Archon
आर्मेडा	Armada
आवेग	Impulse
आव्रजन	Immigration
आशोधन	Modification
आस्ट्रैलोपिथैसाइन	Australopithecine

इ

इंगुश	Ingush
इयेयासू	Ieyasu
इरैटोस्थैनीज़	Eratosthenes
इस्थमियन	Isthumian

उ

उत्कीर्ण लेख	Inscriptions
उत्तर जीव युग	Pliocene
उत्तल	Convex
उत्तान मानुष	Homo Erectus
उदव्रजक	Emigre
उत्संस्करण	Acculturation
उद्घोषक	Herald
उद्दीपन	Stimulus
उद्यम	Enterprise
उद्योग विद्या	Technology
उद्रेख	Ridge
उद्व्रजन	Emigration
उपक्रम	Undertaking
उपरितल	Overshot
उपल	Pebble
उपोष्ण कटिबन्धीय	Sub-tropical
उभार	Visor
उर	Ur
उर्दानेता	Urdaneta

ऊ

ऊतक	Tissue
ऊर्जा विभव	Energy Potential
ऊर्ध्वाधर	Vertical
ऊलू	Ulu
ऊष्मांक	Calory

ए

एकमार्गीकरण	Regimentation
एकरूप	Uniform
एता	Eta

ऐ

ऐग्ज़ार्क	Exarch
ऐनेबेसिस	Anabasis
ऐमर	Emmer
ऐमरी	Emery
ऐल्कैल्ड	Alcalde
ऐवोकैडो	Avocado
ऐस्ट्रोलेब	Astrolabe

ओ

ओना	Ona
ओबेलिस्क	Obelisk
ओबोल	Obol
ओरंग उतान	Orangutan
ओरियोपिथैकस	Oreopithecus
ओरेजोन	Oraejone
ओलिम्पिक	Olympic
ओल्डुवाई कन्दरा	Olduvai gorge
ओसिरिस	Osiris
ओडियेंशिया	Audiencia

औ

औरिगनेसी	Aurignacian

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

क

कंडरा	Tendons
कंदुक-उलूखल संधि	Ball and socket joint
कचालू	Taro
कचीना	Kachina
कच्छ भूमि	Fen
कतरन	Scrap
कपाल शिखर	Skull cap
कपि	Ape
कपि मानव	Ape Man
कबीला	Tribe
कब्ज़ा	Hinge
करंज	Beech
कर्क रेखा	Cancer
कर्णधार	Pilot
कर्तन औज़ार	Chopping tools
कर्तन औज़ार	Cutting Tools
कर्तरिका	Cutlery
कलदाना	Morning Glory
कलन	Calculus
कशेरुकी	Vartebrates
कसाइत	Kassite
कसावा	Cassava
कागज़ी शहतूत	Paper mulberry
काठी चक्की	Saddle quern
कार्टेल	Cartel
कालनिष्ठ अध्ययन	Stop watch study
कालमुख	Kalmuck

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

काल यन्त्र	Time machine
कासा डि कौंट्रेटेशियन	Casa de Contratacion
किनोआ	Quinoa
किरणीयन	Irradiating
कीलाकार प्रणाली	Cuneiform system
कीलक	Rivet
कुँवरा	Thwart
कुकरौंधा	Dandelion
कुकुई	Kukui
कुठला	Grain bin
कुटुम्ब	Family
कुठार	Hand Axe
कुमर	Kumara
कुरंग	Gazelle
कुल्या	Aqueduct
कृन्तक	Rodent
कृष्ण सागर	Black sea
केन	Kane
केवड़ा	Pandanus
कैनान	Canaan
कैल्ट	Celt
कैवियार	Caviar
कोटर	Socket
कोरा	Blank
कोरोनेडो	Coronado
कोलोरेडो	Colorado
कोर्टेस	Cortes
कोशा रसायन	Cell chemistry
कौकर स्पेनियल	Cocker Spaniel

कौम्बकैपले	Combe Capelle
कौरैजीडौर	Corregidor
क्रम विकास	Evolution
क्रियाविधि	Procedure
क्रीक	Creek
क्रोड	Core
क्रोशक बन्दर	Howler monkey
क्वैस्टर	Quaestor
क्षेपणी चक्र	Paddle Wheel
क्षैतिक	Horizontal

ख

खगवैज्ञानिक	Ornithologist
खच्चर	Mule
खराद	Lathe
खाँचा	Groove
खाँचेदार	Notched
खारना	Fulling
खुरचनी	Scrapper
खोखु	Hull

ग

गठन	Composition
गतिमात्रा	Momentum
गलनांक	Meeting Point
गलही	Forecastle
गलियारा	Corridor
गल्ला	Galla

गिबन	Gibbon
गिरोह	Band
गुटिका	Bulb
गुर	Formula
गुलमेंहदी	Balsam
गुलाब के फल	Rose hips
गुल्लियाँ	Cobs
गोदी	Dock
गोफिया	Sling
गोबरनेडोर	Gobernadore
गोरखर	Onager
गोष्ठ-चतुष्टयी	Barnyard foursome
ग्रन्थि	Nodule
ग्रन्थि	Gland
ग्रन्थि-रन्ध्र	Knot-hole
ग्लौगर	Gloger

घ

घड़िया-इस्पात	Crucible steel
घिरनी	Pulley
घिरनी घानी	Pulley block
घूर्णक	Rotary

च

चमू	Division
चयापचयन	Metabolism
चर्बी शिला	Grease stone
चलिष्णुता	Mobility
चाउ काउ तियेन	Chou kou tien

चित्रलिपि	Hieroglyph
चीन मानव	Sinanthropus
चीरा और जलाया	Slash and burn
चित्तीदार लकड़बग्घा	Spotted hyena
चित्रलिपि	Rebus
चुकची	Chukchi
चूलदार	Tanged
चेचन	Chechen
चेता	Nerve
चैरोकी	Cherokee

छ

छद्मावरण	Camouflage
छिद्रिल	Spongy
छेदन दन्त	Incisor teeth
छेनी	Punch

ज

जंजीर	Chain
जई	Oats
जनक	Parent
जनन आधार	Genetic basis
जल समाधि	Immersion
जलसह	Water proof
जाइगैंटो पिथैकस	Gigantopithecus
जाति	Race
जातीय समुदाय	Racial system
ज़िजानथ्रोपस	Zinjanthropus
ज़िगुरात	Ziggurat

जीन	Gene
ज़ी मेज़	Zea mays
जीर्णांक	Peat
जीवनांक सम्बन्धी	Actuarial
जुगुलर शिरा	Jugular Vein
ज़ुलू	Zulu
जैव	Biological
जैसूट	Jesuit
ज्वार	Millet

झ

झाऊ	Spruce

ट

टेक	Support
टेरीगोइड	Pterygoid
टैम्पोरल	Temporal
टोटेदार	Stubby
टौलैमी	Ptolemy
टयूटन	Teuton
ट्राइडैकना	Tridacna

ड

डक्स	Dux
डायाफ्राम	Diaphragm
डायोनिसस	Dionysus
डायोसीज़	Diocese
डिम्ब क्षरण	Ovulation
डीयोसीज़	Deioces

डैकशंड	Dachshund

त

तक्षणी	Burin
तद्देशीय	Indigenous
तन्तुक्रम	Grain
तरु गृह	Tree house
तापन	Heating
तापानुशीतन	Annealing
तारा	Tara
तालु	Palate
तियोसैन्तली	Teocentli
तुंगुस	Tungus
तुआथ	Tuath
तुकावाची	Tukatachee
तुरंग	Tarpan
तुलसीबन्धु	Sage
तूपीनम्बा	Tupinamba
तृषारीकरण	Freezing
तैनोक्तितलान	Tenchtitlan
तोड़दार बन्दूक	Matchlock
त्रिकास्थि	Sacrum
त्रिप्सैकम	Tripsacum
त्रिविमितीय	Stereoscopic
त्वरण	Acceleration

थ

थीम	Theme
थोथ	Thoth

द

दंड	Shaft
दबावपाची	Pressure Cooker
दल	Band
दांतेदार चक्का	Toothed Wheel
दाब यंत्र	Press
दूरभाष निदेशिका	Telephone directory
दूर्वास्तर	Lawn
दृष्टि पटल	Retina
देरियस	Darius
दो-नोवा	Catamaran
दोर्दोन	Dordogne
दो ब्लून	Doubloon
द्राक्मा	Drachma
द्वि आयभी	Two-dimensional
द्विपार्श्वी	Binocular
द्विपृष्ठीय	Bilateral
धमन भठ्ठी	Blast furnace
धमनी काठिन्य	Arteriosclorosis
धरन	Beam
धर्मग्रन्थ में वर्णित व्यक्ति	People of the Book
धुरी	Axcis
धूसर	Grey
नगनदोंग	Ngandong
नगरीय	Urban
नयाचार	Protocol
नलिकाकृति	Tubular
नव-पाषाण	Neolithic

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नाचीज	Natchez
नाभिक	Nucleus
निगमनात्मक	Deductive
निगमित व्यापारिक कम्पनी	Incorporated trading Company
निमग्निका	Bank
नियंडरथल	Neanderthal
नियोक्ता	Employer
निर्बन्धन	Restriction
निषिक्त करना	Fertilise
निहाई	Anvil
नीसियाई	Nisean
नैवाजो	Navajo
नैसर्गिक वरण	Natural selection
नोथोइ	Nothoi
नोम	Nome
नोमाधीश	Nomarch
नोर्स	Norse
नौकारोही आदिवासी	Canoe Indians
नौतल	Keel
न्यास	Trust

प

पटिया	Tablet
पदक्रम	Grade
पदस्थिति	Rank
पदाति मूलवासी	Foot Indians
पदार्थ	Matter
पदावधि	Tenure

परवर्ती	Later
परितारिका	Iris
परिदृश्य	Perspective
परिरक्षण	Preservation
परिवेश	Environment
परिशोषण	Desiccation
परिशुद्ध	Accurate
परिष्ठा	Status
परिसंचरण	Circulation
परिसम्पत्ति	Asset
परिसीमा	Perimeter
परिस्थिति विज्ञान	Ecology
परोपजीविता	Parasitism
पर्णक लोग	People of the Leaves
पल्ली	Hamlet
पवनोढ़ मृत्तिका	Loess
पाइथियन	Pythian
पातालमूयर	Turkey
पारजम्बू	Ultra Violet
पारपत्र	Passport
पारी	Paris
पालदड	Yard
पालना	Cradle
पास्तियर	Pasteur
पिक्ट	Pict
पिच्छ फलक	Vane
पिनोन	Pinon
पुनरावर्ती	Repetitive
पुनरुत्थान	Reformation

पुरा जीव विकास वैज्ञानिक	Paleontologist
पुरातन राजत्व काल	Old kindom times
पुरानी बाइबिल	Old Testament
पुरा-पाषाण	Paleolithic
पैरी	Perry
पूर्णरोध	Occlusion
पूर्व-विरचित	Prefabricated
पृष्ठ निक्षेप	Bloom
पेंचदार नली	Rifled barrel
पेरीगोर्डियन	Perigordian
पोकाहोंटा	Pocahonta
पोसीडीनियस	Posidonius
पोटलाच	Potlach
पौरोहित लेखन	Hieratic writing
पौषणिक	Nutritional
प्रणोदन	Propulsion
प्रतिघात	Impact
प्रजाति	Genus
प्रतिधर्मसुधार	Counter Reformation
प्रतिपुरुष कर	Poll tax
प्रतिभावन	Response
प्रतिवर्तन	Reversion
प्रतिवात	Upwind
प्रतिस्वन	Antiphone
प्रत्यंग	Feature
प्रत्यक्ष ज्ञान	Perception
प्रथम फल महोत्सव	First fruits Ceremony
प्रपंच	Phenomenon
प्रभाग	Division

प्रभूर्ज	Ash
प्रभेद	Variety
प्रवरता	Seniority
प्रव्रजन	Migration
प्रशाल	Hall
प्रसामान्य	Normal
प्रहारमुख	Striking Platform
प्रावस्था	Phase
प्रीफैक्चर	Prefecture
प्रेयटर प्रीफैक्ट	Praetorian Prefect
प्रोकौंसल	Proconsul
प्लीओसीन	Pliocene
प्लीस्टोसीन	Pleistocene

फ

फन्नी	Wedge
फरून	Pharaoh
फर्न	Fern
फलक	Blade
फिन्न	Finn
फोन्तेश्वाद	Fontechevade
फौंट	Font
फीजियन	Phrygian

ब

बनबिलाव	Beaver
बन्दर	Monkey
बन्धनी	Brace
बरमा	Drill

बर्गमैन	Bergmann
बर्छा क्षेपक	Spear thrower
बर्बर कपि	Barbary Apes
बलुआ पत्थर	Sand Stone
बहिर्जनस्तर	Ectoderm
बहिर्नत	Everted
बांज	Oak
बास्क	Basque
बिटूमिन	Bitumen
बूमैरंग	Boomerang
बेज़वार	Bezoar
बैबून	Baboon
बैरक्तार	Bairaktar
बैलीन	Baleen
बो एयर	Bo Aire
ब्रैवी	Brewy

भ

भारोपीय	Indo-Eruopean
भूक्षरण	Erosion
भूमध्य रेखा	Equator
भूवैज्ञानिक	Gelogical
भू-शूकर	Aardwark
भृगु	Cliff
भृत्य वर्ग	Bond Class
भेदक दांत	Canine teeth
भ्रान्ति	Sophistication

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

म

मंडशिफ	Manioc
मकड़ी बन्दर	Spider Monkey
मकर रेखा	Capricorn
मकासिन	Moccasin
मगदेली	Magdalenian
मज्जा	Marrow
मध्य जीव युग	Miocene
मध्य पाषाण	Mesolithic
मध्यान्तर	Interstedial
मत्स्य विज्ञान	Ichthyology
मनसेक्षण	Visualise
'मर्मर'	Murmur
मस्कवी	Muscovy
मस्केग	Muskeg
मस्तिष्क वृन्त	Brain stem
मस्तिष्क के खोल	Brain cases
महा डाकपाल	Post Master General
महापाषाणिक	Megalithic
महारन्ध्र	Foranum Magnum
महाहस्ति	Mammoth
माँसपेशी	Muscle
माताबैल	Matabele
मानव कपि	Man ape
मान्दिगो	Mandingo
'मार्दि ग्रा'	Mardi gra
माल अधीक्षक	Super cargo
मिताते	Metate
मिन	Min

मिस्ट्री	Mystery
मीओसीन	Miocene
मूल उद्गम	Origin
मूलवासी	Indians
मूस्तेरियाई	Mousterian
मृग	Antelope
मैंदोसिनो	Mendocino
मैजिस्टर	Magister
मैनीस	Menes
मैलाचाइट	Melachite
मैलानिन	Melanin
मैसीटर	Masseter
मोर तुआथ	Mor-tuath
मौक्तेज्यूमा	Moctezuma

य

यंत्रजात	Mechanism
यायावर	Nomads
याह्वेह	Yahveh
यूकोन घाटी	Yukon Valley
यूरियस	Uraeus
योद्धागीरी	Knighthood

र

रतालू	Yams
रा	Ra
राजनय	Diplomacy
राजहंस	Flamingo
राज्यपाल	Governor

राज्य मंडल	Confederation
रेजीडोर	Regidore
रेमाँ दार्त	Raymond Dart
रेह	Fuller's earth
रैन्स्ख	Rensch
रोक फाटक	Turnpike
रोडेशियाई मानव	Homo Rhodesiensis

ल

लगाय का दहाना	Bit
लघु गणक	Logarithm
लट्ठा	Runner
लम्बाक्ष	Enfilade
लाइसियम	Lyceum
लाजवर्द	Lapis lazuli
ला शापैल ओ साँ	La chapelle aux Saints
लामा	Llama
लीची	Litchi
ले ज़ीज़िए	Les Eyzies
लोग	People

व

वंग	Tin
वंजुफल	Acorn
वंशावली	Line
वक्ता	Speaker
वरण	Selection
वराह	Boar
वर्गीकर्ता	Classifier

वर्णक्रम	Spectrum
वल्कल वस्त्र	Tapa cloth
वस्तुनिष्ठ	Objective
वस्तु विनिमय	Barter
वानर	Primate
वायु दबाव मापी	Barometer
वाष्पित्र	Boiler
वासन्तक	Guanaco
विकार	Vicar
विकिरक	Radiatar ;
विकिरण	Radiation
विच्छिन्न	Isolated
विटप सन्धि	Crotch
विदेशागत	Exotic
विदेशी	Metic
विद्युत् जनित्र	Generator
विद्वत् समिति	Learned Society
विनियम	Regulations
विन्यास	Configuration
विभाजक	Divide
विभेदन	Differentiation
विलायती फणस	Bread fruit
विविक्त विचार	Abstraction
विशेषित	Specialised
विशेषीकरण	Specialisation
विषदन्त	Fangs
विषाणु	Virus
विषुव	Equinox
विसमतुलन	Disequilibrium

विसरित	Diffuse
वैल्विचिया	Welwitzia

श

व्यवहार	Behaviour
व्योहार	Dealing
शंख वैज्ञानिक	Conchologist
शकट	Wagon
शकल	Shekel
शरीर क्रिया	Physiology
शरीर रचना	Anatomy
शलाका और शंकु	Rods and Cones
शल्क	Flake
शल्य चिकित्सक	Surgeon
शाद झील	Lake Chad
शादुफ	Shaduf
शामन	Shaman
शासन शक्ति	Power
शास पत्र	Charter
शिक्षु	Apprentice
शिवपिथैकस	Sivapithecus
शीन वृक	Wolverine
शृंग	Antler
शोधनगृह	Clearing House
श्यामल	Brunet
श्रीदारू	Larch
श्रीफल	Quince
श्रेणी-कृत	Graded
श्रोणी	Pelvis

श्वेतकंट	Hawthorne

स

संकरण	Hybridisation
संकोणाश्म	Breccia
संक्रमण	1. Infection 2. Transition
संक्रामण	Transmission
संग यशव	Jade
संगलन	Fusion
संगली पहियेदार	Caterpillar
संघनित	Compressed
संघट्टन	Impact
संघातक जीव	Pest
संचलन	Locomotion
संचलन	Movement
संतृप्त	Saturated
संधारण	Maintenance
संधि-शोथ	Arthritis
संनयन	Convection
संभरण	Supply
संयुक्त पूंजी कम्पनी	Joint Stock Company
संवेग	Emotions
संवेगात्मक	Emotional
संवेदनशील	Sensitive
संस्कृति	Culture
सक	Suq
सतस्पेस	Sataspes
सत्रपी	Satrapi

सनोवर	Spruce
समंजन रस्सी	Sheet
समताप मंडलीय	Stratospheric
समतुलन	Equilibrium
समन्वेषण	Exploration
सममित	Symmetrical
समविन्यासी	Stereoscopic
समाज व्यवस्था	Social System
समादेश	Commission
समेकन	Consolidation
सरमातियाई	Sarmatians
सर्पदैत्य	Dragon
सर्पिल	Spiral
सर्वेक्षण	Survey
सलूकी	Saluki
सान्द्रता	Concentration
साँद्रीकृत	Concentrated
साइरस	Cyrus
सामयिक पुरोहित	Hour priests
सामान्यीकरण	Generalisation
सामी	Semitic
साहचर्य	Association
सींग	Horn
सीथियाई	Scythians
सीमान्तीय	Marginal
सीलाकैन्थ	Coelacanth
सूक्ष्मवीक्षण	Microscope
सेना	Army
सेलखड़ी	Soap stone

सेसरीक	Sesreach
सैत	Set
सैकोया	Sequoya
सैक्सन	Saxon
सैनोज़ोइक	Cenozoic
सैपियन्स मानुष	Homo Sapiens
सैबियन	Sabaean
सोपान	Stage
सोपान तन्त्र	Hierarchy
स्कन्धास्थि	Shoulder blade
स्त्री मद चक्र	Oestrual cycle
स्टिंग रे बार्ब	Sting ray barb
स्टीनहीम	Steinheim
स्ट्रैटेगौस	Strategos
स्नायु	Sinew
स्नेहक	Lubricant
स्पर्श रेखा	Tangent
स्पीशिज़	Species
स्फुरदीप्त	Phosphorescent
स्वयंचल	Automobile
स्वैन्सकोम्बी	Swans Combe

ह

हत्तूसास	Hattusas
हलाइस	Halys
हाइक्सौस	Hyksos
हानो	Hanno
हाल	Metal tire
हिताइत	Hittite

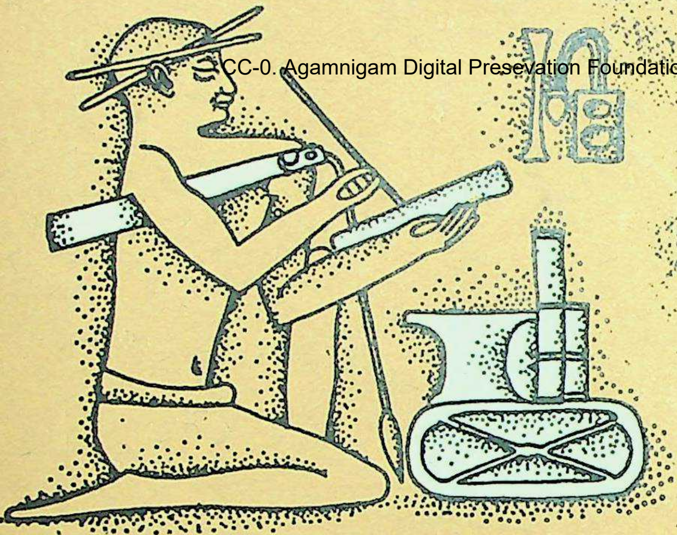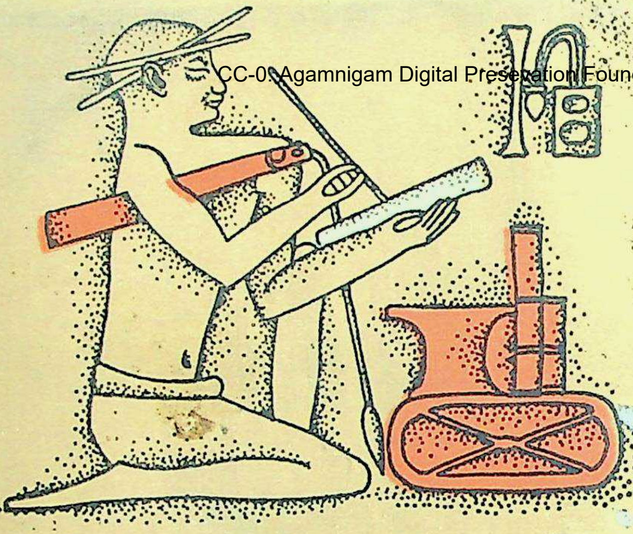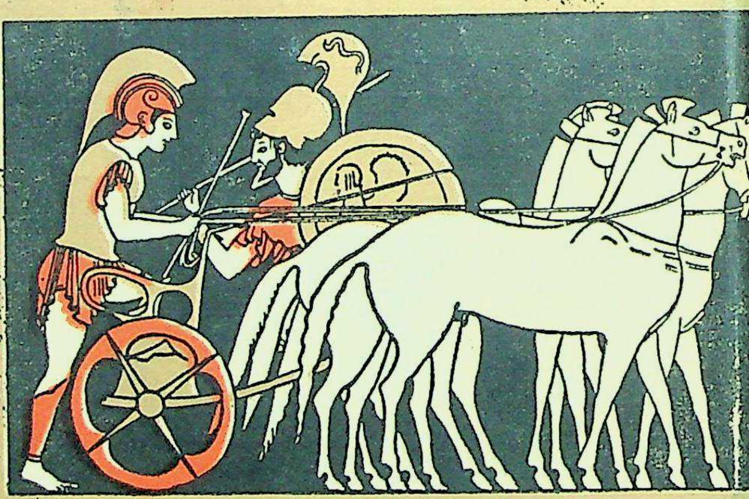हिमाच्छादनोत्तर	Post glacial
हिमीकरण	Frost
हुआका प्रियेता	Huaca Prieta
हैमोफीलिया	Hemophilia
हैलनी	Hellenic